

श्री जिनाय नमः

पं. श्री कल्याणविजय गणि-प्रियता
स्वोपहा गुजराती भाषा टीका सहित

श्री कल्याण कलिका

प्रथमो भागः

(प्रथम व्याख्यात्मकः)



:- प्रकाशकः -

श्री क.वि.शास्त्रसंग्रह समिति

जालोर (राजस्थान)

श्री जिनाय नमः

पं. श्री कल्याणविजयगणि-विरचिता स्वोपज्ञ
गुजराती भाषा टीका सहित

श्री कल्याण कलिका

प्रथमो भागः

(प्रथम खण्डात्मकः)



प्रकाशकः

श्री क. वि. शास्त्र संग्रह समिति
जालोर (राजस्थान)

द्वितीयावृत्ति प्रतयः १०००

वीर संवत् २५१३ वि. सं. २०४३ इस्वी सन १९८७

प्राप्तिस्थान

१ नंदीश्वर तीर्थ कार्यालय
वर्धमान जैन विद्याभवन
जालोर (राजस्थान)

२ सोनमल रमेशचन्द्र कोठारी
A/४० मस्कती मार्कीट,
अहमदाबाद-१



मुद्रक : पंडित मफतलाल झवेरचन्द गांधी

मुद्रणस्थान : नयन प्रिन्टींग प्रेस

ढींकवावाडी, फर्नान्डीझ पुल के पास,
अहमदाबाद-१

આભાર પ્રદર્શન

પૂ. પં. કલ્યાણવિજયજી ગણિવરના શિષ્ય મુનિશ્રી મુક્તિવિજયજી મહારાજ સાહેબ પોતાના પૂ. ગુરુમહારાજ દ્વારા નિર્મિત થયેલ વધાં કાર્યોની સારસંભાર અને પ્રગતિ કરી રહ્યા છે.

પૂ. પન્યાસજી મહારાજે આરંભેલ કાર્ય તેમણે તેમના નંદીશ્વર તીર્થ નિર્વાણ બાદ પુરેપુરી દીર્ઘદષ્ટિ રાખી ગુરુ મહારાજની યોજના મુજબ પૂર્ણ કરાવેલ છે. તેમજ સુંદર અનુપમ તીર્થસ્તંભ આજે જે જાલોરમાં દિગંતકીર્તિ ફેલાવે છે તે તેમના પરિશ્રમનું પરિણામ છે.

નંદીશ્વર તીર્થમાં મહા સુદ ૬ ના રોજ દરવર્ષે સુંદર મેળો ભરાય છે. રાજસ્થાનના ગામે ગામથી અઢારે જ્ઞાતિ આ મેળામાં ધર્મબુદ્ધિએ ભાગ લે છે. તે વધો પ્રતાપ પૂ. વયોશુદ્ધ મુનિશ્રી મુક્તિવિજયજી મહારાજની પ્રેરણાને આભારી છે.

નંદીશ્વર તીર્થ કાર્યાલય, શ્રી વર્ધમાન જૈન વિદ્યાભવન, શ્રી નેમિનાથ ભગવાનનું તથા શ્રી સીમંધર સ્વામિનું મહત્ત્વ મંદિર, શ્રી મહાવીર સ્વામિનું મંદિર તેમજ કીર્તિસ્તંભ આ વધાથી જાલોર તીર્થ જેવું મહત્ત્વ વન્યું છે. અને જ્યાં દૂરદૂરથી યાત્રિઓ આવે છે. આ સ્થાન આજે તીર્થભૂમિ સ્વરૂપ છે.

પૂ. પં. કલ્યાણવિજયજી મ. ના સ્વર્ગવાસ બાદ ગુરુભક્ત પૂ. મુક્તિવિજયજી મહારાજે પૂ. પં. મ. શ્રીના જે જે અધુરા કાર્ય હતાં તે સર્વને તેમણે પુરા કર્યાં છે. વિકસાવ્યાં છે. અને સાથે સાથે જૈનશાસનની પ્રભાવના વધારી છે.

આ ગ્રંથ પ્રકાશન પણ તેમના ગુરુપ્રત્યેની ભક્તિનું પરિણામ છે. અમે તેમનો સુખ-સુખ આભાર માનીએ છીએ.
પ્રકાશક

५. ५. पन्यास कल्याणविजयजी म. लिखित तथा
प्रकाशित ग्रंथावली

- १ निबन्धनिचय
- २ प्रबन्ध पारिजात
- ३ पट्टावली
- ४ प्रतिक्रमण विधि संग्रह
- ५ श्री श्रमण भगवान महावीर
- ६ सर्वोदय शास्त्र
- ७ श्री जिनपूजा पद्धति
- ८ श्री जैनविवाह विधि
- ९ श्री मंत्रकल्प संग्रह
- १० श्री तीर्थमाला
- ११ षड्विंशत माघ
- १२ मानवभोज्यमिमांसा
- १३ श्री गोल नगरीय प्रतिष्ठा विधि
- १४ जैन ज्ञानगुण संग्रह
- १५ पर्व तिथि चर्चा संग्रह
- १६ श्री जिनगुण कुसुमांजलि
- १७ श्री कल्याण कलिका भाग-१
- १८ श्री कल्याण कलिका भाग-२
- १९ त्रिस्तुतिकमीमांसा
- २० रत्नाकर
- २१ तित्थोगालिय पयन्ना
- २२ चालु चर्चामां सारांश केटला
- २३ वीरनिर्वाण संवत् और कालगणना
- २४ नागरिक प्रचारिणी पत्रिका

स्मरणांजलि

पू. पं., कल्याणविजयजी गणि. जैन शासनमां प्राचीन ग्रंथाना संशोधक, आगम—व्याकरण न्याय आदि ग्रंथाना प्रकांड विद्वान, इतिहासना समर्थज्ञाता, विधिविधान ग्रंथाना विशिष्ट ज्ञाता, ज्योतिष शास्त्रना समर्थ विद्वान तथा प्राचीन शिल्पविज्ञानना उंडा अभ्यासी हता. आ बधाय विषयोमां ते अजोड अने समर्थ हता.

जैन जगत सिवाय समस्त भारतमां इतिहासवेत्ता तरीके तेमनी विशिष्ट ख्याति हती अने तेमनो अभिप्राय इतिहासना विषयमां गणनापात्र गणातो.

प्राचीन इतिहास संबंधमां आपणा जैन शासनमां त्रण व्यक्तितओनी गणना हती १. पू. आ. इन्द्रसूरिजी म. २. पू. पं. कल्याणविजयजी गणि. ३. पू. मुनिश्री दर्शनविजयजी त्रिपुटी.

आ त्रणेमां विशिष्ट स्थान पू. पं. कल्याणविजयजी गणिनुं हतुं. तेमणे जैन इतिहासना संशोधन साथे केटलीक एवी विशिष्ट वातो संशोधन द्वारा रजु करी हती के जेने लइ भारतभरना विद्वानो तेमना अभिप्रायने बहुमुल्य गणता. तेनी साक्षिरुपे तेमना लखेला वीरनिर्वाण संवत अने महावीर कालगणना पुस्तक छे.

एमणे अेमना जीवनकाळ दरमियान लगभग त्रीस ग्रंथो लख्या छे. आ तीसे ग्रंथो तेमना स्वयं सर्जन अने चिंतनमूलक छे.

तेमनो जन्म वि. सं. १९४४ मां राजस्थानना लास गाममां, १९ वर्षानी उंमरे वि सं. १९६३ वै सु. ६ ना

दीवसे जालोरमां दीक्षा, वि. सं. १९९४ ना मागसर सुद ११ ना दीवसे अमदावाद विद्याशालामां गणिपद अने पन्यास पद अने वि. सं. २०३१ ना अपाड सुद १३ ना दीवसे जालोरमां कालधर्म. आयुष्य ८७ वर्ष दीक्षा पर्याय ६८ वर्ष.

आपणे त्यां पू. पुण्यविजयजी महाराज साहेबने प्राचीन ग्रंथोना सशोधकना विषयमां विशिष्ट मानवामां आवे छे. परंतु तेमने में हठीभाइनी वाडी अमदावादमां कलाकोना कलाको सुधी पू. पंन्यासजी म. नी प्रेरणा लेता जोया छे. आगमादि ग्रंथोनुं तेओ विशिष्ट ज्ञान धरावता हता. तेना पुरावारुपे प्रबन्धपारिजात ग्रंथ के जे ग्रंथमां निशीथ महानिशीथ जेवा छेद ग्रंथोनुं तेमना हाथे खुवज अन्वेषण थयुं छे. संकडो वर्ष थी जैन समाजने के तेना विद्वान मुनिओने पण माहीति न होय तेवी विगतो तेमणे पट्टावली अने निबंध निचयग्रंथ द्वारा पुरी पाडी छे. कल्याण कलिका भाग १-२ विधिविधान, ज्योतिष अने प्राचीनशिल्पनुं अनेक ग्रंथे द्वारा तेमां देाहन छे. आ उपरांत मानवभोज्य मिमांसा पंडित माघ विगेरे घणा ग्रंथे एवा लख्या छे के भारतभरना विशिष्ट विद्वानोने तेमणे तेमना ज्ञान द्वारा आकड्यां छे

श्रमण भगवान महावीर अने वीरनिर्वाणसंवत् और जैन काल गणना आ ग्रंथनुं निर्माण तो भारतभरना इतिहासज्ञोने नत्तमस्तक बनावे तेवो तेनी पोछळनो तेमनो परिश्रम छे.

आगमग्रंथो, शिलालेखो अने विविधसाहित्यना निरीक्षण मनन अने चिंतनद्वारा तेमणे श्रमण भगवान महावीरना क्रमचद्र चोमासां तेमां थयेला उपसर्गो विगेरेनुं जे तारण कर्तुं छे तेवुं आज सुधी कोइए पण कर्तुं नथी.

वीरनिर्वाण और जैन काल गणना ग्रंथ तो एटलो बंधा आधारभुत ग्रंथ मनाये छे के तेने आधाररूप गणी इतिहासविदेए पोतानुं संशोधन कर्तुं छे.

तेमणे लखेला लगभग ३० ग्रंथो पाछळ प्राचीन अर्वाचीन विविध ग्रंथोनुं वांचन निरीक्षण मनन अने संकलन सविशेष जोवा मळे छे. तेमना हाथे मुद्रित थयेल एकेक ग्रंथनी सविस्तर आलोचना करवामां आवे तो तेमना विशाल ज्ञान अनुभव अने निरीक्षण प्रत्ये अहोभाव प्रगटावी दरेकने नतमस्तक बनावे तेम छे.

पू. पन्यास कल्याणविजयजी म. साहेवने आचार्यपद लेवा माटे खुबज आग्रह करवामां आन्वयो हतो परंतु कोइना पण आग्रहने बस न थतां हमेशां जे पद उपर हुं छुं ते वरावर छे तेम कही आचार्य पदवी लेवानुं टाळयुं हतुं.

पू. पं. कल्याणविजयजी गणिमां विशिष्ट अन्वेषण शक्ति एंवी आत्मसात् हती के विहारमां कोइपण गाममांथी पसार थाय तो ते गामने पादरे उभेला पाळीये पछी ते गमे तेनो होय तो पण तेनो लेख तेनो इतिहास अने तेनी पाछळ रहेलु रहस्य आ बधानुं तेओ अन्वेषण करता. नानामां नाना गाममां जाय तो ते गामनुं दहेरासर.

उपाश्रय अने त्यां पडी रहेलां जुना चोपडा पानां के चोपानीयां बधानुं बारीकरीते निरीक्षण करता अने तेमांथी जेने लोको नकामुं कही फेंकी देवा जेवुं मानता तेमांथी ते इतिहास परंपरा अने तत्त्वज्ञाननुं नवनीत शोधी काढता.

पू. पं. कल्याणविजयजी गणि. सिंहनी पेटे निडर प्रकृतिना हता. ते कोइनी षण आभा प्रतिभा लागवग आडंबर के खोटा तेजथी अंजाता न हता. तेमने जे साचुं लागे ते कहेतां जे कांइ सहन करवुं पडे ते सहन करवा हमेशा तत्पर रहेता. वधुमां पोते मानेल विचारेल अने प्रचारेल वात बराबर नथी, नुकसान करता छे ते ख्याल आवे तो तेना स्वीकार करवामां कीर्ति यश के महत्ता जरापण आडे लाच्या वगर स्पष्टपणे कहेता के मे क्युं छे, विचार्युं छे पण हवे मने लागे छे के आ करवा जेवुं नथी तो तुर्त ते करवामां अचकाता नहोता

पू. पं. कल्याणविजयजी गणिनुं नाम में वणा वर्षोथी समर्थ विद्वान इतिहासज्ञ तरीके सांभलेलुं पण तेमने प्रत्यक्ष परिचय तो तेओ ज्यारे वि. सं. १९९४ मां विद्याशालाए आच्या त्यारे थयो. परंतु गाढ परिचय तो तेमना कल्याणकलिका भाग १-२ ना प्रकाशनमां थयो अने ते परिचय तेमना कालधर्म सुधी सतत रळो एटलुं ज नहि पण तेमनी पासे तेमणे एकठा करेल प्राचीन साहित्यना आंखनी तकलीफना कारणे अणशोधेल अने अणप्रकाशित पोटलां मारे त्यां मोकल्यां अने प्रकाशित करवानुं कहुं त्यारे हुं तेमने अति विश्वसनीय वन्यो. पाळळना

વર્ષોમાં તો એક બે વર્ષમાં જો તેમને ન મળાય તો મને
 ચેન ન પડતું. ઇટલું જ નહિ પણ હું જાલોર જાઉં ત્યારે
 ગમે તેવું કામ હોય પણ તેમના સાનિધ્યમાં એક બે દીવસ
 રહેવાનું રાખતો.

જૈન સંઘમાં પૂ. પં. કલ્યાણવિજયજી ગણિનું સ્થાન
 પુરે તેવી ઇતિહાસના વિષયમાં કોઈ વ્યક્તિ નથી તે કહેવામાં
 કોઈ અતિશયોક્તિ નથી

આજથી ૩૧ વર્ષ પહેલાં આ કલ્યાણકલિકા પુસ્તકનું
 સંપાદન મારે ત્યાં પૂ. આ. દેવશ્રી વિજય ભદ્રંકરસૂરિજી
 મહારાજની નિશ્રામાં થયું હતું. આના પુનર્મુદ્રણ માટે પૂ.
 મુનિરાજશ્રી વજ્રસેનવિજયજી મ. દ્વારા આ કામ સોંપાયું.
 આજે ઓફસેટની સુવિધા હોવાથી છપાયેલ કલ્યાણકલિકામાં
 જે શુદ્ધિપત્રક હતું તે ગ્રંથમાં સુધારી પુનર્મુદ્રણ કરેલ છે.

આ ગ્રંથને યથાવત્ કોઈપણ સુધારા-વધારા વિના
 મુદ્રિત કરવામાં આવ્યો છે કેમકે આ ગ્રંથ નિર્માણ પાછલું
 જે પરિશ્રમ સ્વ. પૂ. પં. શ્રી કલ્યાણવિજયજીએ કર્યો છે,
 તેથી સવિશેષ પરિશ્રમ કરવાનું રહેતું નથી.

મંદિરોના શિલ્પ, વિધિવિધાન અને મુહુર્તાદિ માટે
 આ ગ્રંથ સવિશેષ ઉપયોગી હોવાથી અને તેની સુભ માગણી
 હોવાથી તેમના શિષ્ય પૂ. મુનિરાજ મુક્તિવિજયજી મ.
 તથા પૂ. મુનિરાજ મિત્રવિજયજીની પ્રેરથાથી પ્રકાશિત
 કરવામાં આવ્યો છે

अंते विधिविधानकारके तथा मुहूर्तादिना अर्थीओने आ ग्रंथ सुलभ यतां खुबज उपयोगी नीवडशे तेवी आशा साथे आ ग्रंथ फरी प्रकाशित करेल छे

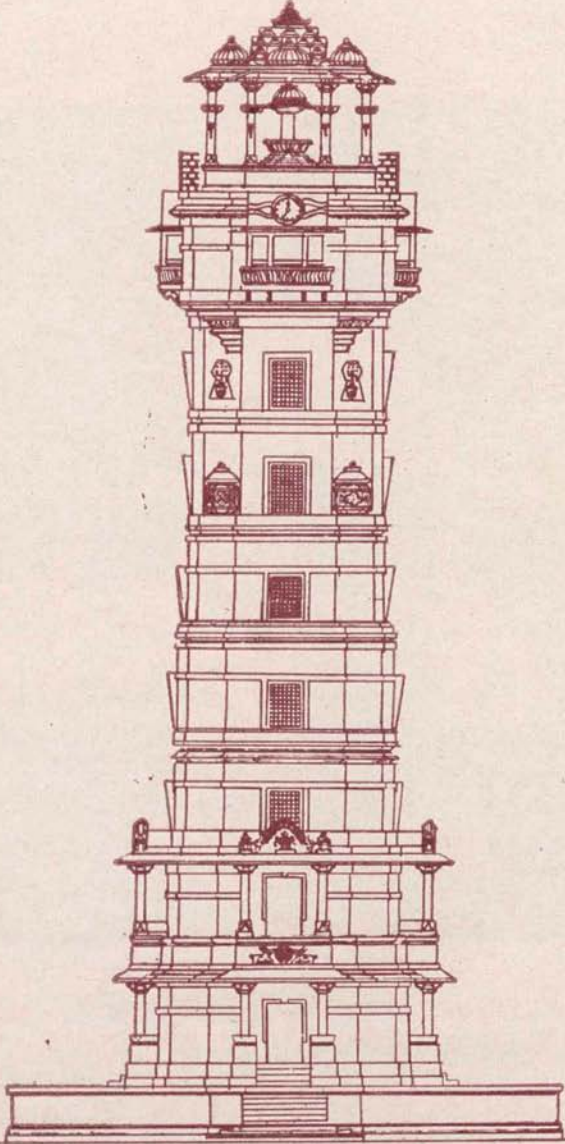
पू. पं. कल्याणविजयजी गणिवरनुं योगदान श्री संघ उपर सविशेष छे. ते महापुरुषना आ ग्रंथना पुनर्मुद्रण प्रसंगे मने तेओने स्मरणाञ्जलि आपवानुं आपवा बदल पू. गुरुदेव मुक्तिविजयजी म. पू. मुनिराजश्री वज्रसेन—विजयजी म. सा. तथा श्री भंवरलाल सोनमलजी काठारी जालोरवालाने आभार मानी विरमुं छुं.

पं. मफतलाल झवेरचंद गांधी
४, सिद्धार्थ सोसायटी, पालडी, अमदावाद—७

१५-३-८७

-
- | | |
|---|--------|
| (१) श्री जैन संघ गोल उमेदावाद की तरफ से प्रति | १०० |
| (२) मुथा मोहनलाल चंपालाल दीपचन्द | ,, १०० |
| (३) श्री पार्श्वनाथ आहोर श्री जैन संघ
आहोर की तरफ से | ,, १०० |
| (४) श्री जैन संघ सरत (अमरसर) की तरफसे | ,, १०० |
| (५) श्री जैन संघ बालवाडा की तरफ से | ,, १०० |
| (६) श्री जैन संघ मांडवलावालों की तरफसे | ,, १०० |
| (७) शा. गुणेशमल मुनीलाल बाबुलाल बेटापेता
ताराजी निवासी बालवाडावालों
की तरफ से | ,, ५० |
| (८) श्री जालोर जैन श्राविका चारथुइ संघ
जालोर की तरफ से | ,, ५० |
| (९) मुथा रूपचन्द हरखचन्दजी सोनवाडीया
निवासी मांडवलावालों की तरफ से | ,, २५ |

कीर्ती स्तम्भ

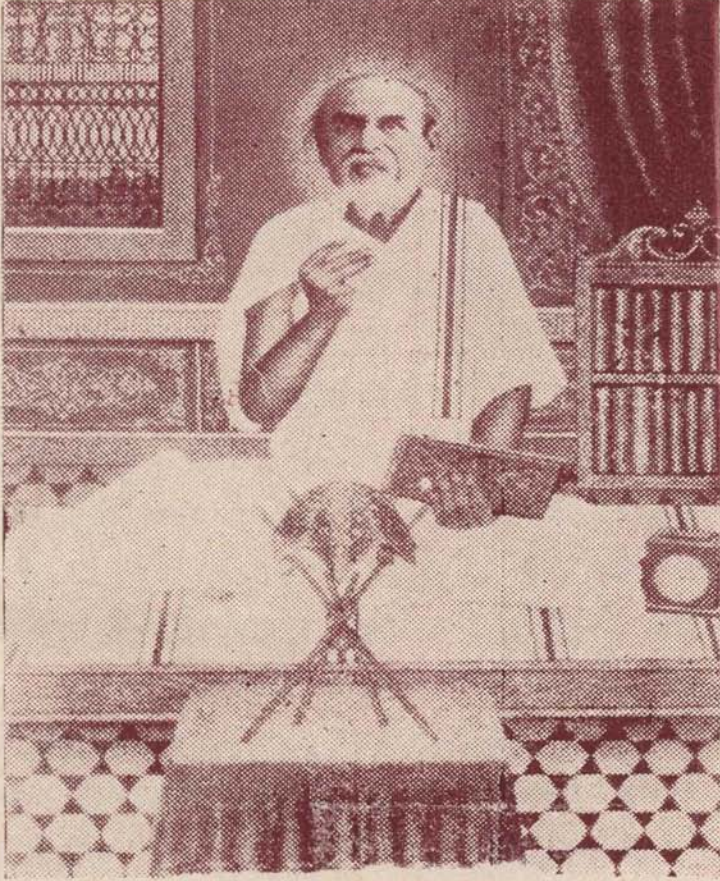


श्रीमद्वज्रान्ते वसिष्ठ पन्थाय श्री विद्यानन्द विजयजी महाराज. एवं मुनिराज श्री नेमविजयजी, हीरावत, के तद उपदेश द्वारा भगवान महावीर के २४०० वें निर्वाण स्मृति में

जालोरस्थित कीर्तिस्तंभ



इतिहासवेत्ता समर्थ विद्वान्
प. पू. पं. कल्याणविजयजी गणिवर



परमपूज्य मुनिराजश्री
सौभाग्यविजयजी म. सा.

कल्याण कलिकानी

प्रस्तावना.

नामप्रदान.

लगभग २५ वर्षथी शिल्प, ज्योतिष अने प्रतिष्ठाविधिनुं मार्ग-दर्शक पुस्तक लखवानी मित्रो तथा भाविकोनी प्रेरणा हती, पण अन्यान्य कार्योने लीधे ए विषयोमां बहु लक्ष जतुं न हतुं. चालु कार्योना भार ओछो थतां थोडा वर्षो उपर ध्यान खेंचीने थोडुं थोडुं लखत्रा मांडयुं. ज्योतिष तथा शिल्पनां केटलांक प्रकरणो हिन्दीमां लख्यां पण खरां, परन्तु ए बंने विषयो एटला विस्तृत अने साहित्य-संपन्न छे के तेमां शुं लेवुं अने शुं छोडवुं ए एक समस्या थइ पडी, शारीरिक प्रकृति प्राय अस्वस्थ, आंखोमां मोतीयानी शरुआत अने अन्यान्य प्रवृत्तिओना कारणे अवकाशनी अल्पता, वली निजस्व-भावनी विस्ताररुचिता इत्यादि वातोना विचार करतां शिल्प अने ज्योतिषना स्वतन्त्र ग्रन्थोना निर्माणनी भावना कुंठित थइ गइ, छतां ए विषयोमां अत्यावश्यक विषयो उपर मुद्दासर लखवानो निर्णय अफर रह्यो. ए विषयमां टांचणो करवानुं चालु कर्युं अने प्रथम शिल्पनां केटलांक आवश्यकीय प्रकरणो लखी नाख्यां अने शिल्पसंहिताओमां ज्योतिषनो विषय पण अवश्य होय ज छे एटले शिल्पना ज अनुसंधान रूपे धारणागति अने मुहूर्तलक्षण नामना बे परिच्छेदो लखीने तेनी साथे जोडी दीधा. हवे मुद्दा विषयक एक ज एवो परिच्छेद रह्यो हतो के जेनो उपयोग विधिविधानोमां थतो होवा छतां विधिरूपे तेनुं विधिखंडमां स्थान न हतुं, तेथी मुद्दा परिच्छेदने ज्योतिषना अंतमां आपीने एकंदर १७ परिच्छेदोना

प्रथम भाग पूरा कर्यो, पण आ संदर्भनुं नाम शुं आपवुं एनो कोइ मार्ग जडयो नहि. शिल्प विषयक नाम करण करवामां आवे तो ज्योतिषनो विषय अलक्षित रही जाय जे विस्तारमां शिल्पनी अपेक्षाए कंडक ज उतरतो छे, बंने विषयने स्पर्शतुं नाम आपवामां पण कंडक ग्राम्यता जेवुं लाग्युं एटले आ ग्रन्थने निर्नामक ज राखीने विधिविषयक ग्रन्थने पूर्ण करवानो निर्णय कर्यो अने एभाग पण बनते प्रयासे पूरा करी दीधो. त्रीजा भाग बीजा भागना एक परिच्छेद जेवो ज छे पण अधिक विस्तृत भिन्न भिन्न विषयात्मक होवाथी पांच परिच्छेदमां वहेंची एनो एक स्वतंत्र खंड बनाव्यो छे.

बीजा त्रीजा खंडनी योजना अने काचो खरडो तैयार थइ गया पछी षाली एना नामनी विचारणा उभी थइ, बीजा भागना नामने अंगे तो बहु विचारवानुं न हतुं, प्रतिष्ठाकल्प अथवा एने मलतुं बीजुं कोइ नाम आपवाथी समस्या पती जाय तेम हतुं, पण खास मुंजवण प्रथम खंडने अंगे हती, अमारे आ पहेलो भाग स्वतंत्र ग्रन्थरूपे नहि पण कोइ ग्रन्थना एक विभाग रूपे गोठववो हतो, जो विधिखंडनी प्रधानता गणी तेने अनुसरतुं कोइ नाम आपीये तो प्रथम खंड तहन ज अनिर्दिष्ट रही जाय तेम हतुं एटले अमुक विषय सूचक नामने पडतुं मूकी फलसूचक नामनी तरफ लक्ष्य दोर्युं अने तरत ज “ कल्याणकलिका ” नाम उपस्थित थयुं अने ए ज नाम-करण नियत थयुं.

साइजने अंगे-आखो ग्रन्थ एकलो छपाववानो निश्चय हतो पण साइजनी वावतमां विचार करतां जणायुं के कोइ पण एक साइजमां छपावतां बधाने अनुकूल नहिं पडे, बुक साइजमां होय तो विधि करावनारने अगवडता जनक थाय अने पोथी साइजमां होय तो शिल्प तथा ज्योतिषना अभ्यासीओने अनुकूल पडे नहि, ए कारणे

प्रथम खंड बुक अने बीजो, त्रीजो खंड भेगा पोयी रूपे छपाववानुं निश्चित करायुं.

मुद्रण कामनी व्यवस्था—

मुद्रण कार्य जल्दी थइने पुस्तक वहेलुं बहार पडे एवी अमारी इच्छा होय ए तो स्वाभाविक गणाय, पण द्रव्य सहायकोनी उतावल अमारा करताये अधिक हती, पण आटलुं दलदार पुस्तक भावनगर के अमदावाद प्रेसमां छपाय अने अमे मारवाडमां प्रुफ मंगवीने सुधारीये तो पुस्तक क्यारे छपाइने बहार पडे ? लेखक अने आर्थिक सहायको केटली धीरज राखे ? अने एकला प्रेसवाला अने मुफरीडर पंडितने भरोसे पण काम केम छोडाय ?, भावनगर वा अमदावादमां एत्रा कोइ विद्वान् साधुनुं चोमासुं होय के जे आ काम करवामां योग्य अने करवानी भावनावाला होय तो पुस्तक अमदावाद छपावयुं ए विचारणा चालती इती एटलामां तपस्वी पं० श्रीकान्तिविजयजी गणिनी पत्र मल्यो, तेमणे जणाव्युं के “अम्हारुं चोमासुं बीजे नकी थइ गयुं हतुं पण शारीरिक कारणे डाक्टरनी सलाहयी अमदावाद आव्या छीये.” अमने प्रसन्नता थइ अने पूछयुं के “जो शारीरिक अडचण न होय अने कलिकानुं मुद्रण कार्य संभाली शकय तेम होय तो ए कार्य हुं तमने सोंपवा इच्छुं छुं” अमारा आ पत्रनो उत्तर पं० कान्तिविजयजीए स्वीकृतिना रूपमां आप्यो एटले प्रथम खंडना केटलाक परिच्छेदो तेमने मोकली आप्या अने आर्थिक सहायकोने सूचना पहोचतां खर्च माटे रकम पण अमदावाद श्रीविद्याशालानी पेटीमां पहोंची गइ. कार्य चालु थयुं अने गत वर्षना कार्तिक उतरतां १० फर्मा छपाया, पण एटलामां पं० श्रीकान्तिविजयजीने विहार करवानो प्रसंग आव्यो एटले अमारी सूचना प्रमाणे संपादननु कार्य तपस्वीप्रवर मुनि श्रीभद्रकरविजयजीने सोंपायुं अने ते पछी आनुं बंधु ज संपादकीय कार्य उक्त मुनिराजे ज कर्युं छे. आर्वने विद्वान् मुनिबरोए

कलिका प्रति श्रद्धा अने सेवाभाव बताव्यो छे तेथी अमने पूर्ण संतोष छे.

अग्रसहायको—

‘कलिका’नुं कार्य हजी पूरुं नहोतुं थयुं ते पहेलांथी लोको एना मुद्रणमां सहायक थवा माटे अमुक नकलोनी लागत किम्मत आपी ग्राहक रूपे पोतानां नामो लखाववा मांगता हता, परन्तु ए काम ग्रन्थनुं मेटर पूरुं थया पहेलां थइ शके तेम न हतुं. ज्यारे बंने भागोनी प्रेसकोपी थवा मांडी, प्रेसथी मुद्रण विषयमां पूछपरछ करी लीधी, ते पछी अनुमानथी जणायुं के प्रथम तथा द्वितीय भागनी पांच पांचसो कोपीओ कढावतां अनुक्रमे एक पुस्तकनी रु० ५) तथा रु० १०) नी लागत किम्मत आवशे, प्रथम भागनो पूरो खर्च श्रीगोदण (मारवाड)ना जैन संघे आपवानी इच्छा व्यक्त करेल होवाथी आ भागमां बीजा कोइनी सहायता स्वीकारी नथी, ज्यारे बीजा भाग माटे दशथी ओछी नकलोनी सहायता स्वीकारामां आवी नथी, मात्र पांच पांचसो कोपीथी लोक मांगणीने पहुँचाशे नहि एम जणातां प्रकाशक समितिण वधारानी पांच पांचसो नकलो कढावी छे, जे अधिकारिओने लागत किम्मते ज अपाशे एनो निर्धार करेल छे. जेटली नकलोनी किम्मत संघो तथा सद्गृहस्थो तरफथी मन्गेली छे तेदली नकलो एना अधिकारिओने विना मूल्ये आपवानो निर्णय थयो छे पण अधिकारी-अनधिकारीनो निर्णय ए माटे नियुक्त थयेल समिति द्वारा थशे अने ए निर्णय प्रकाशक समिति उपर जतां पुस्तको मार्गखर्च लेइने तेमने सोकलाशे.

पुस्तकना संपादनमां उपर्युक्त विद्वान् मुनिवरोए यथाशक्य परिश्रम कर्यो छे, छतां शरतचूक, दृष्टिदोष के प्रेसकर्मचारीओनी बेदरकारीथी जे कोइ अशुद्धिओ रही जवा पामी छे तेनुं शुद्धिपत्रक आपेल छे, जे जोइने वाचकगण रहेल अशुद्धिओने सुधारी लेशे.

प्रथम खंडनो उपोद्घात

कलिकाने अंगेनी प्रास्ताविक वातो प्रस्तावनामां कहेवाइ गइ छे हवे उपोद्घातरूपे प्रथम खंडना विषयोने स्पर्शता केटलाक सिद्धान्तोनी अहियां चर्चा करीशुं.

१-भारतीय प्रासादशिल्प

कलिकाना प्रथम खंडनो प्रमुख विषय 'प्रासादशिल्प' छे, शिल्प शब्द नीचे गमे तेटला विषयो आवता होय पण 'प्रासादशिल्प'ने अंगे भारतीय विद्वानोए जे विषय जेटलो खेडयो छे तेटलो बीजो कोइ नहिं, भारतना जे जे विभागोमां आर्य लोको पहुँच्यो छे ते प्रत्येक देश खंडमां पोताउं प्रासादशिल्प निश्चित करी ते पद्धतिए पोताना पूज्य देवोनां धामो निर्मित करी छे. प्रासादोनी पौराणिक जातिओ तथा कुलो गमे तेटलां होय पण वास्तुशिल्प मुख्य त्रण भागोमां वहेचायेलुं छे नागर १ वेसर २ अने द्राविड ३. नागर शिल्प उत्तर भारतव्यापक शिल्पनुं नाम छे, गोदावरीना दक्षिण तट बाजुनुं द्राविड शिल्प कहेवाय छे त्यारे जे नागरी तथा द्राविडी पद्धतियोना संमिश्रणथी उत्पन्न थयेल शिल्प पद्धतिने 'वेसरपद्धति' ए नाम अपायेल छे अने एनो प्रचार विन्ध्याचलथी दक्षिणे अने गोदावरीथी उत्तरे आ वचला प्रदेशमां थयो, आ त्रण शिल्पपद्धतियो उपरथी प्रासादोनी मुख्य नीचे प्रमाणेनी छ जातियो उत्पन्न थई—

“ कालिंगा नागरा लाटा, वाराटा द्राविडास्तथा ।

गौडा इति च षडेते, प्रासादाश्च सरेखकाः ॥ ”

અર્થ—કાલિંગો (કલિંગ દેશભવો), નાગરો, લાટો (લાટદેશ જાત-ઉત્તર ગુજરાત દેશીય), વારાટો (વારાટ-જયપુરથી ઉત્તર પ્રદેશોત્પન્ન), દ્રાવિડો (દ્રાવિડ-મદુરા કાંજીવરંતરના દેશના) અને ગોડદેશીય (પૂર્વ-ઉત્તર બંગાલ, આસામ દેશના) આ પ્રમાણે શિશ્વરવદ્ધ પ્રાસાદો ૬ નામોથી ઓલખાય છે, રેखा વિનાનાં વ્યંતરભૂતાદિનાં ચૈત્યોનો આમાં સમાવેશ થતો નથી.

ઉક્ત ષટ્કવિધ પ્રાસાદોના છંદ ભેદે તેમજ રેखा ભેદે હજારો પ્રકાર નિષ્પન્ન થાય છે જે નીચેના ઉલ્લેખથી જ્ઞાત થશે—

“દ્વાત્રિશ્ચ સહસ્રાણિ, ચતુઃશતયુતાનિ ચ ।

ઉક્તાનિ ભેદભિન્નાનિ, ધામ્નાં વૈ (પરમેશ્વરૈઃ) પારામપ્યરે ? ॥”

અર્થ—એકંદર ૩૨૪૦૦ વત્રીશ હજાર અને ચારસો દેવમંદિરોના નિશ્ચિત ભેદો સમર્થ જ્ઞાનીઓએ કહ્યા છે અને કલાભેદે તો વીજા પણ ઉપજે છે.

(૧) દેવભેદે પ્રાસાદચ્છંદ ભેદ—

“ચતુર્વક્ત્રસ્ય દેવસ્ય, ચતુરસ્રશ્ચતુર્મુખઃ ।

પ્રાસાદો બ્રહ્મણા પ્યુક્તો, નત્વન્યેષાં કદાચન ॥

સર્વેષાં વિવુધાનાં ચ, લિંગસ્ય ચ (ભવસ્ય હિ)

એકદ્વારો યુગાસ્રશ્ચ, પ્રાસાદઃ પરિકીર્તિતઃ ॥

એકવક્ત્રસ્ય લિંગસ્ય, પ્રતિમાયા ભવસ્ય ચ ।

વૃત્તો મહેશ્વરસ્યોક્ત, પ્રાસાદો યન્ન કસ્યચિત્ ॥

ચતુર્મુખસ્ય લિંગસ્ય, ચતુર્દ્વારસ્તથા ઽપરઃ ।

પ્રાસાદો વર્તુલઃ પ્રોક્તો, હીશ્વરસ્ય ન કસ્યચિત્ ॥

એકવક્ત્રસ્તથાઽષ્ટાસો, વિષ્ણોશ્ચૈવ ભવસ્ય ચ ।

ચતુર્દ્વારઃ પુનરયં, ભવસ્ય બ્રહ્મણસ્તથા ॥

चतुरस्रायता ये च, तथा वृत्तायतास्तु ये ।
 एकद्वाराः स्मृताः सर्वे, प्रासादा लक्षणान्विताः ॥
 मुक्त्वा लिंगं महेशस्य, तथा च कमलासनम् ।
 सर्वासां प्रतिमानां तु, प्रासादाः समुदाहृताः ॥”

अर्थ—ब्रह्माजीए चतुरस्र अने चतुर्द्वार प्रासाद ब्रह्माजीने माटे कस्यो छे, बीजा कोइने माटे नहिं.

चतुरस्र अने एकद्वार प्रासाद सर्व देवो तथा शिवलिंगने माटे कहेल छे. एक मुखलिंग, शिवनी प्रतिमा तथा शिवने माटे वृत्तच्छंद-नो प्रासाद कहेलो छे बीजा कोइ देवने माटे नहिं. चतुर्मुख लिंगने माटे वृत्त चतुर्मुख प्रासाद कस्यो छे, आ प्रासाद पण शिवने माटे ज बने छे बाजा कोइने माटे नहिं, एकद्वार अष्टास्र प्रासाद विष्णु तथा शिवने होय छे अने चतुर्मुख अष्टास्र प्रासाद शिवने तथा ब्रह्माजीने करी शक्य छे. लंब चतुरस्र प्रासादो तथा वृत्तायत छंदना एकद्वारना लक्षणयुक्त प्रासादो शिवलिंग तथा ब्रह्माजी प्रतिमाने छोडीने सर्व-देव प्रतिमाओने माटे शुभदायक कहेल छे.

(२) देशदेशनी वर्तनाओ—

आजकालना आ तरफना शिल्पिओ दक्षिण, पूर्व आदि दरेक देशमां जइने जिन प्रासादो बनावी आवे छे, पण तेओ वर्तना एक ज नागरी जाणे छे अने तेज वर्तना प्रमाणे प्रासादोनुं शिल्पकाम करे छे जे बराबर नथी, जे देशमां जे वर्तना चालती होय ते देशमां तेज वर्तना प्रमाणे काम करवुं जोइये, शिल्पनी कुल छ वर्तनाओ छे कई वर्तना कया देशमां वर्तवी जोइये ए विषयमां लक्षणसमुच्चय कार कहे छे—

“ मेर्वादिगरूडान्तेषु, नागरी वर्तनोदिता ।

नागरी सदृशी लाटी, किन्तु सा दारुनिर्मिता ॥

अधिकैः कर्मभिर्ज्ञेया, चन्द्रशाला धरा शुभा ॥
 प्रमाणं नागरीं कृत्वा, वराटी कीर्तिता बुधैः ॥
 सपत्रबल्लिकास्तंभ—पंक्तिहृद्यत्र जंघिका ॥
 मेखलान्तरपात्राणि, द्राविडी सा निगद्यते ॥
 कालिंगी गौडिका तुल्या, मञ्चिकापादचन्द्रिका ॥
 इत्युक्ता किञ्चिद्दुःशान्, स्थूलरूपेण शास्त्रतः ॥
 नागरी मध्यदेशे तु, सौख्यदा वर्तना मता ।
 वाराह्याद्याः, स्वदेशेषु, अन्येष्वन्याश्च दुषिताः ॥ ”

अर्थ—मेरुथी गरुडपर्यन्तना प्रासादोमां नागरी वर्तना कहेली छे, लाटी वर्तना नागरी सरस्वी ज होय छे, पण लाटी वर्तना लाकडाना काममां वर्ताय छे. नागरी करताये आ वर्तनाथी काष्ठनां चैन्योमां बहु ज जीणुं कोतर काम कराय छे अने आ वर्तना प्रमाणे बनावाता काष्ठनिर्मित चैन्योनी आगल चंद्रशाला मूकाय छे. नागरीने ज प्रमाण करीने विद्वानोए वाराटी वर्तना कही छे, अर्थात् वाराटी पण नागरीथी बहु जुदी नथी पण आटली विशेषता होय छे के—आमां स्तंभो उपर तथा जांघमां पह्लव युक्त वेलडीओ खोदाय छे, अने ज्यां मेखलाओमां अंतर पत्रो होय ते वर्तना द्राविडी कहे-वाय छे, कालिंगी तथा गौडी ए बने वर्तनाओ मलती ज होय छे, फरक मात्र ए छे के कालिंगीना मंची थरमां एक चतुर्थांश भागे चंद्रिका होय छे, आम संक्षेपमां स्थूलरूपे वर्तनाओनुं शास्त्र थकी निरूपण कर्युं, नागरी वर्तना मध्यदेशमां हिमालय विन्ध्याचल वच्चेनो प्रदेशमां वर्ताय छे, अने उक्त देशमां ते सुखदायक मनाय छे वाराटी आदि पोतपोताना देशमां शुभ गणाय छे ज्यारे बीजा देशोमां ते दूषित गणाय छे.

आ उपरथी शिल्पकारोए समजी लेवुं घटे के नागरी वर्तना ज

सर्वत्र चालती नथी पण तेनो प्रदेश उत्तरभारत छे, लाटी वर्तना नागरी जेवी ज हती, पण ते पूर्वे (लाट गुजरात-काठियावाड-कोकण आदि) देशोमां लाकडाना प्रासादोमां चालती हती. आजे उक्त देशो-मां पाषाणना प्रासादोमां ए वर्तय तो वांधो नथी. वाराटी उत्तर तथा पूर्वे राजस्थानना प्रदेशोमां चालती हती, आजे पण ए देशोमां वाराटी प्रमाणे ज शिल्पकाम वर्तवुं जोइये, द्राविडी मद्रास तरफ पांड्य अने आन्ध्र प्रदेशोमां, कालिंगी दक्षिण बंगाल, उडीशा, दक्षिण विहार तथा दक्षिण कोशल अने गौडी उत्तर बंगाल, आसाम, उत्तर विहार, पश्चिम बंगाल तथा उत्तर कोशल इत्यादि देशोमां वर्तवी जोइये एवो शास्त्रादेश छे.

(३) वेधदोषो—

“ अग्रतः पृष्टतश्चैव, वामदक्षिणतोऽपि वा ।

प्रासादं कारयेदन्यं, नाभिवेधविवर्जितम् ॥”

अर्थ—प्रासादनी सामे, पृष्ठे, डावे वा जमणे भागे बीजो प्रासाद कराववो, पण नया प्रासादनी नाभिवेध टालवो जोइये.

“ शिवस्याग्रे शिवं कुर्याद्, ब्रह्माणं ब्रह्मणस्तथा ।

विष्णोरग्रे भवेद्विष्णु, जैने जिनं रवे रविम् ॥”

अर्थ—शिवने आगे शिव, ब्रह्माने आगे ब्रह्मा विष्णुने आगे विष्णु जिननी आगे जिन अने सूर्यनी आगे सूर्यनी प्रतिमा प्रतिष्ठित करवी जोइये, पण एकनी आगे बीजा देवनी प्रतिमा बेसाडवी नहि, भिन्ननामिक देवो एक बीजाने सामे बेसाडवाथी परस्पर नाभिवेध दोष उपजे छे.

“ चण्डिकाग्रे भवेन्माता, यक्षः क्षेत्रादिभैरवः ।

ज्ञेयास्तेषामभिमुखे, ये येषां च हितैषिणः ॥”

अर्थ—चंडिकादेवीने सामे माता यक्ष के क्षेत्रपाल भैरवने बेसाडवा. तात्पर्यार्थ ए छे के जे जे देवो जेना हितैषिओ होय ते तेनी सामे बेसाडवा सारा छे.

“ जिनेन्द्रस्य तथा यक्ष-देवाश्च जिनमातृकाः ।

आश्रयंति जिनं सर्वे, ये चोक्ता जिनशासने ॥”

अर्थ—जिनेन्द्रना यक्षदेवो, जिनमाताओ अने बीजा जे कोइ जिनशासनमां जैन देवो कहेला छे ते सर्वे जिनना आश्रयमां रही शके छे.

“ वर्जयेदर्हतः पृष्ठ-मग्रं तु शिवसूर्ययोः ।

पार्श्व तु ब्रह्म-विष्णोश्च, चण्ड्याः सर्वत्र वर्जयेत् ॥”

अर्थ—जिननो पृष्ठ वेध, शिव सूर्यनो अग्रवेध, ब्रह्मा विष्णुनो पार्श्व वेध अने चंडीनो सर्व वेध वर्जवो.

“ प्रसिद्धराजमार्गस्य, प्राकारस्यान्तरे पि वा ।

स्थापयेदन्यदेवांश्च, बहिर्वास्तुकवर्जितम् ॥ ”

अर्थ—जो बे प्रासादो वच्चे प्रसिद्ध राजमार्ग पडतो होय अथवा तो एक वास्तुना कोटने आंतरे बाह्य भागमां बीजुं वास्तु होय तो त्यां बीजा देवनी प्रतिमा स्थापन करी शक्या छे.

“ वेधयत्रधकयोर्वास्तवोस्त्यक्त्वा द्विगुणमन्तरम् ।

यथेष्टं सकलं कार्यं, कृतं तच्छुभशान्तिकृत् ॥”

अर्थ—वेधय अने वेधक वास्तुओनी वच्चे वास्तुथी बमणी भूमिनु अंतर होय तो त्यां वेध उपजतो नथी, त्यां इच्छानुसार सर्व कार्य थइ शके छे अने त्यां करेल कार्य शुभ अने शांतिदायक थाय छे.

(४) भिन्न दोषो—

“ मंडलं जालकं चैव, कीलकं शुषिरं तथा ।

छिद्रं संधिश्च काराश्च (कारस्य), महादोषा इति स्मृताः ॥”

“ अर्थ—मंडल (हवा तथा प्रकाश माटे गभारामां गोल वक्राकं राखवुं, जालियुं राखवुं, लोहनो खीलो दीवारमां देवो, भित्तिओमां पोलाण राखवुं, छिद्र राखवां. चणतरमां प्रत्येक थरनी संधि उपरा उपरि राखवी ए प्रासाद निर्माणना महादोषो क्हा छे.

“ ब्रह्मविष्णुरवीनां च, शंभोः कार्या यदृच्छया ।
गिरिजायाजिनादीनां, मन्वतरभुवां तथा ।
एतेषां च सुराणां च, प्रासादा भिन्नवर्जिताः ।
प्रासादमठवेश्मानि ह्यभिन्नानि शुभानि हि ॥”

अर्थ—ब्रह्मा विष्णु सूर्य अने शिवना प्रासादो इच्छानुसार करवां आ देवोना प्रासादोमां भिन्न दोष गणातो नथी, पण पार्वती, जिन, गणेशादि देवो तथा मन्वंतरमां थयेल अवतारादीनां प्रासादोमां ‘भिन्न’ दोष वर्ज्यो छे, प्रासाद मठ तथा घरो अभिन्न होय ते ज शुभ गणाय छे.

भिन्न दोषनुं स्पष्टीकरण—

“ मूषाभिर्जालकैर्द्वारैर्गर्भो यत्र न भेदितः ।
अभिन्नं कथ्यते तच्च, प्रासादो वैश्व वा मठः ॥
कुक्षिद्वारैस्तथाजालैर्मूषाभी रश्मिभेदिताः ।
भिन्नस्तत्र स विज्ञेय, आलयः सिद्धिकामदः ॥
पुरतः पृष्ठतो द्वारा-बुभौ कुक्ष्योः प्रभेदितम् ।
मारुतैः स्पृश्यते यत्र, भिन्नं नाम तदुच्यते ॥”

अर्थ—जालिओ, जालियांओ अने द्वारो वडे जेनो गर्भ-भेदायेलो नथी होतो एवो प्रासाद घर वा मठ ‘अभिन्न’ कहेवाय छे, एथी विपरीत कुक्षि भागमां खोलेल द्वारो, जालको अने जालिओ द्वारा अंदर प्रवेशता सूर्य किरणो वडे जेनो गर्भ भेदायो छे एवो सिद्धिओ

તથા કામનાઓને આપનારો પ્રાસાદ મિત્ર ગણાય છે. આગલ પાછલ બે દ્વારો હોય અથવા બંને કુક્ષિઓમાં બે દ્વારો વડે ગર્ભ ભેદાયેલ હોય અને તે દ્વારોથી અંદર આવતા પવનો વડે દેવ પ્રતિમાનો સ્પર્શ થતો હોય તે વાસ્તુ મિત્ર દોષદૂષિત કહેવાય છે.

(૫) દિગ્મૂઢતાદિ મહાદોષો—

“ દિગ્મૂઢો નષ્ટછન્દશ્ચ, હ્યાયહીનં શિરોગુરુઃ ।

જ્ઞેયા દોષાસ્તુ ચત્ત્વારઃ પ્રાન્નાદે કર્મદારુણાઃ ॥ ”

અર્થ—દિગ્મૂઢ, નષ્ટછંદ, આયહીન, શિરોગુરુ, આ ચાર દોષો પ્રાસાદકર્મમાં મહાભયંકર જાણવા.

વિવરણ—દિગ્મૂઢ એટલે દિશાચૂક, દિશાને વદલે કોણમાં દ્વાર આવે તે દિગ્મૂઢ ૧, નષ્ટછંદ એટલે તલ છંદ હોય તે પ્રમાણે શિખર પર્યન્ત કામ ન કરતાં શિખરમાં છંદ વદલવો તે નષ્ટછંદ ૨, શુભ આય ન ઉપજતો હોય તે આયહીન ૩, શિરોગુરુ—એટલે નીચે કરતાં ઉપરના ભાગે દીવાલો જાડી કરવી અથવા ભૌમજ પ્રાસાદોમાં નીચે કરતાં ઉપર ભૂમિઓની દીવાલો જાડી અથવા ઊંચી કરવી તે શિરો ગુરુ ૪, આ ચાર વાસ્તુગત દોષો ભયંકર માનેલા છે.

“ સ્તંભવેધે યથા વાસ્તુઃ, વાસ્તુવેધે તથા સુરઃ ।

દેવવેધે ભવેન્મૃત્યુઃ, શિલ્પિકારાપક્રાદિષુ ॥ ”

અર્થ—જેમ સ્તંભવેધે વાસ્તુવેધ થાય છે તેમ વાસ્તુવેધથી પદગત દેવનો વેધ થાય છે અને દેવનો વેધ થવાથી શિલ્પી કરાવનાર આદિમાંથી કોઈનું મરણ થાય છે.

(૬) જાતિભેદ દોષ—

“ તલછન્દાનુસારેણ, તદ્ગ્નં શિખરં ભવેત્ ।

ઝર્ઘ્વં તુ ફાંસનાકારં, જાતિભેદોઽત્ર જાયતે ॥ ”

अर्थ—प्रासादनं तल आठ-दश आदि जेवा भागनुं होय तेवाज अंगोवालुं तेना उपर शिखर होय छे, छतां न्यूनाधिक अंगोवालुं अथवा फांसाना आकारे शिखर करे त्यां 'जातिभेद' दोष उत्पन्न थाय छे.

(७) हीनतादोष फल—

“ हीनमाने तु ये दोषाः, कथये तान् समासतः ।
 आयुर्हानिर्द्वारहीने, नालिहीने धनक्षयः ॥
 अपदस्थापितैः स्तंभैर्महारोगं विनिर्दिशेत् ।
 स्तंभव्यासोदये हीने, कान्ता तत्र विनश्यति ॥
 प्रासादे पीठहीने तु, नश्यन्ति गजवाजिनः ।
 रथोपरथहीने तु, प्रजापीडां विनिर्दिशेत् ॥
 कर्णहीनो यदा वास्तुर-युक्तफलमादिशेत् ।
 क्रीडन्तिराक्षसास्तत्र, फलं क्वापि न विद्यते ॥
 जंघाहीने भवेद् बन्धु-कर्तृकावरनाशनम् ।
 शिखरे हीनमाने तु, नश्यन्ति पुत्रपौत्रकाः ॥
 अतिदीर्घे कुलोच्छेदो-ह्रस्वे व्याधिसमुद्भवः ।
 स्थपुटस्थापने पीडा, कर्ता तत्र विनश्यति ॥
 स्कन्धहीनः कबन्धश्च, समसंधिः शिरोगुरुः ।
 अप्रसारितपादश्च, पञ्चैते धननाशकाः ॥ ”

अर्थ—प्रासादना अंगोपांगोनी हीनतामां जे दोषो होय छे ते संक्षेपथी कहुं छुं, द्वारनी हीनता आयुष्यनी हानि करे छे, नालनी हीनताथी धननो नाश थाय छे अपदमां स्तंभो स्थापवाथी (श्रेणि-भंगथी) महारोगनी उत्पत्ति कहेवी, स्तंभोनो व्यास अथवा उदय हीन होय तो स्त्रीनो नाश थाय प्रासादनी पीठ हीनतामां हाथी घोडाओ नाश पामे अने रथ उपरथनी हीनतावाला प्रासादथी प्रजाने पीडा

અપજે છે. જો કર્ણહીન વાસ્તુ હોય તો અયોગ્ય કલ કહેવું, તેવા વાસ્તુમાં રાક્ષસો ક્રીડા કરે છે, તેવા વાસ્તુથી શુભ ફલ કાંઈ પણ હોતું નથી, જંઘાહીન પ્રાસાદથી બન્ધુનો તથા કર્તાનો કરાત્રનારનો નાશ થાય છે, શિખરહીન હોતાં પુત્રપૌત્રોનો નાશ થાય છે, પ્રાસાદ શિખરનો ઉદય તેના માન કરતાં અતિશય વધારે કરે તો કુલ નાશ થાય તેમ પ્રમાણ કરતાં પણ ઘણું હીન (ઠીંગણું) કરે તો રોગની ઉત્પત્તિ થાય, ઢાઢાની માફક શિખરને ચોડું અને સ્વલકેલા દેખાવવું કરે તો પીડા અપજાવે અને કર્તાનો નાશ થાય. સ્કંધ વગરનું ૧ આંબલ સારા વગરનું ૨ સમાન સાંઘાવાલું ૩ અપર વધારે બોજવાલું ૪ અને પણ ભાગે સાંકડું ૫ આ પાંચ જાતના શિખરો ધનનો નાશ કરનારા થાય છે.

(૮) સત્વરવિનાશી વાસ્તુ—

“ અત્પલેપં બહુલેપં, સમસન્ધિ શિરોગુરુ ।

અપ્રતિષ્ઠં પાદહીનં, તચ્ચ વાસ્તુ વિનશ્યતિ ॥”

અર્થ—થોડા લેપવાલું ઘણા લેપવાલું, સમ સાંઘાવાલું અપર અધિક ભારવાલું પીઠ વિનાનું, પાયા વિનાનું વાસ્તુ જલ્દી નાશ પામે છે.

(૯) જીર્ણોદ્ધારવિષયે વિશેષ:—

“ અધિકં વા સમં હીનં, પૂર્વધામાદિ બાધકમ્ ।

પ્રાસાદાદિ ન કર્તવ્યં, કુર્યાંચ્ચેન્મૃત્યુમાપ્નુયાત્ ॥

અભિન્નાનાં વિધિશ્ચાયં, દોષો ભિન્ને ન વિચ્યતે ॥”

અર્થ—પ્રથમના બનેલ અને પ્રતિષ્ઠિત થયેલ પ્રાસાદ આદિને પાડીને તે સ્થાને નવીન પ્રાસાદાદિ ન બનાવવું. પ્રથમ કરતાં હીન જ નહિ સમાન અથવા તેના કરતાં અધિક પણ બનાવવું હોય છતાં

अखंड प्रासादादिने ताडीने नवुं बनाववामां दोष छे. एम छतां जो शिल्पी बनावशे तो ते मृत्यु यामशे, आ विधि अभिन्न (जिन गौरी गणेशादिनां) प्रासादोने विषे छे भिन्न (जेने विषे भिन्न दोष गणातो नथी आवा शिव सूर्यादिना) प्रासादोने विषे उक्त दोष होतो नथी.

(१०) दण्ड-ध्वजविषये मतान्तरो—

“ जीवदैर्घ्यसमोदण्डः, स्थौल्यं तद्भर्जितांशतः ।

चूलकान्तरदेवानां, स्थापनीयः प्रमाणतः ॥ ”

अर्थ—प्रासाद पुरुषना हृदय भाग जेटलो लंबो अने ते उपर छूटैला आंवलसारा नीचेना भाग जेटलो जाडो आंवलसारानी बहारनी फरके देवमंदिरो उपर प्रमाणोपेत दंड स्थापवो—

विवरण—तात्पर्यार्थ ए छे के मंडोवराना प्रहार थर उपरथी बांधणीना तलांचा सुधीनुं शिखरनुं जे प्रमाण होय ते प्रमाणनो ते प्रासादोने दंड करवो अने तेनी जाडाई शिखरनो जेटलो भाग ग्रीवा स्थाने छोड्यो छे तेटली करवी दंड जेना आधारे राखवो छे ते स्थान आंवलसाराथी सहेज बहारना भागे होय.

ध्वजाधारनो स्पष्ट स्थाननिर्देश—

“ शिखरस्य शरांशेन, चतुर्थेन गुणेन वा ।

उत्तमादिध्वजाधारं, मस्तकार्थेन वा क्वचित् ॥ ”

अर्थ—आंवलसारा नीचेना शिखरनो उंचाहना एकपंचमांश एक चतुर्थांश अने एक तृतीयांश नीचे ध्वजदंड रोपवानु स्थान करवुं कनिष्ठ दंडनु स्थान पंचमांशे मध्यदंडनु स्थान चतुर्थांशे अने जेष्ठ दंडनु स्थान एक तृतीयांश नीचे करवुं, कोहना मतमां मस्तक सुधीना शिखरना अर्धा भागे, एक तृतीयांशे तथा एक चतुर्थांशे

पण ध्वजदंडनु स्थान उत्तमादि दंडोने माटे करवानुं विधान मानेलुं छे.

(११) शिल्पविषयक केटलाक अप्रसिद्ध नियमो-

आजना समयमां मारवाड गुजरात देशीय प्रासाद शिल्पियोमां प्रचलित नियमो तो प्रासाद लक्षणमां आवी ज गया छे, पण केटलाक अप्रसिद्ध नियमो जे लक्षणसमुच्चादि ग्रन्थोमां प्रतिपादन करेला छे तेमांथी केटलाक अहींयां आपीये छीये ए वांचीने शिल्पी गण जाणी शकशे के तेओ जे कंड जाणे छे एटलुं ज शिल्प नथी पण घणुं छे, अमारो आशय ए नथी के बधाये आ नश नियमोने अनुसरे, पण आ नियमो उपरथी शिल्पीगणे एटलो तो धडो लेवो ज जोइये के प्राचीन प्रासादोमां ज्यां ब्यांइ पण आ नियमो प्रमाणे कार्य थयेलुं होय तेने अशुद्ध कहीने पोतानी विद्वत्तानुं प्रदर्शन न करावे पण “ बहुरत्ना वसुन्धरा ” ए वचनने प्रमाण मानीने नवुं नवुं जाणवा अने शीखवानो उद्यम करे.

कूर्म शिलामान-लक्षणसमुच्चये—

“ गर्भकर्णायतं सूत्रं, कृत्वा भागचतुष्टयम् ।
तदेकांशप्रमाणेन, मध्ये कूर्मशिलास्थितिः ॥
तन्मध्ये स्थापयेल्लिंगं, मध्यं नैव परित्यजेत् ।
मध्यस्थं हन्ति कर्तारं, ब्रह्मवेधान्न संशयः ॥
तस्मादीशं समाश्रित्य तत्स्थितिः सूत्रमानतः ।”

अर्थात्— गभारामां वे कोणो वच्चे सूत्र लंबावीने तेना ४ भाग करवा तेवा १ भाग माननी कूर्मशिला मध्यभागमां स्थापवी अने बराबर कूर्मशिलाना मध्यभागे शिवालग स्थापनुं पण शिला मध्यनो त्याग करवो नहिं गर्भ मध्यमां स्थित लिंग ब्रह्मवेध थवाथी

तेना करनारनो नाश करे छे माटे कूर्मशिलाने एक सूत्र प्रमाण ईशान दिशानी तरफ स्थापवी.

उक्त विधान शिवालयने आश्रित छे, प्रचलित कूर्मशिलाना मान करतां आमां जणावेल शिलामान घणुं अधिक छे ए वात ध्यानमां लेवा जेवी छे.

लिंगमाने प्रासादमान—

“अब्धीश्रतुर्गुणाश्च स्युः, प्रासादा लिंगमानतः ।

अर्धेन लिंगदैर्घ्येण, भित्तयो विस्तृताः क्रमात् ॥”

अर्थात्—शिव प्रासादो लिंगना उदयमानथी चतुर्गुणा, पांच गुणा अने छ गुणा माननां होय छे. अने लिंगनी लंबाईना अर्धा भागनी विस्तारमां भीतो करवी.

द्वारमानना विशेषप्रकारो—

आज काल प्रासादनुं द्वारमान शिल्पीओ प्रासादमंडन, क्षीराणैव, अपराजित वगेरेमां लख्या प्रमाणे—

“एकहस्ते तु प्रासादे, द्वारं स्यात् षोडशांगुलम् ।”

इत्यादिना क्रम प्रमाणे करे छे, पण आमां ज्येष्ठ कनिष्ठादिनो विचार करातो नथी, उक्त द्वारोदयना मानमां एक बे आंगल न्यूनाधिक करी आय मेलवी द्वारमान निश्चित करी ले छे, कया देवना प्रासादना द्वारनो उदय-विस्तार केटलो होवो जोइये ए प्रायः जोवातुं नथी अने शिवद्वारनी जेम ज कोइ पण देवना प्रासादनो द्वारोदय बनावी दे छे. खरी रीते जिनद्वार उदयार्ध प्रमाणे नहि पण विस्तारमां ते अधिक होवुं जोइये, केमके शिवद्वार उदयार्ध विस्तृत होवामां कशी हस्कत नथी. शिवलिंग अथवा शिवमूर्तिने माटे शिवद्वारनो ते विस्तार ओछो नथी पण जिनप्रतिमा तो मूलनायक रूपे बेठी ज होय, वली तेने परिकर पण साथे होय तेथी जिनप्रतिमा माटे उदयार्ध

विस्तार पर्याप्त थइ शकतो नथी. क्षीरार्णवमां जिनद्वार कनिष्ठ बता-
 वेल छे पण क्षीरार्णवनो ज्येष्ठ-कनिष्ठ विषयक लेख कंडक अशुद्ध थइ
 गयो लामे छे, गमे तेम होय पण जिनद्वार विस्तारमां अधिक होवुं
 जोइये एम अमारुं मानवुं छे, प्रचलित रीति प्रमाणे ४'-१३"
 (च्यार गज तेर इंच)ना प्रासादनुं मध्यम द्वारमान २'-१९" (बे गज
 ओगणीश इंच) आवे छे, एनुं मध्यमान २'-१३" उदयमां अने
 १'-९" विस्तारमां थाय पण आज काल आवां कनिष्ठ माननां
 जिनद्वारो बनतां नथी.

प्राचीन जिनचैत्योनां प्रायः जिनद्वारो कनिष्ठमाननां विस्तारा-
 धिक दृष्टिगोचर थाय छे ए निराधार तो न ज होवां जोइये, अमारी
 पासे लगभग त्रणसो वर्षनी जुनी एक हाथपोथीनो उतारो छे तेमां
 द्वारमानना प्रकारो नीचे प्रमाणे लख्या छे—

१- “अथ द्वारलक्षणं प्रासादचतुर्थांशद्वारविस्तारविस्तारादं
 द्विगुणोदयं द्वारमान ।

२-पुनर्भेदं द्वारमानमिह-प्रासाद पंचमांश द्वार विस्तार.

३-प्रासाद तृतीयांश द्वारविस्तारप्रमाण तद्द्विगुणोदयद्वार ।”
 (पत्र ५-६)

उपरना नियम प्रमाणे ४'-१३" ना प्रासादनुं द्वार विस्तारे
 १'-१३" अने उदये ३'-१"तुं थइ शके छे, आ विषयमां लक्षणसमु-
 चयकार वैरोचनि कहे छे.

“ धाममानान्निधाद्वारं, जंघाविस्तरभाजनः ।

तुर्यस्तादिभागेन, ज्येष्ठसंघातधर्मं क्रम्यात् ॥ ”

अर्थात्—वास्तुना मानने आसरीने द्वार त्रण प्रकारनुं होय छे,
 जे प्रासादनी जंघाना अर्धमां तेनो चतुर्थांश षडंश, सप्तमांश उमेरतां

जे मान थाय ते माननुं ते प्रासादनुं अनुक्रमे ज्येष्ठ मध्यम कनिष्ठ द्वार थाय छे.

कन्यसं चोत्तमे धाम्नि, मध्यमे मध्यमं सदा ।

उत्तमं कन्यसे द्वारं, गर्भमानादथोच्यते ॥

त्रि-चतुर्भूतभागेन, ज्येष्ठ-मध्यम-कन्यसम् ।

हानाद् हानं भवेद्द्वारं, गर्भे कर्णविराजिते ॥ ”

अर्थ—कनिष्ठ प्रासादने द्वार उत्तम, मध्यमने मध्यम अने उत्तमने कनिष्ठ माननुं करबुं, हवे गर्भमाने द्वारमान कहेवाय छे, गर्भगृहना विस्तारमां तेनो एक तृतीयांश एक चतुर्थांश एक पंचमांश उभेस्तां जे मान थाय ते मानना अनुक्रमे ज्येष्ठ मध्यम कनिष्ठ द्वारो जाणवां अने हीनमां पण द्वारमानगर्भगृहना विस्तार तुल्य होय छे.

उपरना विधान प्रमाणे ४'-१३" ना दशायतलना प्रासादना द्वारनो उदय ३'-५" नो आवे छे.

वली लक्षण समुच्चयकार कहे छे—

“ पिण्डिका कोणविस्तारं, क्षुरि(शौरि)धाम्नि क्वचिन्मतम् उच्छयो द्विगुणो द्वारा—दन्यथा वा स उच्यते ॥ ”

अर्थ—क्वचित् विष्णुना मंदिरमां तेनी पिंडिका (आसन) ना कोण विस्तार समान द्वार विस्तार मानेल छे अने विस्तारथी तेनी उंचाइ बमणी कही छे अथवा द्वारोदय बीजी रीते कहे छे—

“ कराङ्गुलैः शतषष्ठयथाद्यैर्दशहानिक्रमेण तु ।

द्वाराणि दश सिद्धानि, चत्वार्यंग्राणि तेषु च ॥

त्रीणि तन्मध्यशस्तान्येवं त्रीणि कन्यसान्यनु ।

उच्छयो वा त्रिधाविको (नव) दिग्नाड्यंगुलैः ।

उक्तं ज्येष्ठ कनिष्ठादि, द्वारं शुभकरं क्रमात् ।

उच्छयार्धेन विस्तीर्णं, शाखाविषमसंख्यया ॥ ”

अर्थ-१६० आंगल १, १५० आंगल २, १४० आंगल ३, १३५ आंगलना उदयवाला ४ द्वारो ज्येष्ठ, १३० आंगल, १२० आंगल अने ११० आंगलना उदयनां ३ द्वारो मध्यम अने १०० आंगल ९० आंगल तथा ८० आंगलना उदयनां त्रण द्वारो कनिष्ठ कहेवाय छे, आ ज्येष्ठ मध्यम कनिष्ठ द्वारोना उदयमां अनुक्रमे ९-१०-१० आंगलो उमेरतां द्वार विशेष शुभकारक बने छे, उदयथो अर्धमाने द्वारविस्तार करवो अने शाखाओ संख्यामां विषम करवी. एकंदर ४ ज्येष्ठ, ३ मध्यम, ३ कनिष्ठ आम १० द्वारो निष्पन्न थाय छे. (लक्षणसमुच्चये २९ मो विधिः)

उपर्युक्त द्वारना अनेक भेदभेदान्तरोनो विचार करी द्वार विषयक भूलो काठनार शिल्पिओ अने स्वयंभू निरीक्षकोए हीनाधिक्यनी अभुद्धिओ बतावतां पहेलां पोतानी योग्यता उपर लक्ष्य आपवुं.

उत्तमादिदंडोलुं परिमाण—

इन्द्र १४ ग्रह ९ तुंहहस्तो वा, क्रमाज्ज्येष्ठादिको भवेत् ।
वंशावृद्धिकरो वांस्यो, धर्माथौ शालपौंदरौ ॥”

अर्थ—चौद हाथनो दंड ज्येष्ठ, नव हाथनो मध्यम अने छ हाथ सुधीनो होय ते कनिष्ठ दंड कहेवाय छे, अर्थात् १ थी ६ हाथ सुधीनो होय ते कनिष्ठ, ७ थी ९ हाथ सुधीनो मध्यम अने १० थी १४ सुधीनो ज्येष्ठ दंड होय छे. एथी फलित थयुं के १४ हाथथी वधारे कोइ दंड होतो नथी. वांसनो दंड वंशनी वृद्धि करनार अने शाल तथा पौंदर वृक्षना दंडो ए वर्म अर्थने आपनार थाय छे.

ध्वजाद्वारनी दिशा विषे मतो—

“ प्रासादपृष्ठदेशे च, ऊचुः केचिद् ध्वजालयम् ।

ऐशाने वा प्रदेशे च, मारुते च तथापरे ॥”

अर्थ—केटलाको प्रासादना पृष्ठ भागमां ध्वजदंडनो आधार

करवानुं कहे छे, कोई इशानकोणमां, ज्यारे बीजानो वायव्यकोणमां ध्वज घर करवानो मत प्रदर्शित करे छे.

ध्वजदैर्घ्य-विस्तार—

प्रासादपादविस्तार-स्तदधार्धशितः क्वचित् ।
 धाम्नो द्विगुणदीर्घः स्यात्, सार्धो वा तत्समो ध्वजः ॥
 द्विहस्तविस्तरौ वा स्व-भूमिं माष्टि यथापि वा ।
 क्वचिन् मते तदर्थो वा, यथा प्राप्त्याऽथबोदितः ॥
 स्वदैर्घ्यषोडशांशेन, क्वचिदुक्तः स विस्तरात् ।
 सर्वार्थशान्तये शुक्लः, काम्यार्थे दिक्पतिप्रभः ।
 स्ववाहनांकितश्चो, ध्वं किंकणीचामरैर्युतः ।
 स्वदेवरूपकैश्चित्रः स्वशक्त्या शोभितः क्वचित् ॥”

अर्थ—ध्वजानो विस्तार प्रासादमनना चतुर्थांशे मानेलो छे, ज्यारे कोइ मतमां तेनो अर्ध अर्थात् प्रासादना अष्टमांश प्रमाणे ध्वजानो विस्तार कह्यो छे, ध्वजनी लंबाई प्रासादथी बमणी, दोढी अथवा प्रासाद समान पण कोइना मतमां मानेली छे. वली बीजी रीते ध्वजनो विस्तार बे हाथनो अने लंबाई दंडने नीचे पहींचे एवडी करवी. कोइनो मत छे के लंबाई पहोलाई उक्त लंबाईपहोलाईथी अडधी करवी. अथवा तो जेवो मले एवो ज ध्वज चढाववो. ज्यारे कोइना मते ध्वज विस्तार पोतानी लंबाईना सोलमा भागनो पण कहेल छे

सर्व कामसाधक तथा शांतिकारक श्वेत ध्वज कहेल छे, अमुक कामनी सिद्धिने माटे ते दिशाना दिक्पालना वर्णनो ध्वज चढाववो, ध्वजना उपरना भागमां ते देवना वाहन वडे लांछित करवो के जे देवना प्रासाद उपर ते चढवानो होय, वली तेना छेडाने घूघरीभोथी

યુક્ત કરવો, તે ઉપર દેવનાં રૂપકો ચિત્રાવવાં અને પોતાની શક્તિ પ્રમાણે તેને સુશોભિત કરવો.

(૧૨) દંડ અને દંડનું સાલ—

આજકાલ દંડના વિષયમાં ગુજરાતી તથા મારવાડી શિલ્પિઓમાં મતભેદ ચાલે છે, મારવાડી શિલ્પિઓ દંડનું માન શિલાશાસ્ત્રોક્ત કરે છે, જ્યારે ગુજરાતી શિલ્પિઓ દંડના નીચલા ભાગને તેના સાલ રૂપે માનીને દંડમાનમાં સામેલ ગણતા નથી, પણ ઉપરની નરજુના ઉપરના ભાગને જ દંડ માને છે અને નરજુ ધ્વજાધાર (કોલાવા) વચ્ચેના સાલને માનમાંથી બાદ કરે છે. એટલે દંડ બહુજ લંબો—માનાધિક થઈ જાય છે, અમારી માન્યતાનુસાર આમાં ગુજરાતી શિલ્પિઓ ભૂલમાં છે, દંડ અને દંડનું સાલ ક્યાંઈ પણ જુદાં બતાવ્યાં નથી નરજુમાં થઈ દંડનો જે ભાગ ધ્વજાલયમાં જાય છે તે વાસ્તવમાં જુદો હતો નથી પણ દંડનો જ નિમ્ન ભાગ હોય છે અને એનું માન દંડમાનથી ભિન્ન હોવું જોઈએ નહિ, પૂર્વ કાલમાં વાંસના દંડો હતા અને તે ધ્વજાદ્વારમાં રોપાતા ત્યાંથી જ એના માનની અને ગ્રંથીપર્વની ગણના થતી હતી તે નિકલી ન જાય એટલા માટે તેની જોડે બીજા વાંસડાઓને અંદર ફસાવી ધ્વજદંડને સજ્જન કરવામાં આવતો હતો અને વાંસની લીલી ચીપટીઓથી બાંધીને મજબૂત કરવામાં આવતો, જ્યારથી વાંસના દંડની પરમ્પરા ઉઠીને લાકડાના દંડો બનવા માંડ્યા ત્યારથી દંડોને વિષમ પર્વ અને સમગાંઠો દેખાડવામાટે લોહની અથવા પીતલની બંગડીઓ (ચૂડીઓ) ચઢાવવાની આવશ્યકતા પડી, શિલ્પિઓએ જોયું કે દંડના નીચેના છેડામાં બંગડી લગાડતાં તે નરજુમાં તેમ જ ધ્વજાધારના ઘાટામાં દંડનો છેડો આવશે નહિ અને તે ભાગ ગાંઠવાલો ન બનાવીને ત્યાંથી દંડનું માન ગણ્યું તો દંડ ‘સમગ્રંથિ અને વિષમપર્વ’ બનશે નહિ, એ

आपत्तिमांथी उगरवा माटे गूर्जर शिल्पिओए सालने जुदुं पाडी उपरना दंडने 'समग्रंथि विषमपर्व' बनाव्यो पण आम करतां दंड प्रमाणमां घणो लांबो थइने शास्त्रविरुद्ध बनी जशे एनो विचार न कर्यो, आ देशना विद्वान शिल्पिओने मारी सलाह छे के तमारी आ पद्धति बदलवी जोड्ये, आम करवाथी दण्ड लाक्षणिक नहिं बने एवी चिन्ता करवानी कंड ज जरूर नथी, आज्जे जेवा प्रकारनी दंडने बंगडीओ जडाय छे एवी ज होवी जोड्ये एवो कंड शास्त्रलेख नथी, दंडना विषम पर्वो स्पष्ट देखाय एटलुं ज मात्र गांठोनुं कर्तव्य छे अने ए काम दंडना सालने नीचे चूडीना आकारे बे आनी जाडी पातली जडवाथी पण थइ शके छे, नवजुनुं छेद तथा ध्वजाधारनो खाडो एवी रीते तैयार करो के तेमां दंडनुं साल आवी जाय अने दंड पण 'समग्रंथि विषमपर्व' बनी रहे अने दंडनुं प्रमाण पण न वधे.

(२३) देवासन विषे भ्रमणा—

आजकालना केटलाक स्वयंभू शिल्पिओ जिनदेवना आसन स्थान विषे भ्रमणामां पडया छे, छतां तेओ ए विषयमां पोताने निभ्रान्त गणीने पोतानी ते मान्यतानी पुष्टि करे छे अने पोताना हस्तकनां चैत्योमां शिल्पिओ उपर द्वाण करीने ते प्रकारे भूलभरेल' आसनो तैयार करावी तेना मध्यभागे जिनप्रतिमाने बेसाडावे छे ए प्रमाणे कराववामां तेओ आचार दिनकरना नीचेना श्लोको प्रमाण रूपे बतावे छे.

“ प्रासादगर्भगेहार्थे, भित्तिः पंचधा कृते ।

यक्षाद्याः प्रथमे भागे, देव्यः सर्वा द्वितीयके ॥

जिनार्कस्कन्दकृष्णानां, प्रतिमाः स्युस्तृतीयके ।

ब्रह्मा तु तुर्यभागेऽस्य, लिङ्गमीशस्य पञ्चमे ॥”

અર્થ—પ્રાસાદગર્ભના બે ભાગ કરી દ્વાર તરફનું ગર્ભાર્ધ છોડી સામેની ખીત તરફના ગર્ભાર્ધના ૫ ભાગ કરવા, ખીત તરફથી ગણતાં ગર્ભાર્ધરેખાની પાસેનો પાંચમો ભાગ ગણાશે, આ પાંચ ભાગો પૈકીના ૧ લામાં યજ્ઞાદિ, ૨ જામાં સર્વ દેવીઓ ૩ જામાં જિન સૂર્ય સ્કંદ કૃષ્ણની પ્રતિમાઓ, ૪ થા ભાગે બ્રહ્મા અને ૫ મા ભાગમાં શિવલિંગની સ્થાપના કરવી, *લોકોનો આ સામાન્ય અર્થ માનીને ત્રીજા ભાગના મધ્યમાં જિનપ્રતિમા મધ્ય આવે એવી રીતે પ્રતિમા બેસાડે છે અને પ્રતિમા મધ્ય પળ પલાંટીનો નહિં પણ મસ્તકની શિરવાનો અર્ધભાગ માને છે એનું પરિણામ એ આવે છે કે પલાંટી ૪ ભાગમાં પહોંચે છે અને આસન (પવાસન) નીચે આવે પાંચમો ભાગ લેવો પડે છે આમ આવો અર્થ લગાડતાં જિનાસન નીચે અર્ધ ગભારો પહોંચી જાય છે.

ત્રીજા મધ્યના હિમાયતી મહાનુભાવોને હું પૂછવા ઇચ્છું છું કે આમ ત્રીજા ભાગના ગર્ભે પ્રતિમાની શિલાનું મધ્ય રાખશો ત્યારે સપરિકર પ્રતિમાનું પરિકર શા આધારે રાખશો ? ત્રીજા ભાગ સુધી જિનાસનનો કોણ રાખતાં તો પરિકરની સ્થિતિ પાછલી ખીતને આધારે રહી શકે છે પણ તમારી કલ્પના પ્રમાણે તો લગભગ ગભારાનો એક ચતુર્થાંશ પાછલ સ્વાલી રહે છે શું એ બધા ભાગમાં નીમણ દેહને તેને આધારે પરિકર ઉઠું રાખશો ? અને એ કેવું સુંદર લાગશે ? ખાઈઓ શિલ્પ-શાસ્ત્રનો મર્મ સમજ્યા વિના એ શાસ્ત્રની મરૂકરી ન કરો, અપરાજિત પૃચ્છામાં એ વસ્તુ સારી રીતે સ્પષ્ટ કરીને સમજાવી છે જેને સમજો અને પકડેલ ભ્રમણાત્મક માર્ગથી દૂર થાઓ, તમારી ભ્રમણામાં ત્રાસ્તુસારનું ભાષાન્તર પણ હોઈ શકે પણ આવાં અશુદ્ધિ પૂર્ણ ભાષા-ન્તરો ઉપરથી કોઈ નિશ્ચિત ધારણા ન બાંધો !

(૧૪) શિલ્પિઓએ સામાન્ય-વિશેષ નિયમો સમજીને ચાલવું જોઈએ—

अन्यान्य शास्त्रोमां जेम सामान्य-विशेष नियमो होय छे तेम शिल्पशास्त्रमां पण आवा नियमो होय छे. सामान्य नियम त्यां सुधी ज लागु पडे छे ज्यां सुधी विशेष नियम न आवे, पण ज्यां विशेष नियमनुं विधान आवे छे त्यां सामान्य नियम उभो रहेतो नथी आ वातने अमो इत्यन्तथी समजावीशुं.

“ कुंभकेन समा कुंभी, स्तंभप्रान्तेन तूद्गमः। ”

इत्यादि श्लोकोमां बतावेल वाढसंबन्धी सामान्य नियम छे अने सामान्य रीते लघु प्रासादोमां चाल्या करे छे पण ज्यां ज्येष्ठ प्रासादोमां उदुम्बर गालवानो नियम लागु कराय छे त्यां “ कुंभकेन समा कुंभी ” इत्यादि नियम रद्द थाय छे अने ए माटे नवो नियम घडाय छे जे आ प्रमाणे—

“ उदुम्बरोनितां कुंभीं, कुर्यात् स्तंभं च पूर्वकम् ।

निरन्धारे च सान्धारे, कुंभिकान्तमुदुम्बरम् ॥ ”

अर्थात्—कुंभीने उंवरा जेटली ओछी करवी अने स्तंभनुं मथारुं पूर्ववत् दोढीया बरोबर ज करवुं, निरंधार तेमज सांधार प्रासादमां कुंभी-उंवरांनुं मथारुं बरोबर करवुं ”

क्षीरार्णवना उपरोक्त नवा विशेष नियमथी ‘ कुंभकेन समा कुंभी ’ वालो सामान्य नियम लोपाय छे.

वृक्षार्णव पण प्रचलित नियमने अंगे कहे छे—

“ उदुम्बरसमा कार्या, कुंभिका सर्वतो बुधैः ”

अर्थात्—‘ विद्वान् शिल्पिओए सर्वत्र कुंभी उंवरा जेटली ज उंची करवी जोइए;

क्षीरार्णव तथा वृक्षार्णवना उक्त लेखोथी उंवरो गालवा छतां “ कुंभकेन समा कुंभी ” ए बाधित नियमानुसारे जेओ कुंभीने उंवराथी उंची करे छे तेमने बोध लेवो घटे छे.

(१५) धातु प्रतिमा निर्माणविधि—

कलिकाना प्रथम खंडना १२ मा परिच्छेदमां मूर्तिनिर्माणना विषयमां अमोए विस्तारपूर्वक लखेल छे जे धातु पाषाण-स्नादि-निर्मित सर्व जातनी प्रतिमाओने लागु पडे छे, पण धातु प्रतिमाओ केवी रीते बनाववी ए संबन्धमां अमने कोइ शिल्पग्रन्थमां मार्गदर्शन न मल्युं, पण “ अभिलषितार्थचिन्तामणि ” नामक एक सार्व विश्विक उपयोगी ग्रन्थमां ए विषयनुं निरूपण दृष्टिगोचर थर्युं जे मूर्तिकारोना उपयोगी चीज जाणी अत्र लखीये छीये.

“ नवताल प्रमाणेन, लक्षणेन समन्विताम् ।

प्रतिमां कारयेत् पूर्वं, मदनेन विचक्षणः ॥

सर्वावयवसंपूर्णां, किञ्चित् प्रीतां दृशोः प्रियाम् ।

यथोक्तैरायुधैर्युक्तां, बाहुभिश्च यथोदितैः ॥ ”

अर्थ—प्रथम चतुर मूर्तिकारे शास्त्रोक्त लक्षणयुक्त नवतालना प्रमाणवाली, सर्वावयव संपूर्ण, कंडक प्रसन्न मुखवाली आंखोनें गमती शास्त्रोक्त आयुधो तथा हाथोवाली एकी मीणनी प्रतिमा बनाववी.

“ तत्पृष्ठस्कन्धदेशे च, कृकाट्यां मुकुटेऽथवा ।

हेमपुष्पनिभं दीर्घं, नालकं मदनोद्भवम् ।

स्थापयित्वा तत्रश्चाचीं, लिम्पेत्संस्कृतया मृदा ।

मर्षी तुषमयीं कृत्वा, कार्पासं शतशः क्षतम् ।

लवणं चूर्णितं श्लक्ष्णं, तथा संयोजयेद् मृदा ।

पेषयेत्सर्वमेकत्र, सुलक्षणे तु शिलातले ॥

धारत्रयं तदावर्त्य, तेन लिम्पेत् समन्ततः ।

स्वच्छः स्यात् प्रथमो लेपः छायायां कृतशोषणः ॥ ”

अर्थ—ते मीणनी प्रतिमाना पाछलना स्कंध भागमां हउपधीना

स्थानमां अथवा मस्तक उपर मुकुटना स्थाने धतूराणा फूलना आका रवाञ्छुं एक त्राञ्छुं मेणनुं नाल लगाडवुं अने ते पछी प्रतिमाने संस्कृत माटीना लेपो करवा, फोतरांनी मेप बनाववी, कपासने सेंकडोवार करीने झीणो करवो. लवण (खावाना मीठा) ने झीणुं वाटीने मेदा जेवुं करवुं पछी ए त्रणे चीजो माटीमां मेलववी अने ए मर्वने चीकणी शिलाडी उपर पाणी नाखीने लसोटवां एक रस थडने लेप योग्य बने त्यारे त्रणवार एना पिंडने उपर नीचे करी प्रतिमाना सर्व भागोमां तेनो पातलो लेप करवो अने छायामां सुकववो.

“ दिनद्वये व्यतीते तु, द्वितीयः स्यात्ततः पुनः ।
नस्मिन् शुष्के तृतीयस्तु, निचिडो लेप इष्यते ॥
नालकस्य मुखं त्यक्त्वा, सर्वमालेपयेद् मृदा ।
शोषयेत्तत्रयत्नेन, युक्तिभिर्बुद्धिमाधुरः ॥

अर्थ—वे दिवस बीत्या पछी वली चीजो लेप करवो, अने सुक्या पछी चीजो जाडो लेप करवो, मात्र नालीनुं मुख छोडीने उपर नीचे च्यारे बाजु प्रतिमाने माटीना जाडा लेप वडे डांकी देवी चतुर शिल्पिण वायु वगेरेना प्रयोगथी लिप्त प्रतिमाने बिलकुल सुकावी देवी.

“सिक्थकं तोलयेदादावचालग्रं विचक्षणः ।
रीत्या ताम्रेण रौप्येण, हेम्ना वा कारयेत्ततः ॥
सिक्थयाद्दशगुणं ताम्रं, रीतिद्वयं च कल्पयेत् ।
रजतं द्वादशगुणं, हेम स्यात्षोडशोत्तरम् ॥”

अर्थ—मेणनी बनेली प्रतिमामां लागेल मेण पहेलां तोलीने तेनुं वजन नकी करी लेवुं ते पछी ते उपर पूर्वोक्त प्रकारे माटीनुं पलास्तर करवुं अने प्रतिमा त्रांचानी अगर पित्तलनी बनाववी होय तो मेण थकी त्रांचुं पीतल दशगुणुं लेवुं, रूपानी बनाववी होय तो

रूपं वारगणुं अने सोनानी होय तो सोनुं सोलगणुं लेवुं कारण के मणना वजन करतां त्रांबा पित्तलनुं दशगणुं रूपानुं वारगणुं अने सोनानुं सोलगणुं वजन होवाथी आटल गुणी ए धातु गालीने मांहि भले तो ज मेणे रोकेली खाली जगा भराइने पूर्ण मूर्ति बनी शके (एटले के जो सोल तोला सोनानी प्रतिमा बनाववी होय तो १ तोला मीणनी प्रतिमा बनाववीने ते उपरथी संचो तैयार करवो, एवी ज रीते दश सेर पीतलनी प्रतिमा बनाववी होय तो एक सेर मेणनी प्रतिमा उपर माटीनो संचो तैयार करवो.)

“ मृदा संवेष्टयेद्द्रव्यं, यदिष्टं कनकादिकम् ।

नालिकेराकृतिं मूषां, पूर्ववत् परिशोषयेत् ॥”

अर्थ—प्रतिमा माटे सुवर्णादि द्रव्य लेवुं इष्ट होय तेने पूर्वोक्त संस्कृत मृत्तिका वडे च्यारे बाजु लीपीने वींटी देवुं अने नालिएरना आकारनी धातुगर्भाम्पा तैयार करवी अने पहेलांनी जेम सूखावी देवी.

“ बह्वौ प्रताप्य तामर्चां, सिक्थं निस्सारयेत्ततः ।

मूषां प्रतापयेत्पश्चात्, पावकोच्छिष्टवह्निना ॥

रीतिस्ताम्रं च रसतां, नवाङ्गारैर्ब्रजेद्भ्रुवम् ।

ससाङ्गारैर्विनिक्षिप्तै, रजतं रसतां ब्रजेत् ॥

सुवर्णं रसतां याति, पञ्चकृत्वः प्रदीपितैः ।

मूषामूर्धनि निर्माय रन्ध्रं लोहशलाकया ॥”

अर्थ—ते मृत्तिकालिप्त मेणनी प्रतिमाने अग्निमां तपाववीने तेमांथी वधुं मेण काढी नाखनुं, ते पछी धातुगर्भा मूषाने कोलसानी अग्निमां तपाववी, त्रांबु तथा पीतल नववार कोलसा नाखीने प्रज्ज्वलित करवाथी अवश्य ओगलीने रस बने छे रूपुं सात वार कोलसा बालवाथी ओगले छे अने सोनुं कोलसानी पांच वार आंच लागवाथी ओगलीने रस बनी जाय छे, धातु रस रूप धारण करे ते पछी

लोहनी सलीवडे मूषाना उपरना भागमां छेद पाडी नाखवुं ते पछी-

“ संदंशेन दृढं धृत्वा, तसां मूषां समुद्धरेत् ।
 तसार्चानालकस्यास्ये, वार्ति प्रज्वालितान्यसेत् ।
 संदंशेन धृतां मूषां, नामयित्वा प्रयत्नतः ।
 रसं तु नालकस्यास्ये, क्षिपेदच्छिन्नधारया ।
 नालकाननपर्यन्तं, संपूर्य विरमेत्ततः ।
 स्फेटयेत्तु समीपस्थं, पावकं तापशान्तये ॥
 शीतलत्वं च पातायां, प्रतिमायां स्वभावतः ।
 स्फेटयेन्मृत्तिकां दग्धां, विदग्धो लघुहस्तकः ।
 ततो द्रव्यमयी सार्चा, यथा मदननिर्मिता ।
 जायते तादृशी साक्षादङ्गोपाङ्गोपशोभिता ॥

अर्थ—सांडसीथी मजवूत पकडीने तपेल मूषाने अग्निमांथी उपाडवी अने तपेल प्रतिमाना नालना मुखमां प्रज्ज्वलित करेली वची राखवी ते पछी सांडसीमां पकडेल मूषाने यतनापूर्वक नमावीने नालकना मुखमां अखंड धाराए रस नांखवो, संचो भराइने नालाना मुख सुधी रस भराय त्यारे धारा बंध करवी. अने ते पछी पासेनी कोलसानी आग वगेरेने दूर करी देवी के जेथी तापनी शांति थतां संचाए भरेल रस जल्दी ठरी जाय, ज्यारे प्रतिमा पोतानी मेले ठरी जाय त्यारे ते उपरनी माटी-संचो फोडीने दूर करवी आ वधुं कार्य चतुर शिल्पीए घणी ज सावचेतीथी करवुं माटी दूर थतां जेवी मीणनी प्रतिमा हती तेवी अंगोपांग सहित धातु द्रव्यमयी प्रतिमा तैयार थशे,

यत्र काप्यधिकं पश्येच्चारणैस्तत्प्रशान्तये ।
 नालकं छेदयेच्चापि, पश्चादुज्ज्वलतां नयेत् ॥

अनेन विधिना सम्यग्, विधायार्चां शुभे तिथौ ।
विधिवत्तां प्रतिष्ठाप्य, पूजयेत् प्रत्यहं नृपः ॥ ”

अर्थ—ज्यां कहिं धातुरस अधिक देखाय ते कानस वडे चरावर करी नाखे, नालकने पण छीणी वडे कापीने ते स्थल कान-सथी ठीक करीने पछी प्रतिमाने उजालवी आ विधिथी चन्द्रबल पहोचतुं होय तेवा शुभ समयमां प्रतिमा तैयार करावी तथा विधि पूर्वक प्रतिष्ठा करावी राजा पूजा करे.

(१६) जिनचैत्यनिर्माणविषयक धार्मिकमर्यादा—

कलिकाना प्रथम खंडमां जिनचैत्यनिर्माणने अंगे भूमि परी-
श्राथी कलशलक्षण पर्यन्तनां सर्व आवश्यक अंगोनुं अने प्रतिमा
निर्माणनुं निरूपण कर्युं छे पण ए बधुं शिल्पशास्त्रने अनुसरतुं छे,
धर्मशास्त्रनी ए विषयमां शी मर्यादाओ छे ए पण जाणवुं आवश्यक
तो छे ज, एटले ए विषयनुं शास्त्रीच निरूपण संक्षेपमां जणावीने
ए विषयनो उपसंहार करीशुं.

छेल्ला श्रुतधर तरीके प्रसिद्धि पामेल आचार्य पवर श्रीहरिमङ्ग-
स्वरिजीए पोताना षोडश ग्रन्थमां जिनभवन निर्माणविषयक मर्यादा
नीचे प्रमाणे बांधेल छे जे एमना ज शब्दोमां नीचे उद्धृत करीये छीये—

“ न्यायार्जितवित्तेशो, मतिमान् स्फीताशयः सदाचारः ।
गुर्वादिमतो जिन भवन-कारणस्याधिकारीति ॥ ”

अर्थात्—न्यायोपार्जित धननो स्वामी, बुद्धिमान्, उदारशय,
सदाचारी अने गुर्वादिसंमत होय ते जिनभवन करावधानो अधिकारी
थाय छे.

“ कारणविधानमेत-च्छुद्धाभूमिर्दलं च दार्वादि ।

भृतकानतिसंधानं, स्वाशयवृद्धिः समासेन ॥”

अर्थ—शुद्धभूमि, शुद्धदल, भृतकानतिसंधान अने शमाशय-

नी वृद्धि ए चैत्य कराववानी संक्षेपमां विधि छे, हवे प्रत्येक विध्यं-
गोने समजावे छे.

“ शुद्धा तु वास्तुविद्या-विहिता सन्ध्यायतश्च योपास्ता ।
न परोपतापहेतुश्च, सा जिनेन्द्रैः समाख्याता ॥”

अर्थ—जे भूमि शिल्पशास्त्रे ग्राह्य कही होय, जे उत्तमन्यायधी
मेलवेली होय, अने जे कोइने संताप कारणी न होय तेवी भूमिने
जिनेश्वरोए शुद्ध कही छे.

“ शास्त्रबहुमानतः खलु, सञ्चेष्टातश्च धर्मनिष्पत्तिः ।
परपीडात्यागेन च, विपर्ययात् पापसिद्धिरिव ॥”

अर्थ—शास्त्रबहुमानधी, शुभ प्रवृत्तिधी अने परपीडाना परि-
हारधी ज धर्मनी सिद्धि थाय छे, जेम् एथो विपरीत वर्तवाधी
बापनी सिद्धि थाय छे.

“ तत्रासन्नोपि जनोऽसंबन्धपि दानमानसत्कारैः ।

कुशलाशयवान् कार्या, नियमाद् बोध्यंगमयमस्य ॥”

अर्थ—जमीन साथे संबन्ध न होय एवा तेनी नजीकमां रहे-
नारा मनुष्यने पण दान मान सत्कारो वडे शुभ परिणामी बनाववो,
आ निमित्ते शुभाशय उत्पन्न थवो ए ज तेनी धर्मप्राप्तिनुं अंग बने छे.

“ दलमिष्टकादि तदपि च, शुद्धं तत्कारिवर्गतः क्रीतम् ।

उचितक्रयेण यत् स्या-दानीतं चैव विधिना तु ॥

दार्ढ्यपि च शुद्धमिह यत्नानीतं देवताद्युपवनादेः ।

प्रगुणं सारवदभिनव-मुच्चैर्ग्रन्थ्यादिरहितं च ॥ ”

“ सर्वत्र शकुनपूर्व, ग्रहणादावत्र वर्तितव्यमिति ।

पूर्णकलशादरूप-श्चित्तोत्साहानुगः शकुनः ॥ ”

अर्थ—‘दल’ एटले इंट. पत्थर वगैरे पण तेना मालेक, पासेधी
याग्य मूल्य आपीने लोथेल अने विधि पूर्वक लावेल होय ते शुद्ध

गणाय छे. लाकडुं पण देवता आदिना उपवनथी जयणापूर्वक लावेल होय, सीधुं-सरल, नकर तथा गांठ-वेढादि रहित अने नवुं होय ते वास्तुमां वापरना योग्य ' शुद्ध ' गणाय भूमी-दल-काष्ठादि ग्रहणमां सर्वत्र शुभ शकुनपूर्वक प्रवृत्ति करवी. कार्य निर्मित्ते जतां जल पूर्ण कलशादि संमुख मलवो जेथी के प्रारब्ध कार्यनी तरफ मानसो-त्साह वधे ते शुभ शकुन कहेवाय छे.

“ भृतका अपि कर्तव्या,

य इह विशिष्टाः स्वभावतः केचित् ।

यूयमपि गोष्ठिका इह, वचनेन सुखं तु ते स्थाप्याः ॥

अतिसंघानं चैषां, कर्तव्यं न खलु धर्ममित्राणाम् ।

न व्याजादिह धर्मो, भवति तु शुद्धाशयादेव ॥ ”

अर्थ—जिनभवननिर्माण कार्यमां पगारदार नोकरो-कडिया मजूरो पण विशिष्ट स्वभावना जोइने ज नियत करवा अने ' तमे पण गौष्ठिको (चैत्य सभाना सभ्यो) छो ' आवा वचन द्वारा तेमने संतुष्ट करीने राखवा, वली तेमना उपर अधिक कामनो बोजो न मूकवो, केमके ते धर्म मित्रो छे; धर्म कपटथी सिद्ध थतो नथी पण शुद्ध अध्यवसायथी ज धर्म साध्य थइ शके छे.

“ देवोद्देशेनैतद्, गृहिणां कर्तव्यमित्यलं शुद्धः ।

अनिदानः खलु भावः, स्वाशय इति गीयते तज्ज्ञैः ॥

प्रतिदिवसस्य वृद्धिः, कृताऽकृतप्रत्युपेक्षणविधानात् ।

एवमिदं क्रियमाणं, शस्तमिह निर्दिशितं समये ॥

एतदिह भावयज्ञः, सद्गृहिणां जन्मफलमिदं परम् ।

अभ्युदयाऽव्युच्छिन्त्या, नियमादपवर्गबीजमिदम् ॥ ”

अर्थ—देवने उद्देशीने आ सद्गृहस्थोनुं कर्तव्य छे आवा विचा-स्थी करावनारनो आशय अति शुद्ध होय छे, कारण के 'अनिदान'

(निष्काम) भावने ज ज्ञानीओ, 'स्वाशय' कहे छे. थयेल-थता कार्यना निरीक्षणथी प्रतिदिन 'स्वाशय' नी वृद्धि थाय छे, आ प्रमाणे करातुं आ जिनभवन निर्माण शास्त्रमां शुद्ध कहेलुं छे. सद्गृहस्थोने माटे ए ज भावयज्ञ अने ए ज जन्मनुं श्रेष्ठ फल छे, आ चैत्य-विधान ज अभ्युदयनी परम्परा द्वारा निश्चितपणे मोक्षनुं बीज बने छे.

“ देयं तु न साधुभ्य-स्तिष्ठन्ति यथा च ते तथा कार्यम् ।
अक्षयनीव्या ह्येवं, ज्ञेयमिदं वंशतरकाण्डम् ॥”

अर्थ—जिन चैत्य साधुओने न आपवुं पण तेओ तेभां ठरे एवो प्रबन्ध करवो, आम मूलधन अक्षय थतां ते चैत्य बनावनारना वंशजोने संसार समुद्र तरवानुं साधन बने छे.

“ यतनातो न च हिंसा, यस्मादेषैव तन्नित्तृत्तिफला ।
तदधिकनिवृत्तिभावाद्, विहितमिदमदुष्टमेवेति ॥”

अर्थ—जिनभवन कराववामां जयणा राखतां हिंसा नथी, जे कइ आमां हिंसा थाय छे ते हिंसानिवृत्ति करनारी छे जे परिमाणमां हिंसा थाय छे तेथी अधिक हिंसाने ते निवृत्त करे छे तेथी जिनचैत्यनुं निर्माण गृहस्थ धर्मिने माटे निर्दोष ज छे,

(१७) जिनबिम्बनिर्माणनी धार्मिक विधि—

उक्त श्रुतधर आचार्य श्रीहरिभद्रसुरिजी जिन बिम्ब निर्माणनी विधि आ प्रमाणे लखे छे—

“ जिनभवने तद्बिम्बं, कारयितव्यं-द्रुतं तु बुद्धिमता ।
साधिष्ठानं ह्येवं, तद्भवनं वृद्धिमद् भवति ॥”

अर्थ—बुद्धिमाने जिनभवनमां स्थापवा माटे जल्दी जिनबिम्ब कराववुं के जेथी ते भवन साधिष्ठान थइ वृद्धिकारी थाय.

“ जिनबिम्बकारणविधिः, काले पूजापुरस्सरं कर्तुः ।
विभवोचितमूल्यार्पण-मनघस्य शुभेन भावेन ॥

नार्पणमितरस्य तथा, युक्त्या वक्तव्यमेव मूल्यमिति ।
 काले च धनमुचितं शुभभावेनैव विधिपूर्वम् ॥
 चित्सविनाशो नैवं, प्रायः संजायते द्वयोरपि हि ।
 अस्मिन् व्यतिकर एष, प्रतिषिद्धो धर्मतत्त्वज्ञैः ॥”

अर्थ—हवे जिनबिम्ब कराववानी विधि कहे छे—शुभ समयमां सदाचारवान् बिम्ब बनावनार शिल्पीनी पूजा—सत्कार करी शुभ परिणामे स्वविभवानुसार तेने मूल्य आपवुं, बिम्बकार जो पापाचारवालो होय तो तेने बिंब निर्माण माटे मोल आपवुं नहिं, मूल्य पण बजारू चीजोनी जेम नहिं पण युक्तिपूर्वक कहेवुं, वली बिम्ब लावती वेलाए पण यथाविधि शुभभावथी बिम्ब बनावनारने उचितधन—पारितोषिक रूपे आपवुं जोइये, जेथी बिम्ब करनार करावनारमांथी कोइनुं मन खिन्न थाय नहिं, आ बाबतमां मनःखेद याने चित्तभंग धर्मशास्त्र-कारोए निषेधो छे.

“एष द्वयोरपि महान्, विशिष्टकार्यप्रसाधकत्वेन ।
 संबन्धमिह क्षुण्णं, न मिथः सन्तः प्रशंसन्ति ॥
 यावन्तः परितोषाः, कारयितुस्तत्समुद्रवाः केचित् ।
 तद्बिम्बकारणानीह, तस्य तावन्ति तत्त्वेन ॥
 अप्रीतिरपि च तस्मिन्, भगवति परमार्थनीतितो ज्ञेया ।
 सर्वापायनिमित्तं, ह्येषा पापा न कर्तव्या ॥
 अधिकगुणस्थानयमात् कारयितव्यं स्वदौहृदैर्युक्तम् ।
 न्यार्याजितचित्तेन तु, जिनबिम्बं भावशुद्धेन ॥”

अर्थ—ए मानसिक प्रसन्नता वालो संबन्ध बिम्बकार—बिम्ब-कारकने माटे महान् छे, एज विशिष्टकार्य साधक थाय छे तेथी बंने वच्चेनो ए संबन्ध बगडवो एने सज्जनो सारू कहेता नथी, बिम्बकारकने ए कार्यमां जेटला परितोषो (भावोच्छासो) थाय छे ते

परमार्थी सर्व ते विम्बनिर्माणनां कारणो छे. विम्बकार उपर अप्रति ए परमार्थी भगवद् उपरनी अप्रीति छे अने ए सर्व विघ्नोनुं मूल छे. माटे पापी अप्रीति न करवी, वली, अधिक गुणवाला पोताना मनोरथो युक्त न्यायोपार्जित अने भावशुद्ध धन वडे जिन विम्ब तैयार कराववुं,

“ अत्रावस्थात्रयगामिनो बुधैर्दौर्हृदाः समाख्याताः ॥
बाल्याद्याश्चैता यत् क्रीडनकादि देयमिति ।”

अर्थ—विम्बनिर्माणमां विद्वानोए बाल्यादि अवस्थानुगामी त्रय मानसिक मनोरथे. कह्या छे, अवस्थानुसारे मनोरथोभावी रमकडां आदि देवुं (बाल्यावस्थाना मनोरथमां बालशिल्पीने विम्बकार्यमां जोडीने रमकडां आदि भेट करे ए ज रीते कुमार तथा युवावस्थाना मनोरथोमां कुमार तथा युवा शिल्पीने निर्माण काममां बेसाडी कुमारोचित-युवोचित पदार्थो अर्पण करवां ए ‘दौर्हृद’ चिन्तवन छे.)

“ यद् यस्य सत्कमनुचित-मिह वित्ते तस्य तज्जमिह पुण्यम् ।
भवतु शुभाशयकरणा-दित्येतद् भावशुद्धमिह ॥”

अर्थ—‘आ महारा धनमां जेनो जेटलो द्रव्यांश अयोग्य रीने मलेलो होय तेनाथी उत्पन्न पुण्य तेना मूलधनीने थाओ’ आबो शुभ परिणाम करवाथी ते धन ‘भावशुद्ध’ थाय छे.

“ मन्त्रन्यासश्च तथा, प्रणवनमः पूर्वकं च तन्नाम ।
मन्त्रः परमो ज्ञेयो, मननत्राणे ह्यतो नियमात् ॥

अर्थ—विम्बनिर्माणना प्रारंभमां जे द्रव्यमांथी विंब निपजाववुं होय तेमां जिननाम मंत्रन्यास करवो, नामनी आदिमां ‘ॐ नमो’ जोडीने चतुर्थ्यन्त नाम बोलवुं ते नाममंत्रनो न्यास कहेवाय छे केम के आथी निश्चितपणे मनन-त्राण थाय छे.

“ विम्बं महत् सुरूपं, कनकादिमयं यः खलु विशेषं ।
 नास्मात् फलं विशिष्टं, भवति तु तदिहाशयविशेषात् ॥
 आगमतन्त्रः सततं, तद्वद् भक्त्यादिलिंगसंसिद्धः ।
 चेष्टायां तस्मृतिमान्, शस्तः खल्वाशयविशेषः ॥
 एवंविधेन यद्विम्ब-कारणं, तद्वदन्ति समयविदः ।
 लोकोत्तरमन्यदत्तो, लौकिकमभ्युदयसारं च ॥”

अर्थ—विंब म्होडुं छे के न्हानुं, ते रूपवान छे के साधारण, ते सोनानुं छे के अन्य द्रव्यनिष्पन्न इत्यादि जे विशेषो होय छे तेथी फल विशिष्ट थतुं नथी परन्तु आशय विशेषथी फलमां विशिष्टता आवे छे, जे आगमनी आज्ञाने अनुसरनार होय, भक्त्यादि लक्षणो वडे सिद्ध थतो होय, प्रत्येक प्रवृत्तिमां तेना स्मरणवालो होय ते आशय विशेष गणाय छे के जेथी फलनी विशिष्टता सिद्ध करे छे. आवा आशयथी विंब कराववुं ते लोकोत्तर विम्ब होय छे अने आथी बीजी रीते विंब बनावाय छे ते लौकिक होय छे लौकिक विंब अभ्युदयसार एटले करावनारनी उन्नति करनारुं होय छे.

“ कृषिकरण इव पलालं, नियमादत्रानुषङ्गिकोभ्युदयः ।
 फलमिह धान्यावाप्तिः, परमं निर्वाणमिव विम्बात् ॥”

अर्थ—कृषि करवामां चारानी जेम विम्बनिर्माणमां अभ्युदय ए अवश्यभावी प्रासंगिक फल छे, अने कृषिनुं मुख्य फल धान्यनी प्राप्ति होय छे तेम विम्ब कराववानुं उत्कृष्ट-मुख्य फल मोक्ष प्राप्ति छे.

ग्रन्थना संबन्धमां—

उपर शिल्पना संबन्धमां थोडीक चर्चा कर्या बाद हवे आ ग्रन्थने लगती बे वातो चर्चीने उपोद्घातनी समाप्ति करीशुं.

शिल्प शास्त्र जेटलुं उपयोगी छे तेटलुं ज दुर्बोध छे साथे ज ए विषयनुं उपलब्ध साहित्य एटलुं बधुं अशुद्ध छे के जेने लीधे विषय-

दुर्बोधनो अबोध बनी जाय छे, गवमैटनी सिरीजोमां अने सारी संस्थाओ तरफथी बहार पडेला शिल्पग्रन्थो पण एटला बधा अशुद्ध होय के तेनी ज्ञात अशुद्धिओनुं शुद्धिपत्रक बनावीये तोये हजारोथी गणाय एटली अशुद्धिओनी संख्या तो सहजे थइ ज जाय, प्रासादा-दिवास्तु शिल्पिओ परम्परा प्राप्त आम्नायथी भले काम करी ले छे पण तेमनी पासे ए विषयना जे ग्रन्थो होय छे अथवा तेमने ए विषयना जे कोइ संस्कृत श्लोको कंठाग्र होय छे तेने तो अशुद्धिओना ढगला कहीये तोये कंइ अजुगतुं नथी, जे विषयना साहित्यनी आवी दशा होय ते विषयमां कंइ पण लखवुं ए केटलुं मुश्केल होय छे एनो खरो अनुभव तो भुक्तभोगी ज जाणी शके.

प्रस्तुत खण्डान्तर्गत शिल्पना परिच्छेदो लखवामां अमे जे ग्रन्थोनो उपयोग कर्यो छे तेमां प्रमुख ग्रन्थो ए छे—अपराजितपृच्छा १, प्रासादमंडन २, वास्तुमंजरी ३, वास्तुसार ४, समरांगणसूत्रधार-५, वास्तुविद्या ६, शिल्परत्न ७, काश्यपशिल्प ८, मयमत ९, रूप-मंडन १०, देवतामूर्तिप्रकरण ११, राजवल्लभवास्तुक १२, शिल्प-रत्नाकार १३, विश्वकर्मविद्याप्रकाश १४, बृहत्संहिता १५, प्रतिमा-लक्षण १६, निर्वाणकलिका १७ इत्यादि.

१ पुनरुक्ति—

प्रासाद लक्षणमां अमने बे स्थले पुनरुक्ति करवी पडी छे, दंड लक्षण अने कलश लक्षण लखाइ गया पछी प्रासादलक्षण लखतां जणायुं के प्रासाद लक्षणमां ज्यारे बधा अंगोनुं निरूपण थयुं छे तो दंड कलशोनुं स्थान शून्य रहे ए ठीक नहि, जो कलश लक्षण अने दंड लक्षण आमां आवी जाय तो 'प्रासाद लक्षण' एक स्व-तंत्र ग्रन्थ बनी जाय, आ विचारणा युक्ति संगत जणातां अमोए उक्त बे विषयो प्रासादलक्षणमां दाखल कर्या छे आ एक प्रकारनी

પુનરુક્તિયો છે જ પણ સ્વતંત્ર પરિચ્છેદો સવિસ્તર હોઈ વિશેષ ઉપયોગી જાણી કાયમ રાખ્યા છે,

૨ જ્યોતિષ—

પ્રથમ સ્કંડમાં શિલ્પ પછી જ્યોતિષનો વિષય છે, શિલ્પથી પણ જ્યોતિષનો વિષય અધિક વ્યાપક છે એનું સાહિત્ય વિશાલ છે અને શુદ્ધ પણ છે, એ વિષયમાં અનેક વિદ્વાનોએ ગ્રન્થો અને નિબંધો લખી આ વિષયની મીમાંસા કરી છે એટલે અમને એ વિષયમાં બહુ લખવા જેવું લાગતું નથી, વલી અમે આમાં જ્યોતિષનો સર્વાંગ સ્પર્શ પણ કર્યો નથી, કેવલ મુહૂર્ત જોવામાં ઉપયોગી થતો વર્ષશુદ્ધિ, અયનશુદ્ધિ માસશુદ્ધિ, પક્ષશુદ્ધિ, અને દિનશુદ્ધિનો જ પ્રધાનપણે વિચાર કર્યો છે જે સર્વ મુહૂર્તોમાં કામ આવે એવો મૌલિક વિષય છે, બાકી વિશેષ મુહૂર્ત માત્ર જિનચૈત્ય સંબંધી જ આપેલાં છે. સ્વાતમુહૂર્તથી આરંભીને પ્રતિષ્ઠા પર્યન્તમાં જેટલાં મુહૂર્તો જિનચૈત્યને અંગે આવે છે તે સર્વ લગ્નશુદ્ધિની સાથે આપેલાં છે.

જ્યોતિષને લગતા માત્ર બે જ પરિચ્છેદો છે—ધારણાગતિલક્ષણ અને મુહૂર્ત લક્ષણ, ધારણાગતિ પૂર્વાચાર્યરચિત સંસ્કૃત ધારણાગતિ યંત્રકનો ગુજરાતી અનુવાદ માત્ર છે જ્યારે મુહૂર્ત લક્ષણ અનેક જ્યોતિષગ્રન્થોના આધારે તૈયાર કરેલ છે આમાં સહાયક બનેલા ગ્રન્થોમાં પ્રમુખ ગ્રન્થોનાં નામો આ પ્રમાણે છે— આરંભસિદ્ધિસવાર્તિક ૧, નારચંદ્ર જ્યોતિષ સટિપ્પણક ૨, મુહૂર્તચિન્તામણિષીયૂષધારાટીકા-સહિત ૩, વસિષ્ઠસંહિતા ૪, નારદસંહિતા ૫, વૃહદ્વૈવર્ણન ૬, જ્યોતિર્નિબંધ ૭, રત્નમાલાસંભાષ્યા ૮, દૈવજ્ઞકામધેનુ ૯, મુહૂર્તમાર્તઠંડ-૧૦. પાકશ્રીસવૃત્તિ ૧૧, इत्यादि ।

જ્યોતિષના વિષયને લગતી એક વાતનું સૂચન કરવું અત્ર પ્રાસંગિક ગણીયે છાયે અને તે રવિયોગ, -રાજયોગ, -કુમારયોગ-સ્થવિર-

योग संबंधी आजનો प्रत्येक ज्योतिषी कोइ पण शुभ कार्यना मुहूर्तमां रवियोग राजयोग अथवा कुमारयोग जेवो कोइ बलवान् शुभ योग मुहूर्तना समयमां आवतो होय तो ते मुहूर्तने सारुं गणे छे. आ योगो प्राचीन ज्योतिष संहिताओमां नथी, त्यां कोइमां ९ मा अने कोइमां १० मा रवियोगने उपग्रहरूपे जणावेल छे, अमने ज्यां सुधी स्मरण छे सोलमा सैका पूर्वेना कोइ ब्राह्मण विद्वाने रचेल ग्रन्थमां उक्त रव्यादि योगोना उल्लेख मलतो नथी, एथी विपरीत जैनाचार्ये रचेल जुनामां जुना ग्रन्थोमां उक्त ४ योगोना निर्देश मले छे, मध्यकालीन ज नहि सातमा सैकानो पाकश्री जेवा प्राचीन ग्रन्थमां पण उक्तपैकीना केटलाक योगो मली आवे छे, आरंभसिद्धि, नार चन्द्रादि मध्यकालीन जैन ग्रन्थोमां तो उक्त योगो योगप्रकरणना प्रसिद्ध योगो थइ पढ्या छे, कुमारयोगने अंगे तो एवो उल्लेख पण मले छे के आ योग बंगाल देशथी आवेल मुनिओ लेइ आव्या छे. ब्राह्मण ग्रंथो पैकीना मुहूर्तचिन्तामणिमां रवियोग तो नजरे पडे छे, पण तेमांये कुमारादियोगोना उल्लेख सुधां नथी त्यारे शुं आ च्यारे योगो मूलमां ब्राह्मण सृष्ट नथी ? शुं आ योगो जैन साधुओथी ज प्रचलित थया छे ? विद्वान् ज्योतिषीओए ए विषयमां ऊहापोह करवो घटे छे.

३-मुद्रालक्षण—

प्रथमखंडनो छेल्लो परिच्छेद ' मुद्रालक्षण ' विषयक छे, ' मुद्रा ए, वास्तवमां तांत्रिकमतनी वस्तु छे पण तांत्रिक कालमां बनेल प्रतिष्ठाकल्पोमां अमारा पूर्वाचार्योए ए वस्तुनो स्वीकार कर्यो छे एटले विधिमां प्रयुक्त कराती केटलीक मुद्राओ निर्वाणकलिका, सकलचंद्रिय प्रतिष्ठाकल्पने आधारे आ परिच्छेदमां आपेली छे. आ मुद्राओने विष्णुसंहिता, नारदपंचरात्र आदि पौराणिक ग्रन्थोने आधारे तथासी

જોઈ છે અને આમાં ચાલતી ભૂલો સુધારી છે. તાંત્રિકોની માન્યતા છે કે જે દેવતાને જે મુદ્રા પ્રિય હોય તેની પૂજા તે મુદ્રાદર્શનપૂર્વક કરવાથી તે પ્રસન્ન થાય છે. ગમે તેમ પણ અમારા પૂર્વ પ્રતિષ્ઠા કલ્પકારોણ વિધિમાં મુદ્રાઓનો સ્વીકાર કર્યો છે તેથી આજના પ્રતિષ્ઠાચાર્યોણ તથા સ્નાત્રકારોણ મુદ્રાઓ શિખરી આવશ્યક છે, આમ આ પ્રથમછંદ શિલ્પીઓ જ્યોતિષીઓ અને પ્રતિષ્ઠાકારોને ઉપયોગી થઈ પડશે એવી આશા છે.

છેવટે આ છંદમાં-સ્વાસ કરીને શિલ્પ પરિચ્છેદોમાં આધાર ગ્રન્થોની અચોક્કસતાને લેઈને કોઈ સમજ ફેરની ભૂલ દષ્ટિગોચર થાય તો સુધારીને વાંચવાની વાંચકગણને પ્રાર્થના છે.

માધવપુરા-અમદાવાદ,

માઘશુક ૫ ગુરુ, તા૦ ૧૬-૨-૧૯૫૬.

કલ્યાણવિજય.

: विषयानुक्रम :

प्रस्तावना पृ. १ थी ४ सुघो

प्रस्तावनानो उपोद्घात पृष्ठ ५ थी ४० सुघो

ग्रन्थविषय	पृष्ठाङ्क
समंगल ग्रन्थोपोद्घात	१
प्रथम खंड परिच्छेदसूची	३
१-भूमिलक्षण-शुभाशुभभूमि	४
भूमिनी विशेष परीक्षा	५
२-शल्योद्धार लक्षण	९
चेष्टा-पशुपद-शब्द-प्रश्नवर्ण लग्नथी शल्यज्ञान	९
भूमिगत शल्य फल	२०
शल्योद्धारमाटे केटलुं खोदवुं ?	२०
३-दिक्साधन लक्षण	२१
पांच प्रकारे पूर्वदिशाज्ञान	२२
प्रकारान्तरे दिशाज्ञान	२३
४-कीलिकासूत्र लक्षण	२४
वर्ण परक कीलिका निरूपण	२५
वर्णपरक सूत्रनुं निरूपण	२६
५-कूर्मशिला लक्षण	२६
कूर्मशिलामान	२७
पाषाण तथा इष्टका शिलामां विशेषता	२७
प्रकारान्तरे शिलामान	२७
कूर्मनुं स्वरूप अने मान	२९
कूर्मशिला लक्षण-दाक्षिणात्यपद्धति	३०

ગ્રન્થવિષય	પૃષ્ઠાઠ્ઠ
કલશ, કમલ, કૂર્મ અને યોગનાલનું મ્માન	૩૨
આધારશિલા ઉપર કલશ આદિનો સ્થાપનાક્રમ	૩૨
કૂર્મ પ્રમાણ	૩૪
૬--શિલા લક્ષણ	૩૫
શિલાઆની સંખ્યા	૩૫
શિલાઓનું સ્વરૂપ	૩૬
શિલાની લંબાઈ-પહોલાઈ-જાડાઈ	૩૭
દેવાલયની નન્દાદિ ૮ શિલાઓ	૩૭
શિલાઓ ઉપરનાં ચિન્હો	૩૮
શિલાઓનાં નામોમાં મતભેદ	૩૮
ઉપશિલાઓ	૩૯
નિધિકલશોની સંખ્યા અને પરિમાણ	૪૦
નિધિકલશોને અંગે શાસ્ત્રાધાર	૪૧
૭--વાસ્તુમર્મોપમર્માદિ લક્ષણ	૪૨
શિરાઓ-	૪૩
મહાવંશો	”
વંશો અને અનુવંશો	”
મર્મ અને ઉપમર્મ	”
દેવાસનો, દ્વારમધ્યો અને પદમધ્યો	૪૬
સંધિઓ	૪૭
ગ્રન્થાન્તરમાં સન્ધિ અને મર્મ	”
મર્મોપમર્માદિ ચક્રમ્ ૬૪ પદે	૪૯
મર્મોપમર્માદિ ચક્રમ્ ૮૧ પદે	૫૧
વાસ્તુપુરુષનાં અંગ પ્રત્યંગો	૫૦
વાસ્તુપુરુષના શયન પ્રકારો	”

ग्रन्थविषय

पृष्ठाङ्क

८--वास्तुमण्डल विन्यास लक्षण	५८
मासादवास्तु मण्डल--	५९
वास्तु मण्डल चक्रम् ६४ पदे निर्वाणकलिकोक्त	६१
गृहवास्तु मण्डल	॥
वास्तुमण्डल चक्रम् ८१ पदे--निर्वाणकलिकोक्त	६२
वास्तुमण्डलचक्रम् ६४ पदे--बृहत्संहितोक्त	६३
वास्तुमण्डल चक्रम् ८१ पदे--बृहत्संहितोक्त	६४
वास्तुमण्डलचक्रम् ८१ पदे--शिल्पशास्त्रोक्त	६५
९--प्रासाद लक्षण	६६
प्रासंगिकं	६६
प्रासादोत्पत्तिनो इतिहास	६७
हस्तलक्षण	६९
मानपरिभाषा-कोष्टकम्	७२
वास्तुक्षेत्र विचार	७३
वास्तुपद देवता	७६
४९ पदात्मक मरीचिगणवास्तु (जीर्णोद्दारे)	॥
६४ पद भद्रक वास्तु--(नगर निवेशेपू०)	७७
८१ पद कामद वास्तु (गृहादि निवेशे)	॥
१०० पद भद्रवास्तु (प्रासाद-मण्डपादिनिवेशे)	७८
वास्तुमर्मापमर्म निर्णय	॥
वास्तुपरिभ्रमण	८२
वास्तुदोष	८४
आयाद्यज्ञ विचार	८७
वास्तु भूमि कोना हाथे मापवी ?	८८

ગ્રન્થવિષય	પૃષ્ટાઢ્ક
આય લાઢ્ઢવાની રીતિ અને નામાદિ	૮૮
દેવાલયોમાં અને અઢ્ઢમાલયોમાં શુભ આય	૮૯
કાલ પરક આયોની શ્રેષ્ઠતા	"
વર્ણ વિશેષને આય વિશેષની શ્રેષ્ઠતા	"
આયોનું ફલ	૯૦
કાર્યવિશેષે આય વિશેષ ઘ્વજ	"
પ્રતિનિધિ આયો	૯૨
આયોના મુખની દિશાઓ	૯૩
આય જ્ઞાનાર્થક કોષ્ઠક	૯૪
નક્ષત્ર-	"
ત્રિવિધ નક્ષત્રગણ	૯૫
અંગુલાત્મક ક્ષેત્રાદ્ નક્ષત્ર જ્ઞાનાર્થક કોષ્ઠક	૯૬-૯૭
રાશિ	૯૮
ચાતુર્વર્ણ્ય રાશિ	"
રાશિકૂટ	૯૯
ચન્દ્ર	૧૦૦
ચન્દ્રનો વાસો જાણવાની રીતિ	"
વ્યય	૧૦૧
આયસ્થાને વ્યય પ્રદાન કોષ્ઠક	૧૦૫
અંશક	"
અંશક પ્રદાન સ્થાન	૧૦૬
તારા	૧૦૭
અધિપતિ	૧૦૮
મતાંતરે અધિપતિ	૧૦૯

ग्रन्थविषय	पृष्ठाङ्क
भासाद अधिपति ज्ञानार्थक कोष्टक	११०
वास्तु जन्मतिथि	”
शुभअंगोनी अधिकताथी वास्तुनी स्थिरता	१११
केटलां अंगो शुभ होय तो सारां ?	१११
वास्तुमां शुं शुं न लेवुं ?	”
वास्तुनुं जीवन अने विनाश	११२
प्रसादांग निरूपण	”
जगतीनो आकार अने परिमाण	११३
ठक्कुर फेरुना मते जगतीनुं मान	११४
जगतीनी उंचाई	”
१०८ भागनो मंडोवरो	११५
जगतीनो उंचाईनो बीजो प्रकार	”
खरशिला	”
भीट	११७
पीठ	”
पीठनो उदय	११८
नवपीठोनां नामो अने अंगुलात्मक मान	१२०
लविनादि ५ प्रासादोनां पीठो नो उदय	१२१
पीठोदयना भागो	”
अपराजितपृच्छामां निर्गमनुं प्रमाण	१२२
प्रासादनो उदय	”
पहेला प्रकारनो उदय	”
बीजा प्रकारनो उदय	१२५
त्रीजा प्रकारनो उदय	१२७

ગ્રન્થવિષય	પૃષ્ઠાઙ્ક
ચોથા પ્રકારે પ્રાસાદોદય	૧૨૮
પાંચમા પ્રકારે પ્રાસાદોદય	”
છઠ્ઠા પ્રકારનો પ્રાસાદોદય-ફેરુ ઠકુર મતમાં	”
ઉદયમાનમાં મતભેદ	૧૨૯
મંડોવરાના થરોની ભાગસંખ્યા-પ્રાસાદમળ્ડને	૧૩૧
૧૦૮ ભાગનો મંડોવરો	”
૨૭ ભાગનો મળ્ડોવરો-પ્રાસાદમળ્ડને	૧૩૨
ઠકુર ફેરુના મતે ૨૫ ભાગનો મંડોવરો	”
ગર્ભગૃહોચ્છ્રય:- અપરાજિતપૃચ્છાયામ્	૧૩૩
ગર્ભગૃહોચ્છ્રય જાણવાની ષીજી રીતિ	”
ઉંબરો-અપરાજિતપૃચ્છામાં	૧૩૪
અર્ધચન્દ્ર અને ઉદુમ્બર કયાં મૂકવા ?	૧૩૫
ઉંબરાના અંગ વિભાગો	”
અર્ધચન્દ્રક-પ્રાસાદમળ્ડને	૧૩૬
નાગરપ્રાસાદ દ્વારોદય-અપરાજિતપૃચ્છાયામ્	”
ક્ષીરાર્ણવનું નાગર દ્વારમાન	૧૩૭
ભૂમિજ પ્રાસાદ દ્વારમાન-અપરાજિતપૃચ્છાયામ્	૧૩૮
દ્રાવિડ દ્વારમાન-અપરાજિતપૃચ્છાયામ્	૧૩૯
દ્વારમાનોનો ઉપયોગ	૧૪૦
દ્વારશાખાઓ—	”
૬ વિષયમાં અપરાજિતપૃચ્છાનું નિરૂપણ	૧૪૧
અપરાજિતપૃચ્છામાં શાખાઓની વર્તના	૧૪૨
ત્રિશાખાની વર્તના	”
પંચશાખાની વર્તના	૧૪૪

ग्रन्थविषय	पृष्ठाङ्क
सप्तशाखा द्वारनी वर्तना	१४५
द्वारशाखाना विस्तारतुं मान	"
उत्तरंम	१४६
जिनेन्द्रायत्तनना < प्रतिहारो	"
आयुधो	१४७
प्रतिमाओनां पदस्थानो	"
मण्डलोमां देवोना स्थानोना अतिदेश	१४८
स्पष्टीकरण	"
अपराजितपृच्छानुं विधान	१४९
समरांगण सूत्रधारनां देवतापद स्थानो	१५०
उपरोक्त ग्रंथमां ए विषय बीजा प्रकारे	"
प्रासादमंडननां देवतापद स्थानो	"
आज काल प्रचलित देवता पद स्थानो	१५१
दृष्टिस्थान	"
ए विषयमां अपराजित० नुं विधान	१५२
वाहनदृष्टि	१५३
ठकुर फेरुनुं दृष्टि विधान	"
आचार्य वसुनन्दिनी दृष्टिस्थान विषयक मान्यता	१५४
प्रणाल मूकवानी दिशा	१५५
प्रतिमामान द्वारोदय माने (ऊर्ध्वस्थिति)	१५६
ऊर्ध्वस्थित तथा आसीन	"
गर्भमाने प्रतिमामान	"
प्रासादमाने प्रतिमामान	१५७
शिवरश्रृङ्गो अने उरुश्रृङ्गो (प्रासादमण्डने)	१५७

ग्रन्थविषय	पृष्ठाङ्क
रेखा अने रेखाना भेदो	१६०
कोलीना भेदो	१६३
चन्द्रकला रेखाओ	१६४
नागरी रेखाओ. उदय रेखाओ	१६५
कला रेखाओ	१६६
कलारेखाओथी भेदातो स्कंध	१६७
२५ स्कंधोनां नाम	१६८
अपराजितमां चन्द्रकला रेखाओनुं निरूपण	१६९
१६ मूल चन्द्रकला रेखाओनां नाम	१७
चारविधि	१७०
कलाविधि	१७२
२५६ रेखाओनां नामो	१७३
१६ कलारेखाओ भेद खंडकला सहित	१७७
त्रिखण्डायाः १६ भेदाः	१७
चतुर्खण्डायाः १६ भेदाः	१७
पञ्चखण्डायाः १६ भेदाः	१७
षट्खण्डायाः १६ भेदाः	१७८
सप्तखण्डायाः १६ रेखाभेदाः	१७
अष्टखण्डायाः १६ रेखाभेदाः	१७
नवखण्डायाः १६ रेखाभेदाः	१७९
दशखण्डायाः १६ रेखाभेदाः	१७
एकादशखण्डायाः १६ रेखाभेदाः	१८०
द्वादश खण्डायाः १६ रेखाभेदाः	१८१
त्रयोदशखण्डायाः १६ रेखाभेदाः	१८२
चतुर्दशखण्डायाः १६ रेखाभेदाः	१८३

ग्रन्थविषय	पृष्ठाङ्क
पंचदश खण्डायाः १६ रेखा भेदाः	१८४
षोडश खण्डायाः १६ भेदाः कलासहिताः	१८५
सप्तदश खण्डायाः १६ भेदाः	१८६
अष्टादश खण्डायाः १६ रेखा भेदाः कलासहिताः	१८७
आमलसारकना आकारो	१८८
आमलसारानी अंगविभक्ति	१८९
प्रासाद-पुरुष-निवेशन—	"
कलश	१९१
प्रासादमाने कलशमान	१९२
घराटादि प्रासादनो कलश	१९३
कलशानी अंगविभक्ति	"
प्रकारान्तरे कलशना अंगविभागो	१९४
ध्वजदंड	१९५
दण्डमान पहेला प्रकारनुं	१९६
दण्डमान बीजा प्रकारनुं	"
दण्डमान त्रीजा प्रकारनुं	"
दण्डनी जाडाई	१९७
दण्डनी पाटली	१९७
पाटलीनुं स्वरूप	१९८
दण्ड शानो बनावचो ?	"
ध्वजानुं मान	१९९
ध्वजावती (स्तंभिका) रोपण.	"
जिनेन्द्र प्रासाद पंचक	२००
तलविभक्ति २२ भाग	"

પ્રમ્થવિષય	પૃષ્ટાક્ર
શિખરની રચના	૨૦૧
કેસરી આદિ ૨૫ નાગરપ્રાસાદ	૨૦૨
મણ્ડપ	૨૧૨
શુકનાસની ઁંચાઈ	૨૧૪
સ્પષ્ટીકરણ	૨૧૮
પુષ્પકાદિ ૨૭ મણ્ડપો	૨૧૯
પુષ્પકાદિ ૨૭ મણ્ડપોના તલના નકશાઓ.	૨૨૬
દ્વાદશત્રિકમણ્ડપો નકશાસહિત	૨૨૯
સ્તંભોના પ્રકારો અને જાડાઈ	૨૩૧
પ્રકારાન્તરે સ્તંભોની જાડાઈ	૨૩૨
સ્તંભની જાતિઓ	૨૩૩
મણ્ડપ મદ્રવિસ્તાર	”
પાટસ્તંભ અને શરાના વિસ્તાર	૨૩૪
દ્વાદશત્રિકમંડપોનુ શાસ્ત્રીય નિરૂપણ	”
મણ્ડપાના સમ્બન્ધમાં પ્રકીર્ણકવાતો—	
ગૂઠ મણ્ડપની મીંત અને દ્વાર વિષે	૨૩૬
વારી અને જાલી	૨૩૭
પરિચ્છેદનો ઉપસંહાર	૨૩૯
પરિશિષ્ટ નં ૩	૨૪૦
દ્વારે દષ્ટિસ્થાનજ્ઞાપક કાષ્ટકમ્	૨૪૧
પરિશિષ્ટ નં ૪	૨૪૨
૨૫ નાગરી રેલાઓ (ઁવણ્ડકલા સહિત)	૨૪૩
૧૦ કલશ લક્ષણ	૨૪૪
આજકાલ કલશમાનમાં ચાલતી મૂલ	૨૪૫

ग्रन्थविषय	पृष्ठाङ्क
कलशनी उंचाई	२४५
एज ६ अंगानुं विस्तारमान	२४६
११ ध्वजदण्ड लक्षण	२४८
दण्डनी लम्बाईना प्रकारो	"
दण्डनां उपादान काष्ठो	२५०
दण्डनो जाडाई	२५१
दण्डनी पाटली	"
ध्वजा परिमाण	२५३
१२ जिनप्रतिमा लक्षण	२५४
प्रतिमालक्षणनी दुर्बोधता	"
ऊर्ध्व स्थित प्रतिमानुं स्वरूप	२५७
आसनस्थित प्रतिमानी-चतुरस्रता	२५८
जिनप्रतिमानी उंचाई नवतालनी	"
उभीप्रतिमामाननां ११ अंकस्थानो	२५९
आसनस्थप्रतिमानां अंगो तथा अंका	२६०
अंग प्रत्यंगना विभागे प्रतिमानो उदय	"
आसनस्थप्रतिमानो विस्तार विवेक	२६१
आसनस्थ प्रतिमानी जाडाई	२६३
प्रतिमामानांक कोष्टक	२६४
कोष्टकोना सम्बन्धमां कंठक स्पष्टता	२७६
प्रतिमामानांक परिशिष्ट	२८०
समरांगणसूत्रधारोक्त प्रतिमाना मानांक	"
अंगुली नखा:	२८१
हीनाधिक माननी प्रतिमा न करवी	"

ग्रन्थविषय	पृष्ठाङ्क
भग्न प्रतिमाना सस्कार विषे	२८२
अलाक्षणिक प्रतिमाथी हानि	”
लक्षणहीन प्रतिमाना विषयमां समरांगणसूत्रधार	२८४
प्रतिष्ठाकल्पोक्त प्रतिमालक्षणहीनता	२८५
अलाक्षणिक प्रतिमा विषे वास्तुसारनुं विधान	२८६
शिल्प रत्नाकराक्त प्रतिमागत शुभाशुभ रेखाओ	२८७
प्रतिमा भंगनु फल.	२८८
खंडितप्रतिमा विषे अपराजित० नुं मन्तव्य	”
एज ग्रन्थना मते त्याज्य प्रतिमा	२८९
अपराजितनो ए विषयमां अपवाद	”
खंडितप्रतिमा सम्बन्धि ठकुर फेरुनी मान्यता	२९०
घर अने प्रासादमां स्थापनीय प्रतिमानुं मान	२९१
घरमां पूजवानी प्रतिमा विषेनो विवेक	”
प्रासादमानथी प्रतिमामान	”
प्रासादमां प्रतिमानुं स्थान	२९२
द्रष्टिस्थाननो विवेक	”
उपसंहार	२९३
१३. परिकरलक्षण	२९४
वास्तुसारोक्त परिकर परिमाण	३०५
१४. जैन शासनदेव लक्षणम्	३०८
यक्षयक्षिणी कोष्टक निर्वाणकलिकाना आधारे	३१३
यक्षयक्षिणी कोष्टक शिल्पना आधारे	३२१
दशदिक्पाल यन्त्रकम्	३३०
नवग्रह यन्त्रकम्	३३१

ग्रन्थविषय	पृष्ठाङ्क
षोडश विद्यादेवी लक्षणज्ञापकं यन्त्रम्	३३२
श्रुतदेवता-शान्तिदेवता- ब्रह्मशांति-क्षेत्रपाललक्षण	३३४
१५ धारणागति लक्षण	३३५
संज्ञाविवरण	३३७
जिननाम वर्ण लांछन नक्षत्र राशिओतुं कोष्टक.	३४०
धारणागति कोष्टको	३४२
२४ तीर्थैकरोना नक्षत्रादि छअंगोतुं कोष्टक	३५०
१६ मुहूर्त लक्षणम्	३५२
मुहूर्तमान अने तेओनो कार्य प्रदेश	३५४
दिवस विभागनां शुभाशुभ मुहूर्तो	"
रात्रि विभागनां शुभाशुभ मुहूर्तो	३५५
वार परत्वे वर्जनीय मुहूर्तो	"
नक्षत्र स्वामिओनि क्रमिक नामावलि	३५७
वास्तु कर्ममां शुभ मुहूर्तो	३५८
मुहूर्ताना सम्बन्धमां लल्लाचार्यनो मत	"
मुहूर्त यंत्रकं	३५९
वर्षशुद्धि	३६२
अयनशुद्धि	"
मासशुद्धि	"
अधिकमास	३६३
क्षयमास	३६४
पक्षशुद्धि	३६५
गुरुशुक्रचन्द्रास्त शुद्धि	३६६
गुरुशुक्रना बाल्य	३६७

ग्रन्थविषय	पृष्ठाङ्क
गुरुशुक्रस्तापत्रादे गर्ग	३६८
गुरु वक्रत्व दोष	”
वक्रो ग्रह बलवान के निर्बल	३७०
नाग वास्तु चक्र मुञ्जादित्यनिबन्धे	३७२
शिल्पशास्त्रानुसारी शेषस्थिति चक्रम्	३७४
अर्वाचीन ज्योतिष ग्रन्थानुसारी शेषस्थितिच०	”
दिशाओमां खात करवानो प्राचीन क्रम	३७५
१ थी सात प्रकारना ऋषभवास्तुचक्रो- निशान्तचक्र	३७६ ३८०
कूर्मचक्र	३८१
जल-कूर्मचक्र कोष्टक	३८२
गृहद्वारशाखा चक्र	”
प्राकार- देवतायतनद्वार वत्सचक्र	३८३
देवालयद्वारचक्र	३८४
वत्सने अंगे विशेष विधान	”
वत्सस्थितियन्त्रकम्	३८६
राहुतुं निरूपण चक्रसहित	३८७
स्तंभचक्र	३८८
मोभचक्र	३८९
आमलसारास्थापनचक्र	३८९
कलशचक्र १ थी ४ प्रकारनां	३९०
तिथि-	३९३
तिथिविधेयक कार्या	३९४
कुलोपकुल तिथिओ	३९९

ग्रन्थविषय

पृष्ठाङ्क

तिथिवृद्धि तिथिक्षय	३९९
सूर्यदग्धा तिथिओ जाणवानो उपाय	४००
क्रूरग्रहाक्रान्तराशिस्वामिकतिथिओ	४०१
विषघटिका-तिथिविषघटि सर्यंत्रक-	४०३
मासपरत्वे शून्यतिथिओ	४०४
क्षणतिथि	”
तिथिविषयक अपवाद	४०५
वार	४०७
वारमवृत्ति जाणवानुं प्रयोजन	४०९
वारभोग सम्बन्धि एक नवी परम्परा	”
ग्रहोनी स्वाभाव प्रकृति	४११
ग्रहोनुं वर्णाधिपत्य	”
वारविधेय कार्यो	”
वारदोषो	४१४
वारदोषविषयक मतभेद	४१६
प्राचीनसंहितोक्त वारदोषज्ञापकयन्त्रकम्:	४१९
वारदोषोनी दिवसे प्रबलता	४२०
वारदोषोनी परिहार	४२१
वारगत शुभसमय	४२२
नव्यमतानुसारी मुहूर्तचिन्तामण्युक्त वारदोष-	
ज्ञापक यन्त्रकम्	४२३
आधुनिक चोघाडयां क्यांथी आख्यां ?	”
नक्षत्र	
नक्षत्रोना अक्षरो	४२६

ગ્રન્થવિષય	પૃષ્ઠાક્ર
નક્ષત્રોના સ્વામિઓ	૪૨૭
નક્ષત્રતારાસંખ્યા	૪૨૮
નક્ષત્રમુહૂર્તો	૪૨૯
પૂર્વયોગી આદિ નક્ષત્રો	"
નક્ષત્રોના ભ્રમણ માર્ગ	૪૨૯
મુખપરક નક્ષત્રગણો અને વિધેયકાર્યો	૪૩૦
સ્થિરાદિ નક્ષત્રગણો અને વિહિત કાર્યો	૪૩૧
પ્રત્યેકનક્ષત્રવિધેય કાર્યો-	૪૩૪
નક્ષત્રોની કુલાદિ સંજ્ઞા-	૪૩૮
નક્ષત્રોની અન્ધાદિ સંજ્ઞા-	૪૩૯
નક્ષત્રોના દેવ-માનવાદિ ગણ-	૪૪૦
નક્ષત્રયોનિ-	"
નક્ષત્રનાહી-	૪૪૧
નાહીદોષાપવાદ-	૪૪૩
નક્ષત્રોની રાશિઓ-	"
શૂલનક્ષત્રો -	૪૪૪
સર્વદ્વારિક નક્ષત્રો-	"
સમય વિશેષે ગમનાડ્યોગ્ય નક્ષત્રો-	"
સર્વકાળે ગમનયોગ્ય નક્ષત્રો-	૪૪૫
પુણ્યની વિશિષ્ટતા-	"
જ્યાતિષતત્ત્વકાર પુણ્યને અંગે- કહે છે—	૪૪૬
વશિષ્ઠ પુણ્યને અંગે યાત્રા વિષે કહે છે—	"
નક્ષત્ર પચક-	"
ઘ્યવહારસારમાં પંચકનું ફલ-	૪૪૮

ग्रन्थविषय	पृष्ठाङ्क
आरंभसिद्धिमां पंचक विषे मतान्तर—	४४८
नक्षत्रविषघटी—वशिष्ठ	४४९
ज्योतिःसागरमां विषघटीतुं फल—	४५०
विषघटी दोषापवाद—	”
दूषित नक्षत्रो—	४५१
कश्यपना मते पीडित नक्षत्रो—	४५२
दूषितनक्षत्र वा पीडितनक्षत्रनी शुद्धि—	४५३
पीडित नक्षत्रापवाद—	४५५
ग्रहण तथा उत्पात दूषित नक्षत्रनी शुद्धि—	४५६
नक्षत्रसंधि अने नक्षत्रगण्डान्त	४५७
नक्षत्रयोग, तिथिसंधिविषे—	४५९
भसंधि-भगंडान्ततुं फल—	”
गंडान्तदोषनो परिहार—	४६०
उपग्रह	”
उपग्रहनो विषय अने फल—	४६२
उपग्रहनो परिहार—	४६४
नक्षत्र-ग्रहकूट—	४६५
लत्तादोष	४६७
शुभाशुभलत्तानां फल—	४६९
लत्तानो परिहार—	४७०
पातदोष—	”
पातनो अपवाद—	४७१
सप्तशलाकाचक्र—	४७२
पंचशलाका वेधचक्र—	४७४

ग्रन्थविषय	पृष्ठाङ्क
वेधफलम्	४७५
वेधनो अपवाद--	४७६
एकार्गलयोग दोष--	४७७
एकार्गलयोगनुंफल	४८०
दशयोग दोष	४८१
दशयोगनुं फल	"
दशयोगनो परिहार--	४८२
महापातनुं स्वष्टीकरण--	४८३
वज्रपंचक -	४८६
वाणपंचक--	४८७
बाणनो परिहार--	४८९
नाग अने मृत्युबाणनो परिहार--	४८९
योगो—	४९०
विष्कंभादियोगानयनोपाय-	"
विष्कंभादि २७ योगो-	४९१
अशुभयोगोनी वर्ज्य घडिओ-	४९२
योगेश-	"
विष्कंभादि विधेय कार्यो-	४९३
क्षणयोगो-	४९७
आनंदादि २८ उप-योगो	४९८
आनंदादि योगो जाणवानो उपाय--	"
आनंदादि अशुभयोगोनी वर्ज्यघडि--	४९९
अशुभयोगोनी परिहार -	"
प्रकीर्ण शुभयोगो--रवियोग--	५००

ग्रन्थविषय	पृष्ठाङ्क
रवियोग फल-	५००
कुमारयोग-कुमारयोग फल-	५००-५०१
राजयोग- राजयोग फल	५०१-५०२
अमृतसिद्धियोग-अमृतसिद्धिनुं बल-	५०२
सिद्धियोग-स्थिरयोग-	५०३
स्थिरयोगनो विषय-	"
प्रकीर्ण अशुभयोगो-	५०४
उत्पात-मृत्यु-काणयोगो-	५०४
यमघंटयोग-वज्रमुशलयोग-क्रकच योग-	५०५
वज्रपातयोग-	५०६
संवर्तकयोग-	"
कालमुखी तिथि-	"
ज्वालामुखी तथा दग्धयोग-	"
शुभयोग कोष्टक-अशुभयोग कोष्टक-	५०७-५०८
अशुभयोगनो परिहार	"
शुभयोगाः-	५०९
तिथि-नक्षत्रजन्य शुभयोग-	"
वार-नक्षत्रजन्य शुभयोग-	५११
तिथिवारजन्य शुभयोग-	५१२
तिथिनक्षत्रजन्य शुभयोगकोष्टक-	५१३
वारनक्षत्रजन्य शुभयोगकोष्टक-	"
तिथि-वारजन्य शुभयोगकोष्टक-	५१४
ग्रहकृत शुभयोग-	"
वारनक्षत्रजन्य अशुभयोग-	५१६

ग्रन्थविषय	पृष्ठाङ्क
तिथि वार नक्षत्रजन्य अशुभयोग—	५१७
तिथिवारजन्य अशुभयोग—	५१८
ग्रहजन्मनक्षत्र-अशुभयोग—	"
अचिकित्स्य-गदयोग—	५१९
ग्रहकृत मृत्युयोग—	"
अग्निजिह्व-विष-महाशूलयोगा—	५२०
अशनियोग—	५२१
हालाहलयोग—	"
नक्षत्रलाञ्छितयोग-तिथिनक्षत्रोत्थ—	"
वारनक्षत्रसमुत्थ अशुभयोग	५२२
दिवा मृत्युदायक तथा रोगदायक नक्षत्र चरणो—	५२५
वारनक्षत्रजन्य अशुभयोग कोष्ठक—	५२६
तिथि वार नक्षत्रजन्य अशुभयोग कोष्ठक	"
तिथिवारजन्य अशुभयोग—	"
तिथिवारजन्य अशुभयोग—	५२७
अशनियोग—	"
वार-तिर्हि-नक्षत्र-हालाहलयोगा—	"
नक्षत्रलाञ्छित योग—	५२७
वार-नक्षत्रसमुत्थ अशुभयोगाः—	५२८
प्रकारान्तरेण वार-नक्षत्र समुत्थ अशुभयोगा—	"
गुणापवाद—	५२९
दोषापवादा—	५३१
करण—	५३५
करणसंबन्धी निरूपण—	"

ग्रन्थविषय	पृष्ठाङ्क
करणेश—	५३६
करणविधेयकार्य—	५३७
भद्राना अंगविभागो—	५३८
भद्राना तिथि संबन्धविषे आरंभसिद्धि—	५३९
दिशाकालपरत्वे भद्रानुं संमुखत्व—	”
तिथिपरत्वे भद्राना पुच्छभागनो समय—	५४०
भद्राना पुच्छनुं महत्त्व—	५४१
भद्रामां सिद्ध थयेल कार्य अंते नाश पामे छे—	”
भद्रामां करवानां कार्यो—	”
भद्राना परिहारना अनेक प्रकारो—	”
कालपरक भद्रानां वे स्वरूपो—	५४२
करणो विषे आरंभसिद्धिकारनो उपसंहार—	५४२
लग्नबल प्रकरण—	५४३
लग्नविधेयकार्यो—	५४३
लग्नप्रकृति—	५४५
लग्नराशिपतिओ—	५४६
राशिपतिओना शत्रुओ अने मित्रो—	”
अतिवैर तथा अतिमैत्री	५४७
ग्रहोनी निसर्गमैत्री-मध्यस्थ-शत्रुताज्ञापक कोष्ठक-	५४८
ग्रहमैत्री-शत्रुता विषयक प्राचीन मत—	”
प्राचीन मतानुसारि मैत्री-शात्रवकोष्ठक—	”
ग्रहोनी दृष्टिमर्यादा—	५४९
ताजिकोक्ता ग्रहदृष्टि—	”
ग्रहोनुं बलाबल—	५५०

ग्रन्थविषय	पृष्ठाङ्क
चंद्रबलनी श्रेष्ठता-	५५१
लग्नषट्त्वर्गः—	५५२
षट्त्वर्गमां नवमांशनी विशिष्टता-	”
लग्नबल-	५५३
लग्नबलनो सारांश-	५५५
उदयास्तशुद्धि—	५५५
उदयास्त शुद्धौ आरंभसिद्धि—	५५६
उदयास्त शुद्धि विषे व्यवहारप्रकाश—	”
निर्वल अने त्याज्य लग्न—	५५७
कया ग्रहो कया स्थानोमां न जोइये—	५५९
क्रूरकर्तरा दोष-	”
क्रूरकतेरीस्थित लग्न तथा चन्द्र अने ऐनो परिहार-	५६०
सापवाद क्रूरयुति-	५६१
जामित्र नामक लग्नदोष-	५६२
शुभग्रहकृत लग्नगत दोषभंग—	५६३
चंद्रतारा बल—	५६४
चंद्रबल-ताराबलनो समयविभाग—	५६७
अशुभतारानो परिहार-	५६८
दुष्टताराना अपवाद-	”
घातचंद्र ए शुं छे ?	५६९
प्रासादादि वास्तु मुहूर्ता	५७३
गृहारंभ मुहूर्त-	५७३
भूम्यारंभ मुहूर्त—	५७४
वास्त्वारंभना सौरमासौ-	५७४
गृहनिर्माणना महीना-	५७५

ग्रन्थविषय	पृष्ठाङ्क
गृहनिर्माणमां सौरमासो-	५७५
वास्त्वारंभनां नक्षत्रो-	"
देवालयआरंभमां मासोनो अतिदेश-	५७६
गृहारंभना वारो-	५७६
गृहारंभनी तिथिओ-	"
तिथिवारत्रे अंगे भृगुनो मत-	"
दिनशुद्धि-	"
गृहनिर्माणमां चन्द्रनी दिशा-	५७७
" चंद्रदिशानुं फल-	५७८
ऋशोच्चये गृहारंभ नक्षत्रो-	"
भूमिशयन-	"
गृहारंभमां पंचांगशुद्धि-	५७९
वास्तुनिर्माणनां लग्न-	५८०
वास्तुकार्यारंभनी उत्तम लग्नकुंडली-	५८१
गृहारंभलग्ने आयुर्दायकयोगा-	"
गृहारंभमां उत्तम-मध्यम-अधमग्रहस्थिति -	५८३
गृह अने देवालयना निर्माणमुहूर्तमां भेद नथी-	५८४
कूर्मन्यास मुहूर्त-	"
सूत्रपात-शिलान्यास-खुरानां मुहूर्तो-	५८५
द्वारारोपण मुहूर्त-	५८६
स्तभोच्छ्राय मुहूर्त-	"
पट्टकारोपण मुहूर्त -	५८७
पद्मशिला-शुकनास-पुरुषनिवेशन -मुहूर्तो	"
आमलसागकस्थापन मुहूर्त-	५८७
कलश अने ध्वजारोपना मुहूर्तो-	५८८

ग्रन्थविषय	पृष्ठाङ्क
प्रतिष्ठासुहूर्त-पंचांगशुद्धि-	५८९
तिथिविषे नारदमते-	५९०
प्रतिष्ठामां वार-नारदसंहिता-	५९१
प्रतिष्ठामां वारफल-	"
प्रतिष्ठामां नक्षत्र	"
जैनप्रतिष्ठामां नक्षत्रो, आरंभसिद्धौ-	५९२
प्रतिष्ठायां वर्जितनक्षत्रो-	"
प्रतिष्ठामां योगो-वसिष्ठः-	"
प्रतिष्ठामां करणो-आरंभसिद्धिना मते-	५९३
प्रतिष्ठामां लग्नशुद्धि-	५९४
प्रतिष्ठाना लग्ने अंगे वशिष्ठ कहे छे-	"
प्रतिष्ठानी लग्नशुद्धि विषे नारदजी-	५९५
प्रतिष्ठामां लग्नव्यवस्था-आरंभसिद्धौ-	"
लग्नकुण्डलीमां ग्रहव्यवस्था नारदमते-	५९६
प्रतिष्ठालग्नो ग्रहव्यवस्था-आरंभसिद्धिना मते	५९७
प्रतिष्ठालग्नग्रहस्थिति फल-पूर्णभद्रमते	५९९
लग्नकुण्डली ग्रहस्थिति कोष्ठको-	६०१
लग्नमां उत्तम-मध्यम नवमांशा	६०२
लग्नमां शुभनवमांशकोष्ठक-	६०४-५
प्रतिष्ठादि लग्नगत दोषभंग -	६०६
१७ मुद्रालक्षण—	६०८
मुद्राओनुं महत्त्व-	"
मुद्रावस्तु तांत्रिकोनी छे	६०९
प्रतिष्ठोपयोगी मुद्राओ-	६११

कल्याण-कलिका

प्रथम-खण्डः

-: मङ्गलम् :-

वर्धमानं जिनं नत्वा, बुद्ध्वा विधिपरम्पराम् ।
प्रतिष्ठापद्धतिं वक्ष्ये, कल्याणकलिकाभिधाम् ॥१॥

भाषाटीका—श्रीवर्धमानजिनने नमन करीने अने विधि-
परंपराने समझीने 'कल्याणकलिका' नामक प्रतिष्ठापद्धतिने हुं कहीश.

उपोद्घातः—

प्रतिष्ठाविधयोऽनेके, प्राक्तना विस्तरोज्जिताः ।
केऽपि विस्तरवाहुल्या, न सर्वेषां समा गतिः ॥२॥
न विस्तरान् समामाद्वा, ये विधानं चिकीर्षवः ।
न तत्कृते हितार्थास्ते, सदाग्नायविवर्जिताः ॥३॥

भा०टी०—प्राचीन प्रतिष्ठा विधिओ अनेक विद्यमान छे, पण
ते सर्वनो मार्ग-रुद्ध मग्ग्वो नथी. केटलीक संक्षिप्त छे तयारे केटलीक
अति विस्तारवाली छे, आ कारणथी जेओ अति विस्तार अने संक्षेपने
छोटीने मध्यम प्रकारनुं प्रतिष्ठाविधान करवानी रुचिवाला छे, तेमने
अति संक्षिप्त अने अति विस्तृत ते विधिओ हितकारक नथी, कारण
के ते प्रमाणे करवानो वर्तमानमां कोइ मार्गे आग्नाय प्रचलित नथी.

पादलिप्तप्रभोः प्रज्ञा-प्रकर्षपरिपाकजाम् ।

निर्वाणकलिकां दृष्ट्वा, मुह्यन्ति विधिकोविदाः ॥४॥

श्रीचन्द्रसूरिसंहब्धां, प्रतिष्ठापद्धतिं लघुम् ।
 अनुसृत्य विधानाय, कः क्षमश्चतुरोऽपि सन् ॥५॥
 विधिमार्गप्रपायां या, प्रतिष्ठापद्धतिर्लघुः ।
 साऽपि कार्यक्षमा नैवाऽतिसंक्षेपविधानतः ॥६॥
 गुणरत्नमुनीन्द्रोक्ता, विशालराजशिष्यजा ।
 प्रतिष्ठापद्धतिर्नैव, साम्प्रतं व्यवहारगा ॥७॥

भा०टी०—आचार्यश्रीपादलिप्तसूरिनी बुद्धिना प्रकर्षवडे उत्पन्न थयेली 'निर्वाणकलिका' नामक प्रतिष्ठापद्धतिने देखीने विधिज्ञ विद्वानो मुंझाइ जाय छे. श्रीचन्द्रसूरिविरचित अतिलघु प्रतिष्ठापद्धतिने अनुसारे कयो चतुर विधिकार पण आजे विधान कराववाने समर्थ थइ शके तेम छे? वली 'विधिमार्गप्रपा' नामक सामाचारीमां जे लघुप्रतिष्ठापद्धति कहेली छे, ते पण अति संक्षिप्त होवाना कारणे आ विषयमां बहु उपयोगी थइ पडे तेम नथी. श्रीगुणरत्नसूरिकथित प्रतिष्ठापद्धति तेमज श्रीविशालराजशिष्य प्रणीत प्रतिष्ठापद्धति पण आजकाल विधिकारोना व्यवहारमार्गमां प्रचलित नथी.

वाचकैः सकलाच्चन्द्रैर्निर्मितो विस्तरोजितः ।
 प्रतिष्ठाकल्प एषोऽपि, विधिसांकर्यदूषितः ॥८॥
 अशुद्धिबहुलश्चापि, न तत्र विदुषां रतिः ।
 प्रार्थयन्ते बुधास्तेन, स्पष्टां विधिपरम्पराम् ॥९॥
 मत्वा कारणसद्भावं, ज्ञात्वा प्राचां परम्पराम् ।
 कल्याणविजयेनेयं, क्रियते पद्धतिर्नवा ॥१०॥

भा०टी०—सकलचन्द्रोपाध्यायजीए रचेलो एक सविस्तर

प्रतिष्ठाकल्प आज्ञे अवश्य उपलब्ध थाय छे. छतां ए प्रतिष्ठाकल्पमां पण केटलांक विधिविधानो एक बीजामां प्रविष्ट थइने सम्बन्धविहीन थइ गयां छे. वली आ 'प्रतिष्ठाकल्प' बीजी पण घणी अशुद्धिओ-वालो थइ ज्वाथी विधिज्ञ विद्वानोनं एसां मन लागतुं नथी. तेथी तेओ आ विषयनी स्पष्ट विधिपरम्परानी मांगणी करे छे. आ मांगणीना कारणोनी वास्तविकतानुं मनन करीने प्रतिष्ठापद्धति-विषयक प्राचीन परम्पराना ज्ञानपूर्वक पं. कल्याणविजय द्वारा आ नव्य प्रतिष्ठापद्धतिनुं निर्माण कराय छे.

ग्रन्थस्वरूपनिर्देशः—

आद्यो लक्षणखण्डश्च, विधिखण्डो द्वितीयकः ।

साधनाऽऽख्यस्तृतीयश्च, कलिकायां प्रकल्पितः ॥११॥

आद्ये सप्तदशच्छेदा, द्वितीये चैकविंशतिः ।

अन्त्ये खण्डे परिच्छेदाः, पञ्चैव परिकीर्तिताः ॥१२॥

भा०टी०—कल्याणकलिकामां त्रण खंडोनी कल्पना करेली छे. पहेलो लक्षणखंड, बीजो विधिखंड अने त्रीजो साधनखंड. पहेला लक्षणखंडमां १७ परिच्छेद, बीजा विधिखंडमां २१ परिच्छेद अने त्रीजा साधनखंडमां ५ परिच्छेदो पाडेला छे.

प्रथमखण्डपरिच्छेदसूची—

भूमि-लक्षणमस्थ्यादि-लक्षणं दिग्विशोधनम् ।

चतुर्थे कीलिका-सूत्र-लक्षणं परिकीर्तितम् ॥१३॥

कूर्म-तच्छिलयोर्लक्ष्म, शिलानां लक्षणं तथा ।

वास्तुमर्मापमर्मादि-लक्षणं वास्तुमण्डलम् ॥१४॥

प्रासाद-लक्षणं^९ कुम्भ-लक्षणं^{१०} दण्ड-लक्षणम्^{११} ।

प्रतिमा-लक्षणं^{१२} परि-कर-लक्षणमेव च^{१३} ॥१५॥

जैनशासनदेवानां, लक्षणं^{१४} धारणागतिः^{१५} ।

मुहूर्त-लक्षणं^{१६} मुद्रा-लक्षणं^{१७} परिकीर्तितम् ॥१६॥

आद्यखण्डपरिच्छेद-सूचिकेयं निदर्शिता ।

मध्यखण्डगता सूची, निम्नोक्ता परिगीयते ॥१७॥

भा०टी०—पहेला खंडनी विषयसूची नीचे प्रमाणे छे—

भूमिलक्षण १ शल्योद्धारलक्षण २ दिक्साधन ३ चौथुं कीलिका-सूत्र-
लक्षण ४ कूर्म तथा कूर्मशिलालक्षण ५ शिलालक्षण ६ वास्तुमर्मा-
पमर्मलक्षण ७ वास्तुमण्डललक्षण ८ प्रासादलक्षण ९ कलशलक्षण
१० ध्वजदण्डलक्षण ११ प्रतिमालक्षण १२ परिकरलक्षण १३ जैन-
शासनदेवलक्षण १४ धारणागतिलक्षण १५ मुहूर्तलक्षण १६ मुद्रा-
लक्षण १७ आ प्रमाणे पहेला खंडना परिच्छेदनी सूचीने निर्देश
कर्यो. हवे मध्यखंडनी विषयसूची नीचे तेना अधिकारमां कहेवाशे.

१. भूमि-लक्षण

भूमिं सुलक्षणां ज्ञात्वा, तत्र वास्तुं निवेशयेत् ।

येन कारक-कर्तृणां, भवेदुदयसिद्धये ॥१८॥

भा०टी०—उत्तम सुलाक्षणिक भूमि जाणीने त्यां वास्तुने
विन्यास करवो के जेथी करनार अने करकनारने अभ्युदयजनक थाय.
देवालय बनाववानी इच्छावाला गृहस्थे प्रथम तेने योग्य भूमिनी
परीक्षापूर्वक प्राप्ति करवी जोड्ये. भूमिपरीक्षाना अनेक प्रकारो शास्त्र-
कारोए वर्णव्या छे. जेमांथी केटलाक सर्वसाधारण उपायो अत्र
आपीये छीये.

प्राथमिकदर्शने शुभभूमि—

शुभ—जे भूमि समतल होय अथवा तो दक्षिण पश्चिमनी तरफ ऊंची होय, जे मधुरस्वादवाली होय, वर्णमां जे सफेद अने एक-वर्णवाली होय, सर्प, नोलियो अथवा उंदर चिलाडी जेवा जातिवैर-वाला जीवो ज्यां स्नेहभावथी साथे रहेता होय, ते भूमि उपर प्रहार करवाथी हाथी, घोडा, वीणा, वांसली, समुद्र अने नगाराना शब्द जेवो अवाज अंदरथी आवतो होय, ज्यां सुगंधि पुष्पनां वृक्षो ऊगेला होय, ज्यां बिल्ली, निंब, निर्गुंडी, आंचो अने सेवन आदि शुभ वृक्षो ऊगेला होय, ज्यां जल घणुं ऊंळुं होय, फूटेल बर्तनोना ठीब, कांठला, हाडकां, पथरा, उधेइना राफडा, कोलसा, सूकायेला वृक्षोनां टूटा, भस्म, झीणी रेती के नदीनी वेलु जेथी वेलु ज्यां न होय ते भूमि सर्व वर्णना मनुष्योना घोरो तथा देवमन्दिरोने माटे शुभ जाणवी.

अशुभभूमि—

राखोडी, कोलसा, फूटेल भाटीना ठामना ककडा, हाडकां, धाननां फोतरां, केश, विष, पथरा, उंदरनां दरो, उधेइना राफडा, वेकराथी भरपूर होय, अथवा ज्यां खोदवाथी पूर्वोक्त पदार्थो पैकी कोइ पदार्थ नीकळतो होय, जे भूमि खारी होय, बीज के घास ज्यां न ऊगतां होय, फाटनारी, रूखी, सूखी अने नीचेथी पोकल होय, कांटाला अने फलहीन झांखरोवाली, मांसभक्षी पक्षिओनां रहेठाण-वाली, कृमिकीटकाकुल, ज्यां वादित्रादिना जेवा अव्यक्त शब्दो संभ-लाया करता होय अने जे भूमिमां सारी रीते पकावेल भोज्याच पाणी जल्दी बगडी जतां होय, ते भूमि कोइने पण निवास योग्य होती नथी. त्यां कोइए घर के देवालयादि बनाववां जोइये नहि.

विशेषपरीक्षा —

उपर्युक्त दार्शनिक परीक्षा उपरान्त भूमिनी विशेष परीक्षा पण

હોય છે. બ્રાહ્મણાદિ વર્ણોને અનુસારે કેવા પ્રકારની ભૂમિ ગ્રાહ્ય અને કેવા પ્રકારની ભૂમિ અગ્રાહ્ય હોય છે, એનું શાસ્ત્રોમાં વિસ્તૃત વર્ણન છે. જેનો સાર આ પ્રમાણે છે.

(૧) શ્વેત, ઘૃતગંધી અને મધુરસવાલી ભૂમિ બ્રાહ્મણ વર્ણને નિવાસ યોગ્ય હોય છે.

(૨) રાતી, લોહિતગંધી અને કષાયસવાલી ભૂમિ ક્ષત્રિય વર્ણને નિવાસ યોગ્ય ગણાય છે.

(૩) પીઠી, તીરવા સ્વાદવાલી અને અન્નગંધી ભૂમિ વૈશ્યને નિવાસ યોગ્ય હોય છે.

(૪) કાલી, કઢવી, નિર્ગન્ધા, અથવા મત્સ્યગન્ધી ભૂમિ શૂદ્ર વર્ણને નિવાસ યોગ્ય ગણાય છે.

વર્ણોચિત ભૂમિપરીક્ષાના અન્ય પ્રકારો—

પરીક્ષણીય ભૂમિમાં એક હાથ સમચોરસ ઝૂંડો ટાકો ટોડી તેમાં માટીનો કાચો ઘડો મૂકવો, ઘડામાં ચાવલજવ આદિ ધાન્ય ભરવું, તે ઉપર માટીનું કાચું શરાવલું ઘૃતથી ભરીને મૂકવું, તેમાં ઘોલી, રાતી, પીલી તથા કાલી એ ૪ વાટો, ઉત્તર, પૂર્વ, દક્ષિણ અને પશ્ચિમ સંમુખ મૂકીને સંધ્યા સમયમાં તે ચેતાથી દીપક પ્રકટાવવા, પવન વધારે ઓછો ન લાગે તે માટે આડી ત્રાટી ઝમી કરવી. દીપક બઢે ત્યાં સુધી ત્યાં ઝમ્યા રહી જોવું. ઘૃત રહે ત્યાં સુધી ચાર વાટો બઢતી રહે તો તે ભૂમિ ચારે વર્ણને યોગ્ય છે એમ જાણવું અને ઘી હોવા છતાં ઉત્તરાદિ જે દિશાનો દીપક વૃજાય તે દિશાનાં વર્ણવાલાને તે ભૂમિ યોગ્ય નથી, એમ જાણવું. ઉત્તર દિશાથી બ્રાહ્મણાદિ વર્ણો અનુક્રમે સમજવાના છે.

૨ પરીક્ષણીય ભૂમિમાં ઉપર જણાવ્યો તેવો ટાકો ટોડીને તેમાં ઘોઢાં, રાતાં, પીઠાં અને શ્યામરંગનાં પુષ્પો સાંજે વેરવાં અને સવારમાં

जोवां जे जे रंगना पुष्पो सवार सुधी ताजां रहे ते ते वर्णना मनुष्योने माटे ते भूमि योग्य अने जे जे वर्णनां पुष्पो करमायेलां अथवा सुकायेलां जणाय ते ते वर्ण माटे ते भूमि अयोग्य छे. एम समजवुं. बधां पुष्पो ताजां रहे तो बधां वर्णने योग्य अने बधां पुष्पो सुकाय तो बधाने माटे ते भूमि अयोग्य समजवी.

वर्णोचित भूमिना उत्तम मध्यम अने कनिष्ठ प्रकारो—

(१) ते भूमिमां एक हाथ समचोरस अंडो खाडो खोदीने तेमांथी निकलेली माटी वडे पाछो भरवो. जो माटी वधे तो ते भूमि उत्तम, माटी बधी अंदर समाई जाय तो मध्यम अने ते माटी वडे खाडो पूरो न भराय तो ते भूमि कनिष्ठ प्रकारनी जाणवी.

(२) उक्त प्रकारनी खाडो पाणी वडे भरीने त्यांथी १०० पगला दूर जइने पाछा पासे आर्वीने जोवुं, खाडो तेवो ज भयो जणाय तो उत्तम, एक आंगळ पाणी नीचे तरे तो मध्यम अने घणां आंगळ पाणी ओछुं थइ जाय तो ते भूमि अधन्य प्रकारनी जाणवी.

बीज-वापथी भूमिपरिक्षा—

फालकृष्टेऽथवा देशे, सर्वबीजानि वापयेत् ।

त्रि-पञ्च-सप्त-रात्रेण, यत्र रोहन्ति तान्यपि ॥१॥

ज्येष्ठोत्तमकनिष्ठाभू-वर्जयेदितरां सदा ।

पञ्चगव्यौषधीजलैः, परीक्षित्वाऽथ सेचयेत् ॥२॥

भा०टी०—अथवा वास्तुभूमिना प्रदेशमां हलवडे खेडीने त्यां बधी जातनां बीजो वापवां, जो त्रण पांच अने सात दिवसमां बीज उगी नीकळे तो अनुक्रमे उत्तम मध्यम अने कनिष्ठ प्रकारनी भूमि जाणवी, एटला काले पण जो तेमां बीजांकुर न नीकळे तो ते भूमिनो सदा त्याग करवो.

જલપ્લવથી ભૂમિપરીક્ષા—

પૂર્વ, ઈશાન અને ઉત્તર દિશામાં જે ભૂમિનું જલ જતું હોય તે ભૂમિ સર્વજાતિને માટે સુખદાયક હોય છે અને વર્ણ પરત્વે ઉત્તર, પૂર્વ, દક્ષિણ, પશ્ચિમ--જલવાહિની ભૂમિ અનુક્રમે બ્રાહ્મણ, ક્ષત્રિય વૈશ્ય અને શૂદ્રને માટે હિતકારિણી હોય છે. અગ્નિકોણપ્લવાભૂમિમાં અગ્નિભય, દક્ષિણપ્લવામાં વૈશ્ય સિવાયનાનું મરણ, નૈર્ઋત્યપ્લવામાં ચોરભય, પશ્ચિમપ્લવામાં શૂદ્ર સિવાયનાં વર્ણોને શોક અને વાયવ્ય-પ્લવામાં ધાન્યનો નાશ થાય છે.

આ વિષયમાં આચાર્યવરાહમિહિરની વ્યવસ્થા—

उद्गादिप्लवमिष्टं, विप्रादीनां प्रदक्षिणेनैव ।

विप्रः सर्वत्र वसेद्-नुवर्णमथेष्टमन्येषाम् ॥૩॥

भा०टी०—ब्राह्मणादिवर्णोने माटे अनुक्रमे उत्तर, पूर्व, दक्षिण-पश्चिमप्लवभूमि निवासने योग्य होय છે, છતાં બ્રાહ્મણ સર્વ નિવાસ-યોગ્ય ભૂમિમાં વાસ કરી શકે, ક્ષત્રિય ક્ષત્રિયાદિ ત્રિવર્ણોચિત ભૂમિમાં, વૈશ્ય વૈશ્યાદિ દ્વિવર્ણોચિતમાં અને શૂદ્ર કેવલ શૂદ્રોચિત ભૂમિમાં જ રહી શકે. વર્ણોચિત ભૂમિ જ તેમના દેવાલયોને પણ ઉચિત હોય છે.

આ વિષયમાં વરાહમિહિરનું મન્તવ્ય—

भूमयो ब्राह्मणादीनां, याः प्रोक्ता वास्तुकर्मणि ।

ता एव तेषां शस्यन्ते, देवताघतनेष्वपि ॥૪॥

भा०टी०—ब्राह्मणादिवर्णोना घरो माटे જે પ્રકારની ભૂમિઓ યોગ્ય કહી છે, તેજ ભૂમિઓ તેમના દેવમન્દિરોને માટે પણ પ્રશસ્ત જાણવી. યોગ્ય ભૂમિ જ અભ્યુદયજનક થાય છે—

नगरनिवेश, गृहनिवेश के देवालयनिवेश करतां पहेलां तेना स्थान-भूमिनी परीक्षा अवश्य करवी जोइये.

जे भूमि समतल समचोरस, लंबचोरस, खाडा खांचा चिनानी, मजबूत, स्वच्छ अने निःशल्य होय, ज्यां जेनुं चित्त प्रसन्न थतुं होय तेज भूमि अभ्युदयकारिणी होय छे.

त्रिकोण, पंचकोण अने षट्कोणआदि आकारवाली, दिग्मूढ, पोची, उद्वसित अने उद्वेगकारिणीभूमिमां घर के देवमन्दिर बनावनारने शान्ति प्राप्त थती नथी.

२. शल्योद्धार-लक्षण

सुलक्षणेऽपि भूभागे, शल्यादिदोषदूषिते ।

नोदयस्तत्र तेनादौ, शल्यमुद्दिभ्रयते बुधैः ॥१९॥

भा०टी०—भूमिभाग सुलक्षणवान् होवा छतां ते शल्यादि-दोषयुक्त होय तो त्यां वसवाथी अभ्युदय थतो नथी, ते कारणथी विद्वानो प्रथम भूमिगत शल्यनो उद्धार करे छे.

विधिथी भूमिपरिग्रह अने खातविधि कर्यां पछी ते वास्तुभूमि सशल्य छे के निःशल्य छे तेनी तपास करवी. शल्यज्ञानना अनेक प्रकारो छे, पण ते सर्वनी चर्चा करवा जतां ए विषय जटिल बनवानो भय छे. एटले मात्र ६ प्रकारो वडे ज शल्यनो विचार करवो योग्य धारिये छीये.

(१) वास्तुभूमिमां ६४, ८१ के १०० पदोनी कल्पना करी ते ते पदस्थित चैत्यकारक गृहपतिनी शारीरिक चेष्टाद्वारा,

(२) परिगृहीत भूमिमां शियाल, कूतरा आदिना प्रवेश उपरथी,

(३) प्रश्नकालमां प्राणियोना शब्दश्रवणद्वारा,

(४) अ, क, च, ट, त, प्रमुख प्रश्नोत्तरवर्णोंद्वारा,

(५) प्रश्नांकद्वारा अने (६) प्रश्नलघुद्वारा.

१ चैत्यकरावनार गृहस्थ परिगृहीत भूमिमां वास्तुपूजन आदि कार्यो करतां शुं शुं शारीरिक प्रवृत्तियो-चेष्टाओ करे छे, तेनुं सत्रधारे

स्वास ध्यान राखवुं अने ते उपरथी शल्यनो निर्णय करवो. ते आ रीते—

१-गृहपति खाज खणवा निमित्ते के स्वाभाविक रीते पोताना जे अंगनो स्पर्श करे वास्तुना ते स्थानमां ते अंगनी ऊंचाइ जेटलुं नीचे तेज अंगनुं शल्य छे एम समजवुं, जो ते पोताना मस्तकने खंजवालतो जणाय तो एक माथोडुं नीचे वास्तुना ते पदमां मनुष्यना मस्तकनुं हाडकुं सूचित करे छे. बीजा अंगमां खाज आदि विकृति दृष्टिगोचर थाय तो तेटला ऊंडाणमां वास्तुना ते स्थानमां ते अंगनुं हाडकुं आदि शल्य होवानो संभव जाणवो. जो बे अंगोमां विकार जणाय तो बे अंगो अने सर्व अंगोनी विकृतिथी सर्व अंगोना अस्थि आदि शल्यो छे, एवो निर्णय करवो.

ए सम्बन्धमां गर्गाचार्यनुं निरूपण—

प्रश्नकाले गृहपतिः, कश्मिन्नङ्गे समास्थितः ।

किमङ्गं संस्पृशेद्वाऽपि, व्याहरेद्वा शुभाशुभम् ॥१॥

विलोक्य स्थपतिः पूर्वं, पश्चाच्छल्यं विचारयेत् ।

शङ्खभेरीमृदङ्गानां, पटहानां च निस्स्वनाः ॥२॥

दध्यक्षतानां पुष्पाणां, फलानां दर्शनानि च ।

स्पृष्टाङ्गसदृशं शल्यं, तस्य स्थाने विनिर्दिशेत् ॥३॥

निरक्षेदेदवर्णिं तत्र, तदङ्गं ब्रुवते यथा ।

गृहनाथस्य तत्राधः, शल्यं निःसंशयं वदेत् ॥४॥

भा०टी०—प्रश्न समये गृहस्थामी कया अंग उपर ऊभो छे, कया अंगनो स्पर्श करे छे, अथवा शुभाशुभ केवुं वचन बोले छे, ते सूत्रधार प्रथम जुए अने पछी शल्यनो विचार करे.

जो ते समयमां शंख, नगारा, मृदंग के ढोलनो शब्द कर्णगोचर थाय, अथवा दही, अक्षत, पुष्प के फल दृष्टिगोचर थाय तो शुभ-दायक छे. प्रायः ते वास्तुभूमिमां शल्यनो अभाव सूचवे छे, पण

शल्यविषयक प्रश्नकाले गृहस्वामी कोइ अंग विशेषने खंजवालतो के स्पर्श करतो जणाय तो स्पर्शेल अंग संबन्धी शल्य ते स्थानमां बताववुं. त्यां एटली भूमि खोदवी के जेमां गृहपतिनुं स्पृष्ट अंग डुबी जाय, तेटला नीचेना भूमिगर्भमां शल्य छे, एम निःसंशयपणे कहेवुं. बृहत्संहितामां आचार्यबराहमिहिरनुं प्रतिपादन—

कण्डूयते यदङ्गं, गृहपतिना यत्र वाऽमराहुत्या ।

अशुभं भवेन्नित्तं, विकृतिर्वाग्नेः सशल्यं तत् ॥५॥

भा०टी०—वास्तुभूमिमां गृहस्वामी ज्यां ऊभेलो पोताना अंगने खणे, जे पदना देवने आहुति आपतां अशुभ निमित्त दृष्टिगत थाय के अग्नि बुझाई जाय, ते स्थान सशल्य होय छे.

(२) खात करवाना पूर्व दिवसे वास्तुभूमिने प्रमाजीने साफ करी राखवी अने खातना दिवसे जइने जोवी, जो तेमां शशला, शियाल अने कूतरा आदिनो पग पडेलो नजरे पडे तो समजवुं के तेमां ते प्राणीनुं हाडकुं छे.

(३) शल्यविषयक प्रश्नकालमां जो हाथी, घोडा, गाय के गधेडानो शब्द काने पडे तो बोलनार प्राणीनुं शल्य त्यां छे, एम कहेवुं अने तेना स्थान तथा ऊंडाणनो निर्णय पूर्वोक्तविधि प्रमाणे गृहपतिनी अंग विकृति उपरथी करवो.

ए संबन्धमां गर्गाचार्य कहे छे—

प्रश्नकाले गजो गौर्वा, तुरगो गर्दभोऽपि वा ।

यः प्राणी व्याहरेत्तत्र, तद्भवं शल्यमादिशेत् ॥

प्रमाणं तत्र वक्तव्यं, पूर्वोक्तविधिना ततः ॥ ६ ॥

(४) प्रश्नमां आवेल आदिवर्णो उपरथी शल्य जाणवानी पद्धति अधिक प्रसिद्ध छे, आ पद्धति जेम अधिक व्यापक छे तेम अधिक मतभेदवाली पण छे, आ मतोमांना बधा मतो सामान्य रीते बे भागमां वहेंचाय छे.

વિવેકવિલાસ, પ્રશ્નવિદ્યા અને રાજવહ્નિ આદિ ગ્રન્થકારો વાસ્તુ-
ભૂમિના ૯ ભાગો પાડીને પૂર્વાદિ મધ્યાન્ત કોઠાઓમાં અનુક્રમે વ.
ક. ચ. ત. ઇ. હ. સ. ષ. ય. આ નવ વર્ણોનો ન્યાસ બતાવે છે. જો
કે એમની વચ્ચે ષ ટ-ત-અ-એ-ઞ-ચ-ઙ-ઙ્યાદિ સાધારણ મત-
ભેદો તો છે જ, છતાં આ વધા ગ્રન્થકારોની માન્યતાનું ઉદ્ગમ સ્થાન
એક છે, એમાં શંકા નથી. આ માન્યતા ઘણા સ્વરા ઉત્તર ભારતના
ગ્રન્થોમાં પ્રતિપાદિત થયેલી છે.

નિર્વાણકલિકા, વિશ્વકર્મપ્રકાશ, મુહૂર્તમાર્તઙ્ડજ્યોતિર્નિવન્ધાદિ
કતિપય ગ્રન્થોના મતે ૯ કોષ્ટકોમાં લખવાના વર્ણો 'અ-ક-ચ-ટ-
ત-પ-ય-શ-હ-પયા.' આ ક્રમથી જણાવેલ છે. આ મતમાં પૂર્વાદિ
૮ કોષ્ટકોમાં અનુક્રમે ૮ વર્ગાક્ષરો અને મધ્ય કોષ્ટકમાં 'હ-પ-ય'
આ ત્રણ અક્ષરો હોય છે. આ વચ્ચે માન્યતાને આધારે નીચે એક નકશો
આપીએ છીએ. ૧ માન્યતા વિવેકવિલાસ આદિની અને ૨ માન્યતા
નિર્વાણકલિકા અને જ્યોતિર્નિવન્ધાદિની છે.

એશાની

પૌર્વી

આગ્નેયી

	(૧) પ (૨) શ	(૧) વવ (૨) અ	(૧) ક (૨) ક	
ઉત્તરા	(૧) સ (૨) ય	(૧) ય (૨) હપય	(૧) વ-વ (૨) ચ	દક્ષિણા
	(૧) હ (૨) ષ	(૧) ઇ-અ (૨) ત	(૧) ત-ટ (૨) ટ	

વાયવી

પશ્ચિમા

નૈઋતિ

उपर प्रमाणे वास्तुभूमिना ९ भाग पाडी ते प्रत्येकमां लखवाना वर्णो आलेखीने शल्याशल्यनो विचार करवो.

ए विषयमां राजवल्लभकार लखे छे—

“प्रश्नत्रयं चापि गृहाधिपेन,

देवस्य वृक्षस्य फलस्य चाऽपि ।

वाच्यं हि कोष्ठेऽक्षरसंस्थिते च

शल्यं विलोक्यं भवनेषु सृष्ट्या ॥ ७ ॥

भा०टी०—शिल्पिण गृहस्वामीना मुखे कोइ पण देव, वृक्ष अने फलनुं नाम कहेवरावहुं अने ते त्रणे नामोना आद्यअक्षरो ध्यानमां राखी, कोष्ठकगत अक्षरोनी साथे मेलववां. वास्तुभूमिना जे कोष्ठकमां बोलेल त्रण नामो पैकीना कोइ पण नामनो आद्यअक्षर मली आवे तो ते कोष्ठकना भागमां शल्य जाणी तेने दूर करवुं.

ज्योतिर्निबन्धमां प्रश्न करवानी रीति नीचे प्रमाणे छे—

स्मृत्वेष्टदेवतां प्रष्टु-वचनस्याद्यमक्षरम् ।

गृहीत्वा तु ततः शल्याऽशल्यं सम्यग् विचार्यते ॥८॥

भा०टी०—पोताना इष्ट देवतनुं स्मरण करी, ‘गृहपतिण शिल्पिने शल्यविषयक प्रश्न करवो अने शिल्पिण पण स्वेष्ट देवताना स्मरणपूर्वक प्रष्टाना मुखथी नीकळेल वचननो आद्यअक्षर ध्यानमां राखी, नव कोठाओमां लखेल अक्षरोनी साथे मेलवीने शल्य अशल्यनो विचार करवो. प्रश्ननो आद्यअक्षर कोइ कोठामां मली आवे तो ते भूमिभागमां शल्य कहेवुं अने प्रश्नवर्ण कोष्ठकोमां न मले तो भूमि शल्यरहित छे, एम कहेवुं.

प्रश्नवर्णद्वारा शल्यज्ञान अने फल—

वास्तुभूमिना ९ भाग करी पूछेल प्रश्नवर्ण जो कोष्ठकमां मली आवे तो त्यां शल्य छे एम जाण्या पछी ते शल्य कोनुं छे, केटलुं

નીચે છે અને તેનું ફલ શું છે, એ વાતોનું નિરૂપણ ઘણા ગ્રંથોમાં કહેલું છે. વધારું નિરૂપણ ઘણે ભાગે સરખુંજ હોવાથી અમો પ્રશ્ન-વિદ્યાનું નિરૂપણ નીચે આપીયે છીયે—

(બ) વિદ્યૈન્દ્રથાં 'વ:' પ્રશ્ને, માનુષશલ્યં હિ સાર્દ્ધકરમાત્રે ।
વિદઘાતિ મનુજમરણં, તદ્ભવનસ્થં ન સન્દેહઃ ॥૧૯॥

ખાંટી૦—પ્રશ્નમાં 'વ' અક્ષર હોય તો વાસ્તુભૂમિના પૂર્વ-સ્વંડમાં દોઢ હાથ નીચે મનુષ્યનું શલ્ય જાણવું. ઘર અથવા પ્રાસાદમાં રહેલ તે શલ્ય મનુષ્યનું (ઘર સ્વામી અથવા પ્રાસાદ કરાવનારનું) મરણ નિષ્ણાવે છે.

(ક) આગ્નેય્યાં 'ક:' પ્રશ્ને, સ્વરશલ્યં તુ કરદ્વયે ભવતિ ।
કુરુતે નૃપદ્વંડભયં, ભયમતુલં સંસ્થિતં ભવતે ॥૨૦॥

ખાંટી૦—પ્રશ્નમાં 'ક' અક્ષર હોય તો અગ્નિ કોણના ભાગમાં બે હાથના ઝંડાણમાં ગધેડાનું શલ્ય જાણવું. મકાનમાં રહેલું એ શલ્ય રાજદ્વંડનો ભય અને બીજો ભય ઉત્પન્ન કરનાર નિવડે છે.

(ચ) દક્ષિણદિશિ 'ચ:' પ્રશ્ને, નરશલ્યં જાયતે ચ કટિમાત્રે ।
જનયતિ તદ્ ભવનસ્થં, મૃત્યું ગૃહનાયકસ્યૈવ ॥૨૧॥

ખાંટી૦—પ્રશ્નમાં 'ચ' અક્ષર હોય તો વાસ્તુભૂમિના દક્ષિણ-સ્વંડમાં કેડ સુધી નીચે પુરુષનું શલ્ય હોય છે. ઘરમાં રહેલું તે શલ્ય ગૃહસ્વામીનું મરણ નિષ્ણાવે છે.

(ત) રાક્ષસદિશિ 'ત:' પ્રશ્ને, સ્વરશલ્યં સાર્દ્ધહસ્તમાત્રે તુ ।
તદ્ ભવનગતં નિત્યં, કરોતિ હિમ્બક્ષયં નિયતમ્ ॥૨૨॥

ખાંટી૦—પ્રશ્નમાં 'ત' અક્ષર આવે તો નૈઋત્ય કોણના ભૂમિભાગમાં દોઢ હાથ નીચે ગધેડાનું શલ્ય કહેવું. ઘરમાં રહેલું તે શલ્ય ત્યાં રહેનારનાં બાલકોનો નાશ કરનારું થાય છે.

(अ.ए) वारुण्यां शिशुशल्यं 'अः' प्रश्ने भवति सार्द्धहस्तेन ।
पत्युः प्रवासमनिशं, शून्यं च करोति तद् गेहम् ॥१३॥

भा० टी०—प्रश्नमां 'अ' अक्षर होय तो पश्चिम तरफना भूमिखण्डमां दोढ हाथ नीचे बालकनुं शल्य होय छे. ते शल्य घर-
धणीने नित्य प्रवास करावनारुं अने घरने शून्य करनारुं थाय छे.

(ह) वायव्यां 'हः' प्रश्ने, तुषमद्गारसहितं चतुष्करे विद्धि ।
दुःस्वप्नदर्शनं तद्, मित्रविनाशं च कुर्वीत ॥१४॥

भा० टी०—प्रश्नमां 'ह' अक्षर होय तो वायव्यकोणना भूमि-
खंडमां चार हाथ नीचे फोतरां अने कोलसा जाणवां. आ शल्यो घरमां
रहेनारने दुष्टस्वप्न देनारां अने मित्रोनी विनाश करनारां निवडे छे.

(स) द्विजशल्यं कौबेर्यां, दिशि 'सः' प्रश्ने भवति कटिमात्रे ।
धनदमपि तद् गृहस्थं, कुरुतेऽप्यथ निर्धनं शीघ्रम् ॥१५॥

भा० टी०—प्रश्नमां 'स' अक्षर आवे तो ते भूमिनां उत्तर
खंडमां केड सुधी नीचे ब्राह्मणना शरीरनुं शल्य होय छे. ते शल्य
घरमां रहेनार धनकुबेरने पण थोडा ज समयमां निर्धन बनावी दे छे.

(प) ऐशान्यां 'पः' प्रश्ने गोशल्यं विद्धि सार्द्धहस्ते तु ।
भवनगतं तत् कुरुते, गोधननाशं न सन्देहः ॥१६॥

भा० टी०—प्रश्नमां 'प' अक्षर होय तो ईशान दिशाना भागमां
दोढ हाथ नीचे गायनुं शल्य होय छे. मकानमां रहेलुं ते शल्य घर-
धणीना गोधननी नाश करे छे एमां संदेह नथी.

(य) 'यः' प्रश्ने गृहमध्ये, शल्यं च नरकपालभस्मसमम् ।
वक्षोमात्रं कुरुते, कुलक्षयं तद् गृहस्थस्य ॥१७॥

भा० टी०—प्रश्नमां 'य' अक्षर होय तो वास्तुभूमिना मध्य-

खण्डमां छाती सुधी नीचे माणसना माथानी खोपरी अने भस्मरूप शल्य होय छे. ते शल्य गृहस्वामीना कुलनो नाश करे छे.

नव पैकीनो कोइ अक्षर होय तो ज शल्य—

नवाक्षरस्य मध्ये चेत्, प्रश्नस्याद्याक्षरं भवेत् ।

तदा शल्यं वदेद्विद्वा-नन्यथा शून्यमादिशेत् ॥१८॥

भा० टी०—प्रश्नवचननो आद्यअक्षर पूर्वोक्त ९ अक्षरोमां होय तोज विद्वाने त्यां शल्य कहेवुं. अन्यथा ते भूमिने शल्यरहित कहेवी.

नवमा भागना नव भाग—

प्रश्न वचनर्था जे नवमो भाग सशल्य जणाय ते भाग जो घणो म्होटो होय तो तेना फरी ९ भाग करीने पूर्वोक्त प्रकारे शल्यनी तपास करवी, एवं पण विधान छे.

“नवभागविभक्तं यद्, गृहक्षेत्रं महद् यदा ।

पुनः प्रश्नस्तदा कार्यः, पूर्ववद् विभजेत्तदा ॥१९॥”

भा० टी०—नवभागे करेल ते (मशल्य) गृहक्षेत्र जो म्होटुं होय तो पूर्व रीतिए ते सशल्य भागना नव भाग करीने शल्यवाला स्थाननो पत्तो लगाडवो.

(५) प्रश्नवर्णांक अने प्रश्नमात्रांकद्वारा शल्यज्ञान—

प्रश्नविद्यामां प्रश्नाक्षर वर्णांक अने मात्रांकद्वारा शल्य जाणवानो एक बीजो प्रकार पण जणाव्यो छे, ते आ प्रमाणे—

अक्षरं द्विगुणं कार्यं, मात्रा कार्यं चतुर्गुणा ।

ग्रहेर्भागः समाहृत्य, ओजे शल्यं समे नदि ॥२०॥

भा० टी०—प्रश्नाक्षरना वर्णांकने वमणी अने मात्रांकने चार गुणो करी वन्ने अंकोने एकत्र करी ते अंकराशिने ९ थी भांगवो. जेण विषमांक (१-३-५-७) रहे तो भूमि सशल्य अने समांक रहे तो

शल्यरहित जाणवी. आ वस्तु नीचेना उदाहरणथी समजाशे. शल्य-प्रश्नमां कोइए 'संतरा' फलनुं नाम कछुं, संतरानो 'स,' वर्गनो त्रीजो वर्ण अने एनी 'अं' मात्रा, वर्गनो १५ पंदरमो स्वर होइ, वर्णांक ३ नो बमणो ६ अने मात्रांक १५ नो चार गुणो ६० थयो. बन्नेने जोडतां थयेल अंक ६६ ने ९ नो भाग आपतां शेष ३ ए विषमांक रह्यो. आथी जणाथुं के भूमिमां शल्य छे अने उत्तर दिशाना खण्डमां छे, केमके 'स' नुं स्थान उत्तर खण्ड छे. एज प्रमाणे कोइ पण प्रश्नअक्षर-नां वर्णांक अने मात्रांक उपरथी शल्य स्थाननो निर्देश करवो.

(६) प्रश्नलग्नद्वारा शल्यज्ञान—

प्रश्नविद्यामां लखे छे—

चतुष्कोणं गृहं कल्प्यं, त्रिरावृत्तं लिखेच्च भम् ।

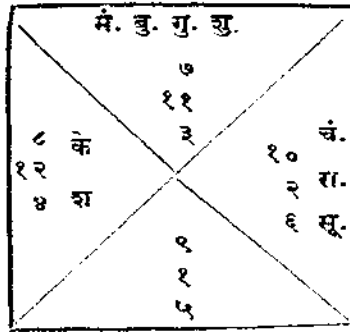
यत्र चन्द्रो निधिस्तत्र, शल्यं यत्र रविर्मतम् ॥२१॥

शुभदृष्टियुतश्चन्द्रो, निधिः प्राप्यः पुरातनः ।

सूर्योऽप्येवं सदा वाच्यं, चण्डेश्वरनृपोदितम् ॥२२॥

भा० टी०—चोरस घरने चार खूणामां कापी चार भाग करवा. लग्नराशिथी मांडीने त्रण आवृत्तिओथी १२ राशिओ ४ भागोमां लखवी अने जे ग्रह जे राशिमां होय ते ते राशिवाला कोठामां लखवा अने जोवुं. शुभयुक्त अने शुभदृष्ट चन्द्र जे कोठामां होय त्यां धन छे एम कहेवुं तथा अशुभयुत अने अशुभदृष्ट सूर्य ज्यां होय त्यां शल्य छे एम कहेवुं. ए विषय नीचेना उदाहरणथी समजी शकाशे—

सं. २००३ ना आसो शुदि १० ना दिवसे कोइए पोतानी वास्तुभूमिमां धन अथवा शल्य होवा विषे प्रश्न कर्यो. सूर्योदयात् प्रश्नेष्टकाल ३ घडी ३३ फलनो हतो. एटले वर्तमान लग्न 'तुला' आव्युं, चोखंडा घरमां तुलाथी मांडी राशिओ अने ग्रहो लखतां लग्न-कुंडली अठारमा पृष्ठनी शुरुआतमां आपी छे ते प्रमाणे बनी.



ઉપરના લગ્નની ગ્રહવ્યવસ્થા આ પ્રમાણે છે—

મકરનો ચન્દ્ર દક્ષિણના ભાગમાં પડ્યો છે. તે ઉપર બુધ, ગુરુ અને શુક્રની ત્રિપાદ દષ્ટિ છે, પણ સાથે જ મંગલ અને શનિ એને પૂર્ણ-દષ્ટિથી જુદા છે એથી વાસ્તુભૂમિમાં ધન નિધાન તો નથી. હવે આ વાસ્તુક્ષેત્રમાં શલ્યનો વિચાર કરીએ. સૂર્ય રાહુની સાથે છે અને મંગલથી શનિ પૂર્ણદષ્ટિ છે. આ સ્થિતિ શલ્યનો સંભવ સૂચવે છે અને તે પણ દક્ષિણ દિશાના ભાગમાં હોવાનો સંભવ છે. એમ છતાં સૂર્ય આ બુધ, ગુરુ અને શુક્રવડે પણ ત્રિપાદદષ્ટિ દષ્ટિ છે, એથી આ ભૂમિમાં શલ્યનો નિશ્ચિત સંભવ તો નથી. છતાં શંકિતસ્થાનમાં શલ્યની તપાસ કરવી યોગ્ય ગણાય !

પ્રશ્નલગ્નદ્વારા ધન અથવા શલ્ય જાળવાની રીતિ જ્યોતિર્નિબન્ધ-કારે પણ આવી છે, છતાં આમાં ભૂમિના ૪ ભાગ પાડી રાશિઓ લખવાની વાત નથી, પણ પ્રચલિત લગ્નકુંડલીને ગ્રહો ઉપરથી જોવાનું વિધાન છે. તે આ પ્રમાણે—

યસ્મિન્ ભાગે સૌમ્યા, ગૃહસ્ય તદ્વ્યવસ્થાદિશેત્ તત્ર ।

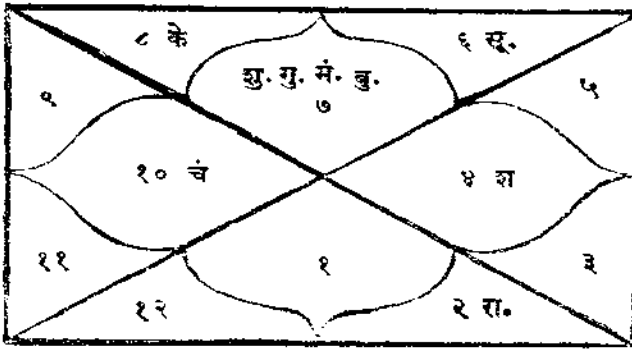
પાપા યસ્મિન્ ભાગે, તસ્મિન્ શલ્યં વિનિર્દેશ્યમ્ ॥૨૩॥

આંટી—કુંડલીના જે દિશાભાગમાં સૌમ્યગ્રહો પડ્યા હોય,

ઘરના તે દિશાભાગમાં ગ્રહસ્વામિક દ્રવ્ય કહેવું અને જે ભાગમાં પાપ-ગ્રહો પડ્યા હોય, ઘરના તે દિશાભાગમાં શલ્ય કહેવું.

આ ગ્રંથના મતે પૂર્વોક્ત લગ્નકુંડલી નીચે પ્રમાણે બનાવીને પરિણામ કહી શકાય । પ્રસ્નેષ્ટ ૩-૩૩

લગ્નચક્ર



આ કુંડલીમાં સૌમ્યગ્રહની સ્થિતિ પૂર્વદિશા તેમજ ઉત્તરદિશામાં દષ્ટિગોચર થાય છે. એટલે એ દિશાઓમાં શલ્ય તો સંભવતું નથી છતાં દ્રવ્યનું અસ્તિત્વ પણ સંભવિત નથી. કેમકે ચન્દ્ર ઉપર શનિ મંગલની પૂર્ણ અને સૂર્ય રાહુની દ્વિપાદ દષ્ટિ છે. બુધ, ગુરુ અને શુક્ર પણ મંગલ-યુક્ત છે અને શનિ, રાહુદ્વારા દ્વિપાદ દષ્ટિ એ દષ્ટ છે. એથી જણાયું કે પૂર્વ ઉત્તર દિશાઓમાં શલ્ય નથી, તેમ દ્રવ્ય પણ નથી. હવે પશ્ચિમ દક્ષિણ દિશાઓનો વિચાર કરીયે. સૂર્ય પૂર્વાગ્નેયકોણમાં છે. શનિ દક્ષિણમાં છે અને રાહુ પશ્ચિમનૈર્ઋત્ય ભાગમાં છે. આ ગ્રહસ્થિતિ દક્ષિણભાગમાં શલ્યનું સૂચન કરે છે. મધ્યદક્ષિણમાં બેઠેલ શનિને ચન્દ્ર પૂર્ણદષ્ટિથી દેશે છે અને બુધ ગુરુ શુક્રની પણ એના ઉપર એક-પાદ દષ્ટિ છે, એથી દક્ષિણમાં શલ્યનો સંભવ જણાતો નથી. રાહુ ઉપર મંગલની પૂર્ણદષ્ટિ છે સ્વરી પણ સાથે જ બુધ ગુરુ શુક્ર એને ત્રિપાદ-

दृष्टिथी अने चन्द्रमा द्विपाददृष्टि देखतो होवार्थी राहुनी भूमिमां पण शल्य जणातुं नथी. सूर्य पूर्वसमीपवर्ती आग्नेयकोणमां छे अने शनिनी पूर्णदृष्टिमां छे. चन्द्रनी द्विपाद दृष्टि सिवाय बीजा सौम्य-ग्रहनी एना उपर दृष्टि पण नथी, एटले आग्नेयकोणमां शल्यनी तपास करवी जोइए, एम ए प्रश्नलग्ननी कुंडली उपरथी फलित थाय छे.

भूमिगत कोइ पण शल्य हानिकारक छे ए विषयमां बृहत्संहिताकारनी मान्यता—

धनहानिर्दारुमये, पशुपीडारुग्भयानि चास्थिकृते ।

लोहमये शस्त्रभयं, कपालकेशेषु मृत्युः स्यात् ॥२४॥

अङ्गारे स्तेनभयं, भस्मनि च विनिर्दिशेत् सदाग्निभयम् ।

शल्यं हि मर्मसंस्थं, सुवर्णरजतादृतेऽल्यशुभम् ॥२५॥

मर्मण्यमर्मगो वा, रुणद्धयर्थागमं तुषसमूहः ।

अपि नागदन्तके मर्म-संस्थितो दोषकृद् भवति ॥२६॥

भा०टी०—गृहगत शल्य काष्ठरूप होय तो धनहानि, हाडकारूप होय तो पशुपीडा, रोग अने भयजनक होय छे. लोहरूप शल्यमां शस्त्रभय अने माणसनी खोपरी के बालरूप शल्यमां मृत्यु थाय छे. शल्य कोलसारूप होय तो चोरभय अने भस्मरूप होय तो सदाने माटे अग्निभयजनक होय छे. मर्मस्थानोनी नीचे रहेल सोना रूपा सिवायनुं कोइ पण शल्य अत्यन्त अशुभ फलदायक होय छे.

तुषसमूह (धान्यना फोतरानो ढगलो) मर्मगत होय के अमर्मगत होय पण ते धनप्राप्तिने रोके छे अने मर्मस्थानमां रहेल तो एक खींटी पण दोषदायक निवडे छे.

शल्योद्धार निमित्ते केटलुं ऊंडुं खोदबुं जोइए ?—

जानुमात्रं खनेद् भूमि-मथवा पुरुषोन्मिताम् ।

अधः पुरुषमात्रात्तु, न शल्यं दोषदं गृहे ॥२७॥

जलान्तकस्थितं शल्यं, प्रासादे दोषदं नृणाम् ।

तस्मात् प्रासादिकीं भूमिं, खनेद्यावज्जलान्तिकम् ॥२८॥

भा०टी०—गृहनिर्माण करतां भूमिने ढींचण सुधी 'भूमि जो नव्य-पूर्वे नहि वसेली होय तो' अथवा तो पुरुष-परिमाण ऊंडी खोदवी, एथी नीचे शल्य होय तो गृहने विषे दोषरूप नथी.

प्रासाद 'देवालय'मां नीचे जलपर्यन्त ऊंडु शल्य होय तो पण बनावनार मनुष्य माटे दोषकारक होय छे. तेथी प्रासादनी भूमि जल नीकले त्यां सुधी खोदीने शल्यने दूर करवुं जोइये.

माण्डव्यनुं कथन पण एने मलतुं ज छे—

जलान्तं प्रस्तरान्तं वा, पुरुषान्तमथापि वा ।

क्षेत्रं संशोध्य चोद्घृत्य, शल्यं सदनमारभेत् ॥२९॥

भा०टी०—जलपर्यन्त, प्रस्तर (पत्थर) पर्यन्त अथवा पुरुष-परिमित वास्तुक्षेत्रनुं संशोधन करी शक्य होय तो दूर करीने घरना कार्यनो आरम्भ करवो जोइये.

उपरना प्रमाणोथी सिद्ध थाय छे के ज्यां घर अथवा देवमन्दिर बनाववुं होय ते भूमिनुं प्रथम विधिपूर्वक शोधन करी तेमां हाडकुं, लोह, काष्ठ, तुषसमूह, राखोडी अथवा बीजी कोइ अपवित्र वस्तु होय तो ते दूर करावीने ते पछी वास्तुनो पायो भरवो. घर-मकाननी भूमि ४ हाथ सुधी खोदीने शल्य दूर करवुं जोइये अने देवालयनी भूमि जल नीकले त्यां सुधीमां शल्य होय तो पण दूर करवुं. जो नीचे पत्थर अथवा कांकरील भूमि आवी जाय तो ते उपरथी पायो नाखवो, कारणके त्यां जलपर्यन्त खोदवानी आवश्यकता रहेती नथी.

३. दिक्साधन-लक्षण

शल्योदिरहिते वास्तौ, यदि दिग्मूढता भवेत् ।

वासे तत्र शुभं नैव, तस्माद् दिक्साधनं वरम् ॥२०॥

ખાંટી૦—શલ્યાદિરહિત વાસ્તુભૂમિમાં પળ જો દિગ્મૂઢપણું હોય તો ત્યાં વસવું શુભદાયક નથી, માટે દિક્સાધન કરવું જોઈયે.

પ્રાસાદ, મઠ, મન્દિર, ઘર, સમાગૃહ અને કુણ્ડ આદિના નિર્માણમાં પૂર્વાદિ દિશાશુદ્ધિ અવશ્ય જોવી જોઈએ. કોઈ પળ દિગ્મૂઢ (દિશાશૂન્ય) વાસ્તુ શુભ ગણાતું નથી. તેમાં રહેનારનો અમ્યુદય થતો નથી.

૫ સંબન્ધમાં વૃદ્ધ નારદજી કહે છે—

પ્રાસાદે સદનેઽલિન્દે, દ્વારે કુણ્ડે વિશેષતઃ ।

દિગ્મૂઢે કુલનાશઃ સ્યાત્, તસ્માત્સંસાધયેદિશઃ ॥૧॥

ખાંટી૦—દેવાલય, ઘર, ઓસરી, દ્વાર અને કુંડ જો દિગ્મૂઢ હોય તો કુલનો નાશ થાય છે, માટે સારી રીતે દિશાસાધન કરવું. દિશાજ્ઞાનના ઉપાયો—

પ્રાચીન ગ્રન્થોમાં પૂર્વાદિ દિશાઓને જાણવાના અનેક ઉપાયોનું વર્ણન કર્યું છે, જે પૈકીના કેટલાક નીચે પ્રમાણે છે.

રાજવલ્લભકાર લખે છે—

પ્રાચી મેષતુલારવાવુદયતિ સ્યાદ્ વૈષ્ણવે વહ્નિભે,
ચિન્નાસ્વાતિભમધ્યગા હિ ગદિતા પ્રાચી વુધૈઃ પશ્ચધા ।
પ્રાસાદં ભવનં કરોતિ નગરં દિગ્મૂઢમર્થક્ષયં,
હર્મ્યં દેવગૃહે પુરે ચ નિતરામાયુર્ધનં દિગ્મુખે ॥ ૨ ॥

ખાંટી૦—૧ મેષરાશિ ઉપર આવીને સૂર્ય પહેલે દિવસે જે દિશાભાગમાં ઉદય થાય તે દિશા શુદ્ધ પૂર્વા સમજવી. ૫૪ પ્રમાણે ૨ તુલાના સૂર્યનું ઉદયસ્થાન પળ શુદ્ધ પૂર્વા જ હોય છે.^૧

૧ અહીં સૂર્ય સાયન મેષ અને તુલાનો સમજવો. પ્રાયઃ અંધેઝી ૩ જા માહેનાની ૨૧ મી તારીખે સાયન મેષનો અને ૧ મા મહિનાની ૨૪ મી તારીખે સાયન તુલાનો સૂર્ય થાય છે. ચંદ્રપંચાંગોમાં આની સૂચના 'મેષે ભાનુઃ' 'તુલે ભાનુઃ' શબ્દોમાં આપવામાં આવે છે.

३ जे स्थानमां 'श्रवण' नक्षत्रनो उदय थाय अने ४ जे स्थाने 'कृत्तिका' नक्षत्र उदय पामे ते भागो पण शुद्ध पूर्वदिशा होय छे. ५ चित्रा ज्यां उदय पामे अने स्वाति ज्यां उदय पामे ते बन्ने स्थानोमां निशान करी ते बेनो मध्यभाग नकी करो. ए मध्यभाग ते शुद्ध पूर्व-दिशा छे एम समजी लो.

उपर प्रमाणे जाणकारोए पांच प्रकारे पूर्वदिशा ओळखावी छे.

दिग्मूढ देवालय, घर अने नगर धनहानि करे छे. शुद्धदिशा संमुख द्वारवाळा महेल देवमन्दिर अने नगर आयुष्य तथा धननी वृद्धि करनारा थाय छे.

दिशाज्ञानना प्रकारान्तरी—

तारे मार्कटिके ध्रुवस्य समतां नीतिऽचलम्बेन ते,
दीपाग्रेण तदैक्यतश्च कथिता सूत्रेण सौम्या दिशा ।
शङ्कोर्युग्मगुणे तु मण्डलवरे छायाऽत्र यामद्वयो-
र्जाता यत्र युतिस्तु शङ्कुतलतो याम्योत्तरे सुस्फुटे ॥३॥

भा०टी०—(१) ध्रुवमांकडीनो तारो (लघुसप्तर्षिनो ध्रुव तरफनो तारो) अने ध्रुवनो तारो, आ बन्नेने ओळवे लइने वास्तु-भूमिना दक्षिण कांठे राखेल दीपकनी शिखानी साथे मेलवो. पछी ध्रुव अने दीपकशिखानी सीधमां वास्तुक्षेत्रमां दक्षिणोत्तर लांबु सूत्र खंची रेखा दोरो सूत्रनो सामेनो छेडो उत्तर अने दीपक तरफनो छेडो दक्षिण दिशाने जणावशे.

(२) वास्तुक्षेत्रना मध्यभागे समतल भूमिमां एक गजनुं गोळ मण्डल बनावी तेमां वच्चे एक फुट लांबो सीधो शंकु ऊभो करो अने तेनी छाया घटती घटती मण्डलनी पश्चिम रेखा उपर ज्यां स्पर्श करे त्यां निशान करो; शंकुने तेज स्थितिमां ऊभो रहेवा दो, ज्यारे व्रीजा पहोरना समये शंकुछाया मंडलनी पूर्वे रेखाने कापीने बहार

નીકલે ત્યારે ત્યાં પળ નિશાન કરો અને પછી વન્ને નિશાનો વચ્ચે લીટી દોરી તેની ઉપર દક્ષિણોત્તર લંબ રેખા દોરો, ઇટલે ઉત્તર દક્ષિણ દિશા સિદ્ધ થશે.

સ્ફુટકરણ ગ્રન્થનું દિશાસાધન—

ધ્રુવઓલંબાની રેખામાં ઉત્તર દક્ષિણ દિશા અને તે રેખાથી થતા મત્સ્યના મુખ અને પુચ્છના સ્થાને અનુક્રમે પૂર્વ પશ્ચિમ દિશા સિદ્ધ થશે.

આ વિષયનું નીચેના પદ્યમાં પ્રતિપાદન છે—

ધ્રુવલમ્બકરેસ્વાયા, રેખાન્તઃ સૌમ્યયામ્યહરિતૌ સ્તઃ ।
તન્મત્સ્યપુચ્છમુખતઃ, પશ્ચિમપૂર્વાભિધે વિદ્યાત્ ॥૪॥

૪. કીલિકાસૂત્ર-લક્ષણ

ચતુર્વર્ણવિભાગાનાં, યદ્ હિતં કીલિકાદિકમ્ ।

તદેવ વેશ્મ-ચૈત્યાદિ-નિવેશાદૌ નિયોજયેત્ ॥૨૧॥

ખા.ટી. — ચાર વર્ણો પૈકીના જે જે વર્ણને જે જે પ્રકારની કીલિકા (સ્ત્રીલી-સ્ત્રીલી) અને સૂત્ર હિતકારક જણાવેલ છે, તે પ્રકારની કીલિકા-સૂત્રનો ઘર તથા ચૈત્ય આદિના પ્રારંભમાં ઉપયોગ કરવો. ભૂમિના પરિગ્રહ પ્રસંગે ગ્રાહ્યભૂમિના ચાર સ્ત્રીલીઓમાં સ્ત્રીલિયો ઠોકી સૂત્રો બાંધીને ભૂમિની ચતુર્સીમા નિશ્ચિત કરવા જણાવ્યું છે. ત્યાં જ પ્રશ્ન ઉપસ્થિત થવો સંભવિત છે કે તે સ્ત્રીલિયો શાની હોવી જોઈએ ? તે લંબાઈમાં કેટલી અને આકારમાં કેવી હોવી જોઈએ ? વઠ્ઠી તેમાં બાંધવાની દોરી કેવા પ્રકારની હોય તો સારી ગણાય ? આ વધી વાતોનો શાસ્ત્રમાં સુલાસો કરેલ છે. જિજ્ઞાસુગણની જિજ્ઞાસાપૂર્તિ કરવાના હેતુથી અમો તેનો સારાંશ નીચે આપીએ છીએ.

જે વિષયમાં સૂત્રધારમંડન નીચે પ્રમાણે પ્રતિપાદન કરે છે.

अग्नौ राक्षसवायुशङ्करदिशि स्थाप्याः क्रमात्कीलिकाः,
अश्वत्थः खदिरः शिरीषककुम्भौ वृक्षाः क्रमेण द्विजात् ।
वर्णानां कुशमुञ्जकाशशणजं सूत्रं क्रमात्सूत्रणे ॥

भा०टी०—अग्निकोण, नैर्ऋत्यकोण, वायव्यकोण अने ईशान-
कोण आ चार कोणोमां अनुक्रमे खीलियो ठोकवी. ते खीलियो
ब्राह्मणादि ४ वर्णना लोकोने माटे अनुक्रमे पीपळो, खेर, शरेश अने
अर्जुन वृक्षनी होय तो ते उत्तम कही छे अने खीलियोनी वच्चे बांध-
वानी दोरी डामनी, मुंजनी, काशनी अने शणनी होय तो ब्राह्मणादि
जातियोने माटे श्रेष्ठ गणाय छे.

ग्रन्थान्तरमां खेर, अर्जुन, शाल, पीपळ, रक्तचंदन, पलाश, रक्त-
शाल, विशाल, नीप, करंज, कुटज, वांस अने बिल्ववृक्ष, आ वृक्षो
पैकीना कोइ पण एक वृक्षनो शंकु (खीली) बनाववानुं विधान कर्युं छे.

ज्योतिर्निबन्धमां लखे छे—

चतुर्विंशत् त्रयोविंशत् षोडशद्वादशाङ्गुलैः ।

विप्रादीनां शङ्कुमानं, स्वर्णवस्त्राद्यलङ्कृतम् ॥ १ ॥

भा०टी०—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य अने शूद्रवर्णोने योग्य
खीलियो अनुक्रमे २४-२३-१६-१२ आंगळ लांबी बनाववी अने
सुवर्ण तथा वस्त्रादिवडे ते सुशोभित करवी.

खीलियोनो उपरनो एक तृतीयांश चोरस करवो. मध्य तृतीयांश
अष्टास्र अने नीचेनो एक तृतीयांश गोळ करी क्रमे पातळो करवो.
खीली बेढ के व्रण वगरनी शुभलक्षणयुक्त शुभदिवसे कराववी.
सूत्रधारोना सांग्रदायिक टिप्पणमां ब्राह्मणादियोग्य खीलियोनुं मान
अनुक्रमे ३२-२८-२४-२० आंगळनुं वताव्युं छे.

ब्राह्मणनी चोखंडी, क्षत्रियनी अष्टास्र, वैश्यनी षोडशास्र अने

शुद्धनी गोळ खीली होवी जोइये. खीली उपर सर्व प्रथम सूत्रधारे घन प्रहार करवो. प्रथम प्रहारे खीली एक चतुर्थांश जेटली जमीनमां उतरे तो ते जमीन उत्तम जाणवी, एक तृतीयांश जेटली अंदर जाय तो मध्यम अने अडधी अंदर उतरी जाय तो वास्तुभूमि कनिष्ठ प्रकारनी जाणवी अने खीली अडधा उपरांत जमीनमां उतरी जाय तो ते भूमि वासने योग्य नथी एवो निर्णय करी लेवो. खीली उपर प्रहार करतां ते सीधी जमीनमां उतरे अथवा पूर्व उत्तर ईशानादि दिशा तरफ जराक नमे तो ते शुभसूचक गणाय छे.

खीली टोकतां ते भागी जाय अथवा वांकी थडने दक्षिणादि अशुभ दिशामां नमी जाय तो अशुभ निमित्त जाणीने ते मुहूर्ते भूमि-ग्रहण करवानुं मांडी वाळवुं जोइये.

दोरडी वर्णानुसार कुशआदिनी बतावी छे, छतां सूतरनी दोरडी सर्ववर्णने माटे उत्तम छे, एवुं ग्रंथांतरमां विधान करेलुं छे अने खीलीनी जेम दोरी बांधती वखते पण शुभाशुभ निमित्त ध्यानमां राखवुं जोइये. दोरी बांधतां खीली न नमे, दोरी बगचर बंधाई जाय, बांधती वखते मंगलध्वनि अथवा मंगलशब्द काने पडे तो कार्यसिद्धिसूचक शुभनिमित्त समजवुं अने एथी उल्टुं जो दोरी बांधतां खीली ऊखडी जाय के अशुभदिशामां नमी जाय, दोरी तूटी जाय अथवा तत्काल कोइ रुदन आदिनो अशुभ शब्द कर्णगोचर थाय तो निमित्त शुभ नथी, एम जाणी मुहूर्ते आगळ उपर राखवुं.

५. कूर्मशिला—लक्षण (१)

यत्र संस्थाप्यते कूर्मः, कूर्मरूपयुतापि वा ।

ब्रह्मस्थाने निवेश्याऽसौ, शिला कूर्मशिला हि सा ॥२२॥

भा०टी०—जे शिला उपर सोना, रूपा अथवा त्रांबानो कूर्म

स्थापन कराय अथवा जे शिला उपर कूर्मनुं रूपक करेल होय अने जे गर्भगृहना मध्यभागे स्थापवामां आवे छे ते शिलाने ' कूर्म-शिला ' मानेली छे,

कूर्मशिलानुं मान—

एक हाथना देवालयनी कूर्मशिला ४ आंगळनी समचोरस करवी अने ते पछी १० हाथ सुधीना देवालयमां प्रतिहाथे २-२ आंगळनी वृद्धि करवी. ११ थी २० हाथ सुधी १-१ आंगळ अने २१ थी ५० हाथ सुधी हाथ दीठ अर्ध आंगळनी वृद्धि करवी. अर्थात् १, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १० हाथना देवालयनी कूर्मशिलानुं मान ४, ६, ८, १०, १२, १४, १६, १८, २०, २२ आंगळनुं ११, १२, १३, १४, १५, १६, १७, १८, १९, २० हाथना देवालयनी धरणी-शिलानुं मान २३-२४-२५-२६-२७-२८-२९-३०-३१-३२ आंगळनुं अने २१-२२-२३-२४-२५-२६-२७-२८-२९-३०-३१-३२-३३-३४-३५-३६-३७-३८-३९-४०-४१-४२-४३-४४-४५-४६-४७-४८-४९-५०-हाथना प्रासादनी कूर्म-शिलानुं मान अनुक्रमे ३२॥-३३-३३॥-३४-३४॥-३५-३५॥-३६-३६॥-३७-३७॥-३८-३८॥-३९-३९॥-४०-४०॥-४१-४१॥-४२-४२॥-४३-४३॥-४४-४४॥-४५-४५॥-४६-४६॥-४७ आंगळनुं राखवुं जोइये.

पत्थरनी कूर्मशिलानी जाडाइ तेनी लंबाई पहोळाइना व्रीजा भाग जेटली राखवी अने तेना उपर रूपकोनी खोदाइ शिलानी जाडाइथी अर्धी करवी. कूर्मशिला जो इंटनी होय तो तेनी जाडाइ पहोळाइथी अर्धी राखवी. शिलानी निचली बाजुना मध्य भागमां कमलनुं रूपक शिलानी जाडाइना आठमा भाग जेटलुं खोदवुं.

प्रकारान्तरे कूर्मशिलाप्रमाण—

एकहस्ते तु प्रासादे, शिला वेदाङ्गुला भवेत् ।
 षडङ्गुला द्विहस्ते च, त्रिहस्ते च ग्रहाङ्गुला ॥१॥
 चतुर्हस्ते च प्रासादे, शिला स्याद् द्वादशाङ्गुला ।
 तृतीयांशोदयः कार्यः, हस्ताद्ये च युगान्तके ॥२॥
 वेदोपर्यष्टहस्तान्तं, वृद्धिस्त्र्यङ्गुलतो भवेत् ।
 पुनर्द्व्यङ्गुलतो वृद्धिः, पञ्चाशब्दस्तकावधि ॥३॥
 पादेन चोच्छ्रितां स्वस्थां, तां कुर्यात् पङ्कजान्विताम् ।
 कर्तृकारापका राजा, प्रजाद्या नन्दते विरम् ॥४॥
 अष्टाङ्गुलोच्छ्रिता स्वस्था, चतुरस्रा करोन्मिता ।
 शैलजा स्वस्थमानोक्ता, इष्टकानां तदर्धतः ॥५॥
 शैलजे शैलजा कार्या, ऐष्टिके चेष्टिकामयी ।
 तत्पिण्डाग्रे भवेत्पद्मं, शिलापिण्डाष्टमांशकम् ॥६॥
 पद्मपत्रयुता चैव, नन्द्यावर्ता सस्वस्तिका ।
 तद्देवायुधसंज्ञा च, पीठबन्धवशानुगा ॥७॥

भा०टी० १ हाथना प्रासादनी आधारशिला-(कूर्मशिला)
 ४ आंगळनी होय, २ हाथना प्रासादमां ६ आंगळनी, ३ हाथना
 प्रासादे ९ आंगळनी अने ४ हाथना प्रासादे पादशिला १२ आंगळनी
 होय छे. २थी ४ हाथ सुधीना प्रासादनी शिला विस्तारना त्रीज
 भागे जाई करवी. चारथी ८ हाथ सुधीना प्रासादनी पादशिलामां
 प्रति हस्त ३ आंगळनी वृद्धि करवी अने ९ थी ५० हाथ सुधीना प्रासा-
 दमां प्रति हाथे शिलाना विस्तारमां २-२ आंगळनी वृद्धि करवी.

४ हाथ उपरना प्रासादनी पादशिलानो उच्छ्रय (जाडाई)
 शिलाना १ चतुर्थांश जेटलो करवी. शिलाने कमलना चिन्हें चिन्हित
 करवी के जेथी करनार करावनार राजा प्रजा वगेरेने घणा काल-
 पर्यन्त समृद्धितुं कारण बने.

चोरस १ हाथ पादशिलानी ऊंचाइ ८ आंगळनी करवी ते शैलज-शिलानुं स्वस्थमान छे अने इंटनी शिलानी जाडाइ पोताना विस्तारथी अर्धा माननी करवी ए एनुं स्वस्थमान छे. पत्थरना प्रासादनी पादशिला पत्थरनी अने इंटना प्रासादनी पादशिला इंटनी करवी. ते शिलानी जाडाइमां जाडाइना अष्टमांशे कमलनो आकार खोदवो, शिला उपर कमल, नन्दावर्त अने स्वस्तिक आदिना मांगलिक आकारो खोदवा अने ते ते दिशाभागनी शिलाओ उपर ते ते दिशाना देवोना आयुधोनां चिन्हो पीठबंधने अनुरूप खोदाववां.

कूर्मनुं स्वरूप अने मान—

मध्यशिला उपर प्रतिष्ठाप्य कूर्म सोनानो अथवा रूपानो बनाववो अने तेने रत्नो तथा आभूषणोथी अलंकृत करवो. प्रमाणमां कूर्म कूर्म-शिलाना पंचमांश जेटलो करवो ए कूर्मनुं उत्तम मान छे, एनुं क्षीरार्णवग्रन्थनुं विधान छे.

वास्तुमंजरी आदि अर्वाचीन ग्रन्थोमां कूर्मनुं परिमाण १ थी १५ हाथ सुधीनां प्रासादोमां प्रतिहस्त अर्ध अंगुल, १६ थी ३१ हाथना प्रासादोमां प्रतिहस्त पाव अंगुल अने ३२ हाथथी ५० हाथ सुधीना प्रासादोमां प्रतिहस्त बे आनी अंगुलना हिसाबे कूर्मना मानमां वृद्धि करी जे आवे तेठलुं राखवानुं विधान कर्युं छे अने म्होटामां म्होटो कूर्म १४ आंगळनो बताव्यो छे. अपराजितपृच्छामां आ विषयमां कंडक भूल थइ होय एम लागे छे, मुद्रित पुस्तकमां—

“ एकहस्ते तु प्रासादे कूर्मः स्याच्चतुरङ्गुलः ।” पाठ छे अने “ अनेन क्रमयोगेन मन्वङ्गुलः शतार्द्धके । ”

आमां एक हाथना प्रासादमां ४ आंगळना कूर्मनुं विधान भूल भरेलुं लागे छे. तेमज ५० हाथना प्रासादनो कूर्म १४ आंगळनो होवानुं कथन पण अर्वाचीन ग्रन्थोनी साथे मेळ मेळववा खातर

સંશોધકે કર્યું લાગે છે. અમારી પાસેની અપરાજિતપૃચ્છાની હસ્ત-લિખિતપ્રતિમાં ”—“ એકહસ્તે તુ પ્રાસાદે કૂર્મશ્ચાર્ધાઙ્ગુલઃ સ્મૃતઃ । ” એવો પાઠ છે અને અન્તમાં—“ અનેન ક્રમયોગેન સસાઙ્ગુલાઃ શતાર્ધકે । ”

એ પાઠ સ્વીકારીને કૂર્મનું અન્તિમ માન ૭ આંગળનું વતાવ્યું છે, એ મધ્યમાન છે, આ માનને ચતુર્થાશહીન કરવાથી કનિષ્ઠમાન આવે છે અને ચતુર્થાશાધિક કરવાથી ઉત્તમમાન આવે છે.

ક્ષીરાર્ણવમાં કૂર્મનું ઉત્તમમાન શિલાના પંચમાંશ જેટલું વતાવ્યું છે, ૫૦ હાથના પ્રાસાદોની કૂર્મશિલાનું માન ૪૭ આંગળનું છે, તો એનો પંચમાંશ ૧૧ કંઙક ન્યૂન સાડાનવ આંગળ આવે છે, અપરાજિતના અમારા પાઠ પ્રમાણે કૂર્મનું ચોક્કસ મધ્યમાન ૭૧ આવે છે, એને ચતુર્થાશ યુક્ત કરી ઉત્તમ વનાવતાં ૧૧ ≡ નવ આંગળ અગ્યાર આની આવે છે, જે ક્ષીરાર્ણવના માનને લગભગ મઠતું આવે છે. વાસ્તુમંજરી આદિમાં કહેલ કૂર્મમાન નિશ્ચિતરૂપે ૧૩૧ આંગળ આવે છે, આ સાડાત્રણથી પોળાચાર આંગળનો ફરક કોઈ પણ અશુદ્ધ પાઠને આભારી છે.

કૂર્મના ઉપાદાનો સોનું રૂપું અને ત્રાંવું આ ત્રણ ધાતુઓ છે. આ ત્રણમાંથી શક્તિ અનુસારે કોઈ પણ એક ધાતુનો કૂર્મ બનાવવો.

કૂર્મશિલાલક્ષણ (૨) (દાક્ષિણાત્યપદ્ધતિ)—

શિલ્પશાસ્ત્રોમાં લખાયેલા દેશપરક ભેદો પણ શિલ્પિઓએ ધ્યાનમાં રાખવાની ઘણી આવશ્યકતા છે. એક દેશમાં ચાલતી કોઈ પણ વાસ્તુકર્મવિષયક પ્રણાલી બીજા દેશ માટે શાસ્ત્રદષ્ટિએ ગ્રાહ્ય છે કે નહિ એ વાતનો નિર્ણય કર્યા પછી જ તે પ્રણાલી ગ્રહણ કરવી જોઈએ.

આજ કાલ ઘણા ગુજરાતી શિલ્પિઓ અને તેમની દેખા દેખીએ

केटलाक मारवाडी मिस्रीओ पण प्रासादनी कूर्मशिला उपर योग-
नाल मूकावे छे अने तेने देवनी बेटक उपर लावनि छोडे छे, आ
पद्धति उत्तरभारतीयशिल्पनी नहि पण दक्षिणान्य छे. आ प्रणालिका
मौलिक केवी छे अने एने अपनावनागओए केवी विकृत करी नांखी
छे, ए वस्तुने जणाववा माटे अमां अत्र ते मौलिक पद्धतिने तेना
खरा रूपमां आपवी योग्य धार्मिके छे, जे नीचे प्रमाणे छे—

युगास्त्रे तृक्तमानं तु. मानसूत्रं विधाय तु
तदन्याकृतिगेहानां. तनन्तस्संभवश्चरान् ॥ ८ ॥

मात्वा विधाय सूत्राणि. वेदास्यं न्वान्माचरेत् ।
अथाधारशिलां न्यस्य. गर्भेऽभिमन कलशं न्यसेत् ।
पद्मानि कूर्मयुक्तानि. योगनालं तनोपनि ॥ ९ ॥

भा०टी०—उक्त मानवाद्या चोगम वास्तुशेखरां अने बीजा
आकारवाळा गृहवास्तुओमां ते वास्तुभूमिना संनवित आकारने सूत्र-
बडे मापीने तेमां चोरस खान करवुं. ते स्वाहामां आधाग्निला
स्थापित करवी. शिला उपर कलश, कलश उपर कमल अने कमल
उपर योगनालनो न्यास करवो. आधार शिलानुं माप—

पीठस्य तारार्धततां तदर्ध-विस्तारयुक्तां प्रकरोतु मन्त्री ।
वा पादपद्मस्य ततां तदर्ध-तुङ्गामथाधारशिलां सुलग्ने ॥ १० ॥

भावि प्रासादपीठादि-मानेन परिकल्पयेत् ।

आधाराख्यशिलाकुम्भ-पद्मकूर्मादिमानकम् ॥ ११ ॥

भा०टी०—“ सारा लग्नमां शिल्पिण आधारशिला तैयार
करवी. आधारशिलानी लंबाई, पीठनी ऊंचाईथी अडधी अने पडो-
ळाई तेथी अडधी राखवी अथवा आधारशिलानी लंबाई पायाना
विस्तार जेटली अने पडोळाई तेनाथी अडधी राखवी अने तेनी

જાડાઈ લંબાઈના ચતુર્થાંશ જેટલી રાક્ષવી. વસ્તુતઃ આધારશિલા, કલશ, કમલ અને કૂર્મ આ સર્વનું માન ભાવિપ્રાસાદના પીઠ આદિના માનને અનુસારે નિશ્ચિત કરવું જોઈએ.

કલશ, કમલ, કૂર્મ અને યોગનાલનું માન—

સ્તમ્ભોચ્ચસ્ય ષડંશવિસ્તૃતતદષ્ટાંશાધિકોચ્છ્રો ઘટઃ,
પદ્મોઽષ્ટાંશસમુચ્છ્ર્યોચ્છ્ર્યનવાંશોનપ્રથોઽષ્ટચ્છદઃ ।
અષ્ટાંશાયતતદ્વિપાંશરહિતવ્યાસાયતાર્ધોચ્છ્રયઃ,
કૂર્મો નાગયવાગ્રતો દ્વિગુણમૂલા યોગનાલપ્રથા ॥ ૧૨ ॥

માંટી—પ્રાસાદના સ્તંભની ડુંચાઈના છઠ્ઠા ભાગ જેટલો કલશનો વિસ્તાર અને વિસ્તારથી એક અષ્ટમાંશ અધિક તેની ડુંચાઈ હોય છે. કમલની ડુંચાઈ સ્તંભની ડુંચાઈના એક અષ્ટમાંશ જેટલી અને ડુંચાઈથી એક નવમાંશહીન તેનો વિસ્તાર જાણવો. કમલ આઠ પત્ર અને કર્ણિકાસહિત બનાવવું. કૂર્મને સ્તંભની ડુંચાઈના આઠમા ભાગે લાંબો અને તેથી એક અષ્ટમાંશહીન પહોળો અને પહોળાઈથી અડધો ડુંચો કરવો. યોગનાલનો વિસ્તાર ઉપર આઠ જવનો ઇટલે એક આંગળનો અને મૂલમાં તેથી ચમળો ઇટલે બે આંગળનો હોય છે.

આધારશિલા ઉપર કલશ આદિનો સ્થાપનાક્રમ—

આધારસ્ય શિલામધ્યે, નિધિકુમ્ભં શિલાકૃતમ્ ।
તામ્રજં વાઽથ વિન્યસ્ય, નાનારત્નાદિપૂરિતમ્ ॥૧૩॥
તદૂર્ધ્વે દૃષદમ્ભોજં, કર્ણિકાયાં તદસ્ય તુ ।
ભાવિદેવમુખં કૂર્મં, વિન્યસેદ્ વિધિના નિશિ ॥૧૪॥
તદૂર્ધ્વે રજતામ્ભોજ—ગતં રજતકચ્છપમ્ ।
તદૂર્ધ્વદેશે સ્વર્ણાબ્જે, સ્વર્ણકૂર્મં નિધાયેત્ ॥૧૫॥
તત્પાદદૃષદોર્મધ્ય—સમાયામં પ્રણાલકમ્ ।
કૂર્મસ્યોપરિ સંસ્થાપ્ય, કારયેત્ ગર્તપૂરણમ્ ॥૧૬॥

सशर्करैर्वालुकैश्च, मृद्भिश्च दृषदादिभिः ।
 दृढं प्रपूरयेच्छुद्धै-र्जलैराप्लाव्य मुद्गरैः ॥१७॥
 मुसलैर्बृहच्चिरस्कैस्तु, निहत्य दृढतां नयेत् ।
 गजसंचारणं तत्र, बहुशः कारयेत् पुनः ॥१८॥
 एवं दृढतरं कृत्वा, समीकृत्य जलादिभिः ।
 दिग्ज्ञानप्रक्रियादक्षः, स तत्कर्म समाचरेत् ॥१९॥

भा०टी०—आधारशिलाना मध्यभागमां पत्थरनो अथवा
 बांबानो कलश स्थापवो. कलशमां अनेक प्रकारनां रत्नो मूकवा ते
 कलश उपर पत्थरनुं कमल स्थापवुं अने तेनी कर्णिकामां भावीदेवनुं
 मुख जे दिशामां आववानुं होय ते दिशामां मुख राखी पाषाणनो
 कूर्म विधिपूर्वक रात्रिना समये प्रतिष्ठित करवो. ते कूर्म उपर रूपानुं
 कमल स्थापी तेनां मध्यभागे रूपानो कूर्म स्थापवो. ते कूर्म उपर
 सुवर्णनुं कमल अने कमल उपर सुवर्णनो कच्छप प्रतिष्ठित करवो अने
 ते उपर योगनालनी स्थापना करवी. योगनालनी लंबाई प्रासादना
 पायामां स्थापेल बे शिलाओना अन्तर जेटली एटले प्रासादना गर्भना
 व्यास जेटली राखवी. आम १ कलश, ३ कमल, ३ कूर्म अने १ योग-
 नाल स्थापीने ते खाडो शुद्ध रती, वजरी, माटी अने पत्थर आदि
 नाखी उपरथी पाणी नाखी मोगरो अने मूसलो वडे कूटीने मजवृत करतां
 भरवो. उपर अनेक वार हाथीओ चलावीने ते वास्तुतलने अति दृढ
 करवुं. वास्तुभूमिने दृढ अने समतल कर्या पट्टी दिशाज्ञाननी प्रक्रिया
 जाणनार चतुर शिल्पिण वास्तुभूमिमां पूर्वादि दिशाओ निश्चित कर-
 वानुं काम शुरु करवुं.

उपर्युक्त कूर्मन्यामविधि दाक्षिणात्यपद्धतिना शिल्पशास्त्रोना
 आधारे लभेल छे. आज काल ते प्रदेशना विद्वानो आ विधियो
 प्रमाणे ज करावे छे के बीजी रीते ते आपणे जाणता नथी, पण एक

वात तो निश्चित छे के गुजरात तरफना शिल्पिओ कूर्म उपर जे नाभि मूकावे छे ते उक्तविधिमांना योगनालनुं ज अनुकरण छे. उत्तरभारतनी शिल्पसंहिताओमां आ योगनालनुं विधान दृष्टिगोचर थठुं नथी. भारवाड तरफना शिल्पिओमां ए पद्धति प्रचलित पण नथी. अपवादरूपे गुजरातमां रही आवेला कोइ शिल्पिओ करावता होय तो ते वात जुदी छे. अमोए सेंकडो वर्षीना प्राचीन प्रासादोना जीर्णोद्धारोना प्रसंगोमां आ योगनालो कहींथी नीकले छे के नहि एनी तपास करावी छतां कोइ पण प्राचीनदेवालयोना भूमिभागमां आ योगनाल अथवा एने मळती आवे एवी कोइ पण वस्तु नीकळी नथी. आ उपरथी निर्विवादपणे सिद्ध थाय छे के कूर्म उपर नाभि अथवा योगनाल मूकवानी पद्धति आ प्रदेश-गोदावरीथी उत्तर तरफना प्रदेश-माटे विहित न होवाथी चलाववी योग्य नथी एम अमो मानीये छीये।

कूर्म प्रमाण—

एकहस्ते तु प्रासादे, कूर्मश्चार्धाङ्गुलः स्मृतः ।
 अर्धवृद्धिः प्रकर्तव्या, पञ्चदशहस्तावधि ॥२०॥
 द्वात्रिंशद्द्वस्तपर्यन्तं, पादवृद्धिः प्रकीर्तिता ।
 तदर्धेन पुनर्वृद्धि-द्विसप्ताङ्गुलः शतार्धके ॥२१॥
 एतन्मानं मध्यमुक्तं, कनिष्ठं पादवर्जितम् ।
 पादाधिकं भवेज्ज्यैष्ठं, कूर्मे मानं त्रिधोदितम् ॥२२॥
 हैमो रौप्यश्च कर्तव्यः, सर्वपापप्रणाशनः ।
 करोति य इमं कूर्मं, स यज्ञफलमाप्नुयात् ॥२३॥
 स्नानं पश्चामृतं कार्यं, कूर्मस्य तु यथाविधि ।
 अर्चयित्वा प्रयत्नेन, सुधूपामोदपुष्पकैः ॥२४॥
 तिलैर्यवैस्तथा होमं, पूर्णाहुतिं प्रदापयेत् ।
 निवेशयेत्ततः कूर्मं, वेदवादित्रमङ्गलैः ॥२५॥

भा०टी०—१ हाथना प्रासादे अर्धा आंगळनो कूर्म कस्यो छे, १ थी १५ हाथ सुधी प्रति हाथ अर्धा आंगळनी वृद्धि करवी. १६ थी ३२ हाथ सुधी प्रति हाथे पाव आंगळनी अने ३३ थी ५० हाथ सुधी हाथ दीठ वे आनी $\frac{१}{२}$ आंगळनी वृद्धि करवी. आ प्रमाणे वृद्धि करतां ५० हाथना प्रासादे १४ आंगळनो कूर्म थशे. आ कूर्मनुं मध्यमान कह्युं छे. आमांथी चतुर्थीशहीन करतां कनिष्ठ अने आमां चतुर्थीश वधारतां कूर्मनुं ज्येष्ठमान थशे. आ प्रकारे कूर्मनुं मान त्रण प्रकारनुं कह्युं छे. सोनानो अथवा रूपानो कूर्म सर्वपापोनो नाश करनारो छे. आवा उत्तम कूर्मने करावीने प्रतिष्ठित करनार यज्ञना फलने प्राप्त करे छे. कूर्मने प्रतिष्ठित करतां पहेलां विधिपूर्वक पञ्चामृतवडे तेने स्नान कराववुं, श्रेष्ठधूप अने सुगंधीपुष्पोधी पूजवो. तथा तल अने जवोना होमनी पूर्णाहुति देवराववी. शुभ मुहूर्ते वेदध्वनि तथा वादित्रोना मांगलिक शब्दपूर्वक कूर्मने वास्तु नीचे स्थापन करवो.

६. शिला-लक्षण

चैत्यपादात्मिकाः प्रोक्ताः, शिलाः पञ्चाऽथवा नव ।

तासां लक्षण-मानादि, निरूप्य स्थापनं शुभम् ॥२३॥

भा०टी०—शिलाओ प्रासादना पगरूपे गणाय छे. संख्यामां ते ५ अथवा तो ९ कही छे. आ शिलाओनुं लक्षण-प्रमाणआदि तपासीने शुभलक्षणान्वित अने मानोपेत शिलाओ स्थापवी शुभ छे.

‘शिला’ शब्दनो अर्थ कोइ पण घर अथवा देवालयना पायामां चणातो प्रथम पत्थर एवो थाय छे. ए प्रथम पत्थरने विधिपूर्वक शुभ समये यथास्थान स्थापन करवो ते ‘शिलान्यास’ छे, ‘दाक्षिणात्य शिल्प-पद्धति’मां आ ‘शिला’नुं नाम ‘प्रथमेष्टका’ आपेलुं छे. शिलाओनी संख्या—

आ शिलाओनी संख्याना विषयमां पूर्वग्रन्थकारोनी एकवाक्यता

નથી, કોઈ ૪, કોઈ ૫, કોઈ ૮ અને કોઈ ૯ શિલાઓની સ્થાપનાનું વિધાન કરે છે. જેઓ ૪ અથવા ૮ શિલાઓનું વિધાન કરે છે, તેમનો આશય કૂર્મને પ્રથમ નીચે સ્થાપી પછી વાસ્તુભૂમિનો ટાકો શુદ્ધ માટી અને અળવડ પથરાઓ વડે પૂરી લગભગ એક ચતુર્થાંશ જેટલો તે ટાકો રહે ત્યાં ચાર વિદિશાઓમાં ૪ અથવા ચાર દિશાઓ અને ચાર વિદિશાઓમાં મળી ૮ શિલાઓ પ્રતિષ્ઠિત કરવી એવો છે.

જેઓ ૫ અથવા ૯ શિલાઓ પ્રતિષ્ઠિત કરવાનો મત ધરાવે છે તેમની માન્યતા કૂર્મશિલાની સાથે જ ૪ અથવા ૮ શિલાઓ પણ પ્રતિષ્ઠિત કરવાનો છે. આમ શિલાસંખ્યાની વાતમાં મુખ્ય પક્ષ વે છે ૫ શિલાવાદી અને ૯ શિલાવાદી.

ચાર તથા ૫ શિલાઓની વાતમાં વિશ્વકર્મપ્રકાશકાર નીચે પ્રમાણે વ્યવસ્થા આપે છે—

યો વિધિર્ગૃહનિર્માણે, શિલાન્યાસસ્થ કર્મણિ ।

પ્રાસાદેષુ સ વિજ્ઞેય-શ્ચતસસ્તુ શિલાસ્તથા ॥ ૧ ॥

ભા.૦ટી.૦—ગૃહનિર્માણમાં શિલાન્યાસવિષયક જે વિધિ છે, તેજ વિધિ પ્રાસાદો 'દેવાલયો' માં પણ હોય છે. માત્ર ભેદ એટલો જ હોય છે કે પ્રાસાદવાસ્તુમાં શિલાઓ ૪ હોય છે.

શિલાઓનું સ્વરૂપ—

જે શિલા વિધિપૂર્વક પ્રતિષ્ઠિત કરવાની હોય તે દેખાવડી, રંગ રૂપમાં આંખને સુંદર લાગે એવી, ઢાઘ, અંગ, પીલક કે કાલક વિનાની અને જે જાતિના પથરાનું ઘર અથવા દેવાલય બનાવવાનો નિર્ણય કર્યો હોય તેજ જાતિની અથવા તેથી ઉચ્ચ જાતિની હોવી જોઈએ. કદાપિ ઘર કે દેવાલય ઇંટોનું બનાવવું હોય તો 'ઇષ્ટકારૂપ-શિલા સ્થાપન કરી શકાય છે. છતાં તે ઇંટ પણ સારી પાકેલી, સારી પ્રમાણયુક્ત અને સુંદર હોવી જોઈએ. ઘણી જૂની, કાઝી, કાઝા ઢાઘ

वाळी, रेतीवाळी, भागेली, प्रमाणमां न्दानी के म्होटी इंट शिलारूपे स्थापवाना काममां लेवी नहि.

शिलानी लंबाई-पहोलाई-जाडाई—

गृहवास्तुना निर्माणमां प्रतिष्ठित कराती शिलानुं परिमाण वर्ण-परत्वे भिन्न भिन्न छे. ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य अने शूद्रना गृहवास्तुनी शिलानी लंबाई अनुक्रमे २१, १७, १३, ९ आंगळनी होय छे, तेनी पहोलाई लंबाईथी अडधी अने जाडाई पहोलाईथी अडधी होवी जोइये. देवालयनी शिला सामान्य रीते एक हाथनी लंबाई पहोलाईनी होवी जोइये.

देवालयनी नन्दादि ८ शिलाओ—

देवालयना मानानुसार तेनी शिलाओनुं मान होय छे. देवालयनुं मान १ हाथथी ५० हाथ सुधीनुं होय छे, तेथी शिलाओनुं मान पण तदनुसार भिन्न भिन्न होय छे. तेमां पण नन्दादि ८ शिलाओनुं मान अने मध्यमां प्रतिष्ठाप्य 'घरणीशिला' नुं मान जुदुं पडे छे.

१-२-३-४-५ हाथना देवालयोनी नन्दादि ८ शिलाओ ७-९-११-१३-१५ आंगळना माननी, ६-७-८-९-१० हाथना देवालयनी नन्दादि शिलाओ १६-१७-१८-१९-२० आंगळनी, ११-१२-१३-१४-१५-१६-१७-१८-१९-२० हाथना देवालयोनी शिलाओ २०॥॥-२१॥-२२॥-२३-२३॥॥-२४॥-२५॥-२६-२६॥॥-२७॥-आंगळनी अने २१-२२-२३-२४-२५-२६-२७-२८-२९-३०-३१-३२-३३-३४-३५-३६-३७-३८-३९-४०-४१-४२-४३-४४-४५-४६-४७-४८-४९ अने ५० हाथना देवालयनी नन्दादिशिलाओ अनुक्रमे २८-२८॥-२९-२९॥-३०-३०॥-३१-३१॥-३२-३२॥-३३-३३॥-३४-३४॥-३५-३५॥-३६-३६॥-३७-३७॥-३८-३८॥-३९-३९॥-४०-४०॥

-૪૧-૪૧૧-૪૨-૪૨૧-આંગઝની સમચોરસ બનાવવી. આ શિલાઓની જાડાઈ લંબાઈ-પહોઝાઈના ઇકચતુર્થાંશ જેટલી રાખવી જોઈયે. શિલાઓ ઉપરના ચિન્હો—

નન્દાદિ ૮ શિલાઓ ઉપર અનુક્રમે શક્તિ, ઢળ્ઢ, સ્વઢ્ઢ, પાશ, અંકુશ, ગદા, ત્રિશૂલ અને વજ્રના રૂપકો સ્વોદવાં અને કૂર્મશિલા ઉપર નીચે પ્રમાણે ૯ રૂપકો સ્વોદવા. કૂર્મશિલાના મધ્યભાગે કૂર્મ, અગ્નિકોણમાં જલતરંગ, ઢક્ષિણમાં મત્સ્ય, નૈઋત્યમાં ઢર્દુર, પશ્ચિમમાં મકર, વાયવ્યમાં ગ્રાહ (ગ્રાસઢો) ઉત્તરમાં શંસ, ઈશાનમાં સર્પ અને પૂર્વઢિશામાં કલશ. આપ્રમાણે રૂપકો સ્વોઢીને શિલાને સુશોભિત કરવી. સામાન્યરીતે કલશ, અંકુશ, ઢ્વજ, છત્ર, ચામર, મત્સ્ય, તોરણ, ઢૂર્વા, નાગ, ફલ, મુકુટ, પુષ્પ, સ્વસ્તિક, નંઢ્યાવર્ત, વેઢિકા, કૂર્મ, કમલ, ચન્ઢ્ર, વજ્ર અને ગ્રાકાર આઢિના રૂપકો શિલાઓ ઉપર હોય તો હિતકારક નિવઢે છે. ઇ ઉપરાન્ત મનુષ્ય, ઢૃષભાદિ પશુ અને અશ્વ આઢિના પઢો વઢે ચિહ્નિત શિલાઓ પણ કલ્યાણની ઢૃઢ્ઢિ કરનારી હોય છે. રાક્ષસ, હરિણ અને પક્ષી આઢિના પઢચિન્હોવાલી શિલાઓ અશુભ છે અને વાસ્તુની પાઢપ્રતિષ્ઠામાં તે વર્જવી જોઈયે.

શિલાઓના નામોમાં મતભેઢ—

પ્રતિષ્ઠાપ્ય શિલાઓના નામોમાં પણ થોઢોક મતભેઢ છે. ચાર શિલાવાઢિયોના મતમાં શિલાઓના નન્દા, મઢ્રા, જયા અને પૂર્ણા ઇ નામો છે અને વાસિષ્ઠી, કાશ્યપી, માર્ગવી તથા આંગિરસી ઇ ઇના મોત્રો છે. પાંચશિલાવાઢિયોના મતમાં શિલાઓના નામો નન્દા, મઢ્રા, જયા, રિક્તા અને પૂર્ણા ઇ પ્રમાણે છે, પણ પ્રતિષ્ઠાકલ્પોમાં ચોથું નામ ' વિજયા ' લલેલું મલે છે.

અષ્ટ શિલાપક્ષમાં શિલાઓના નામો ક્યાંઈ ઉપલબ્ધ થયાં નથી. હ્તાં સંવતઃ નન્દા, મઢ્રા, જયા, પૂર્ણા, અજિતા, અપરાજિતા,

विजया अने मंगला ए प्रमाणे होवां जोइये.

भवशिलापक्षमां आग्नेयपुराणोक्तशिलाओना नामो—
नन्दा, भद्रा, जया, पूर्णा, अजिता, अपराजिता, विजया, मंगला अने
धरणी ए प्रमाणे छे, ज्यारे शिल्पशास्त्रोक्त नामो आ प्रमाणे छे—

नन्दा भद्रा जया विजया, पूर्णा च पञ्चमी शिला ।

मङ्गला ह्यजिताऽपरा-जिता च धरणी भवा ॥ २ ॥

शिलां निवेशयेत् पूर्वं, पश्चात्पीठस्य बन्धनम् ।

जङ्घायां शिखरे चैव, वेदिका कलशान्तिके ॥ ३ ॥

शिलोपरि समस्तं तत्, शिलाधश्चोपपीठकम् ।

इति युक्तिर्विधातव्या, शिलानां लक्षणं शुभम् ॥ ४ ॥

१ नन्दा, २ भद्रा, ३ जया, ४ विजया, ५ पूर्णा, ६ मंगला,
७ अजिता, ८ अपराजिता अने ९ धरणी ए प्रमाणे पादशिलाओनां
आ ९ नामो छे.

प्रथम शिलान्यास करवो अने प.शि.ते उपर पीठबंध करवो.
जंघा, शिखर, वेदी अने कलश आ वधे स्थले प्रथम शिला स्थापीने
पछी उपर चमत्तर करवुं. कारण के उपरनुं वधुं मंडाण शिला उपर ज
होय छे. मात्र उपपीठ ज शिलानी नीचे होय छे. माटे एवी युक्ति
करवी के जेथी शिला शुभलक्षणवाली बने.

उपशिलाओ—

उपशिला एटले 'शिलानी नीचे स्वाती आधारशिला' जेमना
मतमां जेटली शिलाओ तेटली ज उपशिलाओ पण होय छे.

शिलाओ करतां उपशिलाओ लंबाई पहोळाई अने जाडाईमां
कईक वधारे होवी जोइये. तेमना मध्यभागे निधिकलशो स्थापवा
माटे खाडा करवा जोइये. खाडा निधिकलशोना प्रमाणानुसार ऊंडा
अने लांबा-चोडा करवा. कदापि निधिकलशो उपशिला उपर न

थापीने शिलासंपुटो नीचे खाडाओमां स्थापवा होय तो उपशिलाओ उपर खाडा करवानी आवश्यकता रहेती नथी. शास्त्रमां निधिकलशो उपशिलाओ उपर खाडा करीने तेमां स्थापवानुं विधान छे अने उपशिलाओ शिलाना संपुटो नीचेना खाडाओमां स्थापवानुं पण विधान छे.

निधिकलशोनी संख्या अने परिमाण—

निधिकलशोनी संख्या पण उपशिलाओनी जेम शिलाओ जेटली ज छे. ४ शिलावादियोना मतमां निधिकलशो ४, पांचशिलावादियोना मतमां ५ अने नवशिलावादियोना मते निधिकलशो ९ होय छे. ८ शिलावादियोना पक्षमां कलशो केटला होय ए क्याइ लखुं नथी, छतां एमना मतमां कलशोनी संख्या ४ अथवा ८ नी होवी जोइये. जेओ वास्तुना आग्नेयादि ४ कोणोमां बे बे शिलाओ एक साथे स्थापवानुं विधान करे छे, तेमना मते निधिकलशो ४ अने जेओ पूर्वथी ईशानपर्यन्तनी दिशाविदिशाओमां ८ शिलाओनो न्यास करवानुं कहे छे, तेमना मतमां कलशो ८ ज होइ शके.

चारशिलापक्षमां १ पद्म, २ महापद्म, ३ शंख अने ४ सुभद्र आ नामना चार निधिकलशो मान्या छे.

पांचशिलापक्षमां कलशोना नामो—१ पद्म, २ महापद्म, ३ शंख, ४ मकर अने ५ सुभद्र ए प्रमाणे छे, पण विश्वकर्मप्रकाशना कथनानुसार आ कलशोना नामो १ पद्म, २ महापद्म, ३ शंख, ४ विजय अने ५ सर्वतोभद्र ए प्रमाणे छे.

आठशिलापक्षमां निधिकलशोनुं निरूपण जोवामां आवतुं नथी.

नवशिलावादियोना मतमां निधिकलशोनां पौराणिक नामो १ सुभद्र, २ विभद्र, ३ सुनन्द, ४ पुष्पनन्द, ५ जय, ६ विजय, ७ कुंभ, ८ पूर्ण अने ९ उत्तर ए प्रमाणे छे. ज्यारे शिल्पशास्त्रोक्त नामो

१ पद्म, २ महापद्म, ३ शंख, ४ मकर, ५ कुन्द, ६ नील, ७ कच्छप,
८ मुकुन्द अने ९ खर्व ए प्रमाणे छे.

ब्राह्मणादिवर्णपरक निधिकलशोनी ऊंचाई अनुक्रमे ५-२॥-
१॥-०॥—आंगळनी राखवी जोइए. आ कथन गृहविषयक छे.
वास्तु राजमहेल होय अथवा देवालय होय तो निधिकलशो एथीये
प्रमाणमां म्होटा होइ शके छे. पंचरात्रना मते आवा कलशो विस्तारमां
१२ आंगळथी २४ आंगळ सुधीना होइ शके छे.

कलश सोनानां, पत्थरनां अने तेना अभावे माटीना सारा
आकारवाला अने पाकेला लाल होवा जोइये.

कलशोमां घी, पंचरत्न अने अक्षत भरी तेओ उपर पोतानी
नाममुद्रा देइ स्थापतां पहेलां बंध करी देवां. कलश धातुना होय तो
धातुना, पत्थरना होय तो पत्थरना अने माटीना होय तो माटीना
ढांकणाथी ढांकीने बंध करवा.

निधिकलशोने अंगे शास्त्राधार—

अधःखाते सम्पुटेषु, निधिकुम्भांश्च योजयेत् ।

पद्मश्चाथ महापद्मः, शङ्खो मकर-कच्छपौ ॥ ५ ॥

मुकुन्द-कुन्द-नीलाश्च, खर्वश्च निधयो नव ।

सुभद्रश्च विभद्रश्च, सुनन्दः पुष्पदन्तकः ॥ ६ ॥

जयोऽथ विजयश्चैव, कुम्भः पूर्णस्तथोत्तरः ।

इत्येवं नव कुम्भाश्च, नियोज्यास्तत्र वै क्रमाद् ॥ ७ ॥

भा०टी०—शिलाओ स्थापवा मुटे करल खाडाओमां बीजा
खाडा करी संपुटेनी नीचे निधिकलशो स्थापवा. १ पद्म, २ महापद्म,
३ शंख, ४ मकर, ५ कच्छप, ६ मुकुन्द, ७ कुन्द, ८ नील अने ९
खर्व आ नव निधिओनां नामो छे अने निधिकलशोनां १ सुभद्र,
२ विभद्र, ३ सुनन्द, ४ पुष्पदन्त, ५ जय, ६ विजय, ७ कुम्भ, ८
पूर्ण अने ९ उत्तर ए नव कलशोनां नामो जाणवां. आ नामना ९
कलशो निधिस्थापनना उपयोगमां लेवा.

૭. વાસ્તુમર્મોપમર્માદિ-લક્ષણ

વાસ્તુભૂમિગતા મર્મો, -પમર્મ-સન્ધિ-રજ્જવઃ ।

તાસાં નિરૂપ્ય પાતાદિ, સ્તંભભિત્ત્યાદિકં ન્યસેત્ ॥૨૪॥

ખા૦ટી૦—વાસ્તુભૂમિમાં ઉત્પન્ન થતા મર્મો, ઉપમર્મો, સન્ધિઓ અને રજ્જુઓ જોડને જ્યાં જ્યાં મર્માદિ ન હોય ત્યાં ત્યાં સ્તંભ ભિત્તિ આદિનો ન્યાસ કરવો અર્થાત્ મર્માદિ સ્થાનોમાં સ્તંભ-ભિત્તિ આદિ ચળવાં નહિ.

નિર્વાણકલિકામાં કહ્યું છે કે—“મર્માણિ જ્ઞાત્વા x x મર્માણિ પરિહૃત્ય શિલા-પ્રતિષ્ઠાદિકં વિદ્ધ્યાન્ ।” અર્થાત્—“વાસ્તુનાં મર્મસ્થાનો જાણીને તે તે ટાઢીને શિલાન્યાસ આદિ કાર્યો કરવાં.”

આ વચનો વહે દેવાલયો અને મનુષ્યોના ‘ઘરો’ વનાવતાં પહેલાં તે ભૂમિમાં ૬૪ અને ૮૯ પદો પાડી તેના મર્મો જાણીને ટાઢવાનો ઉપ-દેશ કર્યો છે. પણ આજકાલ મર્મો ટાઢવાની પ્રવૃત્તિ સારામાં સારા કારીગરોમાં પણ જોવાતી નથી અને એનું કારણ માત્ર એ વિષયનું તેમનું અજ્ઞાન છે. આ સ્થિતિ સુધરે અને દેવાલયાદિક શુદ્ધ અને એ ભાવનાથી સ્ત્રોત એ વિષયનું વિવેચન કરવું યોગ્ય ધાર્યું છે.

શિરોશાસ્ત્રમાં એને અંગે પ્રત્યેક ગ્રન્થકારે થોડું ઘણું લખ્યું જ છે. એ વિષયમાં શાસ્ત્ર કહે છે—

શિરા વંશાનુવંશાશ્ચ, સન્ધયઃ જ્ઞાનુસન્ધયઃ ।

મર્માણ્યથ મહાવંશા, લક્ષ્યા વાસ્તુશરીરગાઃ ॥૨૫॥

ખા૦ટી૦—શિરાઓ, વંશો, અનુવંશો, સન્ધિઓ, અનુસન્ધિઓ મર્મો અને મહાવંશો વાસ્તુના શરીરમાં ક્યાં ક્યાં છે, તે જાણી લેવાં જોઈયે. આ શ્લોકમાં વનાવેલ ‘શિરા’ આદિનું સ્વરૂપ અને પરિમાણ આદિ આ પ્રમાણે છે.

शिराओ—

शिराः कर्णगता याः स्यु-स्ता नाड्यः परिकीर्तिताः ।

पदस्य षोडशो भाग-स्तत्प्रमाणं प्रकीर्तितम् ॥२॥

भा०टी०—कोणगत जे रेखाओ छे. ते 'शिरा' आ नामे ओळ्खाय छे. आ शिराओना व्यासनुं परिमाण 'पद' ना सोलमा भाग जेटलुं कहुं छे.

महावंशो—

महावंशौ प्राक्प्रतीच्यौ, याम्योदीच्यौ च मध्यमौ ।

प्रमाणं पञ्चमो भागः, पदस्योद्गाहृतं तयोः ॥३॥

भा०टी०—मध्यनी पूर्वे पश्चिम तथा दक्षिण उत्तर लांबी बे बे रेखाओनुं नाम 'महावंश' छे. आ महावंशोना व्यास वास्तुना एक पदना पांचमा भाग जेटलो होय छे.

वंशो अने अनुवंशो—

वंशास्तेऽस्मिन्समुद्दिष्टा, रेखा याः स्युर्मुखायताः ।

यास्तिर्यगायता रेखा-स्तेऽनुवंशाः प्रकीर्तिताः ॥४॥

भा०टी०—मुखनी दिशा तरफ लांबी रेखाओने अहीं 'वंश' कहे छे अने तिर्यक् लांबी रेखाओ 'अनुवंश' ए नामथी प्रसिद्ध छे. मर्म अने उपमर्म—

संपाता ये स्युरेतेषां, मर्म त-संप्रचक्षते ।

उपमर्माणि तान्याहुः, पदमध्यानि यानि च ॥५॥

भा०टी०—शिरा, महावंश, वंश अने अनुवंश ए पैकीना बेनो त्रणनो अथवा चारनो ज्यां संपात (संगम) थाय ते स्थानने 'मर्म' अने 'पद'ना जे मध्य भागो छे तेने 'उपमर्म' कहे छे.

वंश आदिनुं विस्तारमान—

भागोऽष्टमोऽथ दशमो, द्वादशः षोडशोऽपि च ।

પદતો માનમિષ્ટં સ્યા-ઢંશાદીનામનુક્રમાત્ ॥૬॥

ખાંટી૦—પદના આઠમા, દશમા, બારમા અને સોલમા ભાગ જેટલું વંશ, અનુવંશ, મર્મ અને ઉપમર્મનું અનુક્રમે વ્યાસમાન હોય છે. બૃહત્સંહિતોક્ત વંશ અને શિરાનું વ્યાસમાન—

પદહસ્તસંખ્યયા સંમિતાનિ વંશોઽઙ્ગુલાનિ વિસ્તીર્ણઃ ।
વંશવ્યાસોઽધ્યર્ધઃ, શિરાપ્રમાણં વિનિર્દિષ્ટમ્ ॥૭॥

ખાંટી૦—જેટલા હાથનું પદ હોય તેટલા આંગળનો વંશનો વિસ્તાર હોય અને વંશના વિસ્તારથી શિરાનો વિસ્તાર દોઢો બતાવ્યો છે. બૃહત્સંહિતાકાર મર્મના પરિમાણમાં પણ પ્રસ્તુત ગ્રંથથી મતભેદ ધરાવે છે. તે આ પ્રમાણે—

તત્સંપાતા નવ યે, તાન્યતિમર્માણિ સંપ્રદિષ્ટાનિ ।
યશ્ચ પદસ્યાષ્ટાંશસ્તપ્રોવતં મર્મપરિમાણમ્ ॥૮॥

ખાંટી૦—તે વંશ, અનુવંશ, શિરા-રજ્જુઓના નવ સંપાતો (સંગમસ્થાનો) ને ‘અતિમર્મ’ ઇટલે ‘મહામર્મ’ કહ્યા છે અને પદના અષ્ટમાંશ જેટલું તે ‘અતિમર્મ’ નું પરિમાણ કહ્યું છે.

ઉપર્યુક્ત વરાહમિહિસ્તું કથન ‘મહામર્મ’ વિષયક છે. જ્યારે પૂર્વોક્ત પદનો બારમો ભાગ ‘મર્મપરિમાણ’ સામાન્ય મર્મને અંગે છે, એમ સમજવાનું છે.

વાસ્તુવિદ્યામાં પણ ‘મર્મ’ અને ‘મહામર્મ’માં ભેદ છે. જેમ કે—
અષ્ટાભિઃ સંગતિર્યત્ર, નાડીરજ્જુવિમિશ્રિતૈઃ ।
સૂત્રૈસ્તત્ર મહામર્મ, બ્રહ્મસ્થાનસ્ય કોણતઃ ॥૯॥

ખાંટી૦—નાડીરજ્જુવિમિશ્રિત આઠ સૂત્રોનો જ્યાં સંગમ થાય ત્યાં ‘મહામર્મ’ ઉત્પન્ન થાય છે. આ મહામર્મસ્થાન બ્રહ્માના ચારે કોણોમાં હોય છે. આ કથન ૮? પદના વાસ્તુપદને અનુસરીને છે.

६४ पदना वास्तुमंडलमां आ महामर्मस्थानो मध्यमां अने चारे दिशा-
विदिशाओमां होय छे. जुओ ६४ पदवास्तुमंडलनो नकशो. (पृ. ४९)

ए सिवाय वास्तुपुरुषना मस्तक, मुख, हृदय, बे स्तनो अने
नाभि ए छ स्थानोने पण 'महामर्म' कहा छे. जुओ नीचेनो श्लोक—

मुखे हृदि च नाभौ च, मूर्ध्नि च स्तनयोस्तथा ।

मर्माणि वास्तुपुंसोऽस्य, षण् महाहन्ति प्रचक्षते ॥१०॥

भा०टी०—वास्तुपुरुषना मुख, हृदय, नाभि, मस्तक अने
बन्ने स्तनो आ ६ स्थानोमां 'महामर्म' कहे छे.

वास्तुविद्यामां वंश, अनुवंश, शिरा-रज्जुना सूत्रोना विस्तार
भिन्नभिन्न वास्तुपदोने अंगे भिन्नभिन्न प्रकारनो बताव्यो छे, जेतुं
विधान नीचे प्रमाणे छे—

पदस्य गृहकृत्यंशः, सूत्रं स्याद् वेदषष्टिके ।

एकाशीनिपदेऽर्कोशो, वस्वंशः शतके पदे ॥११॥

सूत्रवेधं तु सर्वेषां, स्तम्भमध्यादिषु त्यजेत् ।

मर्मादीनि निषिद्धानि, वास्तुकर्मण्यनेकधा ॥१२॥

भा०टी०—६४ पदना वास्तुमां पदना सोलसो भाग, ८१
पदना वास्तुमां पदना १२ बारसो अने १०० पदना वास्तुमां पदना
आठसो भाग सूत्रवेध होय छे ते वेध सर्ववास्तुओमां टाळवो. एटले
के सूत्रने थोडुं पूर्व अथवा उत्तरमां राखीने स्तंभ रोपवो, जेथी वेध
न थाय, ए सिवाय वास्तुकर्ममां मर्म आदि अनेक वस्तुओ वर्जित छे.

महामर्मो—उपर कहेवायुं छे के दिशाविदिशामां आठ सूत्रो
ज्यां मळे छे, त्यां महामर्म उपजे छे. निर्वाणकलिकाकारना मते आ
'महामर्म' ६४ पदना वास्तुमां १३ अने ८१ पदना वास्तुमां ८ होय
छे. ब्रह्माना पदमां ? ब्रह्मानी चार दिशाओमां ४ अने ब्रह्माना अभ्य-

નત્ર અને કોળોના ૪-૪ મલી ૮ તથા સર્વ મલી ૧૩ મહામર્મો નિર્વાણ-કલિકોક્ત ૬૪ પદના વાસ્તુમાં ઉપજે છે. બ્રહ્માના સ્થાનથી ઈશાનાદિ અભ્યન્તર અને બાહ્ય કોળોમાંના ૪-૪ થઈ ૮ મહામર્મો નિર્વાણ-કલિકાના મતે ૮૧ પદના વાસ્તુપદમાં ઉપજે છે.

મર્મો—પટ્ટસૂત્રો, પંચસૂત્રો અને ચારસૂત્રોના સમાગમ સ્થાન ‘મર્મ’ નામથી ઓઢ્ઢવાય છે.

નિર્વાણકલિકાના ૬૪ પદના વાસ્તુમાં પટ્ટસૂત્રસંપાતો ૧૨, પંચસૂત્રસંપાતો ૮ અને ચતુઃસૂત્રસંપાતો ૨૪ હોય છે. આ મર્મોને શાસ્ત્રમાં પટ્ટક, પંચક અને ચતુષ્કના નામોથી ઉલ્લેખ્યા છે. ત્રિસૂત્ર-સંધિયોને શિલ્પશાસ્ત્રો ત્રિક કહે છે અને આનો ઉપમર્મોમાં સમાવેશ કરે છે. નિર્વાણકલિકાના ૬૪ પદવાસ્તુમાં આવા ઉપમર્મો ૨૦ હોય છે.

ઉપમર્માન્તકો—વાસ્તુવિદ્યામાં બાહ્યકોણગત ૪ ત્રિકોને ઉપ-મર્માન્તક એ નામથી ઉલ્લેખ્યા છે. જે વાસ્તવમાં ઉપમર્મો જ છે. નિર્વાણકલિકાના ૬૪ પદના વાસ્તુમાં આ ઉપમર્માન્તકો ૪ ઉપજે છે.

નિર્વાણકલિકોક્ત ૮૧ પદના વાસ્તુમાં ‘પટ્ટકમર્મો’ ૨૪ છે. પંચકમર્મો આમાં નથી. ‘ચતુષ્કમર્મો’ ૩૨, ઉપમર્મ ત્રિકો ૧૬ અને ઉપમર્માન્તક ત્રિકો ૨૦ હોય છે. એ ઉપરાન્ત નિર્વાણ-કલિકાના ૮૧ પદના વાસ્તુમાં ૫ ‘ચતુષ્કમર્મો’ કેવલ રજ્જુ-જનિત છે. જે અશુભ ગણાતા નથી. એવું વાસ્તુવિદ્યામાં કથન છે.

દેવાસનો, દ્વારમધ્યો અને પદમધ્યો—

દરેક વાસ્તુપદના દેવાસનો તથા દ્વારમધ્યોને મર્મ અને પદ-મધ્યોને ઉપમર્મ ગણવામાં આવે છે. પણ પદમધ્યને ષોડશપદવાસ્તુમાં વિશેષ મહત્ત્વ અપાય છે. કારણકે તે વાસ્તુમાં પદમધ્યને ‘દેવાસન’ ગણ્યું છે. એ વિષયમાં નીચેના શ્લોકો પ્રકાશ પાડે છે.

वंशानुवंशसंपाताः, पदमध्यानि यानि च ।
देवस्थानानि तान्याद्ये, पदषोडशकाञ्चिते ॥१३॥

भा०टी०—वंशो, अनुवंशोना संपातो अने पदोना मध्यभागो षोडशपदवास्तुमां 'देवस्थानो' गणाय छे.

देवस्थानानि संपाता-श्रतुःषष्टिपदे पुनः ।
तथैकाशीतिपदके, पदान्तशक्तिकेऽपि च ॥१४॥
चतुर्ष्वपि विभागेषु, शिरा याः स्युश्चतुर्दिशम् ।
मर्माणि तानि प्रोक्तानि, द्वारमध्यानि यानि च ॥१५॥

भा०टी०—६४ पद ८१ पद अने १०० पदवास्तुमां वंशानु-
वंशोना संपातो 'देवस्थानो' गणाय छे. ज्यारे 'द्वारमध्ये' तथा
चारे दिशानी शिराओ 'षोडशपद' 'चतुःषष्टिपद' 'एकाशीति-
पद' अने 'शतपद' आ वास्तुपदोमां 'मर्म' कहेवाय छे.

सन्धिओ—“तिस्रो रेखाश्चतुर्दिक्षु, बाह्यस्थाः सन्धयः स्मृताः॥”

अर्थात्—“ चारे दिशाओमां बाह्यभागमां मळेली त्रण रेखाओ
'संधि' कहेवाय छे. वाचको ध्यानमां राखे के पूर्वे जे 'त्रिक' नामना
'उपमर्मो' बताव्या छे, तेज आ 'संधिओ' छे. वास्तुविद्याकारे
'एकाशीतिपदवास्तु'मां आ त्रिकोने 'उपमर्म' अने 'चतुःषष्टि-
पद'मां 'संधि' नाम आप्युं छे.

ग्रन्थान्तरमां सन्धि अने मर्म नीचे प्रमाणे वर्णवेल छे—

द्विरेखासंगमस्थानं, सन्धिरित्यभिधीयते ।
त्रिरेखासंगमस्थानं, मर्म मर्मविदो विदुः ॥१६॥

भा०टी०—बे रेखाओना मीलनस्थानने 'सन्धि' अने त्रण
रेखाओना मीलनस्थानने मर्मज्ञो 'मर्म' ए नामथी ओळखावे छे.

लांगलो—वास्तुविद्यामां लांगलनुं लक्षण नीचे प्रमाणे जणान्युं छे-

“अनुवंशद्वयस्याऽपि सन्धिर्लाङ्गलमुच्यते।”

भा०टी०—‘वे अनुवंशोनी संधि ‘लांगल’ कहेवाय छे. ग्रथान्तरमां संधि अनुसंधिनुं लक्षण नीचे प्रमाणे आप्युं छे—

वंशाष्टकस्य यः सन्धिः, स सन्धिरिति कीर्तिताः ।

ये पुनः स्युस्तदङ्गानां, प्रोक्तास्ते चानुसन्धयः ॥१७॥

वालाग्रतुल्यं सन्धीनां, प्रमाणं समुदीरितम् ।

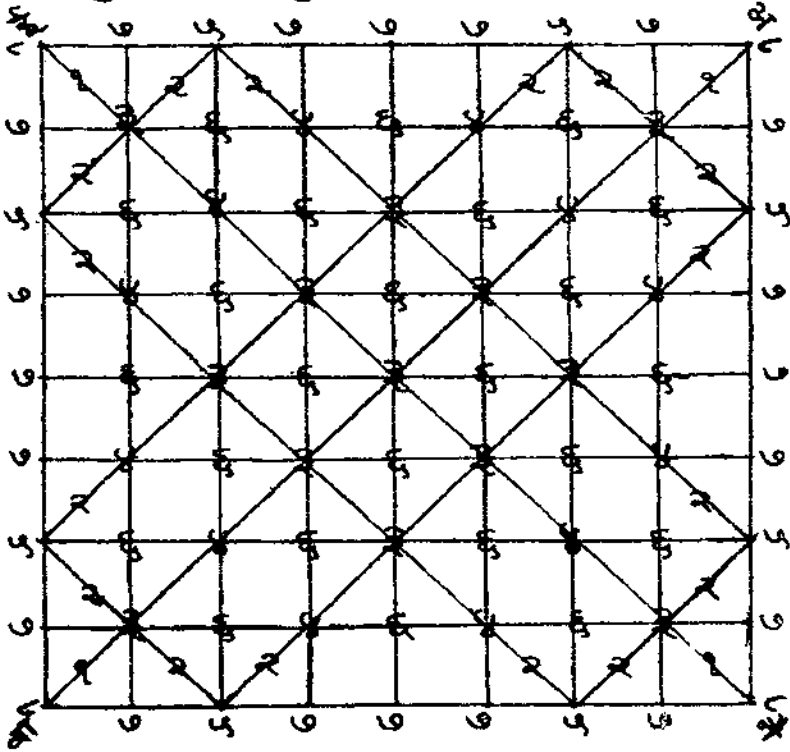
यत्नेनैतानि संत्यज्य, वास्तुविद्याविशारदः ।

द्रव्याणि प्रयतो नित्यं, स्थपतिर्विनिवेशयेत् ॥१८॥

भा०टी०—‘आठ वंशोना समागमनुं नाम संधि कहेवाय छे अने तेना अंगोनो ‘आठ पैकीना केटलाक वंशादिकनो’ समागम ने ‘अनुसंधि’ होय छे. आ संधियोनुं परिमाण ‘वालाग्र’ जेटलुं सूक्ष्म कह्युं छे, माटे वास्तुविद्यामां प्रवीण स्थपति नित्य प्रयत्नवान् थइ तं टालीने स्तंभादि द्रव्योनो न्याम करे.

आ स्थले कंटलीक वस्तु खुलासो मांगे छे. पूर्वे ‘त्रिको नि संधि नाम आपी ‘उपमर्म’मां गण्युं छे. ज्यारे अही समस्त सत्र-संयोगात्मक महामर्मने संधि कही एनुं परिमाण वालाग्रमात्र कह्युं एनुं कारण ए छे के आ ग्रंथकार ग्रन्थेक वंशरज्जुओना संपातने संधि अने अनुसंधि माने छे. भले ते महामर्म मर्म के उपमर्मरूप होय. महामर्मादिनां परिमाणो जे कहां छे, तेनुं ऊ मध्यगत वालाग्रभाग जेटलुं सूक्ष्म परिमाण महामर्मरूप अति भयंकर गणीने जुहुं यतावहुं छे. कमके महामर्मनो वेध गृहस्वामीने अनि वातक गण्यो छे.

श्रीनिर्वाणकलिकोक्तं
 चतुःषष्टिपदवास्तुमण्डले मर्मोपमर्मादिचक्रम्

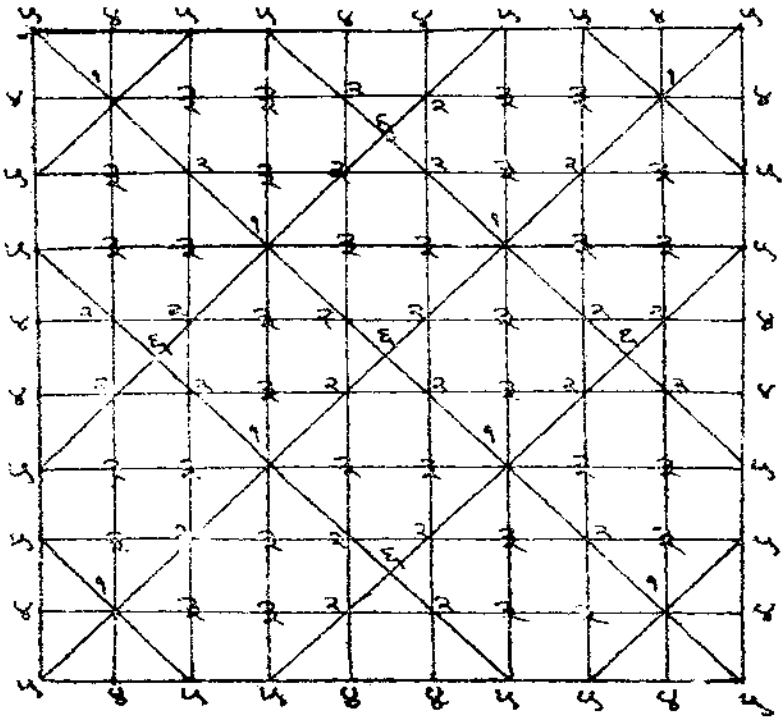


નિર્વાણકલિકોક્ત ૬૪ પદવાસ્તુમંડલમાં મર્મોપમર્માદિઅંકવિવરણ

અંક	નામ	સમજણ	સંખ્યા	વર્ગ્યાદિ
૧	કર્ણસૂત્રરજુ	કર્ણસૂત્ર	૪	વર્ગ્ય
૨	૧૬	..
૩	મહામર્મ	અષ્ટસૂત્રસંપાત	૧૨	..
૪	મર્મ	ષટ્સૂત્રસંપાત	૧૨	..
૫	મર્મ	પંચસૂત્રસંપાત	૮	..
૬	મર્મ	ચતુઃસૂત્રસંપાત	૨૪	..
૭	ઉપમર્મ	ત્રિસૂત્રસંપાત	૨૦	..
૮	ઉપમર્મ	..	૪	..

નિર્વાણકલિકામાં ૭-૮ આંકવાલા ત્રિસૂત્રસંપાતજનિત ઉપમર્મોને ઉપમર્મસંજ્ઞક ગણાવી તેમની સંખ્યા ૨૪ થતાવી છે. વાસ્તુવિદ્યામાં ૮ નંબરવાલા ઉપમર્મોને તે કોણગત હોવાથી ઉપમર્માન્તિક એવી સંજ્ઞા આપી ચુદા પાડ્યા છે. તેથી તેમાં ત્રિસૂત્રસંપાતજનિત ઉપમર્મો ૨૦ કહ્યા છે.

श्रीतिर्वाणकलिकोक्त ८१ पदवास्तुमंडलमर्मोपमर्मादि



નિર્વાળકલિકોક્ત ૮૧ પદવાસ્તુમંડલમાં મર્મોપમર્માદિકંકવિવરણ

અંક	નામ	સમજણ	સંખ્યા	વર્જ્યાદિ
૧	મહામર્મ	અષ્ટસૂત્રસંપાત	૮	વર્જ્ય
૨	મર્મ	ષટ્સૂત્રસંપાત	૨૪	”
૩	મર્મ	ચતુઃસૂત્રસંપાત	૩૨	”
૪	ઉપમર્મ	ત્રિસૂત્રસંપાત	૧૬	”
*૫	ઉપમર્મ	ત્રિસૂત્રસંપાત	૨૦	”
૬	ઉપમર્મ	રજ્જુજનિતચતુઃ- સૂત્રસંપાત	૫	નિર્દોષ

*આ ઉપમર્મોમાં વાસ્તુવિદ્યામાં કોળોમાં આવેલા ૪ ને ઉપમર્મ-
ન્ટક કહ્યા છે.

નોટ:—આમાં પંચસૂત્રજનિત મર્મ યનતા નથી.

વાસ્તુપુરુષનાં અંગપ્રત્યંગો—

જેમ વંશરજ્જુના મર્મો અને સૂત્રોનો વેધ વર્જિત છે તેજ પ્રમાણે
વાસ્તુભૂમિમાં વાસ્તુપુરુષના અંગપ્રત્યંગોનો વેધ પણ વર્જવો જોઈયે,
વાસ્તુપુરુષનો શયનપ્રકાર જાણવાથી જ તેનાં અંગપ્રત્યંગો જાણી
શકાય તેમ હોવાથી પ્રથમ તેને જણાવીયે.

વાસ્તુપુરુષના શયનપ્રકારો—

વાસ્તુપદો ૩૨ હોવા છતાં તેનાં મુખ્ય ભેદો બે છે. એક વિષમ-
પદ અને બીજો સમપદ. ૧-૯-૨૫-૪૯-૮૧-૧૨૧-૧૬૯-૨૨૫
૨૮૯-૩૬૧-૪૪૧-૫૨૯-૬૨૫-૭૨૯-૮૪૧-અને ૯૬૧ પદ-
ના આ ૧૬ વિષમપદવાસ્તુઓમાં ઈશાને મસ્તક અને નૈર્ઋત્યમાં
બન્ને પગ રાક્ષીને વાસ્તુપુરુષનું શયન થયેલું છે. વાયવ્યમાં અને
આશ્વેયકોળમાં અનુક્રમે એના વામદક્ષિણ હાથોની કોમ્પિઓ આવેલી

છે, एणे बन्ने हाथोनी हथेलिओ पोतानी छाती नीचे दबावेली छे. आम वास्तुपुरुष नीचे मुखे छातीना बळे सूतेलो छे. एना अंग अने प्रत्यंगो उपर नीचे प्रमाणे देवो रहेला छे—

वास्तुपुरुषनां मस्तके 'ईश' जमणा कान उपर 'जय' डावा कान उपर 'दिति' जमणा खांधा उपर 'जय' अने डावा खांधा उपर 'अदिति' नी स्थिति छे.

वास्तुपुरुषना गळामां 'आप' हृदयमां 'आपवत्स' जमणा स्तन उपर 'मरीचि' अने डावा स्तन उपर 'धराधर' रहेल छे. वास्तु-नाभिना मध्यभागे 'ब्रह्मा' जमणी कुक्षि उपर 'सावित्र' अने डावी कुक्षि उपर 'रुद्रदास' आरूढ थयेल छे. वास्तुना श्रोणि-भाग (कटिमध्यभाग) उपर इन्द्र अने इन्द्रजय रहेला छे. वास्तु-पुरुषना पगोना अंगूठाओ उपर 'पितर' जमणा पगना गुल्फ उपर 'मृग' अने डावा पगना गुल्फ उपर 'दौवारिक' बेठेल छे. वास्तु-पुरुषना जमणा हाथनी कोणिना अग्रभागे उपर 'व्योम' अने डावी कोणिना अग्रभागे 'नाग' बेठेल छे. वास्तुपुरुषना जमणा हींचण उपर 'पावक' अने डावा हींचण उपर 'रोग' रहेला छे. वास्तु-पुरुषनी जमणी भुजा उपर 'माहेन्द्र, सूर्य, सत्य अने भृश' ए चार अने डावी भुजा उपर 'मुख्य, भल्लाट, सोम अने शेष' ए चार देवोनो वास छे. जमणा बाहु उपर 'सविता' अने डावा बाहु उपर 'रुद्र' वसे छे. जमणी साथळ उपर 'विवस्वान्' अने डावी साथळ उपर 'मित्र' छे. 'पूषा, वितथ, गृहक्षत, यम, गंधर्व अने भृंग' ए ६ देवो जमणा पगनी पिंडी (जांघ) उपर अने 'सुग्रीव, पुष्पदन्त, वरुण, असुर, शेष अने रोग' ए ६ देवो डावा पगनी पिंडी उपर रहेला छे.

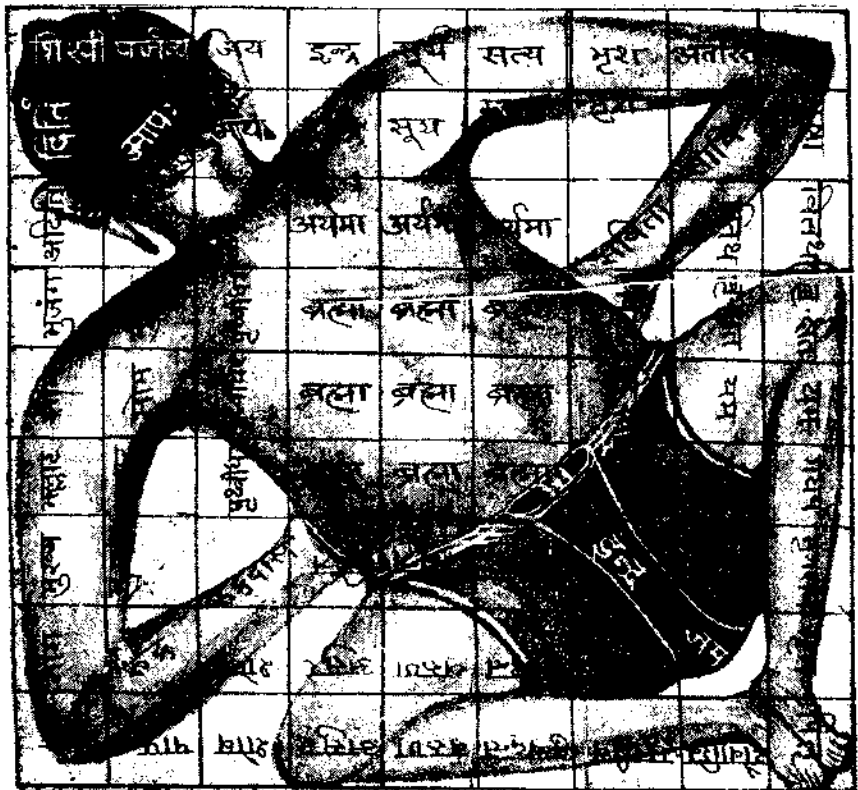
शिल्पसंहिताओमां विषमपदवास्तुपदोमां वास्तुपुरुषसुं शयन अने तेना अंगो उपरना देवोनां स्थानो उपर प्रमाणे बतावेल छे.

दाक्षिणात्यषट्कतिनो 'वास्तुविद्या' शिल्पग्रन्थ ए विषयमां

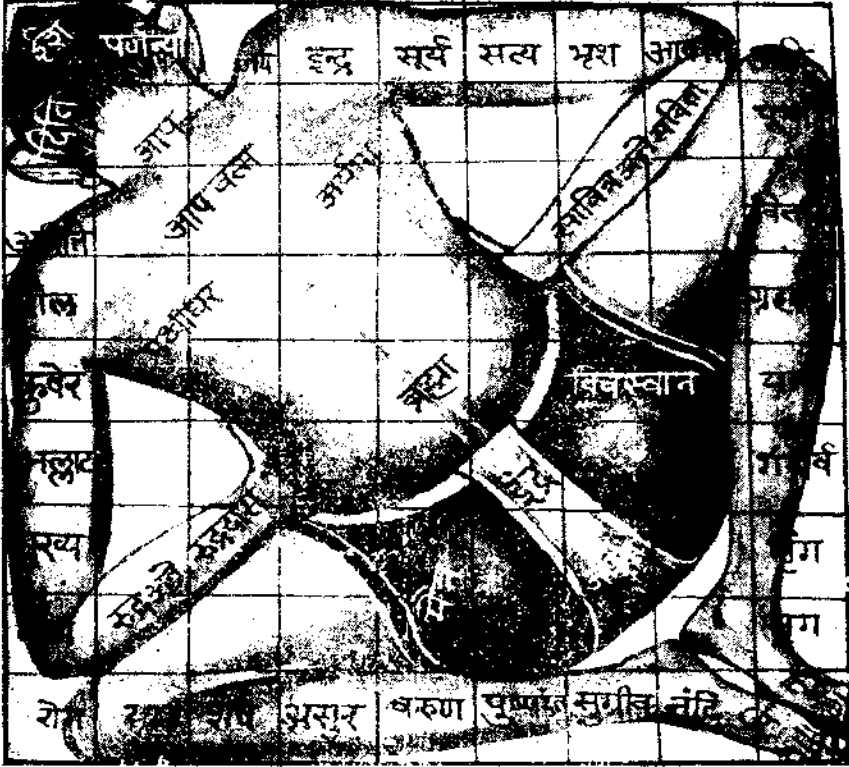
કેટલોક મતભેદ ધરાવે છે. લગભગ વધા શિલ્પશાસ્ત્રો વાસ્તુપુસ્તકને 'અધોમુખ' પડેલો માને છે. જ્યારે ઉક્ત ગ્રંથ તેને 'ઉત્તાન' પટલે કે ચત્તો પડેલો માને છે. આના પરિણામે આપણે એના જે જે પદોમાં જમણા અંગો માનીયે છીયે, તે તે પદોમાં આ ગ્રંથની માન્યતા પ્રમાણે ઢાઢા અંગો આવે છે અને ઢાઢાના સ્થાને જમણા અંગો આવે છે. એ સિવાય બીજા પણ મતભેદો ઉક્ત ગ્રંથમાં દૃષ્ટિગોચર થાય છે, પણ તેની ચર્ચાનું આ ઉપયુક્ત સ્થલ નથી.

વર્તમાનમાં પ્રાચીન અને આધારભૂત મનાતા વૃહત્સંહિતા તથા વાસ્તુરાજવલ્લભ આ ગ્રંથોમાં વાસ્તુશયનપ્રકાર નીચે પ્રમાણે બતાવેલો છે.

વૃહત્સંહિતાકારના મત મુજબ વાસ્તુશયનપ્રકાર.



राजवल्लभना मत मुञ्ज वास्तुशयनप्रकार.



आ बे चित्रोमां जोतां देवताओना नामोमां थोडोक भेद छे. तेमज अर्यमा, विवस्वान्, मैत्र अने पृथ्वीधरने राजवल्लभमां छ छ पद आपेलां छे. ज्यारे बृहत्संहितामां परिधिमां रहेला जयादि देवोने बे बे पद आपेलां छे, तेथी आकृतिमां थोडोक भेद पडे छे.

समपद वास्तुओनी संख्या पण १६ नी छे. ते नीचे प्रमाणे-

४-१६-३६-६४-१००-१४४-१९६-२५६-३२४-४००-

४८४-५५६-६७६-७८४-९००-अने १०२४ पदवाम्नु आ

जातिना समपदवास्तुपदोमां वास्तुपुरुषतुं शयन. पूर्वमां मन्तक अने पश्चिममां पगवाळं होय छे. एम दाक्षिणात्यपद्वतिना ग्रंथो इन्द्रियाह्वर

કરે છે. એના ફલિતાર્થરૂપે જ નીચે પ્રમાણેના ઉલ્લેખો દૃષ્ટિગોચર થાય છે. જેમકે—

एकाशीतिपदस्येश-दिग्विभागाश्रितं शिरः ।

माहेन्द्रीसंश्रितं त्रिधात्, चतुःषष्टिपदस्य तु ॥१०॥

भा०टी०—एकाशीतिपदवास्तुमां ईशानमां वास्तुपुरुषमुं मस्तક રહે છે. જ્યારે ચતુઃષષ્ટિપદાત્મકવાસ્તુમાં પૂર્વદિશામાં વાસ્તુપુરુષનું મસ્તક રહે છે. એમ જાણવું.

ઉત્તરભારતીયશૈલીના શિલ્પગ્રંથોમાં આ માન્યતાનું નિરૂપણ અમારી નજરે પહચું નથી. તેમ ઉપર જણાવેલ વાસ્તુપદોની સંખ્યા પણ હજી ઉત્તરપદ્ધતિના ગ્રંથોમાં અમને ઉપલબ્ધ થઈ નથી. અપરા-જિતપૃચ્છામાં માત્ર ૧૦ વાસ્તુપદોનાં નામોનો ઉલ્લેખ મળે છે. પાછળના ગ્રંથો પૈકી વાસ્તુમંડનઆદિમાં ૧ પદ થી ૧૦૦૦ પદ સુધીના વાસ્તુપદો હોવાનો નિર્દેશ છે, પણ વિશેષ નિરૂપણ નથી. એથી સમપદવાસ્તુમાં વાસ્તુપુરુષના મસ્તકના સ્થાન વિષે ઉત્તરભારતીયપદ્ધતિની શી માન્યતા છે, એનો સ્વુલાસો મળતો નથી. આવી સ્થિતિમાં આવિષ્યમાં અધિક લખવું અમામયિક ગણાશે.

નિર્વાણકલિકામાં આંદેશલ 'મર્મપરિજ્ઞાન' ને અંગે અમારે મહાવંશો, વંશો, અનુવંશો, સિગાઓ, રજ્જુઓ, નાડિઓ, મર્મો અને વાસ્તુપુરુષના અંગપ્રત્યંગોનો પરિચય આપવો પડ્યો છે. નિર્વાણ-કલિકામાં જે તિર્યક્રકોણરેખાઓને 'કર્ણવંશ' નામ આપ્યું છે, તેને વીજા ગ્રંથોમાં 'સિગા' કહીને ઓળખાવી છે. નિર્વાણકલિકાની રજ્જુઓને ગ્રંથાંતરોમાં 'અનુવંશ' એ નામ આપ્યું છે. કોષ્ટકો ઘાડવા માટે દોરાયેલી ક્રમી આડી રેખાઓને 'વંશ' અને તિર્યક્રરેખાઓને 'નાડિ' એ નામો ઉલ્લેખી છે. ક્રમી આડી રેખાઓ પૈકીની મધ્ય-ની ૩-૩ રેખાઓને ૬૪ પદવાસ્તુમાં અને ૨-૨ રેખાઓને ૮૧ પદમાં 'મહાવંશો' તરીકે ઓળખાવેલ છે.

वंश, रज्जु, सिरा अने मर्मआदिनी उपर स्तंभमध्य अने भित्ति-मध्य न आवतुं जोइये. जो ते प्रमाणे स्तंभमध्यादि आवे तो वेध थयो गणाय छे अने तेनुं फल अशुभ गणाय छे.

‘वास्तुविद्या’ मां आ वेधोनां फल निम्न प्रकारे जणाव्यां छे—
 मूर्ध्नि वक्त्रे च कण्ठे च, हृदये मरणं भवेत् ।
 विद्धे चोरसि हृद्रोगः, पादयोः कलहो भवेत् ॥२०॥
 ललाटे भ्रानृहानिः स्यात्, विस्रग्गोऽङ्गुलिपृष्ठयोः ।
 ऊर्वोर्मृत्युश्च बन्धूनां, पत्नीनाशश्च वा भवेत् ॥२१॥
 गुह्यस्थे सुतनाशः स्यात् ”—

भा०टी०—वास्तुपुरुषना मस्तक, मुख, कंठ अने हृदय आ पैकी कोइनो वेध थतां वास्तुस्वामीनुं मृत्यु थाय छे. उरस्थलना वेधथी हृदयनो रोग अने चरणोना वेधथी कलह-झगडो थाय छे. ललाटना वेधमां भाइनी हानि, अंगुलि तथा पृष्ठना वेधमां धनहानि थाय छे. ऊरुवेधमां बंधुओनुं मरण अथवा स्त्रीनुं मरण अने गुह्य-स्थानना वेधमां पुत्रनो नाश थाय छे.

..... अष्टके गर्भविच्युतिः ।

षट्के च वृद्धिः शङ्कां, चतुष्के स्वजनक्षयः ॥२२॥
 पञ्चके व्याधिरुद्दिष्ट-स्तस्करेभ्यस्त्रिके भयम् ।
 वर्जयेत् कुडयमध्ये च, नाडीरज्ज्वादिसंगमम् ॥२३॥

भा०टी०—‘अष्टकमहामर्म’ ना वेधमां गर्भपात ‘षट्कमर्म’ वेधमां शत्रुवृद्धि ‘चतुष्कमर्म’ वेधमां स्वजनक्षय ‘पंचकमर्म’ वेधमां रोगोत्पत्ति अने ‘त्रिकउपमर्म’ वेधमां चोरोनो भय उत्पन्न थाय छे. माटे भीतना मध्यभागे नाडीरज्ज्वादिनो संगम टालवो जोइये.

गवां नाशः सिरावेधे, वंशवेधे मृतिर्भवेत् ।

प्रवासः सन्धिवेधे स्यात्, अनुवंशे भयं भवेत् ॥२४॥

त्रिशूले गर्भनाशः स्यात्, लाङ्गले च शिरोरुजा ।
 चतुष्के वाहनोच्छित्तिः, षट्के तु बहुवैरिता ॥२५॥
 स्वामिनो मरणं विद्धे, महामर्मणि जायते ।
 उपमर्मणि विद्धे तु, भ्रातृपुत्रक्षयो भवेत् ॥२६॥
 कर्तुर्वंशस्य नाशश्च, मर्मवेधे ध्रुवं भवेत् ।
 शास्त्रान्तरनिषिद्धांश्च, दोषान् सर्वान् विवर्जयेत् ॥२७॥

भा०टी०—सिराना वेधथी गायोनो नाश, वंशवेधथी मृत्यु, संधिवेधथी प्रवास अने अनुवंशना वेधथी भय उपजे छे. त्रिशूल-वेधथी गर्भनाश, लांगलवेधथी मस्तकरोग, चतुष्कर्मवेधथी वाहन-विच्छेद, षट्कर्मवेधथी अतिशत्रुता, महामर्मना वेधथी स्वामीनुं मरण अने उपमर्मना वेधथी भाइपुत्रोनी हानि थाय छे अने मर्म-वेधथी करावतारना वंशनो विच्छेद थाय छे. ए सिवाय शास्त्रान्तरोक्त अनेक प्रकारना दोषो छे जे वास्तुनिर्माणमां वर्जवा जोइये.

८. वास्तुमण्डलविन्यास-लक्षण

वास्तुमण्डलविन्यास-लक्षणं लक्ष्मवेदिना ।

विज्ञाय मण्डलाऽऽलेखः, कार्यो मर्माभिव्यक्तये ॥२५॥

भा०टी०—लक्षण जाणनार विद्वाने वास्तुमण्डलविन्यासनुं लक्षण जाणीने वास्तुभूमिमां वास्तुमंडलनो आलेख करवो के जेथी वास्तुना मर्मस्थानो स्पष्ट रीते जाणी शक्याय.

वास्तुभूमि बनतां सुधी चोरस अथवा लंबचोरस लेवी, तेमां कोइ खूणो ओछो होय तो ते पूरो करवो, तेमज वचो होय तो काढी नांखवो अने भूमिने समचोरस या लंबचोरस बनावी लेवी जोइये के जेथी वास्तु निर्दोष बनी शके.

“ क्षेत्राकृतिर्वास्तुरिहार्चनीयः ”

शास्त्रना आ नियम प्रमाणे वास्तुभूमिनो जेवो आकार हशे तेवोज आकार वास्तुमण्डलनो थशे. वास्तुमण्डल आलेखतां अनुक्रमे ६४ पदमां ९ अने ८१ पदमां १० ऊभी आडी समानान्तर रेखाओ खेंचवी. तेमां पूर्वपश्चिमायत रेखाओ पश्चिमथी पूर्व तरफ अने दक्षिणोत्तरायत रेखाओ दक्षिणथी उत्तर तरफ लइ जवी. जो के वास्तुमण्डल बीजा पण अनेक छे, पण निर्वाणकलिकाकारे प्रासादवास्तु ६४ पदनो अने गृहवास्तु ८१ पदनो पूजवानुं विधान कर्युं छे. एटले अमो आ वे वास्तुमण्डलोनी ज विन्यासविधि अहींयां जणावीशुं.

(१) प्रासादवास्तुमण्डल—

प्रासादवास्तुनी भूमिमां पूर्वाग्र उत्तराग्र ९-९ रेखाओ खेंचीने तेना ६४ विभागो कोष्टकात्मक करवा.

तेना ईशानकोणथी नैऋत्य अने आग्नेयकोणथी वायव्य पर्यन्त वे तिरछी लीटियो खेंचवी. आ तिर्यक् रेखाओ ‘ऊर्ध्ववंश’ कहेवाय छे.

ए पछी ४ द्विपदगामी अने ४ पट्टपदगामी एम ८ रज्जुओनो तेमां विन्यास करवो. मर्मस्थानो जाणी बाह्य अभ्यन्तर कोष्टकोमां नीचे लख्या प्रमाणे देवताओनो विन्यास करवो.

ईशानकोणार्धमां ‘ईश’ लखीने पछीना ६ कोष्टको पैकीना प्रत्येकमां अनुक्रमे ‘पर्जन्य, जय, माहेन्द्र, रवि, सत्य, अने भृश’ ए ६ नामो आलेखवा.

अग्निकोणना वे कोष्टकार्धोमां क्रमशः ‘व्योम’ अने ‘पावक’ लखी ते पछीना ६ कोष्टकोमां अनुक्रमे ‘पूषा, वितथ, गृहक्षत, यम, गन्धर्व अने भृंग’ ए ६ देवो नो विन्यास करवो.

નૈઋત્યકોણમાં કોષ્ટકના બે ભાગોમાં અનુક્રમે 'મૃગ' તથા 'પિતર' લખી તે પછીના ૬ પદોમાં ક્રમશઃ 'દૌવારિક, સુગ્રીવ, પુષ્પદન્ત, વરુણ, અસુર અને શોષ' એ છ દેવોનાં નામો લખવાં

વાયવ્યકોણના કોષ્ટકના બે વિભાગોમાં 'રોગ' અને 'વાયુ' આ બે નામો લખી તે પછીના ૬ કોષ્ટકોમાં 'નાગ, મુખ્ય, મહ્લાટ, સોમ, શેષ અને અદિતિ' એ છ નામો આલેખી ઈશાનકોણના અર્ધ-કોષ્ટકમાં 'દિતિ' એ પ્રમાણે લખવું.

મધ્યના ૪ પદોમાં 'બ્રહ્મા' બ્રહ્માના ઈશાનકોણના બે કોષ્ટકોમાં 'આપ' અને 'આપવન્સ' બ્રહ્માથી પૂર્વના ૬ પદોમાં 'મરીચિ' બ્રહ્માના આग्નેયકોણના બે કોષ્ટકોમાં 'સવિતા' અને 'સાવિત્ર' બ્રહ્માથી દક્ષિણ તરફના ૬ પદોમાં 'વિવસ્વાત્' બ્રહ્માથી નૈઋત્ય-કોણના બે સ્થાનોમાં 'ઇન્દ્ર' અને 'ઇન્દ્રજય' બ્રહ્માથી પશ્ચિમના ૬ પદોમાં 'મિત્ર' અને બ્રહ્માથી વાયવ્યકોણના ૨ કોષ્ટકોમાં અનુક્રમે 'રુદ્ર' તથા 'રુદ્રદાસ' લખીને બ્રહ્માથી ઉત્તર તરફના ૬ પદોમાં 'વરાધર'નો વિન્યાસ કરવો.

મઠલની બહાર ઈશાનકોણમાં 'ચરકી' પૂર્વમાં સ્કન્દા, આગ્નેયકોણમાં 'વિદારી' દક્ષિણમાં 'અર્યમા' નૈઋત્યમાં 'લલના' પશ્ચિમમાં 'જમ્ભા' વાયવ્યકોણમાં 'પૂતનાપાપરાક્ષસી' ઉત્તરમાં 'પિલિપિચ્છા' એ નામની ૮ અનુચરી દેવિઓનાં નામો લખીને ૬૪ પદના વાસ્તુમઠલની રચના કરવી અને પૂજા કરવી.

૧ પ્રાસાદવાસ્તુસંબન્ધી પૃષ્ઠ ૬૧ ઉપરનો ચતુષ્ષ્ટિવાસ્તુમઠલનો નકશો જુઓ.

સ્કન્ધ

મરુત	ઈશ	પર્જન્ન	જય	માહેન્દ્ર	રક્તિ	સત્ય	ધૃતી	વ્યાઘ્ર
અદિતિ	અદિતિ	આંશ	મરીચિ	મરીચિ	મરીચિ	મરીચિ	સાચિલા	પુશ્ય
શેષ	શેષ	ધરાધર	આપવત્સ	મરીચિ	મરીચિ	સાચિલ	વિવસ્વાન્	વિવસ્વા
સોમ	સોમ	ધરાધર	ધરાધર	બ્રહ્મા	બ્રહ્મા	વિવસ્વા	વિવસ્વાન્	વિવસ્વા
મિત્ર	મિત્ર	ધરાધર	ધરાધર	મિત્ર	મિત્ર	વિવસ્વા	વિવસ્વાન્	વિવસ્વા
સુર્ય	સુર્ય	ધરાધર	ધરાધર	મિત્ર	મિત્ર	મિત્ર	વિવસ્વા	વિવસ્વા
નાગ	નાગ	ધરાધર	ધરાધર	મિત્ર	મિત્ર	મિત્ર	વિવસ્વા	વિવસ્વા
વાયુ	વાયુ	ધરાધર	ધરાધર	મિત્ર	મિત્ર	મિત્ર	વિવસ્વા	વિવસ્વા
જન્મા								

જન્મા

(૨) ગૃહવાસ્તુમંડલ—

ગૃહવાસ્તુમાં ૮૧ પદના વાસ્તુમંડલની રચના કરવી તેમાં મધ્ય-ભાગના ૯ પદોમાં 'બ્રહ્મા' પૂર્વ, દક્ષિણ, પશ્ચિમ અને ઉત્તર તરફના ૬-૬ પદોમાં અનુક્રમે 'મરીચિ, વિવસ્વાન્, મિત્ર અને ધરાધર' આ ૪ દેવોનો આલેખ કરવો. ઈશાનાદિ ૪ કોણગત ૧૬ કોણકોમાં આપ અને આપવત્સાદિ ૮ અભ્યન્તર દેવો બે બે પદમાં અને વાહ્ય-પ્રાકારગત ૩૨ દેવો વાહ્યપ્રાકારગત ૩૨ પદોમાં આલેખવા.

વંશ અને રજ્જુ આદિ ચતુઃષ્ટિપદમાં જણાવ્યા પ્રમાણે લખવા. મંડલવાહ્યસ્થ અનુચર દેવિઓ પણ પૂર્વની પેટેજ લખવી. આ ૮૧ પદમંડલમાં પૂર્વાગ્ર ઉત્તરાગ્ર ૧૦-૧૦ રેખાઓ લેંચીને ૮૧ વિભાગો પાડવા અને પદગત દેવોને પૂજવા.

૧ ચતુઃષ્ટિપદવાસ્તુમંડલ જુઓ. ૨ પૃષ્ઠ ૬૨ ડપરનો પુકારીતિપદવાસ્તુમંડલ જુઓ.

चतुःषष्टिपद के एकाशीतिपदनी रचना तो मने ग्रन्थकांगण एज प्रकारे ९ + ९ अने १० + १० ऊभी आडी रंखाओ म्बेचीने बनाववानुं कथन कर्युं छे, छतां वंशो, उपवंशो, रज्जुओ, शिखाओ. अने तज्जन्यवेधोने अंगे मतभेदो छे, पण ते सर्वनुं वर्णन करवानुं आ उपयुक्त स्थल नथी तेथी भिन्नभिन्न ग्रन्थोना अभिप्रायदर्शक बे चार अन्य नकशाओ आपीने ए परिच्छेदने समाप्त करीये छीये.

निर्वाणकलिकानुसारी ६४ पद तथा ८१ पदना नकशाओ पृष्ठ ६१-६२ उपर आप्या छे, एज बन्ने नकशाओ बृहत्संहितानुसारे पृष्ठ ६३ अने ६४ उपर आप्या प्रमाणे बने छे, अपराजितपृच्छा अने समरांगण-सूत्रधारमां एथीये भिन्नता छे, जे नकशाओ उपरथी स्पष्ट जणाशे.

॥ २ निर्वाणकलिकोक्त ८१पद वास्तुमण्डलम् ॥

	ई	ए	ज	मा	सू	म	वृ	व्या	पा
	दि	आ	आ	म	म	म	सा	सा	पू
	अ	आ- व	आ- व	म	प्र	म	रा	म	वि
अपलिपिच्छ	शे	ध	ध	व्र	व्र	व्र	वि	वि	गृक्ष
	सो	ध	ध	व्र	व्र	व्र	वि	वि	य
	भ	ध	ध	व्र	व्र	व्र	वि	वि	गं
	सु	रु	रु	मि	मि	मि	इ	इ	हुं
	ना	रुदा	रुदा	मि	मि	मि	इज	इज	सु
	त्रा	रो	शो	जमुए	व	पुद	सु	दो	रि
				जम्भा					

३ बृहत्संहितोक्त ६४ पदवास्तु
पूर्वा

शि दि	प	ज	इ	सू	स	भु	अं वा
अदि	अदि	ज	इ	सू	स	भु	पू
मु	मु	आव आमः	अ	अ	सविता सावित्र	वि	वि
सो	सो	पृ-ध	ब्र	ब्र	विव	बृ-क्ष	बृ-क्ष
भ	भ	पृ-ध	ब्र	ब्र	विव	य	य
मु	मु	रु-य रु-य	मि	मि	शु-य शु-य	गं	गं
अहि	अदि शो	असुर	व	पु-द	सु	दौ	भुं
य पा	शो	असुर	व	पु-द	सु	दौ	भुं वि

पश्चिमा

॥ ४ बृहत्संहितोक्त ८१ पदवास्तु ॥
बृहती

वि	प	ज	इ	सू	स	भृ	अं	वा
द्वि	आ	ज	इ	सू	स	भृ	सा	पूषा
अदि	अदि	आव	अ	अ	अ	स	वि	वि
मुज	मुज	पृ-ध	ब्र	ब्र	ब्र	विव	बृ-क्ष	बृ-क्ष
सो	सो	पृ-ध	ब्र	ब्र	ब्र	विव	य	य
भ	भ	पृ-ध	ब्र	ब्र	ब्र	विव	गंध	गंध
मु	मु	रा-य	मि	मि	मि	इ	भृं	भृं
अहि	रुद्र	शो	असु	व	पु-र	सु	ज	मृ
रो	पा-य	शो	असुर	व	पु-र	सु	दो	पितृ

उत्तरा

पश्चिमा

૮૧ પદવાસ્તુમંડલં (શિલ્પશાસ્ત્રોક્તમ્)

નાવં	નાવં	નાવં	નાવં	નાવં	નાવં	નાવં	નાવં	નાવં	નાવં	નાવં	નાવં	નાવં
નાવં	હ	પ	અ	મ	મૂ	સ	હ	એ	પ	નાવં	નાવં	નાવં
નાવં	દિ	આપ	આપ	મ	મ	મ	સાચિત્	સાચિત્	પ	નાવં	નાવં	નાવં
નાવં	અ	આચ	આચ	મ	મ	મ	સાચિત્	સાચિત્	પ	નાવં	નાવં	નાવં
નાવં	શે	ધ	ધ	જ	જ	જ	વિ	વિ	પ	નાવં	નાવં	નાવં
મવં	સો	ધ	ધ	જ	જ	જ	વિ	વિ	પ	મવં	મવં	મવં
મવં	મ	ધ	ધ	જ	જ	જ	વિ	વિ	પ	મવં	મવં	મવં
નાવં	મુ	મુ	મુ	મુ	મુ	મુ	મુ	મુ	મુ	નાવં	નાવં	નાવં
નાવં	ના	ના	ના	ના	ના	ના	ના	ના	ના	નાવં	નાવં	નાવં
નાવં	ના	ના	ના	ના	ના	ના	ના	ના	ના	નાવં	નાવં	નાવં
નાવં	ના	ના	ના	ના	ના	ના	ના	ના	ના	નાવં	નાવં	નાવં

શિલ્પશાસ્ત્રોક્ત-૮૧ પદવાસ્તુમંડલની સમજુતી—

ઉપરના ચિત્રમાં લઘ્વેલા અક્ષરોની વ્યાख्या નીચે પ્રમાણે છે.

સિ = સિરા - વાસ્તુક્ષેત્રમાં સિરા ૨ હોય છે.

નાવં = નાડીવંશ ,, નાડીવંશ ૧૬ ,,

મવં = મહાવંશ ,, મહાવંશ ૪ ,,

અવં = અનુવંશ ,, અનુવંશ ૮ ,,

આ સિરા, નાડીવંશ, મહાવંશ અને અનુવંશના સંપાતીયી મર્મ મહામર્મ અને ઉપમર્મ આદિ બને છે. વચમાં ઈ-પ-જ આદિ અક્ષરો

ईश, पर्जन्य अने जय आदि देवताओना नामोना प्रथमाक्षरो छे. देवताओना संपूर्ण नाम माटे पृ. ६१ उपर आपेल निर्वाणकलिकोक्त ६४ पदवास्तुना नकशामां जोवुं.

९. प्रासाद-लक्षण

प्रासादलक्षणं साङ्गो-पाङ्गं, ज्ञात्वा सविस्तरम् ।

प्रासादं कारयेत् शिल्प-वेदिना मार्गवेदिना ॥२६॥

हस्त-लक्ष्मस्वस्तिकादि-वास्तुपदविवेचनम् ।

आयाद्यङ्गविचारं च, विधाय प्रथमं ततः ॥२७॥

प्रासादाङ्गकलापस्य, निरूपणपुरस्सरम् ।

प्रासादा मण्डपोपेता, निरूप्यन्ते सुलक्षणाः ॥२८॥

भा०टी०—विस्तारपूर्वक प्रासादनुं सांगोपांग लक्षण समजीने शिल्पशास्त्र तथा तेना मार्गना जाणकार शिल्पिना हाथे प्रासाद कराववो.

हस्तलक्षण, स्वस्तिकादिवास्तुपदोनुं विवरण अने आयव्य-यादिअंगोनुं विचार प्रथम कर्या पछी प्रासादना जगतीआदि अंग-समुदायना निरूपणपूर्वक उत्तमलक्षणोवाळा प्रासादो अने मण्डपोनुं आ परिच्छेदमां निरूपण कराव छे.

प्रासंगिक

शिल्पशास्त्रमां 'प्रासाद' शब्द राजाना महेलो अने देवोना मन्दिरोना अर्थमां प्रयुक्त थयो छे, छतां ए शब्द 'देवालय'ना अर्थमां विशेष प्रचलित छे. 'राजमहेल' ना अर्थमां एनो प्रयोग प्रायः 'राजप्रासाद' 'नृपतिप्रासाद' इत्यादि राजार्थकशब्दनी साथे ज थाय छे, एथी अमोए आ स्थले देवालयना अर्थमां 'प्रासाद' शब्दनो उपयोग कर्यो छे.

जो के जैनसूत्रोमां 'प्रासाद' करतां 'चैत्य' शब्दो ज विशेष प्रयोग थयेलो जोवाय छे. कोशकारोए पण "चैत्यं जिनौ-कस्तद्बिम्बं, चैत्यो जिनसंभातरुः" इत्यादि वचनोद्वारा जिनगृह, जिनप्रतिमा अने जिननी धर्मसभाना वृक्षना अर्थनो वाचक चैत्य शब्द बताव्यो छे, एटलुंज नहि पण शिल्पना ग्रन्थोमांये—

देवधिष्ण्यं सुरस्थानं, चैत्यमर्चागृहं च तत् ।

देवतायतनं प्राहु-विशुभागारमित्यपि ॥१॥

इत्यादि देवालयना नामो गणावतां 'चैत्य' शब्दनी तेमां परिगणना करी छे, छतां अमोए 'चैत्य' शब्दो प्रयोग न करतां 'प्रासाद' शब्दनी पसंदगी करी छे तेनुं मुख्य कारण एज छे के अमो जे ग्रन्थोना प्रमाणोधी आ विषयनुं निरूपण करवा मांगीये छीये ते ग्रन्थोमां सर्वत्र 'प्रासाद' शब्दो ज उल्लेख थयो छे.

प्रासादोत्पत्तिनो इतिहास-

प्रासादोनी उत्पत्तिनो इतिहास घणो जूनो छे. जैन आगमो पैकीना व्याख्याप्रज्ञप्ति (भगवती) उपासकदशा, आचारांग-निर्युक्ति अने आवश्यक-निर्युक्ति आदि अनेक मौलिक आगमोमां अशाश्वत (कृत्रिम) जिन-चैत्योना उल्लेखो मले छे, एटलुंज नहि पण मथुरानो देवनिर्मितस्तूप, तक्षशिलानो धर्मचक्रांकितस्तूप तथा अन्य जैन-पूजास्थानो अने विदिशा-भिलसानो स्थावर्तगिरिनो स्तूप इत्यादि स्तूपोनुं अस्तित्व अने त्यां मलता हजारो वर्षपूर्वे ब्राह्मी लिपिमां लखायेला अनेक शिलालेखो जैनसूत्रोक्त चैत्यविषयक उल्लेखोनी ऐतिहासिकता सिद्ध करे छे.

शिल्पशास्त्रना मौलिक ग्रन्थोमां ते प्रासादोनी उत्पत्तिनो पौराणिक इतिहास पण लखी दीधो छे. आ इतिहास भले आपणे खरो इतिहास न मानीये पण एथी एटलुं तो सिद्ध थाय छे के भारतवर्षनुं

આ પ્રાસાદશિલ્પ ઘણું પ્રાચીન છે. પ્રાસાદોના નાગર, દ્રાવિડ અને બેસ્ટર હ્ર શ્રણ કુલો, નાગર-લતિનાદિ ૧૪ જાતિયો, ૯ જાતિયોમાંથી પ્રારંભમાં ૫-૫ અને ૨૫-૨૫ ઉત્પન્ન થયેલ પ્રાસાદો અને અન્તે ઘણી સ્તરી જાતિયોના મૂલ પ્રાસાદોના વિકાસરૂપે તલભેદથી ઉત્પન્ન થયેલ ચારલાસ્વથી પણ અધિક પ્રાસાદોની સંખ્યા રેલાભેદે ઉત્પન્ન થતી થયીએ અધિક પ્રાસાદ સંખ્યા વતાવે છે કે 'પ્રાસાદશિલ્પ' ૯ કાંઈ વસો પાંચસો વર્ષોની વસ્તુ નથી પણ હજારો વર્ષોથી ચાલી આવતી ૯ લૌકિક વિદ્યા છે. રોમનશિલ્પ કરતાંયે પ્રાચીન ભારતવર્ષનું આ શિલ્પ ભારતના પ્રાચીન તીર્થો તથા નગરોના સ્વંહેરોમાં દૃષ્ટિગોચર થાય છે અને હજારો શ્લોકોમાં આનું નિરૂપણ કરતા સંખ્યાવન્ધ પ્રાચીન ગ્રન્થો ઉપલબ્ધ થાય છે. મવમતં, કાશ્યપશિલ્પમ્, શિલ્પ-રત્નમ્, અપરાજિતપૃષ્ઠા, પ્રાસાદમણ્ડનમ્ આદિ અનેક મહત્વપૂર્ણ ગ્રન્થો છપાઈ પણ ગયા છે.

વિષય ઘણો મહન અને વિશાલ છે એટલે એને સાંગોપાંગ સમ-જાણવા માટે એક 'પ્રકરણ' અથવા 'નિવન્ધ' કોઈ રીતે વર્ણવે નથી પણ એક સારો જોવો ગ્રન્થ જ આ વિષયને સમજાવી શકે. અહીં પ્રસ્તુત 'પ્રાસાદલક્ષણ'માં માત્ર તેજ વાતોની ચર્ચા કરશું કે જે વાતો કારીગરો ઉપરાંત વિધિકારો અને પ્રતિષ્ઠાકારોને પણ જાણવાની આવશ્યકતા હોય છે. જગતી ૧ ચિત્રા ૨ પીઠ ૩ મંડોવરો ૪ પ્રાસાદોદય ૫ શિસ્વર ૬ દ્વાર ૭ દૃષ્ટિસ્થાન ૮ સ્તંભ ૯ ગર્ભગૃહ ૧૦ આસન ૧૧ શુકનાથ ૧૨ આમલસારો ૧૩ કલશ ૧૪ અને મંડપ ૧૫ આદિ પ્રસિદ્ધ અને ઉપયોગી પ્રાસાદાંગોનો પરિચય કરાવી તેના અંગે થતી ભૂલોનું દિગ્દર્શન કરાવશું કે જેથી નિરીક્ષકો ભૂલોના સંબન્ધમાં ઉત્તરદાયિત્વપૂર્ણ પોતાનો અભિપ્રાય આપી શકે. આજે પ્રાસાદોમાં ભૂલો કાઢનારા અધિકાંશ અજાણ હોય છે અને વાસ્તવિક ભૂલો ન હોવા છતાં ૯ વિષયમાં કંઈ ને કંઈ હાંકી મારીને લોકોને

खोटी भ्रमणामां नांखे छे. आ स्थिति सुधारवाना उदेश्ठी ज अमोए
' प्रासादलक्षण 'ना संबन्धमां कांइक लखवुं आनश्यक मान्थुं छे.

(१) हस्तलक्षण—

इदानीं तस्य हस्तस्य, सम्पद्निश्चयसंयुतम् ।
कथ्यते त्रिविधस्यापि, लक्षणं शास्त्रदर्शितम् ॥१॥
रेणवष्टकेन वालाग्रं, लिक्षा स्यादष्टभिस्तु तैः ।
भवेद् यूकाष्टभिस्ताभि-र्यवमध्यं तदष्टकात् ॥२॥
अष्टभिः सप्तभिः षड्भिः,—रङ्गुलानि यवोदरैः ।
ज्येष्ठ-मध्य-कनिष्ठानि, तच्चतुर्विंशतिः करः ॥३॥

भा०टी०—हवे त्रणे प्रकारना हस्तनुं यथार्थं निश्चय सहित
शास्त्रोमां बतावेल लक्षण कहेवाय छे.

८ रेणुनुं १ वालाग्र, ८ वालाग्रनी १ लिक्षा (लीख) ८ लीखनी
१ यूका (जू) ८ जूनुं १ यवमध्य, ८ यवमध्य ७ यवमध्य अने ६
यवमध्यनो अनुक्रमे ज्येष्ठ, मध्य अने कनिष्ठ १ आंगळ अने ते २४-२४
आंगळोनो अनुक्रमे ज्येष्ठ, मध्य अने कनिष्ठ १ हाथ थाय छे.

यच्च येन भवेद् द्रव्यं, मेयं तदपि कीर्त्यते ।
यवाष्टकाङ्गुलैः क्लृप्तः, प्रकर्षेणायतः किल ॥४॥
ज्येष्ठो हस्तः स विद्वद्भिः, प्रोक्तः प्राशयसंज्ञितः ।
यः पुनः कल्पितः सप्त,—यवक्लृप्तैरिहाङ्गुलैः ॥५॥
तज्ज्ञैः स मध्यमो हस्तः, साधारण इति स्मृतः ।
मात्रेत्यल्पं यतः प्रोक्तं, हस्तश्च शय उच्यते ॥६॥
तेन मात्राशयः स स्यात्, हस्तो यः षड्यवाङ्गुलः ।

भा०टी०—जे हाथ वडे जे द्रव्य मपाय छे ते पण कहेवाय छे,
८ यवोऽडे कल्पेला आंगळोनो सहुथी लांबो जे ज्येष्ठ हस्त छे,

તેને વિદ્વાનોએ 'પ્રાશય' એવું નામ આપેલું છે. વલી ૭ યવો વડે કલ્પેલા આંગળોના મધ્યમ હસ્તની શિલ્પશાસ્ત્રજ્ઞોએ 'સાધારણ' એવી સંજ્ઞા પાડી છે 'માત્રા' શબ્દનો અર્થ 'થોડું' અને 'શય' શબ્દનો અર્થ હસ્ત થાય છે આથી ૬ યવના અંગુલોનો કનિષ્ઠ હસ્ત જે સાધારણ પળ કહેવાય છે તેનું નામ 'માત્રાશય' પાડ્યું છે.

વિભાગાધામવિસ્તારાઃ, खेट-ग्राम-पुरादिषु ॥७॥

प्रासाद-वेश्म-परिखा, -द्वार-रथ्या-सभादिषु ।

मार्गाश्च निर्गमाश्चैषां, सीम-क्षेत्रान्तराणि च ॥८॥

वनोपवन-भागाश्च, देशान्तरविभक्तयः ।

योजन-क्रोश-गव्यूति, -प्रमाणमपि चाध्वनः ।

प्राशयेन प्रमातव्याः, खातक्रकचराशयः ॥९॥

भा०ટી૦—ગ્રામ, નગર, સેડા આદિના વિભાગોની લંબાઈ પહોલાઈ, પ્રાસાદ, ઘર, સ્વાઈ, (પરિસા) દ્વાર, શેરી, સભામવનો, માર્ગો અને નિર્ગમસ્થાનો આ વધાની સીમાનાં ક્ષેત્રાન્તરો, વનો અને ઉપવનોના ભાગો, દેશાન્તરના વિભાગો, યોજનો, કોશો, ગાડઓ અને માર્ગોનું પ્રમાણ, સ્વાત (સ્વાડા) ક્રકચ (કરવત) અને રાશિઓ આ વધા 'પ્રાશયહસ્ત' વડે માપવા.

तलोच्छ्रयान् मूलपादान्, जलोद्देशानधः क्षितेः ।

तथा दोलाम्बुशस्त्रादि-पातमानविनिर्णयम् ॥१०॥

शैल-खात-निकेतानि, सुरङ्गमानमान्तरम् ।

साधारणेन वाटधध्व-मानं च परिकल्पयेत् ॥११॥

भा०ટી૦—તલની ઝંચાઈઓ, મૂલપાયા, ભૂમિનીચેનાં જલ-સ્થાનો હિંડોલા (હિંચકા) જલ, શસ્ત્રપાતના પ્રમાણનો નિર્ણય, પર્વત તોડીને બનાવેલ ગુફાગૃહો, સુરંગની અંદરનું માપ, વાડીનું અને માર્ગનું માપ એ વધાનું માપ સાધારણ (મધ્યમ) હસ્તવડે કરવું.

आयुधानि धनुर्दण्डान्, यानं शयन-मासनम् ।
 प्रमाणं कूपवापीनां, गजानां वाजिनां नृणाम् ॥१२॥
 अरघद्वेक्षुयन्त्राणि, युगयूपहलानि च ।
 शिल्प्युपस्करनौछत्र, ध्वजानोद्यानि यानि च ॥१३॥
 वृसी धर्मोपकरण-पटवानादिकं च यत् ।
 नल्वदण्डांस्तथा मात्रा-शयहस्तेन मापयेत् ॥१४॥

भा०टी०—आयुधो, धनुष्य, दण्ड, यान, शयन, (शय्या)
 आसन अर्थात् वेसवानुं उपकरण, कूवा तथा वावडी आदिनुं प्रमाण,
 हाथी, घोडा अने मनुष्यना शरीरनुं प्रमाण, अरहतनां उपकरणो,
 कोलहू (शेलडी पीलवानी घाणी) धुंसरी, यूप (यज्ञस्तंभ) हल,
 शिल्पिनां उपकरणो, नाव, छत्र, अजा, वादित्रो, खुरसी-बांकडाओ,
 धार्मिकक्रियाना उपकरणो, वस्त्रनां ताकाओ आदि अने नल्व
 तथा दण्ड आ प्रधाने ' मात्राशय ' ना क हाथवडे मापवां.

भेदत्रयान्वितमपि, प्रोक्तं हस्तस्य लक्षणम् ।
 संज्ञाभेदोऽथ सामान्य-मानानां प्रतिपाद्यते ॥१५॥

भा०टी०—३ भेदवाला हस्तनुं लक्षण कछुं. हवे सामान्य
 मानोनो संज्ञाभेद-परिभाषाओनो भेद कहेवाय छे.

स्यादेकमङ्गुलं मात्रा, कला प्रोक्ताङ्गुलद्वयम् ।
 पर्व त्रीण्यङ्गुलान्याहु-सृष्टिः स्याच्चतुरङ्गुला ॥१६॥
 तलं स्यात् पञ्चभिः षड्भिः, करे पादेऽङ्गुलैर्भवेत् ।
 सप्तभिर्द्विष्टिरष्टाभिरङ्गुलैस्तुणिरिष्यते ॥१७॥
 प्रादेशो नवभिस्तैः स्यात्, शघतालो दशाङ्गुलः ।
 गोकर्णं एकादशभिः, विंशतिर्द्वादशाङ्गुला ॥१८॥
 चतुर्दशभिरुद्दिष्टः, पादो नाम तथाङ्गुलैः ।
 रत्निः स्यादेकविंशत्या, स्यादरत्निः करोन्मितः ॥१९॥

द्वाचत्वारिंशता किष्कु-रङ्गुलैः परिकीर्तितः ।
 चतुरुत्तरयाऽशीत्या, व्यामः स्यात्पुरुषस्तथा ॥२०॥
 षण्णवत्यङ्गुलैश्चापं, भवेन्नाडी युगं तथा ।
 शतं षडुत्तरं दण्डो, नल्वस्त्रिशद्वनुर्मितः ॥२१॥
 क्रोशो धनुःसहस्रं तु, गव्यूतं तद्द्वयं विदुः ।
 चतुर्गव्यूतमिच्छन्ति, योजनं मानवेदिनः ॥२२॥

भा०टी०—१ आंगळनी १ मात्रा, २ आंगळनी १ कला, ३ आंगळनुं १ पर्व, ४ आंगळनी १ मुष्टि, ५ आंगळनुं १ करतल, ६ आंगळनुं १ पादतल, ७ आंगळनी १ दृष्टि, ८ आंगळनी १ तूणि, ९ आंगळनो १ प्रादेश, १० आंगळनो १ शपताल, ११ आंगळनो १ गोकर्ण, १२ आंगळनी १ वर्हेत (वितस्ति) १४ आंगळनो १ पाद, २१ आंगळनी १ रत्नि, २४ आंगळनी १ अरत्नि, ४२ आंगळनो १ किष्कु, ८४ आंगळनो १ वाम अथवा पुरुष, ९६ आंगळनो १ धनुष्य, नाडी अथवा युग (धुंसरुं) १०६ आंगळनो १ दाड, ३० धनुष्यनो १ नल्व, १००० धनुष्यनो १ क्रोश, २ क्रोशनो १ गाउ अने ४ गाउनो १ योजन थाय एम मानना ज्ञाताओ माने छे.

मानपरिभाषा—कोष्टकम्

८ छाया (अणुछाया)=१ अणु,	६ यव=१ कनिष्ठांगुल,
८ अणु=१ रेणु,	१ अंगुल=१ मात्रा,
८ रेणु=१ केशाग्र,	२ अंगुल=१ कला,
८ केशाग्र=१ लिखा,	३ अंगुल=१ पर्व.
८ लिखा=१ यूका,	४ अंगुल=१ मुष्टि,
८ यूका=१ यव,	५ अंगुल=करतल,
८ यव=१ उत्तमांगुल,	६ अंगुल=१ पादतल
७ यव=१ मध्यमांगुल,	७ अंगुल=१ दृष्टि,

८ अंगुल=१ तूण,	४२ अंगुल=१ किष्कु,
९ अंगुल=१ प्रादेश,	८४ अंगुल=१ पुरुष,
१० अंगुल=१ शयताल,	९६ अंगुल=१ धनुष्य,
११ अंगुल=१ गोकर्ण,	१०६ अंगुल=१ दंड,
१२ अंगुल=१ वितस्ति,	१००० धनुष्य=१ कोश,
१४ अंगुल=१ अनाहपद,	२ कोश=१ गव्यूति,
२१ अंगुल=१ रत्नि,	२ गव्यूति=१ योजन ।
२४ अंगुल=१ अरत्नि,	

(२) वास्तुक्षेत्रविचार

स्वस्तिकं पुष्पकं नन्दं, षोडशाख्यं चतुर्थकम् ।
 पञ्चमं कुलतिलकं, सुभद्रं षष्ठमेव च ॥२३॥
 सप्तमं मरीचिगणं, भद्रकं स्यात्तथाष्टकम् ।
 नवमं कामदं प्रोक्तं, दशमं भद्रमुच्यते ॥२४॥
 सर्वतोभद्रनामाख्य,—मन ऊर्ध्वं न विद्यते ।
 वास्तून्येकादशैव स्युः, प्रोक्तानि परमेश्वरैः ॥२५॥

भा०टी०—परमेश्वरे वास्तुपद ११ प्रकारनां ज कक्षां छे. ए
 उपरांत कक्षां नथी, ते वास्तुनां नामो अनुक्रमे १ स्वस्तिक २ पुष्पक
 ३ नन्द ४ षोडश ५ कुलतिलक ६ सुभद्र ७ मरीचिगण ८ भद्रक
 ९ कामद १० भद्र अने ११ सर्वतोभद्र ए प्रमाणे छे.

स्वस्तिक १ पद, पुष्पक ४ पद, नन्द ९ पद, षोडश १६ पद,
 कुलतिलक २५ पद, सुभद्र ३६ पद, मरीचिगण ४९ पद, भद्रक
 ६४ पद, कामद ८१ पद, भद्र १०० पद अने सर्वतोभद्र १०००
 पदवाळें वास्तु होय छे.

आ ११ वास्तुओ पैकीनुं भिन्न भिन्न वास्तु भिन्न भिन्न
 कार्यना प्रसंगे पूजाय छे.

१ पदस्थापनामां, राजमहेलना प्रारंभमां, लक्ष्मीना भंडारना प्रारंभमां, देवनी आगे चोकी स्थापनामां अने विद्यारंभमां 'स्वस्तिक' नामक वास्तु पूजवुं.

२ दिक्षाना प्रसंगमां, यात्राना प्रारंभमां अने कन्याना लग्न प्रसंगे 'पुष्पक' वास्तुनी पूजा करवी.

३ वनयात्रामां (गृहनिमित्ते काष्ठ लेवा जती वखते) 'नन्द' वास्तुचुं पूजन करवुं शुभदायक छे.

४ लतिन अने रुचकादि प्रासादोना मंडपोमां घोरोमां अने जगतीनी भूमिना आरंभमां 'षोडशपद' वास्तुचुं पूजन करवुं.

५. सूर्यना दक्षिणायन अने उत्तरायण थवाना समये, इन्द्र-महोत्सवना प्रारंभे, लक्ष्मी अने श्रीमाता आदिना यात्रोत्सव प्रसंगे अने दिक्षाओमां 'कुलतिलक' वास्तुनी पूजा करवी.

६ कोइ पण शुभ कामना तथा प्रयाण करवाना प्रसंगे 'सुभद्र' वास्तु पूजवुं वखाणाय छे.

७ सर्व प्रकारना जीर्णोद्धारना समयमां 'मरीचिगण' नामनुं वास्तु पूजा.

८ ग्राम नगर के खेडुं नवुं वसावतां, कूओ खोदावतां अने राजाओना अभिषेक प्रसंगे 'भद्रक' वास्तुने पूजवुं.

९ सर्व प्रकारना घोरोना आरंभ अने प्रवेशमां, राजशालाओमां अने अश्वशालाओमां 'कामद' वास्तु पूजवुं.

१० अनेकविध प्रासादो (देवमंदिरो) अनेकविध मंडपो अने जगती, लिंग, पीठ, अने राजप्रासादोनी प्रतिष्ठामां 'भद्र' नामना वास्तुचुं पूजन करवुं.

११ मेरुजातिना प्रासादो अने ६ हाथथी म्होटा लिंगोनी प्रतिष्ठाओमां अने म्होटे देश अने नवुं राष्ट्र आबाद करवामां ' सर्वतोभद्र ' वास्तुनुं पूजन करवुं.

अधस्तात् सर्वतोभद्रात्, भद्राख्योपरि वास्तुकम् ।

मध्ये च द्वाविंशतिभिर्गुणिता पदकल्पना ॥२६॥

भा०टी०—सर्वतोभद्रायां नीचे अने भद्रवास्तुथी उपर आ
२२ वास्तुपदीनी कल्पना पण करी लेवी.

षट् क्षेत्राणि प्रवक्ष्यामि, वास्तुपदनिवासिनाम् ।

संस्थानोन्मानसूत्रं च, वास्तुवेदसमुद्भवम् ॥२७॥

चतुरस्र-मायतं च, वृत्तं वृत्तायतं तथा ।

अष्टास्रं चार्धचन्द्रं च, वास्तुसूत्रं च षड्विधम् ॥२८॥

भा०टी०—वास्तुभूमिना ६ क्षेत्रो तेना आकारो अने मान-
सूत्रो वास्तुशास्त्रमां जे वर्णित छे ते कहीश. चोरस, लंबचोरस, गोल,
लंबगोल, अष्टकोण अने अर्धचन्द्राकार आम वास्तुसूत्र छ प्रकारनुं छे.

प्रासादेषु गृहान्येषु, पुरग्रामनिवेशने ।

क्षेत्राणि चतुरस्राणि, चतुरस्रं समर्चयेत् ॥२९॥

तथायताश्च प्रासादाः, पुष्पाख्यकुलसंभवाः ।

यथायतानिक्षेत्राणि, पूजयेच्च तथायतम् ॥३०॥

वापीकूपक्षेत्रकाणि, वृत्तानि प्रतिमास्तथा ।

कैलासछन्दोद्भवाश्च, सर्वे वृत्ताः प्रकीर्तिताः । ३१॥

वृत्तायताश्च मणिका, अष्टशाला अष्टास्रकाः ।

तडागेषु समस्तेषु, ह्यर्धचन्द्रं प्रपूजयेत् ॥३२॥

क्षेत्रषट्कात्मके वास्तौ, बाणवेदाश्च देवताः ।

त्रयोदश स्थिता मध्ये, द्वात्रिंशद् बाह्यतस्तथा ॥३३॥

સૂત્રવાહ્યેઽષ્ટદેવાશ્ચ, ઈશાદિષુ પ્રદક્ષિણમ્ ।
તાસાં પદવિધિર્નાસ્તિ, કેવલં પૂજનં સ્મૃતમ્ ॥૩૪॥

માંટી—પ્રાસાદોમાં, ઘર આદિમાં, પુર તથા ગ્રામની આબાદી કરવામાં ચોરસ ક્ષેત્ર હોઈ ચોરસ વાસ્તુ પૂજવું. પુષ્પકજાતિના પ્રાસાદો લંબચોરસ હોય છે, માટે જેવું લંબચોરસ પ્રાસાદતલ હોય તેવુંજ લંબચોરસ વાસ્તુ પૂજવું. વાવડી, કૂપ, ક્ષેત્રો, પ્રતિમાઓ અને કૈલાસ-જાતિના સર્વ પ્રાસાદો એ ગોઠ ક્ષેત્રો છે, એ ગોઠ ક્ષેત્રોમાં ગોઠ વાસ્તુનું પૂજન કરવું. મણિકજાતિના પ્રાસાદો લંબગોઠ તલના હોઈ તેઓમાં લંબગોઠ વાસ્તુ પૂજવું. અષ્ટમદ્રી અને અષ્ટકોણી પ્રાસાદોમાં અષ્ટાસ્ર અને સર્વ તલાવોમાં અર્ધચન્દ્રાકાર વાસ્તુ પૂજવું. ઉપર્યુક્ત છ પ્રકારના વાસ્તુક્ષેત્રોમાં ૪૫ દેવતાઓ હોય છે. ૧૩ દેવતા વાસ્તુપદની અંદર અને ૩૨ દેવતાઓ વાસ્તુસ્ત્રની બહાર ઈશાનકોણથી વાહ્યભાગમાં માંડીને ૮ દિશાઓમાં અનુક્રમે ૮ દેવિઓ હોય છે. આ વાહ્યસ્થ દેવિઓને માટે પદવિધાન નથી, પણ કેવલ પૂજાવિધાન જ કહેલ છે.

વાસ્તુપદદેવતા—

વાસ્તુપદો સર્વ મલીને ૩૨ પ્રકારનાં હોય છે. ૧થી ૧૦ સુધીનાં અનુક્રમે અને ૩૨ મું સર્વતોમદ્ર આમ ૧૧ વાસ્તુઓનો નામનિર્દેશ અને કયા કામમાં કયું વાસ્તુ પૂજવું, એ વધું ઉપર કહેવાઈ ગયું છે, પણ આ વધા વાસ્તુઓમાં દેવતાપદ ભોગ અને તેમની વિન્યાસ-વિધિ લખવા જેટલો અવકાશ લઈ શકાય તેમ નથી તેથી જીર્ણોદ્ધાર, નગરનિવેશ, મંડપનિવેશ અને પ્રાસાદનિવેશમાં જેમની સ્વાસ પૂજા કરવી આવશ્યક હોય છે એવા ૭ થી ૧૦ પર્યન્તના ૪ વાસ્તુઓની જ વિશેષ ચર્ચા કરવી ઉપયોગી સમજીએ છીએ.

૪૯ પદાત્મક મરીચિગણ વાસ્તુ (જીર્ણોદ્ધારે પૂજનીય)

ચતુષ્પદો ભવેદ્ બ્રહ્મા, ત્રિપદા અર્ચમાદયઃ ।

कर्णाः सपादाश्चैकोना, कर्णे बाह्येऽर्धपादकाः ॥३५॥

षडंशोनपदाः शेषा-श्रतुर्विंशतिसंख्यया ।

मरीचिगणमित्युक्तं, सप्तसप्तपदात्मकम् ॥३६॥

भा०टी०—ब्रह्मानो पदभोग ४ नो अर्यमादिनो ३-३ नो
अभ्यन्तर कर्णदेवताभोग १।-१। पदनो, मध्यकर्णदेवतानो पदभोग
१-१-नो बाह्यकोण देवताभोग ०।।-०।। पदनो अने शेष बाह्य
२४ देवताओनो भोग पडंशहीन पदनो जाणवो. आम ७-७ पदोथी
बनेल ४९ पदात्मक ' मरीचिगण ' नामक वास्तु कहुं.

६४ पद भद्रकवास्तु-(नगरनिवेशे पूजनीय)

चतुःषष्टिपदं वक्ष्ये, वास्तु पुरनिवेशने ।

विभक्तिपदसंस्थानं, देवतानामनुक्रमात् ॥३७॥

चतुष्पदो भवेद् ब्रह्मा, तत्समा अर्यमादयः ।

अर्यमार्धे कर्णगाश्च, कर्णार्धे चतुर्विंशतिः ॥३८॥

बाह्यकर्णे स्थिताश्चाष्टौ, लाङ्गले पदमर्धकम् ।

ईदृशं भद्रकं प्रोक्तं, चतुःषष्टिपदस्थितम् ॥३९॥

भा०टी०—नगरनिवेशनमां चोसटपदनुं वास्तु अने तेमां
देवताओना पदविभागनां संस्थानो अनुक्रमे कहुं हुं.

ब्रह्मानां ४ पद, ब्रह्मानी परिधिना अर्यमादि ४ देवोनां ४-४
पदो, मध्यकोणस्थ आप आपवत्सादि ८ देवोनां २-२ पदो, बाह्य
२४ देवोनुं १-१ अने बाह्यकोणस्थ लांगलना ८ देवोनुं ०।।-०।।
पदोनुं संस्थान गणतां आ भद्रक नामनुं ६४ पदोनुं वास्तु तैयार थाय छे.

८१ पद-कामदवास्तु-(गृहादिनिवेशे)

ब्रह्मा नवपदो मध्ये, षट्पदा अर्यमादयः ।

द्विपदाः मध्यकर्णाद्या, द्वात्रिंशदेकपादकाः ॥४०॥

भा०टी०—कामदवास्तुमां मध्ये ९ पदो ब्रह्मणां, पूर्वादि ६-६ पदो अर्यमादि चारणां, मध्यकर्णविभागस्थित आठ देवोनां २-२ पदो अने बाह्य वत्रीश देवोनुं १-१ पद राखवुं.

૧૦૦ પદ-મદ્રવાસ્તુ (પ્રાસાદ-મળપાદિનિવેશે)

ततः शतपदं वक्ष्ये, पूज्यं प्रासाद-मण्डपे ।

ब्रह्माद्याः सकलाश्चैवा-ऽष्टपदाश्चार्यमादयः ॥४१॥

द्विपदा ब्रह्मकर्णेऽष्टौ, बाह्येऽष्टौ सार्धपादकाः ।

शेषाश्चैकपदाः ज्ञेया-श्चतुर्विंशतिसंख्यया ॥४२॥

भा०टी०—હવે પ્રાસાદમંડપમાં પૂજવાયોગ્ય શતપદવાસ્તુ કહું છું. બ્રહ્માને ૧૬ પદનો, અર્યમાદિને ૮-૮ પદોના, બ્રહ્માની પાસેના કોણના આઠ દેવોને ૨-૨ પદોના, બાહ્યકોણ નિકટવર્તી આઠ દેવોને ૧-૧ પદના અને બાકીના ચોવીશ બાહ્ય દેવોને ૧-૧ પદના અધિકારી બનાવવા.

ઉક્ત ચાર વાસ્તુઓનું નિરૂપણ અપરાજિતમાં ઉપર પ્રમાણે છે. પણ નિર્વાણકલિકા, વાસ્તુવિદ્યા આદિ ગ્રન્થોમાં આ વિષયમાં કેટલોક મતભેદ દૃષ્ટિગોચર થાય છે. જે નક્શાઓ જોવાથી જણાઈ આવશે.

વાસ્તુ-મર્માપમર્મનિર્ણય—

चतुःषष्टिपदे क्षेत्रे, पुरवास्तुं प्रकल्पयेत् ।

मर्मापमर्मसन्धीश्च, वास्तुवेदसमुद्भवान् ॥४३॥

भा०टी०—૬૪ પદના ક્ષેત્રમાં પુરવાસ્તુની કલ્પના કરવી અને વાસ્તુશાસ્ત્રમાં બતાવેલ મર્મ, ઉપમર્મ અને સંધિસ્થાનોનો નિર્ણય કરવો.

पूर्वापरायता वंशा, उपवंशाः प्रभिन्नगाः ।

मर्माणि वंशसंपाता, उपमर्माः पदमध्यगाः ॥४४॥

माहेन्द्रादित्यत्रिरेखा, वरुणपुष्पदन्तगाः ।

एते वंशा समाख्याता, उपवंशा यमोत्तराः ॥४५॥

गृहक्षतयमजोक्ताः, सोमभल्लाटादित्रये ।
 पूर्वाऽपरायता रेखाः, पुनर्भिन्नाश्च तिसृभिः ॥४६॥
 ईशब्रह्मपितृतश्च, शिरा रोगाग्निमध्यतः ।
 शिरास्वेवं कर्णस्यान्ते, ईशाग्निपितुरोमतः ॥४७॥
 जयगन्धर्वसुग्रीव-गिरौ चैव प्रभिन्नगाः ।
 सत्य-मुख्यायता रेखा, वितथे चाऽसुरे तथा ॥४८॥

भा०टी०—पूर्व पश्चिम लांबी रेखाओ 'वंश' अने दक्षिणो-
 त्तर लांबी रेखाओ 'उपवंश' कहेवाय छे, वंशोपवंशना संपातस्थानोने
 'मर्म' अने पदमध्यने 'उपमर्म' कहे छे. वरुण तथा पुष्पदंतथी
 नीकळेली रेखाओ माहेन्द्र अने आदित्यनी पासे जाय छे ते 'वंश'
 कहेवाय छे अने एज प्रकारे गृहक्षत तथा यमपासेथी नीकळेली
 दक्षिणोत्तरायत सोम अने भल्लाट पासे जती ३ रेखाओ 'उपवंश'
 नामथी ओळखाय छे. वळी १ पितृपदथी नीकळी ब्रह्मा पासे थइ
 ईश पदे जती शिरा, २ गंधर्वथी नीकळी जयपदने स्पर्शती शिरा
 अने ३ सुग्रीवपदथी नीकळी गिरि पदे जती शिरा, एज रीते—

१ अग्निपदथी रोगपदे जती कोणगत शिरा, २ मुख्यपदथी
 नीकळी सत्यपर्यन्त लंबायेली शिरा अने ३ वितथपदथी नीकळी
 असुरपदे जती शिरा आ वधी तिर्यग् जती ३-३ शिराओ पूर्वापरायत
 अने दक्षिणोत्तरायत वंश अने उपवंशोनो वेध करे छे.

एते च सूत्रसंपाता, महामर्माणि कीर्तिताः ।
 सूत्रसंपाताग्रपङ्क्तौ, लाङ्गुलं षट्कमेव च ॥४९॥
 शिरासूत्रसंपातेषु, लाङ्गुलषट्कमेव च ।
 चतुर्विंशतिलाङ्गलानि, पदाधेषु त्रिकर्णगा ॥५०॥
 ब्रह्मणश्च चतुःपार्श्व-द्वष्टसूत्राणि पद्मकम् ।
 पक्षेषु लाङ्गलद्वन्द्वं, षड्रेखाभिर्विधीयते ॥ ५१ ॥

ચતુઃકર્ણેષુ શૂલાનિ, ષટ્સ્વામિશ્ચ વજ્રકમ્ ।

ત્રિશૂલ-લાઙ્ગલપદ્મ-શિરા-નાડીર્વિવર્જયેત્ ॥૫૨॥

આ ૦ટી ૦—આ સૂત્રસંપાતો (વંશ-ઉપવંશ-શિરા-સંગમસ્થાનો)ને ‘મહામર્મ’ કહ્યા છે. સૂત્રસંપાતોના અગ્રભાગો જ્યાં મળે છે તે હ સ્થાનોને લાંગલ કહે છે. સૂત્ર અને શિરાના અગ્રભાગો મળીને પણ હ લાંગલો થાય છે. વધાં મળીને ૨૪ લાંગલો અર્ધપદોમાં અને કોણ વિભાગોમાં ઉત્પન્ન થાય છે.

બ્રહ્માજીની ચારે દિશાઓમાં આઠ સૂત્રોવડે ૪ પદ્મ વને છે અને પદ્મોની પાસે ૬-૬ રેખાઓવડે બે બે લાંગલો વને છે. ચાર વાહ્ય-કોણોમાં ૪ શૂલો અને ૬-૬ રેખાઓવડે વજ્રો ઉત્પન્ન થાય છે. વાસ્તુગત ત્રિશૂલ, લાંગલ, પદ્મ, શિરા અને નાડીઓ ટાકીને સ્તંભા-દિને સ્થાપવા જોઈય.

વન્ધુચ્છેદશ્ચોપવંશે, મર્મણિ સ્થાત્કુલક્ષયઃ ।

વજ્રે ચ વજ્રપાતાઃ સ્યુ-ત્રિશૂલે ચ રિપોભયમ્ ॥૫૩॥

પદ્મે પતિવિનાશશ્ચ, લાઙ્ગલેષુ પ્રજાક્ષયઃ ।

કર્ણશિરાયાં સ્ત્રીનાશઃ, સંપાતે ત્રાયજાતકમ્ ॥૫૪॥

ચતુર્ષુ બ્રહ્મકર્ણેષુ, મહામર્મ સુકીર્તિતઃ ।

ધન-ધાન્ય-વિનાશશ્ચ, સર્વનાશસ્તથૈવ ચ ॥ ૫૫ ॥

આ ૦ટી ૦—સ્તંભઆદિવડે ઉપવંશનો વેધ થાય તો વન્ધુઓનો નાશ, મર્મનો વેધ કુલનો ક્ષય, વજ્રનો વેધ વજ્રનો પાત અને ત્રિશૂલનો વેધ શત્રુનો ભય કરનાર છે, પદ્મનો વેધ ગૃહસ્વામીનો નાશ, લાંગલનો વેધ સંતાનનો ક્ષય, કોણની શિરાનો વેધ સ્ત્રીનો વિનાશ કરે છે અને સંપાતવેધ આઠ સંતાનનો નાશ કરે છે. બ્રહ્માના ૪ સ્વૂળાઓમાં મહામર્મ કહ્યો છે. તેનો વેધ ધનધાન્યનો નાશ કરે છે એટલું જ નહિ પણ આ મહામર્મનો વેધ સર્વનાશકારી છે.

पदन्यासषोडशांशो, भागो द्वादशकः पुनः ।
 वालाग्रं सन्धिसम्पाते, वर्ज्यते मर्म शिल्पिभिः ॥५६॥
 अष्टवर्गः समाख्यातः, कर्णपार्श्वाश्च कीर्तिताः।
 ब्रह्मकर्णे त्रिपद्मान्ते, महामर्मचतुष्टयम् ॥५७॥
 मर्मोपमर्मणी रक्ष्ये, महादोषभयावहे ।
 वंशोपवंशसन्धींश्च, रेखाषट्कं च लाङ्गलम् ॥५८॥

भा०टी०—पदविस्तारनो सोलमो भाग उपवंशना उपमर्ममां
 अने बारमो भाग मर्मवेधमां टालवो अने संधिसंपातमां शिल्पि-
 ओए वालाग्रमात्र मर्मस्थान छोडीने स्तंभादिनो न्यास करवो.

आ प्रमाणे अष्टवर्ग (अष्ट सूत्र संपात) बताव्यो अने कोणो
 तथा पार्श्वभागो कहा, ब्रह्माना कोण भागोमां पञ्चोना अंतमां चार
 महामर्मस्थानो छे. मर्म तथा उपमर्म महादोषदायक अने महा भयं-
 कर छे माटे ए बेने अवश्य बचाववा. वली वंश, उपवंश, संधि वज्र
 अने लांगलना वेधने पण वर्जवो.

भूपरिग्रहो वास्तोश्च, मर्मादि कथितं तव ।
 पित्रोर्घातो भवेच्चैवं, कृते शिरसि खातके ॥५९॥
 भुजे स्कन्धे बन्धुनाशो, हृदये च महाभयम् ।
 धन-धान्य-समृद्धिश्च, जायते कुक्षिन्नातके ॥६०॥

भा०टी०—विश्वकर्माजी अपराजितने कहे छे के—तने भूमि
 परिग्रह, वास्तु संस्थान अने मर्मोपमर्मादि कहुं.

मस्तक उपर खात करे तो माता-पितानो नाश, भुज उपर
 के स्कंध उपर खात करे तो भाईनो नाश करे, हृदयभागमां खात
 करे तो महाभय उपजे अने कुक्षिमां खात करे तो धन धान्यनी
 समृद्धि थाय.

वास्तु परिभ्रमण—

रवौ कन्यातुलालस्थे, पूर्वा शिरःसमाश्रिता ।
 धनौ च मकरे कुम्भे, दक्षिणेन व्यवस्थितः ॥६१॥
 मीने मेषे वृषे चैव, पश्चिमेन समाश्रितः ।
 मिथुने सिंहे कर्के च, ह्युत्तरेण व्यवस्थितः ॥६२॥
 सर्वकालक्रमोऽयं च, राशिमध्ये ह्यतः ऋणु ।
 देवताक्रमयोगेन, स वास्तुः सरते महीम् ॥६३॥
 यत्र भानुस्तत्र शिरो, लक्षितव्यं रविक्रमात् ।
 अन्यथा कुरुते दुःखं, शिरो वास्तोरलक्षितम् ॥६४॥
 देवागारं गृहं यत्र, प्रकुर्यात् शिरःसम्मुग्धम् ।
 मृत्यु रोग भया नित्यं, अस्तं च कुक्षिसम्मुग्धम् ॥६५॥

भा०टी०—कन्या, तुला अने वृश्चिकना सूर्यमां वास्तुपुरुष
 पूर्वमां मस्तक करीने रहे छे. धन, मकर अने कुम्भना सूर्यमां वास्तु
 दक्षिणमां रहे छे. मीन, मेष अने वृषभना सूर्यमां वास्तु पश्चिमाश्रित
 होय छे तथा मिथुन, कर्क अने सिंहना सूर्यमां वास्तुने मस्तक उत्तरे
 होय छे. वास्तुना राशिभ्रमणनो सार्वकालिक एज क्रम छे. अतः सर्व
 न्धमां विशेष सांभल—ते वास्तु स्वगत देवताओनी साथे अनुक्रमे
 पृथ्वी उपर करे छे. जे दिशामां सूर्ये जाय तेनो निर्णय करी कहे
 दिशामां वास्तुने मस्तक आवे छे तेनो निर्णय करी कहे. सूर्यना
 क्रमयी वास्तुना मस्तकने जाण्य विना तेना वर्जित अंग भागमा
 खात आदि करनारहे दुःखदायक साथे. वास्तुना मस्तक मस्तक
 द्वारवाला देवालये, दर आदि करे तो नित्य मरण, रोग अने अन्ध
 तथा करे छे. जे काले जे दिशामां वास्तुनी कुक्षि होय ते काले ते
 दिशाना मुखवाला देवालय अने दर आदिनी आरंभ करवा ते श्रेष्ठ छे.

कन्या तुला वृश्चिके च, भास्करो यदि संस्थितः ।
 पूर्वामुखं न कर्तव्यं, गृहं भवति निष्फलम् ॥६६॥
 धनौ च मकरे चैव, कुम्भे वाऽथ दिवाकरः ।
 न याम्यदिग्मुखं कुर्याद्, राजचौराग्निभिर्भयम् ॥६७॥
 मीने मेषे वृषे चैव, पश्चिमा दिक् च दूषिता ।
 स्त्रीभी रोगो महाघोरो, भवेच्च रौद्रदारुणः ॥६८॥
 मिथुने कर्कं सिंहे च, वेदम नैवोत्तराननम् ।
 दोष-शोकमयं तत्तु, न कुर्याच्च विचक्षणः ॥६९॥
 तत्र ना सर्पते वास्तुः, क्रमेण गृहमध्यतः ।
 पूर्व-दक्षिणतश्चैव, पश्चिमोत्तरतो मुखम् ॥७०॥

भा०टी०—कन्या, तुला अने वृश्चिक राशिमां सूर्य रह्यो होय त्यारे पूर्व दिशाना द्वारवालुं घर न करवुं. केमके ते घर नकामुं जाय छे, धनु, मकर अने कुंभनो सूर्य होय ते काले दक्षिणना द्वारवालुं घर न बनाववुं. केमके तेमां राज, चौर अने अग्निनो भय थया करे छे. मीन, मेष अने वृष राशिमां सूर्य होय त्यारे पश्चिम दिशा दूषित होय छे. ए कालमां पश्चिम द्वारवालुं घर न बनाववुं, ते घरमां स्त्री निमित्त महा भयंकर भेसोत्पत्ति थाय छे. मिथुन, कर्क अने सिंह राशिनां सूर्य होय त्यारे चतुर शिल्पिण उत्तगभिमुखनुं घर न बनाववुं. कारणके ते दोषप्रचुर अने शोकमय होय छे. आ प्रमाणे वास्तुपुरुष अनुक्रमे घरमां फल छे अने पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर आ प्रत्येक दिशामां तेनुं मुख आच छे, माटे जे दिशामां तेनुं मुख होय ते दिशाना द्वारवालुं घर ते काले बनाववानो आरंभ न करवो.

शिरो नेत्रे च वाङ्म च, उदरं कटिजङ्घया ।

वेधयन्ते गृहं ममे, पूजाहानि-महाभयम् ॥७१॥

भा०टी०—वास्तुपुरुषनुं मस्तक, नेत्र, मुजा, पेट, कटि अने

जंघानो वेध थाय तेवी रीते खात न करवुं, केमके घरमां वास्तुना मर्मनो वेध थतां पूजानी हानि अने महाभयनी उत्पत्ति थाय छे.

कन्यादिसंक्रान्ति योगे, प्राच्यादिषु क्रमाद् दिशि ।

न कुर्वीत शिरो वास्तो,—न कार्यं तन्मुखं गृहं ॥७२॥

क्षपाकरे नैव गृहं पुरस्तात्, कुर्यान्नरो वास्तुनयानुकर्ता ।

पतन्ति कन्या न च पृष्ठसंस्थे, तस्मात् प्रयत्नेन विदिग्

विचिन्त्या ॥७३॥

भा०टी०—कन्यादि ३-३ संक्रान्तिना योगे अनुक्रमे पूर्वादि दिशामां वास्तुनुं मुख न करवुं अने ते दिशाना द्वारवाळुं घर न बनावुं. चन्द्रमा द्वार संमुख होय तो शिल्पशास्त्रज्ञे घरनो आरंभ न करवो, न पाछल चन्द्र राखीने गृहारंभ करवो, कारणके ते रीते बनावेल घरोमां रहेनाराओने कन्याओनी ज प्राप्ति थाय छे. माटे यत्न-पूर्वक विदिशानो विचार करवो.

वास्तुदोष—

दिशायां विदिशायां च, वास्तुवेधविशोधनम् ।

जीर्णे नवतरे वा पि, वेधदोषं विवर्जयेत् ॥७४॥

वेधास्ते कथिताः पूर्व, दोषांश्चैव ततः शृणु ।

एकपदादिकं वास्तु, पर्यन्तसहस्रान्तिकम् ॥७५॥

सुरस्थानं सदा पूज्यं, पदं पूजां विना यदा ।

विघ्नोत्कटं महाघोरं, कुरुते भयदारुणम् ॥७६॥

वीथिकान्तरबाह्येषु, पदमेकं सुरैर्विना ।

विरोधं गोत्रकलहं, मुक्तकोणस्य तत्फलम् ॥७७॥

भा०टी०—दिशामां अने विदिशामां वास्तुवेध अवश्य टाळवो, भले वास्तु जीर्ण होय के साव नवुं होय पण वेध दोष तो वर्जवो ज

जोड़ये, तने वेधो कहा, हवे दोषोने सांभळ. एक पदथी मांडीने छेक हजारपदना वास्तुपर्यन्त जे वास्तुमां जेटला देवपदो होय ते वधां देवपदोनी पूजा करवी जोड़ये. कोइ पण पद पूजा विनानुं रही जाय तो ते पदनो देव उत्कट भयप्रद विघ्न उत्पन्न करे छे. वीथीनी अंदर अथवा बहार एक पण पद देव विनानुं के पूजा विनानुं न राखवुं. पद छोडवाथी विरोध अने कुटुंब-कलहरूप फल थाय छे.

अन्यपृष्ठे यदा चान्यत्, प्रासादपुरमन्दिरम् ।

स्वादकं नाम तद्वास्तु, परस्परविरोधकम् ॥७८॥

भा०टी०—एक प्रासाद नगर के मन्दिरनी पूंठमां एकज सूत्रे बीजुं प्रासाद नगर के मंदिर होय तो ते वास्तु 'स्वादक' कहेवाय छे. आ वास्तु रहेनाराओने आपसमां विरोधभाव उत्पन्न करे छे.

कुक्षिद्वारं गृहे वापि, कुयां च सुरसद्मनि ।

विभ्रमं नाम तद् वास्तु, विभ्रमेन गृहाधिपः ॥७९॥

कुक्षिभागे यदा चान्यद्, गृहं वा सुरसद्म वा ।

कुक्षिदं नाम तद् गेहं, विभ्रमन्नेव दृश्यताम् ॥८०॥

अग्रे द्वारोन्नतं गेहं, निम्नगं मध्यसंस्थितम् ।

उच्छ्रितं नाम तद् वास्तु, वृद्धि-पूजादिकं हनेत् ॥८१॥

गृहव्यासकर्णायतं, त्रिपञ्चहस्ततलोच्छ्रयम् ।

बहुकाष्ठद्रव्यादिकं, न भवेद् गृहं शाश्वतम् ॥८२॥

भा०टी०—घर अथवा देव मंदिरना कुक्षिभागमां जेने द्वार होय ते 'विभ्रम' नामनुं वास्तु कहेवाय छे, ते वास्तुनो स्वामी सदा भमतो ज रहे छे.

जे घरना कुक्षिभागे बीजुं घर अथवा देवमंदिर होय ते वास्तु 'कुक्षिद' कहेवाय. तेनुं फल विभ्रम वास्तुना जेबुं ज जाणवुं.

આગળ દ્વાર ભાગે ડુંચું અને મધ્ય ભાગમાં નીચું હોય તે વાસ્તુ 'ઉચ્છિન્ન' નામથી ઓલ્લાય છે, જે વિસ્તાર અને સંતતિ આદિની હાનિ કરનારું હોય છે. જે ઘરના વિસ્તારમાં કોણભાગે લંબાઈ હોય, ૩ અથવા ૫ હાથ તલની ડુંચાઈવાળું હોય, અનેક કાષ્ટો અને અનેક દ્રવ્યવ્રદે જે વનેલું હોય, તે ઘર લાંબા કાલ સુધી રહેતું નથી.

કર્ણશાલા યદા લગ્ના, આગ્નેયાં દિશમાશ્રિતા ।

અગ્નિદં નામ તદ્વાસ્તુ, કુરુતેઽગ્નિભયં ધ્રુવમ્ ॥૮૩॥

ભા•ટી•—જેને અગ્નિકોણમાં 'શાલા' (ઓડો) लागેલો હોય તે ઘર 'અગ્નિદ' કહેવાય અને તે અવશ્ય અગ્નિનો ભય કરે છે.

નૈર્ઋત્યે ચ યદા લગ્ના, શાલા ચ વાસ્તુવાહ્યતઃ ।

નૈર્ઋત્યં નામ તદ્વાસ્તુ, મૃત્યુ-વ્યાધ્યન્તિકોદ્રવમ્ ॥૮૪॥

ભા•ટી•—જેના નૈર્ઋત્ય સ્તૂણામાં વાસ્તુની બહાર શાલા લાગી હોય તે વાસ્તુ 'નૈર્ઋત્ય' નામથી ઓલ્લાય છે. આવું વાસ્તુ મૃત્યુદાયક વ્યાધિને ઉત્પન્ન કરે છે.

વાયવ્યે તુ યદા લગ્ના, શાલા ચ ગૃહવાહ્યતઃ ।

વાયવ્યં નામ તદ્ વાસ્તુ, ગૃહે વાયુભયં ભવેત્ ॥૮૫॥

ભા•ટી•—ઘરની બહાર જેના વાયવ્ય સ્તૂણામાં શાલા लागેલી હોય તે 'વાયવ્ય વાસ્તુ' કહેવાય છે અને તે ઘરમાં વાયુનો ભય રહે છે.

ઈશાને તુ યદા લગ્ના, શાલા ચ ગૃહવાહ્યતઃ ।

દેવકં નામ તદ્ વાસ્તુ, દેવદોષઃ સદા ભવેત્ ॥૮૬॥

ભા•ટી•—જેને ઘરની બહાર ઈશાન ભાગમાં શાલા લાગી હોય તે વાસ્તુ 'દેવક વાસ્તુ' કહેવાય છે અને તે વાસ્તુમાં રહેનારને દેવદોષ થાય છે.

અધોભૂમ્યાં ચ યે દોષા, -સ્તથૈવ ચોર્ધ્વમાદિશેત્ ।

ઝર્ધ્વં ભૂમી દિશાશ્રં ચૈતદ્ ગુણં દોષમાદહેત્ ॥૮૭॥

भा०टी०—नीचेनी भूमिमां जे जे दोषो कख्या छे ते ज ऊर्ध्व भूमिमां (मेडी उपर) पण कहेवा. पण जो ऊर्ध्वभूमिमां दोष न होय तो नीचेना दोषो पण हलका पडी जाय छे.

(३) आयाद्यङ्ग-विचार—

आय-व्ययांशका ऋक्षं, तारा-चन्द्रबलं गृहे ।
 जीवितं मरणं ज्ञेयं, वास्तु-विज्ञान-पूर्वकम् ॥८८॥
 नगरे वा पुरे ग्रामे, दण्डमानं विधीयते ।
 'वास्तुदण्ड' इति प्रोक्त-चतुर्भिर्हस्तसंख्यया ॥८९॥
 दशहस्तं च यत् क्षेत्र, -मङ्गुलैश्च फलप्रदम् ।
 वस्वङ्गुले च क्षेत्रे तु, पादैर्वा प्रति शोधयेत् ॥९०॥
 तत् क्षेत्रं च यथाकारं, यवैरेव विशोधयेत् ।
 शतहस्तमिते क्षेत्रे, तदग्रहस्तसंख्यया ॥९१॥
 क्षेत्रालाभे च तत्रैव, गृहं स्यात्तदिहाङ्गुलम् ।
 अङ्गुलमात्रक्षेत्रे च, अङ्गुलैस्तदलाभतः ॥९२॥
 पादैर्वापि यवैर्वापि, गृहक्षेत्रानुसारतः ।

भा०टी०—आय, व्यय, अंशक, नक्षत्र, तारा अने चन्द्रबल, आटली बावतो घरमां जोवी अने वास्तुनुं विशेष ज्ञान प्राप्त करीने तेना जीवन अने मरण काल (विनाश)नो पण पत्तो लगाडी लेवो. नगर, पुर अने ग्रामनुं माप दण्डवडे करवुं. आ दण्ड ते वास्तुदण्ड कहेवाय छे अने हाथसंख्याए ए ४ हाथनो कखो छे.

वे हस्तमित क्षेत्रनुं क्षेत्रफल आंगुलोवडे काढीने आयादिनो निर्णय करवो. जे क्षेत्र आठ आंगुलनुं ज होय तेनुं क्षेत्रफल पाव आंगुलो वडे काढवुं अथवा तेवा लघुक्षेत्रने यवोवडे मापीने क्षेत्र-फलादि काढवुं.

સો અથવા ઇથી અધિક હાથના ક્ષેત્રમાંથી ૧૦૦ હાથ વાદ કરીને વાકી રહેલા હાથોવડે ક્ષેત્રફલ કાઢવું, ઉપરની હસ્તસંખ્યા પર્યાપ્ત ન હોય તો તેના આંગલ કરી તે ગૃહક્ષેત્રના આય-વ્યય નક્ષત્રાદિ કાઢવાં.

અંગુલોવડે માપેલ ક્ષેત્રનું ક્ષેત્રફલ આંગલોવડે કાઢવું. આંગલો વડે ન નીકળે તો ગૃહ ક્ષેત્રાનુસારે પાવ આંગલો વડે અથવા યજ્ઞો વડે ગણીને આયાદિ કાઢવા.

વાસ્તુભૂમિ કોના હાથે માપવી ?

તૃણચ્છન્દે (ત્રે) સ્વામિહસ્તૈઃ, કર્મિહસ્તૈર્હર્મ્યાદિકે ॥૧૩॥

રાજવેશ્મ-પુરાદીનાં, વાપિ-કૂપાદિસંભવે ।

દેવાનાં (ચ) પ્રાસાદૈષુ, શાસ્ત્રહસ્તેન કેવલમ્ ॥૧૪॥

ખા૦ટી૦—તૃણવડે ઠાંકેલ શૂંપડાનું માપ ઘરધણીના હાથે કરાવવું. કાચાં પાકાં મકાનો અને મેડીબંધ મહેલોનું માપ કારીગરના હાથવડે કરવું. રાજમહેલ અને નગર આદિનું, વાવડી કૂપાદિકનું અને દેવમંદિરોનું માપ કેવલ શાસ્ત્રોક્તહસ્તવડે કરવું. ૮-૭-૬ જવોનો અનુક્રમે જ્યેષ્ઠ, મધ્યમ અને કનિષ્ઠ ૧ આંગલ, આવા ૨૪ જ્યેષ્ઠ, મધ્યમ અને કનિષ્ઠ આંગલોનો અનુક્રમે જ્યેષ્ઠ, મધ્યમ અને કનિષ્ઠ હાથ તે શાસ્ત્રીય 'હસ્ત' કહેવાય છે.

આય લાવવાની રીતિ અને નામાદિ—

દૈર્ઘ્યં હન્યાત્ પૃથુત્વેન, હરેદ્ ભાગં તતૌષ્ટભિઃ ।

યચ્છેષમાયંતં વિદ્યાત્, શાસ્ત્રદૃષ્ટં ધ્વજાદિકમ્ ॥૧૫॥

ધ્વજો ધૂમચ્ચ સિંહચ્ચ, શ્વાનો વૃષઃ સ્વરો ગજઃ ।

ધ્વાંક્ષચ્ચેતિ સમુદ્દિષ્ટાઃ, પ્રાચ્યાદિષુ પ્રદક્ષિણાઃ ॥૧૬॥

અન્યોન્યાભિમુખાસ્તે ચ, ક્રમચ્છન્દાનુસારતઃ ।

પૂર્વાચ્યા યે સમુદ્દિષ્ટા, આયુર્વૃદ્ધિવિધાયકાઃ ॥૧૭॥

भा०टी०—वास्तुक्षेत्रनी लंबाईने पहोऊईवडे गुणवी, पछी जे आंकडो आवे तेने आठनो भाग देवो, भाग लागतां जे आंक बाकी रहे ते प्रमाणे शास्त्रोक्त ध्वजादि आय जाणवो, १ शेष रहे तो ध्वज, २ रहे तो धूम, ३ रहे तो सिंह, ४ रहे तो श्वान, ५ रहे तो वृषभ, ६ रहे तो खर, ७ रहे तो गज अने शेष आंक जो शून्य आवे तो ध्वांक्ष आय जाणवो. आ आठे आयो पूर्वादि दिशाओमां अनुक्रमे रहेला छे. अने पोतानी संमुख दिशाना आयने अभिमुख रहेला छे, ते पोतानी दिशासंमुख द्वारवाला वास्तुनी आयुर्वृद्धि करनारा छे.

देवालयोमां अने अधमालयोमां शुभ आय—

ध्वजः सिंहो वृषभगजौ, शस्यन्ते सुरवेदमनि ।

अधमानां खर-ध्वांक्ष-धूम-श्वानाः सुखावहाः ॥९८॥

भा०टी०—ध्वज, सिंह, वृषभ अने गज, आ विषम आयो देवालयोमां आपवा प्रशंसनीय छे अने खर, ध्वांक्ष, धूम तथा श्वान, आ चार सम आयो अधमजातिना मनुष्योनां घरोमां सुखदायक होय छे.

कालपरक आयोनी श्रेष्ठता—

ध्वजः प्रायः कृतयुगे, त्रेतायां सिंह एव च ।

द्वापरे वृषबाहुल्यं, गज एव कलौ युगे ॥९९॥

भा०टी०—ध्वज कृतयुगमां, सिंह त्रेतामां, वृष द्वापरमां अने गज कलियुगमां प्रायः विशेष प्रबल होय छे.

वर्णविशेषने आयविशेषनी श्रेष्ठता—

कल्याणं कुरुते सिंहो, नृपाणां च विशेषतः ।

ध्वजः प्रशस्यते विप्रे, वृषो वैश्ये उदाहृतः ॥१००॥

भा०टी०—सिंह आय क्षत्रिओने विशेषतः राजाओने कल्याणकारी छे, ध्वजाय ब्राह्मणने अने वृषाय वैश्य जातिने माटे प्रशंसनीय छे.

१ आ श्लोक हस्तलिखित पुस्तकमां छे.

આયોનું ફલ—

ઉત્તરોત્તરમાહ્યાતા-શ્રતુર્વર્ણફલપ્રદાઃ ।

ધ્વજે ચૈવાર્થલાભઃ સ્યાદ્, ધૂમે સંતાપ એવ ચ ॥૧૦૧॥

સિંહે ચ વિપુલા ભોગાઃ, કલિઃ શ્વાને સદા ભવેત્ ।

ધનં ધાન્યં વૃષે ચૈવ, સ્ત્રીદૂષણં ચ રાસમે ॥૧૦૨॥

ગજે ભદ્રાણિ પશ્યન્તિ, ધ્વાઙ્કે ચ મરણં ધ્રુવમ્ ।

આંટી૦—ચતુર્વર્ણને જે આયો ઉત્તરોત્તર ફલદાયક છે તે કહ્યા, હવે પ્રત્યેક આયનું સર્વ સામાન્ય ફલ કહે છે—

ધ્વજ આયથી ધન પ્રાપ્તિ, ધૂમ આયથી સંતાપ, સિંહ આયથી વિશાલભોગ પ્રાપ્તિ, શ્વાન આયથી વલેશ, વૃષ આયથી ધન ધાન્ય પ્રાપ્તિ, સ્વર આયથી સ્ત્રીદોષ, ગજ આયથી મંગલ દર્શન અને ધ્વાંશ્ર આયથી નિશ્ચિતરૂપે મરણ થાય છે.

કાર્ય વિશેષે આય વિશેષ—

ધ્વજ—

પ્રાસાદ-પ્રતિમા-લિઙ્ગ, -જગતી-પીઠ-મણ્ડપે ।

વેદી-કલશ-મૂર્તીનાં, પતાકા-છત્ર-ચામરે ॥૧૦૩॥

વાપી કૂપ-તટાગાનાં, કુણ્ડે રમ્યજલાશ્રયે ।

ધ્વજોચ્છય-સંસ્થાનેષુ, ધ્વજસૂત્રં નિવેશયેત્ ॥૧૦૪॥

આસને દૈવપીઠેષુ, વસ્ત્રાલંકારયુક્તિષુ ।

ભૂષણે મુકુટાદ્યે ચ, નિવેશયેદ્ ધ્વજં શુભમ્ ॥૧૦૫॥

આંટી૦—દેવમંદિર, દેવપ્રતિમા, શિવલિંગ, જગતી, પીઠ, મંડપ, વેદી, કલશ, મૂર્તિ, (મનુષ્યનું વાવલું) ધ્વજા, છત્ર, ચામર, વાવ, કૂવો, તલાવ, કુણ્ડ, સુન્દર જલાશય અને ધ્વજદણ્ડ; આ વધા સ્થાનોમાં ધ્વજસૂત્ર દેવું અર્થાત્ ધ્વજ આય આવવો. સિંહાસન-ભદ્રાસન, દેવને સ્થાપવા યોગ્ય ભદ્રપીઠ, વસ્ત્ર, અલંકાર અને મુકુટ પ્રમુખ આભૂષણો; આ સર્વમાં પળ ધ્વજ આય શુભ છે.

धूम-

अग्निकर्मसु सर्वेषु, होमशाला-महानसौ ।

धूमोऽग्निकुण्डसंस्थाने, होमकर्मगृहेऽपि वा ॥१०६॥

भा०टी०—सर्व प्रकारनां अग्निकार्यो, होमशालादि यज्ञ-स्थानो, रसोइधरो, अग्निकुण्डो अने होमक्रिया स्थानो; आ वधे स्थले धूम आय देवो.

सिंह-

आयुधानां समस्तानां, नृपाणां भवनेषु च ।

नृपासने सिंहद्वारे, सिंहसूत्रं निवेशयेत् ॥१०७॥

भा०टी०—सर्व प्रकारनी आयुधशालाओ, राजानां मकानो, राजानुं सिंहासन अने राजभवननुं सिंहद्वार; आ वधे सिंह आवे एवं सूत्र देवुं.

श्वान-

श्वानं च म्लेच्छजातीनां, गृहे श्वानोपजीविनाम् ।

तथा च शूद्रसंज्ञेषु, प्रशस्तः श्वानको मतः ॥१०८॥

भा०टी०—म्लेच्छोना घरोमां, श्वानोपडे आजीविका चलाव-नाराओना घरोमां श्वान आय देवो तथा शूद्र जातिना लोकोने माटे पण श्वान आय शुभ मानेलो छे.

वृष-

वणिक्कर्मसु सर्वेषु, भोज्यपात्रेषु मण्डपे ।

वृषस्तुरङ्गशालायां, गोशाला-गोकुलेषु च ॥१०९॥

भा०टी०—सर्व व्यापारिक कार्योमां, भोजनपात्रोमां, भोजन मण्डपमां, अश्वशालामां, गौशालामां अने गोकुलोमां वृष आय शुभ छे.

स्वर-

तत-वितत घनाख्ये, वादित्रे विविधे स्वरः ।

वेद्या कुलाल रजका-दीनां गर्दभजीविनाम् ॥११०॥

આ૦ટી૦—તત-વિતત-ઘનાદિ વાદિત્રો તથા વીજા અનેક જાતિનાં વાજિત્રો, વેશ્યા, કુંભાર, ધોવી આદિનાં ઘરો અને ગધેડા-ઓથી આજીવિકા ચલાવનારાઓનાં ઘરોમાં સ્વર આય દેવો.

ગજ—

ગજશ્ચ ગજશાલાયાં, યાનશ્ચમ્પાનયો રથે ।

શય્યાયાં શિલ્પિકાયાં ચ, મજમુદ્રાસ્વાતુરકે ॥૧૧૧॥

અન્તઃપુરગૃહે ચોક્તઃ, પળ્હાવાસાદિકોદ્ભવઃ ।

અન્યોપસ્કરસ્થાને ચ, નાગાદિકગૃહે ગજઃ ॥૧૧૨॥

આ૦ટી૦—હસ્તિશાલામાં, યાન, મિયાનો, રથ, પલંગ, શાલ્ખી, ગજમુદ્રાઓ (ગજબન્ધનાલયો)માં, સ્થળાલયોમાં, અન્તપુરમાં, પળ્હાવાસ (ક્લીબગૃહો)માં, અન્ય ઉપસ્કર (સામાન) રાખવાનાં સ્થાનોમાં અને નાગદેવ આદિનાં ચૈત્યોમાં પણ ગજ આય દેવો.

ધ્વાંક્ષ—

અર્હદ્યન્વશાલાસુ, જીર્ણ(જૈન)શાલાદિસંભવે ।

શિલ્પકર્મોપજીવિનાં, ધ્વાંક્ષઃ કલ્યાણકારકઃ ॥૧૧૩॥

આ૦ટી૦—રહેંટિયા શાલામાં, જીર્ણ (જૈન)શાલામાં અને વળકર આદિ શિલ્પકર્મોપજીવિઓના ઘરોમાં ધ્વાંક્ષ આય કલ્યાણકારી છે.

પ્રતિનિધિ આયો—

સ્વકસ્વકેષુ સ્થાનેષુ, સર્વે કલ્યાણકારકાઃ ।

સ્નેહાનુગાઽનુમૈત્રે ચ, તે સર્વે હિતકામદાઃ ॥૧૧૪॥

વૃષસ્થાને ગજં દદ્યાત્, સિંહં વૃષભ-હસ્તિનોઃ ।

ધ્વજઃ સર્વેષુ દાતવ્યો, વૃષો નાઽન્યત્ર દીયતે ॥૧૧૫॥

આ૦ટી૦—પોતપોતાના સ્થાનોમાં સર્વ આયો કલ્યાણને કરનારા છે, જે જેના તરફ સ્નેહવાલો છે તે પોતાના તે મિત્રના સ્થાનમાં પણ હિતકારક અને ઇચ્છિત ફલ આપનાર ધાય છે. વૃષના સ્થાને

ગજ આપવો, વૃષ અને ગજના સ્થાને સિંહ આપવો, ધ્વજ સર્વમાં આપવો, જ્યારે વૃષ પોતાના સ્થાન સિવાય બીજે ન આપવો.

આયોના મુખની દિશા—

વારુણ્યાભિમુખો ધ્વજઃ, સિંહો ગજાભિદૃષ્ટિકઃ ।

વૃષભઃ પ્રાચ્યભિમુખો, ગજો યામ્યામુખસ્તથા ॥૧૧૬॥

સંમુખા યામ્યોત્તરાઃ શસ્તા, અશસ્તાઃ પૃષ્ઠતોમુખાઃ ।

સ્વકે સ્વકે વૈ સ્થાને ચ, પ્રશસ્તાસ્ત્રિષુ દિક્ષુ ચ ॥૧૧૭॥

ભાંટીં—ધ્વજ આય પશ્ચિમાભિમુખ, સિંહઆય ઉત્તરાભિમુખ, વૃષ આય પૂર્વાભિમુખ અને ગજ આય દક્ષિણાભિમુખ રહેલ છે. આય સામો, ડાવો અને જમણો શુભ છે, પણ તેની પૂંઠ શુભ નથી. આમ પોતપોતાના સ્થાનથી પ્રત્યેક આય ત્રણ ત્રણ દિશામાં શુભ છે. ઉદાહરણ તરીકે ધ્વજ આય પશ્ચિમાભિમુખ છે તો પૂર્વાભિમુખ વાસ્તુને સંમુખ, ઉત્તરાભિમુખને જમણો અને દક્ષિણાભિમુખ દ્વારને ડાવો થાય જે શુભ છે, પણ પશ્ચિમાભિમુખને તે પૃષ્ઠતોમુખ હોઈ શુભ નથી, એમ દરેકના સંબંધમાં જાણવું.

મહાગણેશ્વરાઃ પ્રોક્તા, અષ્ટદિક્ષેત્રપાલકાઃ ।

વાસ્તુકર્મસુ સર્વેષુ, આયા દિક્પતયોઽષ્ટ હિ ॥૧૧૮॥

પૂજિતાઃ પૂજયન્ત્યેવ, નિઘ્નન્તિ ચાઽપદસ્થિતાઃ ।

સાધ્યક્ષેત્રં ચ ત્રિપુટં, પ્રભિન્નં ચ નવાંશકૈઃ ॥૧૧૯॥

અષ્ટાવાઽઽયસંસ્થાનાનિ, મધ્યે સ્યાત્ કુલદેવતા ।

ગૃહસ્થાભિમુખાઃ શસ્તા, મધ્યમાશ્ર પરાઙ્મુખાઃ ॥૧૨૦॥

ભાંટીં—આયોને મહાગણેશ્વરો અને આઠ દિશાના ક્ષેત્રપાલો કૃષ્ણા છે. સર્વ વાસ્તુકર્મોમાં આયો આઠ દિશાપાલો છે. એ યથા-સ્થાને રાખેલા મુખ દેનારા છે અને વર્જ્ય-સ્થાને રહેલા હાનિકારક થાય છે. વાસ્તુક્ષેત્રમાં ઝમ્બી આડી ચાર ચાર લીટી રેંચીને તેના નવ ભાગો, પાહવા, આઠ દિશાના આઠ ભાગો આયોનાં સ્થાનો અને

મધ્યભાગ કુલદેવતાનું જાણવું. આયો ઘર તરફ મુખવાલા શ્રેષ્ઠ અને પૂંઠવાલા મધ્યમ જાણવા.

સાધ્યક્ષેત્રગુણાકારૈ-રાયાશ્ચૈવ પ્રતિષ્ઠિતાઃ ।

યાવત્તુ ક્ષેત્રભક્તિઃ સ્યાત્, તાવદાયઃ પ્રપાલયેત્ ॥૧૨૧॥

ખાંટી૦—સાધ્યક્ષેત્રની લંબાઈ પહોળાઈના ગુણાકારવડે આયો સ્થાપિત કરાય છે, તેથી જ્યાં સુધી ક્ષેત્રની તે રચના કાયમ હોય છે ત્યાં સુધી તેનો આય પોતાની શુભ અસર ઘટાવે છે.

આય જ્ઞાનાર્થકોષ્ટક—

દૈર્ઘ્યીગુલ		પ્રપુંઠવાંગુલ	૨૧	૨૨	૨૩	૨૪	૧૭	૧૮	૧૯	૨૦	અર્થો આયાઃ
			૧૩	૧૪	૧૫	૧૬	૧	૧૦	૧૧	૧૨	
૨૧	૧૩	૫	૧	૬	૩	૮	૫	૨	૭	૪	
૨૨	૧૪	૬	૬	૪	૨	૮	૬	૪	૨	૮	
૨૩	૧૫	૭	૩	૨	૧	૮	૭	૬	૫	૪	
૨૪	૧૬	૮	૮	૮	૮	૮	૮	૮	૮	૮	
૧૭	૧	૧	૫	૬	૭	૮	૧	૨	૩	૪	
૧૮	૧૦	૨	૨	૪	૬	૮	૨	૪	૬	૮	
૧૯	૧૧	૩	૭	૨	૫	૮	૩	૬	૧	૪	
૨૦	૧૨	૪	૪	૮	૪	૮	૪	૮	૪	૮	

નક્ષત્ર—

આયામો યશ્ચ ક્ષેત્રસ્ય, ગુણિતવ્યઃ પ્રવિસ્તરઃ ।

તત્ક્ષેત્રસ્ય ફલં સાધ્યં, ગુણિત્વા દૈર્ઘ્ય-વિસ્તરૈઃ ॥૧૨૨॥

ફલે ચાષ્ટગુણે તસ્મિન્, સપ્તવિંશતિભાજિતે ।

ગચ્છેષં લભ્યતે તત્ર, નક્ષત્રં તદ્ગૃહસ્ય તત્ ॥૧૨૩॥

ખાંટી૦—પ્રથમ વાસ્તુક્ષેત્રની લંબાઈ અને પહોળાઈ માપવી, તે પછી તે લંબાઈના અને પહોળાઈના અંકથી ગુણીને તેનું ક્ષેત્રફલ સાધવું. અને ફલના અંકનો ૮ થી ગુણાકાર કરી આવેલ ગુણિત

अंकने २७ मो भाग देवो, भाग लागतां जे अंक शेष रहे तेटलासुं ते घरनुं नक्षत्र जाणवुं.

त्रिविध नक्षत्र गण—

देव-मर्त्य-राक्षसानां, नक्षत्राणां त्रिधा गणः ।

यस्य यस्याऽनुगा मैत्री, वैरं स्याच्च परस्परम् ॥१२४॥

स्वगणे परमा प्रीति-मैध्या देवे च मानुषे ।

राक्षसे कलहं विन्ध्यात्, मृत्युं मनुष्य-रक्षसोः ॥१२५॥

भा०टी०—नक्षत्रगण ३ प्रकारनो छे. देवगण, मानवगण अने राक्षसगण; जेनी जे साथे मैत्री अथवा परस्पर वैर होय, एमां स्वस्व गणने परम प्रीति, देव मनुष्यने मध्यम प्रीति, देव राक्षसने कलह अने मनुष्य राक्षसना योगे मरण जाणवुं. ते तपासीने गृहस्वामीना नक्षत्र साथे प्रीतिवाळुं देवालयनुं अथवा घरनुं नक्षत्र लेवुं अने परस्पर वैरवाला गणनुं नक्षत्र टाळवुं.

नव देवगणाः प्रोक्ता, मनुष्या नव कीर्तिताः ।

नव रक्षोगणाश्चैव, नक्षत्राणां त्रिधा गणः ॥१२६॥

कृत्तिका मघा विशाखा, अश्लेषा शततारका ।

चित्रायुक्ता धनिष्ठा च, ज्येष्ठा मूलं तु राक्षसाः ॥१२७॥

मृगोऽश्विनी रेवती च, हस्त-स्वाती पुनर्वसू ।

पुष्यानुराधा श्रवण-मेते देवगणाः स्मृताः ॥१२८॥

भरणी (च) तिस्रः पूर्वा-श्रार्द्रा च रोहिणी तथा ।

उत्तरात्रयसंयुक्ता, मनुष्याश्च प्रकीर्तिताः ॥१२९॥

भा०टी०—९ नक्षत्रो देवगणा, ९ मानवगणा, अने ९ राक्षसगणा; आम नक्षत्रगणो त्रण प्रकारना छे:

कृत्तिका, मघा, विशाखा, आश्लेषा, शतभिषा, चित्रा, धनिष्ठा, ज्येष्ठा अने मूल ए राक्षसगण; मृगशिर, अश्विनी, रेवती, हस्त, स्वाति, पुनर्वसु, पुष्य, अनुराधा अने श्रवण ए देवगण अने भरणी, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढा, पूर्वाभाद्रपद, आर्द्रा, रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा अने उत्तराभाद्रपद ए मानवगणनां नक्षत्रो कहां छे.

अंगुलात्मकक्षेत्राद् नक्षत्र

दैर्घ्यांगुल	अधुत्थांगुल	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	नक्ष
	०	८	१६	२४	५	१३	२१	२	१०	१८	२६	
	१	१६	५	२१	१०	२६	१५	४	२०	९	२५	
	२	२४	२१	१८	१५	१२	९	६	३	२७	२४	
	३	५	१०	१५	२०	२५	३	८	१३	१८	२३	
	४	१३	२६	१२	२५	११	२४	१०	२३	९	२२	
	५	२१	१५	९	३	२४	१८	१२	६	२७	२१	
	६	२	४	६	८	१०	१२	१४	१६	१८	२०	
	७	१०	२०	३	१३	२३	६	१६	२६	९	१९	
	८	१८	९	२७	१८	९	२७	१८	९	२७	१८	
	९	२६	२५	२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	
	१०	७	१४	२१	१	८	१५	२२	२	९	१६	
	११	१५	३	१८	६	२१	१	२४	१२	२७	१५	
	१२	२३	१९	१५	११	७	३	२६	२२	१८	१४	
	१३	४	८	१२	१६	२०	२४	१	५	९	१३	
	१४	१२	२४	९	२१	६	१८	३	१५	२७	१२	
	१५	२०	१३	६	२६	१९	१२	५	२५	१८	११	
	१६	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	
	१७	९	१८	२७	९	१८	२७	९	१८	२७	९	
	१८	१७	७	२४	१४	४	२१	११	१	१८	८	
	१९	२५	२३	२१	१९	१७	१५	१३	११	९	७	
	२०	३	१२	१८	२४	३	९	१५	२१	२७	६	
	२१	१४	१	१५	२	१६	३	१७	४	१८	५	
	२२	२२	१७	१२	७	२	२४	१९	१४	९	४	

ज्ञानार्थक कोष्टक

११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३
ब्राणि												
७	१५	२३	४	१२	२०	१	९	१७	२५	३	१४	२२
१४	३	१९	८	२४	१३	२	१०	१	२३	१२	१	१०
२१	१८	१५	१२	९	३	३	१७	२४	२१	१८	१५	१२
१	३	११	१६	२१	२६	४	९	१४	२९	२४	२	८
८	२१	७	२०	३	१९	५	१०	४	१७	३	१६	२
१५	९	३	२४	१८	१२	६	२७	२१	१५	९	३	२४
२२	२४	२६	१	३	५	७	९	११	१३	१५	१७	१९
२	१२	२२	५	१५	२५	८	१८	१	११	२१	४	१४
९	२७	१८	९	२७	१८	९	२७	१८	९	२७	१८	९
१६	१५	१४	१३	१२	११	१०	९	८	७	६	५	४
२३	३	१०	१७	२४	३	११	१८	२५	५	१२	१९	२६
३	१८	३	२१	९	२४	१२	२७	१५	३	१८	३	२१
१०	३	२	२५	२१	१७	१३	९	५	१	२४	२०	१६
१७	२९	२५	२	३	१०	१४	१८	२२	२६	३	७	११
२४	९	२१	६	१८	३	१५	२७	१२	२४	९	२१	३
४	२४	१७	१०	३	२३	१६	९	२	२२	१५	८	१
११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३
१८	२७	९	१८	२७	९	१८	२७	९	१८	२७	९	१८
२५	१५	५	२२	१२	२	१९	९	२६	१६	६	२३	१३
५	३	१	२६	२४	२२	२०	१८	१६	१४	१२	१०	८
१२	१८	२४	३	९	१५	२१	२७	३	१२	१८	२४	३
१९	३	२०	७	२१	८	२२	९	२३	१०	२४	११	२५
२६	२९	१६	१९	३	१	२३	१८	१३	८	३	२५	२०

राशि-

अथ राशीन् प्रवक्ष्यामि, लब्धाः क्षेत्रफलेषु ये ।

तदनुक्रमयुक्तं च, कथये तव सांप्रतम् ॥ १३० ॥

भा०टी०—हवे क्षेत्रफल उपरथी निर्णीत थयेल नक्षत्रो वडे प्राप्त थती राशिओ अने तेओनो अनुक्रम तने कहुं छुं.

गृहक्षेत्रेषु यदक्षं, षष्ट्या संघातयेद् बुधः ।

पञ्चत्रिंशच्छतभक्ते, शेषा भुक्तिघटिको (टथु)त्तमाः ॥ १३१ ॥

ऋक्षभुक्तिक्रमभुक्ताः, स्वस्वराशिकसंस्थिताः ।

स्युर्मेषाद्या राशयश्च, अश्विन्यादिक्रमेषु च ॥ १३२ ॥

भा०टी०—घरनु जे नक्षत्र आव्युं होय तेने ६० थी गुणवुं, पछी ते गणित अंकने १३५ नो भाग देवो, जे लाभे ते भुक्त राशि अने जे शेष रहे ते वर्तमान राशिनी भोग्य घडिओ जाणवी, अश्विन्यादि क्रमथी नक्षत्र भुक्तिना क्रमानुसार मेषादि राशिओ आवशे.

उदाहरण—गृह नक्षत्र ८ भुं पुष्य आव्युं छे, एने ६० थी गुणतां ४८० घडी थइ, एने १३५ नो भाग देतां ३ आव्या, एटले व्रीजी मिथुन राशि भुक्त थइ, वर्तमान भोग्य चोथी कर्क राशि आवी, एज प्रमाणे सर्वत्र गृहनक्षत्रना अंकने ६० थी गुणी १३५ नो भाग देतां गृहनी राशि आवशे.

चातुर्वर्ण्य राशि-

चातुर्वर्ण्यप्रशस्तांश्च, राशीनथ वदाम्यहम् ।

तत्र त्रयस्त्रयः प्रोक्ता, विप्रशूद्रान्तमार्गतः ॥ १३३ ॥

वृश्चिकः कर्कटो मीनो, ब्राह्मणाः परिकीर्तिताः ।

धनुर्मेषस्तथा सिंहो, राजन्याश्च शुभाः स्मृताः ॥ १३४ ॥

वृषः कन्या च मकर, एते वैश्या उदाहृताः ।

मिथुनं च तुला कुम्भस्त्रयः शूद्राः प्रकीर्तिताः ॥ १३५ ॥

भवेद् द्वादशभिर्विप्रः, क्षत्रियो नवभिस्तथा ।

षड्राशिभिर्भवेद् वैश्यः, स्त्रिभिः शूद्रः प्रशस्यते ॥१३५॥

भा०टी०—हवे चार वर्णने योग्य राशिओ कहं छुं. ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य अने शूद्र; आ चार वर्णों पैकीना प्रत्येक वर्ण माटे ३-३ राशि श्रेष्ठ कहेल छे. कर्क वृश्चिक मीन राशिओ ब्राह्मणने श्रेष्ठ छे, मेष सिंह धनु क्षत्रियने शुभ, वृष कन्या मकर वैश्यने श्रेष्ठ अने मिथुन तुला कुंभ ए व्रण शूद्रने श्रेष्ठ छे. ब्राह्मण वारेय राशिओथी श्रेष्ठ छे, क्षत्रिय नव राशिओथी, वैश्य छ राशिओथी अने शूद्र पोतानी व्रण राशिओथी ज श्रेष्ठ छे. आशय ए छे के उच्च वर्णवालाने नीच वर्णनी राशिवालां घरो शुभ छे पण नीच वर्णवालाने उच्चवर्णनी राशिवालां घरो सारां नथी.

राशिकूट-

षडष्टके ध्रुवं मृत्युः, प्रीतिः स्यात् समसप्तमे ।

अनिष्टं पञ्च-नवमे, पुष्टिर्दश-चतुर्थके ॥ १३७ ॥

तृतीयैकादशे मैत्री, द्वितीय-द्वादशे रिपुः ।

राशयः षड्विधा एव, -मन्योन्यं पति-वेदमनोः ॥१३८॥

भा०टी०—घर अने घर स्वामीनी राशि परस्पर छठी आठमी होयतो गृहस्वामीनुं मृत्यु थाय, परस्पर सातमी होय तो प्रीतिकारक, परस्पर नवमी पांचमी होय तो अनिष्टकारक, परस्पर चौथी दशमी होय तो पुष्टिकारक, परस्पर त्रीजी अग्यारमी होय तो मैत्रीकारक अने परस्पर बीजी बारमी होय तो शत्रुताकारक जाणवी. आम घर अने घरस्वामिनी राशियोना छ संबन्धो बने छे, ते पैकीना व्रण अशुभ संबन्धवाली घरनी राशि वर्जनीय छे.

वेदमपत्योर्भवेच्चैव, ग्रहमैत्री परस्परम् ।

न पीडयन्त्यात्मक्षेत्रं, स्नेहिनः क्षेत्रपालकाः ॥१३९॥

भा०टी०—गृह अने गृहस्वामीनी राशिना स्वामीग्रहो परस्पर मित्र होय अथवा एक होय तो षडष्टक नवपंचम अथवा बीजी बारमी राशिनो दोष नहीं, कारण के ग्रहो पोताना अथवा मित्रना क्षेत्रना पालक होवाथी पीडा करता नहीं.

चन्द्र—

गृहाग्रे च यदा चन्द्रः, कुरुते वेश्मनः क्षयम् ।

राट्चौराग्निभयं घोरं, चन्द्रो वै पृष्टिमागतः ॥१४०॥

धनं धान्यं क्षमारोग्यं, कुरुते दक्षिणे स्थितः ।

श्री-स्त्री-पुत्रानुत्तमांश्च, चन्द्रो वै उत्तरे स्थितः ॥१४१॥

भा०टी०—जो चन्द्रमा घरने सामे आवे तो घरनो नाश करे, घरनी पाळल आवे तो राजभय, चोरभय अने अग्निभय आदि घोर भय उत्पन्न करे, जो घरनी दक्षिण दिशामां रह्यो होय तो धन, धान्य, पृथिवी अने आरोग्यनो करनारो थाय अने जो उत्तर-दिशामां रह्यो होय तो लक्ष्मी, स्त्री अने उत्तम पुत्रोनी प्राप्ति करावे.

चन्द्रनो वासो जाणवानी रीति—

सप्तोर्ध्वाः स्थापयेद्रेखाः, पुनर्भिन्नाश्च सप्तभिः ।

रेखा प्रोतानि साभिजिन्नक्षत्राण्यष्टविंशतिः ॥१४२॥

कृत्तिकां दद्यादैशान्यां, शेषक्षाणि प्रदक्षिणे ।

गृहक्षेत्रोक्तमृक्षं च, तत्र चन्द्रमुदीरयेत् ॥१४३॥

भा०टी०—७ रेखाओ ऊभी खेंचवी, पळी आडी ७ रेखाओ वडे भेदवी, आम ७ ऊभी अने ७ आडी रेखाओ खेंची सप्तशलाका चक्र बनाववुं, ए पळी ईशान खूगानी ऊभी रेखा उपर 'कृत्तिका' नक्षत्र लखवुं अने ते पळी बाकीनी रेखाओ उपर अनुक्रमे रोहिण्या-

दि शेष अभिजित सहित २८ नक्षत्रो लखवां, जाणे के रेखाओना छेडाओमां परोव्यां होय तेम लखीने जोवुं. निश्चित करेल घरनुं नक्षत्र ज्यां हशे त्यां चन्द्रनो वासो हशे. गृहनक्षत्र अने गृहारंभनुं दिन नक्षत्र ए बंने नक्षत्रो घरद्वारने सामे अथवा पाच्छ आवतां होय तो ते दिवसे घर बनाववानो कार्यारंभ कदापि न करवो. गृहनक्षत्र डावुं-जमणुं होय छतां दिननक्षत्र पण सामे-पाच्छ आवतुं होय तो ते दिवसे बनतां सुधी काम न करवुं. देवालयमां वास्तुचन्द्र नेम ज दिनचन्द्र सामे होय तो श्रेष्ठ गणाय छे.

व्यय-

नक्षत्रे वसुभिर्भक्ते, यच्छेषं व्ययमादिशेत् ।

अष्टौ व्ययास्तथा प्रोक्ता, आयेष्वष्टसु योजिताः ॥१४४॥

आयाश्च कथिताः पूर्वं, व्ययानां लक्षणं शृणु ।

एकैकस्यायसंस्थाने, व्ययोऽत्र त्रिविधः स्मृतः ॥१४५॥

समो व्ययः पिशाचश्च, राक्षसस्तु व्ययोऽधिकः ।

व्ययो न्यूनो यक्षश्चैव, धन-धान्यकरः स्मृतः ॥१४६॥

भा०टी०—नक्षत्रनी संख्याना अंकने ८ नो भाग देतां जे अंक शेष रहे तेतलामो व्यय कह्यो छे. कुल आठ व्ययो कहा छे, जे आठ आयोनी साथे योजायेला छे. आयोपूर्व कहा छे एटले व्ययना संबन्धमां हवे सांभल! एक एक आयनी साथे व्यय त्रण प्रकारनो बने छे, आय समान व्यय ते 'पिशाच व्यय' कहेवाय छे, आयथी अधिक व्यय होय ते 'राक्षस व्यय' कहेवाय छे अने आयथी ओछो व्यय ते 'यक्ष व्यय' गणाय छे, ए यक्षव्यय धनधान्यनो करनारो छे.

अनायव्ययकर्तार, आयहीना व्ययाऽधिकाः ।

व्ययाधिका विनश्यन्ति, अश्विरेणैव सांप्रतम् ॥१४७॥

भा०टी०—आय वगर खर्च करनारा, ओछी आवक ने घणो खर्च करनारा अने आवक वाला पण अधिक खर्च करनारा थोडा ज समयमां विनाश पामे छे, तेम वास्तुने त्रिषे पण जाणवुं.

ध्वजादिकेष्वष्टायेषु, अष्टौ शान्तादिका व्ययाः ।

प्रत्येकव्ययसंस्थाने, आयो न्यूनतरः स्मृतः ॥१४८॥

शान्तः पौरश्चप्रद्योतः, श्रियानन्दो मनोहरः ।

श्रीवत्सो विभवश्चैव, चिन्तात्मा च व्ययाः स्मृताः ॥१४९॥

आयस्थाने व्ययो योज्यो, ह्यऽप्रशस्तो व्ययोऽधिकः ।

व्ययो न्यूनस्तथा श्रेष्ठो, धन-धान्यकरः स्मृतः ॥१५०॥

भा०टी०—ध्वजादि ८ आयोनी साथे शान्तादिक ८ व्ययो आपना, पण प्रत्येक व्ययना स्थाने आयनुं स्थान अधिक होवुं शुभ कहुं छे. १ शान्त, २ पौर, ३ प्रद्योत, ४ श्रियानन्द, ५ मनोहर, ६ श्रीवत्स, ७ विभव अने ८ चिन्तात्मा; ए आठ व्ययो छे, ज्यां आयनी योजना होय त्यां व्ययनी योजना होय ज, पण आय करतां व्यय अधिक होय तो अशुभ जाणवो. आयना नंबरथी व्ययनो नंबर नीचेनो होय तो ते श्रेष्ठ अने धन-धान्यने कनारो जाणवो.

ध्वजे शुभः स्मृतो शान्तो, नित्यं कल्याणकारकः ।

भोगः पूजा बलिः शान्ति-नृत्यं गीतं सुरालये ॥१५१॥

धूमस्थाने यदा शान्तो, हेम-रत्नादि-संभवः ।

अग्न्युपजीविकानां च, धातु-द्रव्य-फलप्रदः ॥१५२॥

सिंहस्थाने च पौरश्चेत्, सिंहवच्च पराक्रमैः ।

निहन्ति रिपुसैन्यानि, ह्यात्मस्थाने महोत्सवाः ॥१५३॥

प्रद्योतः श्वानसंस्थाने, नित्यं भोगसुखाबहः ।

अनेकभोगशय्यादि-वेश्मादिहितकामदः ॥१५४॥

श्रियानन्दो वृषस्थाने, नित्यं श्री-सुखशान्तिदः ।
व्यवहारोपस्करं द्रव्यं, गुरुदेवार्चने रतिः ॥१५५॥
मनोहरः खरे योग्यः, सर्वमनोरथप्रदः ।
समस्तभोगयुक्तानां, तीर्थयात्राप्रकाशकः ॥१५६॥
श्रीवत्सो गजसंस्थाने, स्त्रिया क्रीडात्मनः स्मृतः ।
शृङ्गारभोगयुक्तानां, बलपुष्टिप्रदायकः ॥१५७॥
विभवो ध्वाङ्क्ष-संस्थाने, शिल्पिनां हितकामदः ।
सूत्र-शस्त्रादि-सम्पन्न-भोगशृङ्गारनिश्चलः ॥१५८॥

भा०टी०—‘ ध्वजआय ’ स्थाने ‘ शान्त ’ व्यय शुभ अने सदा कल्याणकारी कह्यो छे. जो देवालयमां ध्वजायना स्थाने शान्त व्यय होय तो त्यां नित्य भोग चढे, पूजा थाय, नैवेद्य चढे, गीत नृत्य थया करे अने शान्तिकारक थाय. ‘ धूमाय ’ स्थाने ‘ शान्तिव्यय ’ आपवामां आवे तो सुवर्ण-रत्नादिनी प्र मि थाय अने अग्निजीवीओने धातु-द्रव्यादिनो लाभ करावे. ‘ सिंह ’ ना स्थाने ‘ पौर ’ व्यय होय तो ते वास्तुमां सिंह जेवा पराक्रमी पुरुषो पाके, जे शत्रुओनी सेनाने मारी पोताना घरे महोत्सव प्रवर्तवि. ‘ श्वान ’ ना स्थाने ‘ प्रद्योत ’ व्यय होय तो नित्य भोग सुखने आपे, अनेक भोग शय्यादि आपनार अने वेष्मादिने हित इच्छित देनार थाय. ‘ वृष ’ ना स्थाने ‘ श्रियानन्द ’ व्यय होय तो लक्ष्मी, सुख अने शान्ति देनारो थाय, व्यापारोपयोगी सामानथी घर भर्यु रहे अने ते वास्तुमां रहेनारने गुरु-देवनी पूजामां प्रीति रहे. ‘ खर ’ आयस्थाने मनोहर ’ व्यय देवो योग्य छे कारण के ए सर्व मनोरथ पूनार छे, सर्व भोग संपन्न मनुष्योने एण ए तीर्थयात्रानी भावना करावे छे. ‘ गजआय ’ ना स्थाने ‘ श्रीवत्स ’ व्यय आवतां घरस्वामीने स्त्रीसुखनी प्राप्ति अने शृङ्गार भोगमां प्रवृत्तिमान् मनुष्योने बल अने पुष्टि आपे छे.

‘ઘ્વાંશ્વ’ના સ્થાને ‘વિભવ’ વ્યય હોય તો શિલ્પકર્મિઓને હિત
ઈચ્છિત આપે છે અને સૂત્ર-શસ્ત્રાદિના શિલ્પને જાણનારને ભોગ
સૃજારમાં નિશ્ચલ બનાવે છે.

સર્વેષુ શાન્તઆયેષુ, પ્રશસ્તઃ સર્વકામદઃ ।
ષટ્સુ સિંહાદિષુ શુભઃ, પૌરો ધૂમધ્વજૌ વિના ॥૧૫૧॥
ધ્વજે ધૂમે તથા સિંહે, પ્રયોતાદીન્ વિવર્જયેત્ ।
શેષેષુ તે પ્રશસ્તાશ્ચ, જેયાઃ શ્વાનાદિપશ્ચસુ ॥૧૬૦॥
સ્વરે વૃષે શ્રિયાનન્દો, ગજે ધ્વાક્ષે ચ શોભનઃ ।
મનોહરં ત્યજેત્ સોઽથ, સ્વરે ધ્વાક્ષે ગજે શુભઃ ॥૧૬૧॥
શ્રીવત્સશ્ચ ગજે ધ્વાક્ષે, વિભવો ધ્વાક્ષકે શુભઃ ।
વ્યયો ન્યૂનતરઃ શ્રેષ્ઠો, હ્યધિકશ્ચૈવ રાક્ષસઃ ॥૧૬૨॥
ચિન્તાત્મકં વ્યયં ચાપિ, આયેષ્વષ્ટસુ વર્જયેત્ ।
પિશાચકમાયસમં, ન કુર્યાંચ્છુભકર્મસુ ॥૧૬૩॥

भा०टी०—सर्व आय स्थानोमां ‘शान्त व्यय’ शुभ सर्व
कामित फल आपनार छे भने सिंहादि छ स्थानोमां ‘पौर’ शुभ
छे मात्र ध्वज अने धूम शुभ नथी. ध्वज धूम अने सिंहस्थानमां
प्रद्योतादि व्ययो वर्जवा, शेष श्वानादि ५ आयस्थानोमां प्रद्योतादि
शुभ गणोला छे. स्वर, वृष, गज अने ध्वाङ्क्ष स्थानोमां श्रियानन्द व्यय
श्रेष्ठ छे, पण मनोहरने टाळवो. मनोहर व्यय स्वर, गज अने घ्वांक्षमां
शुभ छे. श्रीवत्स व्यय गज अने घ्वांक्ष स्थानमां अने विभव केवल
घ्वांक्ष स्थाने शुभ छे. जेम व्यय आयथकी न्यून अने न्यूनतर होय
तेम श्रेष्ठ छे, अधिक व्यय राक्षस थाय छे. ‘चिन्तात्मक’ नामना
छेछ्हा व्ययने आठेय आयस्थानोमां वर्जवो अने आयसम व्यय जे
पिशाच थाय छे तेनो पण शुभकार्योमां त्याग करवो.

आयस्थाने व्ययप्रदानकोष्ठक-

आयाः	अष्टौ व्ययाः-
ध्वजे	१ शान्त.
धूमे	१ शान्त.
सिंहे	१ शान्त, २ पौर.
श्वाने	१ शान्त, २ पौर, ३ प्रद्योत.
वृषे	१ शान्त, २ पौर, ३ प्रद्योत, ४ श्रियानंद.
खरे	१ शान्त, २ पौर, ३ प्रद्योत, ४ श्रियानंद, ५ मनोहर.
गजे	१ शान्त, २ पौर, ३ प्रद्योत, ४ श्रियानंद, ५ मनोहर, ६ श्रीवत्स.
ध्वाङ्क्षे	१ शान्त, २ पौर, ३ प्रद्योत, ४ श्रियानंद, ५ मनोहर, ६ श्रीवत्स, ७ विभव ^१ .

अंशक-

ऋणु वत्स ! यथा चांशो, वास्तुवेदे त्रिधा स्मृतः ।

एकैकस्य क्रमस्थानं, शुभाशुभं प्रचक्षते । १६५॥

यदुक्तो मूलराशिश्च, आयार्थाय फलीकृतः ।

तत्र राशौ व्ययो मिश्रो, गृहनामाक्षराणि च ॥१६६॥

गुणैभक्ते च यच्छेष-मंशकं त्रिविधं विदुः ।

इन्द्रो यमश्च राजा च, त्रिभिर्नामभिरंशकाः ॥१६७॥

भा०टी०—हे अपराजित ! हवे वास्तुशास्त्रमां कहेल त्रण प्रकारना अंशकने सांभळ, अंशकोलु एक एक क्रमिक स्थान १ शुभ, २ अशुभ अने ३ शुभ; आ प्रमाणे कहेवाय छे. पूर्वे आयने माटे दैर्घ्यनो

१ आठमो चिन्तात्मक व्यय सर्ववर्जित छे.

વિસ્તારથી ગુણાકાર કરીને ક્ષેત્ર ફલાત્મક જે મૂલરાશિ કહ્યો છે. તેમાં વ્યયનો આંક મેઝવવો અને ઘર અથવા પ્રાસાદના નામાક્ષરોનો આંક મેઝવવો, પછી તે ક્ષેત્રફલની અંક રાશિને ૩ નો ભાગ દેવો, ભાગ લાગતાં જે શેષ રહે તે ત્રણ પૈકીનો એક અંશક જાણવો, ૧ શેષ રહે તો પહેલો ઇન્દ્રાંશક, ૨ શેષ રહે તો બીજો યમાંશક અને ૦ શેષ રહે તો ત્રીજો રાજાંશક જાણવો, ઇન્દ્ર, યમ અને રાજા; આ ત્રણ નામોવડે ત્રણ અંશકો ઓઢાયાય છે.

અંશકપ્રદાનસ્થાન—

પ્રાસાદ-પ્રતિમા-લિઙ્ગ, -જગતી-પીઠ-મળ્ડપે ।

વેદી-કુળ્ડ-શ્રુશ્ચુ ચૈવે-ન્દ્રો ધ્વજપતાકાદિકે ॥૧૬૮॥

ક્ષેત્રાધીશે ચ નાગેન્દ્રે, ગણાધ્યક્ષે ચ ભૈરવે ।

ગ્રહે માતૃગુણે દેવ્યાં, યમાંશકો ધુરાદિકે ॥૧૬૯॥

પુરપ્રાકાર-નગરં, -લેટે કૂટે ચ કર્બટે ।

હર્મ્ય-રાજવેશ્માદીનાં, શસ્ત્રો રાજાંશકો મતઃ ॥૧૭૦॥

ખા૦ટી૦—દેવમન્દિર, દેવપ્રતિમા, શિવલિઙ્ગ, જગતી, પીઠ, મળ્ડપ, વેદી, કુળ્ડ, શ્રુચા, અને ધ્વજાપતાકા આદિ; આ વધામાં ઇન્દ્રાંશક તેણે શ્રેષ્ઠ છે. ક્ષેત્રપાલ, નાગેન્દ્ર, ગણાધ્યક્ષ, ભૈરવ, ગ્રહો, માતૃકાઓ અને દેવી; આ વધાના સ્થાનોમાં અને ધુરા (રથ-ગાડા) આદિમાં યમાંશક લેવો. નગરનો કોટ, નગર, લેહું, છાવળી શાખા-નગર-મહેલ, રાજમહાલય આદિ સ્થાનોમાં રાજાંશક રાખવો શુભ છે.

સ્વર્ગાદિભોગયુક્તાનાં, નૃત્યગીતમહોત્સવે ।

પ્રવરે પાણ્ડિત્યે સ્વેન્દ્રાં-શકઃ પ્રાજ્ઞોત્તમૈર્મતઃ ॥૧૭૧॥

વણિક્કર્મવિધૌ ચૈવ, મઘમાંસાદિકોદ્ભવે ।

હૃત્યુક્તકર્મણિ ચૈવ, પ્રશસ્તઃ સ્યાદ્ યમાંશક ॥૧૭૨॥

गजाश्वरथक्रीडायां, यानजम्पानकादिके ।

स्वर्गतुल्यभोगभुक्ती, राजांशकः शुभो मतः ॥१७३॥

भा०टी०—स्वर्गादितुल्य भोगयुक्त गृहस्थानां घरो, गीत-
नृत्यादि उत्सव स्थानो अने श्रेष्ठ विद्याविलासनां स्थानोमां विद्वानोण
इन्द्रांशकने उत्तम मान्यो छे. मद्य-भांसादिनां विक्रयस्थानो अने एज
प्रकारना बीजा व्यवसायनां स्थानोमां ज यमांशकने शुभ मानेलो छे.
हाथी घोडा अने रथवडे क्रीडनाराओनां क्रीडास्थानो, यान-वाहनोने
विषे, अने स्वर्गोपम भोग भोगववानां स्थानोमां राजांशक शुभ
मानेल छे.

तारा-

गणयेत्स्वामिनक्षत्राद्, यावदृक्षं गृहस्य च ।

नवभिस्तु हरेद् भागं, शेषास्ताराः प्रकीर्तिताः ॥१७४॥

शान्ता मनोहरा क्रूरा, विजया कलिका तथा ।

पद्मिनी राक्षसी वीरा, ह्यानन्दा नवमी मता ॥१७५॥

शान्ता शान्तिकरी नित्यं, मनोल्हादा मनोहरा ।

क्रूरा विवर्जिता प्राज्ञैः, -श्रौराग्न्यादिभयंकरी ॥१७६॥

विजया जयकल्याणा, कलिका कलहप्रदा ।

पद्मिन्या प्राप्यते सौख्यं, महातीर्थफलं तथा ॥१७७॥

राक्षसी च तथा घोरा, निशायां भयदायिनी ।

वीरा सौम्या भोगदा च ह्यानन्दानन्दकारिणी ॥१७८॥

एवं नवविधाऽऽकारा, निराकारा हि तारकाः ।

क्षीणश्चन्द्रो यदा चारे, भवेत्तारा बलप्रदा ॥१७९॥

क्रूरा च कलिका चैव, राक्षसी तु तृतीयका ।

क्रूराद्या इति वै तिस्रो, वर्जयेत् शुभकर्मसु ॥१८०॥

શાન્તા મનોહરા ચૈવ, વિજયા પદ્મિની તથા ।

વીરાઽઽનન્દેતિ ષટ્તારા, નિત્યં કલ્યાણકારિકાઃ ॥૧૮૧॥

भा०टी०—गृहस्वामीना नक्षत्रथी गृहनक्षत्रपर्यंत गणीने नक्षत्र संख्याने ९ थी भागवी, शेष रहे ते गृहस्वामीनी तारा कही छे. शेष १ रहे तो शान्ता, २ रहे तो मनोहरा, ३ रहे तो क्रूरा, ४ रहे तो विजया, ५ रहे तो कलिका, ६ रहे तो पद्मिनी, ७ रहे तो राक्षसी, ८ रहे तो वीरा अने ९ रहे तो नवमी आनन्दा नामनी तारा जाणवी. १ 'शान्ता' नित्य शान्ति करनारी, २ 'मनोहरा' मनने प्रसन्नता देनारी छे. ३ 'क्रूरा' चौर अग्नि आदिनो भय करनारी होइ विद्वानोष वर्जित करी छे. ४ 'विजया' जय कल्याण करनारी, ५ 'कलिका' क्लेश देनारी, ६ 'पद्मिनी' सुख अने महान तीर्थना फलने देनारी छे. ७ 'राक्षसी' तारा नाम प्रमाणे ज घोर राक्षसी छे अने रात्रिना सनयमां भय देनारी छे, ८ 'वीरा' सौम्य अने भोग सुख देनारी छे, ज्यारे ९ 'आनन्दा' आनन्द करावनारी छे. आम नव प्रकारना आकारनी ताराओ कही, ज्यारे चन्द्रमा क्षीणबली होय त्यारे तारा बल देनारी होय छे. क्रूरा कलिका अने राक्षसी आ त्रण ताराओ शुभ कामोमां वर्जवी जोइये. शान्ता, मनोहरा, विजया, पद्मिनी, वीरा अने आनन्दा; आ ६ ताराओ नित्य कल्याण करनारी छे.

अधिपति-

करराशिहतोच्छ्राये, भागैर्हृते ततोऽष्टभिः ।

अधिपतिर्भवेच्छेषं, नाम्ना च सदृशं फलम् ॥१८२॥

वितथः कनकश्चैव, धूम्रकोऽवितथस्वरः ।

बिडालविजयौ चैव, दान्तः कान्तस्तथा मृगः ॥१८३॥

विषमायो भवेच्छस्त, आयहीना व्यथाः शुभाः।

आधिपत्यं समं शान्तं, शुभदं सर्वदा नृणाम् ॥१८४॥

भा०टी०—क्षेत्रफलनी राशिवडे गुणेल गृहना उदयने ८ भागे भांगवाथी जे शेष रहे ते घरनो अधिपति जाणवो, अधिपति नाम प्रमाणे फल देनारो होय छे.

१ वधे तो वितथ^१, २ वधे तो कनक, ३ वधे तो धूम्रक, ४ वधे तो अवितथस्वर, ५ वधे तो बिडाल, ६ वधे तो विजय, ७ वधे तो दान्तमृग अने ० वधे तो कान्तमृग नामनो अधिपति जाणवो.

विषम आय शुभ होय, आयथी हीन व्यय होय ते शुभ होय अने अधिपतिपणुं सम संख्यावाळं होय ते पण मनुष्योने माटे सदा शुभदायक होय छे.

मतान्तरे अधिपति-

यद्वाऽऽयव्ययसंयोगे, यदैक्यं वसुभिर्भजेत् ।

शेषस्त्वधिपतिः केचिद्, विषमः स भयावहः ॥१८५॥

भा०टी०—अथवा आय तथा व्ययना आंकने जोडी आटे भागवाथी जे शेष रहे ते अधिपति, एम केटलाक आचार्यों कहे छे. अधिपति विषम होय तो ते भयकारक छे, अर्थात् पहेलो, त्रीजो, पांचमो अने सातमो ए ४ अधिपतिओ अशुभ छे, ज्यारे बीजो, चोथो, छठो अने आठमो ए ४ शुभ होय छे.

१ ग्रन्थान्तरमां विकृत नाम छे. २ ग्रन्थान्तरमां कणक नाम छे. ३ ग्रन्थान्तरे धूम्रद नाम छे. ४ ग्रन्थान्तरमां दुन्दुभि नाम छे. ५ ग्रन्थान्तरमां दान्त तथा कान्त नाम छे.

प्रासाद-अधिपति ज्ञानार्थक कोष्टक

१ वितथ	२ कनक	गृहोदयांगुलानि—									
३ धूम्रक	४ अवितथ स्वर	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४		
५ विडाल	६ विजय	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६		
७ दान्तमृग	८ कान्त मृग	१	२	३	४	५	६	७	८		
क्षेत्रफलंगुलानि	१७	९	१	१	२	३	४	५	६	७	८
	१८	१०	२	२	४	६	८	२	४	६	८
	१९	११	३	३	६	१	४	७	२	५	८
	२०	१२	४	४	८	४	८	४	८	४	८
	२१	१३	५	५	२	७	४	१	६	३	८
	२२	१४	६	६	४	२	८	६	४	२	८
	२३	१५	७	७	६	५	४	३	२	१	८
	२४	१६	८	८	८	८	८	८	८	८	८

वास्तु जन्मतिथि-

आयर्क्षव्ययतारांशा, -धिपान् क्षेत्रफले क्षिपेत् ।

अर्कैर्भक्ते भवेत्लग्न, -मथ लग्नेऽष्टसंगुणे ॥१८६॥

हृते शरैकैः शेषं तु, तिथिर्नामसमं फलम् ।

तिथौ नवमे वारः स्या-दर्काद्यो मुनिभिर्हृते ॥१८७॥

भा०टी०—आय नक्षत्र, व्यय अंशक अने अधिपति; ए बधानो आंक क्षेत्रफलमां जोडी १२नो भाग आपतां शेष रहे ते लग्न, ते लग्नना आंकने ८ थी गुणी १५नो भाग देवो, शेष रहे ते प्रतिप-

दादि वास्तुनी जन्मतिथि जाणवी, आ तिथिओनां नामसमान फल होय छे, वास्तुमां बीज, आठम, बारस वजित छे, तिथिना आंकने ९ थी गुणी ने ७ नो भाग देवाथी वास्तुनो सूर्य आदि जन्मवार आवे छे.

शुभ अङ्गोनी अधिकतार्थी वास्तुनी स्थिरता-
आय-व्ययांश-नक्षत्र, -तारा-चन्द्र-मैत्र्यादिकम् ।

प्रीतिरायुश्च मृत्युश्च, चिरं नन्दति चेच्छुभाः ॥१८८॥

भा०टी०—आय, व्यय, अंशक, नक्षत्र, तारा, चन्द्र, राशि-
मैत्री, ग्रहमैत्री, आयुष्य अने मृत्युकारी तत्त्व; आ सर्व वस्तुओ
शुभ होय तो ते घर घणा काल पर्यन्त स्थिर रहे छे.

केटलां अङ्गो शुभ होय तो सारां-

त्रिभिः श्रेष्ठैस्तु श्रेष्ठं स्यात्, पञ्चभिश्चोत्तमोत्तमम् ।

सप्तभिः सर्वकल्याणं, नवभिर्जयसंपदः ॥१८९॥

भा०टी०—३ श्रेष्ठ अंगो बडे वास्तु श्रेष्ठ गणाय छे, ५ श्रेष्ठ
अंगो होय तो उत्तमोत्तम, ७ उत्तम अंगो बडे सर्वने कल्याणकारक
अने ९ उत्तम अंगोबालुं वास्तु होय तो तेना स्वामीने जय अने
संपत्ति आपनारुं धाय छे.

वास्तुमां शुं शुं न लेबुं ?-

न षट्काष्टकं त्रिकोणं, द्वादशी द्वितीयाष्टमी ।

न चाष्टद्वादशचन्द्र-स्तारा त्रि-पञ्च-सप्तमी ॥१९०॥

न द्वितीयांशकं कुर्याद्, न वा चाष्टममायकम् ।

न चन्द्रोऽग्रे च पृष्ठौ च, नववास्तुककर्मणि ॥१९१॥

भा०टी०—नविन वास्तु निर्माण कार्यभां षडष्टक तथा नव-
पंचम राशिफूट न लेबुं; बीज, आठम, बारस तिथि न लेवी; आठमो,

બારમો ચન્દ્ર ન લેવો; ત્રીજી, પાંચમી, સાતમી તારા ન લેવી; બીજો અંશક ન લેવો; આઠમો આય ન લેવો અને સામો અને પાછલ ચન્દ્રમા ન લેવો.

વાસ્તુનું જીવન અને વિનાશ—

અષ્ટમિશ્ચ હતે ક્ષેત્રે, ફલે ષષ્ટિવિભાજિતે ।

લબ્ધે દશગુણે જીવો, મૃત્યુર્વેં મૂતભાજિતે ॥૧૯૨॥

પૃથિવ્યાપસ્તથા તેજો, વાયુરાકાશમેવ ચ ।

પશ્ચતત્ત્વાનિ પ્રોક્તાનિ, વિભક્તાનિ સ્યુરન્તકે ॥૧૯૩॥

અપ્સુ ચાદ્મિર્ભવેન્મૃત્યુ, -સ્તેજસ્યગ્નિબલં ભવેત્ ।

વાયુર્વાયુકરો દેહે, ત્વાકાશે શૂન્યતા ભવેત્ ॥૧૯૪॥

ધન-ધાન્યેષુ નષ્ટેષુ, દેહઃ પતતિ જર્જરઃ ।

ઈત્યં મૃત્યુઃ પ્રભવેદ્ધિ, પશ્ચતત્ત્વવિનાશતઃ ॥૧૯૫॥

માઠી—ક્ષેત્રફલને ૮ ગુણું કરી ૬૦ થી ભાગવું, લબ્ધ ફલને ૧૦ ગુણું કરતાં જે આવે તે વાસ્તુના આયુષ્યનો આંક જાણવો, તે જીવિતના અંકને ૫ નો ભાગ દેતાં જે શેષ રહે તેટલામા મૂતથી તે વાસ્તુ નાશ થશે એમ જાણવું. ૧ રહે તો પૃથ્વી, ૨ રહે તો પાણી, ૩ રહે તો અગ્નિ, ૪ રહે તો વાયુ અને ૫ અર્થાત્ ૦ રહે તો આકાશતત્ત્વના કોષ વડે તે વાસ્તુનો નાશ જાણવો.

અથવા જેમ ધન ધાન્યના નાશથી શરીર જર્જરિત થઈને પડી જાય છે, એજ રીતે પાંચ તત્ત્વના વિનાશથી વાસ્તુ જીર્ણ થઈને પડી જાય છે.

(૪) પ્રાસાદાંગ નિરૂપણ—

જગતી—

મૂલ પ્રાસાદ, એના મંડપો અને આ વધાની આગલ પાછલ ઢાંચી જમણી કોટની અંદરની તમામ ભૂમિને શિલ્પશાસ્ત્રકારોએ 'જગતી'ના નામથી ઓલવાયી છે.

जगतीनो आकार अने परिमाण—

आ जगतीनो छंद (आकार) एनी लंबाइ-पहोलाइ अने एनी उंचाइनुं शास्त्रमां विस्तृत वर्णन थयेहुं छे. अपराजितपृच्छामां कहुं छे के.—

जगत्या लक्षणं वत्स, शृणु वक्ष्यामि सांप्रतम् ।

सा चाऽमूढदिशाभागा, मनोज्ञा सर्वतः प्लवा ॥१९६॥

चतुरस्रा तथायता, वृत्ता वृत्तायता तथा ।

अष्टास्रा च तथा कार्या, प्रासादस्यानुरूपतः ॥१९७॥

ज्येष्ठा कनिष्ठप्रासादे, मध्यमे मध्यसा तथा ।

ज्येष्ठे कनिष्ठा व्याख्याता, जगती मानसंख्यया ॥१९८॥

कनिष्ठे भ्रमणी चैका, मध्यमे भ्रमणी-द्वयम् ।

ज्येष्ठे तिस्रो भ्रमण्यश्च, सांगोपांगिकसंख्यया ॥१९९॥

प्रासादपृथुमानेन, द्विगुणा चोत्तमा तथा ।

मध्यमा चतुर्गुणा या,ऽधमा पञ्चगुणोच्यते ॥२००॥

भा०टी०—(विश्वकर्माजी कहे छे) हे पुत्र ! हवे जगतीनुं लक्षण कहुं छुं, ते तुं सांभल. जगती अदिग्मूढ, मनोहर अने सर्व दिशा तरफ जलवहनवाली जोइए; चोरस, लंबचोरस, गोल, लंबगोल अथवा अष्टास्र; जेवा छन्दनो प्रासाद होय तेवा ज छन्दनी तेने अनुरूप जगतो करवी, कनिष्ठ प्रासादने ज्येष्ठ, मध्यम प्रासादने मध्यम तने ज्येष्ठ प्रासादने कनिष्ठमाननी जगती बनाववी.

कनिष्ठ प्रासादनी जगतीमां एक, मध्यम प्रासादनी जगतीमां बे अने ज्येष्ठमानना प्रासादनी जगतीमां सांगोपांग त्रण भ्रमणीओ करवी.

उत्तमानना प्रासादने तेना विस्तारथी बे गुणी, मध्यमानना प्रासादने चार गुणी अने कनिष्ठमानना प्रासादने पांच गुणी जगती

રાલ્લવી; કનિષ્ઠાદિ પ્રાસાદેના યોગે આ જગતીઓ પળ ઉત્તમા, મધ્યમા અને કનિષ્ઠા; ં નામોથી ઓલ્લલાય છે.

ઠક્કુર ફેરુના મતે જગતીનું માન—

જગઈ પાસાચંતરિ, રસગુણા પચ્છા નવગુણા પુરઓ ।

દાહિણવામે તિઉણા, હઅ ંઘિયં ચિત્તમજ્જાયં ॥૨૦૧॥

ંાંટી૦—જગતિ પ્રાસાદને આંતરે પાછલ છ ગુણી, આગલ નવગુણી, અને ઢાલ્લી-જમણી તરફ ત્રણ-ત્રણગુણી રાલ્લવી. આ પ્રમાણે પ્રાસાદંમુમિની મર્યાદા પ્રથમ નિશ્ચિત કરીને કાર્યારંઘ કરલો.

જગતીની ંચાઈ—

ંકહસ્તે તુ પ્રાસાદે, જગત્યા ંચ્છ્યઃ સમઃ ।

દ્વિહસ્તે હસ્તઃ સાર્ઘસ્તુ, ત્રિહસ્તે તુ દ્વિહસ્તકઃ ॥૨૦૨॥

સાર્ઘદ્વિકર ંત્સેઘઃ, પ્રાસાદે લેદહસ્તકે ।

ચતુર્હસ્તસ્યોપરિષ્ટાદ્, યાલ્લદ્ દ્વાદશહસ્તકમ્ ॥૨૦૩॥

પ્રાસાદસ્યાર્ઘમાનેન, ત્રિંાગેન તતઃ પરમ્ ।

ચતુર્લિશતિહસ્તાન્તં, કારયેત્તદ્વિચક્ષણઃ ॥૨૦૪॥

પાદેનૈલ્લોચ્છ્યં તાલ્લદ્, યાલ્લત્પચ્ચાશહસ્તકમ્ ।

ંવમન્યશ્ચ કર્તલ્લ્યો, જગતીનાં સમુચ્છ્યઃ ॥૨૦૫॥

ંાંટી૦—ંક હાથના પ્રાસાદની જગતી ંક હાથ ંચી કરલ્લી, લે હાથના પ્રાસાદની દોઢ હાથ, ત્રણ હાથના પ્રાસાદની લે હાથ અને ચાર હાથના પ્રાસાદની જગતી અઢી હાથ ંચી કરલ્લી. ચાર હાથ પછીથી લાર હાથ સુધીના કોઈ પળ માનનો પ્રાસાદ હોલ તો પ્રાસાદના અર્ઘમાનની ંચાઈલાલી જગતી કરલ્લી, પાંચ હાથે અઢી, છ હાથે ત્રણ, સાત હાથે સાઢી ત્રણ, આઠ હાથે ચાર, નલ્લહાથે સાઢીચાર, દશહાથે પાંચ, અલ્લ્યારહાથે સાઢીપાંચ, અને લારહાથના પ્રાસાદે જગતી છ હાથની ંચાઈમાં કરલ્લી.

१०८ भागनो मंडोवरो-०

ते पछी बुद्धिमान शीलपीए १३ थी २४ हाथ पर्यन्त ऊंचा प्रासादनी जगती त्रीजाभागे अने २५ थी ५० हाथपर्यन्तनी ऊंचाईवाला प्रासादनी जगती प्रासादमानथी चोथा भागनी ऊंचाईए करवी, उक्त प्रकारे तथा एथी जुदा प्रकारनी पण जगतीओनी ऊंचाई करी शक्याय छे.

जगतीनी ऊंचाईनो बीजो प्रकार—

प्रासादार्धाऽर्कहस्तान्ते, त्र्यंशा द्वाविंशतिकरे ।

द्वात्रिंशदन्ते तुर्यांशा, भूतांशा च शतार्धके ॥२०६॥

भा०टी०—१ थी १२ हाथ सुधीना मानना प्रासादोनी जगती प्रासादना विस्तारथी अर्धमाननी, १३ थी २२ हाथ सुधीना प्रासादोनी प्रासादना त्रीजा भागनी, २३ थी ३२ हाथ सुधीना प्रासादोनी प्रासादना चोथा भागनी अने ३३ थी ५० हाथ सुधीना प्रासादोनी जगती प्रासादमानना पांचमा भाग जेटली ऊंची करवी, १२ हाथ सुधी प्रतिहाथे १२ आंगलनी, २२ हाथ सुधी ८ आंगलनी, ३२ हाथ सुधी ६ आंगलनी अने ५० हाथ सुधी षोढा पांच आंगलनी हाथप्रति वृद्धि करवी.

खरशिला—

जगती जेटली ऊंची लेवी होय तेटली लईने तेनो उपरनो भाग पत्थरो वडें अथवा इंट चुना वगेरैथी अस्यंत दृढ बनाववो, आ उपरितन भागने अतिशय कठोर होवाना कारणे शिल्पशास्त्रकारोए 'खरशिला' ए नामथी वर्णव्यो छे, ए संबन्धमां प्रासाद मंडनकार लखे छे—

अतिस्थूला सुविस्तीर्णा, प्रासादधारिणी शिला ।

अतीव सुदृढा कार्या, इष्टका-चूर्ण-वारिभिः ॥२०७॥

આંટી.—પ્રાસાદને ધારણ કરનારી સ્વરશિલા ઘણી જાડી અને વિસ્તારવાલી કરવી, ઇંટ ચૂના અને જલ વડે એને અત્યંત મજબૂત બનાવવી.

આ સ્વરશિલાનું દલ પ્રાસાદના પ્રમાણમાં ઓછુંવત્તુ જાડું કરવું, સામાન્ય રીતે ૧૬ આંગલની જાડાઈમાં આ શિલા કરવી. પણ પ્રાસાદ વહુજ ન્હાનો હોય તો ઘથીયે ઓછી જાડી કરવી, જેમકે પ્રાસાદ ૧ હાથનો હોય તો સ્વરશિલા ૬ આંગલ જાડી કરવી, પણ તે પછી ૫ હાથ પાછલ ૧-૧ આંગલની વૃદ્ધિ કરવી, અર્થાત્ ૨ હાથનો હોય તો ૭ આંગલ, ૩ હાથે ૮ આંગલ, ૪ હાથે ૯ આંગલ અને ૫ હાથે ૧૦ આંગલ જેટલી સ્વરશિલા જાડી કરવી, ૬ થી ૯ હાથ સુધીના પ્રાસાદની સ્વરશિલાની જાડાઈમાં હાથ પ્રતિ અર્ધ અર્ધ આંગલનો વધારો કરવો, ૧૦ થી ૨૦ હાથ સુધી પાવ આંગલની અને ૨૧ થી ૫૦ હાથ સુધીમાં હાથ દીઠ ૧-૧ જવની (શિલાના પિંડમાં) વૃદ્ધિ કરવી. આ પ્રમાણે કરતાં ૫૦ હાથના પ્રાસાદની સ્વરશિલા ૨૦ આંગલ જાડી થશે.

જગતીની આસપાસના પ્રદેશની ભૂમિ જો નીચી હોય અને અવિધ્યમાં જલભયની સંભાવના હોય તો જગતી ઉપર મૂલપ્રાસાદના સ્થાને પ્રથમ ઉપપીઠ ચળાવવું.

ઉપપીઠનો વિસ્તાર અને છન્દ તે પીઠના જેવો જ કરાવવો, પણ એનો ઉંચાઈનો નિયમ નથો, જેટલી આવશ્યકતા હોય તેટલી ઉંચાઈમાં કરવી; ઉપપીઠ હોય તો તેની ઉપર અને તેના અભાવમાં જગતી ઉપર પ્રાસાદના મૂલસ્થાને સૂત્ર છાંટીને ૯ અથવા ૫, જેટલી શિલાઓ પ્રતિષ્ઠિત કરવી હોય તેટલા સ્વાહાઓ પ્રથમથી જ રાખવા, નિધિકલશો રાખવા માટે સ્વાહાઓમાં વીજા ન્હાના સ્વાહાઓ રાખવા, અથવા નીચે ન્હાના સ્વાહાવાલી ઉપશિલાઓ ગોઠવવી, શુભ મુહૂર્તે નિધિકલશો અને શિલાઓની પ્રતિષ્ઠા કરીને ઉપપીઠ અથવા જગતી

ઉપરના તે સ્વાહાઓ ઘરાઘર કરી દેવા અને પછી પ્રાસાદનું ચળતર શરુ કરતાં પ્રથમ ખીટનો થર ચળવો.

ખીટ—

પીઠ નીચે અને સ્વરશિલા ઉપર વચ્ચે જે થર આવે છે તેને શિલ્પશાસ્ત્રો 'ખિટ્ટ' ઇ નામથી ઉલ્લેખે છે. ખીટનો પિંડ (જાડાઈ) પ્રાસાદના માનાનુસારે ઓછોવત્તો હોય છે. શાસ્ત્ર કહે છે—

શિલોપરિ ભવેદ્ ખિટ્ટ, -મેકહસ્તે યુગાઙ્ગુલા ।

અર્ધાઙ્ગુલા ભવેદ્ , વૃદ્ધિર્યાવદ્દસ્તશતાર્ધકમ્ ॥૨૦૮॥

અઙ્ગુલેનાંશહીનેન, અર્ધેનાઽર્ધેન ચ ક્રમાત્ ।

પશ્ચદિક્-વિંશતિર્યાવચ્છતાર્ધ ચ વિવર્ધયેત્ ॥૨૦૯॥

ખા૦ટી૦—સ્વરશિલા ઉપર ખીટ હોય છે, કે જેની જાડાઈ એક હાથના પ્રાસાદે ૪ આંગલની હોય છે અને તે પછી ૫૦ હાથ સુધી હાથ પ્રતિ અર્ધ આંગલની વૃદ્ધિ ઇ પિંડ રચાય છે, વીજી રીતે ૧ હાથથી ૫ હાથ સુધી એક આંગલની, ૬ થી ૧૦ સુધી ષોણાઆંગલની ૧૧ થી ૨૦ સુધી અર્ધ આંગલની અને ૨૧ થી ૫૦ સુધી પાવ આંગલની વૃદ્ધિ ઇ ખીટનો પિંડ રાખવો. ખીટ એક વે અને ત્રણ પર્યન્ત ઠોડ શકે છે, પહેલાથી વીજું અને વીજાથી ત્રીજું ખીટ ઉંચાઈમાં ઓછું કરવું, તેમજ જે ખીટની જેટલી ઉંચાઈ હોય તેના ચોથા ભાગ જેટલો તેનો નિર્ગમ (નિકાલો) કરવો, ખીટ ઉપર પીઠનું ચળતર કરવું.

પીઠ—

પીઠ અનેક પ્રકારનાં હોય છે. પ્રાસાદના માનને અનુસારે પીઠની માંડળી કરાય છે, પ્રાસાદ મ્હોટા માનનો હોય તો તેની ઉંચાઈ અધિક હોવાથી પીઠના સામાન્ય થરો ઉપર ગજથર-અશ્વથર આદિ વીજા થરો દેહને તેને મહાપીઠ બનાવાય છે, પણ પ્રાસાદમાન કનિષ્ઠ હોય અને થોડા સ્વર્ચમાં કામ પતાવવું હોય તો પીઠ પણ પ્રળ અથવા પાંચ સાધારણ થરોવાલું બનાવાય છે. શાસ્ત્રમાં કહ્યું છે કે—

गजाश्वनरपीठाद्य-मल्पद्रव्ये न संभवेत् ।

जाड्यकुम्भश्च कर्णाली, प्रशस्ता सर्वकामदा ॥२१०॥

जाड्यकुम्भः कर्णकश्च, ऊर्ध्वं वै शीर्षपत्रिका ।

शिरःपालो विना त्वेवं, कर्णपीठं तु कारयेत् ॥२११॥

भा०टी०—थोडा धनमां गजथर अश्वथर नरथरादि रूपवालुं पीठ बनवुं संभवित नथी, माटे एवी स्थितिमां जाडुंओ अने कणी पण तेवा अल्प द्रव्यवाला भक्तोनी इच्छा पूर्ण करी शके छे, अर्थात् जाडुंओ अने कणीना थरो वडे पण पीठ बनावी शकाय छे. जाडुंओ कणी अने उपर ग्रासपट्टी; आ थरोवालुं अथवा केवल जाडुंओ—कणीथो बनेलुं पीठ 'कर्णपीठ' नामथी ओलखाय छे.

पीठनो उदय—

पीठनो उदय प्रासादना मान प्रमाणे अधिक ओलो होय छे, कनिष्ठ मानना प्रासादे पीठनो उदय तेना प्रमाणमां अधिक होय छे, पण जेमजेम प्रासादनुं मान अधिक होय तेम तेम पीठनुं मान ओलुं थतुं जाय छे. अपराजित पृच्छामां कह्यं छे के—

एकहस्ते तु प्रासादे, पीठं वै द्वादशाङ्गुलम् ।

द्वयष्टाङ्गुलं द्विहस्ते च, त्रिहस्तेऽष्टादशाङ्गुलम् ॥२१२॥

अर्धं पादं त्रिभागं वा, त्रिविधं परिकल्पयेत् ।

अंशोनाधेन पादेन, चतुर्हस्ते सुरालये ॥ २१३ ॥

पादः पीठोच्छ्रयः कार्यः, प्रासादे पञ्चहस्तके ।

पञ्चोर्ध्वं दशपर्यन्तं, रसांशो हस्तवृद्धये ॥ २१४ ॥

ततो हस्ते चाष्टमांशो, वृद्धिः स्याद् विंशत्यवधि ।

षट्त्रिंशदन्ता वृद्धिस्तु, हस्ते वै द्वादशांशिका ॥२१५॥

चतुर्विंशत्यंशिका त, -दूर्ध्वं यावच्छतार्धकम् ।

मध्ये न्यूनेऽधिके पञ्च-मांशे ज्येष्ठं कनिष्ठकम् ॥२१६॥

त्रिज्येष्ठमिति च ख्यातं, त्रिमध्यं त्रिकनिष्ठकम् ।
तस्याभिधानं वक्ष्येह—सुदितं नवधोच्छ्रयात् ॥२१७॥

भा०टी०—१ हाथना प्रासादने पीठ १२ आंगलनुं करवुं, २ हाथे १६ अने ३ हाथे १८ आंगलनुं पीठ करवुं, अर्थात् आ त्रणे प्रासादोने अनुक्रमे पोताना अर्धा भागे, त्रीजा भागे अने चोथा भागे पीठ करवुं, ४ हाथना प्रासादने एना मानथी एक तृतीयांश हीन, अर्धमाने, अथवा चोथा भागे उंचुं पीठ करवुं; पांच हाथना प्रासादने तेना चोथा भागे अर्थात् ३० आंगलनुं पीठ करवुं, ६ थी १० हाथ सुधीना प्रासादोना पीठोमां ४ आंगलनी वृद्धि करवी, ११ थी २० हाथ सुधी प्रतिहस्ते ३नी, २१ थी ३६ हाथ सुधी प्रतिहस्ते २नी अने ३७थी ५० हाथ सुधी प्रतिहस्ते १ आंगलनी पीठना उदयमां वृद्धि करवी.

पीठनुं उक्त मध्यमान छे, आमांथी पोतानो पञ्चमांश ओछो करवाथी ज्येष्ठ (कनिष्ठ) अने उमेरवाथो कनिष्ठ (ज्येष्ठ) पीठ बने छे.

उपर्युक्त ज्येष्ठ, मध्यम अने कनिष्ठ; आ प्रत्येकना ज्येष्ठज्येष्ठ, ज्येष्ठमध्यम अने ज्येष्ठकनिष्ठ; मध्यमज्येष्ठ, मध्यममध्यम अने मध्यम-कनिष्ठ तथा कनिष्ठज्येष्ठ, कनिष्ठमध्यम अने कनिष्ठकनिष्ठ; आम ३-३ मेद पाडतां उदय ९ प्रकारनो थाय छे. अने उदयना मेदे पीठ पण ९ प्रकारनां बने छे, जेनां नामो आ प्रमाणे छे—

शुभदं सर्वतोभद्रं, पद्मकं च वसुन्धरम् ।

सिंहपोठं तथा व्योम, गरुडं हंसमेव च ॥ २१८ ॥

वृषभं यत् भवेत्पीठं, मेरोराधारकारणम् ।

पीठमानमिदं ख्यातं, प्रासादे आदिस्मिया ॥२१९॥

भा०टी०—१ शुभदपीठ, २ सर्वतोभद्रपीठ, ३ पद्मपीठ, ४ वसुन्धरपीठ, ५ सिंहपीठ, ६ व्योमपीठ, ७ गरुडपीठ, ८ हंसपीठ

અને ૯ શૃષભપીઠ; આ છેલ્લું શૃષભપીઠ મેરુ પ્રાસાદને હોય છે, આમ પ્રાસાદની આદિ સીમા, ઇટલે તેના વિસ્તારને અનુસારે પીઠોનું માન કહ્યું.

નવપીઠોનાં નામો અને અંગુલાત્મક માન—

૧ હાથના પ્રાસાદના જ્યેષ્ઠજ્યેષ્ઠ પીઠનું નામ 'શુભદ' અને માન ૧૨ આંગલનું.

૨ હાથના પ્રાસાદના જ્યેષ્ઠમધ્યમ પીઠનું નામ 'સર્વતોભદ્ર' અને માન ૧૬ આંગલનું.

૩ હાથના પ્રાસાદના જ્યેષ્ઠકનિષ્ઠ પીઠનું નામ 'પદ્મપીઠ' અને માન ૧૮ આંગલનું.

૪ હાથના પ્રાસાદના મધ્યમજ્યેષ્ઠ પીઠનું નામ 'વસુન્ધર' અને માન ૨૪ આંગલનું.

૫ હાથના પ્રાસાદના મધ્યમમધ્યમ પીઠનું નામ 'સિંહપીઠ' અને માન ૩૦ આંગલનું.

૬ થી ૧૦ હાથના પ્રાસાદોના મધ્યમકનિષ્ઠ પીઠનું નામ 'ત્ર્યોમપીઠ' અને માન ૬ હાથે ૩૪, ૭ હાથે ૩૮, ૮ હાથે ૪૨, ૯ હાથે ૪૬ અને ૧૦ હાથે ૫૦ આંગલનું હોય છે.

૧૧ થી ૨૦ હાથ સુધીના પ્રાસાદોના કનિષ્ઠજ્યેષ્ઠ પીઠનું નામ 'ગરુડપીઠ' અને માન ૧૧ હાથે ૫૩, ૧૨ હાથે ૫૬, ૧૩ હાથે ૫૯, ૧૪ હાથે ૬૨, ૧૫ હાથે ૬૫, ૧૬ હાથે ૬૮, ૧૭ હાથે ૭૧, ૧૮ હાથે ૭૪, ૧૯ હાથે ૭૭, અને ૨૦ હાથે ૮૦ આંગલનું રાશ્વનું.

૨૧ થી ૩૬ હાથના પ્રાસાદોના કનિષ્ઠમધ્યમ પીઠનું નામ 'હંસપીઠ' છે અને માન ૨૧ હાથે ૮૨, ૨૨ હાથે ૮૪, ૨૩ હાથે ૮૬, ૨૪ હાથે ૮૮, ૨૫ હાથે ૯૦, ૨૬ હાથે ૯૨, ૨૭ હાથે ૯૪, ૨૮ હાથે ૯૬, ૨૯ હાથે ૯૮, ૩૦ હાથે ૧૦૦, ૩૧ હાથે ૧૦૨,

३२ हाथे १०४, ३३ हाथे १०६, ३४ हाथे १०८, ३५ हाथे ११०, अने ३६ हाथना प्रासादे ११२ आंगलनी ऊंचाईनुं पीठ जाणवुं.

३७ थी ५० हाथ सुधीना प्रासादोना कनिष्ठकनिष्ठ पीठनुं नाम 'वृषभपीठ' अने मान ३७ हाथे ११३, ३८ हाथे ११४, ३९ हाथे ११५, ४० हाथे ११६, ४१ हाथे ११७, ४२ हाथे ११८, ४३ हाथे ११९, ४४ हाथे १२०, ४५ हाथे १२१, ४६ हाथे १२२, ४७ हाथे १२३, ४८ हाथे १२४, ४९ हाथे १२५ अने ५० हाथना प्रासादे पीठमान १२६ आंगलनुं होय.

लतिनादि ५ प्रासादोनां पीठोनो उदय-

अपराजित पृच्छा—

विभक्ते चैकविंशत्या, प्रासादस्य समुच्छ्रये ।

पीठानि पञ्च पञ्चादे-नैवान्तं भागवृद्धितः ॥२२०॥

लतिने वाथ सान्धारे, नागरे मिश्रके पि वा ।

विमाने पि समाख्यातः, पीठमानसमुच्छ्रयः ॥२२१॥

भा०टी०—प्रासादना उदयना २१ भाग करवा, ते एकविंशिया ५ भागथी ९ भाग सुधीना उदयवालां अनुक्रमे लतिन आदि ५ प्रासादोने माटे ५ पीठो करवां, लतिने ५ भाग, सान्धारने ६ भाग, नागरने ७ भाग, मिश्रकने ८ भाग अने विमानने ९ भाग जेटली पीठनो उदय करवो.

पीठोदयना भागो—

त्रिपञ्चाशत्समुत्सेवे, द्वाविंशत्यंशनिर्गमे ।

नवांशो जाडयकुम्भश्च, सप्तांशं कर्णकं भवेत् ॥२२२॥

सान्तरं छजिका युक्ता, सप्तांशा ग्रासपदि(ट्टि)का ।

सूर्यदिग्बसुभागाश्च, गजवाजिनराः क्रमात् ॥२२३॥

वाजिस्थानेऽथवा कार्यं, स्वस्वदेवस्य वाहनम् ।

भा०टी०—उदयमां ५३ भाग अने निर्गममां २२ भागवाला पीठमां जाडंबो ९ भागनो, अंत्रोट सहित कणी ७ भागनी, छाजली सहित ग्रासपट्टी ७ भागनी, गजथर १२ भागनो, अश्वथर १० भागनो अने नरथर ८ भागनो उंचो करवो, अथवा अश्वथरना स्थाने पोतपोताना देवना वाहननो थर करवो.

अपराजितपृच्छामां निर्गमनुं प्रमाण—

जाडयकुम्भः पञ्चभागः, कर्णाली चाष्टभागिका ।

गजपीठं चतुर्भागं, त्रिभागं वाजिपीठकम् ॥२२४॥

नरपीठं द्विभागं च, कर्तव्यं शुभलक्षणम् ।

खुरकाज्जाडयकुम्भान्तं, द्वाविंशद्भागनिर्गतम् ॥२२५॥

भा०टी०—जाडंबो ५ भाग, कणी ८ भाग, गजपीठ ४ भाग, अश्वपीठ ३ भाग अने नरपीठ २ भाग जेटलुं निर्गमे करवुं, आम पीठ उपरना खुराथी जाडंबो २२ भाग जेटला निर्गमे करवो.

गजथरादि विनानुं पीठ होय तो तेना उदयना २३ भाग करीने जाडंबो ९ भाग, कणी ७ भाग अने ग्रासपट्टी ७ भाग उदयमां करवी. एज प्रमाणे निर्गमना २२ भागोमांथी गजादि थरोना ९ भागो ओछा करी निर्गम १३ भागनो करवो, तेमां जाडंबो ५ भागनो अने कणी ८ भागनी निर्गमे करवी, जो ग्रासपट्टी थरमां हाय तो पण निर्गम तो १३ भागनो ज करवो, जाडंबो ५ भागना निर्गमे करी कणी अने ग्रासपट्टी बने समसूत्रे ८ भाग जेटली निर्गमे करवी.

प्रासादनो उदय—

१ ला प्रकारनो उदय—

पीठ उपरथी प्रासादनां चणतरनो प्रारंभ थाय छे, प्रासादना

मानने अनुसारे तेनो उदय अधिक ओछो करवानुं विधान छे, १ हाथथी मांडीने ५० हाथ सुधीना मानना प्रासादो होय छे, एमां ओछा माननां प्रासादोनो उदय अधिक अने अधिकमानना प्रासादोनो उदय ओछो करवामां आवे छे, छेला ५० हाथना प्रासादनो उदय मात्र २५ अथवा तो २६ हाथनो होय छे, ज्यारे कनिष्ठमां कनिष्ठ २५ आंगलना प्रासादनो ३३ अने ज्येष्ठमाने ३८ आंगलनो उदय थइ शके छे, ए विषे अपराजित पृच्छानुं विधान—

एकहस्ते तु प्रासादे, त्रयस्त्रिंशद्भिरङ्गुलेः ।
 द्विहस्ते तु प्रकर्तव्यः, पञ्चपञ्चाशदङ्गुलैः ॥२२६॥
 सप्तसप्तत्यङ्गुलैश्च, प्रासादे तु त्रिहस्तकं ।
 चतुर्हस्ते तु प्रासादे, एकोनशतसंख्यकैः ॥२२७॥
 प्रासादे पञ्चहस्ते सै-कविंशतिशताङ्गुलैः ।
 पञ्चहस्तान्ततो वृद्धिः, -ह्रस्वं कुर्यात्तदूर्ध्वतः ॥२२८॥
 पञ्चहस्तादूर्ध्वतश्च, यावत्स्यान्नबहस्तकम् ।
 ह्रस्वं हस्तार्धभागेन, पञ्चोर्ध्वं च नवान्तकम् ॥२२९॥
 तदूर्ध्वं त्रयोदशान्तं, पादभागं परित्यजेत् ।
 षष्ठमांशं ततो ह्रस्वं, यावद्विंशतिहस्तकम् ॥२३०॥
 ततो द्वात्रिंशदंशं च, ह्रस्वं यावच्छतार्धकम् ।
 प्रहारान्तं कुम्भकादे, -रुच्छयो नागरे मतः ॥२३१॥

भा०टी०—एक हाथना प्रासादनो उदय १ हाथ ९ आंगलनो करवो, २ हाथना प्रासादे २ हाथ ७ आंगल, ३ हाथे ३ हाथ ५ आंगल, ४ हाथे ४ हाथ ३ आंगल, अने ५ हाथे ५ हाथ १ आंगलनो प्रासादनो उदय करवो, आम पांच हाथ सुधी तो व्यास थकी उदय अधिक छे, एण पांच हाथ उपरना मानना प्रासादोमां व्यासनी अपेक्षाए उदयमान ओछुं थतुं जाय छे, ६ हाथथी ९ हाथ सुधीना प्रासा-

दोना उदयमां प्रत्येक हाथे १२-१२ आंगलनो हास करवो, एटले ६ हाथे ५ हाथ १३ आंगल, ७ हाथे ६ हाथ १ आंगल, ८ हाथे ६ हाथ १३ आंगल, ९ हाथे ७ हाथ १ आंगलनो उदय थाय. १० थी १३ हाथ सुधीना प्रासादोनो उदय प्रतिहस्ते ९ आंगल वधारीने करवो, अर्थात् १० हाथे ७ हाथ १० आंगल, ११ हाथे ७ हाथ १९ आंगल, १२ हाथे ८ हाथ ४ आंगल अने १३ हाथे ८ हाथ १३ आंगलनो उदय करवो.

१४ थी २० हाथ सुधीना प्रासादोनो उदय प्रतिहस्ते ७ आंगल ७ जवनी वृद्धिए करवो, एटले के १४ हाथे ८ हाथ २० आंगल ७ जव, १५ हाथे ९ हाथ ४ आंगल ६ जव, १६ हाथे ९ हाथ १२ आंगल ५ जव, १७ हाथे ९ हाथ २० आंगल ४ जव, १८ हाथे १० हाथ ४ आंगल ३ जव, १९ हाथे १० हाथ १२ आंगल २ जव, २० हाथे १० हाथ २० आंगल १ जवनो उदय करवो.

२१ थी ५० हाथ सुधीना प्रासादोना उदयमां प्रतिहस्ते ७ आंगल १ जवनी वृद्धि करवी.

२१ हाथे ११ हाथ ३ आंगल २ जव, २२ हाथे ११ हाथ १० आंगल ३ जव, २३ हाथे ११ हाथ १७ आंगल ४ जव, २४ हाथे १२ हाथ ५ जव, २५ हाथे १२ हाथ ७ आंगल ६ जव, २६ हाथे १२ हाथ १४ आंगल ७ जव, २७ हाथे १२ हाथ २२ आंगल, २८ हाथे १३ हाथ ५ आंगल १ जव, २९ हाथे १३ हाथ १२ आंगल २ जव, ३० हाथे १३ हाथ १९ आंगल ३ जव, ३१ हाथे १४ हाथ २ आंगल ४ जव, ३२ हाथे १४ हाथ ९ आंगल ५ जव, ३३ हाथे १४ हाथ १६ आंगल ६ जव, ३४ हाथे १४ हाथ २३ आंगल ७ जव, ३५ हाथे १५ हाथ ७ आंगल, ३६ हाथे १५ हाथ १४ आंगल १ जव, ३७ हाथे १५ हाथ २१ आंगल २ जव,

३८ हाथे १६ हाथ ४ आंगल ३ जव, ३९ हाथे १६ हाथ ११ आंगल ४ जव, ४० हाथे १६ हाथ १८ आंगल ५ जव, ४१ हाथे १७ हाथ १ आंगल ६ जव, ४२ हाथे १७ हाथ ८ आंगल ७ जव, ४३ हाथे १७ हाथ १६ आंगल, ४४ हाथे १७ हाथ २३ आंगल १ जव, ४५ हाथे १८ हाथ ६ आंगल २ जव, ४६ हाथे १८ हाथ १३ आंगल ३ जव, ४७ हाथे १८ हाथ २० आंगल ४ जव, ४८ हाथे १९ हाथ ३ आंगल ५ जव, ४९ हाथे १९ हाथ १० आंगल ६ जव, अने ५० हाथे १९ हाथ १७ आंगल ७ जव.

नागर जातिना प्रासादोनुं उदयमान कुंभक थरथी आरंभीने प्रहार थर यर्यन्तनुं मानेलुं छे, ते उपर प्रमाणे जाणवुं.

अपराजितकारे पांच जातना पीठोनो उदय काढवा माटे उपर्युक्त कनिष्ठमान बताव्युं छे, ए वस्तु कही, पण पीठोदयना अधिकारमां ज छे एटले एनो उपयोग पीठ पूरतो ज हशे एम लागे छे. केमके एज ग्रन्थकार आगल जइने नागरादि प्रासादोनुं उत्तम उदयमान जुदुं बतावे छे. जे नीचे प्रमाणे छे—

२ जा प्रकारनो उदय—

एकहस्ते चोदयस्तु, स्यात्त्रयस्त्रिंशदंगुलैः ।

प्रासादे च त्रिहस्ते तु, पञ्चपञ्चाशदंगुलैः ॥२३२॥

सप्तसप्तत्यंगुलानि, प्रासादे तु त्रिहस्तके ।

एकोनशताङ्गुलैश्च, वेदहस्ते सुरालये ॥२३३ ॥

प्रासादे पंचहस्ते चै, -कविंशत्युत्तरं शतम् ।

हास-वृद्धी पञ्च यावद्, ह्रस्वं कुर्यात्तदूर्ध्वतः ॥२३४॥

पञ्चोर्ध्वं नवपर्यन्तं, वृद्धिर्मन्वंगुलैर्भवेत् ।

अष्टहस्तोदयश्चैवं, प्रासादे दशहस्तके ॥२३५॥

विंशत्यन्तं दशोर्ध्वं च, वृद्धिः सूर्यांगुलैर्भवेत् ।
 त्रयोदशकराः सप्ता-इंगुलं विंशतिहस्तके ॥२३६॥
 अत ऊर्ध्वं पुनर्वृद्धि-हस्ते हस्ते करार्धतः ।
 त्रिंशद्वस्ते सप्तांगुलं, हस्ता अष्टादशैव च ॥२३७॥
 ऊर्ध्वं पञ्चाशदन्तं च, हस्ते हस्ते नवांगुलाः ।
 करानां वै सार्धपञ्च-विंशतिश्च शतार्धके ॥२३८॥
 एकोनविंशत्यंगुला, कामदा च तदग्रतः ।
 एषा युक्तिर्विधातव्या, प्रासादस्योत्तमोदये ॥२३९॥
 नागरे लतिने चैव, सान्धारे चैव मिश्रके ।
 विमान-नागर-छन्दे, कुर्याद्विमानपुष्यके ॥२४०॥
 कुम्भकादि-प्रहारान्तं, प्रयुक्तं वास्तुवेदिभिः ।
 तदधस्तात्तु पीठं स्या-दूर्ध्वं च शिखरोदयः ॥२४१॥
 विस्तारसम उत्सेधे, यावत् प्रथमभूमिका ।
 गृहं कूटोदयं त्यक्त्वा, शेषं मंडोवरो भवेत् ॥२४२॥

भा०टी०—१ हाथना प्रासादे ३३ आंगलनो उदय, २ हाथे
 ५५, ३ हाथे ७७, ४ हाथे ९९ अने ५ हाथे १२१ आंगलनो उदय
 जाणवो. आम ५ हाथ सुधी हास करवा छतां प्रासादना विस्तारथी
 उदय कंडक अधिक होय, पण ते पछी प्रत्येक विस्तारना हाथप्रति
 उदयमां हास ज थतो जाय, पांच पछी ६ थी ९ पर्यन्त प्रतिहाथे
 उदयमां १४-१४ आंगलनी वृद्धि करवी, अर्थात् १०-१० आंगलनो
 हास करवो. १० हाथना प्रासादनो उदय ८ हाथनो करवो, दश
 उपरान्त २० हाथ सुधी प्रतिहस्ते १२-१२ आंगलनी वृद्धि करवी,
 एटले के १२-१२ आंगलनो हास करवो, २० हाथना प्रासादने
 १३ हाथ अने ७ आंगलनो उदय करवो.

ए पछी ३० हाथ सुधी फरि १२-१२ आंगलनी प्रतिहस्त

वृद्धि करवी, अर्थात् १२-१२ आंगलनो हास करवो, ३० हाथना प्रासादनो उदय १८ हाथ अने ७ आंगलनो करवो, त्रीस पल्ली ५० हाथ सुधीना विस्तारना प्रासादोमां प्रति हस्ते उदय ९-९ आंगलनो वधारवो, अर्थात् १५-१५ आंगलनो हास करवो, आम करतां ५० हाथना प्रासादनो उदय २५॥ हाथनो थशे.

उक्त उदयमानमां १९ आंगलनो उमेरो करवाथी २६ हाथ ७ आंगलनो उत्तमोदय थशे, नागर, लतिन, सांधार, मिश्रक, विमान-नागर अने विमानपुष्यक जातिना प्रासादोने उपर प्रमाणे उदय करवो, वास्तुशास्त्रना जाणकारोए आ उदय कुंभक थरना प्रारंभथी प्रहार थर पर्यन्तनो करवानुं कहुं छे, केमके कुंभकने नीचे पीठ अने प्रहारने उपर शिखरनो उदय होय छे

जे प्रासादना विस्तारनो जेटलो उदय होय त्यां सुधी ते प्रासादनी पहेली भूमिका जाणवी, उपरनां शृंगो अने कूटोनो उदय बाद करतां नीचेनुं मंडाण 'मंडोथर'ना नामथी ओलखाय छे.

त्रीजा प्रकारनो उदय—

एकादिपञ्चहस्तान्तं, पृथुत्वेनोदयः समः ।

हस्ते सूर्यगुला वृद्धि-र्यावत् त्रिंशत्करावधि ॥२४३॥

नवांगुला करे वृद्धि-र्यावद्धस्तशतार्धकम् ।

पीठोर्ध्वं उदयश्चैवं, छाद्यान्तो नागरादिषु ॥२४४॥

भा०टी०—१ थी ५ हाथ पर्यन्त विस्तारना जेटलो उदय होय, ए पल्ली ३० हाथ सुधीना प्रासादोमां विस्तारना प्रतिहाथे उदयमां १२-१२ आंगलनी वृद्धि करवी, आ मत प्रमाणे ३० हाथना प्रासादे १७ हाथ १२ आंगलनो उदय थशे, ३१ थी ५० हाथ सुधी प्रतिहस्ते उदयमां ९-९ आंगलनी वृद्धि करवी, आम करतां ५० हाथना प्रासादनो उदय २५ हाथनो थशे, नागरादि प्रासादोनो उदय पीठ उपरथी छाजा पर्यन्तनो गणाय छे,

चोथा प्रकारे प्रासादोदय—

आ उदयमानने ३ जा प्रकारना उदयमाननी साथे थोडोक मतभेद छे, १ थी ३ हाथ सुधीनुं मान १ ला २ जा मानने मलतुं छे, ४ हाथथी एनुं मान जुदुं पडे छे. ४ हाथे ४ हाथ १ आंगल, ५ हाथे ५ हाथ, ६ हाथे ५ हाथ २२ आंगल, ७ हाथे ६ हाथ १७ आंगल, ८ हाथे ७ हाथ ८ आंगल, ९ हाथे ७ हाथ १९ आंगल, १० हाथे ८ हाथ, १५ हाथे १० हाथ ६ आंगल, २० हाथे १२ हाथ १२ आंगल, २५ हाथे १४ हाथ १८ आंगल, ३० हाथे १७ हाथ, ३५ हाथे १९ हाथ ६ आंगल, ४० हाथे २१ हाथ १२ आंगल, ४५ हाथे २३ हाथ १८ आंगल, अने ५० हाथे २५ हाथनी उदय थाय छे.

पांचमा प्रकारे प्रासादोदय—

१ थी ५ सुधी विस्तार अने उदय समान होय छे, ६ थी १३ हाथ सुधी १२ आंगलनी वृद्धि करवी, १४ थी २१ हाथ सुधी ११ आंगलनी अने २२ थी ५० सुधी हाथ प्रति १०-१० आंगलनी वृद्धि करवी.

आ मत प्रमाणे १३ हाथना प्रासादे ९ हाथनुं, २१ हाथे १२ हाथ १६ आंगलनुं अने ५० हाथे २५ हाथ २ आंगलनुं प्रासादे उदयमान थाय छे.

छठ्ठा प्रकारनी प्रासादोदय—

फेरु ठक्कुरना मते—

इगदुतिचउपणहत्थे, पासाइ खुराउ जा पहारथरो।

नवसत्तपणतिएंगं, अंगुलजुत्तं कमेणुदयं ॥२४५॥

इच्चाइ स्वबाणंते, पडिहत्थे चउदसंगुलविहीणा।

इअ उदयमाण भणिअं, अओ य उड्डं भवे सिहरं ॥२४६॥

ખા૦ટી૦—૧, ૨, ૩, ૪, ૫, હાથના પ્રાસાદોનો ઉદય અનુ-
ક્રમે ૧, ૭, ૫, ૩, ૧ આંગલ સહિત ૧, ૨, ૩, ૪, ૫ હાથનો
જાણવો, અર્થાત્ ૧ હાથે ૧ હાથ ૧ આંગલ, ૨ હાથે ૨ હાથ ૭
આંગલ, ૩ હાથે ૩ હાથ ૫ આંગલ, ૪ હાથે ૪ હાથ ૩ આંગલ અને
૫ હાથે ૫ હાથ ૧ આંગલ, પ્રાસાદનો ઉદય કરવો. આ માન્યતા
અપરાજિતની સાથે અક્ષરશઃ મલે છે પણ એ પછીની હસ્તવૃદ્ધિનો
નિયમ અપરાજિતની માન્યતાની સાથે મેલ યાતો નથી.

ફેરુના મતે ૬ થી ૫૦ હાથ સુધીના પ્રાસાદોના ઉદયની વૃદ્ધિનો
એક જ નિયમ છે કે પ્રતિહસ્તે ૧૪ અંગુલનો ઘ્રાસ કરવો, એટલે કે-
પ્રતિહાથે ૧૦ આંગલની જ ઉદયમાં વૃદ્ધિ કરવી, આ નિયમાનુસારે
૬ થી ૨૦ હાથ સુધીના પ્રાસાદોનું ઉદયમાન ૨, ૩, ૪, ૫, મા
પ્રકારના ઉદય માનથી ઓછું આવે છે.

ઠક્કુર ફેરુ, આ ઉદયમાં વિરાટ અને પ્રહાર થયેલો ઉદય સંમિ-
લિત કર્યો છે, એ મૂલ્યક વસ્તુ છે, અપરાજિતકાર સ્થલે સ્થલે
'પ્રહારાન્તં' એ શબ્દ લખીને એમ સૂચિત કરે છે કે 'પૂર્વે નાગર-
જાતિના પ્રાસાદોનો ઉદય પ્રહાર થયેલો મથાળા સુધી ગણાતો હતો
અને તેનો આરંભ કુંભાથી કરાતો હતો.' ફેરુ સુરાથી પ્રારંભ કર્યો
એ વિચારણીય છે, આ ઉપરથી અનુમાન થાય છે કે તે વચ્ચે સુરાની
ઉંચાઈ મંડોવરામાં જ નહિ પણ પ્રાસાદના ઉદયમાં પણ પ્રવિષ્ટ થવા
માંડી ચુકી હશે.

ઉદયમાનમાં મતભેદ—

અપરાજિત પ્રચ્છાના મતે આ ઉદય કુંભાથરથી છાજાની ઉપર
આવતા પ્રહારથર સુધાના ગણ્ય છે, વાસ્તુસારમાં ઠક્કુર ફેરુ
'સુરકુંભ' ઇત્યાદિથી શરુ કરી 'વડરાડ પહાર તેર થર' અહિયાં
સુધીનો મંડોવરો માન્યો છે, ફેરુ 'સુરા'ને મંડોવરામાં ગણ્યો છે

જ્યારે અપરાજિતકારે મંડોવરાના ૧૪૪ ભાગોમાં સુરાના પળ ૫ ભાગો સામેલ ગળ્યા છે, છતાં જ્યાં જ્યાં ઉદયનો પ્રસંગ આવ્યો છે, સુરાને તેમાં ગળ્યો નથી, પળ વૈરાટ, પ્રહાર થરોને ગળ્યા છે. પ્રાસાદ-મંડનમાં સુરાથી હાજા પર્યન્તનો જ મંડોવરો અને તેની ઉંચાઈને જ ઉદય માન્યો છે, ઇટલે સુરાને પ્રહણ કરીને હાજા ઉપરના પૂર્વોક્ત ૨ થરોને છોડી દીધા છે, આજના શિલ્પિઓ પળ ઉદય અને મંડો-વરાનો હિસાબ પ્રાસાદમંડન પ્રમાણે જ ગણે છે, જે અપરાજિતથી વિરુદ્ધ જાય છે. ભૂમિજપ્રાસાદના મંડોવરામાં અપરાજિત પૃચ્છાકાર કુંભાથી હાથાન્ત 'શીર્ષોદય' કરવાનું વિધાન કરે છે, અને ત્યાં સુરાના થરને પીઠમાં ગણવાનો સ્પષ્ટ નિર્દેશ પળ કરે છે, જુઓ—

ભૂમિજે ચૈવ પ્રાસાદે, વરાટે ચ વિમાનકે ।

વિસ્તારાન્ન સમુત્સેધ-પર્યન્તં ચાવભૂમિકા ॥૨૪૭॥

ઝૂંગકૂટોદયં ત્યક્ત્વા, તન્મધ્યે તુ વિચક્ષણૈઃ ।

શીર્ષોદયો વિધાન્તવ્ય-શ્છાથાન્તં કુંભકાદિતઃ ॥૨૪૮॥

આ૦ટી૦—ભૂમિજ, વરાટ, અને વિમાન જાતિના પ્રાસાદના વિસ્તાર જેટલા ઉદયમાં પ્રથમ ભૂમિકા પૂરી થાય છે, ઝૂંગ અને કૂટોદયને ઉપર છોડીને વિચક્ષણ શિલ્પિએ કુંભાથી હાજા સુધીના મધ્યભાગમાં શીર્ષોદય (પ્રાસાદના મસ્તકની ઉંચાઈ) કરવો.

૯ પછી થરવાલાઓના ભાગાંક લખના ગ્રન્થકાર કહે છે—

“સુરકં પીઠ મધ્યે તુ,” અર્થાત્ ‘સુરાને પીઠમાં ગણી કુંભાદિ સ્તરોમાં ઉદયના ભાગાંક ગણવા’

ઉપરના વિવેચનથી સમજાશે કે અપરાજિત નાગર જાતિના મંડોવરાની ઉંચાઈમાં સુરાને ગણનામાં લેતા હતા પળ પ્રાસાદનો ઉદય તો તે કુંભાથી જ આરંભ કરતા અને પ્રહાર સુધીના થરોને ઉદયમાં ગણી લેતા ભૂમિજાદિ પ્રાસાદોના મંડોવરામાં તે સુરાને તેમ હાજા

उपरना धरोने संमिलित न्होता करता, आधुनिक शिल्पि गणे एनी उपर विचार करवो घटे.

मंडोवराना धरोनी भाग संख्या—

प्रासादमण्डने—

वेदवेदेन्दुभक्ते तु, छाद्यान्ते पीठमस्तकात् ।

खुरकः पञ्चभागः स्याद्विंशतिः कुंभकस्तथा ॥२४९॥

कलशोऽष्टौ द्विसार्धं तु, कर्तव्यमन्तरालकम् ।

कपोतिकाष्टौ मञ्ची स्यात्, कर्तव्या नवभागिका ॥२५०॥

पञ्चत्रिंशत्पदा जंघा, तिथ्यंशैरुद्गमो भवेत् ।

वसुभिर्भरणी कार्या, शिरःपट्टी दशांशिका ॥२५१॥

अष्टांशाऽथ कपोतालि—द्विसार्धमन्तरालकम् ।

छाद्यं त्रयोदशांशोच्चं, दशभागैर्विनिर्गमः ॥२५२॥

भा०टी०—पीठना मथाळाथी छाजा सुधीनी ऊंचाईना १४४ भाग कल्पी, खुरो भाग ५, कुंभो २०, कलश ८, अंतराल २॥, के वाल ८, मांची ९, जंघा ३५, दोढियो १५, भरणी ८, शरावटी १०, मालाकेवाल ८, अंतराल २॥ अने छाजुं १३ भागनुं ऊंचुं करवुं, छाजानो निर्गम १० भागनो करवो.

१०८ भागनो मंडोवरो—

खुरकं च चतुर्भागं, कुंभकं दशपञ्चकम् ।

कलशं चापि षड्भागं, त्रिभागाऽन्तरपत्रकम् ॥२५३॥

कपोतालीं च षड्भागां, मञ्चिकामपि तादृशीम् ।

द्वात्रिंशत्पदिकोच्छ्रायां, जंघां कुर्याद् विचक्षणः ॥२५४॥

उद्गमं रुद्रभागं च, कपि—त्रासैरलंकृतम् ।

भरणी चैव षड्भागा, कपोताली षडेव तु ॥२५५॥

त्रिभागान्तरपत्रं च, कर्तव्यं तु विचक्षणैः ।

खूटछाद्यं च दिग्भागं, सप्तभागविनिर्गमम् ॥२५६॥

भा०टी०—(१०८ भागना मंडोवरामां) विद्वान् शिल्पीए खुरक
४ भाग, कुंभक १५ भाग, कलश ६ भाग, अंतरोट ३ भाग, के वाल
६ भाग, मांची पण ६ भाग, अने जंघा ३२ भागनी ऊंची करवी,
११ भागनो मकरमुखोथी शोभतो दोढियो, भरणी ६ भाग, माला-
के वाल ६ भाग, अंतराल ३ भाग, अने छाजुं १० भाग ऊंचुं अने
७ भागना निकाले करवुं.

२७ भागनो मंडोवरो-प्रासादमण्डने-

पीठतश्छाद्यपर्यन्ते, सप्तविंशतिभाजिते ।

द्वादशानां खुरादीनां, भागसंख्या क्रमेण तु ॥२५७॥

१ ४ १॥ ॥ १॥ १॥ ८ ३

स्यादेक वेद सार्धार्ध-सार्ध सार्धाष्टभिस्त्रिभिः ।

१॥ १॥ ॥ २॥

सार्ध सार्धाऽर्ध भागैः, स्याद्, द्विसार्धैर्द्वयैशनिर्गमः ॥२५८

भा०टी०—पीठथी छाजा पर्यन्तना मंडोवराना २७ भागो
कल्पिने खुरादि १२ थरोनी भागसंख्या अनुक्रमे आ प्रमाणे राखवी,
खुरो १, कुंभो ४, कलशो १॥, अंतराल०॥, केवाल १॥, मांची १॥,
जंघा ८, दोढियो ३, भरणी १॥, मालाकेवाल १॥, अंतराल०॥,
अने छाजुं २॥ भागनुं उंचुं करवुं, छाजानो निकालो २ भागनो करवो.

ठक्कुर फेरुना मते २५ भागनो मंडोवरो-

खुर-कुंभ-कलस-कट्टवाल, -मञ्जीजंघा य छज्जि उरजंघा ।

भरणि-सिरवट्टि-छज्जय, वहराड पहार तेर थरा ॥२५९॥

इग तिय दिवडु तिसु कमि, पण सडुढा इग दु दिवदु दिवढोअ
दो दिवदु दिवदु भाया, पणवीसं तेर थरमाणं ॥२६०॥

भा०टी०—खुरो, कुंभो, कलसो, केवाल, मांची, जंघा,

छाजली, उरजंघा (दोढिओ), भरणी, शरावटी, छाजुं, विराट अने प्रहार; आ १३ थरो प्रासादोना मंडोवरोमां होय छे. आ थरोनी भाग संख्या अनुक्रमे नीचे प्रमाणे राखवी—१,+३,+१॥,+१॥,+१॥,+५॥,+१,+२,+१॥,+१॥,+२,+१॥,+१॥=२५. ए उपरांत मेरुमंडोवरो, चतुर्मुख मंडोवरो, आदि अनेक प्रकारना मंडोवराओनुं शास्त्रमां निरूपण छे पण ते सर्वनुं वर्णन करवाने अत्र अवकाश नथी.

गर्भगृहोच्छ्रयः—अपराजितपृच्छायाम्—

कुंभी तु कुंभके ज्ञेया, स्तंभो ज्ञेयस्तथोद्गमे ।

भरणं भरण्यां ज्ञेयं, कपोताल्यां तथा शिरः ॥२६१॥

अधस्तात्कूटछाद्यस्य, कुर्यात् पट्टस्य पेटकम् ।

अर्धोदयं करोटं च, कर्तव्यं विधिपूर्वकम् ॥२६२॥

भा०टी०—कुंभाने मथाळे कुंभीनुं, दोढियाने मथाळे स्तंभनुं, भरणीने मथाळे भरणानुं, अने मालाकेवालने मथाळे शिरानुं मथाल्लं मेलववुं. शिरा उपर पाटानुं पेटक छाजानी निचली फरके गोठववुं अने विस्तारना अर्धा उदयमां विधिपूर्वक करोटक करवुं.

गर्भगृहोच्छ्रय जाणवानी बीजी रीति—

अथान्यत्संप्रवक्ष्यामि, मानं गर्भगृहस्य च ।

प्रासादानां बृहन्मानं, वत्स ! विज्ञायते यतः ॥२६३॥

गर्भव्यासः सषडंशः, सपादः सार्ध एव च ।

पादोनांशाधिको वा पि, ज्येष्ठ मध्य कनिष्ठकः ॥२६४॥

तत्रोदयेऽष्टभिर्भक्ते, भागेनैकेन कुंभिका ।

स्तंभः सार्धचतुष्कांशो, भागस्तु थालको भवेत् ॥२६५॥

शीर्षकं भागमेकं तु, अर्धः पट्टसमुच्छ्रयः ।

गर्भव्यासार्धमानेन, कुर्यात् पद्मशिलोदयम् ॥२६६॥

ન કર્તવ્યા દર્દરિકા, પશ્ચ-સસમથોચિતે ।

અનેનૈવ પ્રકારેણ, કુર્યાદ્ ગર્ભગૃહોચ્છ્રયમ્ ॥૨૬૭॥

ખા૦ટી૦—હે અપરાજિત ! હવે ગર્ભગૃહની ડંચાઈનું વીજું માન કહું છું તે સાંભલ, જેથી વૃહત્ પ્રાસાદોના ગર્ભગૃહનો ઉદય જાણી શકાય.

ગર્ભગૃહના વિસ્તારને સ્વપદ્મભાગ યુક્ત કરવાથી અથવા સવાયો, દોઢો, પોણવમણો કરતાં જે પ્રમાણ થાય તેટલા પ્રમાણનો ઉદય જ્યેષ્ઠ-મધ્યમ-કનિષ્ઠ-પ્રાસાદોના ગર્ભગૃહનો જાણવો, અર્થાત્ જ્યેષ્ઠ પ્રાસાદોના ગર્ભ વિસ્તારથી તેનો ઉદય ષડંશ યુક્ત અથવા ચતુર્થાંશ યુક્ત કરવો, મધ્યમ માનના પ્રાસાદોના ગર્ભ વિસ્તારથી તેઓનો ઉદય દોઢો કરવો અને કનિષ્ઠ માનના પ્રાસાદોના ગર્ભ વિસ્તારથી તેનો ગર્ભગૃહોચ્છ્રય પોણવમણો કરવો.

ઉક્ત ગર્ભોદયને ૮ થી માંગી ૧ ભાગની કુંભી, ૪૥ ભાગનો થાંભલો, ૧ ભાગનો થાલક, ૧ ભાગનું શરું અને ૦૥ ભાગનો પાટ ડંચો કરવો, અને તે પછી પાટો ઉપર સ્વણિયા નાસીને ગર્ભગૃહના વિસ્તારના અર્ધ ભાગ જેટલી ડંચી જાય એવી રીતે પદ્મશિલા ઢાંકી કરોટક કરવું, પણ ગર્ભગૃહ ઉપર પાંચ સાત કે ગમે તેટલા ધરની પણ દાદરી ન કરવી, ઉક્ત પ્રકારે ગર્ભગૃહનો ઉચ્છ્રય કરવો.

ઉંવરો-અપરાજિતપૃચ્છામાં—

ઉદુમ્બરં તથા વક્ષ્યે, કુંભિકાન્તસમુચ્છ્રયમ્ ।

તસ્યાર્થેન ત્રિભાગેન, પાદેન રહિતં તથા ॥૨૬૮॥

ઉક્તં ચતુર્વિધં શસ્તં, કુર્યાંચૈવમુદુમ્બરમ્ ।

અત્યુત્તમાશ્ચ ચત્વારો, ન્યૂન્યા દૃષ્યાસ્તથાધિકાઃ ॥૨૬૯॥

ખા૦ટી૦—હવે ઉંવરાને કહું છું, ઉંવરાની ડંચાઈ કુંભીના મથાळा સુધી, તેના અર્ધભાગે, બે તૃતીયાંશે અથવા પોણા ભાગે હોય

छे, ऊंबरानुं उक्त ४ प्रकारानुं मान अत्युत्तम छे, एथो ओळुं अथवा अधिक मान करवाथी ते दूषित थाय छे.

अर्धचन्द्र अने उदुम्बर क्यां मूकवा ?

खुरकोर्ध्वेऽर्धचन्द्रः स्यात्, तदूर्ध्वं स्यादुदुम्बरः ।

उदुम्बराधे त्र्यंशे वा, पादे वा गर्भभूमिका ॥२७०॥

मण्डपेषु च सर्वेषु, पीठान्ते रंगभूमिका ।

एषा युक्तिर्विधातव्या, सर्वकामफलोदया ॥२७१॥

भा०टी०—खुरा उपर अर्धचन्द्र शिला सूकी तेना उपर ऊंबरो स्थापन करवो, वली ऊंबराना अर्धभागे, एक तृतीयांशे अथवा चतुर्थ भागे गभारानी भूमि ऊंची लेवी, सर्व मंडपोमां पीठने मथाळे ज रंगभूमि राखवी, पण ऊंची लेवी नहि, आ प्रकारनी युक्ति करवाथी सर्व इच्छाओ पूर्ण करनार प्रासाद थशे.

ऊंबराना अंग वि भागो—

द्वारविस्तारत्रिभागेन, मध्ये मन्दारको भवेत् ।

वृत्तं मन्दारकं कुर्यात्, युतं पद्ममृणालकैः ॥२७२॥

मूल-नासिकयोर्मध्ये, स्थाप्यश्चोदुम्बरस्तथा ।

सिंहशाखा मूलनासा-समसूत्रे विचक्षणैः ॥२७३॥

जाडयकुंभः कर्णमाला, चोर्ध्वं वृत्तं मृणालकम् ।

मन्दारोभयपक्षे तु, कीर्तिवक्त्रद्वयं भवेत् ॥२७४॥

भृकुट्या कुटिलाक्षं च, दंष्ट्राभिः समलंकृतम् ।

कर्णोपशृंगैस्तदधः, शाखापत्रैरलंकृतम् ॥२७५॥

तलच्छन्दे च शाखा तु, स्यादुदुम्बरपक्षयोः ।

तद्रूपा क्रियते प्राज्ञै-निर्गमे पीठसंयुता ॥ २७६ ॥

भा०टी०—ऊंबराना मध्यभागे द्वार विस्तारना त्रीजा भाग

जेटलो मन्दारक बनाववो, मंदारकने गोल अने कमलतंतुओ वडे सुशोभित करवो. चतुर शिल्पिओए बंने मूल नासिकोना मध्य भागमां मूल नासिक तथा सिंह शाखाना समसूत्रे उंचराने स्थापवो, तेना निचला भागमां जाडंबो ने कर्णी (कर्णमाला) बनाववी, उपरनी गोलाईमां कमलमृणाल करवा, अने मन्दारनी बंने बाजु कीर्तिमुखो करवां, कीर्तिमुखो भृकुटिए कुटिलनेत्रवालां, दाढाओ बडे युक्त, नीचे कर्ण—उपकर्ण शृंगोए शोभित, शाखापत्रोए अलंकृत करवां, बुद्धिमानोए उदुम्बरना बंने छेडाओ पासे तलछंदमां पीठ निर्गमवाली तेवी ज दलविभक्तिवाली शाखा करवी.

अर्धचन्द्रक-प्रासादमण्डने—

खुरकेण समंकुर्या—अर्धचन्द्रस्य चोच्छ्रितम् ।
 द्वारव्याससमं कुर्या—त्रिगमं च तदर्धतः ॥२७७॥
 द्विभागमर्धचन्द्रश्च, भागेन द्वौ गकारकौ ।
 शंखपत्रसमायुक्तं, पद्माकारैरलंकृतम् ॥ २७८ ॥

भा०टी०—अर्धचन्द्रनी उंचाई खुरा जेटली, लंबाई द्वारना विस्तार जेटली अने तेनो निर्गम लंबाईथी अर्धी करवो, अर्धचन्द्र-शिलानी लंबाईना बे भागमां वच्चे अर्धचन्द्र करवो, अने एरु भाग जेटली जगामां बंने बाजुए बे गगारा करवा; गगारा, शंखो अने पद्मपत्रोए अलंकृत करवा.

नागर-प्रासादद्वारोदय—

अपराजितपृच्छाधाम—

एकहस्ते तु प्रासादे, द्वारं स्यात् षोडशांगुलम् ।
 कार्थी षोडशतो वृद्धिः, पर्यन्ते च चतुष्करम् ॥२७९॥
 गुणांगुलाष्टहस्तान्तं, तत्परं द्वयंगुला करे ।
 पञ्चाशहस्तपर्यन्तं, प्रयुक्ता वास्तुवेदिभिः ॥२८०॥

યાન-વાહન-પર્યંકે, દ્વારે-પ્રાસાદસદ્મનામ્ ।

દૈર્ઘ્યાધેન પૃથુત્વં સ્યા-ચ્છોભનં તત્કલાધિકમ્ ॥૨૮૧॥

ખા૦ટી૦—? હાથના પ્રાસાદનું દ્વાર ૧૬ આંગલનું થાય, આ પ્રમાણે જ ૪ હાથ સુધી દ્વારની ઝંચાઈમાં ? હાથે ૧૬ આંગલની વૃદ્ધિ, ચ્યાર હાથ પછી ૮ હાથ સુધી પ્રત્યેક હાથે અથવા તેના વિભાગે ૩ આંગલના હિસાબે વૃદ્ધિ કરવી અને આઠ પછી ૫૦ હાથ પર્યન્ત પ્રતિહસ્તે ૨-૨ આંગલના હિસાબે દ્વારની ઝંચાઈમાં વૃદ્ધિ કરવી. યાન, વાહન, પલંગો, અને પ્રાસાદ તથા ઘરના દ્વારોમાં લંબાઈથી વિસ્તાર અર્ધ કરવો, વિસ્તાર દૈર્ઘ્યના અર્ધથી વે આંગલ ૧વધુ હોયતો પણ શુભ છે, પણ દૈર્ઘ્ય વિસ્તારથી યમણા ઉપર ન હોવું જોઈયે.

ક્ષીરાર્ણવનું નાગર-દ્વારમાન—

એકહસ્તે તુ પ્રાસાદે, દ્વારં ચ ષોડશાંગુલમ્ ।

ઇયં વૃદ્ધિઃ પ્રકર્તવ્યા, ચતુર્હસ્તં યદા ભવેત્ ॥૨૮૨॥

વેદાંગુલા ભવેદ્વૃદ્ધિ-ર્યાંચચ્ચ દશહસ્તકમ્ ।

હસ્તવિંશતિમાને ચ, હસ્તે હસ્તે દ્વયાંગુલમ્ ॥૨૮૩॥

દ્વયંગુલા ચ ભવેદ્યાવત્, પ્રાસાદં ત્રિંશદ્દશહસ્તકમ્ ।

અંગુલૈકા તતો વૃદ્ધિ-ર્યાંવત્પચ્ચાશહસ્તકમ્ ॥૨૮૪॥

નાગરાહ્યમિદં દ્વાર-મુક્તં ક્ષીરાર્ણવે મુને ! ।

દશાંશેન યદા હીનં, દ્વારં સ્વર્ગે મનોરમે ॥૨૮૫॥

અધિકં ચ દશાંશેન, પ્રાસાદે પર્વતાશ્રિતે ।

તાવત્ ક્ષેત્રાન્તરે પ્રોક્ત-મર્હે ચાદિ મુનોશ્વર ! ॥૨૮૬॥

૧. આજકાલના શિલ્પીઓ મૂલમાં આવેલ 'કલા' શબ્દનો અર્થ 'સોલમો ભાગ' એમ કરે છે, પણ તે વરાવર જણાતો નથી, શિલ્પશાસ્ત્રમાં બીજા પારિભાષિક શબ્દોની જેમ 'કલા' પણ પારિભાષિક શબ્દ છે અને તેનો અર્થ વે આંગલ એવો થાય છે, જેમકે—

“ સ્યાદેકમંગુલં માત્રા, કલા પ્રોક્તાઽદ્ગુલદ્વયમ્ ” ઇત્યાદિ ।

શિવદ્વારં ભવેજ્જ્યેષ્ઠં, કનીયશ્ચ જિનાલયે ।
 મધ્યસ્થં સર્વદેવાનાં, સર્વકલ્યાણકારકમ્ ॥૨૮૭॥
 ઉત્તમં તૂદયાધેન, પાદોનં મધ્યમાનકમ્ ।
 કનીયસ્તત્ર હીનં ચ, વિસ્તૃતં દ્વારમેવ ચ ॥૨૮૮॥

માંટી૦—૧ હાથના પ્રાસાદે દ્વાર આંગલ ૧૬, આ ૧૬ આંગલની વૃદ્ધિ ૪ હાથના પ્રાસાદ સુધી કરવી; ૫ થી ૧૦ હાથ સુધી ૪ આંગલની વૃદ્ધિ કરવી, ૧૧ થી ૨૦ અને ૨૧ થી ૩૦ હાથ સુધીના વંને દશકના પ્રાસાદોના દ્વારના ઉદયમાં પ્રતિહસ્ત ૨-૨ આંગલનો વધારો કરવો, ૩૧ થી ૫૦ હાથ સુધીના પ્રાસાદોના દ્વારોદયમાં પ્રતિહસ્તે ૧-૧ આંગલની વૃદ્ધિ કરવી, હે મુનિ ! ક્ષીરાર્ણવમાં આ પ્રકારના દ્વારોને 'નાગરદ્વાર' કહ્યું છે.

આ દ્વારમાનને દશાંશહીન કનિષ્ઠમાન કરવાથી સ્વર્ગના મનોહર ચૈત્યોનું દ્વારમાન થાય છે, અને દશાંશયુક્ત જ્યેષ્ઠમાન કરવાથી પર્વતાશ્રિત પ્રાસાદોનું દ્વારમાન થાય છે, હે મુનીશ્વર ! પ્રાસાદ માને આવેલ મધ્યમાન સ્થાનાન્તરનાં સર્વ પ્રાસાદોનું દ્વારમાન કરવું યોગ્ય છે.

શિવપ્રાસાદનું દ્વાર જ્યેષ્ઠ, જિન પ્રાસાદનું દ્વાર કનિષ્ઠ અને બીજા સર્વદેવોના દેવાલયનું દ્વાર મધ્યમ માનનું કરવું સર્વ પ્રકારે કલ્યાણકારી છે, વિસ્તારમાં દ્વાર પોતાના ઉદયથી અર્ધમાનનું હોય તો ઉત્તમ ગણાય, ઉત્તમને ચતુર્થાંશ હીન કરવાથી વિસ્તારનું મધ્યમાન થાય છે અને તેથી પણ હીન કરતાં કનિષ્ઠ વને છે.

ભૂમિજપ્રાસાદદ્વારમાન-અપરાજિતપૃચ્છાયામ્—

એકહસ્તે તુ પ્રાસાદે, દ્વારં સૂર્યોગ્લોદયમ્ ।
 હસ્તે હસ્તે સૂર્યવૃદ્ધિ-ર્યાવત્ સ્યાત્પશ્ચહસ્તકમ્ ॥૨૮૯॥
 ત્રિ તુર્યાંશાચ્ચ સસાન્તં, નવાન્તં ચ તદર્ધતઃ ।
 તદ્દર્ધ્વ શતાર્ધાન્તં ચ, વર્ધયેદ્ બ્રહ્મગુલૈઃ પુનઃ ॥૨૯૦॥

उच्चर्यार्धेन विस्तारं, शुभं स्यात्तु कलाधिकम् ।
भूमिजे द्वारमानं च, प्रयुक्तं वास्तुवेदिभिः ॥२९१॥

भा०टी०—एक हाथना भूमिज प्रासादने १२ आंगल उंचुं द्वार होय, पांच हाथ सुधीना प्रासादोने एज प्रमाणे प्रतिहस्ते १२-१२ आंगलनी उदयमां वृद्धि करवी, ए पछी ७ हाथ सुधी प्रतिहस्ते ९-९ आंगलनी, ९ हाथ सुधी ६-६ आंगलनी अने ९ पछी ५० हाथ सुधीना प्रासादोना द्वारोदयमां प्रतिहस्ते २-२ आंगलनी वृद्धि करवी.

द्वारनी उंचाईना अर्धभागे तेनो विस्तार करवो शुभ छे, विस्तारमां १ कला अधिक होय तो पण श्रेष्ठ छे; भूमिज प्रासादनुं द्वारमान वास्तुवेदि विद्वानोए उपर प्रमाणे जणाव्युं छे.

द्राविडद्वारमान-अपराजित पृच्छायाम्—

एकहस्ते तु प्रासादे, द्वारं विद्यादशांगुलम् ।
दशांगुलं प्रतिकरं, यावत् षड्हस्तकं भवेत् ॥२९२॥
अत उर्ध्वं दिक्करान्तं, वृद्धिः पञ्चांगुला भवेत् ।
द्वयंगुला च ततो वृद्धिः, पञ्चाशद्धस्तकावधि ॥२९३॥
पृथुत्वं च तदर्धेन, शुभं स्यात्तु कलाधिकम् ।
द्राविडे द्वारविस्तारः, प्रयुक्तो वास्तुवेदिभिः ॥२९४॥

भा०टी०—एक हाथना द्राविड प्रासादनुं द्वार १० आंगलना उदयवालुं करवुं अने ६ हाथ सुधीना प्रासादोना द्वारोनुं मान ए जरीते प्रतिहस्ते १०-१० आंगलनी वृद्धिए करवुं, ए पछी १० हाथ सुधी प्रतिहाथे ५ आंगलनी अने ११ थी ५० हाथ सुधी प्रतिहाथे २ आंगलनी वृद्धि करवी. द्वारनो विस्तार एना उदयथी अर्ध प्रमाणमां राखवो, १ कला-अधिक विस्तार होय तो शुभ छे, वास्तुशास्त्रना विद्वानोए द्राविडद्वार विस्तार उपर प्रमाणे कस्यो छे.

द्वारमानो नो उपयोग—

विमाने भूमिजं मानं, वराटेषु तथैव च ।

मिश्रके लतिने चैव, मानं शस्तं च नागरम् ॥२९५॥

दशहस्तात्परं चैव, सान्धारे कामदं तथा ।

विमाने नागरच्छन्दे, कुर्याद्विमान-पुण्यके ॥२९६॥

नागरं शोभनं द्वारं, तथा सिंहावलोकने ।

वलभ्यां भूमिजं मानं, द्राविडं फांसनाकृतौ ॥२९७॥

धातुजे रत्नजे चैव, दारुजे च रथारूहे ।

यश्छन्दश्चैव प्रासादो, द्वारं तन्मानकं भवेत् ॥२९८॥

भा०टी०—विमान तेमज वराट जातिना प्रासादोनां द्वारो भूमिज माननां करवां, मिश्रक तथा लतिन जातिना प्रासादोनुं द्वारमान नागर जातिना माननुं करवुं सारुं छे, तथा दश हाथथी अधिक मानना सान्धार-प्रासादो, नागरछन्दना विमानो, विमान-पुण्यको, तथा सिंहावलोकनो; आ वधा प्रासादोनां द्वारो नागर माननां करवां ए शोभास्पद छे.

वलभी प्रासादनुं द्वार भूमिज माननुं करवुं, फांस आकारना शिखरोवाला नपुंसक प्रासादो, धातुना प्रासादो, रत्नना प्रासादो, काष्ठना प्रासादो अने रथारूह प्रासादो; आ वधाने द्राविडमाननुं द्वार करवुं जोइये.

जे प्रासाद जे छन्द उपर वनेल होय तेज जाति माननुं द्वार ते प्रासादने करवुं योग्य गणाय छे.

द्वार शाखाओ—

कोइ पण घर के प्रासादना द्वारने अमुक संख्यामां शाखा होवी जोइये एवो शास्त्रमां नियम छे, १ थी ९ शाखाओ वालां द्वारो होय

छे, ब्राह्मण, वैश्य अने शूद्रनां गृहद्वारो एक शाखी होय तो शुभ, होमशाला अने अग्निथी चालतां लोह आदिनां कारखानानां द्वारो द्विशाख, मंडलेश्वर (एक देशना राजा) ने त्रिशाख, कारुजातिना लोकोनां घराने चतुःशाख, चक्रवर्तीना प्रासादने पंच शाख, धोवी आदिने षट्शाख, सर्वदेवोना प्रासादोने सप्तशाख, पक्षिगृहोने अष्ट-शाख अने महादेवना प्रासादने नवशाख द्वार करवुं.

एक शाख तथा नवशाखना द्वारमां ध्वजाय आपवो, द्विशाखमां धूम्राय, त्रिशाखमां सिंहाय, चतुःशाखमां श्वानाय, पंचशाखमां वृष-भाय, षट्शाखमां खराय, सप्तशाखमां गजाय अने अष्टशाखना द्वारमां ध्वांक्षाय देवो.

ए विषयमां अपराजितपृच्छानुं निरूपण—

देवेशानां नवशाखं, सप्तशाखं दिवौकसाम् ।
 सार्वभौमे पञ्चशाखं, त्रिशाखं मंडलेश्वरे ॥२९९॥
 एकशाखं तु कर्तव्यं, शूद्र-वैश्यद्विजन्मनाम् ।
 नवान्त एकशाखादा-वायदोषं विशोधयेत् ॥३००॥
 यथाशास्त्रं तथा मानं, तथा युक्तिर्विधीयते ।
 तथा द्वाराणि सर्वाणि, कर्तव्यान्येव शिल्पिभिः ॥३०१॥
 अंगुलं सार्धमर्धं वा, कुर्याद्धीनं तथाधिकम् ।
 आयदोषविशुद्धयर्थं, ह्रास-वृद्धी न दूषिते ॥३०२॥
 प्रासादजातिरूपैश्च, तद्विधां द्वार सूत्रणाम् ।
 तलच्छन्दानुसारेण, द्वारशाखां विभाजयेत् ॥३०३॥
 त्रयांगादि विभेदेन, नवांगस्यानुसारतः ।
 शाखात्रयं त्रयांगेषु, पञ्चांगेषु च पञ्चकम् ॥३०४॥

સપ્તશાસ્ત્રાશ્ચ સપ્તાંગે, નવશાસ્ત્રા નવાંગકે ।

હીનશાસ્ત્રં ન કર્તવ્યં, અધિકં નૈવ દૂષયેત્ ॥૩૦૫॥

શ્લાઠ્ઠી૦—શિવના પ્રાસાદનું દ્વાર નવશાસ્ત્ર, વીજા દેવોનું પ્રાસાદદ્વાર સપ્તશાસ્ત્ર, ચક્રવર્તીના પ્રાસાદનું દ્વાર પાંચશાસ્ત્ર, મંડલિક રાજાના પ્રાસાદનું દ્વાર ત્રિશાસ્ત્ર અને શૂદ્ર, વૈશ્ય તથા બ્રાહ્મણના ઘરોનાં દ્વાર એક શાસ્ત્રનાં કરવાં. એક શાસ્ત્રથી નવ શાસ્ત્ર સુધીના પ્રત્યેક દ્વારમાં આય શુદ્ધિ કરવી, જે શાસ્ત્રમાં છે તેજ યુક્તિપૂર્વક શાસ્ત્રા માન કરવું અને શિલ્પિઓ સર્વ દ્વારો પળ તેજ રીતે શાસ્ત્રાનુસારે કરવાં.

આયને માટે એક, દોઢ અથવા અડધો આંગલ માનથી ઓછો અથવા વધતો કરવો પડે તો કરવો પણ શુદ્ધ આય ઉપજાવવો, કેમકે આય દોષની શુદ્ધિ માટે આટલી હાનિ-વૃદ્ધિ કરવી દૂષિત નથી.

પ્રાસાદની જાતિ અને રૂપને અનુરૂપ દ્વાર રચના પણ તેવી કરવી અને શાસ્ત્રાના નિચલા ભાગમાં પ્રાસાદના તલચ્છંદને અનુરૂપ અંગ વિભાગો પાડવા.

ત્રણ અંગ, પાંચ અંગ, સાત અંગ અને નવ અંગ; આ પૈકીના જેટલા અંગોનો પ્રાસાદ હોય તેટલી જ દ્વાર શાસ્ત્રાઓ તેના દ્વારે કરવી, અર્થાત્ ત્રણ અંગના પ્રાસાદે ત્રણ, પાંચ અંગનાને પાંચ, સાત અંગવાલાને સાત અને નવ અંગના પ્રાસાદને નવ શાસ્ત્ર દ્વાર કરવું. પ્રાસાદના અંગથી ઓછી શાસ્ત્રાનું દ્વાર ન કરવું, અધિક શાસ્ત્રાનું કરે તો દોષ નથી.

અપરાજિતપૃચ્છામાં શાસ્ત્રાઓની વર્તના—

ત્રિશાસ્ત્રાની વર્તના—

ચતુર્ભાગાંડકિતં કૃત્વા, ત્રિશાસ્ત્રં વર્તયેત્તતઃ ।

મધ્યે દ્વિભાગિકં કુર્યાત્, સ્તંભં પુરુષસંજ્ઞકમ્ ॥૩૦૬॥

पत्रशाखा च कर्तव्या, खल्वशाखा तथैव च ।
 स्त्रीसंज्ञा च भवेच्छाखा, पार्श्वयोः पृथुभागिका ॥३०७॥
 निर्गमश्चैकभागेन, रूपस्तंभे प्रशस्यते ।
 पेटके विस्तरः कार्यः, प्रवेशचतुर्थांशकः ॥३०८॥
 कोणिका स्तंभमध्ये तु, भूषणार्थाय पार्श्वतः ।
 शाखोत्सेधचतुर्थांशे. द्वारपालौ निवेशयेत् ॥३०९॥
 कालिन्दी वामशाखायां, दक्षिणे चैव ज्ञाह्ववी ।
 गंगाऽर्कतनयायुग्म-मुभयोर्वामदक्षिणे ॥३१०॥
 गन्धर्वा निर्गमे कार्या, एकभागा विचक्षणैः ।
 नन्दी च वामशाखायां, महाकालश्च दक्षिणे ॥३११॥
 इति त्रिशाखं संप्रोक्तं, पञ्चशाखमथ शृणु ।

भा०टी०—द्वार शाखाना विस्तारमां ४ भागो पाडीने त्रिशाख द्वारनी रचना करवी, मध्यमां २ भागनो पुरुषसंज्ञावालो रूपस्तंभ करवो, स्तंभनी बंने बाजुमां १-१ भागना विस्तार वाली स्त्रीसंज्ञा वाली पत्रशाखा तथा खल्वशाखा, आ बे शाखाओ करवी, रूपस्तंभनो निर्गम १ भागनो राखवो प्रशंसनीय गणाय छे, रूपस्तंभना पेटानो विस्तार प्रवेशना चोथा भाग जेटलो करवो, रूपस्तंभमां बंने तरफ शोभा माटे कोणिओ काढवी.

द्वार शाखनी उंचाईना चोथा भागमां नीचे बे प्रतिहारो करवा, डाबी शाखामां जमना अने जमणी शाखामां गंगानी मूर्तिओ बनाववी, ज्यां गंगा छे त्यां गंगानुं युग्म अने जमनाना स्थाने जमनानुं युग्म प्रतिहारनी डाबी अने जमणी बाजुमां करवुं.

निर्गम भागमां बुद्धिमान शिल्पिओए १ भागना गन्धर्वो बनाववा, डाबी शाखामां नन्दी अने जमणीमां महाकालने आलेखवा, आ प्रमाणे त्रिशाखद्वारनी वर्तना कही हवे पञ्चशाखने सांभल !

पंचशाखनी वर्तना—

शाखाविस्तारमानं च, षड्भिर्भागैर्विभाजयेत् ।
 एकभागा भवेच्छाखा, रूपस्तंभो द्वि भागिकः ॥३१२॥
 निर्गमश्चैकभागेन, रूपस्तंभे प्रशस्यते ।
 कोणिका स्तंभमध्ये च, उभयोर्वामदक्षिणे ॥३१३॥
 गन्धर्वा निर्गमे कार्या, एकभागा विचक्षणैः ।
 तत्सूत्रे खल्वशाखा च, सिंहशाखा च भागिका ॥३१४॥
 सपादः सार्धभागो वा, रूपस्तंभः प्रशस्यते ।
 उत्सेधस्याष्टमांशेन, शस्तं शाखोदयं मतम् ॥३१५॥
 पत्रशाखा च गन्धर्वा, रूपस्तंभस्तृतीयकः ।
 चतुर्थी खल्वशाखा च, सिंहशाखा ततः परम् ॥३१६॥
 पञ्चशाखमितिख्यातं, संक्षेपात्कथितं मया ।

भा०टी०—शाखा विस्तार मानना ६ भागो कल्पी १-१
 भागनी शाखाओ अने २ भागनो वच्चे रूपस्तंभ करवो, रूपस्तंभ
 निर्गममां १ भागनो करवो प्रशस्त छे, रूपस्तंभमां डावी जमणी
 कोणिको करवी अने तेना निर्गममां चतुर शिल्पिओए एक भागनी
 गन्धर्वशाखा करवी, तेना समसूत्रे स्तंभनी बीजी तरफ खल्व शाखा
 अने सिंह शाखा १-१ भागनी करवी, रूपस्तंभना २ भागोमांथी
 १। अथवा १॥ भागनो रूपस्तंभ विस्तारमां राखवो योग्य गणाय,
 द्वार शाखानी उंचाइना ८ भागो करी तेना एक अष्टमांश जेटलो
 शाखानो विस्तार राखवो श्रेष्ठ छे. १ पत्रशाखा, २ गन्धर्व शाखा,
 ३ रूपस्तंभ, ४ खल्व शाखा, अने ५ मी सिंह शाखा; ए प्रमाणे
 पंच शाखद्वारनी शाखाओ होय छे, जेथो ए द्वार 'पंचशाख' ए
 नामथी प्रसिद्ध छे, जेनुं में संक्षेपमां निरूपण कर्युं. हे अपराजित !
 हवे सप्तशाखद्वारने कहुं ते सांभल ।

सप्तशाखद्वारनी वर्तना—

शाखाविस्तारमानं तु, वसुभागविभाजितम् ।
 भाग-भागाश्च शाखाः स्युः, मध्ये स्तंभो द्विभागिकः॥३१७॥
 कोणिका भागपादेन, विस्तारे निर्गमे तथा ।
 निर्गमः सार्धभागेन, रूपस्तंभे प्रशस्यते ॥३१८॥
 गन्धर्वा सिंहशाखा च, निर्गमे भाग एव च ।
 निर्गमश्च तद्धेन, शेषशाखासु शस्यते ॥ ३१९ ॥
 पत्रशाखा च गन्धर्वा, रूपशाखा तृतीयका ।
 स्तंभशाखा भवेन्मध्ये, रूपशाखा तु पञ्चमी ॥३२०॥
 षष्ठी स्यात् खल्वशाखा च, सिंहशाखा च सप्तमी ।
 प्रासादकर्णसहिता, सिंहशाखाऽग्रसूत्रतः ॥३२१॥

भा०टी०—शाखाविस्तारना आठ भाग पाडी बाजुमां एक एक भागनी ६ शाखाओ करवी अने मध्यभां २ भागविस्तारनो १ रूपस्तंभ बनाववो, रूपस्तंभमां बने तरफ विस्तार अने निर्गममां पा. पा. भागनी कोणिओ करवी. रूपस्तंभनो निर्गम दोढ भागनो करवो प्रशंसनीय छे. गन्धर्वा अने सिंहशाखानो निर्गम १-१ भागनो करवो अने बाकीनी शाखाओ निर्गमे अर्धा अर्धा भागनी करवी सारी छे, १ पत्रशाखा, २ गन्धर्वशाखा, ३ रूपशाखा, ४ मध्यमां रूपस्तंभशाखा, ५ रूपशाखा, ६ खल्वशाखा अने ७ सिंहशाखा; सप्तशाख द्वारनी आ ७ शाखाओ छे; आमां सिंहशाखा अने प्रासादनो मूल कर्ण, आ बने समसूत्रमां लेवां, नवशाखद्वारनुं निरूपण पण शिल्पशास्त्रमां करेलुं छे छतां आजे तेनो विशेष उपयोग न होवाथी अहों आपवुं आवश्यक जणातुं नथी.

द्वारशाखाना विस्तारनुं मान-

द्वारोच्छ्रयप्रमाणेन, शाखां विस्तारयेत्सुधीः ।

षडंशेन त्रिशाखां तु, पञ्चशाखां तु पञ्चमिः ॥३२२॥

सप्तशाखां युगांशेन, नवशाखां त्रिभिस्तथा ।

इदं मानं च ज्ञातव्यं, शाखानां विस्तरे शुभम् ॥३२३॥

भा०टी०—द्वारनी उंचाइने अनुसारे बुद्धिमाने शाखानो विस्तार करवो, त्रिशाखानी शाखानो विस्तार द्वारनी उंचाईना छट्टा भाग जेटलो राखवो, पंचशाखनी शाखानो विस्तार द्वारोदयना पंचमांशे राखवो, सप्तशाखद्वारनी शाखानो विस्तार द्वारोदयना चतुर्थांशे राखवो अने नवशाखनी शाखानो विस्तार उंचाईना त्रींजा भाग जेटलो करवो, आ प्रमाणे शाखाओनो विस्तार शुभ जाणवो.

उत्तरंग-

द्वारना उत्तरंगना मध्यगागे ते देवनी मूर्ति करवी के जे देवनी मूर्ति तेमां प्रतिष्ठित करवी होय, तेमज ते देवना परिवारनां रूपको उत्तरंगमां षण करवां के जे शाखाओमां करीं होय, सामान्य देव-मंदिरना उत्तरंगमां कलश, स्वस्तिक, आदि मंगल चिह्नो करवानो रिवाज षण छे, छतां वैदिक देवाना देवालयोना द्वारोना उत्तरंगोमां गणपति करवानो रिवाज विशेष छे.

जिनेन्द्रायतनना ८ प्रतीहारो—

इन्द्रश्चैन्द्रजयश्चैव, महेन्द्रो विजयस्तथा ।

धरणेन्द्रः पद्मकश्च, सुनाभः सुरदुन्दुभिः ॥३२४॥

इत्यष्टौ प्रतिहाराश्च, वीतरागेऽतिशान्तिदाः ।

अनुक्रमेण संस्थाप्याः प्राच्यादिषु प्रदक्षिणाः ॥३२५॥

भा०टी०—जैन प्रासादोमां पूर्वमुख प्रासादना द्वारपालो, १ इन्द्र, २ इन्द्रजय करवा, दक्षिणमुख प्रासादना द्वारपालो १ महेन्द्र, २ विजय नामना करवा, पश्चिममुख प्रासादोना द्वारपालो १ धरणेन्द्र, २ पद्मक करवा अने उत्तरमुख प्रासादना द्वारपालो १ सुनाभ, २

सुरदुन्दुभि नामना करवा. द्वारमां प्रवेश करतां १ लो जमणा हाथे अने २ नंबरनो प्रतिहार डाबा हाथे आवे एवी रीते प्रदक्षिणा क्रमे बनाववा.

आयुधो—

आ वीतरागना प्रतिहारो अतिशय शांति आपनारा छे, माटे पूर्वादि दिशाओमां एमने अनुक्रमे प्रदक्षिणा क्रमथी स्थापवा, इन्द्रना जमणा हाथोमां फल अने वज्र, डाबा हाथोमां अंकुश अने दण्ड; आ ४ आयुधो आपवां, अने एज जमणा हाथनां डाबामां अने डाबा हाथनां जमणा हाथोमां आपवाथी इन्द्रजयनुं रूप बनशे. एज रीते महेन्द्रना जमणा वे हाथोमां वे वज्रो तथा डाबा वे हाथोमां फल अने दण्ड आपवो, अने विजयना हाथोमां महेन्द्रथी अपसव्य क्रमथी एज आपवां. धरणेन्द्रना जमणा हाथोमां वज्र तथा अभय अने डाबा हाथोमां सर्प अने दण्ड आपवो, तथा एज आयुधो पन्नकना हाथोमां अपसव्य क्रमथी आपवां. सुनाभना जमणा हाथोमां फल अने वांसली तथा डाबा हाथोमां वांसली अने दण्ड आपवो; एज आयुधो सुर दुंदुभिना हाथोमां अपसव्य क्रमथी आपवां.

(१) प्रतिमाओनां पदस्थानो—

प्रासादना छन्दानुसारे चोरस, लंबचोरसादि गर्भगृह बनावीने तेना मध्यभागथी प्रारंभ करी २८ मंडलो बनाववा, □ इत्यादि आकारे गर्भगृहनी च्यारे भीतो तरफ एकथी आगे बीजुं आम छेल्लुं २८ गुं मंडल भीतोने अडकतुं आवशे, आ २८ मंडलो पैकीना सर्वना वचला १ ला मंडलमां शिव, २ जा मंडलमां हेमगर्भ, ३ जामां नकुलीश, ४थामां सावित्री, ५मामां रुद्र, ६ठामां कार्तिकेय, ७मामां पितामह, ८मामां वसुदेव, ९मामां जनार्दन, १०मामां विश्वेदेव, ११ मे अग्नि, १२ मे सूर्य, १३ मे दुर्गा, १४ मे गणेश, १५ मे ग्रहो, १६ मे मातृकाओ, १७ मे गणो, १८ मे भैरव, १९ मे क्षेत्रपाल,

૨૦ મે યક્ષરાજ, ૨૧ મે હનુમાન, ૨૨ મે મૃગુ, ૨૩ મે ઘોર, ૨૪ મે દૈત્ય, ૨૫ મે રાક્ષસ, ૨૬ મે પિશાચ અને ૨૭ મે પદે ભૂતોને સ્થાપન કરવા. ૨૮ મું પદ શૂન્ય છે, ત્યાં કોઈ સ્થાપિત થતું નથી.

મંડલોમાં દેવોના સ્થાનોનો અભિદેશ—

વિષ્ણુના સ્થાને ઉમાદેવીને, બ્રહ્માના સ્થાને સરસ્વતિને, મધ્યમંડલમાં સાવિત્રીને, અને સર્વમંડલોમાં લક્ષ્મીને સ્થાપિત કરી શકાય છે.

વીતરામ (જિન) ને વિઘ્નરાજના ૧૪ મા મંડલમાં સ્થાપવા, એમ જિનશાસનમાં કહેલ છે. માતૃમંડલના સ્થાને સર્વદેવીઓ, વેદી અને ઉમી વિષ્ણુની મૂર્તિઓ, જલશાયી વિષ્ણુ અને વારાહ; એ સર્વને વિષ્ણુના મંડલમાં સ્થાપવા. વિષ્ણુનાં સર્વ રૂપોને ૯મા મંડલમાં સ્થાપવાં, કલ્કી અને રામને વારાહના પદમાં સ્થાપવા, અર્ધ નારીશ્વરને રૂદ્રના સ્થાને, હરિહર ઉમાની મૂર્તિને વિષ્ણુના પદમાં સ્થાપવી. મિશ્રમૂર્તિને (ત્રિ પુરુષ-હરિહર-બ્રહ્માની મૂર્તિને) ૭મા બ્રહ્માના સ્થાનમાં, ચંદ્ર-સૂર્ય-પિતામહની મિશ્રમૂર્તિને ભાસ્કરપદમાં, વેદોને બ્રહ્માના પદમાં અને ઋષિઓને ભાસ્કરપદમાં સ્થાપન કરવા, આ ઉપરાંત પ્રત્યેકમાં જે દેવો કહેલા છે તે જેના સાનિધ્યમાં હોય તેના પરિકર રૂપે સર્વકાલે તેના જ પદમાં સ્થાપિત કરવા.

સ્પષ્ટીકરણ—

મંડલોનું તાત્પર્ય પ્રાસાદના ગર્ભગૃહમાં દેવપ્રતિમાને સ્થાપન કરવા યોગ્ય સ્થાનનો નિર્દેશ કરવાનું છે, જે દેવાલયના ગર્ભગૃહનો જેવો આકાર હોય તેજ આકારનાં મધ્યથી કલ્પી એકને ફરતું વીજું, વીજાને ઘેરતું ત્રીજું, ત્રીજાને ચોમેર વીંટતું ચોથું; આમ ૨૮ મંડલો કલ્પવાં અને મધ્યમંડલથી દ્વાર સામેની મોંત તરફ વીજા ત્રીજા ચોથા યાવત્ ૨૮મા મંડલ સુધી નિશાનો કરવાં, પછી સ્થાપનીય દેવનું મંડલ જ્યાં આવતું હોય ત્યાં તેના ગર્ભે લીટી રેવંચી તે લીટી

देवप्रतिमाना पगना गुल्फना गर्भे राखीने ते प्रतिमाने बेसाडवानुं पीठ अथवा पद्मासन बनाववुं, पछीत तरफनो गभारानो भाग पीठ नीचे लेवो, डावी-जमणी तरफनो भाग पण पदना गर्भ-सूत्रमां आवतो होय एटलो पीठमां मेलववो, द्वार तरफ गुल्फ आगेनो पग बहार नीकले एटलो भद्रनो दासो बहार काढवो, उर्ध्व प्रतिमाओ तेमज आसनस्थ प्रतिमाओना आसनो आ रीते ते ते देवना मंडल मध्यथी उठाववां, आसननो निकालो गर्भमध्यथी द्वार तरफना मंडलार्धमां काढवो.

ए विषयमां, (१) अपराजितपृच्छानुं विधान नीचे प्रमाणे ले—

प्रासादानां समस्तानां, विभक्तिर्गर्भभित्तिः ।
 गर्भमध्ये सर्वतश्च, देवताः क्रमतः स्थिताः ॥३२६॥
 चतुरस्रे आयते च, वृत्ते वृत्तायते तथा ।
 अष्टास्रे च तथा प्रोक्तो, गर्भः प्रासादरूपतः ॥३२७॥
 ब्रह्मस्थानादिकं गर्भं, भित्तिपर्यन्तमेखलम् ।
 मण्डलं भवनाकारं, विभक्तिक्रमछन्दतः ॥३२८॥
 अष्टाविंशतिसंख्याकं, मध्यगर्भानुरूपतः ।
 क्रमादेकैकदेवानां, निवासो मंडले स्थितः ॥३२९॥
 प्रथमं मंडलं चैव, यद् भवेद् गर्भमध्यतः ।
 शिवस्य परमं स्थानं, तन्मेरुरिव मध्यतः ॥३३०॥
 यवैर्यवाधैस्तु किञ्चित्, कुर्यादीशानमाश्रितम् ।
 समस्ते च मण्डलार्धे, ततसूत्रेषु देवताः ॥३३१॥
 पादपद्माग्रसंस्थाने, स्वकीयपदमध्यतः ।
 पदस्य गर्भसंस्थाने, पार्श्वगर्भाद्यादिकम् ॥३३२॥
 कर्णपिप्पलिका सूत्रं, भुजगर्भं तु संस्थितम् ।
 पादगुल्फगर्भसूत्रे, पदसूत्रेषु देवताः ॥३३३॥

આ શ્લોકોનો ભાવાર્થ સ્પષ્ટીકરણમાં આવી ગયો છે.

(૨) સમરાંગણસૂત્રધારનાં દેવતાપદસ્થાનો—

ભક્તે પ્રાસાદગર્ભાર્થે, દશધા પૃષ્ઠભાગતઃ ।

પિશાચ-રક્ષો-દનુજાઃ, સ્થાપ્યા ગન્ધર્વ-ગુહ્યકાઃ ॥૩૩૪॥

આદિત્ય-ચણ્ડિ(દ્વિ)કા-વિષ્ણુ-બ્રહ્મેશાનાઃ પદક્રમાત્ ।

ભા૦ટી૦—પછીત તરફના અર્ધગર્ભગૃહને દશે માંગી ક્રમશઃ
મીત તરફના ૧લામાં પિશાચો, ૨જામાં રાક્ષસો, ૩જામાં દૈત્યો,
૪થામાં ગન્ધર્વો, ૫મામાં યક્ષો, ૬ઠ્ઠામાં સૂર્ય, ૭મામાં ચન્દ્રિકા
(ચણ્ડિકા) દેવી, ૮મામાં વિષ્ણુ, ૯મામાં બ્રહ્મા અને ૧૦મા ભાગમાં
શિવની સ્થાપના કરવી.

(૩) સમરાંગણસૂત્રધારના દેવતાપદસ્થાનો

(વીજા પ્રકારે)—

ગર્ભે ષડ્ભાગભક્તે વા, ત્યક્ત્વૈકં પૃષ્ઠર્તોઽશકમ્ ।

સ્થાપનં સર્વદેવાનાં, પશ્ચમેઽશે પ્રશસ્યતે ॥૩૩૫॥

ભા૦ટી૦—અથવા ગર્ભગૃહના ૬ ભાગ કરી પછીત તરફનો
છઠ્ઠો ભાગ છોડીને પાંચમા ભાગમાં સર્વ દેવોની સ્થાપના કરવી
પ્રશંસનીય છે.

(૪) પ્રાસાદમંડનનાં દેવતાપદસ્થાનો—

પટ્ટાધો યક્ષ-ભૂતાદ્યાઃ, પટ્ટાગ્રે સર્વદેવતાઃ ।

તદગ્રે વૈષ્ણવં બ્રાહ્મં, મધ્યે લિંગં શિવસ્ય ચ ॥૩૩૬॥

ભા૦ટી૦—યક્ષ, ભૂત, આદિને પાટ નીચે અને સર્વ જાતિની
દેવીઓને પાટની આગે બેસાડવી; દેવીઓની આગે વિષ્ણુનું અને
વિષ્ણુ આગે બ્રહ્માનું આસન સ્થાપવું અને શિવલિંગને ગર્ભગૃહના
મધ્યભાગે સ્થાપવું.

(५) आज काल प्रचलित देवता पदस्थानो—

प्रासादगर्भस्य दले विधेये, द्वाराग्रखण्डं परिवर्जनियम्।
अन्ये दले पञ्चविभागभक्ते, तस्मिन्विधेयानि निजा-

सनानि ॥ ३३७ ॥

यक्षादयश्च प्रथमे विभागे, द्वितीयभागेऽखिलदेवताश्च ।
ब्रह्मा च विष्णुश्च जिनस्त्रुतीये, चतुर्थभागादधिके हरश्च ॥

॥ ३३८ ॥

भा०टी०—गर्भगृहना २ भाग करी द्वार तरफनो १ भाग
छोडी देवो, बीजा भागना ५ भागो करी तेमां देवताओनां आसनो
निश्चित करवां. (भीत तरफथी गणतां) पहला भागमां यक्ष आदि
पुरुषदेवोनुं, २जा भागमां सर्व देवीओनुं, ३जा भागमां ब्रह्मा विष्णु
तथा जिननुं, अने ४था भागनी बहार शिवनुं आसन स्थापन करवुं.

दृष्टिस्थान—

जेम जुदा जुदा देवोनां पदस्थानो गर्भगृहमां जुदां जुदां होय छे
तेज प्रकारे द्वारमां देवोनां दृष्टिस्थानो पण जुदां जुदां होय छे, उंबराथी
उत्तरंग सुधीनी द्वारनी उंचाई मापीने तेना ६४ भागो करवा, आ ६४
भागो पैकीना नीचेथी १।३।५।७।९।११।१३।१५।१७।१९।२१।२३।
।२५।२७।२९।३१।३३।३५।३७।३९।४१।४३।४५।४७।४९।५१।५३।
।५५।५७।५९।६१।६३; आ ३२ विषमभागो दृष्टिपदो छे, ज्यारे
२ थी ६४ पर्यन्तना तमाम समभागो शून्य स्थानो छे, आ सम-
पदोमां कोइ पण देवनी दृष्टि रखाती नथी, विषम पदो पैकीना १।३।
५।७।९।११।१३।१५।१७; आ नव पदोमां शिव तच्चोको दृष्टिन्यास
थाय छे, ए पछी १९।२१।२३; आ पदोमां व्यक्ताऽव्यक्तादि पदोनी
स्थापना करवी, ए पछी २५मां सपें, २७ मां शेषशायी विष्णु,
२९मां गरुड, ३१मां मातृकाओ, ३३मां यक्ष, ३५मां भृंगशुकर

(वाराह), ३७मां उमा-महेश्वर, ३९मां बुध, ४१मां ब्रह्मयुग्म (ब्रह्मा अने सावित्री!) ४३ मां दुर्वासा-अगस्त्य-अने नारद-ऋषि, ४५ मां लक्ष्मीनारायण, ४७मां विधाता, ४९मां गणेश तथा सरस्वती, ५१ लक्ष्मी, ५३ मां हरसिद्धि, ५५ मां ब्रह्मा विष्णु सूर्य तथा वीतराग (जिन), ५७मां रुद्र, ५९मां चण्डिका, ६१मां भैरव अने ६३ मा स्थानमां वेतालनी मूर्तिनी दृष्टि राखी, ए फलीना ६४मा पदमां कोइनी दृष्टि न राखी, तेने दृष्टिशून्य रहेवा देवुं.

ए विषयमां अपराजित०नुं विधान—

द्वारोच्छ्रयस्य मध्यं तु, वसुभागविभाजितम् ।

शुभाऽशुभदृष्टिस्थानं, हिताऽहितफलप्रदम् ॥३३९॥

पदमेकैककं भूयो, ह्यष्टधा प्रविभाजितम् ।

चतुःषष्ट्यंशोच्छ्रितं स्याद्दुदुस्वरदशान्तकम् ॥३४०॥

विषमांशेषु सर्वेषु, देवतादृष्टियोजनम् ।

दृष्टिस्थानानि द्वात्रिंशद्, द्वात्रिंशच्च विलोमतः ॥३४१॥

विषमस्था शुभा चैवं, विलोमे चाऽशुभोद्गमः ।

दृष्टिदोषविपाकेन, स्थाननाशो घनक्षयः ॥३४२॥

नगरे च पुरे ग्रामे, राष्ट्रे तीर्थे तपोवने ।

दृष्टिवातहतं यच्च, न पुनस्तत् प्ररोहति ॥३४३॥

पादेऽर्चायाः कटिं यावत्, कार्या वाहनदक् तथा ।

भा०टी०—द्वार मध्यनी उंचाईना ८ भाग करवाथी शुभ अशुभ दृष्टिस्थानो, के जे हितकर अने अहितकर छे ते जणाय, एक एक अष्टमांशना फरी ८-८ भागो करी उंचराथी उत्तरंग पर्यन्त द्वारनी उंचाईना ६४ भाग करो, आमां जे विषम भागो छे ते बधामां देवताओनी दृष्टि रहेती होवाथी ते ३२ दृष्टिस्थानो कहेवाय

छे अने ३२ समभागो विपरीत स्थानो छे, बधां विषम स्थानो शुभ अने विपरीत स्थानो अशुभ होय छे. दृष्टिदोषना विपाकथी स्थान-भ्रष्टता अने धनहानि थाय छे. नगरमां, पुरमां, ग्राममां, देशमां, तीर्थमां के तपोवनमां दृष्टिदोषरूप प्रचण्ड वायुथी जे उखडी जाय छे ते फरीने उगर्तुं नथी, माटे दृष्टि शुभ स्थानमां राखवी.

वाहनदृष्टि—

वली देवना वाहननी दृष्टि प्रतिमाना पगथी कटिभाग सुधी ऊंची राखवी, एथी ऊंची न राखवी.

ठक्कुर फेरुनुं दृष्टिविधान—

दृष्टिस्थानना संबन्धमां वास्तुसारकर्ता ठक्कुर फेरुनो मत उप-र्युक्त मान्यताथी जुदो पडे छे, फेरु द्वारोदयना १० भाग करीने दृष्टिस्थानो निश्चित करे छे. जे नीचेनी गाथाभोथी जणासे.

दस भागकयदुवारं, उहुंवर-उत्तरंगमज्ज्जेणं ।

पहमंसि सिवदिट्ठी, बीए सिवसत्ति जाणेह ॥३४४॥

सयणासणसुर तइए, लच्छीनारायणं चउत्थे य ।

वाराहं पंचमए, छट्ठंसे लेवचित्तस्स ॥ ३४५ ॥

सासणसुर सत्तमए, सत्तमसत्तंसि वीयरागस्स ।

चंडिय भइरव अडमे, नवमिंदा चमरछत्तधरा ॥३४६॥

दसमे भाए सुन्नं, अहवा गंधव्वरक्खसा चैव ।

हिट्ठाउ कमि ठविज्जइ, सयलसुराणं च दिट्ठी अ ॥३४७॥

भा०टी०—उंवर-उत्तरंग वच्चेना द्वारोदयना १० भाग करीने सर्व देवोनां दृष्टिस्थानो निश्चित कर्वां, नीचेथी अनुक्रमे १ ला भागे शिवनी दृष्टि, २जामां शिवशक्तिनी, ३जामां शेषशायी देवनी,

४थामां लक्ष्मी नारायणी, ५थामां वाराहनी, ६ठ्ठामां लेपचित्रनी, ७थामां शासनदेवोनी, ७थाना ७मा भागमां वीतराग देवनी, ८थामां चंडिका तथा भैरवनी, ९थामां चमरधर-छत्रधर देवोनी दृष्टि स्थापकी अने दशमा भागने दृष्टि रहित राखवो अथवा १०मा भागमां गंधर्वो अने राक्षसोनी दृष्टि स्थापन करवी.

ठक्कर फेरुनी दृष्टिस्थान संबन्धी आ मान्यताने कोइ प्राचीन ग्रन्थनो आधार छे के केम ? ए विचारणीय वस्तु छे, आ विषयमां अपराजितनी मान्यता फेरुना ध्यानमां न होय एम पण कही शक्य तेम नथी, कारण के फेरु पोते ज आगल चालीने ८ भागनी चर्चा करे छे, ते लखे छे के—

भागद्व भणंतेगे, सत्तम-सत्तंसि वीयरगस्स ।

गिहदेवालि पुणेवं, कीरइ जह होइ बुद्धिकरं ॥३४८॥

भा०टी०—कोइ द्वारना ८ भाग करीने सातमाना सातमा भागमां वीतरागनी दृष्टि स्थापवानुं कहे छे, पण आम घर दहेरासरमां करवुं जोइये के जेथी वृद्धिकारक थाय.

आचार्य वसुनन्दिनी दृष्टिस्थान विषयक मान्यता—

दिगम्बराचार्य वसुनन्दीनी दृष्टिस्थान विषयक मान्यता उपर्युक्त बने मतोथी जुदी पडे छे, तेओ द्वारना ९ भाग करी सातमाना ७मा भागमां दृष्टिस्थान माने छे; जुओ—

विभज्य नवधाद्वारं, तत्षड्भागानधस्त्यजेत् ।

उर्ध्वं द्वौ सप्तमं तद्वद्, विभज्य स्थापयेद् दशम् ॥३४९॥

भा०टी०—द्वारना ९ भाग करी ६ नीचे अने २ ऊपर छोडवा फली ७थाना एज रीते ९ भाग करीने (सातमा भागमां) दृष्टिने स्थापन करवी.

ठक्कुर फेरुनो दश भागनो अने वसुनन्दिनो नव भागनो दृष्टि-
स्थान विषयक सिद्धान्त कया प्रामाणिक शिल्पग्रन्थना आधारे निर्णीत
थयो हशे ? ए कहेवुं मुश्केल छे, बने विद्वानोना सिद्धान्त कोइ
आधार तो राखता हशे ज, एमां शंका नथी, छतां वर्तमान कालीन
सर्वमान्य ८ भागना सिद्धान्तना मुकाबलामां ए बे अप्रसिद्ध सिद्धान्तोने
अनुसस्वानी अमे सलाह आपी शकता नथी.

प्रणाल मूकवानी दिशा—

अर्चानां तु मुखं पूर्वं, प्रणालं वामतः शुभम् ।
उत्तरायां न विज्ञेया, ह्यर्चारूपेण देवता ॥ ३५० ॥
जैनयुक्तसमस्ताश्च, याम्योत्तर क्रमैः स्थिताः ।
वाम-दक्षिण-योगेन, कर्तव्यं सर्वकामदम् ॥ ३५१ ॥
वामे वामं प्रकर्तव्यं, दक्षिणे दक्षिणं शुभम् ।
मण्डपादिप्रतिमानां, तथा युक्त्या विधीयते ॥ ३५२ ॥
मण्डपे ये स्थिता देवा-स्तेषां वामे च दक्षिणे ।
प्रणालं कारयेद्धीमान्, जगत्यां वै चतुर्दिशम् ॥ ३५३ ॥

भा०टी०—जे प्रतिमाओ पूर्वसंमुख बेठी होय त्यां तेमना
डाबा हाथनी तरफ सिंहासनमां प्रणाल मूकवी शुभ छे, उत्तरमुखी
कोइ देवीनी मूर्ति तो जाणवी ज नहि, बाकी जैन प्रतिमा तेमज
बीजी सर्व प्रतिमाओ जे दक्षिण-उत्तर दिशाना क्रमे बेसाडेली होय
तेमना डाबा तथा जमणा हाथनी तरफ प्रणाल राखवी, दक्षिण
संमुख होय तेना डाबा हाथे, उत्तराभिमुख होय तेना जमणा हाथे
प्रणाल मूकवी, पण विपरीत न मूकवी. उपलक्षणथी जेम पूर्वमुखने
डाबा हाथे मूकवी शुभ छे तेम पश्चिमाभिमुखने जमणा हाथे मूकवी
शुभ छे. मंडपादिकमां प्रतिमाओ बेठेली होय तो त्यां नीचेनी
युक्तिए प्रणाल मूकवी, मंडपमां बेठेल देवोना आसने पण डाबा

જમણા હાથના ક્રમે પ્રણાલ મૂકવી અને જગતીયાં ચ્યારે દિશાઓમાં પ્રણાલો મૂકવી, પૂર્વ-દક્ષિણામુખ બેઠેલ પ્રતિમાઓને ત્યાં ડાબા હાથની તરફ અને પશ્ચિમ-ઉત્તરમુખ દેવોને ત્યાં જમણા હાથે પ્રણાલ મૂકવી શુભ ગણાય છે, પ્રાસાદોને અંગે પણ એજ નિયમ જાણવો.

પ્રતિમામાન-દ્વારોદયમાને (ઊર્ધ્વસ્થિત—)

દ્વારોચ્છ્રયશ્ચ નવધા, ભાગમેકં પરિત્યજેત્ ।

શેષઞ્ચંશે દ્વિભાગાર્ચા, ઞ્ચંશોના દ્વારતોઽથવા ॥૩૫૪॥

માંટી૦—દ્વારના ઉદયના ૯ ભાગ કરી એક ભાગ છોડી દેવો, શેષ રહેલ ૮ ભાગાત્મક દ્વારના ૩ ભાગ પાડી ૧ ભાગ જેટલું ઝંચું આસન બનાવવું અને ૨ ભાગની પ્રતિમા સ્થાપવી, અથવા દ્વારની ઝંચાઈના બે ભાગ જેટલી ઝંચી પ્રતિમા સ્થાપવી.

(ઊર્ધ્વસ્થિત તથા આસીન—)

દ્વારદૈર્ઘ્યે તુ દ્વાત્રિંશે, તિથિ-શક્ર-કલાંશકૈઃ ।

ઊર્ધ્વાર્ચા આસનસ્થા ચ, મનુવિશ્વાર્કભાગતઃ ॥૩૫૫॥

માંટી૦—દ્વારની ઝંચાઈના ૩૨ ભાગ પાડી, તે ત્રીસમાંના ૧૬-૧૫ અથવા ૧૪ ભાગ જેટલી ઉમી પ્રતિમા તે દ્વારવાલા ગભારામાં જ્યેષ્ઠ, મધ્યમ અથવા જઘન્યમાને રાક્ષવી અને બેટી પ્રતિમા તેજ ત્રીણા ૧૪-૧૩-૧૨ ભાગ જેટલી ઝંચી જ્યેષ્ઠ, મધ્યમ અને કનિષ્ઠ માને રાક્ષવી.

ગર્ભમાને પ્રતિમામાન—

ચતુરસ્રીકૃતે ક્ષેત્રે, દશભાગવિભાજિતે ।

ભિસ્તિદ્વિભાગા કર્તવ્યા, ષડ્-ભાગં ગર્ભમન્દિરમ્ ॥૩૫૬॥

તૃતીયાંશેન ગર્ભસ્ય, પ્રાસાદે પ્રતિમોક્તમા ।

મધ્યમા સ્વદશાંશોના, પચ્ચાંશોના કનીયસી ॥૩૫૭॥

भा०टी०—प्रासादनी चौरस भूमिना दश भाग करी बे बे भागनी भीतो करी ४ भाग भीतोमां रेकवा अने ६ भागने गभारो करवो, ए गभारातुं जे मान होय तेना त्रीजा भागना माननी प्रतिमा बेसाडवी ते उत्तम गणाय, उत्तम मानमांथी दशमांश हीन करवाथी मध्यम अने पञ्चमांश हीन करवाथी कनिष्ठ माननी प्रतिमा कहेवाय छे.

प्रासादमाने प्रतिमामान—

१ हाथना प्रासादे प्रतिमा ६ आंगलनी, २ हाथना प्रासादे प्रतिमा १२ आंगलनी, ३ हाथना प्रासादे प्रतिमा १८ आंगलनी अने ४ हाथना प्रासादे प्रतिमा १ हाथना उदयनी बेसाडवी, आम “प्रासाद तुर्यभागस्य, समाना प्रतिमोत्तमा” आ वचनानुसारे प्रासादनुं जे मान होय तेना चोथा भागनी ऊंची प्रतिमा उत्तम माननी गणाय छे, प्रतिमानुं मान द्वारोदय, गर्भविस्तार अने प्रासादविस्तार आदि अनेक उपायो बडे निर्णीत कराथ छे, छतां आ छेछी प्रासाद विस्तारना चोथा भागे प्रतिमामान राखवानी रीति अधिक प्रचलित छे, प्रतिमा विषम अंगुलनी होय तेज श्रेष्ठ गणाय छे, माटे प्रासादमाने तेसुं जे मान आवतुं होय तेमां १ आंगल बधारीने अथवा घटाडीने विषमांगुलनी प्रतिमा बेसाडवी, विषमांगुल माटे ६ ने बदले ७, १२ ने बदले १३ अथवा ११ नी प्रतिमा ज राखवी योग्य गणाय, कदापि तैयार प्रतिमा प्रमाणोपेत न मलतां ओछा माननी मले तो ते चाली शके पण उत्तम मानथी १ आंगलथी अधिक उंची तो न ज चाले.

शिखर—

शृंगो अने उरू शृंगो (प्रासाद मण्डने)

छायस्योद्धर्वे प्रहारः स्यात्, शृंगे शृंगे तथैव च ।

प्रासाद-शृंग-शृंगेषु, अधोभागे तु छाद्यकम् ॥३५८॥

मूलकर्णे रथादौ वा, एक-द्वि-त्रीन् क्रमान्यसेत् ।
 निरन्धारे मूलभित्ती, सान्धारे भ्रमभित्तिषु ॥३५९॥
 ऊरुशृंगाणि भद्रेषु, ह्येकादिग्रहसंख्यया ।
 त्रयोदशोद्धर्षे सप्ताधो, लुप्तानि चोरुशृंगकैः ॥३६०॥

भा०टी०—मंडोवरो ढंकाया पछी छाजा उपर प्रहारनो थर देवो, ज्यां ज्यां शृंगो लगाडवानां होय त्यां पण सर्वत्र प्रहार देवो. प्रासादना प्रत्येक शृंगने नीचे छाद्य लगाडीने उपर प्रहार देवो अने पछी शृंग उढाववुं, मूलकोण, पडरा आदि उपर एक, वे या त्रण शृंगो क्रमे चढाववां, ३ थी अधिक शृंगो चढाववां नहि. निरंधार प्रासादनी मूल भीत उपर अने सांधार प्रासादनी भ्रमणीनी भीतो उपर शृंगो चढाववां, शृंगो भीतमां समाववां पण गभारामां के भ्रमणीनी अंदर पडवा न देवां.

भद्रो उपर १ थी मांडीने ९ सुधीनी संख्यामां उरुशृंगो चढाववां, उरुशृंगोनी उंचाईना १३ भाग कल्पीने निचला ७ भागो नीचेना बीजा उरुशृंगवडे दबाववा, तेना नीचेना ७ भागो ते पछीना त्रीजा उरुशृंगवडे लोपवा; एम प्रत्येक पछीना उरुशृंगवडे पहेला उरुशृंगना ७ भागो लोपवा अने उपरना ६ भाग उवाडा राखवा. जेम शृंगो कोइ पण अंगविभाग उपर ३ थी अधिक चढतां नथी, तेम उरुशृंगो पण ९ थी अधिक चढतां नथी.

अपराजितपृच्छायाम्—

निरंधारेषु सर्वेषु, नागरे मिश्रके पि वा ।
 विमान-नागरच्छन्दे, कुर्याद् विमान-पुष्यके ॥३६१॥
 भित्तेः पृथुत्वे यन्मानं, तच्छृंगक्रम ऊर्ध्वतः ।
 गर्भमध्ये यदारेखा, महामर्मक्षयावहा ॥३६२॥
 एक-द्वि-त्रिक्रमा उक्ता, भित्तिमध्ये यथोत्तरम् ।

अधिका नैव कर्तव्या, पीडिते च कुलक्षयः ॥३६३॥
 एकादिग्रहसंख्यान्त-सुरःशृंगं क्रमोद्गतम् ।
 अधःस्थेन भवेत्लुप्त-सुरःशृंगं तु पश्चिमम् ॥३६४॥
 सप्त सप्त ह्यधो लुप्ता, ऊर्ध्वस्थांशास्त्रयोदश ।
 एकविधं घंटाबाह्यं, स्कन्धे स्कन्धं तु कारयेत् ॥३६५॥
 एकैकं युक्तिसूत्रं तु, कर्तव्यं सर्वकामदम् ।
 सूत्रयित्वा क्रमयोगं, मूलसूत्रानुसारतः ॥३६६॥
 छन्दभेदो न कर्तव्यो, जातिभेदो न वा पुनः ।
 उद्भवेच्च महामर्मं, जातिभेदे कृते ननु ॥३६७॥
 यदि छन्दे छन्दो नास्ति, नाद्यमाद्ये प्रतिष्ठितम् ।
 तत्प्रासादफलं नास्ति, मोक्षकारो न विद्यते ॥३६८॥

भा०टी०—सर्वे जातिना निरंधार प्रासादो, नागरो, मिश्रको, विमाननागर-छन्दो अने विमानपुण्यको; आ सर्व प्रासादोमां भीतना विस्तारनुं जे मान होय ते माननां शृंगो चढाववां, गर्भमां रेखा न पाडवी, केमके रेखानुं गर्भमां पडवुं महामर्मरूप क्षयकारक गणाय छे, भित्ति उपर एक बे अथवा त्रण क्रमो अनुक्रमे चढाववां अधिक न चढाववां, अधिक क्रमो चढाववाथी रेखा अंदर पडवाथी गर्भ पीडाय छे अने गर्भने पीडित करवाथी कुलनो क्षय थाय छे.

भद्रविभागमां १ थी ९ सुधी उरःशृंगो क्रमे चढाववां, नीचेना बीजा उरःशृंग वडे पहला उरःशृंगने लोपवुं (ढाकवुं) एम प्रत्येक उरःशृंगनी उंचाईना १३-१३ भाग करी नीचेना ७-७ भागो बीजा बीजा उरःशृंगो वडे लोपवा, आमलसारानी बहारनो भाग एक प्रकारनो करवो, उंचाईमां विस्तारमां एक सूत्रे क्रमो चढाववा, स्कंधे स्कन्ध मेलववो, सूत्रवडे तमाम क्रमोनी दलविभक्ति करवी, क्रमो

मूल प्रासादना छंद अने जातिना ज करवा, छंदभेद अथवा जाति-भेद न करवो, केमके तेम थतां ' महामर्म ' उत्पन्न थाय छे.

जो छंदे छंद न मले, नीचेनी रचना प्रमाणे उपरनी प्रतिष्ठित न थाय तो ते प्रासाद शुभफल दायक थतो नथी अने तेनाथी मोक्ष-फलनी प्राप्ति थती नथी.

प्रासादस्य पुरो भागे, निर्वाणमुरःशृंगकम् ।

तस्याग्रे शुकका प्रोक्ता, उरःशृंगाद्यनुक्रमात् ॥३६९॥

एक-त्रि-पञ्च-सप्ताङ्क-सिंहस्थानानि कल्पयेत् ।

तस्यादिभक्ति सूत्रं तु, कोलिकायामसूत्रतः ॥३७०॥

भा०टी०—प्रासादना आगला भागे जे ' निर्वाण ' नामक उरःशृंग छे, तेनी आगे शुकनास करवानुं विधान छे. ते शुकनासनी रचानुं सूत्र कोलिनी लंबाईना सूत्रे करवुं, एटले के कोली जेटली उंचाईमां होय तेटली ज शुकनासिका लंबाईमां बहार निकालवी.

कोलीना भेदो—

अश्रिता कुश्रिता शस्या, त्रिधोदितक्रमागता ।

मध्यस्था-भ्रमा-संभ्रमाख्याः, कपिलाः परिकीर्तिताः ॥३७१॥

प्रासादे दशधा भक्ते, भूमिसीमाविचक्षणः ।

अश्रिता च द्विभागा स्यात्, त्रिभागा कुश्रिता तथा ॥३७२॥

शस्या चैव चतुर्भागा, त्रिधा चोक्तक्रमागता ।

मध्यस्था प्रासादपादे, भ्रमा सद्भ्रमिभागतः ॥३७३॥

अर्धं तु संभ्रमा कार्या, प्रासादस्य प्रमाणतः ॥३७४॥

भा०टी०—१ अंशिता, २ कुंशिता, ३ शस्या; आ त्रण कोलिओ अनुक्रमे कही छे, बीजी त्रण कोलिओ—१ मध्यस्था, २ भ्रमा, ३ संभ्रमा नामनी पण छे.

प्रासाद-कोण सीमाविस्तारना १० भागोमांथी २ भागनी

अंचिता, ३ भागनी कुंचिता अने ४ भागनी शस्या नामनी कोली करवी. प्रासादविस्तारना चोथा भागनी १ मध्यस्था कोली, त्रीजा भागनी २ जी भ्रमा अने प्रासादना प्रमाणथी अर्धा भागनी ३ जी संभ्रमा नामनी कोली करवी.

अग्रे कोली कपोलं तु, शुकनासस्तु नासिका ।
 सान्धारे स्तंभरेखा च, कर्तव्या मध्यकोष्ठके ॥३७५॥
 भ्रमणी बाह्याभित्तिश्च, क्रमात्संख्या प्रकल्पयेत् ।
 शृंगोरुशृंगप्रत्यंगै-र्गणयेदण्डकानि च ॥ ३७६ ॥
 कर्णं तवांगं तिलकं, कुर्यात् प्रासादभूषणम् ।
 कर्णं रथं प्रतिरथं, सुभद्रं प्रतिभद्रकम् ॥ ३७७ ॥
 सलिलान्तरमार्गेषु, शुद्धान्येवांगसंख्यया ।
 इहैवांगप्रमाणेन, सपादं शृंगमुच्छ्रये ॥ ३७८ ॥
 स्कन्धस्यार्धोदये घण्टा, सर्वकामफलप्रदा ।

भा०टी०—प्रासादने आगे कोल, ते प्रासादना 'कपोल' रूप अने शुकनास 'नासिका' रूप होय छे. संधार प्रासादोमां मध्यकोष्ठकना स्तंभथी रेखा उठाववी, अने भ्रमणी तथा बाह्यभित्तने प्रासादनी मानसंख्यामां परिगणित करवी.

शृंगो, उरुशृंगो अने प्रत्यंगोथी अंडको गणवा अने कणी, तर्वांग, तिलक; ए वधां प्रासादना भूषण रूपे करवां, कोण, रथ, प्रतिरथ, सुभद्र, प्रतिभद्र; आ वधां प्रासादनां अंगो गणाय छे, जलमार्गो वच्चे आ अंगोनी संख्या स्पष्ट जणाय छे, अर्थात् प्रत्येक बे अंगो वच्चे पाणीतार छोडवाथी उक्त अंगो एक बीजाथी जुदा जणाइ आवे छे, आ अंगोना मानानुसारे उपर शृंगो बनाववां, अने प्रत्येक शृंग पोताना विस्तारथी सवायुं उंचुं करवुं. स्कंधना विस्तारना अर्धा भाग जेटलो आमलसारानो उदय करवो शुभ फलदायक छे,

प्रहाराशं पुनर्दद्यात्, पुनः शृंगाणि कारयेत् ।
 शृंगे शृंगे च प्रासादं, विभक्तमिव कारयेत् ॥३७९॥
 समस्तानामधोभागं, कुर्याच्छायविभूषितम् ।
 अधःशृंगपक्षभागे, ऊर्ध्वशृंगव रोद्रमः ॥ ३८० ॥
 उरुशृंगं यदा लुप्तं, रेखा-कर्ण-जलान्तरैः ।
 तत्र कारयितुः पीडा, कर्तुंश्चापि महद् भयम् ॥३८१॥

भा०टी०—जे अंगो उपर शृंगो उठाववां होय तेनी उपर प्रथम प्रहार थरो देवा अने पछी शृंगो करवा, फरि प्रहार देवा अने फरि शृंगो करवां; भिन्न भिन्न शृंगोमां प्रासादने वहेंची देवुं, समस्त शृंगोनी निचलो भाग प्रथम छाजाओथी विभूषित करी उपर प्रहार लगाडी ते उपर शृंगो बनाववां. नीचेना शृंगोनी एक बाजुथी उपरनां शृंगो उठाववां.

रेखा, कर्ण अने जलमार्गोथी जो उरुशृंग लोपाय तो कराव-
 नारने पीडा अने करनारने पण भयतुं कारण बने छे.

मूलशिलात उदये, पर्यन्तकलशान्तके ।
 विभक्ते विंशतिभागै-रध ऊर्ध्वं प्रकल्पयेत् ॥३८२॥
 अष्टभिर्भागैर्ज्येष्ठः, सार्धैरष्टभिर्मध्यमः ।
 कनिष्ठो नवभिर्भागै-स्त्रिधा मण्डोवरो मतः ॥३८३॥
 दोषा ये ऊर्ध्वभागास्तैः, कर्तव्यः शिखरोदयः ।
 इदं मानं समुद्दिष्टं, प्रोक्तं वै वास्तुवेदिभिः ॥३८४॥

भा०टी०—खरशिलार्थी कलश पर्यन्तना प्रासादना उदयना
 २० भागो करी नीचे उंचेना विभागो कल्पवा, नीचेना भागमां
 ८-८॥ अने ९ भाग ऊंचो अनुक्रमे ज्येष्ठ, मध्यम, अने कनिष्ठ
 मंडोवरो करवो, उपर जे भागो रहे तेदलो ऊंचो शिखरनो उदय

करवो, वास्तुशास्त्रना ज्ञाताओए कहेल मंडोवरानुं अने शिखरनुं मान आ प्रमाणे कह्युं.

रेखा—

शिल्पशास्त्रमां शिखरनी रेखा महत्त्वनुं स्थान धरावे छे. अपरा-जितपृच्छामां रेखाना निरूपणमां ३ सूत्रो (अध्यायो) अने १०१ श्लोको रोकथेला छे, कोइ पण जातना प्रासादना शिखरनुं निर्माण रेखा ज्ञान विना निर्दोषपणे थइ शकतुं नथी, शिखरनी ऊंचाई अने तेना बलन (नमन)नुं परिमाण नकी करवा सूत्रनी दोरी वडे लींटीओ खंचवामां आवती, तेओने शिल्पशास्त्रोमां 'रेखा' ए नाम अपायुं छे.

रेखाना भेदो—

शिल्पशास्त्रमां रेखाओ वे प्रकारनी बतावी छे, एक 'नागरी रेखाओ अने बीजी 'चन्द्रकला' रेखाओ.

नागरी रेखाओनी वे पच्चीसीओ होय छे, एक पच्चीसी 'उदयभेदोद्भवा' अने बीजी 'कलाभेदोद्भवा.' बने पच्चीसीओनो अनुक्रमे शिखरना उदय अने बलनमां उपयोग थाय छे, बीजी पच्चीसीनी रेखाओने खंड अने कलाओ लागती होवाथी 'कला-भेदोद्भवा' ए नाम पड्युं छे.

नागरी रेखाओ पैकीनी ए बीजी पच्चीसीनी पहली रेखा पंचखंडी, बीजी षट्खंडी, आम एक-एक खंडनी वृद्धिए २५ मी रेखा २९ खंडी थाय छे. आ जातिनी रेखाओमां ५ थी ओछा अने २९ थी अधिक खंडो होता नथी.

आ रेखाओना प्रतिखंडे एक एकनी वृद्धिए कलाओ लागे छे, आ पच्चीसीनी पहली पंच खंडी रेखा के जेनुं नाम 'चन्द्रकला' छे, एना पहला खंडमां १, बीजामां २, एम वधारतां पांचमामां ५ कलाओ उपजे छे, एकंदर एना ५ खंडोमां १५ कलाओ लगाडाय

छे, ए नियमानुसार आनी पच्चीसमी 'त्रैलोक्यविजया' रेखांना २९ खंडोमां ४३५ कलाओ उपजे छे अने आखी पच्चीसीनी ४४७५) च्यारहजार च्यारसौ पंचोतेर कलाओ उपजे छे, शिखरना बलनमां आ कलाओ पैकीनी कोइ पण १-१ कलानी हानि वृद्धिए कलाओ जेटलां शिखरो उपजे छे.

चन्द्रकला रेखाओ—

साधारण रेखाओनुं 'चन्द्रकला' ए नाम एनी सोलनी संख्याने लीधे पड्युं लागे छे, केमके मूलमां ए रेखाओ १६ छे अने बधी 'समचार' खंडो वाली छे, पण आ सोल पैकीनी प्रत्येकनी पाछल बीजी १५-१५ रेखाओ विषमचारिणी पण छे, तेथी ए २५६ नी संख्याए पहोंचे छे.

'चन्द्रकला' रेखाओमां त्रण खंडो अने चोवीस कलाओथी ओछा खंडो के कलाओवाली कोइ रेखा होती नथी. पहेली चन्द्रकला रेखा के जेनुं नाम 'शशिनी' छे ते त्रिखंडा छे अने एने चोवीस कलाओ होय छे, ए पछीनी १५ रेखाओ पण एनीज जातिनी होवाथी ते छे तो त्रिखंडा, पण ए बधीमां प्रथमखंड सिवायना खंडोमां कलाओनी वृद्धि थती जाय छे, बीजा त्रिखंडाना बीजी खंडमां ९ अने त्रीजामां १० कलाओ लागे छे, पहेला खंड करतां त्रीजामां एक चतुर्थांश कलाओ वधु होवाथी ए रेखा 'सपादचार' वाली कहेवाय छे, एज प्रमाणे जेम जेम रेखाओनो नंबर वधे छे तेम तेम तेना खंडो वधे छे अने तेनी साथे चार पण वधे छे.

सोलमी त्रिखंडाना पहेला खंडनी ८ कलाओ करतां त्रीजा खंडनी ३८ कलाओ पोणा पांचगणी थइ जाय छे अने तेथी ए रेखाओनो चार पोणापांच गगो गणाय छे.

चन्द्रकलारेखाओ पैकीनी बीजी मूल रेखा 'शान्तिनी' गणाय

છે, આ ચતુષ્સ્વષ્ટા છે, એના ચ્યારે સ્વંડોમાં ૧૨-૧૨ કલાઓ લાગે છે, અર્થાત્ એ પળ સમચાર વાલી છે, ત્રિસ્વંડાની જેમ એની પાછલ પળ બીજી ૧૫ ચતુષ્સ્વંડાઓ છે, જે અનુક્રમે સપાદ, સાર્થ, પાદોન-દ્વય આદિ ચાર વાલી છે; આ પ્રમાણે પ્રત્યેક મૂલ રેલામાં એક એક સ્વંડની વૃદ્ધિ થતાં ૧૬ મી 'અમૃતા' રેલા અઠાર સ્વંડવાલી બને છે.

મૂલ રેલાઓમાં જેમ જેમ નંબર વધે છે તેમ તેમ એમના પહેલા સ્વંડોમાં ૪-૪ કલાઓની વૃદ્ધિ થાય છે, પહેલી મૂલરેલા અને એની અનુવર્તિની ૧૫ રેલાઓના પહેલા સ્વંડમાં ૮-૮ કલાઓ છે તો બીજી મૂલરેલા અને તેની જાતિની ૧૫ રેલાઓના પહેલા સ્વંડમાં ૧૨-૧૨ કલાઓ છે, આમ ૪-૪ ની વૃદ્ધિ થતાં સોલમી 'અમૃતા' અને એની જાતની ૧૫ રેલાઓના પહેલા સ્વંડામાં ૬૮-૬૮ કલાઓ ઉપજે છે અને અમૃતા વર્ગની છેલ્લી રેલાના છેલ્લા સ્વંડમાં ૩૨૩ કલાઓ ઉપજે છે, આ સોલમીની સોલમી અર્થાત્ ૨૫૬ મી રેલાના વધા સ્વંડોની કલાસંખ્યા ૩૫૧૯ ની થાય છે, આમ આ વધી રેલાઓનો કલાવિસ્તાર અનેક લાખોનો સંખ્યામાં છે, અને જેટલા રેલાઓના કલા ભેદો તેટલા જ સમચ્છંદે શિખરના ભેદો ઉપજે છે.

નાગરી રેલાઓ—

ઉદય રેલાઓ—

સૂત્રરેલોત્થિતા રેલા, સંખ્યાયાં પચ્ચવિંશતિઃ ।

નામાનિ કથયિષ્યામિ, સવ્યાસાદર્થથાક્રમમ્ ॥૩૮૫॥

સવ્યાસા શોભના ભદ્રા, સુરૂપા સુમનોરમા ।

શુભા ચૈવ તથા શાન્તા, કૌબેરી ચ સરસ્વતી ॥૩૮૬॥

કૌલા ચ કરવીરા ચ, કુમુદા પદ્મિની તથા ।

કનકા વિકટા ચૈવ, રમ્યા ચ રમણી તથા ॥૩૮૭॥

વસુન્ધરા તથા હંસી, વિશાલા નન્દિની તથા ।

જયા ચ વિજયા ચૈવ, સુમુખા ચ પ્રિયાનના ॥૩૮૮॥
 હસ્તેતાઃ કીર્તિતા રેખાઃ, સંખ્યાયાં પશ્ચવિંશતિઃ ।
 ઉદયભેદોદ્ભવાઃ રૂપાતાઃ, સપાદકર્ણમધ્યતઃ ॥૩૮૯॥

આ૦ટી૦—સૂત્રની રેખાથી જે આકાર ઉત્પન્ન થાય છે તેનું નામ રેખા છે અને સંખ્યામાં તે પચ્ચીસ છે, તે 'સવ્યાસા'દિ ૨૫ રેખાઓનાં અનુક્રમે નામો કહીશ.

૧ સવ્યાસા, ૨ શોભના, ૩ મદ્રા, ૪ સુરૂપા, ૫ સુમનોરમા, ૬ શુભા, ૭ શાન્તા, ૮ કોવેરી, ૯ સરસ્વતી, ૧૦ કૌલા, ૧૧ કરવીરા, ૧૨ કુમુદા, ૧૩ પત્રિની, ૧૪ કનકા, ૧૫ વિકટા, ૧૬ રમા, ૧૭ રમણી, ૧૮ વસુન્ધરા, ૧૯ હંસી, ૨૦ વિશાલા, ૨૧ નન્દિની, ૨૨ જયા, ૨૩ વિજયા, ૨૪ સુમુખા અને ૨૫ પ્રિયાનના; આ ૨૫ નાગરી રેખાઓનાં નામો કહ્યાં; આ રેખાઓ ઉદયભેદે ઉત્પન્ન થનારી હોવાથી આ નામથી પ્રસિદ્ધ છે, આ રેખાઓ સવાયા રેખા વિસ્તાર તુલ્ય ઉદય અને કોણ વિસ્તાર તુલ્ય ઉદય વચ્ચેના અંતરમાં ઉત્પન્ન થાય છે.

કલા રેખાઓ—

પશ્ચ-સ્વળ્લહાદિ-સ્વળ્લહ્લઙ્ઘ્યાં, ઁકોનત્રિંશકાવધિ ।
 સ્વંહચારે કલા જ્ઞેયા, અંકવૃદ્ધિક્રમેણ તુ ॥૩૯૦॥
 ઁક-દ્વિ-ત્રિ-ચતુઃ-પશ્ચ-ષટ્-સપ્તાષ્ટ ક્રમોદ્ગતાઃ ।
 અનેન ક્રમયોગેન, ઁકોનત્રિંશકાવધિ ॥૩૯૧॥
 પશ્ચસ્વળ્લે કલાશ્ચૈવ, સંખ્યયા દશ પશ્ચ ચ ।
 ઁકોનત્રિંશે પશ્ચત્રિં-શદુત્તરં ચતુઃશતમ્ ॥૩૯૨॥

આ૦ટી૦—પાંચ સ્વંહથી માંડીને ૧-૧ સ્વંહને વધારતાં ૨૫ રેખાના ૨૯ સ્વંહો થશે, પ્રત્યેક સ્વંહે નંવરવૃદ્ધિની સાથે કલાવૃદ્ધિ

करवी. एक, वे, व्रण, च्यार, पांच, छ, सात, आठ इत्यादि क्रमे प्रत्येक खंडे एक एक कलानो आंक वधारवो, पंच खंडीना पहेला खंडे १, बीजा खंडे २, त्रीजा खंडे ३, चौथा खंडे ४, पांचमा खंडे ५ कलाओ लगाडतां पांच खंडे १५ कलाओ थशे, एज प्रमाणे २५ मी रेखाना २९ खंडोनी सर्व कलाओ ४३५) च्यारसो पांतीश थशे.

चन्द्रकला कलावती, कलधौता च रुधिरा ।

नलिनी मालिनी मूला, दुन्दुभिर्वनवल्लिका ॥३९३॥

रत्नचूला वृन्दारका, त्रिशिखा नन्दकौमुदी ।

नयना चक्रोन्मत्ता च, विशाला विभ्रमा लता ॥३९४॥

मृगा च दीपशिला च, कुमुदमंजरी तथा ।

पूर्णरम्या च माहेन्द्री, कीर्तिपताका तत्परा ॥३९५॥

त्रैलोक्यविजया चैव, नामभिः प्रश्नविंशतिः ।

कलारेखाः समाख्याताः, सर्वकामफलप्रदाः ॥३९६॥

भा०टी०—१ चन्द्रकला, २ कलावती, ३ कलधौता, ४ रुधिरा, ५ नलिनी, ६ मालिनी, ७ मूला, ८ दुन्दुभि, ९ वनवल्लिका, १० रत्नचूला, ११ वृन्दारका, १२ त्रिशिखा, १३ नन्दकौमुदी, १४ नयना, १५ चक्रोन्मत्ता, १६ विशाला, १७ विभ्रमा, १८ लता, १९ मृगा, २० दीपशिला, २१ कुमुदमंजरी, २२ पूर्णरम्या, २३ माहेन्द्री, २४ कीर्तिपताका अने २५ त्रैलोक्यविजया; आ २५ कलारेखाओ नामपूर्वक कही, शिखरना वलनमां आ रेखाओनो उपयोग करवाथी इच्छानुसारे शिखरो बनावी शक्या छे.

कला रेखाओथी भेदातो स्कंध—

दशधा मूलपृथुत्वं, षड्भागः स्कन्ध उच्यते ।

पञ्चभागो भवेत् स्कन्धो, भागो द्वाभे च दक्षिणे ॥३९७॥

ષટ્ષાસ્ત્રો દોષદઃ પ્રોક્તઃ, પશ્ચમધ્યે ન શસ્યતે ।

પૃષ્ઠપશ્ચમધ્યગે સ્કન્ધો-ર્ધભાગે ચ જિનાંકિતઃ ॥૩૧૮॥

વિભક્તિસૂત્રૈઃ સ્કન્ધાઃ, ક્રમેણ પશ્ચર્વિંશતિઃ ।

નામાન્યનુક્રમાત્તેષાં, કથયે તવ સામ્પ્રતમ્ ॥૩૧૯॥

આ૦ટી૦—રેલા મૂલે વિસ્તાર દશ ભાગનો અને સ્કન્ધ વિભાગે છ ભાગનો કરવો, આ છ ભાગના સ્કન્ધમાંથી ડાબી અને જમણી બાજુથી અર્ધ-અર્ધ ભાગ ઓછો કરીને ૫ ભાગનો સ્કન્ધ ષળ કરી શકાય છે. ૬ ભાગથી અધિક વિસ્તારનો સ્કન્ધ દોષયુક્ત ગણાય છે અને પાંચ ભાગથી ઓછા વિસ્તારનો સ્કન્ધ શોભાની દૃષ્ટિે વચા-ળાતો નથી, પાંચ ભાગના સ્કન્ધની ડાબી જમણી તરફ અર્ધો અર્ધો ભાગ છોડયો, તે પ્રત્યેકના વિસ્તારને ૨૪-૨૪ વિભાગસૂત્રો વઢે ચિન્હિત કરીને તે અર્ધ ભાગોના ૨૫-૨૫ ભાગો કરો, આથી સ્કન્ધના ૨૫ ભેદો ઉત્પન્ન થશે, જેનાં નામો તને અનુક્રમે કહું છું.

૨૫ સ્કન્ધોનાં નામ—

શમઃ શાન્તઃ શુભઃ સૌમ્યો, ગન્ધર્વઃ શંખવર્ધનઃ ।

કીર્તિનન્દો મહાભોગઃ, સંભ્રમો દિશિનાયકઃ ॥૪૦૦॥

રુદ્રતેજાઃ સદાભ્યાસો, જનાનન્દસ્તથોદકઃ ।

યક્ષો દક્ષઃ ક્ષિતિધરઃ, સમાત્રઃ સંયુતસ્તથા ॥૪૦૧॥

શેશ્વરશ્ચ પ્રજાપૂર્ણઃ, પ્રવર્તશ્ચ પ્રધાનકઃ ।

રેલાવિભૂષણશ્ચૈવ, વિજયાનન્દ ઇત્યમી ॥૪૦૨॥

સ્કન્ધાસ્તુ નામતો જ્ઞેયાઃ, સંખ્યાતઃ પશ્ચર્વિંશતિઃ ।

૧ શમ, ૨ શાંત, ૩ શુભ, ૪ સૌમ્ય, ૫ ગન્ધર્વ, ૬ શંખવર્ધન, ૭ કીર્તિનન્દ, ૮ મહાભોગ, ૯ સંભ્રમ, ૧૦ દિશિનાયક, ૧૧ રુદ્રતેજ, ૧૨ સદાભ્યાસ, ૧૩ જનાનન્દ, ૧૪ ઉદક, ૧૫ યક્ષ, ૧૬ દક્ષ,

१७ क्षितिघर, १८ समात्र, १९ संयुत, २० शेखर, २१ प्रजापूर्ण, २२ प्रवर्त, २३ प्रधान, २४ रेखाविभूषण अने २५ विजयानन्द; ए २५ प्रकारना स्कंधो नामथी जाणवा.

चन्द्रकला रेखाओ—

अथातः संप्रवक्ष्यामि, रेखाभेदं पृथग् विधम् ।

चन्द्रकलादि-समुत्पत्तिः, षोडशैव प्रकीर्तिता ॥४०३॥

त्रिखण्डादौ खण्डवृद्धि-र्यावत्खण्डान्यष्टादश ।

षोडशैव समाचारा-श्चन्द्रकलादौ कीर्तिताः ॥४०४॥

अष्टादावष्टषष्टयन्तं, चतुर्वृद्धिक्रमेण तु ।

रेखाणां च प्रयोक्तव्यं, षट्पञ्चाशच्छतद्वयम् ॥४०५॥

भा०टी०—हवे जुदा प्रकारना रेखाभेदने कहुं छुं, चन्द्रकला रेखाओनी मूल उत्पत्ति १६ प्रकारनी कहीं छे, एमां पहेली चन्द्रकला रेखा त्रिखंडा छे, ते पछी १-१ खंडनी वृद्धि थतां १६ मी चन्द्रकला सुधी १८ खण्ड थाय छे, आ १६ मूलरेखाओ समचाखाली छे, जेम पहेलीथी बीजीमां १-१ खंड वधे छे तेम एमना खंडोमां ४-४ कलाओनी पण वृद्धि थाय छे, पहेली त्रिखंडाना प्रत्येक खंडमां ८-८ कलाओ लागे छे, तेम बीजी चतुर्खंडाने च्यारे खंडोमां १२-१२ कलाओ लागे छे, आ नियम प्रमाणे १६ मी १८ खंडाना तमाम खंडोमां ६८-६८ कलाओ लागे छे, आ १६ रेखाओ अने तेमां ए प्रत्येकनी जातिनी १५-१५ रेखाओ शामिल करीने २५६ चन्द्रकला रेखाओनी शिखर निर्माणमां उपयोग करवो.

१६ मूलचन्द्रकला रेखाओनां नाम—

शशिनी शान्तिनी चैव, लक्ष्मिणी कामिनी तथा ।

पुष्पिणी च शुभा शान्ता, आल्हादा कुमुदा तथा ॥४०६॥

सुखासनी शंखिनी च, विद्याशोधनिका तथा ।
 नाहिनी दीपिनी सौम्या, अमृता षोडशी तथा ॥४०७॥
 एकैकस्याः स्वच्छन्देषु, षोडशीव प्रकीर्तिताः ।
 रेखाश्चैवं प्रयोक्तव्याः, षट्पञ्चाशच्छतद्वयम् ॥४०८॥

भा०टी०—१ शशिनी, २ शान्तिनी, ३ लक्ष्मिणी, ४ कामिनी,
 ५ पुष्पिणी, ६ शुभा, ७ शान्ता, ८ आह्लादा, ९ कुमुदा, १०
 सुखासनी, ११ शंखिनी, १२ विद्याशोधनी, १३ नाहिनी, १४
 दीपिनी, १५ सौम्या अने १६ अमृता; ए मूलरेखाओ पैकीनी एक
 एकना स्वच्छंदे १६-१६ रेखाओ कही छे, जे सर्व मलीने २५६
 थाय छे ते आ प्रमाणे—

१ शशिनीआदित्रिखंडा १६; ९ कुमुदाआदिअग्यारखंडा १६,
 २ शान्तिनीआदिचतुष्वखंडा १६, १० सुखासनीआदिबारखंडा १६,
 ३ लक्ष्मिणीआदिपञ्चखंडा १६, ११ शंखिनीआदितेस्रखंडा १६,
 ४ कामिनीआदिषट्खंडा १६, १२ विद्याशोधिनीआदिचउदखंडा १६
 ५ पुष्पिणीआदिसप्तखंडा १६, १३ नाहिनीआदिपंदरखंडा १६,
 ६ शुभाआदिअष्टखंडा १६, १४ दीपिनीआदिसोलखंडा १६,
 ७ शान्ताआदिनवखंडा १६, १५ सौम्याआदिसत्तरखंडा १६,
 ८ आह्लादाआदिदशखंडा १६, १६ अमृताआदिअठारखंडा १६,

आम १६ने १६थी गुणीने २५६ बसो छप्पन्न रेखाओ वास्तु-
 शास्त्रिओए कही छे, तेनो शिखर निर्माणमां उपयोग करवो.

चारविधि—

रेखापृथुत्ववन्मानं, सपादं वा कर्णोदयम् ।
 दिग्भक्ते च तलच्छंदे, स्कन्धे कुर्यात् षडंशकम् ॥४०९॥
 स्कन्धस्थाने कलाचारो, रेखानामन्तसिद्धये ।
 समः सपादः सार्द्धश्च, पादोनद्विगुणस्तथा ॥४१०॥

દ્વિગુણશ્ચ સપાદૌ દ્વૌ, સાર્ધૌ પાદોનકાસ્ત્રયઃ ।

ત્રિગુણોઽથ સપાદોઽસૌ, સાર્ધઃ પાદોનવેદકઃ ॥૪૧૧॥

ચતુર્ગુણઃ સપાદશ્ચ, સાર્ધઃ પાદોનપશ્ચકઃ ।

इति षोडशधा चारं, त्रिखंडाद्यास्तु लक्षयेत् ॥४१२॥

भा०टी०—रेखा विस्तार तुल्य वा रेखा विस्तारथी सवायो अथवा कर्णव्यासतुल्य रेखानो उदय करवो, रेखाने तलछन्दे १० विभाग जेटली विस्तृत करीने स्कन्धविभागे तेने अंदर वाली ६ भाग जेटली राखवी, कलाचार स्कन्धविभागमां जइने रेखाओनो अंत करे छे अर्थात् स्कन्ध सुधी रेखा उंची जइने समाप्त थाय छे.

कलाओनो चार समान, सवायो, दोढो, पोणा वे गणो, बेगणो, सवाबेगणो, अढीगणो, पोणात्रणगणो, त्रणगणो, सवात्रणगणो, साढा-त्रणगणो, पोणाच्यारगणो, च्यारगणो, सवाच्यारगणो, साढाच्यारगणो अने पोणापांचगणो; आम त्रिखंडादि १६-१६ रेखाओनी कलाओनो चार (चढाव) १६ प्रकारनो जाणवो जोईये.

प्रत्येक मूलरेखा समचारी होय छे, त्यारे ते पछीनी १५ रेखा-ओमां एक पछी एकमां ४-४ कलाओ वधती होवाथी ४ कलानी वृद्धिवाली 'सपादचारी' ऽनी वृद्धिवाली 'सार्धचारी,' आदि नामो प्राप्त करे छे.

प्रथमा त्रिखंडाना प्रथम खंडमां ऽ, बीजा खंडमां ऽ अने त्रीजा खंडमां षण ऽ कलाओ लागे छे; आम १६ त्रिखंडाओना प्रथम खंडमां ऽ-ऽ कलाओ लागे छे.

प्रथमा त्रिखंडाना ३ खंडोनी २४ कलाओ वडे स्कन्ध २४ ठेकाणे भेदाय छे, द्वितीया त्रिखंडानी २७ कलाओ वडे २७ ठेकाणे, त्रीजीनी ३० कलाओथी ३० ठेकाणे स्कन्ध छेदाय छे, आम जे जे रेखाओना सर्व खंडोनी जेटली कलाओ होय तेतले

ठेकाणे ते स्कन्धने चिन्हित करे छे अने तेटला प्रकारनां शिखरोनी उत्पत्ति थाय छे.

अधःखण्डे तु यश्चार, उर्ध्वखण्डेऽप्यसौ भवेत् ।

समं सा लभते चारं, सपादं वा पदाधिकम् ॥४१३॥

समं सपादं सार्धं वा, यावत्पादोनपञ्चकम् ।

त्रिखंडादी खंडवृद्ध्या-ऽष्टादशखण्डकावधि ॥४१४॥

भा०टी०—नीचेना रेखा खण्डमां जे चार होय छे तेज उपरना खंडमां पण होय छे, सम, सपाद के सार्ध, जे चार निचला खंडमां होय छे, ते चारने रेखा प्रत्येक खंडमां मेलवे छे, त्रिखंडाथी मांडीने अष्टादशखंडी रेखा सुधीनी प्रत्येक रेखाने माटे एज नियम लागु करवो, भले ते समचारी होय, सपादचारी होय अथवा तो पादोन-पञ्चचारी होय, पण तेना पोताना प्रत्येक खंडमां तो चार सरखोज पामे.

कलाविधि

आदिखंडे चतुर्वृद्धि-रूर्ध्वखण्डेषु तद्गुणा ।

षोडशादिद्वि-रष्टोक्ता, षट्पञ्चाशच्छतद्वयम् ॥४१५॥

स्कन्धस्थाने कलासंख्या, रेखाणां तु गुणोदिता ।

सिद्धाश्चयत्कृतारेखा-स्तदूर्ध्वे चामलसारकम् ॥४१६॥

विषमा भूमिकाः कार्यी, न शस्यन्ते समास्तु ताः ।

भा० टी०—पूर्व रेखाना आदिखंडनी कलाओथी बीजा छंदनी अग्रेतन रेखाना आदिखंडमां ४ कलाओनी वृद्धि थाय छे. ते अग्रेतन प्रथम प्रथम रेखा समचारी होवाथी तेना बधा खंडोमां कलासंख्या तेज रहे छे अने समानछंदनी पोतानी बीजी १५ विषम-चारी रेखाओना द्वितीयादि खंडोमां रेखाना नंबर प्रमाणे कला संख्या बधे छे, प्रथम विषमचारी रेखाना प्रथम खंडे ८ कलाओ हशे तो

बीजे ९ अने त्रीजे १० कलाओ लागशे, जो तेज छंदनी विषमचारी १६मी रेखा दशे तो तेना प्रथमखंडे ८, बीजे २३ अने त्रीजे ३८; आम रेखाना नंबर अनुसारे उपला प्रतिखंडे १५-१५ नी वृद्धि थशे; केमके आ १६मी रेखानो विषमचारिणी तरीके १५मो नंबर छे, एज प्रमाणे तमाम रेखाओना पोताना प्रथम खंडथी द्वितीयादि खंडोनी कलासंख्या पोतपोताना नंबर प्रमाणे प्रथमखंडनी कलाओथी द्वितीयादि खंडोमां तत्तद्गुणी वृद्धि करीने कलाओ लगाडवी, आम १६ ने १६ गुणा करीने बनावेली २५६ रेखाओने विषे जाणवुं.

स्कंधविभागे प्रथम करतां बीजीनी ३ कलाओ वधारवी, बीजी करतां त्रीजीनी ३ वधारवी, सर्वथी पहेली 'शशिनी' रेखानी २४ कलाओ स्कंधविभागे लागे छे त्यारे बीजीनी २७, त्रीजीनी ३०, चोथीनी ३३, इत्यादि एक एक रेखानी वृद्धिए स्कंधविभागे ३-३ कलाओनी वृद्धि करता जवुं, ज्यां ज्यां कलाओ वडे रेखाओनी समाप्ति थाय त्यां उपर आमलसारो सूकवो.

रेखासमाप्ति विषम भूमिकाए करवी, समभूमिए करवी प्रशस्त नथी, अर्थात् उदयरेखा अने वलनरेखाओनी विषम कलाओ ज्यां एकत्र थती होय त्यां प्रासादनी रेखा छोडवी उत्तम गणाय छे.

२५६ रेखाओनां नाम—

१६ त्रिखण्डा—शशिनी, शीतला, सौम्या, शान्ता, मनोरमा, शुभा, मनोभवा, वीरा, कुमुदा, पद्मशेखरा, ललिता, लीलावती, त्रिदशा, पूर्णमण्डला, पूर्णभद्रा, भद्रांगी.

१६ चतुष्खण्डा—शान्तिनी, शुभा, शांता, त्रिदिवा, देवदुर्लभा, बीभत्सा, शिवा, सौम्या, वीरभद्रा, नारायणी, सुषिरा, शेखरा, रम्या, पूर्णा, पूर्णभद्रा, विजया.

१६ पञ्चखण्डा—लक्ष्मिणी, श्री, शंभवा, विदुरा, पूर्णमण्डला,

सुगन्धा, मानसी, शैला, नन्दा, मन्दाक्षी, कौतुका, शान्ति, लाभा, कल्याणी, सुभद्रा, भद्रेश्वरी.

१६ षट्खण्डा—कामिनी, कमला, पद्मा, संध्रमा, भ्रमशेखरा, शुभा, सारसंभृता, वैदेवी, गान्धारी, गन्धर्वा, वृता, तिलका, लोकसुंदरी, भद्रा, महाभद्रा, ऐन्द्री.

१६ सप्तखण्डा—पुष्पिणी, पुष्पिका, चम्पा, समहा, तिलका, अद्भुता, सिद्धा, सिद्धांगी, स्वरूपा, क्रीडामणि, नरनारा, नरेश्वरी, विरूपाक्षा, महोद्भवा, सिद्धांशा, सर्वमंडला.

१६ अष्टखण्डा—शुभा, शीतला, गन्धा, मालती, हर्म्यसंयुता, मेघा, मेघपदा, अनुजा, कृष्णा, निर्मला, परा, तेजा, प्रतापतेजा, कीर्ति, आनन्दा, संभृता.

१६ नवखण्डा—शान्ता, मुकुला, नन्दा, श्रिया, भद्रा, नन्दना, शोभना, सुभद्रा, सुता, कुलनेदिनी, गंभीरा, मधुरा, शेखरा, शिखरोन्नता, महानीला, रत्नाचला.

१६ दशखण्डा—आह्लादा, श्रिया, नन्दा, गोमती, नाम-सुन्दरी, सुभद्रा, भद्रिका, भद्रा, भद्रांगा, भद्रमालिनी, संभृता, भूतशरदा, पताका, कीर्तिवर्द्धिनी, माहेन्द्री, सुन्दरी.

१६ एकादशखण्डा—कुमुदा, भद्रका, ध्वजा, ध्वजाक्षी, मकरध्वजा, सुपताका, वीरभद्रा, रूपभद्रा, विनायका, वीरा, विक्रमा, रम्या, मन्मथा, देवसुन्दरी, उग्रा, कनकेशी.

१६ द्वादशखण्डा—सुखासनी, वरदा, रम्या, सुन्दरा, मोदा, मोदकी, शिवा, सर्वलंभा, विशाला, कुलनायका, शिभा, शिवतमा, दिव्या, शिवांगना, विश्वेश्वरी, विश्वरूपा.

१६ त्रयोदशखण्डा—शान्तिकी, विमला, सूर्या, वर्धना,

विजया, वाञ्छिता, वैशोद्भवा, वंशभूता, रेखिता, वंशतारा, अधि-
वास्था, व्रथा, माना, शिवोद्भवा, वांस्या, वसंतोद्भवा.

१६ चतुर्दशखण्डा—विद्याशोधनी, रम्या, गौरी, हंसी, सरस्वती, सारंगी, सौरम्या, शुकाग्रा, अशोका, शौचकी, कनका, कनकायती, कंदर्पी, कंदर्पाश्रिता, कमला, कलहंसी.

१६ पञ्चदशखण्डा—नाहिनी, हस्तिनी, कुम्भिका, गज-
मालिनी, गजी, गजांगा, शेखरी, राज्ञी, गजेश्वरी, रत्ना, रत्नगर्भा,
माला, जया, उग्रतेजा, मिया, आसक्ता.

१६ षोडशखण्डा—द्वीपिनी, सिंदिनी, सिंही, सिंहरूपा,
सिंहोभता, सिंहग्रीवा, सिंहा, सिंहास्या, सिंहेश्वरी, महानादा,
नादवती, सिंहनादा, नादोद्भवा, सिंहांगना, सिद्धा, सकलेश्वरी.

१६ सप्तदशखण्डा—सौम्या, नारायणी रम्या, नरा, नरो-
त्तमा, नरेश्वरी, नराह्वा, नरांगा, नृत्येश्वरी, वीरमती, वीरांगी,
महावीरा, वीरनायका, वीभत्सा, सती, शान्ता.

१६ अष्टादशखण्डा—अमृता, रम्या, गंगा, ककुदा, कुमु-
दशेखरी, वीभत्सा, पार्थिवी, कान्ता, मनोहरी, स्वरूपा, विक्रमा,
शान्ता, मनोज्ञा, सर्वतोमुखी, यज्ञभद्रा, सुखासीना.

अपराजितपृच्छाना मूलश्लोकोमां उपर्युक्त २५६ चन्द्रकला
रेखाओनां नामो छे, अमोए विस्तार भयथी श्लोको न लखतां
नामोनो ज निर्देश कर्यो छे.

नागरे लतिने रेखा, सान्धारे मिश्रके तथा ।

लाञ्छना-सूत्र-योगेन, रेखा भवति नागरी ॥४१७॥

कथिता गर्भमाधार्य, विमाने भूमिजे तथा ।

वराटे द्राविडे चैव, प्रशस्ता गर्भमार्गतः ॥४१४॥

સ્તંભાદ્યાશ્ચૈવ ગર્ભાદ્યાઃ, પ્રાસાદભિત્તિમાનતઃ ।
 ચતુર્વિધા ભવેદ્રેશ્વા, વિમાને ચૈવ ભૂમિજે ॥૪૧૯॥
 વરાટે દ્રાવિડે કાર્યા છન્દે વિમાનનાગરે ।
 વિમાન-પુષ્યકે તદ્વદ્, વલ્લભીષ્વપિ કામદા ॥૪૨૦॥
 લાઞ્છના-સૂત્રયોગેન, રેશ્વા સૂત્રદ્વયાઙ્કિતા ।
 વેણિકોશોદ્ભવા રેશ્વા, કલાભેદક્રમાદપિ ॥૪૨૧॥
 નાગરે લતિને કાર્યા, સાન્ધારેઽપ્યથ મિશ્રકે ।
 દારુજે ચ રથારોહે, પ્રશસ્તા સર્વકામદા ॥૪૨૨॥
 શિશ્વાન્તા વા ભવેદ્રેશ્વા, ઘણ્ટાન્તા ચાપ્યથોચ્યતે ।
 સ્કન્ધાન્તા ચ તથા પ્રોક્તા, અન્યથા દોષકારણમ્ ॥૪૨૩॥

આ૦ટી૦—નાગર, લતિન, સાંધાર અને મિશ્રક પ્રાસાદાના શિશ્વરોમાં નાગરી રેશ્વાને પ્રયોગ કરવો, નાગરી રેશ્વા ચિહ્નમાટે તૈયાર કરેલા સૂત્રના યોગથી ઉત્પન્ન થાય છે.

વિમાન પ્રાસાદ તથા ભૂમિજ પ્રાસાદની રેશ્વા ગર્ભમર્યાદાએ વિસ્તૃત કરવાનું કથન છે. તથા વરાટ અને દ્રાવિડ જાતિના પ્રાસાદોમાં રેશ્વા વિસ્તારગર્ભથી કેંદ્રક બાહર રાખવી શ્રેષ્ઠ છે.

સ્તંભ મર્યાદાએ, ગર્ભ મર્યાદાએ મિત્તિ મર્યાદાએ, મિત્તિ મર્યાદાએ અને ઉક્ત ગર્ભની બાહરની મર્યાદાએ; આમ વિસ્તારમાં રેશ્વા ચ્યાર પ્રકારની હોય છે. આ ચ્યારે પ્રકારની રેશ્વા વિમાન અને ભૂમિજ પ્રાસાદમાં લેવાય છે, વલી વરાટ, દ્રાવિડ, વિમાનનાગર, વિમાનપુષ્યક અને વલ્લભી; આ બધી જાતિના પ્રાસાદોમાં પૂર્વોક્ત ચ્યારપ્રકારની રેશ્વાઓ યથાયોગ્ય ઉપયોગમાં લેવી શુભ ફલદાયક છે.

નાગર, લતિન, સાંધાર, મિશ્રક, દારુજ (સિંહાવલોકન) અને રથારોહ; આ સર્વ પ્રાસાદોમાં વેણિકોશના યોગથી લાઞ્છના સૂત્રદ્વયવડે

उत्पन्न यती नागरी रेखा अथवा कलामेदना क्रमयी उत्पन्न यती चन्द्रकलादि रेखाओ सर्वशुभफलने आपनारी छे.

रेखानो उदय शिखान्त, घण्टान्त, अने स्कन्धान्त; आम त्रण प्रकारनो होय छे, एयी ओछो अधिक उदय करे तो दोषकारक छे.

१६ कलारेखाओ
(भेद-खंड-कलासहित)
त्रिखण्डायाः १६ भेदाः

८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८
८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४
८	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३
८	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३
८	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३

चतुर्खण्डायाः १६ भेदाः

१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२
१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८
१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८
१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८
१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८

पञ्चखण्डायाः १६ भेदाः

१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६
१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	३२
१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	३२
१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	३२
१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	३२

द्वादश खण्डायाः १६ भेदाः कला सहिताः

५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५
५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५
५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५
५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५
५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५
५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५
५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५
५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५
५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५
५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५
५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५
५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५
५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५
५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५

त्रयोदश खण्डायाः १६ भेदाः

२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८
६०	५१	७१	१७	९६	१०१	१११	१२२	१३२	१४२	१५३	१६३	१७३	१८३	१९३	२०३	२१३	२२३	२३३	२४३
२९	३०	३१	३२	३३	३४	३५	३६	३७	३८	३९	४०	४१	४२	४३	४४	४५	४६	४७	४८
४९	५०	५१	५२	५३	५४	५५	५६	५७	५८	५९	६०	६१	६२	६३	६४	६५	६६	६७	६८
७८	७९	८०	८१	८२	८३	८४	८५	८६	८७	८८	८९	९०	९१	९२	९३	९४	९५	९६	९७
१०८	१०९	११०	१११	११२	११३	११४	११५	११६	११७	११८	११९	१२०	१२१	१२२	१२३	१२४	१२५	१२६	१२७
१३८	१३९	१४०	१४१	१४२	१४३	१४४	१४५	१४६	१४७	१४८	१४९	१५०	१५१	१५२	१५३	१५४	१५५	१५६	१५७
१८८	१८९	१९०	१९१	१९२	१९३	१९४	१९५	१९६	१९७	१९८	१९९	२००	२०१	२०२	२०३	२०४	२०५	२०६	२०७
२३८	२३९	२४०	२४१	२४२	२४३	२४४	२४५	२४६	२४७	२४८	२४९	२५०	२५१	२५२	२५३	२५४	२५५	२५६	२५७
२८८	२८९	२९०	२९१	२९२	२९३	२९४	२९५	२९६	२९७	२९८	२९९	३००	३०१	३०२	३०३	३०४	३०५	३०६	३०७
३३८	३३९	३४०	३४१	३४२	३४३	३४४	३४५	३४६	३४७	३४८	३४९	३५०	३५१	३५२	३५३	३५४	३५५	३५६	३५७
३८८	३८९	३९०	३९१	३९२	३९३	३९४	३९५	३९६	३९७	३९८	३९९	४००	४०१	४०२	४०३	४०४	४०५	४०६	४०७
४३८	४३९	४४०	४४१	४४२	४४३	४४४	४४५	४४६	४४७	४४८	४४९	४५०	४५१	४५२	४५३	४५४	४५५	४५६	४५७
४८८	४८९	४९०	४९१	४९२	४९३	४९४	४९५	४९६	४९७	४९८	४९९	५००	५०१	५०२	५०३	५०४	५०५	५०६	५०७
५३८	५३९	५४०	५४१	५४२	५४३	५४४	५४५	५४६	५४७	५४८	५४९	५५०	५५१	५५२	५५३	५५४	५५५	५५६	५५७
५८८	५८९	५९०	५९१	५९२	५९३	५९४	५९५	५९६	५९७	५९८	५९९	६००	६०१	६०२	६०३	६०४	६०५	६०६	६०७
६३८	६३९	६४०	६४१	६४२	६४३	६४४	६४५	६४६	६४७	६४८	६४९	६५०	६५१	६५२	६५३	६५४	६५५	६५६	६५७

पञ्चदश खण्डायाः १६ अंदाः कला सहिताः

५६	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५६
५६	५७	५८	५९	६०	६१	६२	६३	६४	६५	६६	६७	६८	६९	७०	७१	७२	७३	७४	७५
५६	६०	६२	६३	६६	६७	६८	६९	७१	७३	७५	७६	७७	७८	७९	८०	८१	८२	८३	८४
५६	६१	६२	६५	६८	६९	७४	७५	७८	७९	८३	८४	८५	८६	८७	८८	८९	९०	९१	९२
५६	६०	६३	६६	७१	७३	७६	७८	७९	८३	८५	८६	८७	८८	८९	९०	९१	९२	९३	९४
५६	६१	६२	६५	६८	६९	७४	७५	७८	७९	८३	८४	८५	८६	८७	८८	८९	९०	९१	९२
५६	६०	६३	६६	७१	७३	७६	७८	७९	८३	८५	८६	८७	८८	८९	९०	९१	९२	९३	९४
५६	६१	६२	६५	६८	६९	७४	७५	७८	७९	८३	८४	८५	८६	८७	८८	८९	९०	९१	९२
५६	६०	६३	६६	७१	७३	७६	७८	७९	८३	८५	८६	८७	८८	८९	९०	९१	९२	९३	९४
५६	६१	६२	६५	६८	६९	७४	७५	७८	७९	८३	८४	८५	८६	८७	८८	८९	९०	९१	९२
५६	६०	६३	६६	७१	७३	७६	७८	७९	८३	८५	८६	८७	८८	८९	९०	९१	९२	९३	९४
५६	६१	६२	६५	६८	६९	७४	७५	७८	७९	८३	८४	८५	८६	८७	८८	८९	९०	९१	९२
५६	६०	६३	६६	७१	७३	७६	७८	७९	८३	८५	८६	८७	८८	८९	९०	९१	९२	९३	९४
५६	६१	६२	६५	६८	६९	७४	७५	७८	७९	८३	८४	८५	८६	८७	८८	८९	९०	९१	९२
५६	६०	६३	६६	७१	७३	७६	७८	७९	८३	८५	८६	८७	८८	८९	९०	९१	९२	९३	९४
५६	६१	६२	६५	६८	६९	७४	७५	७८	७९	८३	८४	८५	८६	८७	८८	८९	९०	९१	९२
५६	६०	६३	६६	७१	७३	७६	७८	७९	८३	८५	८६	८७	८८	८९	९०	९१	९२	९३	९४

वास्तुसार प्रकरणमां ठक्कुर फेरुए शिखरोना उदयने अंगे नीचे प्रमाणे जणाव्युं छे—

दूणु पाऊणु भूमजु, नागरू सतिहाउ दिवहु सप्पाउ ।
दाविडसिहरो दिवहो, सिरिवच्छो पऊणदूणो अ ॥४२४॥

भा०टी०—भूमिज प्रासादनुं शिखर बे गणुं अथवा पोणा बे गणुं करवुं, नागर प्रासादनुं शिखर दोहुं, सवायुं, अथवा एकतृतीयांश सहित उंचुं करवुं, द्राविडप्रासादने शिखर दोहुं उंचुं करवुं अने श्री-वत्स जातिना शिखरनी उंचाई पोणा बे गणी करवी. आ शिखरोनी उंचाईना वैविध्यनुं कारण रेखा वैविध्य ज होइ शके, नागर जातिना प्रासादोनां शिखरो दोढां उपरांत उंचां लेइ जवानुं विधान नथी, केमके आ जातिना प्रासादोमां रेखा स्कन्धान्त मानवामां अभवती होइ ते अपेक्षाए शिखरो व्यासतुल्य, सवायां अने दोढां उंचां गण-वामां आवे छे, जे प्रासादोनां शिखरो पोणा बमणां गणाय छे ते जातिने अंगे रेखा स्कन्धान्त अने बमणां उंचां शिखरोभां रेखा शिखान्त मनाती होवी जोइये.

आमलसारकना आकारो—

द्वयोः प्रथयोर्मध्ये, वृत्तमामलसारकम् ॥
नागरे लतिने कुर्यात्, सान्धारे चैव मिश्रके ।
विमान-नागरच्छन्दे, विमान-पुष्पके तथा ॥४२५॥
विमाने भूमिजे चैव, वृत्तं च कर्णिकान्तकम् ।
द्राविडे तु तथा चैव, तं तु रेखानुरूपकम् ॥४२६॥
वराटे तु भवेद् घण्टा, यादृग् मन्दारपुष्पकम् ।
वलभीषु च सर्वासु, गजपृष्ठाकृतिस्तथा ॥४२७॥
नागरे घण्टाकृतिकां, कुर्यात् सिंहावलोकने ।
घण्टा चैवमुपाख्याता, प्रयुक्ता वास्तुवेदिभिः ॥४२८॥

भा०टी०—बने प्रतिरथो वच्चे गोलाकार आमलसारक करवो. नागर, लतिन, सान्धार, मिश्रक, विमाननागर, विमानपुण्यक, विमान अने भूमिज; आ बधा प्रासादोनो आमलसारो गोल अने फरती कणीओ काढेलो बनाववो. द्राविड प्रासादनो आमलसारो तेनी रेखाने अनुरूप होय तेवो, वराट प्रासादनो आमलसारो मंदारवृक्षना पुष्पने आकारे, सर्व वलभी प्रासादोमां आमलसारो हस्तिनी पीठना आकारे लंबगोल, तथा नागर अने सिंहावलोकन प्रासादोनो आमलसारो घंटना आकारनो बनाववो.

आ प्रमाणे वास्तुशास्त्रिओए प्रयोजेल आमलसारानुं निरूपण कर्युं.

आमलसारानी अंगविभक्ति—

उदये च तदर्धे नु, विभक्ते चतुर्भांगिके ।

ग्रीवा पादोनभागा स्यात्, सपादं च तथाऽण्डकम् ॥४२९॥
चन्द्रिका चैकभागेन, भागा चामलसारिका ।

भा०टी०—आमलसारो विस्तारमां बे प्रतिरथोना मध्य बरा-
बर करी तेनो उदय विस्तारथी अर्धमाननो करवो अने ते उदयने ४
भागे वर्हेची ०॥ भागनी ग्रीवा (गलुं), १। भागनुं आमलसारानुं
अंडक, १ भागनी चंद्रिका (गलत) अने १ भागनी आमलसारी
(झांजरी) करवी.

प्रासाद-पुरुष-निवेशन—

अथातः संप्रवक्ष्यामि, पुरुषस्य निवेशनम् ।

न्यसेद्देवालयेऽव्वेवं, जीवस्थाने फलं लभेत् ॥४३०॥

छादनोपप्रवेशेषु, शृंगमध्येऽथवोपरि ।

शुकनासावसानेषु, वेधूर्ध्वे भूमिकान्तरे ॥४३१॥

गर्भमध्ये विधातव्यो, हृदयवर्णको विधिः ।

हंसतुलीं ततः कुर्यात्, ताभ्रपर्यकसंस्थिताम् ॥४३२॥

शयनं चापि निर्दिष्टं, पद्मं च दक्षिणे करे ।
 त्रिपताकं करं वामं, कारयेद् हृदि संस्थितम् ॥४३३॥
 प्रमाणं तस्य वक्ष्यामि, प्रासादादौ समस्तके ।
 हस्तादिशतार्थं यावत्, प्रकल्पयेदनुक्रमम् ॥४३४॥
 वृद्धिमर्धांगुलां हस्ते, यावन्मेरुं प्रकल्पयेत् ।
 एवंविधः प्रकर्तव्यः, सर्वकामफलप्रदः ॥४३५॥
 हेमजे तारजे वापि, ताम्रजे वापि भागशः ।
 कलशे आज्यपूर्णे तु, सौवर्णपुरुषं न्यसेत् ॥४३६॥
 पर्यंकचतुष्पादेषु, कुम्भांश्चतुर एव च ।
 हिरण्यनिधिसंयुक्तान्, आत्ममुद्राभिमुद्रितान् ॥४३७॥
 एवं च रोपयेद् जीवं, यथोक्तं वास्तुशासने ।
 तस्य न संभवेद् दौस्थ्यं, यावदाभूत संप्लवम् ॥४३८॥

भा०टी०—विश्वकर्माजी अपराजितने कहे छे-हवे हुं पुरुष-
 प्रवेशनी विधि कहुं छुं, सर्व देवालयोमां जीवस्थाने पुरुषनो प्रवेश
 करावधो के जेथी फल मले.

शिखरने बांधणे, शिखर मध्यभागे, अथवा तेना उपला भागमा,
 शुक्रनासना अन्ते अने वेदीनी उपरि भूमिकामां गर्भना मध्यभागे
 हृदय प्रतिष्ठानी विधि करवी.

प्रथम त्रांबानो पलंग करावी ते उपर रेशमी तलाइ (गादी)
 बिछाववी अने ते उपर प्रासाद पुरुषने सुवडावधो.

पुरुषना जमणा हाथमां कमल अने डाया हाथमां ३ पताका-
 वाली ध्वजा आपवी ने डावो हाथ पोतानी छातीअे अडकेलो राखवो.

हवे पुरुषनुं प्रमाण कहुं छुं, १ हाथथी ५० हाथना फेरु प्रासाद
 पर्यन्तना तमाम प्रासादोमां पुरुषनुं प्रमाण १ हाथे अर्ध आंगलना

હિસાબે કરવું, ૫૦ હાથ સુધી પ્રતિહસ્તે અર્ધ અર્ધ આંગલની વૃદ્ધિ પ્રાસાદ પુરુષનું નિર્માણ કરવું. આમ પ્રમાણોપેત પુરુષ કરવો કે જેથી સર્વ ઇષ્ટ ફલ દેનારો શાય, સુવર્ણ પુરુષને સોનાના, રૂપાના, શાંબાના, અથવા ત્રણે ધાતુઓના બનેલા અને ઘૃતથી ભરેલા કલશ ઉપર સ્થાપિત કરવો.

પલંગના ૪ પાયાઓ નીચે ઉપર પોતપોતાના લલ્લેલા નામો વાલાં ઢાંકણાં વડે મુદ્રિત કરીને સુવર્ણાદિ રત્નગર્ભિત ૪ નિધિ કલશો સ્થાપન કરવા.

આ પ્રમાણે વાસ્તુશાસ્ત્રમાં કહેલ વિધિથી પ્રાસાદના જીવસ્થાનમાં જે જીવની (પુરુષની) સ્થાપના કરે છે તેને સૃષ્ટિના અંતર્પર્યન્ત દુઃખ-દૌર્ભાગ્ય પ્રાપ્ત થતું નથી.

કલશ

દેવાગારેષુ સર્વેષુ, નૃપાણાં ભવને તથા ।

સંસ્થાપ્યો દિવ્યઃ કલશો, ત્રિશ્વકર્મવચ્ચો યથા ॥૪૩૯॥

શૈલજે શૈલજં કુર્યાદ્, દારુજે દારુજં તથા ।

ધાતુજે ધાતુજં ચૈવ-ચૈષ્ટિકે ચૈષ્ટિકં શુભમ્ ॥૪૪૦॥

ચિત્રે ચિત્રો વિધાતવ્યો, હેમજઃ સર્વકામદઃ ।

શ્રેષ્ઠૌ સર્વત્ર શ્રેષ્ઠાનાં, સુવર્ણકલશઘ્વજૌ ॥૪૪૧॥

ખાંટી—સર્વ દેવમંદિરો ઉપર અને રાજમહેલો ઉપર દિવ્ય કલશ સ્થાપન કરવો એવું વિશ્વકર્માનું વચન છે, પથ્થરના પ્રાસાદ ઉપર પથ્થરનો, કાષ્ઠના મંદિર ઉપર કાષ્ઠનો, ધાતુના પ્રાસાદે ધાતુનો અને ઇંટના પ્રાસાદે ઇંટનો કલશ શુભ હોય છે, ચિત્રવિચિત્ર દ્રવ્યથી બનેલ પ્રાસાદ ઉપર તેવા ચિત્ર પદાર્થનો બનેલો કલશ કરવો. અને સુવર્ણનો કલશ સર્વપ્રકારના પ્રાસાદો ઉપર ચઢાવવો તે ઇચ્છિત ફલ-દાયક છે. સુવર્ણનો કલશ અને ધ્વજ સર્વત્ર શ્રેષ્ઠમાં શ્રેષ્ઠ છે.

પ્રાસાદમાને કલશમાન—

પ્રાસાદસ્યાષ્ટમાંશેન, પૃથુત્વં કલશાણ્ડકે ।
 ષોડશાંશૈર્યુતં શ્રેષ્ઠં, મધ્યં દ્વાત્રિંશદંશતઃ ॥૪૪૨॥
 મૂલરેસ્વાપશ્ચમાંશે, પૃથુત્વં તસ્ય કારયેત્ ।
 ઘણ્ટાવિસ્તારપાદેન, તત્પાદેન યુતં પુનઃ ॥૪૪૩॥
 इत्थं कलशविस्तार, उच्छ्रयस्तस्य सार्धतः ।
 नागरे लतिने शस्तः, सांधारे मिश्रके तथा ॥४४४॥
 વિમાનનાગરચ્છન્દે, વિમાન-પુણ્યકે તથા ।
 ધાતુજે રત્નજે ચૈવ, રથારોહે ચ દારુજે ॥૪૪૫॥
 શૈલજે સ ચતુર્થાંશ, ઐષ્ટિકાદૌ સમસ્તકે ।
 इत्युक्तः कलशश्चैवं, सर्वकामफलप्रदः ॥४४६॥

भा०टी०—१ प्रासादमानना आठमा भाग जेटलो कलशना अंडक (पेटा) नो विस्तार करवो ए कलशनुं कनिष्ठ मान छे, ए मानमां एनो १६मो भाग उमेस्वाथी कलशनुं उत्तममान अने ३२मो भाग बधारवाथी मध्यम माननो कलश गणाय छे.

२-रेखामूलना विस्तारना पञ्चमांशे विस्तृत पण कलश करी सकाय छे.

३-आमलसाराना सवायां चतुर्थांश जेटलो विस्तृत पण कलश होइ शके छे.

આ કલશનો વિસ્તાર કહ્યો, એનો ઉદય વિસ્તારથી દોઢો કરવો. નાગર, લતિન, સાંધાર, મિશ્રક, વિમાનનાગર, વિમાનપુણ્યક; આ બધા પ્રાસાદોનો કલશ ઉક્ત અષ્ટમાંશે કરવો અને ધાતુજ, રત્નજ, રથારોહ, દારુજ (સિંહાવલોકન), શૈલજ અને સર્વપ્રકારના ઐષ્ટિક; આ બધી જાતના પ્રાસાદોના કલશો ઉક્ત માનથી સવાયા માનના (ચતુર્થાંશાધિક) વનાવવા.

ए प्रमाणे सर्व इष्टफल आपनारो कलश कश्चो. आज मानानुसारे वनेलो कलश सर्व इच्छाओने सफल करे छे.

वराटादि प्रासादोनो कलश—

वराटे द्राविडे चैव, भूमिजे विमानोद्भवे ।

वलभीषु समस्तासु, प्रासादस्य षडंशके ॥४४७॥

तत्षडंशयुतः श्रेष्ठः, कनिष्ठस्तद्विहीनकः ।

इत्थं मानं समुद्दिष्टं, कर्तव्यं सर्वकामदम् ॥४४८॥

भा०टी०—वराट, द्राविड, भूमिज, विमान अने सर्वप्रकारनी वलभीओमां प्रासादना षष्ठांश जेटलो कलशनो विस्तार करवो. कलशनुं आ मध्यम मान जाणवुं, आमां १ षष्ठांश वधारतां उत्तम अने १ षष्ठांश घटाडतां कनिष्ठ मान आवे छे, आ प्रकारनुं कलशनुं मान करवुं ते सर्व शुभ फलदायक छे.

कलशनी अंगविभक्ति—

उच्छ्रयो नवभागः स्यात्, षड्भागो विस्तृतिस्तथा ।

अण्डकं तु त्रिपादं च, पादं च पद्मपत्रिका ॥४४९॥

ग्रीवा पादोनभागा च, सपादे द्वे च कर्णिके ।

मातुलिंगं त्रिभिर्भागैः, कर्तव्यं सर्वकामदम् ॥४५०॥

उच्छ्रयः कथितश्चैवं, विस्तारं शृणु सांप्रतम् ।

पद्मपत्रं त्रिभिर्भागैस्तत्कन्दं द्विविभागकम् ॥४५१॥

अण्डकं च घटाकारं, कुर्यात् षड्भागविस्तृतम् ।

ग्रीवा मध्ये द्विभागा स्यात्, चतुर्भिः कर्णिकान्तरे ॥४५२॥

सार्धद्व्यंशं बीजपूर-मग्रे निम्नं सुलक्षणम् ।

प्रमाणसूत्रमाख्यातं, कलशे सर्वकामदे ॥४५३॥

भा०टी०—कलशनी ऊंचाईना ९ अने विस्तारना ६ भाग करवा, ते नव भागमांथी ३ भागनुं अंडक, १ भागनी पद्मपत्री,

૦।। ભાગની ગ્રીવા (ગહુ), ૧। ભાગની બે કણિઓ અને ૩ ભાગનું જંચું બીજોરું (ઢોડલો) કરવું એ શુભદાયક છે, એ કલશની ઝંચાઈના અંગવિભાગો કહ્યા. હવે વિસ્તારને સાંભલ ! પદ્મપત્રનો વિસ્તાર ૩ ભાગનો કરવો, તેના કંદનો વિસ્તાર ૨ ભાગનો અને અંક (પેટ) ઘડાના આકારનું ૬ ભાગે વિસ્તૃત કરવું, ગ્રીવા મધ્યમાં ૨ ભાગના વિસ્તારે અને કણિઓ ૪ ભાગે વિસ્તારમાં કરવી બીજોરું નીચેથી ૨ ભાગે અને ઉપર ૧।। ભાગે વિસ્તારમાં કરવું, આ પ્રમાણે સર્વ અંગો પોતપોતાના માને ઝંચા અને વિસ્તૃત ઉત્તમ લક્ષણ યુક્ત કરવાં, આ પ્રમાણે સર્વેચ્છાપૂરક કલશનું પ્રમાણ સૂત્ર કહ્યું, આ લક્ષણ નાગર પ્રાસાદના કલશનું છે.

પ્રકારાન્તરે કલશના અંગ વિભાગો—(?)

અત ઝર્ધ્વં પુનશ્ચાન્યં, પ્રવક્ષ્યેઽહમનુક્રમમ્ ।

પૂર્વવચ્ચ સમુત્સેધો, વિસ્તરઃ પૂર્વકલ્પિતઃ ॥૪૫૪॥

પદ્મપત્રનિભાકારા, ત્રિપદા પદ્મપત્રિકા ।

કર્ણિકા પદમેકં તુ, સપાદઃ પદ્મસંભવઃ ॥૪૫૫॥

દ્વિભાગં ચાણ્ડકં કુર્યાદ્, વૃત્તાકારં સુલક્ષણમ્ ।

ગ્રીવા પાદોનભાગા સ્યાદ્, ભાગાર્થં ચાર્કપટ્ટિકા ॥૪૫૬॥

લતિને ચૈવ કર્તવ્યા, અર્ધાંશે પદ્મપત્રિકા ।

ત્રિભાગં બીજપૂરં સ્યાદ્, વિકસિતપદ્માકૃતિ ॥૪૫૭॥

ઉચ્છ્રયઃ કથિતશ્ચૈત્થં, વિસ્તરં શૃણુ સાંપ્રતમ્ ।

માંટી—આ પછી વલી કલશના સંબંધમાં અંગોનો બીજા ક્રમ કહું છું, કલશની ઝંચાઈના અને વિસ્તારના પ્રથમની જેમ જ અનુક્રમે ૯ અને ૬ ભાગો કલ્પવા. ઝંચાઈના નવ ભાગોમાંથી નીચે ૩ ભાગની પદ્મપત્રિકા કમલપત્રના આકારની કરવી, ૧ ભાગની કર્ણિકા અને ૧। ભાગનો કમલ સંભવ (પત્ર) કરવો, તે પછી ૨

भागुं गोल आकारुं सुलक्षण अंडक करवुं. ०॥ भागनी ग्रीवा भने ०॥ भागनी अर्कपट्टी करवी. लतिन प्रासादना कलशमां पत्रिका अर्धभागनी करवी. ३ भागुं बीजोरुं (डाडलो) करवुं, बीजपूरनो आकार विकासी कमलना डोडा जेवो करवो, आम ऊंचाईना भागो कक्षा हवे विस्तारना विषयमां सांभल !

पद्मपत्रं त्रिभिर्भागै-द्विभागा कर्णिका वृता ॥४५८॥

पद्माग्रे पत्रि(ष्टि)का चैव, चतुर्भागा च विस्तरे ।

षड्भागमण्डकं चैव, ग्रीवा मध्ये द्विभागिका ॥४५९॥

अर्कपट्टी चतुर्भागा, सार्धत्रयंशा च पत्रि(ष्टि)का ।

सार्धद्वयं बीजपूरं, निम्नाग्रे पद्मकाकृति ॥४६०॥

पद्मनिबन्धतिलकं, मुक्तरत्नां सुवृत्तकाम् ।

अर्कैऽर्कपट्टिकां कुर्यात्, पद्मपत्राऽग्र उन्नताम् ॥४६१॥

भा०टी०—पद्मपत्रनो विस्तार ३ भागनो, कर्णिकानो २ भागनो, पद्मपत्र पछी पट्टिकानो विस्तार ४ भागनो, अंडक विस्तार ६ भागनो, ग्रीवा मध्यमां वे भागनी, अर्कपट्टी ४ भागनी, ३॥ भागनी पट्टिका अने २॥ भागनो बीजोरानो विस्तार करवो, बीज-पूरनो आकार कमलना डोडाना जेवो करवो.

सूर्यना मंदिरे पद्मपत्रनी आगे ऊंची अर्कपट्टी गोल पद्मना तिलक जेवी रत्नजडित करवी.

ध्वज-दण्ड—

ध्वजाधरस्तंभिका च, कलशैश्च विभूषिता ।

वंशाधारा वज्रबन्धा, वंशानां वेष्टनादिकैः ॥ ४६२ ॥

भा०टी०—ध्वजाधार थांभली (दंड) कलशोवडे शोभित

करवी, वंश (दंड) आधार जेवी ते थांभलीने बीजा वांशना आधारे वांश वेष्टनादि के वज्रबन्धो वडे बांधीने सज्जड करवी.

(१) दण्डमान—

आदिशिलोद्भवं मानं, ऊर्ध्वं च कलशान्तिकम् ।
 तृतीयांशे प्रकर्तव्यो, ध्वजादण्डः प्रमाणतः ॥४६३॥
 अष्टमांशेन हीनोऽसौ, मध्यमः शुभलक्षणः ।
 कनिष्ठः स भवेद् दण्डो, ज्येष्ठतः पादवर्जितः ॥४६४॥

भा०टी०—खरशिलाथी कलशना मथारा सुधीनी प्रासादनी ऊंचाईना त्रीजा भाग जेटलो लंबो दण्ड उत्तम गणाय, आने अष्ट-मांश हीन करतां मध्यम अने चतुर्थांश हीन करतां कनिष्ठमाननो दंड थाय छे.

(२) दण्डमान—

प्रासादपृथुमानेन, ध्वजादण्डं तु कारयेत् ।
 मध्यमं दशमांशेन, कनिष्ठं चोत्पञ्चमम् ॥४६५॥

भा०टी०—प्रासादना विस्तारमाने ध्वजा दण्ड कराववो, ते दशमांश हीन करीने मध्यम अने पञ्चमांश हीन करीने कनिष्ठ-माननो दण्ड कराववो.

(३) दण्डमान—

मूल रेखाप्रमाणेन, ज्येष्ठः स्याद् दण्डसंभवः ।
 मध्यमो द्वादशांशेन, षडंशेनः कनिष्ठकः ॥४६६॥

भा० टी०— रेखा मूलना विस्तारमाने ज्येष्ठमानना दण्डनी उत्पत्ति थाय छे, तेमांथी १ द्वादशांश हीन करतां मध्यम अने १ षष्ठांश हीन करतां कनिष्ठमाननो दण्ड बने छे.

दण्डनी जाडाई—

एकहस्ते तु प्रासादे, दण्डो पादोनमंगुलम् ।
 अर्धाङ्गुला भवेद् वृद्धिः, पञ्चाशद्वस्तकावधि ॥४६७॥
 पृथुत्वं च प्रकर्तव्यं, सुवृत्तं, पर्वकान्वितम् ।
 एकादिपर्वतः कार्यः, पञ्चविशतिकावधिः ॥४६८॥
 विषम पर्वोद्गमाश्च, शस्ताः स्वस्वाभिधानतः ।
 त्रयोदश स्युर्दण्डा वै, पर्वभेदैस्तथोत्तमाः ॥४६९॥

भा०टी०—१ हाथना दण्डमां जाडाईनुं मान पोणा आंगलनुं, अने ए पळी ५० हाथ सुधीना मानना प्रासादे दण्डनी जाडाईमां प्रतिहस्ते ०॥ आंगलनी वृद्धि करवी; आ प्रमाणे दंडनो व्यास पर्व-सहित गोलाकारनो करवो, १ थी २५ पर्यन्तना एकपर्वा, त्रिपर्वा, पञ्चपर्वा आदि विषम पर्ववाला १३ प्रकारना दंडो बने छे अने आ वधानां पर्वानुसार जुदां जुदां नामो उत्पन्न थाय छे.

१ जयन्त, २ शत्रुमर्दन, ३ पिंगल, ४ शंभव, ५ श्रीमुख, ६ आनन्द, ७ त्रिदेव, ८ दिव्यशेखर, ९ कालदण्ड, १० महोत्कट, ११ सूर्य, १२ कमल अने १३ विश्वकर्मा, ए एक पर्वादि १३ प्रकारना दंडोनां अनुक्रमे नामो छे, आ वधा विषमपर्वदंडो स्वनाम प्रमाणे गुण करनारा छे.

दण्डनी पाटली—

मण्डूकी तस्य कर्तव्या, अर्धचन्द्राकृतिस्तथा ।
 पृथुदण्डसप्तगुणा, हस्तादिपञ्चकावधि ॥४७०॥
 षड्गुणा च द्वादशान्ते, शेषा पञ्चगुणा तथा ।
 तथा त्रिभागविस्तारा, कर्तव्या सर्वकामदा ॥४७१॥

માંટી૦—દળ્હની પાટલી અર્ધચન્દ્રાકારની કરવી, તેનું માન ૧ થી ૫ હાથ સુધીના દંડે વિસ્તારથી ૭ ગણી, ૬ થી ૧૨ હાથ પર્યન્તના દંડે વિસ્તારથી ૬ ગણી અને તે ઉપરના માનવાલા દંડે વિસ્તારથી ૫ ગણી લાંબી કરવી, તથા વિસ્તારમાં લંબાઈના ૩ જા ભાગની કરવી, ઉક્તમાને લાંબી-પહોલી પાટલી સર્વ ઇચ્છાઓને પૂર્ણ કરનારી હોય છે.

પાટલીનું સ્વરૂપ—

અર્ધચન્દ્રાકૃતેશ્ચૈવ, પક્ષે કુર્યાદ્ ગગારકમ્ ।
 વંશોધર્વે કલશં ચૈવ, પક્ષે ઘટ્ટાપ્રલમ્બનમ્ ॥૪૭૨॥
 ચામરૈર્ભૂષિતં કુર્યાદ્ , ઘંટાપક્ષે વિચક્ષણઃ ।
 પતાકા પાપહારી ચ, શત્રુપક્ષક્ષયંકરી ॥૪૭૩॥

માંટી૦—પાટલીના મધ્યભાગે અર્ધચન્દ્રાકાર કરી તેની બંને બાજુમાં ગગારા કરવા, પાટલીના મધ્યભાગે દંડ ઉપર કલશ કરવો, અને બંને તરફ ઘંટડિઓ લટકાવવી, બુદ્ધિમાને ઘંટડીઓની તરફના ભાગોને ચામરો વડે શુશોભિત કરવા, અને પાટલી ઉપર પાપને દર-નારી તથા શત્રુના પક્ષનો નાશ કરનારી પતાકા-ધ્વજા ચઢાવવી.

દળ્હ શાનો બનાવવો ?

વંશમયસ્તુ કર્તવ્યઃ, સારદારુસમન્વિતઃ ।
 નિર્વ્રણઃ સુદૃઢઃ કાર્યઃ (દળ્હઃ), પ્રાશ્નલો દોષવર્જિતઃ ॥૪૭૪॥
 સમગ્રન્થિર્વિધાતવ્યો, વિભ્રમૈઃ પર્વભિર્યુતઃ ।

માંટી૦—દંડ વાંશનો કરવો અથવા શ્રેષ્ઠ જાતિની લાકડીનો કરવો. તે દંડ ઘા વાગેલો, પોચો, કે વાંકો ચુકો ન હોય પણ નિર્દોષ, સમગાંઠોવાલો અને વિષમ પર્વોવાલો બનાવવો જોઈએ.

ध्वजानुं मान—

ध्वजादण्डप्रमाणेन, पताकां च प्रलंबयेत् ।
 पृथुत्वमष्टमांशेन, त्रिशिखाग्रविभूषिताम् ॥४७५॥
 शिखाः पञ्च प्रकर्तव्या, ध्वजाग्रे तद् विचक्षणैः।
 दिव्यवस्त्रपताका चाऽर्धचन्द्रश्चैव किंकिणी ॥४७६॥

भा०टी०—ध्वजादंडना माने दंड उपर पताका लंबावची, पताकानो विस्तार लंबाईना आठमा भागनो करवो, ३ शिखाओ वडे पताकाने भूषित करवी, अथवा तेने ५ शिखाओ करवी. पताका दिव्यवस्त्रनी बनावची, ते उपर अर्धचन्द्रनो आकार करवो, निचले छेडे शिखाओ उपर घुघरीओ लटकावची.

ध्वजावती (स्तंभिका) रोपण—

रेखार्धे त्रिभागोर्ध्वे वा, सूत्रांशे पादवर्जिते ।
 ध्वजावती तु कर्तव्या, ईशानं नैर्ऋतेऽपि वा ॥४७७॥
 प्रासादवृष्टिदेशे तु, दक्षिणे च प्रतिरथे ।
 स्तंभवेधस्तु कर्तव्यो, भित्तेरस्याष्टमांशके ॥४७८॥

भा०टी०—रेखाना अर्ध भागे, वे तृतीयांशे, अथवा पोणा भागे उपर ध्वजावती स्तंभिका ईशान अथवा नैर्ऋत्य तरफ करवी, प्रासादनी पूठली तरफना जमणा पडरामां प्रासादनी भीतना ८ मा भाग जेटलो स्तंभिका रोपवा माटे खाडो करवो.

शैलजे चैव प्रासादे, कलशस्य पदानुगम् ।
 खादिरमिन्द्रकीलं तु, प्रवेद्य कलशान्तिके ॥४७९॥
 चतुरस्रमष्टास्रं वा, वृत्तं वाऽग्राग्रवर्तुलम् ।
 सुदृढं निर्व्रणं कुर्याद्, गर्भशुद्धं प्रमाणतः ॥४८०॥
 ध्वजावती स्तंभिका च, चतुरस्रा चाष्टांशका ।
वृत्तोर्ध्वं चतुरस्रिका ॥४८१॥

તદૃધ્વે કલશં કુર્યાત્ , સુરૂપલક્ષણાન્વિતમ્ ।
 નિકુશ્ચવલિકે કાર્યે, વંશાધારસ્ય શાશ્વતઃ ॥૪૮૨॥
 વંશબન્ધાસ્તુ કર્તવ્યા, હસ્તે હસ્તે તથા પુનઃ ।
 હસ્તે સપાદે સાર્ધે વા, દ્વિહસ્તે વાઽપ્યથોચિતે ॥૪૮૩॥

ભા૦ટી૦—પથરના પ્રાસાદમાં કલશસ્થાને ચેરનો ‘ ઇન્દ્ર-
 કીલ ’ નીચે પોસીને કલશ પર્યન્ત ઉંચો રાખવો. ઇન્દ્રકીલ નીચે
 ચોરસ, મધ્યમાં અષ્ટાસ્ર અને ઉપર ગોલ કરવો, મજબૂત, શાહા-શાંચા
 વગરનો, નક્કર અને પ્રમાણયુક્ત કરવો.

ધ્વજાવતી સ્તંભિકાને પળ નીચેથી અનુક્રમે ચતુરસ્ર, અષ્ટાસ્ર,
 શોઢશાસ્ર કરી ઉપર ગોલ અને અન્ત ભાગમાં પાછી ચોરસ કરવી,
 તેના ઉપર સુન્દર અને સુલક્ષણવાલો કલશ કરવો. થાંમલીને દવા
 વીને સ્થિર રાખવા માટે શાહાની બહાર બે વલિઓ (મજબૂત લાક-
 ઢિઓ) ટેકા રૂપે ઉમી કરવી, આમ સ્તંભિકાને મજબૂત સ્થિર કરી
 પછી તેની સાથે ધ્વજદંડને મજબૂત બંધોવડે બાંધવો, આ બન્ધો હાથે
 હાથે, સવા સવા હાથે, દોઢ દોઢ હાથે, અથવા બે બે હાથે દંડની
 લંબાઈનો વિચાર કરીને દેવા, બન્ધો વચ્ચે બે હાથથી અધિક અંતર
 ન રાખવું.

જિનેન્દ્ર પ્રાસાદ પશ્ચક—

પદ્મરાગો વિશાલાલયો, વિભવો રત્નસંભવઃ ।

લક્ષ્મીકોટર ઇત્યેવં, પશ્ચૈતે તુ જિનાલયાઃ ૪૮૪॥

ભા૦ટી૦—૧ પદ્મરાગ, ૨ વિશાલ, ૩ વિભવ, ૪ રત્નસંભવ
 અને ૫ લક્ષ્મી કોટર; ૬ પાંચ જિનપ્રાસાદોનાં નામો છે.

તલવિભક્તિ ૨૨ ભાગ—

કર્ણાનન્દી-પ્રતિરથઃ, પૂર્વવચ્ચ સુસંસ્થિતઃ ।

નન્દિકઃ ભાગનિષ્કાસા, દ્વિભાગા પાર્શ્વક્ષોભણા ॥૪૮૫॥

भागनन्दी पुनः कार्या, वेदांशो भद्रविस्तरः ।

निष्कासश्चैकभागस्तु, कर्तव्यः शुभलक्षणः ॥४८६॥

चतुर्भागा भवेद् भित्तिः, शेषं गर्भगृहं भवेत् ।

भा०टी०—कर्ण, कर्णनी नन्दी, अने प्रतिरथ, ए पूर्वनी जेम ज अनुक्रमे ३, ३, १ भागनां वनाववां, नन्दीनो निर्गम १ भागनो करवो, आ कर्णनन्दी अने प्रतिरथनी वच्चे १-१ भागनी क्षोभणा करवी, वली १ भागनी भद्रनी पासे नन्दी करवी, ४ भागनो भद्रनो विस्तार करवो, आम तलना ३-१-१-३-१-४-१-३-१-१-३=२२ भागनी दल विभक्ति करवी, आम करतां ४ भागनी भौत थशे अने बाकीनो गभारो रहेशे, अर्थात् बे भित्तिओमां ८ भागनुं तल रोकाशे अने १४ भागनो गभारो थशे, पांचे जिनेन्द्र प्रासादो ए ज प्रमाणे २२ भाग विराडनां वनाववां.

शिखरनी रचना—

कर्णे शृंगत्रयं कार्यं, क्रमोत्तरभागनिर्गतम् ॥४८७॥

षोडशांशं च शिखर-मुरःशृंगं तदर्धतः ।

तत्पदोनं तदग्रं च, तस्याग्रं च युगांशकम् ॥४८८॥

कर्णतुल्यः प्रतिरथो, द्विक्रमा चैव नन्दिका ।

कर्णे प्रतिरथे भद्रे, शृंगाणि त्रीणि त्रीणि च ॥४८९॥

द्वौ द्वौ कूटौ नन्दिकायां, प्रत्यंगाणि ततोऽष्टभिः ।

भद्रनन्धेककूटं च, पद्मरागः स उच्यते ॥४९०॥

भद्रशृंगे विशालाख्यो, विभवं च तथा शृणु ।

कर्णकूटं नन्दि शृंगं, नाम्ना च विभवस्तथा ॥४९१॥

भद्रशृंगे कामदस्तु, कर्तव्यो रत्नसंभवः ।

भद्रं त्यक्तनन्दिकं कुर्यात्, संभवेल्लक्ष्मीकोटरः ॥४९२॥

ભા૦ટી૦—૧ કોણ ઉપર અનુક્રમે ૩ શૃંગો નિર્ગમે ૧-૧ ભાગનાં કરવાં, રેશ્વાના મૂલ ભાગમાં શિખર ૧૬ ભાગ જેટલું વિસ્તૃત કરવું. ઉરઃશૃંગ શિખરના અર્ધ ભાગે અર્થાત્ આઠ ભાગે વિસ્તારમાં કરવું. બીજું ઉરઃશૃંગ પહેલાના પોળા ભાગનું અર્થાત્ ૬ ભાગનું અને તેથી આગેનું ઉરઃશૃંગ વિસ્તારે ૪ ભાગ જેટલું કરવું. કર્ણે અને પ્રતિરથે સરખા ક્રમો કરવા. નંદિએ ૨ ક્રમો ચઢાવવા અને કર્ણ પ્રતિરથ તથા ભદ્ર ઉપર ૩-૩ શૃંગો ચઢાવવાં, કર્ણની નન્દિઓ ૨-૨ કૂટડા ચઢાવવા અને ૮ પ્રત્યંગો ચઢાવવાં, ભદ્રની નન્દિએ ૧-૧ કૂટડો ચઢાવવો. આ પ્રકારના તલ તથા શિખરવાલો પ્રાસાદ 'પદ્મરાગ' એ નામથી ઓલખાય છે. અંડક સંખ્યા ૭૩.

૨ પદ્મરાગના મદ્રે ચોથું ઉરઃશૃંગ લગાડતાં "વિશાલ" નામનો બીજા પ્રકારનો જિનપ્રાસાદ બને છે. અંડક ૭૭.

૩ કોણ ઉપર ૧-૧ કૂટડો અને નન્દિઓ ઉપર ૧-૧ શૃંગ વધારતાં "વિભવ" નામનો પ્રાસાદ બને છે. અંડક ૯૩.

૪ ઉપરની રચનામાં મદ્રે ૧-૧ શૃંગ વધારતાં "સ્તનસંભવ" પ્રાસાદ તૈયાર થાય છે. અંડક ૯૭.

૫ ઉપરના પ્રાસાદની મદ્રનન્દી અક્રમી કરતાં "લક્ષ્મીકોટર" પ્રાસાદનું નિર્માણ થાય છે. અંડક ૮૧.

અપરાજિત પૃચ્છાના ૧૬૪ માં સૂત્રમાં જિનેન્દ્રપ્રાસાદ-પશ્ચકની નિર્માણવિધિ ઉપર પ્રમાણે વતાવેલ છે, આજના સમયમાં આવા પ્રાસાદોનું નિર્માણ દોઢથી બે લાખ દ્રવ્યના વ્યયથી થઈ શકે છે.

કેસરી આદિ ૨૫ નાગર પ્રાસાદ—

અપરાજિત પૃચ્છામાં આ પ્રાસાદોનું સાંધાર પ્રાસાદરૂપે સવિસ્તર વર્ણન છે પણ ત્યાં જ લખે છે કે—

दशहस्तादधो नास्ति, प्रासादो भ्रमसंयुतः ।

षट्त्रिंशतं निरन्धाराः, कार्या वेदादि हस्ततः ॥४९३॥

भा०टी०—१० हाथना मानथी ओछा माननो कोइ प्रासाद 'भ्रमदार' होतो नथी. ४ हाथथी ३६ हाथ सुधीना माननो प्रासाद निरन्धार (भ्रमहीन) करी शकाय छे, पण भ्रमवालो (सांधार) करवो ज होय तो तेनुं मान दश हाथ नीचे न होवुं जोइए.

पञ्चविंशतिः सांधाराः, प्रयुक्ता वास्तुवेदिभिः ।

भ्रमहीनास्तु ये कार्याः, शुद्धच्छन्देषु नागराः ॥४९४॥

भा०टी०—वास्तुशास्त्रना ज्ञाताओए प्रयोजेल जे २५ सांधार प्रासादो छे ते शुद्ध नागर छंदोमां भ्रमहीन पण करवा, आ उपरथी सिद्ध थाय छे के केसरी आदि प्रासादो भ्रमहीन पण करी शकाय छे, आधुनिक कारीगरो पण घणे भागे कनिष्ठ प्रासादो केसरी आदिमांना ज करे छे तेथी अमो पण अपराजितोक्त भ्रमदार प्रासादोना वर्णनने छोडीने वास्तुमञ्जरी आदिना निरूपणने अत्र उद्धृत करीये छीए.

१ केसरी—

क्षेत्रेऽष्टभक्ते द्वौ कर्णौ, भद्रं वेदांशविस्तरम् ।

भागार्धनिर्गमः पञ्चा-अंडकोऽयं केसरी मतः ॥४९५॥

भा०टी०—प्रासाद भूमिने ८ भागे वहेंचिने २-२ भागना कोण अने ४ भागना विस्तारवालुं भद्र करवुं. १ भागनो निर्गम करवो, आ प्रकारना पञ्चांडक प्रासादने 'केसरी' ए नामथी मान्यो छे. आने अंडक ५ छे, कोणे ४, शिखरे १. ए पछीना सर्वतोभद्रा-

દિશાં ૪-૪ અંકોની વૃદ્ધિ થતાં ૨૫ મા મેરુ પ્રાસાદને ૧૦૧ અંકો લાગશે^૧

૨ સર્વતોભદ્ર—

દશમક્તે દ્વયં કર્ણઃ, સાર્ધં ભદ્રાર્ધકં રથઃ ।

શ્રીવત્સશિખરઃ સર્વ-તોભદ્રો વસુશૃંગવાન્ ॥૪૯૬॥

માંટી૦—પ્રાસાદ તલને ૧૦ થી માંગી ૨ ભાગનો કોણ, ૧૥ ભાગનો પહરો, ૧૥ ભાગનું ભદ્રાર્ધ કરવાથી શ્રીવત્સ જાતિના શિખરવાલો અને ૮ શૃંગવાલો ભદ્રો ઉપર રથિકા ઉદ્ગમવાલો “સર્વતોભદ્ર” પ્રાસાદ બને છે^૨, અંક સંખ્યા ૯, કોણે ૪, મદ્રે ૪, શિખરે ૧.

૩ નન્દન— અને ૪ નન્દિશાલક—

ભદ્રે શ્રીવત્સસહિતો, રથિકાહયશ્ચ નન્દનઃ ।

શૃંગં તદૂર્ધ્વં ભદ્રં તત્-સદૃશં નન્દિશાલકઃ ॥૪૯૭॥

માંટી૦—ભદ્રે શ્રીવત્સ સહિત અને શૃંગવાલો રથિકાઓથી યુક્ત હોય તે ‘નન્દન’ પ્રાસાદ કહેવાય છે, અંક ૧૩, કર્ણ ૮, મદ્રે ૪, શિખરે ૧ અને કર્ણે, પ્રતિરથે, મદ્રે ૧-૧ શૃંગવાલો, મદ્રે રથિકા ઉદ્ગમો સહિત શ્રીવત્સ શિખરવાલો ‘નન્દિશાલક’ પ્રાસાદ ૧૭ અંકનો હોય છે. કર્ણે ૪, પ્રતિરથે ૮, મદ્રે ૪, શિખરે ૧=૧૭.

૧ અપરાજિતમાં કેશરીના કોણો ૪ શ્રીવત્સશિખરો (શૃંગો) અને ભદ્રોમાં રથિકા ઉદ્ગમ કરવાનું વિધાન છે.

૨ જે શિખરના ભદ્રવિભાગે શ્રીવત્સના આકારો કરેલા હોય અને શિખરના અંગ પ્રત્યંગો વધે પાણીતાર છોટેલા હોય તે ‘શ્રી વત્સ શિખર’ કહેવાય છે.

૩ અપરાજિતમાં સર્વતોભદ્રનો ભદ્ર વિસ્તાર ૬ ભાગનો માની ભદ્રમાંથી ૦૧-૦૧ ભાગની બે કોણિઓ કાઢવાનું, ભદ્ર ઉપર ૩ ભાગના વિસ્તારનું મુલ્લભદ્ર બનાવવાનું અને મદ્રે ૫ ઉદ્ગમો અને કર્ણે ૮ શૃંગો બનાવવાનું વિધાન કરેલ છે.

५ नन्दीश अने ६ मंदर—

कर्णे शृंगद्वयं त्वेकं, रथे नन्दीश ईरितः ।

सूर्यांशे प्ररथः कर्णौ, भद्रार्थं द्वि द्वि-भागतः ॥४९८॥

कर्णे भद्रे च शृंगे द्वे, रथे त्वेकं स मन्दरः ।

भा०टी०—कोणो उपर २-२, पडराओ उपर १-१ अने भद्रो उपर १-१ शृंग चढाववाथी 'नन्दीश' प्रासाद बने छे, अंडक संख्या २१; कोणे ८, पडराओए ८, भद्रोए ४, शिखरे १.

प्रासाद तलना १२ भागो करी पडरो, कर्ण अने भद्रार्थ; ए त्रणे २-२ भागतां करवां अने शिखर विभागे, कर्णे तथा भद्रे २-२ तथा पडरे १-१ शृंग चढाववां, आथी रचनावाला प्रासादने 'मन्दर' ए नाम आय छे. अंडक संख्या २५; कोणे ८, पडरे ८, भद्रे ८, शिखरे १.

७ श्रीवृक्ष अने ८ अमृतोद्भव—

मनुभक्ते रथः कर्णौ, भद्रार्थं द्वि-द्विभागतः ॥४९९॥

भद्रपार्श्वद्वये कुर्याद्, भाग-भागेन नन्दिके ।

कर्णे शृंगद्वयं शृंगो-परिष्ठात् तिलकं रथे ॥५००॥

नन्द्यामेकैकतिलकं, भद्रे शृंगत्रयं न्यसेत् ।

श्रीवृक्षस्तत्र कर्णे त्रि-शृंगैः स्यादमृतोद्भवः ॥५०१॥

भा०टी०—प्रासादतलने १४ भागे वहेंची पडरो, कोण अने भद्रार्थ ए त्रणने २-२ भागता करवा, भद्रनी बने पासे १-१ भागनी नन्दी कसी, कोणे २-२, भद्रे ३-३, अने पडरे १-१ शृंग चढावी पडराना शृंग उपर तिलकडो चढाववो अने नन्दी उपर १-१ तिलक चढाववो आथी 'श्रीवृक्ष' प्रासादनी रचना थाय छे, अंडक संख्या २९; कर्णे ८, पडरे ८, भद्रे १२, शिखरे १. तिलक १६; पडरे ८, नंदीए ८. आ श्रीवृक्षना कोण उपर १-१ शृंग वधारी

૩-૩ શૃંગો કરવાથી તેનું નામ “અમૃતોદ્ભવ” પડે છે, અંકક સંખ્યા ૩૩; કર્ણે ૧૨, ભદ્રે ૧૨, પહરે ૮, શિખરે ૧ તિલક ૧૬; પહરે ૮, નંદી ૮.

૯ હિમવાન તથા ૧૦ હેમકૂટ—

દ્વે દ્વે પ્રતિરથે દ્વે દ્વે, ભદ્રે ચ હિમવાન મતઃ ।

ભદ્રે તૃતીયં નન્ધ્યાં તુ, તિલકં હેમકૂટકઃ ॥૫૦૨॥

આ૦ટી૦—કોણે ૩-૩, પહરે ૨-૨ અને ભદ્રે ૨-૨ શૃંગો તથા નંદી ઉપર ૧-૧ તિલક ચઢાવવાથી અમૃતોદ્ભવનું નામ ‘હિમવાન’ પડે છે, અંકક સંખ્યા ૩૭. કોણે ૧૨, પહરે ૧૬, ભદ્રે ૮, શિખરે ૧. તિલક ૮ નંદી ૮. ભદ્ર ઉપર ત્રીજું શૃંગ અને નંદી ૮ તિલક ચઢાવતાં ઉપરનું હિમવાન નામ મટીને ‘હેમકૂટ’ નામ પડે છે. અંકક ૪૧; કોણે ૧૨, પહરે ૧૬, ભદ્રે ૧૨, શિખરે ૧. તિલક ૧૬, પ્રતિનંદી ૨-૨.

૧૧ કૈલાસ તથા ૧૨ પૃથિવીજય—

રેલાધસ્તિલકં નન્ધ્યાં, શૃંગં કૈલાસસંજ્ઞકઃ ।

રેલાયાસ્તિલકસ્થાને, શૃંગં પૃથ્વીજયસ્તદા ॥૫૦૩॥

આ૦ટી૦—કોણના ત્રીજા શૃંગને કમી કરી તેના સ્થાને તિલક અને નંદીના નીચેના ૧ તિલકના સ્થાને શૃંગ ચઢાવવાથી ‘કૈલાસ’ પ્રાસાદ થને છે, અંકક ૪૫; કોણે ૮, પહરે ૧૬, ભદ્રે ૧૨, નંદી ૮, શિખરે ૧. તિલક ૧૨; કોણે ૪, નંદી ૮.

રેલા નીચેના તિલકને સ્થાને ત્રીજું શૃંગ લગાડવાથી ‘પૃથિ-વીજય’ નામનો પ્રાસાદ નિષ્પન્ન થાય છે, અંકક ૪૯; કોણે ૧૨, પહરે ૧૬, ભદ્રે ૧૨, નંદી ૮, શિખરે ૧. તિલક ૮. નંદી ૮.

१३ इन्द्रनील—

षोडशांशे भागमाना, कोणी कर्ण-रथान्तरे ।

शेषं मन्वंशवद् भद्रे, निर्गमोऽशः परे समाः ॥५०४॥

कर्णे शृंगद्वयं नन्द्यां, तिलकं च प्रत्यंगकम् ।

द्वयं रथे त्रयं भद्रे, नन्दी सैकेन्द्रनीलकः ॥ ५०५ ॥

भा०टी०—तलना १६ भाग करीने कोण तथा पडरा वच्चे १ भागनी कोणी (नन्दी) करवी, बाकी दल विभक्ति १४ भागनी. जेम २-२ भागना कोण, पडरो, भद्रार्थ अने १-१ भागनी भद्र-नन्दी करवी, भद्रनो निकालो १ भागनो करवो, बीजा अंगो निकाले समदल करवा.

कोणे २-२ शृंगो, नन्दी उपर तिलक अने प्रत्यंगो ८-८. पडरे २-२ शृंगो, भद्रे ३-३ शृंगो, भद्रनन्दीए १-१ शृंग चढाववाथी ' इन्द्रनील ' प्रासाद बनशे, अंडक संख्या ५३; कोणे ८, प्रत्यंगे ८, पडरे १६, भद्रे १२, भद्रनन्दीए ८, शिखरे १. तिलक ८ नन्दीए.

१४ महानील तथा १५ भूधर—

नन्द्यां शृंगे महानीलो, रेखाधस्तिलके सति ।

रेखाधस्तिलकस्थाने, शृंगं यदि स भूधरः ॥ ५०६ ॥

भा०टी०—नन्दी उपर (कोण पडरा वच्चेनी कोणी उपर) तिलकना स्थाने शृंग अने कोण उपर शृंगना स्थाने तिलक करवाथी ' महानील ' प्रासादनी रचना थाय छे, अंडक ५७; कोणे ४, प्रत्यंगे ८, पडरे १६, भद्रे १२, भद्रनन्दीए ८, कर्णनन्दीए ८ अने शिखरे १. तिलक ४ कोणे. ए ' महानील 'ना कोणे तिलकना स्थाने शृंग चढाववाथी भूधर प्रासाद बने छे, अंडक ६१; कोणे ८,

પ્રત્યંગે ૮, પડરે ૧૬, ભદ્રે ૧૨, ભદ્રનન્દીએ ૮, કર્ણનન્દીએ ૮, અને શિખરે ૧.

૧૬ રત્નકૂટ—

અષ્ટાદશાંશો ભદ્રસ્ય, પાર્શ્વયોર્નન્દિકાદ્વયમ્ ।

શેષં કલાંશવત્ કર્ણે, દ્વે શૃંગે તિલકં તથા ॥ ૫૦૭ ॥

નન્ધ્યાં દ્વે દ્વે તુ તિલકે, પ્રત્યંગં યુગ્મભાગિકમ્ ।

નન્ધ્યાં તુ તિલકં ભદ્રે, યુગં શૃંગત્રયં રથે ॥ ૫૦૮ ॥

રત્નકૂટસ્તદા નામ, શિવલિંગેષુ કામદઃ ।

પ્રશસ્તઃ સર્વદેવેષુ, રાજાં તુ જયકારણમ્ ॥ ૫૦૯ ॥

ખા૦ટી૦—તલના ૧૮ ભાગોમાં ભદ્રના બંને પાર્શ્વભાગોમાં ૧-૧ નન્દી વધારવી, બાકી દલવિભાગો ૧૬ ભાગના તલની જેમજ કરવા, કોણ ઉપર ૨ શૃંગો તથા તિલક કરવા, ૨ નન્દીઓ ઉપર ૨-૨ તિલકો કરવા, વાજુમાં ૨-૨ ભાગના પ્રત્યંગો કરવા, નન્દીએ ૧-૧ શૃંગ, ૧-૧ તિલક કરવા, ભદ્રે ૪-૪ શૃંગો અને પડરે ૩-૩ શૃંગો કરવા, આવી રચનાવાળો પ્રાસાદ 'રત્નકૂટ' એ નામથી ઓલ-ખાય છે, શિવલિંગોને માટે હચ્છાપૂરક છે, છતાં સર્વ દેવોને માટે પ્રશસ્ત છે અને રાજાઓને જયનું કારણ છે. અંક ૬૫; કોણે ૮, પ્રત્યંગે ૮, પ્રતિરથે ૨૪, પ્રતિરથનન્દીઓએ ૮, ભદ્રે ૧૬ અને શિખરે ૧. તિલક ૪૪; કર્ણનન્દીએ ૧૬, ભદ્રનન્દીએ ૧૬, પ્રતિરથનન્દીએ ૮ અને કોણે ૪.

૧૭ વૈહૃય—

શૃંગં તૃતીયં રેખાધઃ, કર્તવ્યં સર્વશોભનમ્ ।

વૈહૃયશ્ચ તદા નામ, કર્તવ્યઃ સર્વદૈવતઃ ॥ ૫૧૦ ॥

ખા૦ટી૦—કોણ ઉપર ત્રીજું શૃંગ ચઢાવવાથી એ રત્નકૂટનો જ

‘वैडूर्यं’ नामनो प्रासाद बने छे, सर्वे देवोने योग्य आ वैडूर्य करवो जाईये. अंडक ६९; कोणे १२, प्रत्यंगे ८, प्रतिस्थे २४, प्रतिस्थ-नन्दीए ८, भद्रे १६, अने शिखरे १. तिलको ४०; कर्णनन्दीए १६, भद्रनन्दीए १६ अने प्रतिस्थनन्दीए ८.

१८ पद्मराग अने १९ वज्र—

तत्र नन्द्यां तु तिलकं, द्वे शृंगे पद्मरागकः ।

रेखाधस्तात् पुनः शृंगं, कारयेद्वज्रकस्तदा ॥ ५११ ॥

भा०टी०—कोणना त्रीजा शृंगने बदले तिलक करवा, प्रतिस्थ नन्दीए २-२ शृंगो अने कर्ण तथा भद्रनन्दीए २-२ तिलक करवाथी ‘पद्मराग’ प्रासाद बनशे. अंडक ७३; कोणे ८, प्रतिस्थ-नन्दीए १६, पडरे २४, प्रत्यंगे ८, भद्रे १६ अने शिखरे १. तिलको ३६; कोणे ४, कर्णनन्दीए १६ अने भद्रनन्दीए १६. रेखा नीचे वली त्रीजुं शृंग देवाथी ए ‘पद्मरागप्रासाद’ ज ‘वज्र’ एवुं नाम धारण करे छे, अंडको ७७; कोणे १२, प्र.नन्दीए १६, प्रत्यंगे ८, पडरे २४, भद्रे १६ अने शिखरे १. तिलको ३२; कर्णनन्दीए १६ अने भद्रनन्दीए १६.

२० मुकुटोज्ज्वल अने २१ ऐरावत—

नखभक्ते द्वयं कर्णः, सार्धां कोणीं द्वयं रथः ।

सार्धानन्दी भद्रनन्दी, भागो भद्रं युगांशकम् ॥ ५१२ ॥

कर्णे द्विशृंगे तिलकं, रेखा मन्वंशविस्तरा ।

नन्द्यां शृंगं च तिलकं, प्रत्यंगं स्यादधोरथे ॥ ५१३ ॥

द्वयं भद्रं चतुःशृंगं, नन्द्यां शृंगं च तैलकम् ।

भद्रनन्द्यां तथा शृंगं, प्रासादो मुकुटोज्ज्वलः ॥ ५१४ ॥

तत्र रेखाधस्तात्शृंगे, विहिते गजराजकः ।

भा०टी०—२० भागना तलमां २ भागनो कर्ण, १॥ भागनी कोणी (नन्दी), २ भागनो प्रतिस्थ, १॥ भागनी नन्दी, १ भागनी भद्रनन्दी अने २ भागनुं भद्रार्ध करवुं, शिखरमां कोणे २ शृंग तथा तिलक करवा, रेखानो विस्तार १४ भागनो करवो, नन्दी उपर शृंग तथा तिलक करवा, प्रतिस्थे प्रत्यंग चढाववां, पडरे २ शृंगो अने भद्रे ४ शृंगो करवा, नन्दीए शृंग तथा तिलक करवा अने भद्र-नन्दीए शृंग करवा, आथी 'मुकुटोज्ज्वल' नामक प्रासाद बने छे. अंडको ८१; कोणे ८, कोणनन्दीए ८, प्रत्यंगे ८, प्र. नन्दीए ८, भद्रनन्दीए ८, पडरे २४, भद्रे १६ अने शिखरे १. तिलको २०; कर्णनन्दीए ८, प्र. नन्दीए ८ अने कोणे ४. आ मुकुटोज्ज्वलना कोणे त्रीजुं शृंग चढाववाथी 'ऐरावत' प्रासादनी उत्पत्ति थाय छे. अंडको ८५; कोणे १२, कोणनन्दीए ८, प्रत्यंगे ८, प्रतिस्थे २४, प्र.नन्दीए ८, भद्रनन्दीए ८, भद्रे १६ अने शिखरे १. तिलको २४; कर्णनन्दीए ८, भद्रनन्दीए ८ अने प्र. नन्दी ८.

२२ राजहंस—

तथैव तिलकं कुर्यात्, भद्रकर्णे तु शृंगकम् ।

राजहंसः समाख्यातः, कर्तव्यो ब्रह्ममंदिरे ॥५१५॥

भा०टी०—तेज रीते कर्णना त्रीजा शृंगने स्थाने तिलक अने भद्रनन्दीए त्रीजुं शृंग करवाथी 'राजहंस' नामनो प्रासाद बने छे, आ प्रासाद ब्रह्माजीने माटे बनाववो, अंडको ८९; कोणे ८, कोण-नन्दीए ८, प्रत्यंगे ८, प्रतिस्थे २४, प्र. नन्दीए ८, भद्रनन्दीए १६, भद्रे १६ अने शिखरे १. तिलको ४ कोणे.

२३ गरुड—

तथैव तिलकं कुर्यात्, भद्रं कर्णे च शृंगकम् ।

गरुडः स समाख्यातः, कर्तव्यश्च श्रियःपतेः ॥५१६॥

भा०टी०—तथा भद्रनन्दीए तिलक करवो अने कोण उपर श्रुंजुं शृंग करवुं. आ प्रकारे बनावेल प्रासाद 'गरुड' ए नामथी प्रख्यात छे, आ प्रासाद विष्णुने माटे खास करवा जेवो छे, अंडको ९३; कोणे १२, कोणनन्दीए ८, प्रत्यंगे ८, प्रतिरथे २४, प्र. नन्दीए ८, भद्रनन्दीए १६, भद्रे १६ अने शिखरे १. तिलको भद्रनन्दीए ८.

२४ वृषभ—

द्वाविंशत्यंशके नन्दी, भागेन भद्रपार्श्वयोः ।

त्रयः प्रतिरथाः कर्णौ, भद्रार्धं च द्विभागिकम् ॥५१७॥

कर्णे द्विशृंगे तिलकं, भद्रे शृंगचतुष्टयम् ।

शृंगद्वयं प्रतिरथे, प्रत्यंगानि त्रिभागतः ॥५१८॥

रथे शृंगत्रयं कृष्यात्, द्वे द्वे उपरथे तथा ।

भद्रनन्द्यां ततः शृंगं, वृषभोऽयं हरप्रियः ॥५१९॥

भा०टी०—२२ भागे वहेचैला तलमां भद्रनी बने बाजुए १ भागनी नन्दी, प्रतिरथ-रथ-उपरथ-कर्ण अने भद्रार्ध ए पांचे २-२ भागना करवा, शिखर विभागे कर्णे २ शृंगो तथा तिलक, भद्रे ४ उरःशृंग, पडरे २ शृंग, तथा विस्तारे त्रण भागनां प्रत्यंग, रथे ३ शृंग, उपरथे २ शृंग, अने भद्रनन्दीए १ शृंग. आ प्रकारनी रचना-वालो शिवप्रिय 'वृषभ' नामनो प्रासाद बने छे, अंडक ९७; कोणे ८, भद्रे १६, पडरे १६, प्रत्यंगे ८, रथे २४, उपरथे १३, भद्र-नन्दीए ८ अने शिखरे १. तिलको ४ कोणे.

२५ मेरुप्रासाद—

कर्णे शृंगं तृतीयं स्यान्मेरुः सिद्धिप्रदा इमे ।

सान्धारा वा निरन्धाराः, प्रासादाः पञ्चविंशतिः ॥५२०॥

भा०टी०—वृषभ प्रासादना कोणे त्रीजुं शृंग वधास्वार्थी ते प्रासाद 'मेरु' नामे ओलखाय छे, अंडको १०१; कोणे १२, भद्रे १६, पडरे १६, प्रत्यंगे ८, रथे २४, उपरथे १६, भद्रनन्दीए ८ अने शिखरे १; आ २५ प्रासादो सान्धार अथवा निरंधार होय, सर्व सिद्धिने आपनारा छे.

मण्डप—

वास्तुमञ्जरीकार लखे छे—

प्रासादाग्रे मण्डपः स्या-देक-त्रि-द्वारसंयुतः ।

जिने त्रिपुरुषे द्वार-कासु त्रिमण्डपाः क्रमात् ॥५२१॥

भा०टी०—प्रासादने आगे एक द्वारनो अथवा त्रण द्वारनो मंडप होय छे. त्रिन, त्रिपुरा, (ब्रह्मा विष्णु महेश्वर) अने द्वारकाना प्रासाद आगल एक पछी एक एम त्रण मंडपो करावा.

अपराजितमां मण्डपोनुं निरूपण नीचे प्रमाणे छे—

अथास्तः संप्रवक्ष्यामि, मण्डपानां तु लक्षणम् ।

प्रासादस्य प्रमाणेन, मण्डपं कारयेद् बुधः ॥५२२॥

समः सपादः सार्धश्च, सपादोनद्वय एव च ।

द्विगुणश्चापि कर्तव्यः, सपादद्वय एव च ॥ ५२३ ॥

सार्धद्वयस्तु कर्तव्यो, ह्येतदूर्ध्वं न कारयेत् ।

सप्तधा प्रमाणसूत्रं, वास्तुवेदैरुदाहृतम् ॥ ५२४ ॥

भा०टी०—इवे मण्डपोनुं लक्षण कहीस, विद्वान् स्थपतिए प्रासादना मानने अनुसारे मंडपने करवो, १ प्रासाद-सम माननो, २ प्रासादथी सवाया, ३ दोढा, ४ पोणावेगणा, ५ त्रे गणा, ६ सवावेगणा, तथा ७ अढी गणा माननो मंडप बनाववो, एथी अधिक

प्रमाणनो न बनाववो, कारण के वास्तुशास्त्रज्ञोए मंडपनुं प्रमाण-
सूत्र सात प्रकारे कह्युं छे.१

प्रासादेषु च सर्वेषु, दशहस्ताधिकेषु च ।

उक्तः समः सपादश्च, मण्डपो वास्तुवेदिभिः ॥५२५॥

पञ्चहस्तात्परं चैव, यावत्स्याद् दशहस्तकम् ।

सार्धायामो मण्डपश्च, सृष्टो वै विश्वकर्मणा ॥५२६॥

चतुर्हस्ते च प्रासादे, पादोनद्वयविस्तरः ।

त्रिहस्ते द्विगुणश्चैव, तद्विशेषा चतुष्किका ॥५२७॥

चतुष्कं चाष्टांशं चापि, शुकस्तंभानुसारतः ।

वितानं संवरणोक्तं, सार्धमानेन मण्डपे ॥५२८॥

अलिन्दैर्द्विगुणे चात्र, द्विगुणं च प्रकल्पयेत् ।

द्वि-त्रि-चत्वारोऽलिन्दा, द्विगुणात्परे च मण्डपे ॥५२९॥

वितानानि संवरणा, विभक्तानि चतुष्किका ।

स्वक-स्वकेषु स्थानेषु, पादाढ्या तद् भुक्तिभिः ॥५३०॥

स्वार्धमानेनोच्छ्रयस्तु, मूलसंवरणोक्तिभिः ।

शुकनाससमा घण्टा, न न्यूना न ततोऽधिका ॥५३१॥

भा०टी०—१० हाथथी अधिक मानना सर्व प्रासादोमां
वास्तु ज्ञाताओए मण्डप प्रासादना सममाने अथवा प्रासादथी सवाया

१ समरांगणसूत्रधारमां आ संबन्धे नीचे प्रमाणे विशेष छेः—

शुद्धप्रासादकेषु स्यु-मण्डपा बहवोऽपरे ।

क्षेत्राऽलामे पुनरिमान्, सर्वान् सर्वेषु योजयेत् ॥१॥

भा०टी०—न्हाना न्हाना देवलोमां बीजा अनेक मानना (अढी
गणाथी पण अधिक मानना) मंडपो होय छे, वली वास्तुभूमिनी
कमीना कारणे वधां मानना मंडपो वधा प्रासादोमां करी शकाय
छे, जेमके ३ हाथना प्रासादनो मंडप ६ हाथनो जोईये, पण
भूमिना अभावे ओछो पण थइ शके छे.

माने करवो कह्यो छे, ५ हाथथी मांडी १० हाथ सुधीना प्रासादोने दोढा माननो मंडप करवानुं विश्वकर्माजीए विधान कर्युं छे, ४ हाथना प्रासादे पोणा बे गणा विस्तारनो अने ३ हाथना प्रासादे बे गणा विस्तारनो मंडप करवो, ऋण हाथथी ओछा मानना लघु-प्रासादमां मंडपना स्थाने तेनो ज भेद चोकी करवी, चोकी चौरस वा अष्टास्र पण होय, तेनो विस्तार शुकनासना स्तंभोने अनुसारे करवो, मंडप वितानवालो अथवा संवरण वालो होय, उंचो तेना विस्तार मानथी दोढो करवो, प्रासादथी 'द्विगुणमानवाला मंडपने' फरतां अलिन्दो वडे तेना विस्तारथी बे गणा विस्तारवालो करी शकय अने बमणा उपरना मानना मंडपोने २-२, ३-३ अथवा ४-४ अलिन्दो देइने विस्तृत करी शकय छे, आ अलिन्दो (चोक्रियो)वाला मंडपोने वितानवाला अथवा संवरणवाला करो पण आने फरती चोक्रियोनी नीचेनी जे भूमि चोक्रिओए पोतपोताना षडना भोगवडे वर्हेन्ची नांखी छे, तेने मूल मंडपनो विस्तार समजीने ते उपर मंडपनुं सामरण के मंडपनो घुमट लाववो नहि, पण मूल मंडपना विधान प्रमाणे ज ते अलिन्दनी चोक्रिओ उपर पोताना विस्तारना अर्धमाने उंची सामरणो अथवा घुमटीओ करवी अने मंडपना आमलसारानी उंचाई शुकनासना उदय जेटली करवी, तेथी ओछी न करवी अने अधिक पण न करवी.

शुकनासनी उंचाई—

मूलप्रासादशिखर-सुच्छ्रये यत्प्रकल्पितम् ।

छात्रोर्ध्वे स्कन्धपर्यन्त-मेकविंशतिभाजितम् ॥२३२॥

अङ्कदिशारुद्रसूर्य-त्रयोदशान्तमुन्मृजेत् ।

शुकनासस्य संस्थानं, छात्रोर्ध्वे पञ्चधोन्नतम् ॥२३३॥

तेन मानेन पदान्तं, मण्डपोर्ध्वमुत्सृजेत् ।

तदूर्ध्वे च न कर्तव्य-मधःस्थं नैव दूषयेत् ॥५३४॥

भा०टी०—छाजाना मथाराथी स्क्रन्ध (बांधणा) पर्यन्त मूल प्रासादना शिखरनी ऊंचाई जेटली करवा धारी होय तेना २१ भाग करी तेवा ९ भाग, १० भाग, ११ भाग, १२ भाग अथवा १३ भाग उपर, एम ५ प्रकारनी ऊंचाईए शुक्रनासतुं संस्थान होइ शके, अने मंडप शुक्रनासनी ऊंचाईना माने पाटना मथाराथी ऊंचो ल्ह जइने छोडवो, शुक्रनासथी मंडप ऊंचो न करवो, कदापि नीचो रहे तो दोष नथी.

प्रासादा मण्डपाश्चैव, जगतीशालेऽतिक्रमात् ।

अन्योन्यं च यदा ग्रस्ता, महादोष इति स्मृतः ॥५३५॥

मण्डपेषु च प्रासादे, ग्रस्ते तु स्वामिविग्रहः ।

जगत्यां चैव प्रासादा, ग्रस्तास्तत्र प्रजाभयम् ॥५३६॥

शालाभिर्मूलप्रासादो, ग्रस्तः स्याद्दोषकारकः ।

तदग्रस्तस्तु कर्तव्यः, स्वगोत्रेऽकलहो रिपोः ॥५३७॥

प्रजाग्रस्तो यथा राजा, प्रासादोऽथान्यपट्टकैः ।

जगती-शाला-विधिस्तत्र, मूलसूत्रानुसारतः ॥५३८॥

मूले ग्रस्ते तदाग्रस्तौ, जगतीप्रासादौ परस्परम् ।

कुरुतस्तावन्धकारं, यथा राहुर्दिवाकरे ॥५३९॥

भा०टी०—प्रासादो, मंडपो, जगती अने शाला, अनुक्रमे अथवा अन्योन्य (एकबीजाथी) ग्रस्त थाय तो आ प्रमाणे महादोष कह्यो छे—

मंडपोथी प्रासाद ग्रस्त थाय तो (लोपाय, नीचो रहे) तो बनानारा, धणीने क्लेश करावनार थाय, जगतीथी प्रासाद ग्रस्त थाय

તો પ્રજાને ભયકારક બને, શાલાઓ (જગતીની ચોકિયો) વડે મૂલ પ્રાસાદ ગ્રસ્ત થાય (દવાય) તો દોષકારક છે, માટે મૂલપ્રાસાદ અગ્રસ્ત (કોઈથી પણ ન દવાયેલો) કરવો, કે જેથી પોતાના કુટુંબમાં સ્વકૃત અથવા શત્રુકૃત ક્લેશ ન થાય, પ્રજાથી દવાયેલો રાજા જેમ તેજો હીન ગણાય છે તેજ રીતે વીજા પાટો વડે દવાયેલો પ્રાસાદ જાણવો, માટે જગતીની શાલાની વિધિ મૂલ પ્રાસાદના સૂત્રાનુસારે કરવી, મૂલ પ્રાસાદ ગ્રસ્ત થતાં પ્રાસાદ અને જગતી બંને પરસ્પર ગ્રસ્ત થાય છે અને તે સૂર્યને વિષે જેમ રાહુ અંધકાર કરે તેમ અંધકાર કરે છે.

જ્યેષ્ઠ-મધ્ય-કનિષ્ઠાશ્ચ, પ્રાસાદા યે ભવન્તિ ચ ।

તદગ્રે મણ્ડપાન્ કુર્યાંજ્યેષ્ઠ-મધ્ય-કનિષ્ઠકાન્ ॥૧૪૦॥

આંટી૦—જ્યેષ્ઠ મધ્યમ અને કનિષ્ઠ જે પ્રાસાદો જેવા હોય તેમની આગલ તેવા જ્યેષ્ઠ મધ્યમ અને કનિષ્ઠ પ્રકારના જ મંડપો કરવા. અપરાજિતે સૂત્ર ૧૮૪ માં એનું સ્પષ્ટીકરણ નીચે પ્રમાણે કર્યું છે—

મણ્ડપાસ્ત્રિવિધા વત્સ!, જ્યેષ્ઠ-મધ્ય-કનિષ્ઠકાઃ ।

પ્રાસાદાદ્વિગુણાયમઃ, કનિષ્ઠો મણ્ડપો ભવેત્ ॥૧૪૧॥

પાદોનદ્વિતયો મધ્યો, જ્યેષ્ઠઃ સાર્ધસ્તથૈવ ચ ।

એકૈકાસ્ત્રિવિધા જ્ઞેયા, જ્યેષ્ઠમધ્યકનિષ્ઠકાઃ ॥૧૪૨॥

ત્રિજ્યેષ્ઠમિતિ ચ લ્યાતં, ત્રિમધ્યં ત્રિકનિષ્ઠકમ્ ।

નવધા પુનરેકૈકં, સપ્તવિંશતિસંખ્યયા ॥૧૪૩॥

આંટી૦—મંડપો ત્રણ પ્રકારના કહ્યા છે, ૧ જ્યેષ્ઠ, ૨ મધ્ય અને ૩ કનિષ્ઠ, પ્રાસાદથી વમણા પ્રમાણનો મંડપ કનિષ્ઠ ગણાય છે,

पोणा बे गणा मानवालो मध्यम कहेवाय छे, अने प्रासादथी दोढा माननो ज्येष्ठ गणाय छे.

आ त्रण मानना मंडपो पैकीना प्रत्येक मंडपना बली ३-३ भेदो पडे छे. १ ज्येष्ठज्येष्ठ, २ ज्येष्ठमध्यम, ३ ज्येष्ठकनिष्ठ. ४ मध्यमज्येष्ठ, ५ मध्यममध्यम, ६ मध्यमकनिष्ठ, ७ कनिष्ठज्येष्ठ, ८ कनिष्ठमध्यम अने ९ कनिष्ठकनिष्ठ.

आ ९ प्रकारना मंडपो पैकीनो एक एक मंडप २७ प्रकारनो बने छे.

कनिष्ठ, मध्यम अने ज्येष्ठ मंडपो संबन्धी समरांगण सूत्रधारनुं निरूपण नीचे प्रमाणे छे.

प्रासादाद् द्विगुणं कुर्यात्, कनिष्ठं तत्र मण्डपम् ।

पादोनद्विगुणं मध्यं, प्रासादे तु कनीयसि ॥५४४॥

तस्मिन्नेव कनीयांसं, विदध्यात् सार्धमानतः ।

पादोनद्विगुणः सार्धः, सपादश्चेति मध्यमे ॥५४५॥

सार्धः सपादस्तुल्यश्चेत्युत्तमाद्याः स्युरुत्तमे ।

भा०टो०—प्रासादथी बे गणा विस्तारवालो कनिष्ठ प्रासादनो मंडप 'कनिष्ठ-कनिष्ठ.' मंडप कहेवाय छे, पोणा बे गणो विस्तृत कनिष्ठ प्रासादनो मंडप 'कनिष्ठ-मध्यम' मंडप कहेवाय छे, अने तेज कनिष्ठ प्रासादनो दोढा विस्तारवालो मंडप 'कनिष्ठ-ज्येष्ठ' मंडप कहेवाय छे.

मध्यमप्रासादथी पोणा बे, दोढा अने सवा गणो विस्तृत मंडप अनुक्रमे ते प्रासादनो १. मध्यमकनिष्ठ, २. मध्यममध्यम अने ३. मध्यम ज्येष्ठ कहेवाय छे अने उत्तम प्रासादना दोढा, सवाया

અને તુલ્યમાનના મંડપને અનુક્રમે ૧. ઉત્તમકનિષ્ઠ, ૨. ઉત્તમમધ્યમ અને ૩. ઉત્તમજ્યેષ્ઠ મંડપ નામ અપાય છે.

સ્પષ્ટીકરણ—

પૂર્વોક્ત મળ્ડપોના નિરૂપણમાં કનિષ્ઠાદિ પ્રાસાદોમાં કનિષ્ઠાદિ મંડપોનું વિધાન કરતાં ચમળો, પોળા બે ગળો અને દોઢો મંડપ કનિષ્ઠ પ્રાસાદોમાં કરવાનું સૂચવ્યું છે, તે પૂર્વે મંડપલક્ષણમાં ૩ હાથે દ્વિગુણ, ૪ હાથે પાદોનદ્વિગુણ અને ૫ થી ૧૦ હાથ પર્યન્તે સાર્ધમાનનો મંડપ કરવાનું જણાવ્યું છે તેનાથી જણાય છે.

૧ થી ૧૦ હાથ સુધીના પ્રાસાદને કનિષ્ઠ માની તેના ૩ ભાગ કલ્યા છે, તેમાં ૧ થી ૩ હાથ સુધીના પ્રાસાદને 'કનિષ્ઠકનિષ્ઠ,' ૪ હાથનાને 'કનિષ્ઠમધ્યમ' અને ૫ થી ૧૦ સુધીનાને 'કનિષ્ઠ-જ્યેષ્ઠ' જાણવો. આ ત્રણ પ્રકારના કનિષ્ઠ પ્રાસાદોના મંડપો પણ ક્રમશઃ કનિષ્ઠ-કનિષ્ઠ, કનિષ્ઠ-મધ્યમ અને કનિષ્ઠ-જ્યેષ્ઠ પ્રકારના જાણવા.

૪ હાથનો પ્રાસાદ 'મધ્યમ-કનિષ્ઠ,' ૫ થી ૧૦ સુધીનો 'મધ્યમ મધ્યમ' અને ૧૧ થી ૨૦ સુધીનો 'મધ્યમ-જ્યેષ્ઠ' ગણાય છે.

૫ થી ૧૦ સુધીનો 'ઉત્તમ કનિષ્ઠ,' ૧૧ થી ૨૦ પર્યન્તનો 'ઉત્તમ મધ્યમ' અને ૨૧ થી ૫૦ પર્યન્તના પ્રાસાદને 'ઉત્તમોત્તમ' જાણવો, આના દોઢા, સવાયા અને તુલ્યમાનના મંડપો પણ અનુક્રમે ૧. ઉત્તમ-કનિષ્ઠ, ૨. ઉત્તમ-મધ્યમ અને ઉત્તમોત્તમ જાણવા.

સમતલો વિષમશ્ચ, સંઘાટો સુખમળ્ડપે ।

ભિત્ત્યન્તરે યદા નૈવ, દોષસ્તંભ-પટ્ટાદિકે ॥૫૪૬॥

ક્ષણમધ્યેષુ સર્વેષુ, પટ્ટમેકં ન દાપયેત્ ।

युग्मं च दापयेत्तत्र, वेधदोषविवर्जितम् । ॥५४७॥

क्षणमध्येषु सर्वेषु, स्तंभमेकं न दापयेत् ।

युग्माकारमिमंदद्याद्, मूलगर्भं न पीडयेत् ॥५४८॥

मण्डपानां समस्तानां, लक्षणं कथ्यतेऽधुना ।

गतिं स्तंभं च भित्तिं च, विभक्तिं भागसंख्यया ॥५४९॥

भा०टी०—मुख मंडपनो संघाट (पीठ) समतल होय अथवा विषम तल होय, स्तंभ, पाट आदि समतल होय के विषमतल—जो वच्चे भीतनो आंतरो होय तो दोष गणातो नथी. क्षणोमां एक वधारवुं नहि, कदापि वधारवानी आवश्यकता होय तो वेध टालीने समानान्तरे वे वधारवां. एज रीते एक स्तंभ कदापि न देवो. पण २-४-६ आम वेकी रूपे स्तंभो देवो, गर्भवेध न थाय ए वातनुं ध्यान राखवुं.

मंडपोना संबन्धमां सामान्य निरूपण करी सर्व मंडपोनुं लक्षण, मंडपोनी रचना विधि, स्तंभनुं लक्षण, भीतनुं स्वरूप, भाग संख्या-पूर्वक दल विभक्ति, आदि विषयोनुं स्वरूप हवे पछीना सूत्रमां कहुं छुं.

पुष्पकादि २७ मंडपो—

अपराजित पृच्छाना १८६ मा सूत्रमां आ मंडपोनां नाम अने रचना विधि बतावेले छे, आ वधा गूढ मंडपो छे एटले भद्र, उपभद्र तेमज तेमनो निर्गम आदि पण जाणवो आवश्यक तो छेज, छतां आ सूत्रमां ए विषयनुं निरूपण नथी. आधी समरांगण-सूत्रधार उपरथी आ प्रकारनी आवश्यक वातोनी चर्चा करी पछी मंडपोनुं निरूपण करीछुं.

૧ પુષ્પક-મંડપ—

ચતુરસ્રીકૃતે ક્ષેત્રે, દશઘા પ્રવિભાજિતે ।
 ભાગૈશ્ચતુર્ભિર્ભદ્રં સ્યાદ્, દ્વૌ ભાગૌ પ્રતિભદ્રકમ્ ॥૫૫૦॥
 અગ્રતઃ પૃષ્ઠતો વાપિ, નિર્ગમો ભાગિકો ભવેત્ ।
 ભદ્રાણાં નિર્ગમો ભાગં, સાર્ધભાગમથાપિ વા ॥૫૫૧॥
 પ્રાસાદસ્ય ત્રિભાગેન, ચતુર્ભાગેન વા ભવેત્ ।
 અર્ધનાથ ષડંશેન, ચતુર્ભાગેન વા ભવેત્ ॥૫૫૨॥
 અર્ધેનાથ ષડંશેન, પશ્ચાંશેનાથ નિર્ગતિઃ ।
 પ્રાસાદાનાં સમા કાર્યા, પાદોના વા પ્રમાણતઃ ॥૫૫૩॥
 કાર્યા ત્રિભાગહીના વા, મણ્ડપાસ્તુ સમૈઃ ક્ષણૈઃ ।
 સ્વચિસ્તારસમં ભદ્રે, સુખે ચૈષા પ્રકીર્તિતા ॥૫૫૪॥
 કર્ણાં દ્વિભાગિકા જ્ઞેયા-સ્તેષાં કોણચતુષ્ટયે ।
 વામ-દક્ષિણભાગાભ્યાં, સહભદ્રં ષડંશકમ્ ॥૫૫૫॥
 પ્રતિભદ્રે ન ચૈતસ્મિન્, વિદધ્યાદગ્રપૃષ્ઠયોઃ ।
 ચતુઃષષ્ઠિઘરોઽયં સ્યાત્, પુષ્પકો નામ મણ્ડપઃ ॥૫૫૬॥

भा०टी०—चोरस बनावेल मंडपभूमिना दश भाग करवा, ते पैकीना ४ भागनुं भद्र अने २ भागनुं प्रतिभद्र करवुं, आगल अने पाछल भद्रनो निर्गम १-१ भागनो करवो, सामान्य रीते मंडपना भद्रोनो निर्गम १ भागनो १॥ भागनो अथवा प्रासादना त्रीजा भागनो वा चोथा भागनो होइ शके, वली प्रासादमानथी अर्ध भागे, षष्ठ भागे, पंचम भागे, समान भागे, एक तृतीयांशहीन अथवा तो षोणा भागे पण मंडपनो निर्गम होय छे. मंडपो समक्षण करवा अने मुखभद्र विभागे एमनो निर्गम दलना विस्तारने अनुसरीने करवो. मंडपना चारे खुणे २-२ भागना कोणा अने डावा

जमणा विभागो सहित ६ भागनुं भद्र करवुं, आ मंडपना आमलना तथा पाळलना भद्रोने प्रतिभद्रो न करवा, आवो ६४ स्तंभनो पुष्पक नामक मंडप बनाववो.

२ पुष्पभद्र—

त्रण दिशाओनां भद्रोने प्रतिभद्रो लगाडवा अने प्रासादमुखे केवल प्राग्ग्रीव लगाडवाथी पुष्पभद्र नामनो ६२ स्तंभनो मंडप बने छे.

सुप्रभ—

पुष्पकमांथो ४ स्तंभ ओछा करतां ६० स्तंभनो सुप्रभ नामनो मंडप बनाववो.

एज प्रमाणे २-२ स्तंभो ओछां करता उक्त दल विभक्तिना २० सुधीनां मंडपो बनाववा.

सुग्रीव मंडपनां भद्रो ४ भागनां अने कोणो ३-३ भागना करवा, भद्रोने निर्गम पूर्व कक्षा प्रमाणे ज करवो.

समरांगण सूत्रधारना उक्त वर्णनथी समजाय छे के पुष्पकथी विमानभद्रसुधीना मंडपोनी दल रचना पुष्पकनी रचनाने अनुसरीने करवानो छे ज्यारे सुग्रीव पछीना मंडपोनी दलविभक्ति सुग्रीवना जेवी करवी एवो उक्तग्रंथनो आशय समजाय छे.

हवे अपराजित पृच्छाना पाठ उपरथी पुष्पकादि २७ मंडपोनुं वर्णन जोइये, आ ग्रन्थमां पण मंडपोनो नाम क्रम तो पुष्पकथी ज शरु थाय छे—

पुष्पकः पुष्पभद्रश्च, सुप्रभो मृगनन्दनः ।

कौशल्थो बुद्धिसंकीर्णो, गजभद्रो जयाह्वयः ॥५५७॥

श्रीवत्सो विजयश्चैव, वस्तुकीर्णश्च श्रीधरः ।

यज्ञभद्रो विशालाख्यः, सुश्रेष्ठः शत्रुमर्दनः ॥५५८॥

ભૂજયો નન્દનશ્ચૈવ, તથા વિમાનભદ્રકઃ ।

સુપ્રીવો હર્ષણશ્ચૈવ, કર્ણિકારઃ પદાધિકઃ ॥૫૫૯॥

સિંહશ્ચ સિંહકોભદ્રઃ, સુસૂત્રાલ્પસ્તથૈવ ચ ।

इत्येते मंडपाः प्रोक्ताः सप्तविंशतिसंख्यया ॥५६०॥

भा०टी०—१ पुष्पक, २ पुष्पभद्र, ३ सुप्रभ, ४ मृगनन्दन, ५ कौशल्य, ६ बुद्धिसंकीर्ण, ७ गजभद्र, ८ जय, ९ श्रीवत्स, १० विजय, ११ वस्तुकीर्ण, १२ श्रीधर, १३ यज्ञभद्र, १४ विशाल, १५ सुश्रेष्ठ, १६ शत्रुमर्दन, १७ भूजय, १८ नन्दन, १९ विमानभद्र, २० सुप्रीव, २१ हर्षण, २२ कर्णिकार, २३ पदाधिक, २४ सिंह, २५ सिंहक, २६ भद्र अने २७ सुसूत्र; आ सत्तावीश मंडपोना नामो छे.

મળ્ડપોનાં નામો તો અનુક્રમે જણાવ્યાં પણ આની રચના વિધિ વિપરીતક્રમે લખી છે, કારણકે છેલ્લા મંડપથી વચ્ચે સ્તંભો વધારતાં પહેલાં મુખી આવવાથી નિરૂપણ થોડા શબ્દોમાં સુગમતાપૂર્વક કરી શકાયું છે એવું પ્રથમથી અંતિમ મુખી જતાં થવું અશક્ય હતું એટલે પ્રત્યક્કારે આ વિપર્યાય સ્વીકાર્યો છે, આ વસ્તુને ન સમજતા કેટલાક આધુનિક શિલ્પિઓ આ નિરૂપણ ક્રમિક ગણી પુષ્પકાદિ ક્રમથી મંડપોને જોડે છે અને એજ પ્રકારના નકશા આપે છે જે ખરા નથી.

चतुरस्रीकृते क्षेत्रे, त्रिधा नवपदाङ्किते ।

कर्णे स्तम्भाश्च चत्वारो, द्वौ द्वौ भद्रे सुसूत्रके ॥५६१॥

अष्टांशपदयुक्ताश्च सूर्यस्तंभाः सुसूत्रके ।

प्राग्भीवाग्रे पदमेकं, स भवेद् भद्रसंज्ञकः ॥५६२॥

तद् भद्रं च परित्यज्य, सिंहः सोऽन्तश्चतुष्पिककः ।

प्राग्भीवादग्रयुक्ताच्च, सिंहकाख्यः स उच्यते ॥५६३॥

चतुष्कों मध्यतस्त्यक्त्वा, प्राग्रीवाश्च चतुर्दिशम् ।

पदाधिको नामतोऽग्रे त्रिपदः कर्णिकारकः ॥५६४॥

भा०टी०—चोरस बनावेला क्षेत्रने त्रण वार त्रण त्रण पदो पाडीने नवपदो वडे चिह्नित करवुं, ते क्षेत्रना ४ कोण विभागोमां ४ स्तंभो अने तेना ४ भद्र विभागोमां २-२ स्तंभो देवाथी १२ स्तंभवालो 'सुसूत्र मण्डप' बने छे सुसूत्रमण्डपमां ८ पदयुक्त अर्थात् ८ पदोने स्पर्शता फरता १२ स्तंभो आवे छे.

द्वारनी तरफ प्राग्रीवरूपे एक पद वधारीने १४ स्तंभनो 'भद्रनामक' मंडप बनाववो.

आगला भद्रभागनुं पद हटावी कोलीने आगे चौकी करवाथी ३ पदो पडी सिंहमंडप तैयार थसे. द्वार तरफ २ स्तंभोवडे प्राग्रीव वधारवाथी ए सिंहनो ज 'सिंहक' नामनो मंडप थाय छे.

अंदरनी चौकी काढी नाखीने च्यारे दिशाओमां भद्रो मध्ये प्राग्रीवो करवाथी 'पदाधिक' मंडप बने छे.

पदाधिकनी आगे त्रणपदो पाडवाथी 'कर्णिकार' नामनो मंडप बने छे.

त्रिपदे पदमेकं च, चतुष्कं हर्षणो मतः ।

सुग्रीवस्त्रिपदाग्रे चा-ऽपरे विमानभद्रकः ॥५६५॥

दद्यात्पक्षेऽपरे त्यक्त्वा, नन्दनः सर्वकामदः

तदाऽपरे भूजयः स, परित्यक्तचतुष्किकः ॥५६६॥

पदिका पूर्वभद्रे च, कर्णेऽलिन्दश्चतुर्दिशम् ।

स शत्रुमर्दनः ख्यातः सुश्रेष्ठश्चाऽपरे यदि ॥५६७॥

भा०टी०—त्रिपदने आगे बे थांभला वधारी एक पदनी चौकी करवाथी ए मंडपनुं नाम 'हर्षण' पडे छे.

हर्षणनी अग्र चौकीनी बने तरफ थांभला वधारी त्रिपद करवाथी 'सुग्रीव' मण्डप बने छे.

પાછલ બે ચોકીઓ વધારી ત્રિપદ પાઢવાથી એજ મંડપ 'વિમાનમદ્ર' એવું નામ ધારણ કરે છે.

પાછલનાં ત્રિપદો હટાવી ઢાઠી જમણી તરફ ત્રિપદો કરવાં એટલે સર્વેચ્છાપૂરક 'નન્દન' નામનો મંડપ બનશે.

નન્દનના પાછલા ભાગે પણ ત્રિપદ કરવાથી 'ભૂજય' બને અને ભૂજયની ચોકીઓ કાઢી નાચીને પૂર્વમદ્રમાં એક પદ રાચી ચ્યારે સ્તૂળાઓમાં ૧-૧ વોકી પાઢવાથી તે 'શત્રુમર્દન' નામક મંડપ બને છે, એ શત્રુમર્દનના પાછલા ભાગે ૧ પદ વધારવાથી એજ મંડપનું નામ 'સુશ્રેષ્ઠ' પડે છે.

કુર્યાત્ પક્ષેऽપરે ત્યક્ત્વા, વિશાલાખ્યઃ સ ડચ્ચતે ।

તથાऽપરે યજ્ઞમદ્રો, મળ્ડપઃ સર્વકામદઃ ॥૫૬૮॥

ત્રિપદાગ્રે શ્રીધરાખ્યો, વાસ્તુકીર્ણસ્તથાऽપરે ।

દયાત્ પક્ષેऽપરે ત્યક્ત્વા, વિજયો નામ નામતઃ ॥૫૬૯॥

ખાંટી—પાછલું પદ હટાવી બે વાજુએ ૧-૧ પદ પાઢવાથી સુશ્રેષ્ઠનો 'વિશાલ' નામક મંડપ બનશે અને પાછલા ભાગે પદ વધારવાથી 'યજ્ઞમદ્ર' નામનો મંડપ સર્વકામના પુરનારો બનશે.

યજ્ઞમદ્ર આગે ત્રિપદો પાઢવાથી 'શ્રીધર' અને પાછલ ત્રિપદો પાઢવાથી 'વાસ્તુકીર્ણ' મંડપ બને છે.

એ વાસ્તુકીર્ણનાં પાછલાં ત્રિપદોના થાંભલા હટાવી વગલમાં ત્રિપદો પાઢવાથી 'વિજય' નામનો મળ્ડપ બને છે.

તથાऽપરે ચ શ્રીવત્સઃ, પદિકાગ્રે જયાહ્વયઃ ।

પદિકં ત્યક્તમગ્રે તુ, ચતુષ્કં ગજમદ્રકઃ ॥૫૭૦॥

તથાઽગ્રે બુદ્ધિસંકીર્ણઃ, કૌશલ્યશ્ચાઽપરે તથા ।

દયાત્પક્ષેऽપરે ત્યક્ત્વા, સ ભવેન્મૃગનન્દનઃ ॥૫૭૧॥

તથાऽપરે સુપ્રમસ્તુ, કર્તવ્યઃ સર્વકામદઃ ।

ત્રિપદં ચાઽગ્રમદં ચ, સ ભવેત્ પુષ્પમદ્રકઃ ॥૫૭૨॥

पुष्पकः सर्वत्रिपदः, परित्यक्तचतुष्किकः ।

एवं तु युक्ता विज्ञेया, मण्डपाः पुष्पकादयः ॥५७३॥

भा०टी०—विजयना पाळला भागे षण त्रणपदो पाडतां 'श्रीवत्स' अने श्रीवत्सने आगले भागे एक पद वधारतां ते मंडपनुं 'जय' एवुं नाम निष्पन्न थाय छे, जयना आगला पदना २ थांभलाना ४ थांभला करवाथी 'गजभद्र' मंडप बने छे, गजभद्रनी आगल पद वधारवाथी 'बुद्धि संकीर्ण' अने आगल पाळल एक एक पद वधारतां 'कौशल्य' मंडप बने छे, कौशल्यना पाळला पदने हटावी बंने बाजुमां १-१ पद वधारवाथी 'मृगनन्दन' मंडप बने, मृगनन्दनना पाळला भागे पद वधारीए तो 'सुप्रभ' नामक सर्वेच्छापूरक मंडप बने, सुप्रभना आगला भद्रे त्रिपद पाडीने पुष्पभद्र अने सर्वदिशाओमां ३-३ पदो पाडीने 'पुष्पक' मंडप करवो, एम उपर बतावेली युक्तिवडे पुष्पकादि मंडपो जाणवा.

चतुःषष्टिस्तम्भयुक्तः, पुष्पको नाम विश्रुतः ।

द्वि-द्विस्तम्भत्यागयुक्त्या, पुष्पाद्याः सप्तविंशतिः ॥५७४॥

पुष्पकाद्याश्च युक्ताः स्युः, समैर्वा विषमैस्तलैः ।

अनुक्रमयुक्तमाद्ये, सप्तविंशतिमण्डपाः ॥५७५॥

समैः क्षणैः समैः स्तम्भैः, समैश्चापि ह्यलिन्दकैः ।

विषमे तु तुलापटे, गृहे चन्द्रावलोकना ॥५७६॥

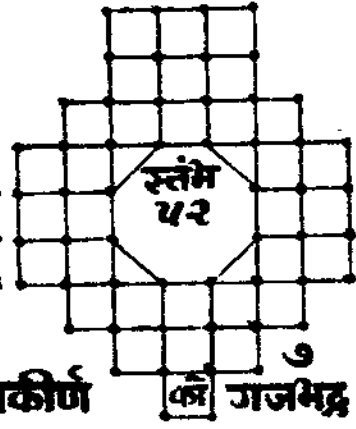
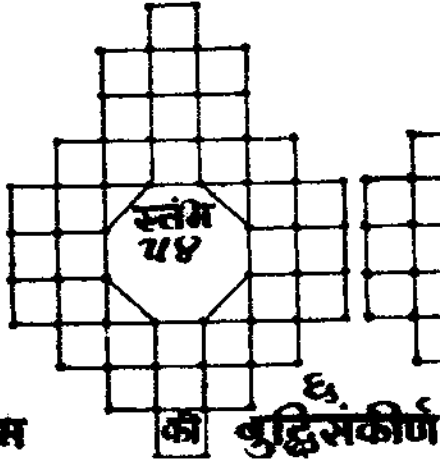
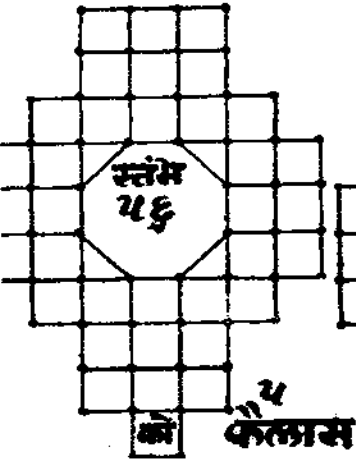
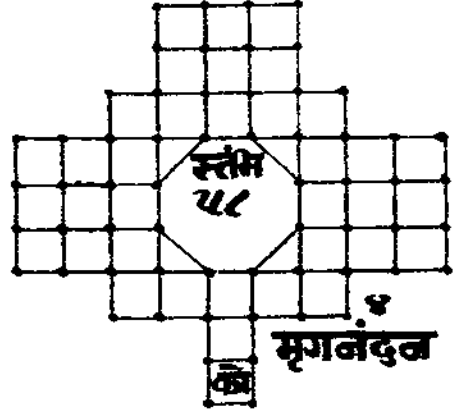
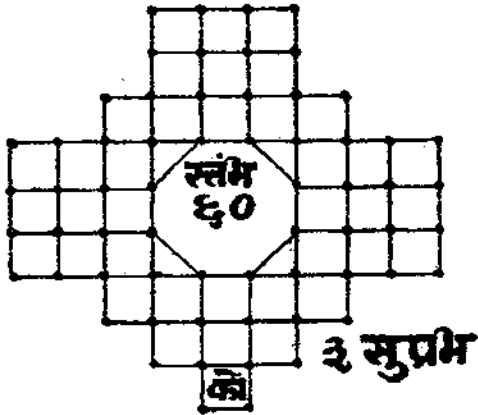
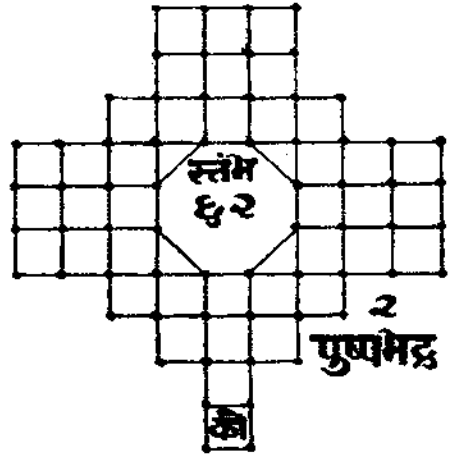
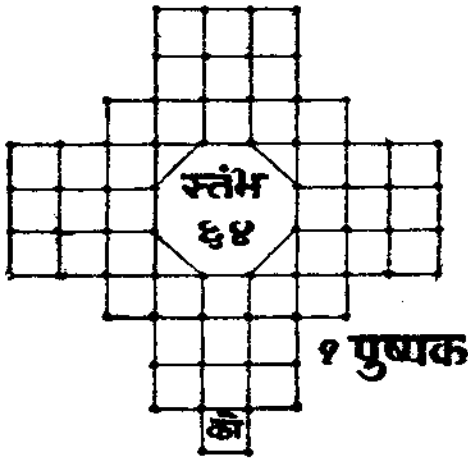
निगूढे नृत्ये आख्याताऽधस्ताद् भद्रावलोकना ।

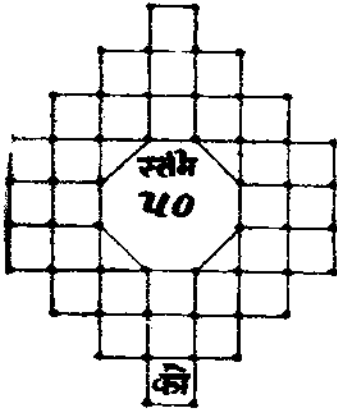
चन्द्रावलोकना जालैः कार्याः कर्णानुगास्तथा ॥५७७॥

निःस्तम्भा भित्तिका भित्ते-रिष्टांशा च चतुष्किका ।

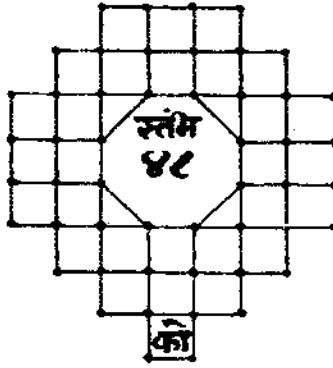
स्तम्भेषु युग्मस्तम्भाश्च, मूलसूत्रसमुद्भवाः ॥५७८॥

भा०टी०—६४ स्तंभ युक्त मंडप 'पुष्पक' नामथी प्रख्यात छे, बे बे स्तंभ ओछा करतां एकंदर पुष्पकादि २७ मंडपो बने छे. तेने स्पष्ट समजवा माटे निचेनी आकृतिओ उपयोगी बनशेः—

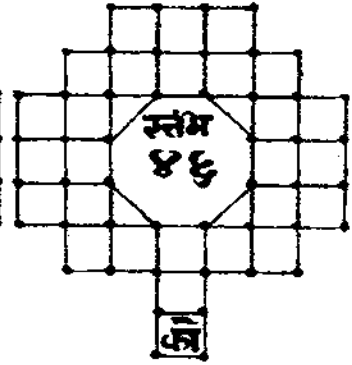




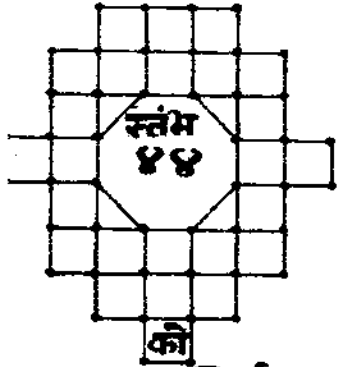
८ जय



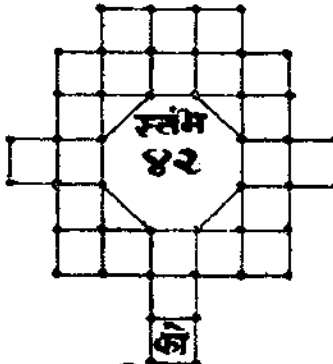
९ श्रीवत्स



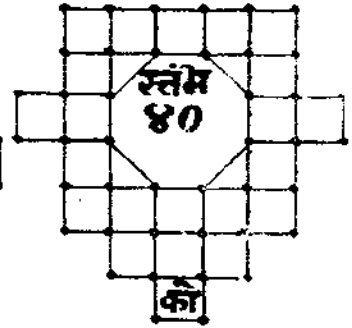
१० विजय



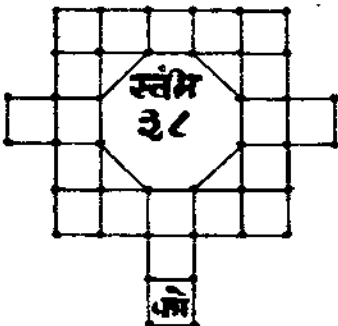
११ वास्तुकीर्ण



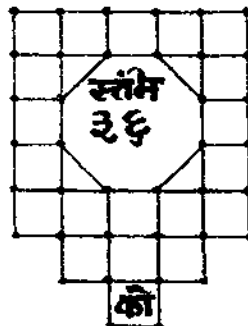
१२ श्रीधर



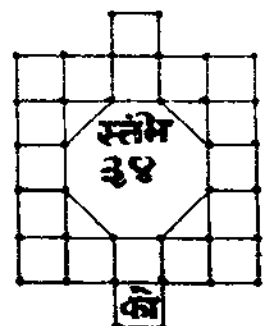
१३ यज्ञभद्र



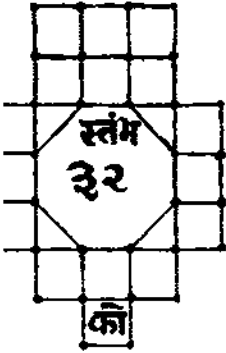
१४ विशाल



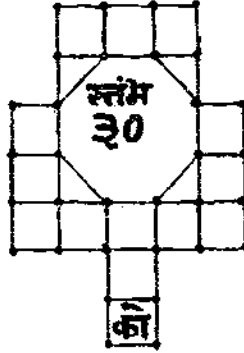
१५ सुश्रेष्ठ



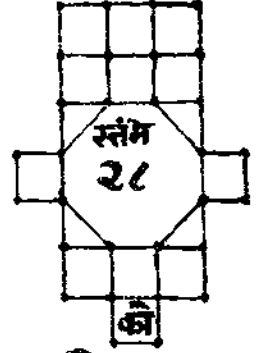
१६ शत्रुमर्दक



१७ भूजया



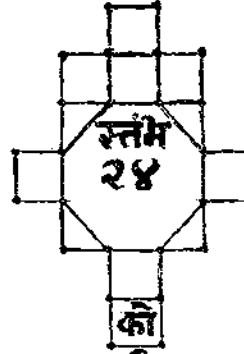
१८ नंदन



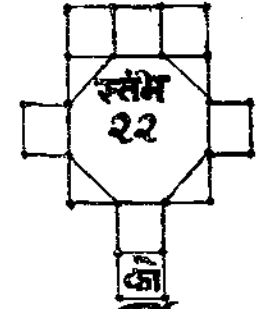
१९ विभानभद्र



२० सुगीव



२१ हर्षण



२२ कर्णिकार



२३ पदाधिक



२४ सिंहक



२५ सिंह



२६ भद्र



२७ सुसूत्र



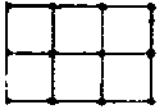
१ सुभद्र



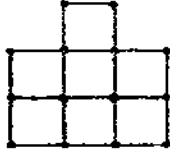
२ किरीटी



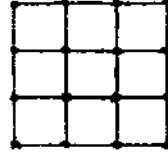
३ दुंदुभि



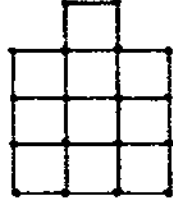
४ प्रान्त



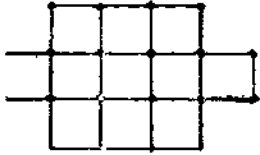
५ मनोहर



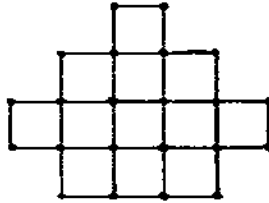
६ शान्त



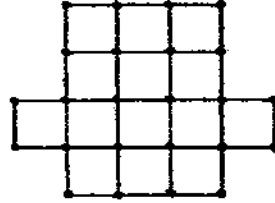
७ जन्द्य



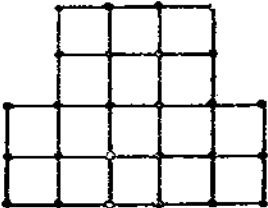
८ सुदर्शन



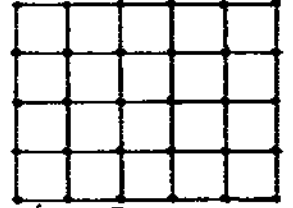
९ शय्यक



१० सुनाभि



११ सिंह मंडप



१२ सूर्यात्म मंडप

પુષ્પકાચાશ્ચ યુક્તાઃ સ્યુઃ, સમૈર્વા વિષમૈસ્તલૈઃ ।
 અનુક્રમયુક્તમાયે, સપ્તવિંશતિમણ્ડવાઃ ॥૫૭૯॥
 સમૈઃ ક્ષણૈઃ સમૈઃ સ્તમ્ભૈઃ, સમૈશ્ચાપિ હ્યલિન્દકૈઃ ।
 વિષમે તુ તુલાપદ્મે, ગૂઢે ચન્દ્રાવલોકના ॥૫૮૦॥
 નિગૂઢે નૃત્યે ચાલ્યાતાઽધસ્તાદ્ ભદ્રાવલોકના ।
 ચન્દ્રાવલોકના જાલૈઃ, કાર્યાઃ કર્ણાનુગાસ્તથા ॥૫૮૧॥
 ત્રિઃસ્તમ્ભા મિત્તિકા મિત્તે-રિષ્ટાંશા ચ ચતુષ્કિકા ।
 સ્તમ્ભેષુ યુગ્મસ્તમ્ભાશ્ચ, મૂલસુત્રસમુદ્ભવાઃ ॥૫૮૨॥

ભા૦ટી૦—પુષ્પકાદિ મણ્ડવો સમતલ ઉપર હોય અથવા વિષમતલ ઉપર હોય; પુષ્પક નામક પ્રથમ મણ્ડવના વિધાનમાં ચતા-વેલ ક્રમ પ્રમાણે મણ્ડવોનું નિર્માણ કરવું; મણ્ડવોના ક્ષણો સ્તંભો અને અલિન્દો સમ રાખવા, વિષમતલ ઉપર ગૂઢ મણ્ડવ કરવો, તેમાં ચન્દ્રનો પ્રકાશ પડી શકે એવાં ભદ્રવિભાગે ચન્દ્રાવલોકનો (વારિઓ) મૂકવાં.

‘ગૂઢ મંડવે’ અને ‘નૃત્ય મંડવે’ મંડવના નિચલા ભાગમાં વારિઓ મૂકવી. વિશેષ પ્રકાશની આવશ્યકતા હોય તો બે કોણ વિભાગોમાં જાલિઓ મૂકીને તેની સગવડ કરવી, જગતીની ડીરાલણાં સ્તંભ દેશ નહિ, કદાપિ મંડા અને મોંના વચ્ચે અવકાશ અધિક હોય તો સમ સંખ્યાએ સ્તંભો ઉગાડી તેના આધારે પદના વિસ્તાર પ્રમાણે ચોકિયો પાડવી, ચોકિયો માટેના સ્તંભો સમ-સંખ્યાક હોવા જોઈએ અને ચોકિયોનો વિસ્તાર મૂલ સૂત્ર અનુસારે કરવો જોઈએ.

ક્ષણમધ્યેષુ સર્વેષુ, સ્તમ્ભમેકં ન દાપયેત્ ।

યુગ્મં ચ દાપયેત્તન્ન, વેધદોષવિવર્જિતમ્ ॥૫૮૩॥

मूलस्तंभे यथासूत्रं, स्तंभो देवश्च मण्डपे ।

तदा नगरनृपेन्द्र-यजमानजयः सदा ॥५८४॥

उत्पद्यते स्तंभवेधे, पद्मिनी नाम राक्षसी ।

पीडयेत् पुर-राजादीन्, वास्तुवेदैरुदाहृतम् ॥५८५॥

द्वि-द्वि-स्तंभद्वासयोगे, चतुः षष्ट्याश्च द्वादश ।

पुष्पकाद्या इमे प्रोक्ताः, सप्तविंशतिमण्डपाः ॥५८६॥

भा०टी०—कोऽप्यण क्षणमां एक स्तंभ न देवो, पण वे चार इत्यादि समसंख्याए वेधदोष टालीने देवा. प्रासादना मूलसूत्रे जे स्तंभ होय तेज सूत्रे मंडपनो स्तंभ देवो, जेथी नगर, राजा अने यजमान सर्वनो सदाकाल जय थाय. स्तंभ देवामां क्यांइ पण वेधदोष उत्पन्न थवा न देवो, केपके स्तंभवेधदोषथी 'पद्मिनी' नामनी राक्षसी उत्पन्न थाय छे, जे नगरजन तथा राजा आदिने पीडा उत्पन्न करे छे, आम शिल्पशास्त्रना ज्ञाराओए कह्युं छे.

आम आ सूत्रमां वे वे थांभला घटाडीने ६४ थी १२ थांभला सुधीना पुष्पकादि २७ मंडपो कहा.

स्तंभोना प्रकारो अने जाडाइ—

रुचका भद्रकाश्चैव, वर्धमानास्तृतीयकाः ।

अष्टास्राः स्वस्तिकाश्चैव, स्तम्भाः प्रासादरूपिणः ॥५८७॥

चतुरस्राश्च रुचका, भद्रका भद्रसंयुताः ।

वर्धमानाः प्रतिरथै-रष्टांशैश्चाष्टास्रकाः ॥५८८॥

आसन्व्योर्ध्वे भवेद् भद्र-मष्टकर्णैस्तु स्वस्तिकाः ।

प्रकर्तव्याः पञ्चविधाः, स्तम्भाः प्रासादरूपिणः ॥५८९॥

प्रासादस्य दशांशेन, स्तम्भानां विस्तरः पृथक् ।

एकादशांशैः कर्तव्यो, द्वादशांशैरथोच्यते ॥५९०॥

त्रयोदशांशैः कर्तव्यः, शक्रांशैश्च तथोच्यते ।

एतन्मानं समुद्दिष्टं, स्तंभानां विस्तरे पृथक् ॥५९१॥

भा०टी०—१ रुचक, २ भद्रक, ३ वर्धमान, ४ अष्टास्र अने ५ स्वस्तिक; आम पांच प्रकारना स्तंभो होय छे, प्रासादने अनुरूप स्तंभो करवा.

चोरस स्तंभो 'रुचक,' भद्रसहित होय ते 'भद्रक,' प्रतिरथ सहित होय ते 'वर्धमान,' अष्टवांस होय ते 'अष्टास्र' तथा पीठ उपर निचला भागमां भद्रवाला अने उपर जतां आठ कोणवाला होय ते स्तंभो 'स्वस्तिक' कहेवाय छे; प्रासादना रूप प्रमाणे उपर्युक्त पांच प्रकारना स्तंभो करवा.

स्तंभोनो विस्तार प्रासाद विस्तारना दशमा, अग्यारमा, बारमा, तेरमा, अथवा चौदमा भागे करवो, आम स्तंभोना विस्तारनुं भिन्न भिन्न मान शास्त्रमां जणावेळुं छे. (प्रासाद जेम विस्तारे अधिक होय तेम तेना स्तंभनो विस्तार उपरना माने करवो ए तात्पर्य छे.)

प्रकारान्तरे स्तंभोनी जाडाई—

प्रासादे एकहस्ते तु, स्तंभो वा चतुरंगुलः ।

द्विहस्ते चांगुलाः सप्त, त्रिहस्ते नव एव च ॥५९२॥

ततो द्वादशहस्तान्तं, हस्ते हस्ते द्वयांगुला ।

सपादांगुल वृद्धिः स्याद्, यावत्षोडशहस्तकम् ॥५९३॥

अंगुलैका ततो वृद्धि-श्चत्वारिंशत्करावधि ।

तदूर्ध्वं च शतार्धान्तं, पादोनांगुलिका भवेत् ॥५९४॥

भा०टी०—१ हाथना प्रासादना स्तंभनी जाडाई ४ आंग-
लनी, २ हाथना प्रासादना स्तंभनी जाडाई ७ आंगलनी अने ३

हाथना प्रासादना स्तंभनी जाडाई ९ आंगलनी करवी. ते पछी ४ थी १२ हाथ पर्यन्तना कोइ पण मापना प्रासादना स्तंभनी जाडाईमां प्रतिहस्त २-२ आंगलनी वृद्धि करवी, जेम के ४ हाथना प्रासादे स्तंभ ११ आंगलनो, ५ हाथना प्रासादे स्तंभ १३ आंगलनो करवो. इत्यादि; १२ पछी १३ थी १६ हाथ सुधीना प्रासादना स्तंभनी जाडाईमां हाथ प्रति १। आंगलनी वृद्धि अने १७ थी ४० हाथ सुधीना प्रासादना स्तंभनी जाडाईमां प्रतिहस्त १-१ आंगलनी वृद्धि करवी; ते पछीना ४१ थी ५० हाथ सुधीमां प्रतिहस्त स्तंभनो विस्तार ०।।।-०।।। (पोगो) आंगल वधारवो.

स्तंभनी जातिओ—

रुचकश्चतुरस्रः, स्यादष्टास्रिर्वज्र उच्यते ।

द्विवज्रः षोडशास्रिश्च, प्रतीतो द्विगुणस्ततः ॥५९५॥

मध्यप्रदेशे यः स्तंभो, वृत्तो वृत्तः प्रकीर्तितः ।

भा०टी०—चोरस स्तंभ 'रुचक', अष्टकोण 'वज्र', षोडश-कोण 'द्विवज्र' अने चत्रीश कोणवालो स्तंभ 'प्रतीत' एवा नामे ओलखाय छे, जे स्तंभ मध्यभागमां गोल होय ते 'वृत्त' स्तंभ कहेवायो छे.

मंडप-भद्र-विस्तार—

स्तंभसूत्रस्य मार्गेण, क्षणो मण्डपमध्यगः ॥५९६॥

मूलप्रासादमार्गेण, कार्या वा भद्रविस्तृतिः ।

शेषाः क्षणा विधातव्याः, समसंख्याः क्षणैर्धरैः ॥५९७॥

भा०टी०—मंडपनो मध्य क्षण स्तंभसूत्रानुसारे विस्तृत करवो, अथवा तो मूलप्रासादना माने मंडपना भद्रना क्षणनो विस्तार करवो, बीजाक्षणो-क्षणो अने स्तंभोवडे समसंख्याक करवा.

પાટ, સ્તંભ અને શરાનો વિસ્તાર—

પૃથુત્વં સ્યાત્ સષ્ટ્ભાગ-પિષ્ઠતુસ્યં તુ પટ્ટકે ।

સ્તંભઃ પટ્ટસમઃ કાર્યઃ, શીર્ષકં ત્રિગુણં તતઃ ॥૫૯૮॥

ભા૦ટી૦—પાટડાનો વિસ્તાર તેની જાડાઈના છઠ્ઠાભાગ જેટલો અધિક કરવો, સ્તંભની જાડાઈ પાટડાની જાડાઈ જેટલી કરવી, અને શરૂ સ્તંભથી ત્રણગણું વિસ્તારે કરવું.

દ્વાદશ ત્રિક મંડપો—

સુભદ્રશ્ચ કિરીટી ચ, દુન્દુભિઃ પ્રાન્ત એવ ચ ।

મનોહરશ્ચ શાન્તશ્ચ, નન્દાલ્યશ્ચ સુદર્શનઃ ॥૫૯૯॥

રમ્યકશ્ચ સુનાભશ્ચ, સિંહઃ સૂર્યાત્મકસ્તથા ।

નિગૂઢાગ્રે ત્રિકાલ્યના, દ્વાદશ મુખમણ્ડપાઃ ॥૬૦૦॥

નિગૂઢદ્વારસ્યાગ્રે તુ, ચતુષ્કિકૈવમગ્રતઃ ।

સુભદ્રો નામ વિજ્ઞેયો, મણ્ડપઃ સર્વકામદઃ ॥૬૦૧॥

ઉભૌ કક્ષૌ પુનર્દયાત્, કિરીટી નામ સંજિતઃ ।

દુન્દુભિરેકઃ પૂર્વશ્ચ, તથોભૌ પ્રાન્ત ઉચ્યતે ॥૬૦૨॥

પૂર્વે ચતુષ્કિકાયાં ચ, મનોહરશ્ચ કામદઃ ।

શાન્તશ્ચૈતદુભોપેતઃ, સ્તમ્ભૈર્દ્વયષ્ટ્ભિરેવ ચ ॥૬૦૩॥

ભા૦ટી૦—૧ સુભદ્ર, ૨ કિરીટી, ૩ દુંદુભિ, ૪ પ્રાન્ત, ૫ મનોહર, ૬ શાન્ત, ૭ નન્દ, ૮ સુદર્શન, ૯ રમ્યક, ૧૦ સુનાભ, ૧૧ સિંહ અને ૧૨ સૂર્યાત્મક; ગૂઢમંડપની આગલ ત્રિક નામથી ઓલખાતા આ ૧૨ મુખમંડપો હોય છે.

ગૂઢ મંડપના દ્વારની આગલ માત્ર એક ચોક્કી બનાવવી તેનું નામ 'સુભદ્ર' નામક મંડપ અને સુભદ્રના બંને બગલમાં ચોક્કીયો પાઢી

त्रिचोक्रियुं करवुं ते 'किरीटी' मंडप जाणवो.

त्रिचोक्रियानी आगल एक चोकी वधारवाथी चउचोक्रियुं वने तेनुं नाम 'दुंदुभि' मंडप.

दुंदुभिनी आगेनी चोकिनी वने बाजु १-१ चोकी वधारी छचोक्रियुं बनाववुं तेनुं नाम 'प्रान्त' मंडप.

प्रान्तनी आगे सातमी चोकी करवाथी पांचमो 'मनोहर' मंडप बनशे अने मनोहरनी अग्रचोकीनी बगलमां १-१ चोकी वधारी नव चोक्रियुं बनाववाथी छट्टो 'शान्त' मंडप बनशे; आ मंडपमां बधा मलीने १६ स्तंभो लागशे, मूलप्रासादथी त्रिमंडपोनो निर्गम विस्तारमां वेगणो करवो, आम आ छठा मंडपनी लंबाइ अने पहोलाइमां ३-३ चोक्रियो थशे.

एवं त्रिकाः समाख्याताः, प्रासादपीठमस्तके ।

पुनरेव प्रवक्ष्यामि, तद्विधान् षट् च मण्डपान् ॥६०४॥

तस्य बाह्ये पुनर्दद्यात्, प्रत्यलिन्दाननुक्रमात् ।

चतुष्कीक्रमयोगेन, मण्डपान् षट् च लक्षयेत् ॥६०५॥

भा०टा०—आ प्रमाणे प्रासादनी पीठने मथारे थनारा छ त्रिक मंडपो कखा, वली एज प्रकारना बाकीना छ मंडपो हवे कहुं छुं.

पूर्वोक्त शांतमंडपना बाह्य भागे अनुक्रमे अलिन्दो देवा, एटले चोक्रियो पडतां एक पछी एक छ मंडपो नीचे प्रमाणे बनशे.

तस्थाये चतुष्किकायां, नन्दाख्यः सर्वकामदः ।

त्यक्तवाग्रे चोदरे गर्भे, दद्याच्चैव सुदर्शनः ॥६०६॥

उभौ कक्षौ पुनश्चाग्रे, रम्यकः समुदाहृतः ।

अग्रे द्वि चतुष्किकाभ्यां, सुनाभो नाम संमतः ॥६०७॥

કુક્ષી પક્ષેऽલિન્દ્યુક્તે, સિંહનામા સ ઉચ્યતે ।

મુક્તકોણાકૃતિઃ સ્થિત્યા, પૂર્ણકર્ણઃ સૂર્યાત્મકઃ ॥૬૦૮॥

પૃથુત્વં ચ તલોદ્ભવં, ચતુઃક્ષણાગ્રનિર્ગમઃ ।

ક્ષણે ક્ષણે ચતુષ્ક્રિકાયાં, વિતાનં સંવરણોદય ॥૬૦૯॥

ભા૦ટી૦—તે શાન્તમંડપના નવ ચોકિયાના અગ્રભાગે ચોકી વધારવાથી ૭ ‘નન્દ’ નામનો મળ્ડપ બને છે. આગેની ચોકી હટાવી વચ્ચેના ત્રણ ચોકિયાની બંને તરફ ૧-૧ ચોકી વધારવાથી ૮ ‘સુદર્શન’ મંડપ બને છે. બગલમાં ફરિ બે ચોકિયો વધારી ૧ ચોકી આગે વધારતાં જે મળ્ડપ બને છે તેનું નામ ૯ ‘રમ્યક’ મળ્ડપ છે. આગલની ચોકિના બગલમાં બે ચોકી વધારી ત્રણ ચોકિયું કરવાથી ૧૦ ‘સુનાભ’ મળ્ડપ બને છે. પાછલના ત્રણ ચોકિયાની બગલમાં બે ચોકિયો પાડવાથી ૧૧ ‘સિંહ’ નામક મળ્ડપ બને છે, આ મળ્ડપની સ્થિતિ આગલના ભાગે કોણહીન બને છે, જ્યારે આગલની બગલની ચોકિયો વધારી પૂર્ણ મળ્ડપ કરવો તે ૧૨ ‘સૂર્યાત્મક’ મળ્ડપ કહેવાય છે.

આ ત્રિક મળ્ડપોનો વિસ્તાર નાલ મળ્ડપ જેટલો કરવો અને આગલ-નૃત્યમળ્ડપની તરફ ચ્યાર ક્ષણો વધારવા; પ્રત્યેક ક્ષણની ચોકિયોમાં વિતાન અને ઉપર સાંમરણ અથવા ગુમટિઓ કરવી.

મળ્ડપોના સંબન્ધમાં પ્રકીર્ણક વાતો-ગૂઢ

મળ્ડપની ખીંત અને દ્વાર વિષે—

મિત્તિઃ પ્રાસાદમાનેન, પીઠાન્તોત્તાનપટ્ટકા ।

એકં વા ત્રીણિ વા કુર્યાત્, દ્વારાણિ તત્ર સર્વદા ॥૬૧૦॥

ભા૦ટી૦—ગૂઢમળ્ડપની ખીંત પ્રાસાદના માને કરવી, પીઠના મથારાથી ઉપરના પાટડા સુધી ખીંત ઝંચી કરવી, ગૂઢમળ્ડપને દ્વાર

एक अथवा त्रण करावां.

शुकस्तंभानुसूत्रेण, अष्टांशांभित्तिमाचरेत् ।

मध्यपीठोच्छ्रयोत्सेधा, मण्डपाद्याः समस्तकाः ॥६११॥

भा०टी०—शुकनासना स्तंभमध्यना अष्टमांश जेटली तेनी भीत विस्तारे करवी.

प्रासादो, गूढ मण्डपो, त्रिकमण्डपो, आदि सर्वनी ऊंचाई प्रासाद पीठना मध्यपासाना मथाराथी गणवी.

अष्टांशवृत्तोर्ध्वतश्च, वितानान्ता समुच्छ्रितिः ।

चतुष्किका याम्योत्तरे, चाग्नेऽथ द्वारि सोच्यते ॥६१२॥

भा०टी०—मण्डपनी ऊंचाई अष्टास्रथी वितान सुधी जाणवी, गूढ मण्डपना डावा जमणा अने सामेना द्वार उपर चोक्रियो करवी.

प्रासादे द्वारशाखाया, तद्विधा मण्डपादिके ।

करोटकं तदूर्ध्वेषु, बुधा (वृत्त) बंधात्तु कारयेत् ॥६१३॥

भा०टी०—प्रासादना द्वारनी शाखा जेवी ज मण्डप आदिना द्वारनी पण शाखा करवी, अने उपर मण्डपना वृत्त बन्धथी करोटक करावुं.

बारी अने जाली—

वातायनाश्च कर्तव्याः, सह चन्द्रावलोकौ ।

प्रासादद्वारवद् द्वार-विस्तरो मंडपे भवेत् ॥६१४॥

भा०टी०—मण्डपाने हवा माटे बारीओ करवी अने प्रकाश माटे जालिओ (तावदानो) पण करावां, प्रासादना द्वार विस्तार जेटलो मण्डपद्वारनो विस्तार पण होय छे.

सपादद्विगुणाः सार्ध-द्विगुणाः सान्तरोद्भवाः ।

क्षुद्रप्रासादकेषु स्यु-मण्डपा बहवोऽपरे ॥६१५॥

ક્ષેત્રાડલામે તુ પુન-રિમાન્ સર્વેષુ યોજયેત્ ।

આ૦ટી૦—ન્હાના દેવાલયોમાં સવા બે ગણા, અઠી ગણા, અને એની વચ્ચેના માનના, બીજા અનેક મળ્ડપો થાય છે અને સ્થાનના અભાવે બીજા દેવાલયોમાં પણ આ વધા મળ્ડપો કરી શકાય છે.

દ્વિસ્તંભઃ શુકનાસાગ્રે, વિજ્ઞેયઃ પાદમળ્ડપઃ ।

પ્રાસાદભિત્તિમાનેન, મળ્ડપે ભિત્તયઃ સ્મૃતાઃ ॥૬૧૬॥

આ૦ટી૦—શુકનોસની આગલ બે થાંભલા ઉભા કરી ચોકી પાડવી તેનું નામ 'પાદમળ્ડપ' કહેવાય છે, પ્રાસાદની ભિત્તિની જાડાઈ પ્રમાણે જ મળ્ડપની ધોંતોની જાડાઈ કહી છે.

શતમષ્ટોત્તરં જ્યેષ્ઠ-શ્રતુઃષષ્ટિકરોડ્વરઃ ।

કનિષ્ઠો મળ્ડપઃ કાર્યા, દ્વાત્રિંશત્કરસંખિતઃ ॥૬૧૭॥

આ૦ટી૦—જ્યેષ્ઠ મળ્ડપ વધારેમાં વધારે ૧૦૮ હાથનો કરવો, મધ્યમ મળ્ડપ વધુમાં વધુ ૬૪ હાથનો અને કનિષ્ઠ મળ્ડપ અધિકમાં અધિક ૩૨ હાથનો કરવો.

ચતુઃષષ્ટિપદે જ્યેષ્ઠે, ભદ્રં કુર્યાત્ ચતુષ્પદમ્ ।

एकाशीतिपदे मध्ये, भद्रं स्यात् पञ्चभागिकम् ॥૬૧૮॥

શતભાગવિભક્તે તુ, ષડંશં સ્યાત્ કનીયસિ ।

कर्णा द्विभागिकाः कार्या, भित्तियुक्तश्च मળ્ડપઃ ॥૬૧૯॥

આ૦ટી૦—જ્યેષ્ઠ મળ્ડપની ભૂમિમાં ૬૪ પદ પાડી ૪ ભાગનું ભદ્ર, મધ્યમળ્ડપના ક્ષેત્રમાં ૮૧ પદ પાડી ૫ ભાગનું ભદ્ર અને કનિષ્ઠમળ્ડપના તલનાં ૧૦૦ પદ પાડી ૬ ભાગનું ભદ્ર કરવું, પણ કર્ણ તો સર્વમાં ૨-૨ પદના જ કરવા; આ પ્રમાણે ભિત્તિયુક્ત ગૂઠ મળ્ડપ કરવો.

क्षुरकं कुंभकलशौ, कपोतं जंघया सह ।

प्रासादस्यानुरूपेण, मण्डपेष्वपि कारयेत् ॥६२०॥

भा०टी०—खुरो, कुंभो, कलशो, केवाल अने जांघ; आ
थरो गूढ मण्डपोमां पण प्रासादना जेवा करवा.

परिच्छेदनो उपसंहार—

प्रासाद-वास्तुने अंगे लखवानुं घणुं छे, अमोए समुद्रमांथी
छांट जेटलुं ज अत्र लख्युं छे, एक परिच्छेद के प्रकरणमां आथी
अधिक लखवाने अवकाश पण न होय ए देखीती बात छे तेथी
प्रासाद-लक्षण अहीं ज पूर्ण करीये छीये.



प्रासाद-लक्षणे परिशिष्ट-नं० ३
द्वारे दृष्टिस्थान-ज्ञापक कोष्टकम् ।

द्वारोद- यांगुल	अधः २४ भागा	उपरि ९ भागा	दृष्टिपदम्	आयः	आयस्थानम्
४१	३४॥-॥	५॥॥ ०	॥ =	सिंह	आदि । =॥ भा०
४३	३६॥०॥	६) ॥॥	॥ =॥॥	वृषभ	संपूर्ण
४५	३७॥॥=॥	६। -	॥ =	गज	आदि०॥ विना
४७	३९॥ =॥	६॥-॥॥	॥ =॥॥	ध्वज	आदि । -॥विना
४९	४१-॥	६॥॥=	॥॥ ०	सिंह	अन्त्ये -॥
५१	४३)॥	७) =॥॥	॥॥ ०॥॥	श्वान	संपूर्ण
५३	४४॥ =॥	७ =	॥ -	वृषभ	आदि । = भा०
५५	४६। =॥	७॥=॥॥	॥॥ -॥॥	गज	आदि ॥=॥
५७	४८ -॥	८) ।	॥॥ =	ध्वज	संपूर्ण
५९	४९॥॥ ०॥	८ ०॥॥	॥॥ =॥॥	सिंह	आ. =॥ विना
६१	५१। =॥	८॥-	॥॥ =	वृषभ	अं. । =॥
६३	५३ =॥	८॥॥-॥॥	॥॥ =॥॥	गज	अं. =
६५	५४॥-॥	९) =	१) ।	गज	आ. =॥
६७	५६॥०॥	९। =॥॥	१) ॥॥	ध्वज	आ. । =॥
६९	५८ =॥	९॥=	१-)	सिंह	आ. ॥=
७१	५९॥॥ =॥	९॥॥=॥॥	१-॥॥)	वृषभ	आ. -॥
७३	६१॥ -॥	१०। ०	१=)	गज	आ. । =॥
७५	६३। ०॥	१०॥०॥॥	१=॥॥)	ध्वज	अं. । =
७७	६४॥॥ =॥	१०॥॥-	१=)	ध्वज	आ. ०
७९	६६॥ =॥	११)-॥॥	१=॥॥)	सिंह	आ. । -॥

द्वारे दृष्टिस्थान-ज्ञापक कोष्टकम् ।

द्वारोद- यांगुल	अधः ५४ भागा	उपरि ९ भागा	दृष्टिपदम्	आयः	आयस्थानम्
८१	६८।०॥	११।=॥	१।०	वृषभ	आ. ॥=॥ भागे
८३	७०)॥	११॥=॥॥	१।०॥॥	गज	आ. ॥॥=॥
८५	७१॥=॥	११॥॥=॥	१।-॥	ध्वज	आ. ।०॥ विना
८७	७३।=॥	१२=॥॥	१।-॥॥	सिंह	आ. ॥-॥ विना
८९	७५-॥	१२॥०	१।=॥	वृषभ	आ. ॥॥=॥ विना
९१	७६॥०॥	१२॥०॥॥	१।=॥॥	वृषभ	आ. =॥
९३	७८।=॥	१३-॥	१।=॥	गज	आ. ॥०॥
९५	८०=॥	१३।-॥	१।=॥॥	ध्वज	आ. ॥॥-॥
९७	८१॥॥-॥	१३॥=॥	१॥०	सिंह	आ. =॥ विना
९९	८३॥०॥	१३॥॥=॥॥	१॥०॥	वृषभ	आ. ।=॥ विना
१०१	८५=॥	१४=॥	१॥-॥	गज	आ. ॥-॥ विना
१०३	८६॥॥=॥	१४।=॥॥	१॥-॥	गज	आ.-॥ अं. ॥०
१०५	८८॥-॥	१४॥॥०	१॥=॥	ध्वज	आ. ।=॥ अं. =॥॥
१०७	९०।०॥	१५)॥॥	१॥=॥॥	सिंह	आ. ॥=॥ भागतक
१०९	९१॥॥=॥	१५।-॥	१॥=॥	वृषभ	आ. ।०॥ विना सं. अंगुले
१११	९३॥=॥	१५॥-॥॥	१॥॥=॥॥	गज	आ. ।-॥ विना सं. अंगुले
११३	९५।-॥	१५॥॥=॥	१॥०	ध्वज	आ. ॥=॥ विना सं. अंगुले
११५	९७)॥	१६=॥॥	१॥०॥॥	सिंह	आ. ॥॥=॥ विना

प्रासाद-लक्षणे परिशिष्ट नं. ४-

पञ्च खण्डादयः-२५ रेखाः सकलाः

१	५	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०											
२	६	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२१										
३	७	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२१	२२									
४	८	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२१	२२	२३								
५	९	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२१	२२	२३	२४							
६	१०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२१	२२	२३	२४	२५						
७	११	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२१	२२	२३	२४	२५	२६					
८	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७				
९	१३	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८			
१०	१४	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९		
११	१५	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	
१२	१६	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	
१३	१७	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	
१४	१८	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	
१५	१९	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	
१६	२०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	
१७	२१	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	
१८	२२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	
१९	२३	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	
२०	२४	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	
२१	२५	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	
२२	२६	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	
२३	२७	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	
२४	२८	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	
२५	२९	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	

૨૫ નાગરી રેखाઓ (ઁંડકલા સહિત)

૧૦૫																			
૧૬	૧૨૦																		
૧૬	૧૬	૧૩૬																	
૧૬	૧૬	૧૭	૧૫૩																
૧૬	૧૬	૧૭	૧૮	૧૭૧															
૧૬	૧૬	૧૭	૧૮	૧૯	૧૯૦														
૧૬	૧૬	૧૭	૧૮	૧૯	૨૦	૨૧૦													
૧૬	૧૬	૧૭	૧૮	૧૯	૨૦	૨૧	૨૩૧												
૧૬	૧૬	૧૭	૧૮	૧૯	૨૦	૨૧	૨૨	૨૫૩											
૧૬	૧૬	૧૭	૧૮	૧૯	૨૦	૨૧	૨૨	૨૩	૨૭૬										
૧૬	૧૬	૧૭	૧૮	૧૯	૨૦	૨૧	૨૨	૨૩	૨૪	૩૦૦									
૧૬	૧૬	૧૭	૧૮	૧૯	૨૦	૨૧	૨૨	૨૩	૨૪	૨૫	૩૨૬								
૧૬	૧૬	૧૭	૧૮	૧૯	૨૦	૨૧	૨૨	૨૩	૨૪	૨૫	૨૬	૩૫૧							
૧૬	૧૬	૧૭	૧૮	૧૯	૨૦	૨૧	૨૨	૨૩	૨૪	૨૫	૨૬	૨૭	૩૭૮						
૧૬	૧૬	૧૭	૧૮	૧૯	૨૦	૨૧	૨૨	૨૩	૨૪	૨૫	૨૬	૨૭	૨૮	૪૦૬					
૧૬	૧૬	૧૭	૧૮	૧૯	૨૦	૨૧	૨૨	૨૩	૨૪	૨૫	૨૬	૨૭	૨૮	૨૯	૪૩૬				

परिच्छेद १०

कलश-लक्षण—

प्रासादमस्तके मौलि-रूपः कुम्भो निगद्यते ।

तस्मात् सल्लक्षणं कुम्भं, कारयेद् विधिवित्तमः ॥२९॥

भा०टो०—कलश प्रासादना मस्तक उपर मुकुट रूप कहेवाय छे माटे विधिना जाणनारे कलश उत्तम लक्षणान्वित बनाववो.

देहराना शिखर उपरना कलशनुं लक्षण अने परिमाण शिल्प शास्त्रोमां देहराना मान अने जानिने अनुसारे भिन्न भिन्न प्रकारनुं कहेलुं छे.

१-नागर, लतिन, सांधार, मिश्रक, विमाननागर, विमान-पुष्पक अने धातुज, रत्नज, दारुज, रथारुह आदि, आ जातिना प्रासादोना कलशोनां परिमाण नीचे मुजब ३ प्रकारनां होय छे.

(१) नागरादिनो प्रासादना विस्तारथी आठमा भागनो कलशनो विस्तार मध्य भागे करवो अने रत्नजादिनो एथी सवायो करवो, कलशनुं आ जघन्यमान गणाय छे. आमां सोलमो भाग उमेरवाथी तेनुं उत्तम मान अने बत्रीसमो भाग उमेरवाथी मध्यम मान थाय छे.

(२) प्रासादनी मूलरेखाथी पांचमाभाग जेटलुं पण कलशनुं मान होय छे; आ कलशनां माननो बीजो प्रकार छे जे बृहत्प्रासादोनां कलशोने माटे उपयोगी होय छे.

(३) आंबलसारानो विस्तारना ४ भाग करी तेना १ भागने सवायो करतां जे मान आवे तेना बरोबर पण कलशनो विस्तार थाय छे.

(४) वराट, द्राविड, भूमज, विमानोज्ज्व अने सर्व प्रकारना बलभीप्रासादोना कलशोनुं विस्तार मान प्रासादना व्यासना छट्ठा भाग जेटलु होय छे, आ मध्यम मान छे आने स्वषष्टांश युक्त कर

शार्थी उत्तम अने षष्ठांश हीन करवाथी कनिष्ठ मान गणाय छे.

आजकाल कलशमानमां चालती भूल—

उपर नागरादि जातिना प्रासादोना कलशोनां भिन्न भिन्न मानो अने ते प्रत्येकना उत्तम मध्यम कनिष्ठादि भेदो लक्ष्या छे छतां आज कालना कारीगरो तेनो कंडू पण उपयोग करना नथी. अने सर्व मानना प्रासादोना कलशोनुं मान एकज प्रकारनुं राखे छे. खरी वस्तु तो ए छे के दण्डनी जेमज कलशोनुं मान पण कनिष्ठ प्रासादोमां उत्तम अने उत्तम प्रासादोमां कनिष्ठ प्रकारनुं राखनुं जोइये, बधा मानना प्रासादोना कलशो आठमे भागे विस्तार वालाज न राखवा जोइये, सांधार प्रासादोमां के ८-९ गजना निगन्धार प्रासादोनां कलशोमां कलशो कनिष्ठमानना अथवा बीजा प्रकारना मानवाला बनाववा जोइये, बीजी पण कलशोना मानने अंगे कारीगरोमां एक भूल प्रचलित थयेली छे अने ते चवरियोना कलशोना मानमां.

केटलांक मंदिरोना गभारामां चांदीनी अथवा मफेद पापाणनी ३ घुमटियोवाली चवरियो बनावे छे, अने ते उपर कलशिया चढावे छे, ए कलशोनुं मान पण कारीगरो चवरीना व्यासना अष्टमांश जेटलुं नागर प्रासादोना कलशोना हिसावे राखे छे, जे खरी रीते भूलभरेलुं छे. चवरियो ए नागरादि जातिमां नहि पण वास्तवमां बलभी प्रासादोनुं लघुरूप छे, अने बलभी प्रासादोना कलशोनुं मान अपराजितपृच्छामां प्रासादनां षष्ठांश तुल्य राखवानुं विधान छे: आर्थी स्पष्ट थाय छे के तेवी चवरियो उपरना कलशो तेना अष्टमांश तुल्य नहिं पण षष्ठांश तुल्य विस्तृत करवानुं कारीगरोए लक्ष्य राखनुं जोइये.

कलशानी उंचाई—

कलश विस्तारमां ६ भागनो अने उदयमां ९ भागनो होय छे,

एटले के तेनी उंचाई विस्तारथी दोढ गुणी थाय छे. कलशनां क्वां मलीने ६ अंगो होय छे. १ पीठ (पडवी), २ अंडक (पेट), ३ ग्रीवा, ४ षहेली कणी. ५ बीजी कणी अने ६ बीजोरुं (डोडलो), आ ६ अंगोनुं उदयमान अनुक्रमे नीचे प्रमाणे होय छे.

पद्मपत्री (पीठ) भाग ०।।, अंडक भाग ३।, (कूचित् भाग १ अने ३ लखेल छे) ग्रीवा ०।।, बे कणियो भाग १। (कूचित् १-१ भागनी कणी लखेल छे) अने बीजपूस्क (ससू) भाग ३ उदयमां होय छे.

एज ६ अंगोनुं विस्तारमान—

पद्मपत्री नीचे भाग ३ अने उपर कन्दमां भाग २, अंडक भाग ६, ग्रीवा मध्यमां भाग २, कर्णिकान्तरमां भाग ४, निचली कर्णिका ४ अने उपली कर्णिका भाग ३ नी, बीजपूर नीचे २ अने उपर १।। भाग (कोइ स्थले १ भाग पण लखेल छे.) विस्तारमां बनाववुं जोइये.

उपर जे ४ प्रकार कलशना बताव्या छे तेनो मूलाधारग्रंथ अपराजितपृच्छा छे, जेनुं विधान नीचे प्रमाणे छे.

प्रासादस्थाष्टमांशेन, पृथुत्वं कलशांडके ।

षोडशांशैर्युतं श्रेष्ठं, द्वात्रिंशांशैस्तु मध्यमम् ॥१॥

मूलरेखापञ्चमांशे, पृथुत्वं तस्य कारयेत् ।

घण्टाविस्तारपादेन, तस्य पादयुतं पुनः ॥२॥

उक्तं कलशविस्तारं, उच्छ्रयं तस्य सार्वकम् ।

नागरे लतिने स्वस्थं, सांधारेषु च मिश्रके ॥३॥

विमाने नागरच्छन्दे, कुर्यात् विमान-पुष्पके ।

घातुजे रत्नजे चैव, दारुजे च रथास्त्रे ॥४॥

सैलजे स चतुर्थीश, ऐष्टकादिसमस्तके ।
 इत्युक्तः कलशशैवं, सर्वकामफलप्रदः ॥५॥
 वराटे द्राविडे चैव, भूमजे विमानोद्भवे ।
 बलभीनां समस्तानां, प्रासादषष्टमांशके ॥६॥
 तत्षडंशयुतं श्रेष्ठं, कन्यसं तद्विनाकृतम् ।
 इत्युक्तं मानमुद्दिष्टं, कर्तव्यं सर्वकामदम् ॥७॥
 उच्छ्रयं नवभागं च, विस्तारं रसं भागिकम् ।
 अण्डात् त्रिसपादं च, त्रिपदा (पादोना)पद्मपत्रिका ॥८॥
 ग्रीवा च भागपादूना, सपादे द्वे च कर्णिके ।
 मातुलिंगं त्रिभिर्भागैः, कर्तव्यं सर्वकामदम् ॥९॥

अपराजितपृच्छाना उपर्युक्त पाठनो तात्पर्यार्थं अमोए आ कलश
 लक्षणना निरूपणमां प्रारंभमां ज आपी दीधो छे. एटले पुनरुक्ति
 करता नथी. आ विषयना जाणकार कारीगरो आ विषयनुं शास्त्रीय
 निरूपण समजीने कलशो बनावे एज आ लेखनुं प्रयोजन छे.



परिच्छेद ११, ध्वजदण्ड लक्षण—

दण्डश्चैत्यध्वजाधार-स्तस्माल्लक्षणवेदिना ।

दण्डः सुलक्षणः कार्यः, समानो ग्रन्थि-पर्वभिः ॥३०॥

भा०टी०—दंड चैत्यनी ध्वजानो आधार छे, एटले लक्षणना जाणनारे दण्डने गांठो अने पर्वोना शास्त्रोक्तमान सहित लाक्षणिक बनाववो.

दण्डनी लंबाईना प्रकारो—

- (१) प्रासादनी खरशिलाथी कलशना अग्रभाग पर्यन्तनी उंचाईना एक तृतीयांश जेटली ध्वजदण्डनी लंबाई करवी ते दण्डनुं ज्येष्ठमान समजवुं. जेष्ठमानने अष्टमांश हीन करवाथी मध्यममान अने चतुर्थांश हीन करवाथी कनिष्ठमाननो दण्ड थाय छे कोई ग्रंथकारे षडंशहीनने कनिष्ठमान कह्यो छे.
- (२) प्रासादना विस्तार (व्यास) बरोबर दण्ड होय तेने पण ज्येष्ठमान दण्ड कहे छे, आ ज्येष्ठमानमां दशमांश हीन करवाथी मध्यम मान अने पंचमांश हीन होय ते दण्ड कनिष्ठमाननो गणाय छे.
- (३) प्रासादनी मूल रेखा परिमित दण्ड होय ते दण्ड पण कनिष्ठमाननो गणाय छे. आ कनिष्ठमानमांथी द्वादशांश ओछो करवाथी ' कनिष्ठ मध्यम ' अने षडंश हीन करवाथी ' कनिष्ठ कनिष्ठ 'माननो दण्ड गणाय छे.

कया मापना प्रासादने माटे कया मापनो दण्ड होवो जोइए ? ए विषयमां घणा शिल्पिओ विचार करता नथी, अने “ प्रासाद व्यास मानेन ” इत्यादि श्लोकोक्त मापना ज दण्डो करावे छे; पण

वास्तवमां सर्व मापना प्रासादो माटे एक ज प्रकारनुं दण्डनुं माप आपवुं योग्य नथी.

उक्त ३ प्रकारनुं दण्डोनुं मान अने तेना विवेकने अंगे अपरा-
जितपृच्छामां नीचेना शब्दोमां निरूपण कर्युं छे —

आदिशिलोद्भवं मानं, तदूर्ध्वं कलशांतिकम् ।
तृतीयांशे प्रकर्तव्यो, ध्वजादण्डः प्रमाणतः ॥१॥
अष्टमांशे ततो हीने, मध्यमः शुभलक्षणः ।
कनिष्ठो यो भवेद् दण्डो, ज्येष्ठतः पादर्वाजतः ॥२॥
प्रासाद पृथुमानेन, ध्वजादण्डं तु कारयेत् ।
मध्यमं दशमांशोनं, कनिष्ठं चोनपंचकम् ॥३॥
मूलरेखाप्रमाणेन, कनिष्ठो दण्डसंभवः ।
मध्यमो द्वादशांशोनः, षडंशोनः कनिष्ठकः ॥४॥
प्रासादकोणमर्यादा, सप्तहस्तान्तकं मता ।
गर्भमानं च कर्तव्यं, हस्ताः स्युः पञ्चविंशतिः ॥
रेखामानं च कर्तव्यं, यावत् पंचाशहस्तकम् ॥६॥

भा०टो०—प्रथम शिलाथी कलशना मथारा सुधीनी उंचाईना
त्रीजा भाग जेटलो लंबो ध्वजादण्ड बनावयो ए उत्तम, एथी अष्टमांश
ओछो ते मध्यम अने उत्तमथी चोथा भागे ओछो ते कनिष्ठ माननो
दण्ड होय छे. वली प्रासादना विस्तार जेटलो लंबो ते उत्तम, तेथी
दशमांश हीन ते मध्यम अने पञ्चमांश हीन ते कनिष्ठ माननो दण्ड
होय छे. प्रासादनी मूलरेखा जेटलो लंबो दण्ड कनिष्ठोत्तम, द्वाद-
शांश हीन करतां कनिष्ठमध्यम, अने षडंशहीन करतां कनिष्ठकनिष्ठ
माननो दण्ड होय छे.

(१) १ थी ७ हाथ सुधीना प्रासादोनो ध्वजादण्ड प्रासादना कोणथी
मापवो जोइये, एटले के जेटला हाथनो प्रासाद होय तेटला

હાથનો દણ્ડ બનાવવો, આ માપ ૭ હાથ સુધીના પ્રાસાદના દણ્ડને માટે સમજવું.

- (૨) ૮ થી ૨૫ હાથ સુધીના પ્રાસાદોને માટે દણ્ડનું માન તે પ્રાસાદના ગર્ભના માન જેટલું રાખવું. અને
- (૩) ૨૬ થી ૫૦ હાથ સુધીના કોઈ પણ માનનો પ્રાસાદ હોય તો તેના દણ્ડનું માન મૂલરેખાના હિસાબે રાખવું, એટલે કે મંડોવરાની રેખાની ઉંચાઈ જેટલું દણ્ડનું માન ગણવું. આ માનનો દણ્ડ પ્રાસાદના વ્યાસથી લગભગ એક દ્વિતીયાંશ જેટલો લંબો થાય છે.

દણ્ડનાં ઉપાદાન કાષ્ટો—

મુખ્ય રીતે તો 'દણ્ડ' અન્દરથી પોકલ ન હોય, કીટ લાગેલ ન હોય અને કાળા-કોતરવાલો ન હોય. એવા વાંસનો જ બનાવવો એવો શાસ્ત્રદેશ છે, પણ તેવા પ્રકારનો વાંશ ન મળે તો બીજા ઉત્તમ વૃક્ષોના કાષ્ટનો પણ બનાવી શકાય છે. આ સંબન્ધમાં અપરાજિત-પૃચ્છામાં નીચેનું વિધાન દૃષ્ટિગોચર થાય છે—

વંશમયસ્તુ કર્તવ્યઃ, સારદારુમયસ્તથા ।

સમગ્રન્થિર્વિધાતવ્યઃ, પર્વભિર્વિષમસ્તથા ॥૬॥

भा०टी०—ધ્વજદણ્ડ વાંશનો બનાવવો અથવા બીજા શ્રેષ્ઠ લાકડાનો પણ બનાવી શકાય છે. જો વાંશનો હોય તો તે સમસંખ્યાક ગાંઠો અને વિષમ સંખ્યાક પર્વો (બે ગાંઠો વચ્ચેના ભાગ) વાલો હોવો જોઈએ. (બીજા લાકડાનો હોય તો તેને સમસંખ્યાક વંગડિયો લગાડીને તેવો બનાવવો.)

ગ્રંથાન્તરમાં દણ્ડના ઉપાદાન રૂપે નીચે પ્રમાણે પણ કેટલાક વૃક્ષોનો નામ નિર્દેશ કર્યો છે.—

વંશમયોઽથ કર્તવ્ય, આંજનો મધુકસ્તથા ।

शैशपः स्वादिरश्वैव, पिण्डं चैव तु कारयेत् ॥७॥

भा०टी०—दण्ड वांशनो करवो अथवा तो अंजननो, महुडानो, शीशमनो तथा खेरना बनाववा अने तेने गोलरूपे करवैत

ध्वजादण्डनी जाडाई—

ध्वजादण्डनी जाडाईनो पण नियम होय छे. ए विषयमां लगभग बधा ग्रन्थकारो एकमत छे के एक हाथना दण्डनी जाडाई पोणा आंगलनी करवी अने ते पछी प्रत्येक हाथे अडधा आंगलनी वृद्धि करवी. कोई पण मानना दण्डने माटे एज नियम लागु पडे छे. ए नियमनुं प्रतिपादन नीचेना श्लोकमां कर्षुं छे.—

एकहस्ते तु प्रासादे, दण्डः पादोनमङ्गुलम् ।

अर्द्धांगुला भवेद्वृद्धि-यावत् पंचाशहस्तकम् ॥८॥

भा०टी०—१ हाथना प्रासाद उपरना दण्डनी जाडाई पोणा आंगलनी अने पछीना माप माटे प्रतिहस्त अडधा आंगलनी वृद्धि करवी. २ हाथथी ५० हाथना प्रासादे एज प्रमाणे दण्ड जाडो करवो.

ए विषयमां एक मत एवो पण छे के दण्डना छट्टा भाग जेटली लांबी पाटली करवी अने पाटलीनी लंबाईथी छट्टा भागे तेनी जाडाई करवी. पाटलीनी जाडाई अने दण्डनी जाडाई सरखी करवी. आ मान्यता रत्नकोषकारनी छे अने आ मान्यता प्रमाणे दण्डनी जाडाई राखवामां आवे तो ४-६ हाथना प्रासादोने अंगे योग्य गणी शकाय तेवी छे.

दण्डनी पाटली—

दंड उपरनी पाटलीनी लंबाई दंडनी लंबाईना छट्टा भाग जेटली राखवानो नियम छे अने पाटलीनी जाडाई तेनी लंबाईना छट्टा भाग जेटली होवी जोइए एवु विधान छे. पाटली पोतानी लंबाईथी

અર્ધી પહોલી હોય છે, પાટલીને શિલ્પશાસ્ત્રકારો ' મર્કટી, મંડૂકી ' ઇત્યાદિ નામોથી ઓલખાવે છે. અધિકાંશ ગ્રંથકારોની માન્યતા પાટલીના વિષયમાં ઉપર જણાવ્યા પ્રમાણે છે, છતાં એને અંગે ઘણા મતભેદ તો છે જ. એ વિષયમાં અપરાજિતપૃચ્છાનું વિધાન નીચે પ્રમાણે છે—

મળ્ડૂકી તસ્ય કર્તવ્યા, અર્ધચન્દ્રાકૃતિસ્તથા ।
 પૃથુ દણ્ડસપ્તગુણોક્તા, હસ્તાદ્રા પંચકોઢ્ઢવા ॥૧॥
 ષડ્ગુણા ચ દ્વાદશાન્તા, શેષા પંચગુણોચ્યતે ।
 ભાગેન ચ સવિસ્તારા, કર્તવ્યાં સર્વકામદા ॥૧૦॥
 અર્ધચન્દ્રાકૃતિશ્ચૈવ, પક્ષે કુર્યાત્ ગગારકમ્ ।
 વંશોર્ધ્વે કલશં ચૈવ, પક્ષે ઘણ્ટાપ્રલંબનમ્ ॥૧૧॥

ખા૦ટી.—તે દણ્ડની પાટલી અર્ધચન્દ્ર આકારે બનાવવી અને તેની લંબાઈ દણ્ડની જાડાઈથી સાતગુણી કરવી. આ માન ૧ થી ૫ હાથ સુધીના દણ્ડની પાટલીનું છે; ૬ થી ૧૨ હાથ સુધીના દણ્ડની પાટલી દણ્ડની જાડાઈથી છ ગુણી અને તે ઉપરાન્તના દણ્ડની પાટલી દણ્ડની જાડાઈથી પાંચ ગુણી લંબી કરવી જોઈએ. પાટલી પોતાની લંબાઈથી અર્ધ ભાગે વિસ્તૃત કરવી, તેનો વચ્ચલો ભાગ અર્ધ ચન્દ્રાકારે કરવો, અને બન્ને બાજુમાં ગગારા બનાવવા; વાંશના ઉપરના ભાગે કલશ અને પાટલોના બન્ને છેડાઓ ઉપર ઘંટડિયો લટકાવવી. અપરાજિતપૃચ્છામાં દંડ ઉપર કલશ બનાવવાનું વિધાન તો કર્યું, પણ કલશની ઉંચાઈનાં સંબંધમાં કાંઈ જણાવ્યું નથી, ઘણા બીજા ગ્રંથોમાં આ સંબંધમાં નીચે પ્રમાણે ઉલ્લેખ મળે છે.

કલશં કારયેત્તસ્યાઃ પંચમાંશેન દૈર્ઘ્યતઃ ।

ખા૦ટી૦—પાટલીના પંચમાંશ જેટલો લંબો તે ઉપર કલશ કરાવવો.

ध्वजा-परिमाण—

दण्ड उपर ध्वजा केवा मापनी जोइए एनो पण शिल्पशास्त्रोमां नियम बांधेलो छे, जो के ए विषयमां पण मतभेद तो छे ज, पण आजकाल ध्वजानी लंबाई दंड जेटली ज रखाय छे अने तेनी चोडाई लंबाईना आठमा भागनी होय छे. ए विषयमां अपराजित-पृच्छानुं विधान नीचे प्रमाणे छे.

ध्वजदण्डप्रमाणेन, पताकां च प्रलम्बयेत् ।

पृथुत्वमष्टमांशेन, त्रिशिखाग्रविभूषितां ॥१२॥

शिखाः पंच प्रकर्तव्या, ध्वजाग्रे तद्विचक्षणैः ।

दिव्यवस्त्र मय्यश्रैव , किंकिणीघुर्घुरान्विताः ॥१३॥

भा०टी०—ध्वजादण्ड प्रमाणवाली ते उपर पताका (ध्वजा) लंबावची, ध्वजानो विस्तार तेनी लंबाईना आठमा भाग जेटलो राखवो, तेना छेडाना अग्र भागमां ३ अथवा ५ शिखाओ वनावीने तेने सुशोभित करवी, ते दिव्य वस्त्र (रेशमी पट्टकूल)नी वनावची अने घूघरियो वडे अलंकृत करवी.



परिच्छेद—१२

जिनप्रतिमा लक्षण—

प्रतिमा हि द्विसंस्थाना, आसीनोर्ध्वस्थितात्मिकाः ।
तासां भागक्रमश्चैव, प्रवेशा निर्गमास्तथा ॥३१॥

अङ्गलक्षणभेदाश्च, दोषाश्च विविधाः पुनः ।

सर्वमेतत् परिज्ञाय, प्रतिमाः कारयेन्नवाः ॥३२॥ ।

भा०टी०—जिन प्रतिमाओ बे प्रकारना आकारनी होय छे. बेठी—जे पद्मासनस्थ कहेवाय छे. उभी जे कायोत्सर्गिक ए नामथी ओलखाय छे. आ प्रतिमाओना दैर्घ्य विस्तारना मानांकी, अंग विभागना प्रवेशो, निर्गमो, अंगगन लक्षणोना भेदो अने प्रतिमाना निर्माणमां थता अनेक दोषो; ए सर्व समजीने नवीन प्रतिमा कराववी जोईये.

प्रतिमा-लक्षणनी दुर्बोधता—

‘प्रतिमा-लक्षणनुं’ वर्णन ए कुशल मूर्तिशास्त्रज्ञनुं काम छे, प्रतिमा-निर्माताने प्रतिमाने अंगे जाणवानी महत्त्व पूर्ण बातो, जेवी के-मूर्तिना अंगोपांगोनी लंबाई, पहोलाई, निर्गम-प्रवेश, पिंड, परिधि आदि विषयोना ज्ञाननी प्रथम जरुरत पडे छे. आज-कालमां बनती प्रतिमाओ प्राचीन प्रतिमाओनी बराबरी नथी करी शकती एनुं कारण ए विषयोनुं अज्ञान ज छे. उदयमानना १०८ अथवा ५६ आंगलोना सरवालो मात्र भेलवी देवाथी ज प्रतिमामां लाक्षणिकपणुं आवी जतुं नथी पण एना अंग-प्रत्यंगोनां मानो, तेओनां एक थीजा वच्चेनां अंतरो, प्रत्येक अंग उपांगोना निर्गम-प्रवेशो आदिनुं यथार्थ ज्ञान होय तोज प्रतिमामां खरी लाक्षणिकता उत्पन्न करी शकाय छे,

ते पण प्रत्येक मनुष्यथी नहि पण एना अधिकारी विद्वान् मूर्तिकार द्वारा ज अमोए आवा मनुष्योना हितने लक्ष्यमां राखीने ज आ प्रकरण आलेखवानुं साहस कर्युं छे.

मूर्ति निर्माण विषयने स्पर्शता अनेक मौलिक ग्रन्थो उपलब्ध छे, छतां अमो ते सर्वनी चर्चा नहि करीये, अमारो प्रस्तुत विषय 'जिन प्रतिमा लक्षण' सुधीज मर्यादित छे, तेमां उत्तर भारतमां पूर्वे जे शिल्पने आधारे जिन प्रतिमाओ बनती हती, तेना ज आधारे लेवानो निर्णय होइ 'जयसंहिता'ने मूल आधार बनावी 'अपरा-जितपृच्छा, जिन प्रतिमा-विधान, वास्तुसार, बृहत्संहिता, प्रतिमा-मान-लक्षण अने नवताल मूर्ति विधान' आदि ग्रन्थोना आधारे अमो जिन प्रतिमा-लक्षणने अंगे मलती उपयोगी हकीकतोनुं वर्णन करशुं. प्रथम जयसंहिताना आ विषयना प्रकरणने अक्षरशः आपी अन्ते बीजा ग्रन्थोने आधारे मानांक कोष्ठको आपीने आ विषयने यथासंभव स्पष्ट करवानो प्रयास करशुं.

उपर्युक्त ग्रन्थो पैकीना पहेला बे ग्रन्थो शिल्पना प्राचीन आकर ग्रन्थो छे. आ बनेमां जिनप्रतिमाने उदेशीने खास अध्यायो छे.

'जिन-प्रतिमा-विधान'नो उतारो शिल्परत्नाकरमां एना संग्राहके आप्यो छे, ए प्रकरणनो आधार ग्रन्थ जाणी सकायो नथी.

चोथो ग्रन्थ ठक्कुर फेरु कृत वास्तुसार छे, आमां 'द्विव परीक्षा' नामनुं जैन प्रतिमाने अंगे लखायेलुं खास प्रकरण छे, बीजाओ करतां ठक्कुर फेरुण आमां घणी वातो स्पष्ट करी छे.

बृहत्संहितामां 'प्रतिमा' निर्माण संबन्धी एक अध्याय छे, जे गुप्तकालीन शिल्पना निरूपणमां महत्त्वनो भाग भजवे छे.

प्रतिमामान-लक्षण एक स्वतन्त्र प्राचीन निबन्ध छे, आमां बुद्ध प्रतिमाना शिल्पनुं प्रतिपादन छे.

नवताल-मूर्तिविधाननो पण शिल्प-रत्नाकरकारे पोताना संदर्भमां उतारो आप्यो छे, आ प्रकरणनो पण आधारग्रन्थ जाणी सकायो नथी.

उपर्युक्त अंतिम त्रण ग्रन्थोमां खास जैन प्रतिमानुं निरुपण नथी, पण 'नवताल प्रतिमा'नुं मान-परिमाण निरुपण करेलुं छे. 'जैनप्रतिमा'नी 'नवताल' रूपकोमां गणना छे, एथी आ प्रकरणनुं केटलुंक निरुपण 'जैन प्रतिमा' माटे पण उपयोगी निवडशे ज, आम धारीने आ त्रण ग्रन्थोनो पण प्रस्तुत निरुपणमां उपयोग कर्यो छे.

प्रस्तावना रूपे आटलु विवेचन करीने हवे आपणे मूल वस्तु "जिन प्रतिमा लक्षण" उपर आवीये, 'जयसंहिता'मां विश्वकर्माजीए "जिनप्रतिमा-लक्षण" नो प्रारंभ नीचेना शब्दोथी कर्यो छे.

अरूपरूपमाकारं, विश्वरूपं जगत्प्रभुम् ।

केवलज्ञानमूर्तिं च, वीतरागं जिनेश्वरम् ॥१॥

द्विभुजं चैकवक्त्रं च, बद्धपद्मासनस्थितम् ।

लीयमानं परे ब्रह्म-ण्यजमूर्तिं जगद्गुरुम् ॥२॥

नाम-निर्गुण-मोक्षाय, प्रयुक्तं वास्तुवेदिभिः ।

ते चतुर्विंशतिर्कृष-भादिवर्धमानान्तकाः ॥३॥

भा०टो०—जे अरुपी छतां रूप (आकार)वान छे, विश्वमय छतां जगतनी समर्थशक्ति छे, केवलज्ञाननी साक्षात् मूर्ति छतां वीतराग छे, एवा जिनेश्वरदेवने वास्तुशास्त्रना विद्वानोए द्विभुज, एक मुख, बद्धपद्मासन-स्थित, परब्रह्ममां लयलीन, जगत्ना गुरुरूप, शाश्वत मूर्तिरूपे मान्या छे.

त्रिगुणातीत मोक्षप्राप्तिने अर्थे शास्त्रकारो ए आ जिनेश्वरदेवनां
ऋषभथी वर्धमान पर्यन्तनां २४ नामो प्रयोगमां लीधां छे.

ऋषभादि परिवारे, दृषदां वर्णसंकरम् ।

न समांगुलसंख्या च, प्रतिमा मानकर्मणि ॥४॥

उपविष्टस्य देवस्य, ऊर्ध्वस्य प्रतिमा भवेत् ।

द्विविधा पादपीठस्था, पर्यकासनमास्थिता ॥५॥

भा०टी०—ऋषभादि तीर्थकरोनी प्रतिमाओना परिकरमां
पाषाण संवन्धी वर्णसंकरता न होवी जोईये, अर्थात् मूल प्रतिमा जे
वर्णना पाषाणनी होय ते ज वर्णना पाषाणनो बनेलो तेनो परिकर
पण जोईये अने उंचाइमां सम आंगलनी संख्या प्रतिमाना मानमां
शुभ नथी. उभादेवनी अने बेठेला देवनी आम वे प्रकारनी प्रति-
माओ होय छे, उभी प्रतिमा पादपीठस्थ अने बेठेली प्रतिमा पर्य-
कासनस्थ होय छे.

वाम-दक्षिणजंघोर्षो-रुपर्यङ्के करावपि ।

दक्षिणो वामजंघायां, तत्पर्यकासनं शुभम् ॥६॥

भा०टी०—डावी जमणी साथल उपर जमणो डावो पग (जमणी
साथल उपर डावो अने तेनी उपर डावी साथल उपर जमणो पग
मूकवो), ए पछी जमणी जांघ उपर डावो अने पछी डावी जांघ उपर
जमणो हाथ मूकवो. आम करवाथी जे आसन बने छे, ते पर्यकासन
नामनुं शुभ आसन कहेवाय छे.

ऊर्ध्वस्थित प्रतिमानुं स्वरूप—

देवस्योर्ध्वस्थितस्यार्चा, जानुलंबिभुजद्वया ।

श्रीवत्सोष्णीवयुक्ता च, छत्रादिपरिवारिता ॥७॥

भा०टी०—ऊर्ध्वस्थित देवनी प्रतिमानुं रूप वे भुजाओ जानु

पर्यन्त लंबावेल, वक्षस्थलमां श्री वत्सयुक्त मस्तके उष्णीष (शिखा)
अने छत्रादिके परिवृत बनाववुं.

आसनस्थित प्रतिमानी चतुरस्रता—

अन्योन्यजानुस्कन्धान्त-स्तिर्यक्सूत्रनिपातनात् ।
केशान्ताञ्चलयोर्मध्ये, सूत्रैकधाचतुरस्रिका ॥८॥ :

भा०टी०—बे बाजुओ वच्चे आडुं, जमणा जानुथी डावे
खांधे, हावा जानुथी जमणे खांधे तिल्लुं अने केशान्त तथा आंचलि
वच्चे उथुं सूत्र मापवाथी जो सूत्रनी लंबाई वधे सरखी आवे तो
प्रतिमा चतुरस्र समजची.

जिन-प्रतिमानी उंचाई नवतालनी—

नवतालं भवेद्रूपं, तालं च द्वादशांगुलम् ।
अंगुलानि न कंवायाः, किन्तु रूपस्य तस्य हि ॥९॥

भा०टी०—प्रतिमा नवतालनी होय, ते एकताल १२
आंगलनो होय, ए आंगल कंवा (गज)ना नहि पण ते प्रतिमाना ज
आंगल जाणवा.

उक्तमष्टोत्तरशतं, श्रीजिने विश्वकर्मणा ।

ऊर्ध्वार्चामानमखिल-मासीने च अथ शृणु ॥१०॥

भा०टी०—श्रीजिननी उभी प्रतिमानुं मान विश्वकर्माए तेना
१०८ आंगलनुं कहुं छे ते प्रमाणे जणाव्युं, हवे बेठी प्रतिमानुं
परिमाण सांभल !

पंचतालं समुत्सेधे, चतुस्तालं च विस्तरे ।

तालैकं च विभज्यादौ, अंगुलानां चतुर्दश ॥११॥

तेनांगुलप्रमाणेन, षट्पञ्चाशत्समुच्छ्रितम् ।

विस्तरं तत्प्रमाणेन, विभजेच्च विचक्षणः ॥१२॥

अथैषा मंगुलानां च, यन्मानं यत्र कारयेत् ।

आसीनप्रतिमामानं, षट्पञ्चाशद् विभाजितम् ॥१३॥

भा०टी०—पर्येकासन विंश उंचाईमां पांच अने विस्तारमां चारताल प्रमाण करवुं, प्रतिमानी उंचाईने ५ थी भांगीने १४ आंगलनो ताल बनाववो, आ आंगलना मापथी ५६ आंगल बेठी प्रतिमा बनाववी अने ए ज आंगलो वडे बुद्धिमाने एनो विस्तार मापवो. १

उभी प्रतिमा-माननां ११ अंकस्थानो—

भालं १ नासा २ हनु ३ ग्रीवा ४, हृन् ५ नाभी ६ गुह्य
७ मूरुके ८ ।

जानु ९ जंवे १० तथा पादौ ११, स्थानान्येकादशानि च ॥१४

चतुः ४ पञ्च ५ चतु ४ वर्षहि ३, दिश १० श्रैव चतुर्दश १४।

सूर्या १२ जिना २४ श्रतु ४ जिना २४, वेदा ४ श्रैति

ह्यनुक्रमात् ॥१५॥

भा०टी०—ललाट, नासिका, हडपची, गर्दन, हृदय, नाभि, गुह्य, साथल, ढींचण, जांघ अने पग आ ११ अंगोना उदयमानना अंको अनुक्रमे-४ + ५ + ४ + ३ + १० + १४ + १२ + २४ + ४ + २४ + ४ = १०८ छे.

१. बेठी प्रतिमानी उंचाई जे ५६ आंगलनी कही छे; तेमां मसूरक (पलाठी नीचेनी गादी)ना ८ आंगल अने ललाट उपरना केशान्तमस्तक अने उष्णीषना मली ६ आंगलो, एम कुल ८+६=१४ आंगलनो १ आखो ताल उंचाईमां न गणीने उंचाई ५६ आंगलनी मानी छे, ज्यारे उपर बेठी प्रतिमानो उदय जे ५ तालनो कह्यो तेमां आ १ ताल साभेल गण्यो छे. अन्वया ५६ आंगलना ४ ताल थाय. विस्तार ४ तालनो कह्यो छे ज. आ अपेक्षाए बेठी प्रतिमा उदय अने विस्तारमां सरखी कही छे.

आसनस्थ प्रतिमाना अंगो तथा अंको—

भालं-नासा-हृन्-ग्रीवा,-हृन्नाभी-गुह्य हस्तकौ ।
जान्वेतानि न चान्तिनि, ह्यंकस्थानान्यथ शृणु ॥१६॥

चतुः पञ्च चतुर्वह्निर्दिशश्चैव चतुर्दश ।

चतुश्चतुस्तथा ह्यष्टा-वासीनप्रतिमाङ्काः ॥१७॥

जिनादयश्चमानांका, उक्ता ऊर्ध्वे स्वरूपके ।

भा०टी०—ललाट, नासिका, हृदपची, गर्दन, हृदय नाभि.
गुह्य भाग, हाथो अने हींचणो; आ ९ अंगस्थानकोना उदयना
मानांको अनुक्रमे ४। ५। ४। ३। १०। १४। ४। ४। ८=५६
छे, आ बेटेली प्रतिमाना अंको छे. आमां २४। ४। २४। आदि
अंको नथी कहा केमके ते उभी प्रतिमा संबन्धी छे.

अंग-प्रत्यंगना विभागे प्रतिमानो उदय—

वर्तनां कथयिष्यामि, अंगुलानां यथाक्रमम् ।

मुखं यक्षांगुलं चैव, विभजेच्च विचक्षणः ॥१८॥

वेदाङ्गुलं ललाटं च, नासिका पञ्चकाङ्गुला ।

हनुकाङ्गुलचत्वारि, ओष्ठः सपाद एव च ॥१९॥

अधरश्च सपादश्च, सार्धांगुला बटी भवेत् ।

त्रयांगुला भवेद्ग्रीवा, हृदयं च दशांगुलम् ॥२०॥

चतुर्दश तथा नाभौ, चतुर्गुह्यं प्रकीर्तितम् ।

करौ चतुरंगुलानि, अष्ट पादौ प्रकीर्तितौ ॥२१॥

एतं ते कथितं चैव, षट्पञ्चाशत्समुद्धितम् ।

तस्याऽधश्च प्रकर्तव्य-मासनं चाष्टकांगुलम् ॥२२॥

उष्णीषं षडंगुलं च, केशान्तोपरितस्तथा ।

उच्छ्रितं च समाख्यातं, विस्तरं च तथा शृणु ॥२३॥

भा० टी०—हवे केटला आंगलो क्यां राखवा एनो विवेक कहीश.

आखा मुखनो उदय १३ आंगलनो राखवो, तेमां ललाट ४, नासिका ५ अने हनुविभाग ४ आंगलनो करवो. हनुविभागमां उपरनो होठ १। आंगलनो नीचेनो होठ १। आंगलनो अने हवटी १॥ आंगलनी बनाववी.

गर्दननो उदय ३ आंगलनो अने तेनी नीचे स्तनमध्यपर्यन्त हृदय १० आंगल प्रमाण राखवुं.

स्तनमध्यथी नाभिपर्यन्त उदरनो उदय १४ आंगल, नाभिथी गुह्यपर्यन्त ४ आंगल, तेनी नीचे हस्तयुगलनो ४ आंगल अने पाद-युगलनो उदय ८ आंगलनो करवो आम पर्यकासन स्थित प्रतिमानी ५६ आंगलनी उंचाईनो विवेक कह्यो.

आ ५६ आंगलनी प्रतिमाने नीचे आठ आंगलनुं आसन (मसूरक-गद्दी) राखवुं अने केशांत उपर ६ आंगलनुं उष्णीष राखवुं, आम उंचाई कही हवे विस्तार कहुं लुं ते सांभल !

आसनस्थप्रतिमानो विस्तारविवेक—

वक्त्रं विस्तारमानेनां-गुलानि दश पंच च ।

भालं चांगुलान्यष्टौ, नेत्रं चैवाष्टमांगुलम् ॥२४॥

नासिकाग्रमंगुलैकं, फेरणे त्रयमंगुलम् ।

नेत्रांगुलानि चत्वारि, द्वयंगुलमुदयं भवेत् ॥२५॥

द्वयंगुलं च भ्रुवोर्मध्ये, पुष्पबाण महोक्त (लू) ये ।

चिबुकांगुलं चत्वारि, बटी चत्वारि मेव च ॥२६॥

ग्रीवा दशांगुला ज्ञेया, क्षोभणा त्रयमंगुलम् ।

द्विसार्धांगुलौ द्वावोष्टौ, सार्धांगुला बटी भवेत् ॥२७॥

कक्षा बाह्यं प्रकर्तव्यं, द्वाविंशमंगुलं मुधैः ।
 कटी-विस्तारमानं च, अंगुलानि च षोडशः ॥२८॥
 बाहु-कक्षाप्रमाणं च, अंगुलानां च विंशतिः ।
 द्वादशांगुलं मध्ये च, स्तनगर्भो विधीयते ॥२९॥
 अष्टांगुलं बाहु-विस्तारं, सप्तांगुलमधस्तथा ।
 करतलमष्टांगुलं, दीर्घं तत्र च कारयेत् ॥३०॥
 विस्तरेऽष्टांगुलं तत्र, झोलकं चतुरङ्गुलम् ।
 बाह्वग्रं चतुरंगुलं, षडंगुलं तत्र मच्छकम् ॥३१॥
 घसिका द्वयंगुला ज्ञेया, कटिश्च वामदक्षिणे ।
 नवांगुला भवेद् हस्त-विस्तारं चाष्टमांगुलम् ॥३२॥
 अष्टांगुलं भवेत् पादो दैर्घ्यं च दश पंच च ।
 विस्तरं दैर्घ्यं कथितं, पिंडं चैवमथ शृणु ॥३३॥

भा०टी०—मुख १५, ललाट ८ अने नेत्र ८ आंगल विस्तारमां करवां.

नासिकानो अग्रभाग आंगल १, फरणां आंगल ३, नेत्र आंगल ४, नेत्रोनो उदय २ आंगल, वे भवांनो मध्यभाग २ आंगल, चिबुक ४ आंगल अने हडबची ४ आंगलनी करवी.

गर्दननो विस्तार १० आंगल, तेनो पसारो ३ आंगल, वन्ने होठो २॥ आंगल अने हडबटी १॥ आंगल विस्तृत करवी.

कक्षानो बाह्य विस्तार २२ आंगल, कटीनो विस्तार १६ आंगल, बाहु मध्यकक्षा प्रमाण २० आंगल अने वच्चे स्तनगर्भ १२ आंगल प्रमाण वनाववो.

बाहु, विस्तारमां उपरना भागे ८ अने नीचे ७ आंगलनो करवो.

हस्ततल ८ आंगल दीर्घ अने ८ आंगल विस्तृत करवुं. ४ आंगलनो झोलक (खोलो) करवो.

बाहुनो अग्रभाग ४ आंगलनो अने मत्स्य ६ आंगलनो करवो.

घसी २ आंगल, डाबी जमणी तरफ कटि ९-९ आंगल अने हाथनो विस्तार ८ आंगल करवो.

पग लंबो १५ आंगल अने विस्तारे ८ आंगलनो करवो. उदय पछी आ विस्तारमान कहुं, हवे एना अंगोनो पिंड (जाडाई) सांभलो.

आसनस्थ प्रतिमानी जाडाई—

अष्टविंशतिरासने, षोडशांगुलमस्तके ।

कर्णपार्श्वे प्रकर्तव्यं, पिंडं चैव दशांगुलम् ॥३४॥

चतुरंगुलं कर्णपिंड-मुरःकुर्याद् द्वायांगुलम् ।

द्वादशांगुल शोध्यश्चो-दराग्रे चैव निर्गमः ॥३५॥

सुमांसलं प्रकर्तव्यं, सुरुपं लक्षणान्वितम् ।

युक्त्याऽनया प्रकर्तव्यं, प्रतिमाभानमुत्तमम् ॥३६॥

एतत्ते कथितं चैव, कर्तव्यं शास्त्र पारगैः ।

पूर्वमानप्रमाणं च, कर्तव्यं विधिपूर्वकम् ॥३७॥

भा०टी०—आसन भागमां २८ आंगल अने मस्तक भागे १६ आंगल प्रतिमा जाडी करवी. कानोनी पासे प्रतिमानी जाडाई १० आंगलनी अने काननो जाडाई ४ आंगल करवी. छातीनो भाग वे आंगल तथा उदर मध्य वे आंगल बहार निकलतुं करवुं अने १२ आंगलना विस्तारमां तेने पूरुं करवुं.

जैन प्रतिमा साधारण रीते मांसल सुरुप अने लक्षणोपेत बना-

ઘવી ઉપર જે માન-પ્રમાણ કહ્યું છે યુક્તિથી બનાવતાં પ્રતિમા ઉત્તમ માનવાલી વનશે.

હે જય ! આ વિષયમાં શાસ્ત્રજ્ઞોનું જે કર્તવ્ય હતું તે તને કહ્યું. આ અને પૂર્વે પ્રતિમાના પ્રમાણ વિષે જે કંઈ કહેવામાં આવ્યું, તે વિધિથી પ્રતિમાનું નિર્માણ કરવું જોઈયે.

પ્રતિમા-માનાંક કોષ્ટક—

ઉપર જે પ્રતિમાના માનાંકો જયસંહિતામાં આપ્યા છે; તે અને બીજા ૬ શિલ્પગ્રન્થોમાં આપેલા માનાંકોનું અમે અત્રે એક કોષ્ટક આપીયે છીયે, તેનું કારણ એ છે કે જયસંહિતામાં પૂરા અંકો આપ્યા નથી વલી એ ગ્રન્થના શ્લોકોમાં ભરપૂર અશુદ્ધિઓ હોવાથી કેટલાક અંકોમાં અશુદ્ધિઓ હોવાનો પણ વિશેષ સંભવ છે; એટલે સાથમાં આપેલ બીજા ગ્રન્થોના માનાંકો વાંચકગણને ઉપયોગી થઈ પડશે.

કોષ્ટકમાં ૧ જયસંહિતા, ૨ જિનપ્રતિમા વિધાન, ૩ વાસ્તુ-સાર, ૪ અપરાજિતપૃચ્છા, ૫ વૃહત્સંહિતા, ૬ પ્રતિમામાન લક્ષણ અને ૭ સમરાંગણ સૂત્રધાર; આ ૭ ગ્રન્થોના માનાંકો આપ્યા છે. આ ગ્રન્થો પૈકીના પહેલા ૩ ગ્રન્થોમાંના અંકો સ્વાસ જિનપ્રતિમાના માનાંકો છે, જ્યારે બાકીના ૪ ગ્રન્થોમાં જે અંકો મળે છે તે ૯ તાલ પ્રતિમા સંબન્ધિ છે. જિન પ્રતિમાનો પણ ૯ તાલ પ્રતિમામાં સમાવેશ હોવાથી આ ચાર ગ્રન્થોના અંકો પણ જિનપ્રતિમા માટે ઉપયોગી નિવડશે એ નિઃસંદેહ વાત છે.

લાઘવર્થ અમો એ કોષ્ટકમાં ગ્રન્થોના નામના આઘાક્ષરનો જ 'જ' 'જિ' રૂપાદિ ઉલ્લેખ કર્યો છે, વાચકગણે 'જ'નો અર્થ "જય-સંહિતા, 'જિ'નો અર્થ જિનપ્રતિમાવિધાન," રૂપાદિ સમજવાનો છે. વિશેષ સ્પષ્ટીકરણ કોષ્ટકોની પછી આપીશું.

प्रतिमामानाङ्क-कोष्टक-

अंग	उदयादि	मानाङ्गुल अंको						
		ज	अ	जि	वा	वृ	प्र०	न
उष्णीष	उदय	६	१	.	.	.	८	.
केशांतमस्तक	उदय	.	३	६	५	.	४	३
केशरेखा	विस्तार	०॥	.	.
मस्तक	आयाम	१६	.	.	.	१४	.	.
"	विस्तार	१८	.
"	परिधि	.	३६	.	.	३२	३६	.
"	पिंड	१६
ललाट	उदय	४	४	४	४	४	४॥	४
"	विस्तार	८ ^१ / _४	.	.	.	८	१०	.
"	प्रवेश	.	.	३	२	.	.	.
श्रू	उदय	.	.	२	२	.	.	.
"	दैर्घ्य	४	५	.
"	मध्य	२	.	.	.	२	०॥	.
श्रू-नेत्र	अंतर	२	.
श्रूद्वय—	दैर्घ्य	१०	.	.
श्रूलेखा	उदय	॥)	-)	.
नेत्र	उदय	२	.	.	१॥	.	.	.
"	दैर्घ्य	८/४	.	४	४	४	२	.
"	विस्तार	४	२	२	.	२	२	.
"	डोलक	.	.	.	१	.	॥)	.

नेत्र—	निष्कोश	.	२
”	विकाश	१	.	.
”	कृष्णतारा	०॥०॥ बे रुती- यांश	०१	.
”	द्वयान्तरं	४	.	.
”	कर्णान्तरं	४	.	५
”	अर्पांग	२	.
नेत्रान्ते	करवीरक	१	.	.
अक्षि	गुल्फद्वयं	०॥ +०॥ ०॥	.	.
नासिका	उदय	३	१॥	१॥	२	.	१॥	.
”	दैर्घ्य	५	४	४	५	४	४	४
”	विस्तार	.	.	.	३	२	.	.
नासाशिखा	पिंड	.	.	.	०॥	.	.	.
नासावंश	मूलवृत्त	१॥	०॥ ०॥ ०॥ ०॥	.	.	.	०॥ ०॥ ०॥	.
नासापार्श्व	उर्ध्वत्व	२।२	.
नासा	फेरणा	३
चंपिका			४
नासाग्र	पिंड	१	१-६	.	१	.	१	.

मुख	उदय	१३	.	.	१६+	.	+सकेश मुख दीर्घता
मुख	विस्तार	१५	१२
द्राविडमुख	विस्तार	.	.	.	१२	.	.
मुखकर्णमध्ये	विस्तार	.	.	१४	१४	.	.
वदन	दैर्घ्य	४	.
वदन	विस्तार	१॥	.
वदनमध्ये	विस्तार	३	.
मुख	निष्कोश	४
उत्तरोष्ठ नासाग्र	अंतरं	१।
उत्तरोष्ठ	दैर्घ्य	.	.	४	६	.	.
"	विस्तार	१।-१	०।=	०।।	.	०।।	०।।
	मध्ये निष्काश	०।।। २।
अधरोष्ठ	दैर्घ्य	.	.	.	५	.	.
"	विस्तारः	१।। २।	०।।=	१	१	.	०।।।
गोजिका		.	१	.	.	०।।	१।
अत्रकाश		०।।
हनु	दैर्घ्य	२।	१।।	२	.	२	१।
"	विस्तार	१।। २	२

”	प्रवेश	.	.	३	२	.	.	.
हनु-चिबुक	विस्तार	४	४	४	४	४	४॥	४
चिबुक	विस्तार	२	२	.	.	२	०	.
कर्ण	दैर्घ्य	.	४१ =	१०	१०	४	४	४
”	विस्तार	४	.	२	३	२	२	२
				(३॥)				
”	उदय	१४
”	प्रवेश	.	.	.	१०	.	.	.
”	निर्गम	.	.	१
”	पिंड	२
”	उपान्त	.	४१ =	.	.	४॥	.	.
”	ककुदा	१	.
”	वृटि	२	.
कर्णपालि-	विस्तार	०॥	.
कर्ण	गुच्छ	०) =	.
	आयामे	१	०॥
कर्णधार	उदय	.	.	.	१	.	.	.
अधःकर्ण	विस्तार	.	.	.	२॥	.	.	.
कर्ण	पिंड	२
कर्णपृष्ठे	निष्काश	२	.
कर्णद्वय	अंतर	.	१२
कर्णनासा	अंतर	१०

कर्णाग्रे २ अंतरे	शंख	४	.	.
श्रीवा	उदय	३	३॥	.	३	४	४	३
	विस्तार	१०	८	१०	१०	१०	८	८
	क्षोभना	३
	प्रवेश	.	.	१०	६	.	.	.
	परिधि	.	२४	.	.	२१	२४	.
श्रीवा-कर्णान्तरा- वकाश	उदय	.	.	.	३	.	.	.
ग्री०कर्णान्तर	विस्तार	.	.	.	१॥	.	.	.
हृदय	उदय	१०-१३	१०x२	१३	१२	१२	.	१०
"	विस्तार	.	१४	१४
"	निर्गम	२ (?)
उरःप्रदेश	विस्तार	३६	.	.	३६	.	३६	
वक्षःस्तन	अंतर	.	.	५	५	६	६	५
स्तन-कक्षा	अंतर	६	६	.
स्तनस्रवापरि	स्कन्ध	.	.	.	६	.	.	.
श्रीवत्स	उदय	३
"	दैर्घ्यं	५	.	५	५	.	.	.
"	विस्तार	३	.	३	४	.	.	.
श्रीवत्स-स्तनस्रुं	अंतर	.	.	.	६	.	.	.
स्तनवृत्त	विस्तार	.	.	.	१॥	.	.	.
स्तनवृत्त		०।=	.

स्तनान्तर		१२ १४	.	१२	.	.	.	१२
स्तनअधो	भुजांतर	.	.	.	१२	.	.	.
कक्षामध्य		२२	.	२२	.	.	२०	.
कक्षास्कन्ध	अंतर	.	.	८	८	८	.	८
बाह्यकक्षा	प्रमाण	२२	.	१८
बाहुकक्षा		२०
कक्षा		.	१-१
ग्रीवोर्ध्वभागात् कक्षा		.	१२
ग्रीवाधोभागात् कक्षा		.	८
कक्षाप्रकोष्ठान्तर		.	१६
बाहु	दैर्घ्य	१८	.	.	.	१२	१६	१६
बाहुबल	विस्तार	८	.	८	.	.	८	.
बाहुत्रांत	विस्तार	७	७	७	.	.	.	७
बाहु	विस्तार	६	६	.
बाहुमूल	परिणाह	१६	.	.
बाहुअग्र	परिणाह	१२	.	.
भुजोपरिभाग-	प्रवेश	.	.	.	७	.	.	.
भुजसंधि	प्रवेश	.	.	.	८	.	.	.
भुजस्कंध	अंतर	.	७
प्रबाहु	दैर्घ्य	१८	.	.	.	१२	१८	.

प्रनाहु	विस्तार	४	४	.
कोहणी-कुक्षि	अन्तर	.	.	.	३	.	.	३
कटि-भुज	अन्तर	३
कोहणी		७	८	.	७	.	.	.
”	मध्य	७।।
प्रनाहु-अग्र		४
मणिवंध		४	३	.	४	.	.	.
”	परिधि	.	१०।।
नाभिहृदय	अन्तर	१४	१२	.	१२	१२	.	१२
नाभिस्तन	अन्तर	१६	.	.
नाभिऊर्ध्वं		.	६
नाभि	गांभीर्य	.	.	.	१	१	.	.
नाभिमध्ये	परिधि	४२	.	.
नाभि		१	.	.
कुक्षिमध्य	विस्तार	१५	.
उदराग्रे	निर्गम	३	४
कटि	विस्तार	१६	.	१६	१६	१८	१८	२४
कटिवामे	विस्तार	९
कटिदक्षिणे	विस्तार	९
कटि	परिधि	४४	.	.
गुह्य		१२	१३	.	१२	१२	१२	१२
गुह्य-जघन		४	४

गुह्य-मैत्र		४	५	४
गुह्य-वृषण		.	४
गुह्योर्ध्व	मुखान्शे	.	२
गुह्यसूत्र	प्रवेश	.	.	.	१८	.	.	.
अंचलि	दैर्घ्य	.	.	.	+	.	.	+गादी मुखं यावन्
	विस्तार	.	.	.	८	.	.	.
जलपथ	उदय	.	.	२	२	.	.	.
	विस्तार	.	.	२	३	.	.	.
आसन-गादी	उदय	८	.	.	८	.	.	.
	दैर्घ्य	२८
ऊरु	दैर्घ्य	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४
ऊरुमूल	विस्तार	.	११	१२
ऊरु	मूल	.	२४
ऊरुमध्ये	विस्तार	१४	.	.
	परिधि	२८	.	.
ऊरु	प्रवेश	.	.	.	१६	.	.	.
जानु	उदय	४	४	४	४	४	४	४
जानुमूल	विस्तार	८	.	.	८	.	.	.
जानुसूत्र	प्रवेश	.	.	.	१४	.	.	.
जंघा	दैर्घ्य	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४

जंघामूले	विस्तार	१२	११	.	.	७	.	.	
जंघामध्ये	विस्तार	.	७	६	.	७	.	.	
जानुभागे	जंघाविस्तार	.	७	.	.	८	.	.	
जंघापृष्ठे	विस्तार	.	.	१२	१२	.	.	.	
जंघाग्र	विस्तार	.	.	१२	१२	.	.	.	
जंघा	विस्तार	.	४	.	.	५	.	४	
जंघामूले	परिधि	२४	.	.	
जंघामध्ये	"	२१	.	.	
जंघाघः	"	१४	.	.	
करतल	दैर्घ्य	८	.	.	.	७	६	.	
(करतलगर्भात् दीर्घांगुला-दैर्घ्यं ९, पार्श्ववर्ति अंगुलिद्वय ८-८ वा०सार)									
	विस्तार	८	७	.	.	६	५	.	
हस्तद्वय	विस्तार	८	.	८	
करतल- (अंगुष्ठरहित)	विस्तार	.	५	
कर	उदय	४	
कर	एष्ट (?)	.	१०	
करोष्टाग्र (?)	विस्तार	.	३	
करतलगर्भ	उदय	.	४	.	३	.	.	.	
कर-उदर	अंतर	.	.	.	१	.	.	.	
पाद	उदय	४	४	४	४	४	४	४	ऊर्ध्व- प्रतिमासु

पाद	उदय	८
"	दैर्घ्य	१५	.	१५	१६	१२	१०	१४
"	विस्तार	.	६	.	८	६	७	६
पादतल	"	८
पादोष्णी		४	.	.
पाद	परिणाह	५	.	.
पादकंकण	प्रवेश	.	.	.	६	.	.	.
मक्षरात्पाद	प्रवेश	६
उत्संग	दैर्घ्य	.	.	.	९	.	.	.
"	विस्तार	.	.	.	५	.	.	.
झोलक		४
घसी		५
मच्छक		६
करांगुष्ठ	दैर्घ्य
"	विस्तार	.	१				१) =	
अंगुष्ठ	दैर्घ्य		४) =	.	३	३	४	
	विस्तार							
अंगुष्ठ	उत्सेध					१) =		
"	पिंड	२						
हस्ततर्जनी	दैर्घ्य	.	४) =	.	४	४) =	+	
मध्यमा	"		५		५	५	६	

+ प्रदेशिनी अनामिके-मध्यमा नखार्धे हीने कनिष्ठा नखहीना प्र०

अनामिका	दैर्घ्य-अनामिका	४॥=	४	४॥	
कनिष्ठा	दैर्घ्य	४॥=	३	३	
तर्जनी	विस्तार	०॥॥		०॥॥	१
मध्यमा	विस्तार	०॥॥=१)-			१)-
अनामिका	विस्तार	०॥॥	१		१
कनिष्ठा	विस्तार	०॥॥=		०॥॥	०॥॥=
पादांगुष्ठ	दैर्घ्य	३॥		३	
	विस्तार		१॥=	१॥	
पेसारगर्भरे- खाथी अंगुष्ठ	निर्गम			१५	
पादांगुली तर्जनी	दैर्घ्य	४		३	
पादमध्यमा	॥			२॥॥=	
पादअनामिका	॥			२॥॥	
पादकनिष्ठा	॥			२॥॥=	
दीर्घांगुली	निर्गम			१६	
कनिष्ठा	॥			१४	
तर्जनी-अंगुष्ठ	अग्रे - अंतर				०॥=
पूर्वपाद तर्जनी	मूलांतर				६
गुल्फमूल	विस्तार	४			
गुल्फमूल				४	
गुल्फ	परिधि				१२

नख	दैर्घ्य			१।		
नख दैर्घ्य			पर्वार्धि	पर्वार्धि	पर्वार्धि	
अंगुष्ठ नख					०।।।	
प्रतिमा तनु	पिंड			१६	१८	१६
प्रतिमा आसने	पिंड	२८				
मस्तके प्रतिमा	पिंड	१६				

कोष्ठकोना संबन्धमां-कईक स्पष्टता—

१. उपर्युक्त कोष्ठकोमां जणावेल हकीकत अमो आना करतां घणां थोडां पृष्ठोमां कही शकत, पण तेम करवा जतां भिन्नकालीन अने भिन्न देशज ग्रन्थोक्त विषयनो खीचडो थई जवानो भय हतो जे अमने इष्ट न हतो. वाचकगण जोशे के आ कोष्ठकोमां भर्या करतां खाली स्थलो वधारे छे, एनो अर्थ ए छे के प्रत्येक ग्रन्थमां प्रत्येक वस्तुनुं निरूपण नथी, एके एक वात लखी, तो बीजाए बीजी. एनो अर्थ एम करवानो नथी के पहेलामां जे वात नथी कहे-वाइ ते बीजामांथी लेवी अने बीजामां न होय ते बीजामांथी; बधा ग्रन्थो सार्वदेशीय अने समकालीन न होवाथी आम करवा जतां प्रतिमामां लक्षण सांकर्य आवीने सुंदर बनवाने बदले विचित्र बनवानो संभव छे, माटे ज्यांसुधी एक ग्रन्थोक्त अंगमान मले त्यांसुधी बीजामां कहेल लेवुं न जोईये. जे ग्रन्थोक्त लक्षणानुसारी प्रतिमा बनाववी होय ते ग्रन्थमां कोइ वात न ज होय तो ते वात बीजा ते ग्रन्थमांथी लेवी के जे अभीष्ट ग्रन्थनी साथे घणे भागे मलतो आवतो होय, दाखला तरीके जयसंहितामां जे वातनो खुलासो न मलतो होय ते जिनप्रतिमा विधान अथवा वास्तुसारमांथी लेवो योग्य गणाय. कारण के ते घणे भागे मलता आवे छे. एथी उलटुं बृहत्सं-

हिता अने प्रतिमामान-लक्षण आपसमां कईक मले छे. के जे जय-संहितादिथी घणा जुदा पडे छे.

केटलीक उपयोगी बाबतो निकटना ग्रन्थमां न होइ दूरना आधारे लेवी पडे तेवी होय तो ते वे ग्रन्थो वच्चेनुं तारतम्य विचारीने तेमां आवश्यक जणातुं परिवर्तन करीने तेनो स्वीकार करी सकाय. उदाहरण तरीके बृहत्संहितामां घणा खरा अंगोपांगोमां दैर्घ्य ओछुं माने छे, ज्यारे विस्तारमां महत्वनो भेद धरावती नथी. आपणे कोइ अंग-प्रत्यंगना दैर्घ्यनो अंक लेवो हशे तो कईक वधारीने ज लेवो पडशे जेथी आपणा अभीष्टग्रन्थनी साथे मली जाय.

२. कोष्ठकोक्त मानांकोमां केटलाक मानांको एक बीजाथी एटला बधा भिन्न पडी जाय छे के जाणे वे वस्तुओ ज जुदी होय. वे चार उदाहरण जोईये.

(१) सर्व प्रथम 'उष्णीष' कोष्ठकमां ज तमने गडबड मालम पडशे 'ज' ग्रंथ ६ अने 'अ' ग्रंथ १ नो ज निर्देश करे छे 'प्र' ग्रंथ ८ लखे छे, ज्यारे बाकीना ४ ग्रन्थो कई लखताज नथी. आ गडबडनुं समाधान ए छे के 'ज' ग्रन्थकारे 'केशान्तमस्तक'नो ४ नो आंक अने उष्णीषनो २ नो आंक सामेल गणी 'उष्णीष' ६ आंगलनुं लखी दीधुं छे, जुओ तेनी नीचेनो 'ज' नो केशान्तमस्तकनो कोठो खाली छे, वास्तवमां तो '२ उष्णीष अने ४ केशान्तमस्तक' लखवुं आवश्यक हतुं, कारणके आ ग्रन्थ श्वेताम्बर संप्रदाय मान्य प्रतिमानुं निरूपण करे छे. ए संप्रदायनी प्रतिमाओने उष्णीष (शिखा) आंगल २ नुं अने केशान्तमस्तक ४ नुं मानेलुं छे. बीजी वात 'अ' ग्रन्थे उष्णीष १ आंगलनुं लखुं छे, दिगम्बर संप्रदायनी प्रतिमाओने प्रायः १ आंगलनुं उष्णीष अने ३ आंगलनुं केशान्तमस्तक जोवामां आवे छे. आथी जणाय छे के दिगम्बर प्रतिमाओनुं निर्माण

આ 'અ' ગ્રંથના આધારે પૂર્વે થતું હશે. 'પ્ર' ગ્રંથ ૮ આંગલ લખે છે તેનું કારણ કે તે બૌદ્ધ પ્રતિમાનો પ્રતિપાદક ગ્રંથ છે. બૌદ્ધ પ્રતિમાઓના ૪ આંગલના કેશાન્તમસ્તક પર ૮ આંગલનો 'જટામુકુટ' માનેલો છે.

'જિ' 'વા' ગ્રંથો ઉષ્ણીષ વિશે કંઈ લખતા નથી, કારણકે આ ગ્રંથકારોણ ઉષ્ણીષો સામેલ ગણીને અનુક્રમે કેશાન્તમસ્તક ૬ અને ૫ આંગલનું ગણ્યું છે.

'ઘૃ' ગ્રંથમાં ઉષ્ણીષ અને કેશાન્તમસ્તકનો આંક નથી જ્યારે 'ન' ગ્રંથમાં ૩ આંગલનું કેશાન્તમસ્તક તો બતાવ્યું છે પણ ઉષ્ણીષ વિષે કંઈજ કહ્યું નથી. આનું કારણ એ છે કે એ બંને ગ્રંથો મુખ્યત્વે નવતાલ પ્રતિમાઓનું નિરૂપણ કરે છે, જૈનપ્રતિમાઓનું નહિ. ઉષ્ણીષનો વ્યવહાર મુખ્યત્વે જૈનપ્રતિમાઓને અંગે છે. 'ન' ગ્રંથે 'કેશાન્તમસ્તક' વિષે લખ્યુંજ છે અને 'ઘૃ' ગ્રંથમાં પણ સકેશ મુખ દીર્ઘતા ૧૬ આંગલનું લખીને સકેશમસ્તકનું નિરૂપણ કરી જ દીધું છે.

(૨) 'નેત્રદૈર્ઘ્ય'નાં કોષ્ટકોમાં ૮।૪ અને ૨ ના આંકડા નજરે પડશે. આમાં ૮ નો આંક બે નેત્રોનો સંયુક્ત છે, ૪ ના એક એક નેત્રના છે, જ્યારે ૨ નો અંક પાંપણો વચ્ચેના નેત્રની લંબાઈના સમજવાના છે.

(૩) કર્ણ દૈર્ઘ્યના કોષ્ટકોમાં ૪।૨ ૧૦ અને ૪ ના આંકડા નજરે પડે છે. આમાં ૪।૨ અને ૪ ના આંકડા દિગમ્બર સંપ્રદાયની પ્રતિમા તથા અન્ય દેવોની પ્રતિમાઓના કાનોની દીર્ઘતા સૂચવનારા છે, જ્યારે ૧૦ નો આંક શ્વેતામ્બર સંપ્રદાયની જિનપ્રતિમાના કાનોની લંબાઈ સૂચવે છે. શ્વેતામ્બરો પ્રતિમાના કાનોનો સંબંધ ઠેઠ સ્કંધ સુધી જોડે છે. ઇટલે નીચેનો ભાગ લંબાવીને સ્કંધથી ૧

आंगल उंचो राखे छे अने १ आंगलनो कर्णाधार बनावीने तेने खांधाथी जोडे छे.

(४) 'ज' ग्रन्थ नीचेना कोइ कोइ कोष्ठकमां अमोए उपर नीचे बे बे आंकडा लख्या छे, तेमांनो उपरनो आंक ए ग्रन्थना मूल श्लोको उपरथी निष्पन्न थतो अंक छे, ज्यारे नीचेनो आंक ए ग्रन्थनी हस्तलिखित प्रतिना अन्तमां आपेला कोष्ठक उपरथी लीयेल छे. मूल श्लोको घणा खरा अशुद्ध होइ तेमाथी निकलतो अंक पण अशुद्ध होय अने कोष्ठकनो आंक कदापि शुद्ध होय तो उपयोगमां लेइ शक्या एम धारी नीचे ए आंक पण आपी दीधो छे.



प्रतिमामानांक परिशिष्ट—

‘समरांगण सूत्रधारोक्त-प्रतिमा मानाङ्क’

१ श्रवण—

कर्णबन्ध-१॥ गोलक ॥ कर्णपिप्पली-दीर्घा द्विभागगोलक-विस्तृता १ अं०॥ लकार-दीर्घ १॥, विस्तृत १ अं० पिप्पल्यार्धा (त्)तयोर्मध्ये ॥ लकार मध्ये निम्न०॥ अं०॥ पिप्पलीमूले श्रोत्र छिद्रं०॥ अं०॥ स्तूतिका-दीर्घा०॥, विस्तार०॥ अं०॥ पीयूषी-दीर्घा २ अं०, वि० १॥ (लकारा वर्तयोर्मध्ये) ॥ आवर्त-६ अं० (वक्त्रो वृत्तायतश्चसः कर्णस्य बाह्यारेखा) मूलांशविस्तार मूले०॥ अं०, मध्ये०॥ अं०, अंते ०)अं०॥

उद्घात-पीयूष्या अधोभागे विस्तार ०।= अं० (लकारा वर्तयोर्मध्ये) ॥

ऊर्ध्व कर्ण विस्तार-१ अं०, गोलक द्वियवान्वितः ॥

मध्ये कर्ण विस्तार-२ गोलक चतुर्यवान्वितः ॥

मूले मात्रा १ यवा ६॥ पश्चिमनाल १ अं० वि०॥

पूर्वनाल०॥ अं०वि०॥ प०पू० नाले दीर्घे २ कला. ॥

२ चिबुक—

चिबुक आयाम २ अं०॥ अधर १ अं० ॥ उत्तरोष्ट १ अं० ॥ भाजी०॥ अं० उदय, ॥ नासापुटौ ओष्ठचतुर्थभागौ ॥ नासा ४ अं०॥ पुटप्रान्ते नासाप्रविस्तार २ अं०॥ ललाट विस्तार ८ अं०, आयत ४ अं० ॥

गंडान्त शिरसो मानं ३२ अं० ग्रीवा परिणाह २४ अं० ॥ ग्रीवात उरः २ भा०॥ उरसोनाभिः २ भा०॥ नामे मेण्डूं २ भा०॥ ऊरु-जंघे समे ॥ जानु ४ अंगुल ॥ पादायाम १४ अं० ॥ पद

विस्तार ६ अं०॥ पादोत्सेध ४ अं०॥ अंगुष्ठायाम ३ अं० ॥ अंगुष्ठ
परीणाह ५ अं०॥ प्रदेशीनी अंगुष्ठ समायामा ॥ मध्यमा प्रदेशीनी
षोडशांशेना ॥ मध्यमाष्ट भागोनाऽनामिका ॥ अनामिकाष्ट भागोना
कनिष्ठा ॥ अंगुष्ठनख०॥॥ अं०॥

अंगुलीनखाः

अंगुष्ठकोत्सेध १॥= अं०॥

प्रदेशीनी उत्सेध १ अं० ॥ शेषा यथाक्रमं हीनाः ॥

जंघामध्ये परीणाहः १८ अं०॥ जानुमध्ये परीणाहः २१ अं०॥

जानुकपालं ३ अं०-॥ ऊरुमध्ये परीणाहः ३२ अं०॥

वृषण अर्धभाग ॥ मेंहू अर्धभाग ॥ मेंहू परीणाह ६ अं०॥

कोशः (अंडकोश ?) ४ अं०॥ कटि विस्तार १८ अं०॥

नाभिमध्ये परीणाह ४६ अं०॥ स्तनयोरंतरं १२ अं०॥

स्तनोपरि कक्षाप्रान्तौ ६ अं०॥ भ्रुजायाम ४६ अं०॥

बाहोरुपरि पर्व १८ अं०॥ द्वितियं पर्व १६ अं०॥

बाहु मध्ये परीणाह १८ अं०॥ प्रवाहु परीणाह १२ अं०॥

कर आयाम १२ अं०॥ अंगुलीरहितकरायाम ७ अं०॥

करविस्तार ५ अं०॥ मध्यमांगुली ५ अं०॥

मध्यमातः पर्वार्धहीनाप्रदेशीनी ॥

अनामिका प्रदेशीनीसमा ॥ ततः पर्वार्ध मानहीनाकनिष्ठा ॥

अंगुली नखाः पर्वार्धमानाः॥ अंगुलीनामप्रत्यक्षः परीणाहः ॥

अंगुष्ठ दैर्घ्यं ४ अं०॥ अंगुष्ठ परीणाह ५ अं०॥

नखास्तुंगत्वारिकचिद्वीनाः ॥ अंगुष्ठ=प्रदेशीनी-अंतर २ अं०॥

हीनाधिक माननी प्रतिमा न करवी—

अन्यथा च न कर्तव्यं, यदीच्छेत् श्रियमात्मनः ।

मानाधिकं न कर्तव्यं, मानहीनं न कारयेत् ॥३८॥

कृते च बहवो दोषाः, सिद्धिस्तत्र न जायते ।
 अज्ञानात् कुरुते यस्तु, सशास्त्रं नैव जायते ।
 न दोषो यजमानस्य, शिल्पिदोषो महान् ध्रुवम् ॥३९॥

भा०टी०—जे पोतानी शोभा चाहे तो शिल्पी प्रतिमा निर्माणमां शास्त्रथी विपरीत काम न करे. अर्थात् मानाधिक तथा मानहीन प्रतिमा न बनावे, एम करवामां घणा दोषो उत्पन्न थाय छे अने कारकनी कार्यसिद्धि अटके छे. जे शिल्पी अज्ञानवश मानाधिक अने मानहीन प्रतिमाओ बनावे छे ते शास्त्रनुं पालन करतो नथी, आमां यजमान (प्रतिमा करावनार)नो दोष नथी पण आमां खरेखर म्होटो दोष शिल्पीनो ज गणाय छे.

भग्न प्रतिमाना संस्कार विषे—

धातुलेपादिप्रतिमा-अंगभंगे च संस्करेत् ।

काष्ठ-पाषाण-निष्पन्नाः, -संस्कारार्हाः पुनर्नहि ॥४०॥

भा०टी०—धातु, लेप आदिथी बनावेल प्रतिमानो अंग-भंग थाय तो फरी संस्कार करीने तेनो उपयोग करी सकाय पण काष्ठ तथा पाषाणनी प्रतिमा भागी जतां ते फरी संस्कार योग्य रहेती नथी.

अलाक्षणिक प्रतिमाथी हानि—

रौद्री निहन्ति कर्तार-मधिकाङ्गा च शिल्पिनम् ।

कृशः द्रव्य-विनाशाय, दुर्भिक्षाय कृशोदरी ॥४१॥

वक्रनासा च दुःस्वाय, ह्रस्वमात्रा क्षयंकरी ।

अनेत्रा नेत्रनाशाय, स्थूला सौभाग्यवर्जिता ॥४२॥

दुःस्वाय स्तब्धदृष्टिः स्यात्, -स्वल्पा भोगविनाशिनी ।

जायते प्रतिमाहीन-कटिराचार्यघातिनी ॥४३॥

जंघाहीना भवेद् भ्रातृ-पुत्र-मित्र-विनाशिनी ।

पाणि-पाद-विहीना तु, धनक्षयविधायिनी ॥४४॥

चिपुटी यत्कृतार्थानां, प्राप्तानां च व्ययो भवेत् ।
जायते प्रतिमा निम्ना, चिन्ताहेतु-रधोमुखी ॥४५॥
अथापदे तिरश्चीना, नीचोच्चा तु विदेशदा ।
अन्यायद्रव्यनिष्पन्ना, परवास्तु दलोद्भवा ।
न्यूनाधिकांगी प्रतिमा, सर्वस्य परिनाशिनी ॥४६॥

भा०टी०—भयंकर आकारवाली करावनारने अने प्रमाणा-
धिक अंगवाली प्रतिमा शिल्पी (करनार कारीगर)ने हणे छे. दुबली
द्रव्यनो नाश करनारी अने पातलपेटी दुर्भिक्षकारीणी थाय छे.
वांका नाकवाली दुःख देनारी, टुंका शरीरवाली क्षय करनारी, नेत्र
वगरनी नेत्रनाशिनी थाय छे अने प्रमाणथी जाडी प्रतिमा सौभा-
ग्यहीन होय छे. स्तब्ध (अकड) दृष्टिवाली दुःख देनारी, हीनांगी
भोगनो नाश करनारी अने कटिहीना प्रतिमा आचार्यनो घात कर-
नारी होवाथी त्याज्य छे. जंघाहीना भ्रातृ-पुत्र-मित्रनो विनाश
करनारी अने हाथ-पगनी खोडवाली प्रतिमा धनक्षय करनारी थाय
छे. चिपटी आंखवाली द्रव्य व्यय करावनारी अने नीची तथा
नीचा मुखनी प्रतिमा चिन्ता करावनारी थाय छे. तिरछीं नजर-
वाली आपत्ति लावनारी अने प्रमाणथी नीची वा उंची प्रतिमा
प्रवास देनारी थाय छे. अन्यायोपार्जित द्रव्यथी तैयार थयेली बीजाना
वास्तु द्रव्यथी धनेली अथवा तो न्यूनाधिक अंगोषांगवाली प्रतिमा
सर्वनो नाश करनारी निवडे छे.

उपर्युक्त प्रतिमानां अशुभ लक्षणो प्रायः प्रतिमानां घटनार
शिल्पीना हाथे थयेलं होय छे, ते प्रतिष्ठा पहेलं प्रतिमा जोवाथी
जणाई आवे छे अने तेवी अलाक्षणिक प्रतिमाओ वर्जी शकाय छे;
वळी प्रतिष्ठा करनारनी असावधानीथी स्थापन करती वखते केटळीक
भूलो थई जवा पामे छे ते पण न थवी जोइये ए संबन्धमां फल प्रति-

પાદનપૂર્વક કહે છે કે—

ઝઘ્વદ્દષ્ટિર્દ્રવ્યનાશા, તિર્યગ્દષ્ટિર્મહાધયે ।

...શ્વશ્રિતાદ્દષ્ટિશ્ચો-ઘ્વમુખી કુલનાશિની ॥૪૭॥

આંટી૦—પ્રતિમાની દષ્ટિ દ્વારના જે ભાગમાં આવવી જોઈયે તેથી ઊંચી રહે તો દ્રવ્યનો નાશ કરે, દ્વાર મધ્યને બદલે દષ્ટિ ડાબી-જમણી રહે તો માનસિક ચિન્તાઓને કરે છે. પ્રતિમા પાછલની તરફ ઢગેલી ઊંચા મુખવાલી હોય તો કુલનો નાશ કરે છે અને સ્વસ્થાન-સ્થિત સમદષ્ટિ કલ્યાણકારી થાય છે.

લક્ષણહીન પ્રતિમાના વિષયમાં સમરાંગણ

સૂત્રધાર—

અશાસ્ત્રજ્ઞેન ઘટિતં, શિલ્પિના દોષસંયુતમ્ ।

અપિ માધુર્યસંપન્નં, ન ગ્રાહ્યં શાસ્ત્રવેદિભિઃ ॥૪૮॥

અશ્ચિલ્ષ્ટ સંધિ વિભ્રાન્તાં, વક્રાં ચાવનતાં તથા ।

અસ્થિતા-મુન્નતાં ચૈવ, કાંકજંઘાં તથૈવ ચ ॥૪૯॥

પ્રત્યંગહીનાં વિકટાં, મધ્યેગ્રન્થિ નતાં તથા ।

ઈદૃશીં દેવતાં પ્રાજ્ઞો, હિતાર્થં નૈવ કારયેત્ ॥૫૦॥

અશ્ચિલ્ષ્ટસન્ધ્યા મરણં, આન્તયા સ્થાનવિભ્રમમ્ ।

વક્રયા કલહં વિદ્યાદ્, નતયા [ભિવસઃ] વયસઃ ક્ષયમ્

નિત્યમસ્થિતયા પુંસા-મર્થસ્ય ક્ષયમાદિશેત્ ।

ભયમુન્નતયા વિદ્યાદ્, હૃદ્-રોગં ચ ન સંશયઃ ॥૫૨॥

દેશાન્તરેષુ ગમનં, સતતં કાકજંઘયા ।

પ્રત્યંગહીનયા નિત્યં, ભર્તુઃ સ્યાદનપત્યતા ॥૫૩॥

विकटाकारया ज्ञेयं, भयं दारुणमर्चया ।

अधोमुख्या शिरोरोग, -स्तथाधो नतयापि च ॥५४॥

भा०टी०—शास्त्रना ज्ञान विनाना शिल्पिए घडेलुं देखावमां सारुं देखातुं षण दोषयुक्त एवुं देवतानुं प्रतिबिंब शास्त्रना जाणकार पुरुषोए कदापि ग्रहण न करवुं.

जेना सांधा बरोबर मलेला न होय एथी, घवरायेल अथवा भयभ्रान्त चहेरावाली, वांकी वळेली, नीची धूनवाली, अस्थित अर्थात् जेनां अंगोपांग यथास्थान न होय एथी, प्रमाणथी अधिक उंची, कागडानी जंधा जेवी पातली जांघवाली, प्रत्यंगो जेना प्रमाणथी हीन होय एथी, भयंकर आकारवाली, छातीना भागमां गांठवाली एटले के प्रमाणथी अधिक बहार निकलेली छातीवाली अने मध्यभागमां नीची वळेली एथी दोषयुक्त देवप्रतिमाओ बुद्धिमाने न भराववी.

‘अश्लिष्ट संधि’—प्रतिमा करावनारनुं मरण, ‘विभ्रान्ता’—स्थान च्युति, ‘वक्रा’—कलह कंकाश, ‘नता’ अवस्थानी हानि, ‘अस्थिता’ द्रव्यनाश, ‘उन्नता’ भय तथा हृदयरोग, ‘काकजंधा’ नित्य विदेश भ्रमण, ‘प्रत्यंगहीना’ संतानहीनता, ‘विकटा’ दारुण भय, ‘अधोमुखी’ माथानो रोग अने ‘मध्यग्रंथि’ प्रतिमा षण मस्तक रोगने आपनारी होय छे. माटे उक्त दोषोवाली प्रतिमानो त्याग करवो.

प्रतिष्ठाकल्पोक्त प्रतिमा लक्षणहीनता—

सदोषार्चा न कर्तव्या, यतः स्यादशुभावहा ।

कुर्याद्रौद्री प्रभोर्नाशं, कृशांगी द्रव्यसंक्षयम् ॥५५॥

संक्षिप्ताङ्गी क्षयं कुर्या-च्चिपिटा दुःखदायिनी ।

विनेत्रा नेत्र विध्वंसं, हीन वक्रा च (त्व) भोगिनी ॥५६॥

વ્યાધિં મહોદરી કુર્યાંદ્, હૃદ્રોગં હૃદયે કૃશા ।
 અંગહીના સુતં હન્યાત્, શુષ્કજંઘા નરેન્દ્રહા ॥૫૭॥
 પાદહીના જનં હન્યાત્, કટીહીના ચ વાહનમ્ ।
 જ્ઞાત્વૈવં કારયેજ્ઞૈનીં, પ્રતિમાં દોષવર્જિતામ્ ॥૫૮॥

ભા૦ટી૦—પ્રતિમા દોષયુક્ત ન બનાવવી, કેમકે તે અશુભ ફલ આપનારી થાય છે. પ્રતિમા જો રૌદ્રાકૃતિ-ઇટલે ભયંકર આકારની હોય તો પ્રતિષ્ઠા કરાવનાર ગૃહસ્થનો નાશ કરે છે. દુર્બલ અંગોવાલી પ્રતિમા દ્રવ્યનો ક્ષય કરે છે. ટૂંકા અંગોવાલી ક્ષય કરે છે. ચિપડી આંખોવાલી દુઃખ દેનારી હોય છે. નેત્રહીના આંખોનો નાશ કરે છે અને હીનમુખવાલી પ્રતિમા અમોગિની અર્થાત્ પૂજાભોગ પ્રાપ્ત કરતી નથી.

મ્હોટા પેટવાલી પ્રતિમા રોગને ઉત્પન્ન કરે છે, હૃદયમાં દુર્બલ પ્રતિમા હૃદયના રોગો ઉત્પન્ન કરે છે. અંગહીન પ્રતિમા પુત્રનો નાશ કરે છે અને શુષ્ક (ગલેલ) જાંઘવાલી પ્રતિમા દેશના રાજાને હણે છે. પગ હીન પ્રતિમા જન સામાન્યને મારે છે અને કટિભાગમાં હીન પ્રતિમા યાન-વાહનની હાનિ કરે છે. આ પ્રમાણે દોષનું ફલ જાણીને જૈનપ્રતિમાને દોષ રહિત બનાવવી જોઈયે.

અલાક્ષણિક પ્રતિમા વિશે વાસ્તુસારનું વિધાન—

ઉત્તાણા અત્થહરા, વંકગ્ગીવા સદેસભંગકરા ।
 અહોમુહા ય સચિંતા, ચિદેસદા હવહ્ નીચુચ્ચા ॥૫૯॥
 વિસમાસણ વાહિકરા, રોરકરઽણ્ણાધદ્ધવનિપ્પન્ના ।
 હીણાહિયંગ પહિમા, સપક્કસ્વપરપક્કસ્વકટ્ટકરા ॥૬૦॥
 ડહ્હમુહી ધણનાસા, અપૂહ્યા તિરિયદિટ્ઠિ નાયઠ્ઠા ।
 અહ્થહ્હદિટ્ઠિ અસુહા, હવહ્ અહોદિટ્ઠિ વિગ્ઘકરા ॥૬૧॥

भा०टी०—उंचा मुखवाली प्रतिमा धन हरे, वांकी गर्दननी स्वदेशनो भंग करे, नीचा मुखवाली अने नीची उंची अनुक्रमे चिन्ता अने भ्रमण करावे.

विषम आसनवाली प्रतिमा व्याधि करनारी, अन्यायोपार्जित द्रव्यवडे बनेली दुर्भिक्ष करनारी अने प्रमाणथी हीन या अधिक अंगवाली प्रतिमा स्वपक्ष तथा परपक्षने कष्ट देनारी थाय छे, ऊर्ध्व-मुखी धननो नाश करे छे, तिरछी नजरवाली पूजाने पामती नथी. अतिशय स्तब्धदृष्टि (अकडदृष्टि)वाली अशुभ करनारी अने नीची दृष्टिवाली प्रतिमाने विघ्नकारिणी जाणवी.

शिल्परतनाकरोक्त प्रतिमागत शुभाशुभ रेखाओ—

शुभ रेखाओ—(शार्दूल०)

नन्द्यावर्त-वसुन्धरा-धर-हय-श्रीवत्स-कूर्मोपमाः,
शंख-स्वस्तिक-हस्ति-गो-वृषनिभाः शक्रेन्दु-सूर्योपमाः ।
छत्र-स्रग्-ध्वज-लिंग-तोरण-मृग-प्रासाद-पद्मोपमाः
वज्राभा गरुडोपमाश्च शुभदा रेखाः कपर्दोपमाः ॥६२॥

भा०टी०—पाषाण, काष्ठ आदि द्रव्योवडे बनावेली प्रति-
मामां जो नन्द्यावर्त पृथ्वी, पर्वत, अश्व श्रीवत्स, कच्छप, शंख, स्व-
स्तिक, हाथी, वृषभ, इन्द्र, चन्द्र, सूर्य, छत्र, पुष्पमाला, ध्वजा, शिव-
लिंग, तोरण, हरिण प्रासाद (देवमंदिर अथवा महेल) कमल, वज्र,
गरुड अने कपर्दी; आ पैकीना कोईपण पदार्थना जेवो आकार प्रति-
मामां रेखाओ वडे बनेलो दृष्टिगोचर थतो होय तो शुभ फलदायक
जाणवो.

अशुभ रेखाओ—

हृदये मस्तके भाले, ह्यंसयोः कर्णयोर्मुखे ।

उदरे पृष्ठसंलग्ने, हस्तयोः पादयोरपि ॥६३॥

एतेष्वंगेषु सर्वेषु, रेखा लाञ्छन-नीलिका ।

विम्बानां यत्र दृश्यन्ते, त्यजेत्तानि विचक्षणः ॥६४॥

अन्यस्थानेषु मध्यस्था, त्रासफाटविवर्जिता ।

निर्मला स्निग्धशान्ता च, वर्णसारूप्यशालिनी ॥६५॥

भा०टी०—प्रतिमाओना हृदय, मस्तक, ललाट, खांधाओ, कानो, मुख, पेट, पीठ, हाथो अने पगो आ अंगो पैकीना कोइपण अंगमां अथवा अंगोमां आस्मानी के काला रंगनुं चिह्न के रेखा होय तो चतुर मनुष्ये तेवी प्रतिमानो त्याग करवो जोईये. उक्त स्थानो सिवायनां स्थानोमां पूर्वोक्त प्रकारनी रेखा होय तो ते मध्यम प्रकारनी गणाय छतां चीराड-चीरा पडेला होय ते तो वर्जनीय ज गणाय. मात्र निर्मल स्निग्ध शान्त अने सरखा वर्णनी रेखाओ दोष-रूप गणाती नथी.

प्रतिमाभंगनुं फल—

नखांगुलीबाहुनासां-ह्रीणां भङ्गे पुनः क्रमात् ।

जनभीर्देशभङ्गश्च, बन्धः कष्टं धनक्षयः ॥६६॥

पीठयानपरीवार-ध्वंसे सति यथाक्रमम् ।

जनवाहनभृत्यानां, नाशो भवति निश्चितम् ॥६७॥

भा०टी०—प्रतिमा संवन्धी १ नख, २ आंगली, ३ बाहु, ४ नासिका, ५ चरण; आ पांच अवयवो पैकी कोइनो भंग थतां अनुक्रमे १ लोकमय, २ देश-भंग, ३ बन्धन, ४ कष्ट अने ५ धन-क्षय, ए प्रमाणे फल थाय छे. तथा १ पीठ (आसन), २ वाहन (लांछन), अने ३ परिकरना भंगथी अनुक्रमे १ परिवार, २ वाहन अने ३ नोकर-चाकरोनो निश्चितपणे नाश थाय छे.

खण्डित प्रतिमा विषे अपराजितपृच्छानुं मन्तव्य—

नखकेशाऽऽभूषणादि, -शस्त्रवस्त्राव्यलंकृतिः ।

विषमा व्यंगिता नैव, दूषयेन्मूर्तिमंगकम् ॥६८॥
शान्ति-पुष्ट्यादिकृत्यैश्च, पुनः सा च समीकृता ।
पुना रथोत्सवं कृत्वा, प्रतिमा अर्चयेच्छुभा ॥६९॥

भा०टी०—नख, केश, आभूषणादि अने शस्त्र, बस्त्रादि अलं-
कार विषम होय अथवा व्यंगित (खंडित) होय तो ते प्रतिमाने
अथवा तेना अंगने दूषित करता नथी. शांतिक पौष्टिक कार्योवढे
तेने पाळी सरखी करी रथयात्रानो उत्सव करीने ते प्रतिमाने शुभ-
कारी जाणीने पूजवी.

एज ग्रन्थना मते त्याज्य प्रतिमा—

अङ्गोपांगैश्च प्रत्यंगैः, कथञ्चिद् व्यंगदृषिताम् ।
विसर्जयेत्तां प्रतिमा-मन्यमूर्तं प्रवेशयेत् ॥७०॥
याः खण्डिताश्च दग्धाश्च, विशीर्णाः स्फुटितास्तथा ।
न तासां मंत्रसंस्कारो, गतासुस्तत्र देवता ॥७१॥

भा०टी०—अंग उपांग के प्रत्यंगमां कोई रीने खंडित होय
तो ते प्रतिमाने उठाडीने त्यां अन्यमूर्तिनो प्रवेश कराववो. कंमके
खंडित थयेली, बलेली, शीर्ण विशीर्ण थयेली तथा तडकी थयेली
प्रतिमामां जे मंत्र संस्कार (प्रतिष्ठा बखने) करेल होय ते रतेना
नथी, तेमांथी प्रतिष्ठादेवतानुं सांनिध्य मटी जाय छे.

अपराजितनो ए विषयमां अपवाद—

पूर्वा वर्षशताद्देवाः, स्थापिताश्च महत्तरैः ।
सान्निध्यं सर्वकालं तु, व्यंगितानपि न त्यजेत् ॥७२॥
पतनाद् व्यंगिता देवा-स्तेषां दुरितमुद्धरेत् ।
स्नपनोत्सवयात्रासु, पुनः रूपाणि चाचरेत् ॥७३॥
नवैरेवापि जीर्णैवा, ह्यर्चा याऽस्थापि शोभना ।
परिष्कारेऽपरिष्कारे, तत्र दोषो न विद्यते ॥७४॥

भा०टी०—जे देवो सो वर्ष पहेलांना होय अने महापुरुषोना हाथे पतिष्ठित थयेला होय ते खंडित थई गया होय छतां प्रतिष्ठा देवता तेनुं सानिध्य छोडती नथी.

जे प्रतिमा पडवाथी खंडित थई होय तेनुं स्नात्रोत्सव-स्थ-यात्रादि वडे प्रायश्चित करी तेनो संस्कार करी फरी तेनी पूजा चालु करवी.

प्रतिमा नवा प्रतिष्ठापक पुरुषोए स्थापी होय अथवा जुनाओए, पण ए प्रतिमाओ जो लाक्षणिक अने सुन्दर होय तो संस्कार करीने अथवा वगर संस्कारे पण तेनी पूजा करवी एमां दोष नथी.

खंडित प्रतिमा संबन्धी ठक्कुरफेरुनी मान्यता—

वरिससयाओ उडूढं, जं विंबं उत्तमेहिं संठविंयं ।
 वियलंगुवि पूइज्जइ, तं विंबं निकलं न जओ ॥७५॥
 मुह-नक्क-नयण-नाहि-कडिभंगे मूलनायगं चयह ।
 आहरण वत्थ परिगर-चिण्हाउहभंगि पूइज्जा ॥७६॥
 पयपीठ चिण्ह परिगर-भंगे जणजाणभिच्चहाणिकमे ।
 छत्तसिरिवच्छसवणे, लच्छी-सुह-बंधवाण खयं ॥७७॥

भा०टी०—सो वर्ष पहेलां उत्तम पुरुषोए प्रतिष्ठित करेल विंब विकलांक (खंडित) थयुं होय तो पण पूजाय छे, केमके ते कला-हीन थतुं नथी. एटले के मंत्रोद्वारा तेमां उत्पन्न करेल कला-प्रभाव चाल्यो जतो नथी.

मुख, नाक, नेत्र, नाभि, अथवा कटिभागमां खंडित थयेली मूलनायक प्रतिमानो त्याग करवो. पण आभूषण, वस्त्र, परिकर, लांछन अथवा आयुधनो भंग थयो होय तो तेने पूजवामां दोष नथी.

पादपीठ (गादी-मखरक) लांछन, परिकरना भंगमां अनुक्रमे

स्वजन, यान, वाहन, अने नोकर-चाकरोनी हानि थाय छे. तथा छत्र, श्रीवत्स, कानना भंगथी अनुक्रमे लक्ष्मी, सुख अने भाईओनो क्षय थाय छे.

घर अने प्रासादमां स्थापनीय प्रतिमानुं मान—

आरभ्यैकांगुलं विं, यावदेकादशांगुलम् ।

गृहेषु पूजयेद् विं-मूर्ध्व प्रासादके पुनः ॥७८॥

भा०टी०—१ आंगलथी मांडीने ११ आंगल सुधीनी प्रतिमा घरमां पूजवी. एथी अधिक माननी प्रतिमा प्रासादमां (चैत्यमां) पूजवी.

घरमां पूजवानो प्रतिमा विषेनो विवेक—

प्रतिमां काष्ठ लेपाऽश्म-दन्तचित्रायसां गृहे ।

मानाधिकां परीवार-रहितां नैव पूजयेत् ॥७९॥

भा० टी०—काष्ठनी, लेपनिर्मित, पाषाणनी हाथी दन्तनी बनेली, चित्ररूपी, लोहमयी प्रमाणमां ११ आंगलथी म्होटी अने परिकर विनानी प्रतिमा घरमां न पूजवी.

प्रासादमानथी प्रतिमामान—

प्रासादतुर्यभागस्य, समाना प्रतिमा मता ।

उत्तमायकृते सा तु, कार्यैकोनाऽधिकांगुला ॥८०॥

अथवा स्वदशांशेन, हीनस्याप्यधिकस्य वा ।

कार्या प्रासादपादस्य, शिल्पिभिः प्रतिमा समा ॥८१॥

अतिहीना तु याऽर्चा स्यात्, प्रासादपंचमांशके ।

सर्वेषामपि धातूनां, रत्नस्फटिकयोरपि ।

प्रवालस्य च बिम्बेषु, चैत्यमानं यदृच्छया ॥८२॥

भा०टी०—प्रासादना एक चतुर्थांश जेटली उंचाईमां प्रतिमा

होय ते उत्तम गणाय छे. तेमां उत्तमआय लाववा माटे एक आंगल वक्षारबो अथवा ओछो करवो.

अथवा प्रासादना चतुर्थांशमां तेनो दशमांश जोडतां के हीन करतां जे मान आवे ते माननी ते प्रासादमां प्रतिमा स्थापवी. अर्थात् स्वदशमांश युक्त चतुर्थांश माननी उत्तम, स्वदशांशहीन चतुर्थांश माननी कनिष्ठ अने वचला माननी मध्यम प्रतिमा होय छे.

प्रासादना पंचमांश जेटली प्रतिमा अतिहीनमाननी गणाय छे. सर्व धातुओनी, रत्ननी, स्फटिकनी, अने प्रवालनी प्रतिमाओने अंगे प्रासादमाननो नियम होतो नथी. गमे ते मानना चैत्यमां गमे ते माननी ए प्रतिमाओ प्रतिष्ठित करी शकाय छे.

प्रासादमां प्रतिमानुं स्थान—

प्रासादगर्भगेहाधै, भित्तिः पञ्चधाकृते ।

यक्षाद्याः प्रथमे भागे, देव्यः सर्वा द्वितीयके ॥८३॥

जिनाऽर्कस्कन्दकृष्णानां, प्रतिमाश्च तृतीयके ।

ब्रह्मा चतुर्थके भागे, लिङ्गमीशस्य पञ्चमे ॥८४॥

भा०टी०—प्रासाद गर्भगृहना भित्ति तरफना अर्धना ५ भाग करवा, तेमां भीत तरफना प्रथम भागमां यक्ष आदि देवो, बीजा भागमां सर्व देविओ, त्रीजामां जिन, सूर्य, स्कन्द तथा कृष्णनी प्रतिमाओ, चोथा भागमां ब्रह्मानी प्रतिमा अने पांचमा भागमां (गर्भ मध्यमां) शिवलिंगनी स्थापना करवी.

दृष्टिस्थाननो विवेक—

द्वारशास्त्राष्टभिर्भागे-रथ एकद्वितीयकैः ।

सुवस्वैकमष्टमं भागं, यो भागः सप्तमः पुनः ॥८५॥

तस्यापि सप्तमे भागे, १ गजत्वात्तत्र पातयेत् ।

प्रासादे प्रतिमादृष्टिः, कर्तव्या तत्र शिल्पिभिः ॥८६॥

भा ०टी०—प्रासादना द्वारनी शाखाना एक, वे, आ क्रमे नीचेथी उपर सुधी ८ भागो करवा. तेमांथी उपरनो आठमो भाग छोडीने नीचेना सातमा भागना पण ८ भागो करी उपरनो आठमो छोडी मूल सातमाना सातमा भागमां गजाय होवाथी शिल्पिओए प्रासाद द्वारना ते स्थानमां प्रतिमानी दृष्टि पाडची.

उपसंहार—

प्रतिमा लक्षणना संबन्धमां जेटळुं लखाय तेदळुं थोडुं छे, ए विषय ज एवो छे के एने वधु चर्चीये तेम ए वधारे गहन बनतो जाय छे, एथी सामान्य वांचनार माटे ए दुर्वोध वस्तु बनी जाय एवो भय छे, माटे हवे ए लेख पूर्ण करवो ज सारो छे.

प्रतिष्ठाकारक साधुओ, विधिकारक श्रावको अने मूर्तिकार शिल्पिओ; प्रतिमा संबन्धी शिल्पनो थोडो पण परिचय साथे अने नवी बनती प्रतिमाओमां एनो उपयोग करे एज आ प्रकरण लखवानो उदेश छे.



१ पुस्तकान्तरमां “ गजायस्तत्र ” एवो पाठ छे. बनेनो भाव एक ज छे के सातमा भागमां “ गजाय ” छे.

परिच्छेद १३ परिकर लक्षण—

प्रातिहार्यमयः पुण्य-विभूतिदर्शनात्मकः ।

जिन-परिकरः कार्यः, स्वरूप-लक्षणान्वितः ॥३३॥

भा०टी०—जिनेश्वरनी पुण्य विभूतिनुं दर्शन करावनार, अष्ट प्रातिहार्य युक्त, पोताना रूप अने लक्षणे करीने युक्त एवो श्री जिनने परिकर करावयो जोह्ये.

‘परिकर’ शब्दनो यौगिक अर्थ ‘परिवार’ एवो थाय छे, पण प्रस्तुत प्रकरणमां आ शब्द शुद्ध यौगिक रह्यो नथी, ‘यौगिक मिश्र’ बनी गयो छे. शास्त्रदृष्टि ए कोई पण तीर्थकरना साधु-साध्वी समुदायने ज तेमनो परिकर कही शक्याय, पण शिल्पोक्त प्रस्तुत परिकरमां आ वस्तु नथी, अहिं परिकरनो रूढार्थ तीर्थकरोने प्राप्त थयेल लोकोत्तर विशेषताओनो सूचक छे, आ लोकोत्तर विशेषताओनुं पारिभाषिक नाम ‘प्रातिहार्य’ छे. कह्यं छे के—

अशोकवृक्षः सुरपुष्पवृष्टि-दिव्यध्वनिश्चामर मासनं च ।
भामण्डलं दुन्दुभिरातपत्रं, सत्प्रातिहार्याणि

जिनेश्वराणाम् ॥१॥

भा०टी०—आ पद्यमां सूचित अष्टप्रातिहार्यो ए तीर्थकरोना अलोक भोग्य पुण्य परिपाकना फलरूपे वरेली सिद्धिओ छे, तेओ ज्यां जाय त्यां अशोकवृक्ष, पुष्पवृष्टि, दिव्यध्वनी, चामर, सिंहासन भामण्डल, देव दुन्दुभि, अने छत्र; ए आठ वस्तुओ हाजर ज होय, प्रस्तुत परिकर लक्षणमां ए ज आठ वस्तुओनुं यथावस्थित मूर्तस्वरूप प्रदर्शित करायेलुं छे. जे नीचेना संक्षिप्त निरूपणथी समजाशे.

१-परिकरमां सर्व प्रथम तीर्थकर प्रतिमाना आसन नीचेना पीठनुं ‘सिंहासन’ नामथी निरूपण कर्तुं छे.

२. जिनप्रतिमानी बने बाजुमां चमर ढालता चामरधारिओनुं स्वरूप बताव्युं छे.

३. मस्तक उपर रहेल छत्राकार छत्रत्रयनुं निरूपण छे.

४. दुन्दुभि वाद्य वगाडता देवोनुं चित्र निरूपण कर्युं छे.

५. जिनध्वनिमां पोतानी दिव्यध्वनीने पूरता वंशधरो, वीणाधरो अने शंखधरनुं स्थान निरूपण छे.

६. पुष्पवृष्टि करता देवो मालाधरो बताव्या छे.

७. मस्तक पाछळ एकत्र थयेल तेजःपुंजना प्रतीकसमा भामंडलनुं निरूपण छे अने

८. सर्वोपरि जिनसभावृक्ष-अशोकवृक्षनुं स्वरूप चित्रित करीने पूर्वोक्त ८ प्रातिहार्योनी यथा स्थान समावेश एज 'परिकर' छे, ए वात सिद्ध करी छे, ए प्रमाणे 'परिकर'ओ पारिभाषिक अर्थ बतावीने हवे आपणे एना प्रत्येक अंगनुं निरूपण जयसंहिता शास्त्रमां करेलुं छे ते जोइशुं. त्यां जय पूछे छे—

सिंहासनं किं प्रमाणं, किं मानं बाहुयुग्मयो (कम्) ।

किं मानं छत्रवृत्तं च, शंखदुन्दुभिभागतः ? ॥२॥

एतत्सर्वं प्रसादनं, कथयस्व जगत्पते ? ।

विश्वकर्मा उवाच—

पूर्वोक्तमानतः कुर्या-दर्चां सर्वत्र शोभनाम् ॥३॥

यद्दर्णा मूलप्रतिमा, परिकरे तद्दर्णाद्यः ।

विवर्णादि महादोषाः, जायमानेषु सर्वतः ॥४॥

रत्नोद्भवा व्याघ्रेषु, मरकतस्फटिकादिषु ।

न दोषो विवर्णताकीर्णो, अर्चापरिकरादिके ॥५॥

भा०टी०—जये पूछ्युं सिंहासन शा मापनुं होय ? बाहुयुग्मनुं

માન શું હોય ? છત્રોટો કયા પ્રમાણનો હોય ? અને શંખ દુન્દુભિ વગાડનારાઓ માટે કેટલા આંગલનું માન છે ? હે સૃષ્ટિના સ્વામી ! કૃપા કરીને એ સર્વ હકીકત કહો ! જવાબમાં વિશ્વકર્માજીએ કહ્યું—

પૂર્વે જળાવેલાં પરિમાણોપેત પ્રથમ સુન્દર પ્રતિમા તૈયાર કરવી અને પછી જે વર્ણના દ્રવ્યની મૂલપ્રતિમા હોય તેજ વર્ણના દ્રવ્યવડે તેનો પરિકર બનાવવો; પ્રતિમાના વર્ણથી વિરુદ્ધ વર્ણનો પરિકર બનાવતાં સર્વત્ર મહાદોષની ઉત્પત્તિ થાય છે. હાં, જો પ્રતિમા સ્તનની, મરુકતમણિની, અથવા તો સ્ફટિકની હોય તો પ્રતિમાના પરિકરમાં વિવર્ણતાનો દોષ ગણાતો નથી.

આસનં ચ અતો વક્ષ્યે, ભંગાન્ વક્ષ્યામિ ત્વં શૃણુ ।

અર્ચાઽર્ધોદયકં કાર્યં, સિંહાસનં ત્રિદીર્ઘકમ્ ॥૬॥

સર્વતઃ કર્ણાં સંયુક્ત-મંગુલાદિકમુચ્છ્યે ।

નિર્ગતમર્ધોદયં ચૈવ, ઉભયો વામ-દક્ષિણે ॥૭॥

દ્વાદશાંગુલભવં રુપં, દ્વયંગુલા છાચકી તથા ।

વેદાઙ્ગુલમુપરિષ્ટાત્, કર્ણકં ચષકૈસ્તથા ॥૮॥

ઉદયશ્ચ સમાખ્યાતો, દૈર્ઘ્યં વૈ કથ્યતેઽધુના ।

ભા૦ટી૦—હવે આસન અને તેની રચનાના પ્રકારો કહું છું, તે સાંભલ ? પ્રતિમાના ઉદય કરતાં સિંહાસન ઉંચાઈમાં અર્ધું રાખવું અને ઉંચાઈથી ત્રણગુણું દીર્ઘ કરવું, તેને સર્વ તરફ કર્ણીયુક્ત કરવું, કર્ણીનો ઉદય આંગલનો કરવો, ઢાબી-જમણી બાજુએ સિંહાસનના ઉદય થકી અર્ધે નિર્ગમ કરવો, ૧૨ આંગલ પરિમાણમાં રુપક કરવું, ૨ આંગલની છાજલી અને તે ઉપર ૪ આંગલમાં કર્ણી ૧કરવી, આમ ઉદય કહ્યો, હવે વિસ્તાર કહેવાય છે.

૧ પ્રત્યેક પ્રત્યક્ષા વિધાન પ્રમાણે સિંહાસનની ઉંચાઈ બેઠી પ્રતિમાની ૫૬ ભાગની ઉંચાઈથી અડધી ૨૮ ભાગની કહી છે, ૪ ભાગની કર્ણી, ૨

आदिशक्तिर्जिनैर्दृष्टा, आसने गर्भसंस्थिता ॥९॥
 सहजा कुलजाऽधीना, पद्महस्ता वरप्रदा ।
 अर्कमानं विधातव्य-मुपाङ्गसहितं भवेत् ॥१०॥
 गर्भमध्ये विधातव्यं, धर्मचक्रं च शोभनम् ।
 चक्रं सुदर्शनं नाम, अधर्मक्षयकारकम् ॥११॥
 ऋगः सत्यं चरन् धर्मं, दयादेवी सृगी मता ।
 कुमुद-शंखवर्धाख्यौ, द्वौ गजौ वामदक्षिणे ॥१२॥
 भद्रजात्युद्भवौ कार्या-वंगुलदिक्षु विस्तरौ ।
 शिवौ रौद्रमहाकायौ, जीवत्क्रोधौ च रक्षणे ॥१३॥
 द्वादशांगुलविस्तरौ, कर्तव्यौ विवृताननौ ।
 केवलज्ञान मूर्तीनां, सर्वेषां पादसेवकाः ॥१४॥
 यक्षा श्रतुर्विंशतिः प्रोक्ता, एकैकं परिकल्पयेत् ।
 भूतयक्षान् गजसर्प-निधिहस्तान् वरप्रदान् ॥१५॥
 स्तंभशृणालसंयुक्ता, मकरैर्ग्रासरूपकैः ।
 शशिनिर्मलशोभाढ्यं, चतुर्दशांगुलान् क्रमात् ॥१६॥
 पद्मासना ब्राह्मणैर्युक्ता-श्रतुर्विंशतिः कुलशासनी ।
 धर्मेद्युः शुभादेवी, अम्बिकाद्याः क्रमोद्भवाः ॥१७॥
 स्तंभशृणालसंयुक्ता-शृणालैर्विरालिकैर्विदुः ।
 आसनं कथितं चैव, चामरधरानथ शृणु ॥१८॥

नी छाजली अने १२ भागना रूपकमां सिंहासननी उंचाईना १८ भागो
 रोकाय छे त्वारे १० भाग शेष रहे छे. आ १० भागोमां छु करवुं, एनो
 अहीं खुलासो मलतो नथी. शिल्परत्नाकरमां अपेला परिकालक्षणमां
 सिंहासनवा नीचेना १० आंगलोमां पीठ बनाववानुं विधान छे, ज्यारे
 वास्तुसारमां टक्कुरकेरु नीचेना १० भागोमांथी २ भागनी कणी अने ८
 भागनी लेखपट्टी छोडवानुं विधान करुं छे अमने आ विधान योग्य लागे छे.

માંટી—સહજ, કુલીન અને સ્વાધીન; એવી જે આદિ શક્તિ જિનોએ પોતાના આત્મામાં જોઈ તે શક્તિને હાથોમાં કમલ અને વરદ વતાવીને આસનના મધ્યગર્ભમાં સ્થાપન કરવી. ૧તે આદિ શક્તિનો વિસ્તાર ઉપાંગ સહિત ૧૨ આંગલનો કરવો, ૨આદિ શક્તિની નીચે આસનના ગર્ભમાં સુન્દર ધર્મચક્ર બનાવવું, આ ધર્મ-ચક્ર સુદર્શનચક્રની જેમ અધર્મનો ક્ષય કરનારું છે. તે ધર્મચક્રની એક તરફ સત્યરૂપી 'મૃગ' અને બીજી તરફ દયારૂપિણી 'મૃગી' બનાવવી, આ બંને જાણે ધર્મચક્રનો આશ્રય પામીને નિર્ભય થયાં હોય એમ ચિત્રવાં, તે પછી કુમુદ અને શંખનિધિના પ્રતિક સમા લે હાથીઓ ડાબી-જમણી તરફ કરવા. હાથી ભદ્રજાતિના અને ૧૦-૧૦ આંગલના વિસ્તારમાં બનાવવા. હાથીઓ પછી રૌદ્ર રૂપધારી અને મહાકાય એવા ૨ શિવો ૧૨-૧૨ આંગલનાં બનાવવા. આ શિવોના

૧ શિલ્પરત્નાકરના પરિકાલક્ષણમાં આનો ઉલ્લેખ 'મધ્યદેવી' એ નામથી કર્યો છે, ત્યારે વાસ્તુસારમાં એને 'ચક્રધરી' 'ગરુડાંકા' આવાં નામ વિશેષગો આપ્યાં છે. ઠક્કુરકેરુના આ કથનની અપેક્ષા સમજી શકાતી નથી. ચક્રધરી એટલે ચક્રેશ્વરી દેવી પ્રથમ તીર્થકરત્રી શાસન યક્ષિણી છે, એનું રૂપક દરેક તીર્થકરના સિંહાસન ઉપર શા માટે હોવું જોઈએ? અમ્હારા મત પ્રમાણે ૩ વિષયમાં 'જયસંહિતા'નું કથન યુક્તિયુક્ત લાગે છે.

૨ આદિ શક્તિનું વિસ્તારમાન અહિંયા ઉપાંગ સહિત ૧૨ ભાગનું કહ્યું છે, શિલ્પ રત્નાકરમાં ૨-૨ ભાગની ૨ થાંભલીઓ અને ૮ ભાગમાં દેવીનો વિસ્તાર શંખવાનું વિધાન છે, ત્યારે વાસ્તુસારમાં ૩-૩ ભાગમાં ૨ ચમરધરો અને ૬ ભાગની દેવી બનાવવાનું વિધાન છે. આ દેવીના રૂપકનો નિર્ગમ શિલ્પ રત્નાકરના પરિકાલક્ષણમાં ૫ આંગલનો બતાવ્યો છે.

૩ વાસ્તુસારમાં આ રૂપકોનાં 'કેસરી' અને શિલ્પરત્નાકરોક્ત પરિકાલક્ષણમાં 'સિંહ' નામો કહ્યાં છે. જયસંહિતામાં 'શિવ' કહેલો આ 'શિવ' કોણ? એ વિચારણીય છે. જ્યોતિષશાસ્ત્રમાં પ્રયાગમાં 'શિવ' કહે દિશામાં હોય તો શુભ અને કહ્ દિશામાં અશુભ? આવા પ્રસંગે "સંમુલ્ક-સ્થ શિવ-સ્થાપ્યઃ" इत्यादि शब्दोंમાં 'શિવ'નો ઉલ્લેખ છે. છતાં "સર્વત્ર ભ્રમતે રુદ્રો,

मुख फाडेलं एटले के विकृत करवां, जाणे के जीवोने एनाथी बचाववा माटे जिनेश्वरे पोताना आसन नीचे दवावी दीधेला क्रोधनां मूर्तरूपो.

सर्व केवलीतीर्थकरोना चरण-सेवको जे २४ यक्षो कक्षां छे, तेमांथी १-१ यक्षनी मूर्ति बनाववी एटले के जे तीर्थकरनी प्रतिमा होय तेना यक्षनी प्रतिमा जिनना जमणा हाथनी तरफना आसनमां शिवनी आगे बनाववी, यक्षो प्राणियोना मित्रो होय, तेवा सौम्य अने गज, सर्प आदि स्व स्व वाहनयुक्त, हाथोमां निधानवाला अने वर मुद्रावाला बनाववा. तेमनी बंने बाजु कमल युक्त स्तंभो बनाववा. स्तंभो मकरो अने ग्रासडाओना रूपको वडे शोभित करवा, अर्थात् आ बधी रचनावडे यक्षोने सुशोभित करवा. आ यक्षो विस्तारमां १४ आंगलना करवा जोईये. वली २४ शासनदेवीओ, के जे पद्मासनादि वाहनो अने आयुधो धरावनारी छे, धर्मने निमित्ते प्रवृत्ति करनारी छे, एवी अंगिका आदि जे देवी जे तीर्थकरनी शासनदेवी होय ते देवीनी शुभ मूर्ति ते तीर्थकरनी प्रतिमाना आसनना डाबे भागे शिवनी पछी बनाववी. एनो पण विस्तार १४ आंगलनो राखवो, अने एनी पण बंने बाजुमां कमलयुक्त स्तंभो बनाववा, उपर विरालिकाओनां मुखो करवां. आ प्रमाणे सिंहासननी रचना कही, हवे चामरधरोने सांभल !—

चामरधरानतां वक्ष्ये, चामरेन्द्रा इति स्मृतान् ।

पृष्ठपदोद्भवाः कार्या, बाहिकोभयमध्यतः॥१९॥

दुर्बलतानां बलप्रदः” आवा शब्दोधी कदाच ज्योतिषनो ‘शिव’ ‘महादेव’ ना रुद्ररूपना अर्थमां पण होय, प्रस्तुतमां शिवनुं जे स्वरूप लब्धुं छे एथी तो ए ‘शिव’ हस्तीथी पण अधिक ‘महाकाय’ कोई क्रूर हिसक जीव होय एम ज जगाय छे. अनारी कल्पना प्रमाणे आ शिव ते रुद्रनुं मंहारक ‘काल’रूप छे जेने श्री जिनेश्वरे आसन नीचे दबावुं छे.

પ્રતિમા-સ્કન્ધમુસ્તેષાઃ, પૃષ્ઠપાદાન્તવાહિકા ।
 સ્તંભૌ મૃગાલ સંયુક્તૌ, પૂર્વાદિવિરાલૈર્વિદુઃ ॥૨૦॥
 વરાલંકાર સંયુક્તાઃ, સુરેન્દ્રા ગુણપર્વતાઃ ।
 પ્રહ્લાદોવક્રમસ્યાસ્ય (વામતશ્ચાસ્ય) ચામરાધાર
 સૌચ્યતે ॥૨૧॥

દક્ષિણે વાહુસંસ્થાને, અપીન્દ્રો વિષ્ણુનામતઃ
 ઉદયઃ સ્તંભિકામિશ્ર, તિલકં શંબવ્યાલકે ॥૨૨॥
 મકરૌ ચ પ્રક્ષોભાદ્યૌ, કર્તવ્યૌ વિઘ્નતાનૌ ।
 ઉચ્છ્રૂયમંગુલાઃ પંચા-શદ્વિસ્તારે દ્વાવિંશતિઃ ॥૨૩॥
 વ્યાલઉપાંગસહિતોઽગુલાનાં ષટ્કમેવ ચ ।
 મૂલનાયકસ્તનગર્ભે, દૃષ્ટિમિન્દ્રસ્ય કારયેત્ ॥૨૪॥
 નાનાભરણશોભાદ્યં, નાનારત્નોપશોભિતમ્ ।
 ઇન્દ્રસ્ય લક્ષણં ચૈવ, ચામરધારઃ પ્રકથ્યતે ॥૨૫॥

भा०टी०—हवे चामरेन्द्र नामथी प्रसिद्ध चामरधरोने कहीश.

ચામરેન્દ્રો મૂલપ્રતિમાના પગોની પાછલી ફરકે બંને વાહી-
 ઓના વચમાં કરવા, તેમની ઉંચાઈ મૂલપ્રતિમાના સ્કન્ધ પર્યન્ત
 કરવી અને ચામરેન્દ્રોના પગ પાછલ વાહિકા કરવી.

ચામરેન્દ્રોની બંને તરફ વાહિકામાં કમલયુક્ત થાંભલિઓ
 કરવી, તે ઉપર વિરાલિકાઓ કરવી, ઇન્દ્રોને સુન્દર અલંકારો વડે
 શોભિત ગુણોના પુંજ જેવા વનાવવા, આમાં પ્રતિમાના ડાબા હાથ
 તરફનો ઇન્દ્ર 'પ્રહ્લાદ' અને દક્ષિણ વિભાગનો ઇન્દ્ર 'વિષ્ણુ' એ નામે
 ઓલખાય છે.

ચામરેન્દ્રોનો ઉદય થાંભલિઓ જેટલો કરવો, થાંભલિઓ ઉપર
 તિલકડા, શંબર, હાથી અને ઉંડાળમાં ફાટેલ મુખવાલા મગરો કરવા.

बाहीभोनो उदय ५० अने विस्तार २२ आंगलनो करवा. १हार्थी उपांग सहित ६ आंगलना करवा. चामरेन्द्रोनी दृष्टि मूल-प्रतिमाना स्तन सूत्रे मूकवी. इन्द्रोने अनेक आभूषणोथी अलंकृत अने अनेक रत्नालंकारो वडे सुशोभित करवा, अलंकृतविभूषितत्त्व एज चामरधर इन्द्रोनुं लक्षण कहेवाय छे.

दोलाख्यं तोरणं कार्यं, मीनकाकाररूपिणम् ।

त्रिरथिकोद्भवं कार्यं, छत्रत्रयसमन्वितम् ।

अशोकपत्रोद्भवं कार्यं, छत्रं दण्डसमन्वितम् ॥२६॥

भा०टी०—बाहीओ उपर 'दोला' नामक तोरण करवुं, तोरण मत्स्याकारे त्रण रथिकाओवालुं अने त्रण छत्रो युक्त करवुं तोरणमां आसोपालवनां पत्रो देखाडवां अने छत्र दंड सहित करवुं.

अतस्ते (?) फणमंडपाख्यं, मस्तकान्ते ततो भवेत् ।

त्रि-पंचफणः सुपार्श्वः, पार्श्वः सप्त नवस्तथा ॥२७॥

हीनफणो न कर्तव्यो-ऽधिको नैव प्रदुष्यते ।

छत्रत्रयं नासाग्रेणो-त्तारं, सर्वान्तिमं भवेत् ॥२८॥

नासा-भालान्तयोर्मध्ये, कपाले वेधतः पुनः ।

चतुरशीत्यंगुला दीर्घं, उदयं पंचाशदंगुलम् ॥२९॥

१ वास्तुसारमां बाहीभोनो उदय ५१ आंगलनो बताव्यो छे. उयारे शिल्परत्नाकरोक्त परिकरलक्षणमां ४९ आंगलनो आवे छे. ८ गद्दी, ३१ काउस्प्रगिया; अने १० तिलक मली ८+३१+१०=४९ थाय. शिल्परत्नाकरना लक्षणमां बाहुनो विस्तार पग १८ आंगलनो ज बतावेल छे पग एज वस्तु तेमां उभी प्रतिमातुं 'परिकर' ए शीर्षक नीचे जुड़ा रूपे उपस्थित करी छे.—“द्विताला विस्तरे कार्या बहिः परिकरस्यतु” । आ श्लोकार्थमां बाहीनो विस्तार २ ताल एटले २४ आंगलनो जगावे छे. आधी जगाय छे के शिल्परत्नाकरोक्त 'परिकरलक्षण'मां कोई एक ज ग्रन्थनो आधार लीधो जगातो नथी. ए सिवाय वास्तुसारमां बाहीभोनी जाडाई २६ आंगलनो बतावी छे जे बीजे क्यां लखी नथी.

द्वंद्वास्तस्योद्धर्त्वे कर्तव्याः, सर्वलक्षणसंयुताः ।

भा०टी०—मस्तकने अन्ते उपर फणा मण्डप करवो, सुपार्श्व-
नाथने ३ वा ५ अने पार्श्वनाथने ७ अथवा ९ फणवाला करवा, एथी
ओछां फणो न करवां. अधिक करवामां दोष नथी. त्रण छत्रो पैकीना
सर्वथी नीचेना छत्रनो उतार नाकना अग्रभागे होवो जोईये, जेथी
अवलंबो उतारतां नाक अने ललाटना अंतभागे कपालनो वेध थायः

दोला तोरणनी लंबाई ८४ आंगलनी अने उदय ५० आंग-
लनो करवो. दोला-तोरण उपर जे जे रूपको करवानां होय ते सर्व
द्वंद्वरूपे अर्थात् जे रूपक एक बाजुमां होय तेज तेनी सामे बीजी
बाजुए पण करवुं, सर्व द्वंद्वो लक्षणोपेत करवां.

भामंडलं ततो मध्ये, तिलकं वाम-दक्षिणे ॥३०॥

अंगुलद्वादशं प्रोक्तं, तिलकं विस्मृतं भवेत् ।

उदये षोडशं प्रोक्तं, तिलके चात्र रूपकम् ॥३१॥

उपरि छाद्यकी ज्ञेया, घंटा-कलशभूषिता ।

नासिके स्तंभिकादौ च, मयूरं वाम दक्षिणे ॥३२॥

गायनस्तुंबकः श्रेष्ठो, वंशवाद्यो रत्नशेखरः ।

वीणा-वंशधराः प्रोक्ता, मध्यस्थाने इति स्मृताः ॥३३॥

१ वास्तुसारना परिकरलक्षणमां दोलाना उदयना अने दैर्घ्यना अंको नीचे
प्रमाणे आप्या छे, उदय दोलाना प्रारंभथी २४ भागे छत्रनो प्रारंभ, छत्रनो
उदय १२ भागे, शंखधरनो उदय भाग ८, वैशु पत्रवल्ली भाग ६, एम
२४+१२+८+६=५० थसे, तथा दैर्घ्यमां छत्रार्ध भाग १०, कमलनाल भाग
१, मालाधर १३, थांभली भाग २, वंशवीणाधरभाग ८, मध्यमां घंटा
भाग २, मकरमुखसहित थांभली भाग ६, एवं १०+१+१३+२+८+२
+६=४२ थसे. आ दोलार्धतुं दैर्घ्य थयुं, पूर्ण दोलानुं दैर्घ्य आथी बमणुं
८४ भागनुं जाणवुं; वास्तुसारमां दोलानी जाडाई प्रतिमानी जाडाईथी अर्धी
बतावी छे.

तिलकवाम-दक्षिणे, वसंतराजो मालाधरः ।
 अनुगो पारिजातश्च, दशांगुलप्रमाणतः ॥३४॥
 भूर्लोक-भुवर्लोकान्श-मध्ये छत्रं द्वितीयकम् ।
 तृतीयं लिङ्गमाकारं, ग्रहा देवाश्चतुर्थकम् ॥३५॥
 दोला कनकदण्डच्छत्र-वृत्तंविंशांगुलम् ।
 झल्लरी समोक्तिका चो-डर्वे कलशः सदीपिकः ॥३६॥
 तत्पार्श्वयोर्गजद्वन्द्व-सुभयोर्दाम-दक्षिणे ।
 कलशपल्लवैयुक्त-मिच्छापत्रं च कारयेत् ॥३७॥
 हिरण्येन्द्रद्वयं कार्यं, पुष्पाञ्जलिकलशे धृतम् ।
 छत्रवृत्ते धरा इन्द्राः, शंख-पूर्णा महोद्भवाः ।
 कुर्वन्ति मंगल स्वानं, दुन्दुभि शंखभालिकाः ॥३८॥

भा०टी०—मध्यभागे भामंडल करवुं अने तेनो डावी-जमणी बने वाजुए बाहीओने मथारे चामरयो उपर तिलको करवां, आ तिलको विस्तारमां १२ अने उदयमां १३ आंगलना करवा अने तेमां १-१ रूपक करवुं, तिलको उपर आंगलसारा अने कलशे करी युक्त सुशोभित एवी छाजली करवी अने नासिकमां स्तंभिकाओनी उपली तरफ डावी-जमणी बने तरफ मोरनुं रूपक करवुं, मोरना पुछना निचला भागमां गायक, रत्नमुकुटधारी अने वांशली बगाडता श्रेष्ठ तुंबरुने बनाववो अने बीजा वीणा अने वांशली बगाडनाराओने तिलकना मध्यस्थाने बनाववा.

तिलकनी डावी-जमणी वाजुमां (जमणा तिलकनी डावी अने डावा तिलकनी जमणी वाजुमां) ऋतुराज वसंतने मालाधररूपे आलेखवो, अने तेना अनुचररूपे पारिजातने षण त्यां बताववो. आ मालाधर अने पारिजात विस्तारमां १० आंगलनो करवो. आगे बीजुं

छत्र भूर्लोकना लोकांशरूपे, त्रीजुं लिंगाकार छत्र ग्रहोरूपे अने चोथुं ऊर्ध्वलोक भव देवीशरूपे जाणवुं.

दोलाना सुवर्णमय दंडना छत्रनी गोलाई २० आंगलनी बनाववी.

छत्रनी निचली तरफ मोतीनी झालरी बनाववी, उपर देदीप्यमान कलश बनाववो, छत्रनी बंने तरफ शृंहमां कलश अने पल्लवो-युक्त वे हाथिओ बनाववा, पल्लवो इच्छा होय ते प्रमाणे देखाडवां, (मालाधरोनी उपर अने छत्रनी बंने तरफ शृंहमां कलशोशाला हाथियो बनावीने तेमनी उपरनी तरफ) वे हिरण्येन्द्रो (हरिणैगमेपिओ) बनाववा, तेमना हाथोमां पुष्पाञ्जलि अने कलश धारण कराववां, छत्रना उपरना भागे एक शंखधर अने तेनी बंने तरफ वे देवदुंदुभि वगाडनारा देवो बनावी तेओ शंख अने देवदुंदुभिना मांगलिक नादो करता होय तेम बताववा.

भामंडलं ततः कार्यं, छत्राधो द्वाविंशतिः ।

छत्रं दशांगुलं प्रोक्तं, द्वितीयं वसु चांगुलम् ॥३९॥

षडंगुलं तृतीयं च, चतुर्थं वेदमंगुलम् ।

एवं रथिकोद्भवं कार्यं, छत्राकारं भवेन्नतः ॥४०॥

दिव्यदेहधराः सर्वे, जिनेन्द्रभक्तिवत्सलाः ।

वादित्रैश्च समुत्पन्ना, नित्यं भूष्यन्ति मालिकाः ॥४१॥

भामंडलं किरणं दिव्यं, तेजो मस्तके भूषितम् ।

सिद्धौ तीर्थकराः सर्वे, ज्योतीन्वया व्यवस्थिताः ॥४२॥

दोलामस्तके कलशं, मुद्गरैर्वर्षाल रूपकम् ।

गजशृंहासुशोभाढयं, अशोकपल्लवाकृति ॥४३॥

ऊर्ध्वदेशे ग्रहाः सर्वे, आदित्याद्याश्च दक्षिणे ।

परे बृहस्पत्याद्याश्च, ग्रहा धर्म चयन्ति च ॥४४॥

भा०टी०—ते पछी छत्र नीचे २२ आंगलनुं^१ भामंडल करवुं. नीचेनुं छत्र निर्गमे १० आंगलनुं, वीजुं ८ आंगलनुं, वीजुं ६ आंगलनुं अने चोथुं ४ आंगलनुं करवुं. आम रथिकानी जेम उपरथी उपरतो हास करवाथी छत्रनो आकार बनशे, परिकरमां आवता वंशधर-वीणाधर-शंखधरादि सर्वे दिव्य देहधारी-देशे जिनेन्द्र भक्तिमां प्रीतिवंत होय छे, जाणे वादित्रोनी साथे ज जन्म्या होय तेम वादित्रो युक्त अने पुष्पमालाओथी निव्य भ्रूषित रहे छे, माटे एमना रूपको पण एज प्रकारनां करवां. भामंडल एटले दिव्य तेज किरणोनो समूह के जे जिनेन्द्रना मुखने प्रकाशित करतो तेमना मस्तक पाछल एकत्रित करायेली चमकी रथो होय छे ते छे, आजे सर्व तीर्थकरो निर्वाण प्राप्त करी सिद्धिस्थानमां ज्योति स्वरूपी रहेला छे जाणे के ए वस्तुने ज सूचवतुं होय तेम भामंडल दिव्य तेजःकिरणना प्रतीक समुं छे.

दोलाना मस्तक भागमां कलश वनाचो, तेने मुद्गरो (मयूरो) अने हाथिओना शुंढादंडो वडे भरपूर शोभायुक्त करवो, अशोकवृक्षना पत्रो देखाडवां अने तेना ऊर्ध्वदेशमां जमणी तरफ सूर्यादि अने डावा भागनी तरफ बृहस्पत्यादि सर्वे ग्रहो देखाडवा, केमके ग्रहो पण तीर्थकरोना धर्मप्रचारमां वृद्धि करनारा छे.

वास्तुसारोक्त परिकर-परिमाण—

सिंहासन—

१—द्विजना विस्तारथी सिंहासन दोढुं, लंबु, अर्धु विस्तृत अने पाव भागनुं जाडुं करी तेमां ९ अथवा ७ रूपको करवां, वे वाजु

१ भामंडलनो पेलारो वास्तुसारमां ८ आंगलनो जणाव्यो छे अने एतो उदय शिल्परत्नाकरना लक्षणमां २४ आंगलनो कह्यो छे.

યક્ષ-યક્ષિણી, બે કેસરિ, બે હાથી, બે ચમરધારી અને વચ્ચે ચક્રધરી તે ૧૪-૧૨-૧૦-૩-૬-૩-૧૦-૧૨-૧૪=૮૪ ભાગ સિંહાસનની લંબાઈના કરી તેમાં ઉક્ત રૂપકો કરવાં.

૨—ચક્રધરી-ગરુડાંક દેવીને નીચે ધર્મચક્ર, બંને વાજુમાં ૨ હરિણ અને ગાદીના મધ્યભાગે જિનલાંછન.

૩—સિંહાસનની ઉંચાઈના ૨૮ ભાગમાં કળી ૪, છાજલી ૨, હાથી ૧૨, કળી ૨, અને અક્ષરપટ્ટી ૮, ભાગ પ્રમાણ ઉંચી કરવી.

પચ્ચાઢા—

૧ ગાદી જેટલા ૮ ભાગ નીચે છોડી ૩૧ ભાગ ઉંચા ચમર-ધારી વા કાડસસગિયા કરવા, તે ઉપર ૧૨ ભાગ ઉંચું તોરણ-મસ્તક કરવું, આ પ્રમાણે પચ્ચાઢાની ડુંચાઈ ૫૧ ભાગની કરવી.

૨ પચ્ચાઢાનો વિસ્તાર ૨૨ ભાગનો કરવો, જેમાં ૧૩ ભાગમાં રૂપક અને ૬ ભાગ વરાલિકા સમેત થાંભલી કરવી.

૩ પચ્ચાઢાની ઝાઢાઈ ભાગ ૧૬ ની કરવી.

દોલા—

૧ અર્ધછત્ર ૧૦ ભાગ, કમલાનાલ ૧, માલાધર ૧૩, થાંભલી ૨ ભાગ, વેશ-વીળાધર ૮ ભાગ, મધ્યમાં ઘંટા ૨ ભાગ અને મકર-મુખ સહિત થાંભલી ૬ ભાગ; એવં ૧૦+૧+૧૩+૨+૮+૨+૬=૪૨ ભાગ આ પ્રમાણે દોલાઈની લંબાઈ ૪૨ ભાગની અને પૂર્ણ દોલાનું દૈર્ઘ્ય ૮૪ ભાગનું જાણવું.

૨ છત્રભાગ ૨૪ ભાગ ઉપર, તે છત્રનો ઉદય ૧૨ ભાગ, શંખ-ધર ૮ ભાગ અને વેણુપત્રવહ્લી ૬ ભાગ; આમ દોલાની ડુંચાઈ ૨૪+૧૨+૮+૬=૫૦ પચ્ચાસ ભાગની કરવી.

૩ છત્રત્રયનો વિસ્તાર ૨૦ આંગલ (ભાગ)નો અને તેનો નિર્ગમ ૧૦ ભાગનો કરવો.

४ भामंडलनो विस्तार २२ भाग अने तेनो पेसारो ८ भागनो करवो.

५ मालाधर एक षोडशांशमां, ते उपर गजेन्द्र एक अष्टादशांशमां, बंने दिशामां हरिणैगमेषी, ते पत्नी दुंदुभि अने शंखधर करवा, दोलानी जाडाई छत्रना निर्गम सहित विंथी (विंथना विस्तारथी ?) अर्धी करवी.

६ चामरधारियोनी दृष्टि स्तन सूत्र बराबर करवी. जो पंच-तीर्थी होय तो एज भागोथी २ काउस्सग्गिया, ते उपर २ विंथ, अने १ मूल नायक, $१+२+२=५$ परिकरनुं आ अर्वाचीन रूप छे, जे वास्तुसारमां संग्रहायेलुं छे.



परिच्छेद १४

जैनशासनदेव-लक्षणम्

यक्षाश्च यक्षदेव्यश्च, ग्रहा दिक्पतयस्तथा ।

एतेषां वाहनं रूप-मायुधादि निरूप्यते ॥३४॥

भा०टी०—यक्षदेवो, यक्ष देविओ, ग्रहो तथा दिक्पालो; आ देवोनां वाहन, रूप, आयुध आदिनुं आ परिच्छेदमां निरूपण कराय छे.

आ विषयमां १. यक्ष-यक्षिणीनो अर्थ. २. तीर्थकरो साथे यक्ष-यक्षिणीनो संबन्ध. ३. तीर्थकरोना मंदिरमां तेमने बेसाडवानुं कारण. ४. देवालयमां यक्ष-यक्षिणीने बेसवाने योग्य स्थान. ५. यक्ष-यक्षिणीनुं स्वरूप इत्यादि वातो आजे स्पष्टीकरण मागे छे.

पूर्वकालमां गमे तेम होय पण वर्तमान समयमां यक्ष-यक्षिणीना संबन्धमां घणुं अज्ञान अने भ्रमणाओ चाली रही छे. एटला माटे आ विषयने लगतुं थोडुंक स्पष्टीकरण करवुं आ स्थले प्रासंगिक गणाशे.

१—यक्ष ए नाम व्यंतर जातिना देव पैकी एक वर्ग विशेषनुं छे. ए वर्गना पुरुषो 'यक्ष' अने स्त्रीयो 'यक्षिणो' कहेवाय छे. आ व्यंतर जाति यद्यपि हलकी देव जातिमां परिगणिता छे. छातां एना पिशाच राक्षस आदि विभागना देवो क्रूर प्रकृतिना होय छे. ज्यारे 'यक्ष' बीजा व्यंतरोनी अपेक्षाए सात्त्विक अने भद्रप्रकृतिवाला होय छे. पृथ्वीगत धनभंडारो, अमूल्य रत्नो अने धातुनी खाणोना द्रष्टा होवाना कारणे पूर्वे तांत्रिक युगमां घणा धनार्थी लोको आ यक्ष-यक्षिणीयोनी साधना करता हता. कल्पसूत्रना वर्णन उपरथी जणाय छे के भगवान वर्धमान स्वामी-महावीर, त्रिशला मातानी कूखे अव-

તર્યા તેજ દિવસથી યક્ષો૯ રાજા સિદ્ધાર્થના વરે ધન-રત્ન આદિની વૃષ્ટિ કરવા માંડી હતી. ઉત્તરાધ્યયન આદિ સૂત્રગત “ જક્ષ્વાઉત્તર-ઉત્તરા ” ઇત્યાદિ વર્ણનોમાં ‘યક્ષ’ શબ્દનો પ્રયોગ સર્વોત્તમ જાતિના દેવોના અર્થમાં કરવામાં આવ્યો છે. ૯ વસ્તુ પણ આપણું ધ્યાન રાંચે છે.

શાસ્ત્રના વર્ણનોમાં ૯ વાતનું પણ નિરૂપણ મલે છે, કે ઉત્તર દિશાનો લોકપાલ કુવેર કે જે દેવોનો મંડારી અને ઇન્દ્રનો આજ્ઞા-પાલક દેવ છે, અને “યક્ષો” આ કુવેરની આજ્ઞામાં વર્તનારા દેવો છે.

આ વધી વાતોનો વિચાર કરતાં આપણા હૃદયમાં ૯ વાત સહજે ઉતરી જાય છે, કે ‘યક્ષ’ ૯ક પરોપકારી-સાત્વિક-ધનાદ્ય-કારુ-ણિક અને ક્રીડાશીલ દેવજાતિવિશેષનું નામ છે, આ યક્ષોની મુલાકાતિ, વાહન, આયુધ આદિના નિરૂપણ ઉપરથી પણ જગાઈ આવે છે કે આ દેવ જાતિ મલી અને ક્રીડાપ્રિય હોવી જોઈયે.

૨ જૈનોની માન્યતા પ્રમાણે કોઈપણ તીર્થંકર કેવલજ્ઞાન પામે ત્યારે તેમના પુણ્યપ્રકર્ષના વલે ક્રોડો દેવો તેમની સેવામાં ઉપસ્થિત થાય છે, તેમના સમવસરણનું (ઉપદેશ સમાના યોગ્ય સ્થાનનું) નિર્માણ કરે છે, અને તીર્થંકર ભગવાન ત્યાં બેસી જગત હિતકારક જિન-પ્રવચનનો ઉપદેશ કરે છે, જે સાંમલીને અનેક મવ્યાત્માઓ પ્રતિવોધ પામી તેમના શાસનનું અનુકરણ કરે છે, સંકડો સ્ત્રી-પુરુષો સંસારને ત્યાગી જિનેશ્વર સમુપદિષ્ટ ત્યાગમાર્ગનો સ્વીકાર કરે છે, હજારો સ્ત્રી-પુરુષો જિનોપદિષ્ટ ગૃહરથ ધર્મરૂપ ત્યાગમાર્ગમાં દાસલ થાય છે, જ્યારે લાખો દેવ મનુષ્યો વિરતિ પરિણામના અભાવે જિનદેવના પ્રવચન ઉપર શ્રદ્ધા વિશ્વાસ માત્ર પ્રગટ કરીને તેમના સંઘમાં જોડાય છે. તીર્થંકર દેવોની આ પ્રાથમિક સંઘ સ્થાપનામાં ૯મ તો ક્રોડો દેવો ઉપસ્થિત રહે છે. છતાં કોઈ ૯ક દેવયુગલને ભગવન્ત ઉપર અને તેમના શાસન ઉપર અતિશય ભક્તિભાવ ઉભરી જતાં તે નિત્ય ભગ-

वंतना चरण सार्त्तीप्यमांज रही तेमना मुखदर्शनथी, तेमनी सेवाथी, तेमना धर्मशासननु वैयावृत्त्य करीने अने तेमना अनुयायियोने सहायता करीने पोताना जीवनने कृतार्थ करे छे. विशेष भक्त बनेल आ देवयुगलने शास्त्रकारो यक्ष-यक्षिणीना नामथी उल्लेखे छे. प्रत्येक तीर्थकरना शासनमां आनुं यक्ष-यक्षिणीनुं युगल उत्पन्न थाय, आनुं जैनग्रन्थकारोनुं मन्तव्य छे.

३ तीर्थकरोनी विद्यमानतामां यक्ष-यक्षिणीओनां आ युगलो तेमना चरणोमां रहेता हता. आथी तीर्थकरनी मूर्तिओमां पण ए युगल बनाववानुं विधान चालु थयुं. १ अशोकवृक्ष, २ सुरपुष्पवृष्टि, ३ दिव्यध्वनि, ४ चामर, ५ सिंहासन, ६ भामंडल, ७ देवदुन्दुभि, अने ८ छत्र; ए प्रातिहार्यो तीर्थकरोना समवसरणमां देवो द्वारा निर्मित थतां हतां, ते मूर्ति निर्माणमां पण कायम रखां, एज प्रमाणे यक्ष-यक्षिणीओ पण मूर्तिरचनामां तेना अंगरूपे मूर्तिना चरणसमीप जमणी-डावी बाजुमां बनाववानी पद्धति प्रचलित थई. जिन-मूर्तिओ मंदिरोमां प्रतिष्ठित थई. न्यास्थी आ यक्ष-यक्षिणी युगलो पण तेना परिकरना एकभाग तरीके देवालयमां प्रतिष्ठित थयां अने ज्यांसुधी मूर्तिओ परिकरवाली स्थापित थती हती, त्यांसुधी यक्ष-यक्षिणी युगल पण तेमना चरणसेवी तरीके मूर्तिनी साथे गर्भगृहमांज रहेतुं.

मुसलमानोना आक्रमण कालमां घणा स्थानोमां प्रतिमाओ जमीनमां भंडाराई हती, समयान्तरमां टेकटेकाणे जमीनदोस्त थवेली ते प्रतिमाओ खोदकामो करतां वहार आर्वा पण त्यांसुधीमां भंडारनाराओ प्रायः परलोक पहुँची चुक्या हता. प्रतिमाओ निकले तो परिकर नहि अने कोई स्थले परिकर निकले तो ते योग्य प्रतिमा नहि, ते कालमां परिकर बनावनारा पण सारा रद्दा नहि, बली परिकरना पखालमां पण मोटी महैनत; जो पुरुं ध्यान न रखाय तो

पाणी रही जाय, मेल जामी जाय; ए बधी अगवडोनो विचार करी तत्कालीन गीतार्थ पुरुषोए परिकर वगरनी प्रतिमाओनी बंने तरफ ?-? तेथी न्हानी जिनप्रतिमा बेसाडीने परिकरनी अभाव पूर्ति करवा मांडी. घणा दीर्घकालथी ज्यां प्रतिमाओ प्रतिष्ठित थयेली छे, ते बधी परिकर युक्तज छे, पण लगभग सोलमा सैका पछीना समयमां प्रतिष्ठित थयेल देवालयोमां परिकरना स्थाने त्रिगडां (३ प्रतिमाओ) स्थापन थयेलं जोवाय छे, अने आज पर्यंत एज प्रथा प्रचलित छे.

ज्यारथी परिकरनुं स्थान त्रिगडे लीधुं त्यारथी परिकरगत चमरधरादि अन्यदेवोनी साथे यक्ष-यक्षिणीनां युगलो पण जैन-देवालयोमांथी अदृश्य थयां. सोलमीथी ओगणीसमी शताब्दी सुधीमां प्रतिष्ठित थयेल देवालयोमां तमने यक्ष-यक्षिणी युगलो भाग्जेज नजरे पडशे. छेछा लगभग १०० वर्षनी अंदर तपागच्छना श्रीपूज्योए; यतिओए अथवा साधुओए प्रतिष्ठित करेल जैनदेवालयोमां माणि-भद्र अने चक्रेश्वरीनी स्थापना थवा मांडी छे. पछीथी धीरेधीरे मूल-नायकना यक्ष-यक्षिणीनां युगलो पण जूदां स्थापवा मांडयां. खरतर-गच्छीय प्रतिष्ठाकारकोए प्रथम क्षेत्रपाल अने भैरवने जिनालयमां स्थान आप्युं अने पछी तेमगे पण मूलनायकना यक्ष-यक्षिणीने देवालयोमां स्वतंत्र आसन आप्युं छे.

४ उपरना विवेचनथी जणाशे के जैनदेवालयोमां यक्ष-यक्षिणीनुं स्थान तेमां प्रतिष्ठित मूलनायक तीर्थकरना सेवक तरीकेनुं छे, नहि के देवालयना अधिष्ठाता देव तरीकेनुं, अथवा तो देवालयना रक्षक देव तरीकेनुं; पण आजे आपणा समाजमां ए विषयनुं घोर अज्ञान प्रवर्ती रह्युं छे. घणा खरा प्रतिष्ठाकारक पुरुषो पण आ देवयुगलनी वास्तविक स्थिति न समजतां एमने भगवन्त तीर्थकरना तेमज एमना देवगृहना रक्षक रूपे मानी भगवन्तना स्थानथी अति दूर गृहमंडपना

द्वारनी बहार बंने बाजुना आलाओमां बेसाडे छे. जाणे के भगवंतना द्वारपाल अने द्वारपालिका होय.

जिनप्रनिमा परिकरनी साथे राखवानो रिवाज हतो; त्यांसुधी आ देवयुगल भगवंतना चरणसमीपमां रहेतुं हतुं, पण आजे परिकर उठी गयुं छे, त्रण मूर्तिओ गभारामां बेसाडाय छे अने यक्ष-यक्षिणी जुदा बेसाडाय छे. एटलुंज नहि, आ युगलनी मूर्तिओ परिकरगत एमनी मूर्तिओ करतां भोटी होय छे. आ स्थितिमां एमने गभारामां बेसाडवा जेटलुं स्थान रहेतुं नथी. तेथी गभारानी बहार कोलीना आलाओमां गूढ मंडपमां, अने छेवटे तेनी बहार चोकि मंडपना आलाओमां बेसाडवानी रीति चाली नीकली छे. पण आनो अर्थ ए नथी के यक्ष-यक्षिणीने भगवंतथी दूर ज बेसाडवा, खरी रीते तो एओ जेटला भगवन्तनी पासे होय तेटला सारा; भगवन्तना सामीप्यमांज ए प्रसन्न रहेनारां छे.

५ यक्ष-यक्षिणीना युगलोनुं स्वरूप वर्णन तीर्थकरोना चरित्रोमां, प्रतिष्ठा पद्धतिओमां अने शिल्पना आकर ग्रन्थोमां पण दृष्टिगोचर थाय छे.

तीर्थकर चरित्रोक्त अने प्रतिष्ठा ग्रन्थोक्त यक्ष-युगलोनुं वर्णन लगभग सरखुं छे, पण शिल्पशास्त्रोक्त वर्णनमां घणो मतभेद छे, नामो आयुधे अने वाहनोने अंगे आ विषयमां प्रतिष्ठा कल्पो अने शिल्प-ग्रन्थो मौलिक मतभेद धरावे छे, तेथी अमो आ बंने पद्धतिओने अनुसारे आ यक्ष-यक्षिणीयोनुं स्वरूप वर्णन करशुं. अत्र एक वातनो निर्देश करवो अत्यावश्यक छे के अमोए आ युगलोना स्वरूप वर्णनमां प्रतिष्ठा पद्धतिओ पैकी श्री पादलिप्तसूरिनी निर्वाण कलिकाने अने शिल्पग्रन्थो पैकी अपराजितपृच्छाने मुख्य आधार ग्रन्थ मान्यो छे. आ ग्रन्थोमां करेल वर्णनानुसारे अमो २४ यक्षो अने यक्षिणीओनुं स्वरूप बे यंत्रकोमां आपीए छीए. आमां १ लुं यंत्रक निर्वाण-कलिकानुसारी अने बीजुं यंत्रक अपराजित पृच्छानुसारी छे.

यक्ष-यक्षिणी यंत्रक १

१-आदिनाथ		२ अजितनाथ		३ संभवनाथ	
नाम	यक्ष	यक्षिणी	यक्ष	यक्षिणी	यक्षिणी
मुख	गामुख	अप्रतिचक्रा (चक्रेश्वरी २)	महायक्ष	अजिता (अजितवला)	दुरितारि
वर्ण	बृषभ सङ्ग	१ सुवर्णतुल्य	४ श्याम	१ गौर	१ २ गौर
वाहन	सुवर्णतुल्य	गर्ुड	हस्ती	लोहासना	मेघ (महिष १) (मघवा २)
हस्त	गत	८	८	४	४
दक्षिण-हस्तयोः	वस्द	वस्द	वस्द	वस्द	वस्द
	अक्षसूत्र	बाण	मुखर	पाश	अक्षसूत्र
		चक्र	अक्षसूत्र		
		पाश	पाश		
वाम-हस्तयोः	बीजपूर	धनु	बीजपूर	बीजपूर	बीजपूर
	पाश	वज्र	अभय	अकुश	अभय
		चक्र	अकुश		
		अक्षसूत्र	शक्ति		
नाम	यक्ष	यक्षिणी	यक्ष	यक्षिणी	यक्षिणी
मुख	गामुख	अप्रतिचक्रा (चक्रेश्वरी २)	महायक्ष	अजिता (अजितवला)	दुरितारि
वर्ण	बृषभ सङ्ग	१ सुवर्णतुल्य	४ श्याम	१ गौर	१ २ गौर
वाहन	सुवर्णतुल्य	गर्ुड	हस्ती	लोहासना	मेघ (महिष १) (मघवा २)
हस्त	गत	८	८	४	४
दक्षिण-हस्तयोः	वस्द	वस्द	वस्द	वस्द	वस्द
	अक्षसूत्र	बाण	मुखर	पाश	अक्षसूत्र
		चक्र	अक्षसूत्र		
		पाश	पाश		
वाम-हस्तयोः	बीजपूर	धनु	बीजपूर	बीजपूर	बीजपूर
	पाश	वज्र	अभय	अकुश	अभय
		चक्र	अकुश		
		अक्षसूत्र	शक्ति		
नाम	यक्ष	यक्षिणी	यक्ष	यक्षिणी	यक्षिणी
मुख	गामुख	अप्रतिचक्रा (चक्रेश्वरी २)	महायक्ष	अजिता (अजितवला)	दुरितारि
वर्ण	बृषभ सङ्ग	१ सुवर्णतुल्य	४ श्याम	१ गौर	१ २ गौर
वाहन	सुवर्णतुल्य	गर्ुड	हस्ती	लोहासना	मेघ (महिष १) (मघवा २)
हस्त	गत	८	८	४	४
दक्षिण-हस्तयोः	वस्द	वस्द	वस्द	वस्द	वस्द
	अक्षसूत्र	बाण	मुखर	पाश	अक्षसूत्र
		चक्र	अक्षसूत्र		
		पाश	पाश		
वाम-हस्तयोः	बीजपूर	धनु	बीजपूर	बीजपूर	बीजपूर
	पाश	वज्र	अभय	अकुश	अभय
		चक्र	अकुश		
		अक्षसूत्र	शक्ति		
नाम	यक्ष	यक्षिणी	यक्ष	यक्षिणी	यक्षिणी
मुख	गामुख	अप्रतिचक्रा (चक्रेश्वरी २)	महायक्ष	अजिता (अजितवला)	दुरितारि
वर्ण	बृषभ सङ्ग	१ सुवर्णतुल्य	४ श्याम	१ गौर	१ २ गौर
वाहन	सुवर्णतुल्य	गर्ुड	हस्ती	लोहासना	मेघ (महिष १) (मघवा २)
हस्त	गत	८	८	४	४
दक्षिण-हस्तयोः	वस्द	वस्द	वस्द	वस्द	वस्द
	अक्षसूत्र	बाण	मुखर	पाश	अक्षसूत्र
		चक्र	अक्षसूत्र		
		पाश	पाश		
वाम-हस्तयोः	बीजपूर	धनु	बीजपूर	बीजपूर	बीजपूर
	पाश	वज्र	अभय	अकुश	अभय
		चक्र	अकुश		
		अक्षसूत्र	शक्ति		

१०. शीतलनाथ			११. श्रेयांसनाथ			१२. वासुपूज्य		
नाम	यक्ष	यक्षिणी	नाम	यक्ष	यक्षिणी	नाम	यक्ष	यक्षिणी
शुब	ब्रह्मा ४	अशोका ?		ईश्वर (मनुज-२)	मानवी (गोमेधा-१) (श्रीवत्सा-२)	वर्ण वाहन	कुमार	प्रचण्डा (प्रवरा-२)
नेत्र	३	२	वर्ण	धवल ३	गौर २	वर्ण वाहन	श्वेत हंस ४	श्याम अश्व ४
वर्णा	धवल	(नीलवर्णी-२) सुदृगवर्णी	नेत्र	वृषभ ४	२ सिंह ४	हस्त	{ मातुलिंग बाण	{ वरद शक्ति
वाहन	पद्मासन	पद्मवाहना	वाहन		वरद अंकुश-१	द. ह.		
हस्त	८	४	हस्त		सुदृग (वरद-१)			
	{ मातुलिंग सुदृग पाश अभय	{ वरद पाश	द. ह.	{ मातुलिंग गदा नकुल (कलश-१) अक्षसूत्र (अंकुश-१)	{ अंकुश-१ सुदृग (वरद-१) कलश (कुलिश-२) सुदृग-१ अंकुश (नकुल-१)	वा. ह.	{ नकुल धनुष्य	{ पुष्प (धनु-२) गदा (नाग-२)
	{ नकुल गदा अंकुश अक्षसूत्र	{ फल (कर) अंकुश	वा. ह.					

१६. शान्तिनाथ		१७. कुन्थुनाथ		१८. अरनाथ	
नाम	यक्ष	यक्षिणी	नाम	यक्ष	यक्षिणी
वाहन	गरुड (क्रिडिवा-१)	निर्वाणा (निर्वाणी-१)	नाम	गन्धर्व	बला (अच्युता-२)
मुख	वराह	पद्मासना	वर्ण	श्याम	गौर
वर्ण	वराह	गौर	वाहन	हंस	मयूर
हस्त	श्याम	गौर	हस्त	४	४
द. ह.	४	४	द. ह.	वरद	बीजपूर
	बीजपूर	पुस्तक		पाश	शूल (त्रिशूल?)
	पद्म	उत्पल		मातुलिंग	अभय
				मुद्गार, पाश	नकुलधनुष्य
				अभय	चर्मफलक
					शूल, अंकुरा
					अक्षमूत्र
वा. ह.	नकुल	कमंडलु	वा. ह.	अंकुरा	पाश
	अक्षमूत्र	कमल			(पद्म-१-२)
					अक्षमूत्र

१९. मल्लिनाथ		२०. सुनिसुवत		२१. नमिनाथ	
यक्ष	यक्षिणी	यक्ष	यक्षिणी	यक्ष	यक्षिणी
कुबेर (कुमार-१) (कूबर-२) ४ गरुडसदृश इन्द्रधनु व० गज ८	वेरोदथा २ कृष्णवर्णा पद्मासना ४	वरुण ४ जटामंडित शिवाः ३ धवल दृषभ	वरदत्ता (१-२) (नर-१) (अच्छुता २) १ २ गौर पद्मासनारुढा (भद्रासनारुढा १-२) ४	भृकुटि ४ ३ हेमवर्ण कृषभ ८ मातुलिंग शक्ति सुदृग अभय	गान्धारी १ २ श्वेतवर्ण हंस ४ वरद लङ्ग
नाम मुख वर्ण वाहन हस्त द. ह.	नाम मुख नेत्र वर्ण वाहन हस्त द. ह.	नाम मुख नेत्र वर्ण वाहन हस्त द. ह.	नाम मुख नेत्र वर्ण वाहन हस्त द. ह.	नाम मुख नेत्र वर्ण वाहन हस्त द. ह.	नाम मुख नेत्र वर्ण वाहन हस्त द. ह.
वरद पाश (परशु १-२) चाप (शूल-१-२) अभय	वरद (सुक्ता- माला) अक्षसूत्र (वरद)	मातुलिंग गदा, बाण शक्ति नकुल पद्म, धनु परशु (पाश-१-२)	वरद अक्षसूत्र बीजपूर कुंत (शूल-१-२)	नकुल परशु वज्र अक्षसूत्र	बीजपूर (कुंत-२) कुंभ (फल-१)
नाम मुख वर्ण वाहन हस्त द. ह.	नाम मुख नेत्र वर्ण वाहन हस्त द. ह.	नाम मुख नेत्र वर्ण वाहन हस्त द. ह.	नाम मुख नेत्र वर्ण वाहन हस्त द. ह.	नाम मुख नेत्र वर्ण वाहन हस्त द. ह.	नाम मुख नेत्र वर्ण वाहन हस्त द. ह.

૨૨. નેમિનાથ		૨૩. પાર્શ્વનાથ		૨૪. મહાવીર	
નામ	યક્ષ	યાચિણી	નામ	યક્ષ	યાચિણી
મુખ	ગોમેથ	(કુભાણ્ડી) (અંબા-૨)	નામ	પાર્શ્વ (વામન-૨)	નામ વર્ણ
વર્ણ	૩	૧	મુખ	ગજમદ્દશ (૪ મુ-૨)	વર્ણ વાહન
વાહન	૩	કનકવર્ણી	મસ્તક	સર્પકળા- મંડિત	હસ્ત
હસ્ત	૬	૪	વર્ણ	શ્યામ	૨ (૪-૨-૧)
દ. હ.	માતુલિગ પાશુ	(માતુલિગ આપ્રલુચિ -૧-૩)	વાહન	કૂર્મ	દ. હ.
વા. હ.	ચક્ર	પાશ	હસ્ત	૪	પુસ્તક અમય
	નકુલ		દ. હ.	વીજપૂર	માતુ- લિગ વા. વાણ (વીણા-૨)
	શૂલ	પુત્ર-(અં)	વા. હ.	સર્પ	
	શક્તિ	અંકુશ (પુ.)	વા. હ.	નકુલ સર્પ	
		અંકુશ		ફલ (ક.) અંકુશ	

यक्ष-यक्षिणी यंत्रक २

१-कृषभदेव		२ अजितनाथ.		३ संभवनाथ.	
नाम	यक्ष	यक्षिणी	नाम	यक्ष	यक्षिणी
गोमुख	चक्रेश्वरी	रोहिणी	मुख	महायक्ष	यक्षिणी
वृषवक्र	हेमवर्णा	श्वेतवर्णी	वर्ण	अग्राम	श्वेतवर्णी
श्वेतवर्णा	पद्मासन	लोहासन	वाहन	गज	वाहन
४ वृषसदृश	गुरुदोषरि	रथारूढा	हस्त	८	हस्त
वृषम	(६ पादा)	४		(वरद-याश	
	१.२.			अभय-अंकुश	
				सुदगर-अभय	
				अक्ष-वरद	
	आ.			पाश-शंख	
	अष्टचक्र			अंकुश-वक्र	
	वे वज्र			शक्ति-गदा	
	वीजपूर			मातुलिंग-परशु	
	अभय				
नाम	यक्ष	यक्षिणी	नाम	यक्ष	यक्षिणी
वर्ण	गोमुख	महासि	मुख	त्रिमुख	महासि
मुख	वृषवक्र	श्वेतवर्णी	वर्ण	अग्राम	श्वेतवर्णी
वाहन	४ वृषसदृश	वाहन	वाहन	मयूर	६
हस्त	वृषम	हस्त	हस्त	६	अभय
				परमाक	वरदान
				अक्ष	(फल)
				गदा	अर्थचन्द्र
				चक्र	परशु
				शंख	उत्पल
				वरद	

४ अभिनन्दन		५ सुमतिनाथ.			६ पद्मप्रभ.			
नाम	यक्ष	यक्षिणी	नाम	यक्ष	यक्षिणी	नाम	यक्ष	यक्षिणी
४ चतुरानन-	हंस	वज्रशंखला	वाहन	तुंवरु	पुरुषदत्ता	नाम	कुसुम	मनोवेगा
वाहन	हंस	हंस	वाहन	गरुड	श्वेतहस्ती	वाहन	सृग	अश्व
हस्त	४	४	वर्ण	स्वरूप-सर्पहार	श्यामवर्णी	वर्ण	२	कनकवर्णी
	नाग	नागपाश	हस्त			हस्त	गदा	४
	पाश	अक्षमूत्र					अश्व	शक्ति (अशनि)
	वज्र	फल (क)		सर्प	वज्र (च)			शंख (चक्र)
	अंकुश	वरद.		सर्प	चक्र (व)			फल
				वरद	फल			वरद.

७. सुपाश्वर्धनाथ.			८. चन्द्रप्रभ.			९. सुविधिनाथ.		
नाम	यक्ष	यक्षिणी	नाम	यक्ष	यक्षिणी	नाम	यक्ष	यक्षिणी
वर्ण	मातंग	कालिका	वर्ण	विजय	ज्वाला	वर्ण	अजित	महाक्राली
वाहन	मेघासन	कृष्ण श्वेतवर्णी	वाहन	कपोत	मालिनी	वाहन	(जय)	कृष्णवर्णी
हस्त	२	वृषास्त्रा (महिष)	हस्त	४	महामहिषास्त्रा	हस्त	कूर्म	कूर्म
		४		परशु	८		४	४
	गदा	घंटा		पाश	त्रिशूल		शक्ति (४ वज्र)	वज्र,
	पाश	त्रिशूल		अभय	पाश,		अक्ष गदा वर	सुदुर्गर,
		फल		वारद	अंकुश,		फल अभय)	अभय,
		वारद			धनु,		चक्र	
		हस्त ८			त्राण, चक्र,			
		१ त्रिशूल, २			अभय, वारद,			
		पाश, ३ अंकुश			(४ हस्ता.			
		४ धनु, ५ शर			घण्टा, त्रिशूल,			
		६ चक्र, ७			फर अने			
		अभय, ८ वारद			कर.)			

१०. शीतलनाथ.			११. श्रेयांसनाथ.			१२. वासुपूज्य.		
नाम	यक्ष	यक्षिणी	नाम	यक्ष	यक्षिणी	नाम	यक्ष	यक्षिणी
वर्ण	ब्रह्मा	मानवी	वर्ण	ईश्वर (यक्षेश) (किन्नरेश)	गौरी	वर्ण	कुमार	गान्धारी
वाहन	हंस	श्यामवर्णा	वाहन	श्वेत	कनकाभा	वाहन	मयूर	श्यामवर्णा
हस्त	४	शूकर	हस्त	वृषभ	ऋणहरिण	हस्त	४	नक्र
	पाश	४		४	४		धनु.	२
	अंकुश	अंकुश		त्रिलाल	पाश		बाण,	अस्य.
	अभय	फल		अक्ष	अंकुश		फल.	वरद.
	वरद	वरद		फल	पद्म		वरद.	(पद्म
				वाद	वरद		वरद,	फल)

१३. विमलनाथ.		१४. अनन्तनाथ.		१५. धर्मनाथ.	
नाम	यक्ष	नाम	यक्ष	नाम	यक्ष
मुख	षण्मुख	वर्ण	पाताल (त्रिसुख)	वर्ण	मानसी
वर्ण	६	वाहन	४	वाहन	रक्तवर्णी
वाहन	श्यामा द्वयोमयानसा	हस्त	४	हस्त	व्याघ्र
हस्त	६		१ वज्र २ अंकुश ३ धनु ४ बाण ५ फल ६ वरद		६ त्रिशूल पाश चक्र डमरुक फल वरद
	वज्र, १ वर वज्र, २ खड्ग धनु, ३ खेटक बाण, ४ वर फल, ५ धनु वरद, ६ बाण		अंततापति (अंततमती) सुवर्णी हंसामना		

१६. शान्तिनाथ.		१७. कुन्थुनाथ.		१८. अरनाथ.	
नाम	यक्ष	यक्षिणी	नाम	यक्ष	यक्षिणी
गण्ड	महामानसी	जया	विजया	(यक्षेश)	विजया
गुरुड	मुवर्णाभा	कनकवर्णा	स्वर्णवर्णा	क्षेत्रयक्ष	क्षेत्रयक्ष
शुक	पक्षिगज	कृष्णशुक्र	सिंहासना	(मातंग)	(स्वरासन)
४	(गरुड ?)	६	वरासन	वज्र	वज्र
शर	४	वज्र	हस्त	चक्र	चक्र
अंकुश	अभय	पाश		धनुः	धनुः
फल	फल	अंकुश		बाण	बाण
वरद	वरद	फल		फल	फल
		वरद		वरद	वरद

१९. मल्लिनाथ.		२०. सुनिसुव्रत.		२१. नमिनाथ.	
नाम	यक्ष	यक्षिणी	नाम	यक्ष	यक्षिणी
(कुबेर)	अपराजिता	बहुरुषिणी	नाम	यक्ष	यक्षिणी
कम्बर्		(पा)	वर्ण	भृकुटि	चाण्डा
चतुर्मुख	त्रयाम	स्वर्णवर्णा	वाहन		रक्तवर्णा
	४	सर्प			मर्कट
मिह	अष्टाषट्	२	हस्त	१ गूल	(वानर)
पाश	४	खड्ग		२ शक्ति	८
	खड्ग	खेटक		३ वज्र	त्रिशूल
अंकुश	खेटक			४ खेटक	खड्ग
फल	फल			५ अभय	मुद्गर
वरद	वरद			६ डमरु	पाश
					वज्र
					चक्र
					डमरुक
					अक्षसूत्र

२२. नमिनाथ.			२३. पार्श्वनाथ.			२४. महावीर.		
यक्ष	यक्षिणी	नाम	यक्ष	यक्षिणी	नाम	यक्ष	यक्षिणी	नाम
(गोमेध) गोमय	कूर्मा (अंबिका) हरितवर्णा	वर्ण	पार्श्व सर्परूप श्याम कूर्म	पद्मावती रक्तवर्णा	वर्ण	मातंग	सिद्धायिका कनकवर्ण	वर्ण
	सिंहासने (सिंहसंस्था)	वाहन	६	पद्मासना कुर्कुटोपरिस्था	वाहन	हस्ती	भद्रासन	वाहन
	२	हस्त	६	४	हस्त	२	२	हस्त
धनु	अक्षफल		(धनुः त्राण शुशुण्डि मुद्गर फल वज्र वरद)	पाश अंकुश पद्म वरद		१ वरद	१ पुस्तक	
त्राण	वरद					२ फल	२ पुस्तक (पुरतक- अभय)	
मुद्गर	पुत्रोत्संग							
फल								
वज्र								
वरद								

खुलासो—

उपर्युक्त वे यक्ष-यक्षिणी कोष्ठको पैकीनुं कोष्ठक पहेलुं निर्वाण-कलिकादि जैन विधि ग्रन्थोने अनुसारे छे, आ कोष्ठकमां पण ग्रन्थान्तरना पाठान्तरो () आ ब्रैकेटमां सूचव्या छे, बांचक गणे आ कोष्ठकना मूल पाठ प्रमाणे ज यक्ष-यक्षिणीओनां स्वरूप अने आयुधादि बनाववां जोइये.

कोष्ठक बीजुं प्राचीन शिल्पग्रन्थोना आधारथी तैयार करेलुं छे, आ कोष्ठक प्रमाणे आपणे आज काल यक्ष-यक्षिणीओनी मूर्तिओ करावता नथी, छतां प्राचीन कालीन कोइ देव-देवीनी मूर्ति मली आवे तो तेने ओलखवा माटे आ कोष्ठक पण उपयोगी थइ पइशे एम धारीने आ बीजुं कोष्ठक आपेल छे, एम जाणवुं.

दशदिक्पाल-नवग्रहलक्षण

दशदिक्पालयन्त्रकम्						
नं.	नाम	वर्ण	वाहन	हस्त	आयुधो द. हस्ते वामहस्ते	
१	इन्द्र	पीत	अैरावत	२	वज्र	वज्र
२	अग्नि	अग्निवर्ण सप्तशिख	मेष	२	शक्ति	(शक्ति)
३	यम	कृष्णवर्ण	महिष	२	दंड	(दंड)
४	निर्ऋति	हरित	शिव	२	खड्ग	(खड्ग)
५	वरुण	धवल	मकर	२	पाश	(पाश)
६	वायु	सित	मृग	२	ध्वज	(ध्वज)
७	कुबेर	अनेकवर्ण	नवनिधि	२	निचुलक	गदा तुंदिल
८	ईशान	धवल	शुषम	२	शूल	(शूल) त्रिनेत्र
९	नाग	श्याम	पद्मवाहन	२	उरग	(उरग)
१०	ब्रह्मा	धवल	हंस	२	कमंडलु	(कमंडलु)

नवग्रह यन्त्रकम्

नं.	नाम	वर्ण	वाहन	हस्त	आयुधो	
					द. हस्त	वामहस्ते
१	आदित्य	हिंगुलवर्ण	ऊर्ध्वस्थित	२	कमल	कमल
२	सोम	श्वेतवर्ण	...	२	अक्षसूत्र	कुंडिका
३	मंगल	रक्तवर्ण	...	२	अक्षसूत्र	कुंडिका
४	बुध	पीतवर्ण	...	२	अक्षसूत्र	कुंडिका
५	गुरु	पीतवर्ण	...	२	अक्षसूत्र	कुंडिका
६	शुक	श्वेतवर्ण	...	२	अक्षसूत्र	कमंडलु
७	शनिेश्वर	ईषत्कृष्ण	(लम्बकूर्च- किंचित् पीन.)	२	अक्षमाला	कमंडलु
८	राहु	अतिकृष्ण	(अर्द्ध कायरहित)	२	अर्घसूत्रा	अर्घसूत्रा
९	केतु	धूम्रवर्ण	...	२	अक्षसूत्र	कुंडिका :

षोडशविद्यादेवीलक्षणज्ञापकं यन्त्रकम्

नं.	नाम	वर्ण	वाहन	हस्त	आयुधे		वामहस्तयोः	
					अक्षयुत्र	बाण	शंख	धनुः
१	रोहिणी	धवला	सुरभि	४	अक्षयुत्र	बाण	शंख	धनुः
२	प्रज्ञप्ति	श्वेतवर्णा	मयूर	४	वरद	शक्ति	मातुलिङ्ग	शक्ति
३	वज्रशृङ्खला	शंखवर्णा	पद्मवाहना	४	वरद	शृङ्खला	पद्म	शृङ्खला
४	वज्रांकुशा	कनकवर्णा	गज	४	वरद	वज्र	मातुलिङ्ग	अंकुश
५	अप्रतिचक्रा	तोदद्वर्णा	गरुड	४	चक्र	चक्र	चक्र	चक्र
६	पुरुषदत्ता	कनकावदात्	महिषी	४	वरद	असि	मातुलिङ्ग	खेटक
७	काली	कृष्णा	पद्मासना	४	अक्षयुत्र	वरद (गदा)	वज्र	अभय
८	महाकाली	तमालवर्णा	पुरुष	४	अक्षयुत्र	वज्र	अभय	घंटा

९	गौरी	कनकाभा	गोध्या	४	वरद	सुसल कमल. ता.	अक्षमाला	कुवलय
१०	गान्धारी	नीलवर्णा	कमल	४	वरद	सुसल (कमल.ता.)	अभय (अक्षमाला.ता.)	कुलिश (कुवल. ता.)
११	सर्वास्त्रि- महाज्वाला	धवलवर्णा	वराह	असं- ख्य	असंख्य मह- रणयुत हस्ता (द्विभुजा)	खड्ग परशु युक्त दक्षिणकरा	असंख्य ग्रहरण युतवाम हस्तो च. ता.	विटप
१२	मानवी	श्यामवर्णा	कमल	४	वरद	पाश पादपती उरग	अससूत्र खेटक	अहि (असि.ता.)
१३	वैरोट्या	श्यामा	अजगर	४	खड्ग	बाण	धनुः (खेटक)	खेटक (असि)
१४	अच्छुप्ता	तडिदूर्णा	तुरग	४	खड्ग	वज्र	अक्षवलय	अशनि
१५	मानसी	धवला	हंस	४	वरद	वज्र	कुंडिका	फलक
१६	महामानसी	धवला	सिंह (ता. प. हंस)	४	वरद	असि		

‘ श्रुतदेवता-शान्तिदेवता-ब्रह्मशांति-क्षेत्रपाललक्षण ’

१. श्रुतदेवता—

शुक्लवर्णा ॥ हंसवाहना ॥ ४ हस्ता ॥ वरद-अक्षमालायुक्त
दक्षिणहस्तद्वया ॥ पुस्तक-वीणायुतवामहस्तद्वया ॥

२. शान्तिदेवता—

धवलवर्णा ॥ कमलासना ॥ ४ हस्ता ॥ वरद-अक्षसूत्रयुत-
दक्षिणहस्तद्वया ॥ कुंडिका-कर्मडलुपुत्र वामहस्तद्वया ॥

३. ब्रह्मशांति—

विगवर्ण ॥ करालदंष्ट्रा ॥ जटामुकुटमंडित ॥ पादुकारूढ ॥
भद्रासनस्थ ॥ उपवीतालंकृतस्कंध ॥ ४ हस्त ॥ अक्षसूत्रदण्डयुत
दक्षिणहस्तयुगल ॥ कुंडिका-छत्रयुतवामहस्तद्वय ॥

४. क्षेत्रपाल—

क्षेत्रानुरूपनाम धारक ॥ श्यामवर्ण ॥ बर्बरकेशी ॥ आवृत्त
(गोल) विगनयन ॥ विकृतदर्ष्ट ॥ पादुकाधिरूढ ॥ नग्न ॥
कामचारी ॥ ६ हस्त ॥ मुद्गर-पाश-डमरूयुतदक्षिणहस्तत्रय ॥
श्वान-अंकुश-गेडिका सहित वामहस्तत्रिक ॥

परि० १५. धारणागतिलक्षण

पूजकस्य जिनेन्द्रस्य, लभ्य-देयं परस्परम् ।
राशियोनिगणादीना-मानुकूल्यं विलोकयेत् ॥१६॥

भा०टी०—पूजक अने जिनभगवानने परस्पर लभ्य देव-
राशि, योनि, गण, वर्ग, अने नाडीसुं अनुकूलपणुं जोवुं जोइये.

धारणागति यंत्रक एटले जिनदेव अने जिनदेवनी प्रतिमा
भरावनार गृहस्थने नामजोडो जोवानी रीति.

अमुक गृहस्थ अथवा गामनी साथे कया भगवाननी योनि १,
गण २, राशि ३, वर्ग ४, नाडी ५, लेणी ६, आ छ वातो अनुकूल
छे, ए नकी करीने ते नामनी प्रतिमा भराववी अथवा प्रतिष्ठित
करवी जोइये, जे नामने जे जिननी साथे योनिवैर, गणवैर, राशिवैर,
वर्गवैर, नाडीवेध होय अने प्रतिमा भरावनार धनिक के गाम जे
जिनदेवनुं देवादार होय तेनी प्रतिमा न भराववी, केमके ते अभ्युदय
जनक थती नथी.

ए विशेषमां पूर्वाचार्येण कक्षां छे के —

“ योनि-गण-राशि भेदा, लभ्यं वर्गश्चनाडिवेधश्च ।
नूतनविषयविधाने, षड्विधमेतद्विलोक्यं ज्ञैः ॥ १ ॥

भा०टी०—विद्वानोण नवीन विषय भराववामां योनि, गण,
राशि, लहेणुं, वर्ग अने नाडिवेध;-आ छ वातो अवश्य जोवी जोइये.

ભાવ એ છે કે દેવ અને પૂજકના નક્ષત્રોની યોનિયો સર્પ અને નોલિયા જેવી જાતિ વૈરવાલી ન હોય, ગણો દેવ-રાક્ષસ અથવા માનવ રાક્ષસ જેવા વૈરવાલા ન હોય, રાશિયો-એક બીજીથી છઠી-આઠમી, નવમી-પાંચમી, કે બીજી-ચારમી ન હોય; પૂજક દેવનો કર્જદાર ન હોય, બેના નામના પ્રથમાક્ષરના વર્ગો એક બીજાથી પાંચમાં ન હોય, અને બંનેના નક્ષત્રો એક નાહિમાં ન હોય; તે દેવ અને ધનિકને ધારણાગતિ શુભ છે એમ જાણીને તે નામના દેવની નવી પ્રતિમા ભરાવવી.

પૂર્વોક્ત શ્લોકમાં “ નૂતન વિશ્વ વિધાને ” આમ નવીન ત્રિંબ ભરાવતાં ષડ્વર્ગે જોવાનો નિર્દેશ છે. પણ પ્રાચીન પ્રતિમા પણ જેના ઘરમાં અથવા જે ગામમાં પ્રતિષ્ઠિત કરવી હોય તેના નામથી અથવા તે ગામના નામથી ષડ્વર્ગે શુદ્ધ હોય તે સ્થાપન કરવી સારી છે, ગણવૈર, યોનિવૈર, નાહિવેધ આદિ દોષયુક્ત પ્રતિમાઓ પ્રાચીન છતાં ઘણે સ્થાને હાનિકર સાબિત થઈ છે, માટે મૂર્તિ મૂલે પ્રાચીન હોય તથાપિ ષડ્વર્ગે શુદ્ધ હોય તે જ મૂલનાયકના સ્થાને પ્રતિષ્ઠિત કરવી. જે વ્યક્તિનું જન્મનક્ષત્ર જાળવામાં હોય તેની યોનિ, ગણ, રાશિ અને નાહિવેધ; ૧૧ ૪ વાવતો જન્મનક્ષત્રથી જોવી, પણ ૧ વર્ગ અને ૨ લહેણું આ વાવતો જિનની જેમ ધનિકનું પણ પ્રસિદ્ધ નામ બીજું હોય તો તે પ્રસિદ્ધ નામના નક્ષત્રથી જોવી.

જેના જન્મનક્ષત્રની સ્વર ન હોય તેની યોનિ, ગણ, આદિ સર્વ પ્રસિદ્ધ નામના નક્ષત્રથી જ જોવું.

સ્પષ્ટીકરણ-કૃત્તિકાદિ જન્મનક્ષત્રાનુસારી અજા આશા આદિ નામ હોય તેને યથાસંભવ “ અઆ ” નીચેના પાછલ આપીશું તે પહેલાં બીજા અથવા ત્રીજા કોષ્ટકમાં લખેલ જિન નામોની સાથે

मेल सारो छे अेम समजवुं, परंतु जन्मनक्षत्र तो कृत्तिकादि छतां तेनुं नाम ते नक्षत्रना आ अक्षरोने अनुसारे नथी पण 'टाहा, कान्हा, चाचा' आदि प्रसिद्ध छे, तेवाने त्रण कोष्टक लिखित नामो पैकी कोईनी साथे लहेणुं, कोईनी साथे वर्ग, तो कोईनी साथे बंने वातो पण मलती नथी, तेथी फरिथी ऋषभादि २४ जिननामोनी साथे जोतां घणो ज विलंब थाय अे कारणे चोथा कोष्टकमां ते जिननामो लखेलां छे, के जेमनी साथे मथारे लखेल अक्षरोना नक्षत्रवाला माणस के गामनी साथे योनि, गण, राशि, अने नाडिनो मेल छे, जो तेना प्रसिद्ध नामाक्षर वर्गथी चोथा कोष्टकमां लखेल जिन नामो पैकीना कोइ नाम के नामोनी साथे लहेणुं मलतुं होय अने वर्ग बैर न होय तो आ कोष्टकस्थित नाम अथवा नामो अनुकूल छे अेम कही शकाय अेटला माटे आ कोष्टकमां चतुर्वर्ग शुद्ध, अथवा शुद्ध प्रायः जिननामो लखेलां छे.

वर्ग विरोध दोषना कारणे 'ज्व-बव' (ज्व अटले वर्गमेल नथी बव अटले धनिकनो वर्ग बलवान छे) इत्यादि संकेत करीने तृतीय प्रमुख कोष्टकोमां लखेलां जिननामोनी साथे धनिकना प्रसिद्ध नामथी वर्ग मैत्री होय तो ते नामो प्रथमादि भागे जाणवां.

नाडिवेध तो सर्वत्र अवश्य टालवो ज जोईये.

संज्ञा विवरण—

जेम क का, कि की, कु कू, के कै, को कौ, आम 'क' व्यंजननी जोडे ह्रस्व-दीर्घ स्वरो लगाडी १० अक्षरो करवामां आव्या छे ते ज प्रमाणे 'ख' ने पण ह्रस्व-दीर्घस्वरो लगाडीने 'ख खा खि खी खु खू खे खै खो खौ' आ प्रमाखे १० अक्षरो बनाववा, ह्रस्वाक्षरो जे कोठामां होय तेना सवर्ण दीर्घ पण ते ज कोठामां समजवा, जेम 'ग-गि' ना

કોઠામાં 'ગગા-ગિગી', 'ગુ-ગે' ના કોઠામાં 'ગુગુ-ગે ગૈ', તથા 'ગો' ના કોઠામાં 'ગો ગૌ' ઇત્યાદિ.

જ્યાં 'ઘ' 'છ' આદિ એક જ અક્ષર લખેલ છે, ત્યાં ૧૦ નો આંક છે, એથી સમજવાનું કે આના ' ઘ ઘા ઘિ ઘી ઘુ ઘૂ ઘે ઘૈ ઘૌ ઘૌ' આ દસે અક્ષરો એ કોઠામાં છે જ્યાં 'ડતા, ડયો, ડગ, ડબ' ઇત્યાદિ છે, ત્યાં 'ડ' એ નિષેધ અર્થમાં લુપ્ત અક્ષર છે 'તા' 'યો,' 'ગ,' 'ઘ,' અક્ષરો અનુક્રમે ધનિકની 'તારા-યોનિ-ગણ અને વર્ગ' વાચક છે. આ અક્ષરોની આદિમાં આવેલ 'ડ' અર્થાત્ 'અક્ષર' તારાયોનિ-ગણવર્ગના આનુકૂલ્યનો નિષેધ સૂચવે છે. અર્થાત્ 'ડતા' એટલે તારાવ-લનો અભાવ, ઇત્યાદિ.

જ્યાં 'ડતા' લખેલ હોય ત્યાં 'ધનીકની' અને જ્યાં 'ડ્દેતા' હોય ત્યાં 'દેવની તારા સારી નથી' એમ મમજવું. 'ડતા' માં દેવની અને 'ડ્દેતા' માં ધનિકની તારા અનુકૂલ છે એ અર્થતઃ સિદ્ધ સમજવું, પરંતુ ધારણાગતિમાં 'તારાદોષ' વિચારાતો નથી, વિંચ નિર્માણના અધિકારમાં યોનિ આદિ ૬ વાતો જ જોવાનું કથન છે. પૂજ્ય શ્રી ગુણસ્તનસુરિજીએ ધારણાયંત્રકોમાં તારાદોષ લખ્યો છે પણ તેનો હેતુ સમજાતો નથી, અહિં લખવાનું કારણ તો તેમના યંત્રકનું અનુસરણ માત્ર છે, એથી જ 'ડ્દેતા' ઇત્યાદિ 'તારાદોષ' જણાવેલ હોવા છતાં તે જિનનામો પ્રથમ યંત્રોમાં જણાવેલાં છે.

જ્યાં દેવ તથા ધનિકનું નક્ષત્ર એક જ છે ત્યાં યોનિ આદિ સર્વ વાતોની શુદ્ધિ હોવાથી, તેમજ ઘણા પૂર્વાચાર્યોની સંમતિથી ગ્રાહ્ય હોવા છતાં આજકાલ એ વિષયમાં કેટલાકો વિવાદ કરે છે, તે વિવાદના નિવારણાર્થે પ્રથમ વીજાં નામો ગ્રાહ્ય થાઓ એ આશયથી તેવાં નામો નિર્દોષ છતાં પ્રથમ ભાગે લખેલ વીજા નામોના અન્તમાં લખ્યાં છે.

‘ પ્રો૦૬-૮।પ્રી૦૨-૧૨’ ઇત્યાદિ સ્થલે દેવ તથા ધનિકના રાશિપતિયોને પરસ્પર પ્રીતિ છે એમ સમજવું, જ્યાં ૭-૭ આદિમાં રાશિ મૈત્રી છે ત્યાં રાશિપતિ મૈત્રીનો વિચાર કર્યો નથી, પણ જ્યાં ષડષ્ટક, વીયાત્રારું, નવમપંચમમાં રાશિ મૈત્રી નથી ત્યાં તે રાશિયોના સ્વામીયોની મૈત્રી જોઈને નામ ગ્રહણ કરવું જોઈએ એમ ધારી તેવાં નામો વીજા ભાંગા આદિના કોષ્ટકોમાં લખ્યાં છે. તેમાં પણ પ્રીતિ નવ પંચમથી પ્રીતિ વીયાત્રારું, અને તેનાથી પણ પ્રીતિ ષડષ્ટક વિશેષ સારું હોય છે. તેમાં પણ જ્યાં દેવરાશિથી ધનિકરાશિ નિકટ અને ધનિકરાશિ થી દેવરાશી દૂર હોય તે નવ પંચમાદિ ગ્રહણ કરવું, વીજું નહિ, તેવા પ્રકારનું ન મળે તો ક્વચિત્ તેવું પણ લેવું. દેવરાક્ષસ રૂપ ગણવૈર પણ લોકમાં વર-કન્યાદિકને વિષે ગ્રાહ્ય કર્યું છે, ‘ડમ’ ઇટલે દેવરાક્ષસરૂપ ગણવૈર છે એમ સમજવું ‘ડયો’ ‘ડવ’ ઇટલે ધનિકને દેવસંબંધી ‘યોનિ’ તથા ‘વર્ગ’ અનુકૂલ નથી. ‘વગ’ ‘વયો’ ‘વવ’ નો અર્થ ધનિકનો ગણ, યોનિ, વર્ગ, દેવના ગણ યોનિ વર્ગ કરતાં બલિષ્ઠ છે એમ જાણવું, અતિનિર્બલથી બલિષ્ઠનો પરાભવ થઈ શકતો નથી, એ અભિપ્રાયથી ધનિકનો માર્ગારાદિ બલિષ્ઠ વર્ગ દેવના ંદુરાદિ અલ્પબલી વર્ગથી પરાજિત થઈ શકતો નથી. તેથી આવા પ્રકારનું ગણતર અને વર્ગવૈર ત્રીજે ભાગે ગ્રાહ્ય કર્યું છે.

‘ડવયો’ ‘ડવવ’ ઇટલે ધનિકની યોનિ તથા વર્ગ નિર્બલ છે એમ જાણવું, પરંતુ એ વિશિષ્ટ દોષ નથી, કેમકે ‘જાતિવૈર’ નથી, શાસ્ત્રમાં યોનિ સંબંધી જાતિવૈર અને વર્ગસંબંધી હતરેતર પંચમ વર્ગને જ વજ્યો છે. લોકમાં પણ એ વિષયમાં આવીજ માન્યતા છે.

આ યંત્રકમાં बहुश्रुतोना विचारानुसार यथा शुद्ध અને यथा-
ल्पदोष जिननामो च्यारे कौष्टकोमां लख्यां છે.

। इति धारणागतियंत्रकाम्नायः ।

जिननाम-वर्ण-लांछन-नक्षत्र-राशि

अंक	नाम	देहवर्ण	लांछन	नक्षत्र	राशि
१	ऋषभ	सुवर्णाभि	वृषभ	उत्तराषाढा	धनुः
२	अजित	सुवर्णाभि	गज	रोहिणी	वृष
३	संभव	सुवर्णाभि	अश्व	मृगशिरा	मिथुन
४	अभिनन्दन	सुवर्णाभि	वानर	श्रवण	मकर
५	सुमति	सुवर्णाभि	क्रौंच	मघा	सिंह
६	पद्मप्रभ	रक्तवर्ण	कमल	चित्रा	कन्या
७	सुपार्श्व	सुवर्णाभि	स्वस्तिक	विशाखा	तुला
८	चन्द्रप्रभ	धवलवर्ण	चन्द्र	अनुराधा	वृश्चिक
९	सुविधि	धवलवर्ण	मकर	मूल	धनुः
१०	शीतल	सुवर्णाभि	श्रीवत्स	पूर्वाषाढा	धनुः
११	श्रेयांस	सुवर्णाभि	गंडक	श्रवण	मकर
१२	वासुपूज्य	रक्तवर्ण	महिष	शतभिषा	कुंभ
१३	विमल	सुवर्णाभि	वराह	उत्तराभाद्रपदा	मीन
१४	अनन्त	सुवर्णाभि	श्येन	स्वाति	तुला

१५	धर्म	सुवर्णाभ	वज्र	पुण्य	कर्क
१६	शान्ति	सुवर्णाभ	मृग	भरणी	मेष
१७	कुन्धु	सुवर्णाभ	छाग	कृत्तिका	वृषभ
१८	अर	सुवर्णाभ	नन्दावर्त	रेवती	मीन
१९	मह्लि	प्रियंगुवर्ण	कलक्ष	अश्विनी	मेष
२०	मुनिसुव्रत	कृष्णवर्ण	कूर्म	श्रवण	मकर
२१	नमि	सुवर्णाभ	नीलो- त्पल	अश्विनी	मेष
२२	नेमि	कृष्णवर्ण	शंख	चित्रा	कन्या
२३	पार्श्व	प्रियंगुवर्ण	सर्प	विशाखा	तुला
२४	महावीर	सुवर्णाभ	सिंह	उत्तराफाल्गुनी	कन्या

नामका- आद्याक्षर	अ आ इ ई उ ऊ ए ऐ ओ औ	क का कि की	कु कू	के कै को की	ख खि खु खे खो
१ ले भांगे जिननाम	वासुपूज्य ३ चन्द्र १ स्ता विद्यो० लभ्य, स्देता स्देता श्रीकृष्ण० ॥	नाम १ ॥ स्देता मुनिमुत्रत २ श्री ६।८ बलिबर्ग.	मुनिमुत्रत २ श्री ६।८ स्देता, बव	मुनिमुत्रत २ श्री ६।८ स्ता, बव	नाम १ ॥ स्ता मुनिमुत्रत २-बव
२ भांगे जिननाम	महा २ श्री ९।५ वर्धमान ३ श्री ९।५				
३ भांगे जितनाम	विमल ३, श्री विमल ३ बग पद्मम २ २।१ २, बग, ५-स्देता, महा २ ॥ देता चंद्र-१, प्रा श्री ९।५, बग ६।८, ५ग, स्देता	गहावीर २ स्देता, बव.		पाश्च २, श्री ९।५, ५ग, बव महावीर २ श्री ९।५ बव	धर्म १ ॥ बयो स्ता, महावीर २ श्री ९।५ बव
नामान्तरो- पयोगी जिननाम	सुविधि श्री ९।५ धर्म ५ग स्देता स्देता स्वयो चन्द्रप्रभ ५ग शान्ति बग स्देता. धर्म ५ग स्देता नमि ५ग स्देता.	अर्थमान स्देता शंभवशीतलस्देता, अभिनंदन स्ता शान्ति अनंत-अर अनंत स्ता स्देता, आदि स्ता, अर स्ता श्रेयांस श्री ६।८ स्दे- श्रेयांस श्री ६।८ ता, विमल बयो स्ता संभव-जित श्री २।१ २ अजित श्री २।१ २ शंभव श्री २।१ २	अर्थमान स्देता शंभवशीतलस्देता, अभिनंदन स्ता शान्ति अनंत-अर अनंत स्ता स्देता, आदि स्ता, अर स्ता श्रेयांस श्री ६।८ स्दे- श्रेयांस श्री ६।८ ता, विमल बयो स्ता संभव-जित श्री २।१ २ अजित श्री २।१ २ शंभव श्री २।१ २	विमल-आदि शान्ति स्देता स्देता शंभवस्दे चन्द्रप्रभ स्ता ता शीतल स्ता, शंभव श्री ६।८ शान्ति स्ता, अनंत स्ता, अर स्ता, अ- श्रेयांस श्री ६।८ स्ता, अजित श्रेयांस श्री ६।८ स्ता, अजित श्री २।१ २ स्देता विमल ५ग बयो	

गति	गुणे	गो	घ १० ङ १०	च चि	चु चे चो	छ १०	ज जि जु जे जो
पार्थ २ व व	पार्थ २ प्री १५ स्ता व व	नेमि १॥ प्री ६८ स्वयो	मुनिसुव्रत २ प्री ६८ स्वेता व व	महा १॥ स्वेता	वर्म १ स्वेता मुनि १॥ स्वेता नमि १ मल्ली १॥	मुनि १॥ प्री ६८ स्वेता	धर्म १ स्वेता नमि १ स्वेता मल्ली १॥ स्वेता
		पद्मप्रम २ प्री ६८ स्वयो व व		नमि १ प्री २ १२ मल्ली १॥ प्री २१२			
	महा २ प्री ६८ स्वेता वयो वग व व	पार्थ २ प्री १५ स्वयो व व		धर्म १ प्री १५ ५, चन्द्रप्रम प्री १५	चन्द्रप्रम प्री ६८ स्वेता		महा १॥ प्री १५
सुपार्थ स्ता वासुपूज्य प्री २१२ वयो कुंभु प्री १५ वयो स्वेता जित प्री १५ व गण	सुमति स्ता कुंभु स्ता वासु सुपार्थ प्री १५ स्वयो, अजित स्वे ता वग शीतल स्वे वग, आदि शांति स्वेता व ग	सुमति स्ता कुंभु स्ता वासु सुपार्थ प्री १५ स्वयो, अजित स्वे ता वग शीतल स्वे वग, आदि शांति स्वेता व ग	शंभव शीतल स्वेता, शांति स्वेता, अंत स्वेता, अर स्वेता, आदि स्वेता, श्रयां- स प्री ६८ स्वेता, त्रिमल स्ता वयो अजित प्री २१२ स्वेता.	विमल, शं- भव स्वेता अभिनंदन स्वेता शीतल स्ता, अंत अर शांति प्री २१२	शांति, श्रयांस स्वेता, शंभव स्ता, अनंत प्री २१२, अर प्री २१२, वि- मल प्री २१२ स्वेता, शीतल प्री १५ आदि प्री १५ स्ता.	शंभव शां- ति स्वेता, शीतल स्वे- ता, आदि स्ता, श्रयांस प्री ६८ स्वेता, वि- मल वयो स्ता, अजित प्री २१२ स्वेता	शांति, चन्द्र- प्रम स्वेता, विमल स्वेता, अभिनंदन प्री ६८ स्ता.

શ્ર ૧૦	ટ ટિ રૂ	દે	ટા	ઠ ૧૦	હ	હિ હુ હે હો
મહા ૧ ॥ ૬તા	અનંત ૨ ॥ પ્રી ૬૮ ૬દેતા અર ॥ પ્રી ૬૮ ૬દેતા.	અજિત ૨ ॥	આદિ ૨ ॥, ધર્મ ૦ ॥ ૬દેતા, અનંત ૨ ॥ ૬તા, અર ૨ ॥	આદિ ૨ ॥ અનંત ૨ ॥ ૬દેતા અર ૨ ॥ ધર્મ ॥ ૬તા	અજિત ૨ ॥ ૬દેતા નમિ ॥ ૬તા ધર્મ ॥	નેમિ ॥ ૬દેતા
નમિ ૧ પ્રી ૨ ૧૨ ૨ ૬તા, મહિ ૧ ॥ પ્રી ૨ ૧૨ ૨ ૬તા.	નમિ પ્રી ૧ ૫ આદિ ૨ પ્રી ૧ ૫	અનંત ૨ ॥, અ ૨ ॥ પ્રી ૬ ૮ ૬તા ધર્મ ॥ પ્રી ૨ ૧ ૨ ૬દેતા શંભવ ૨ ૬તા વવ	અજિત ૨ ॥ પ્રી ૧ ૫ શીતલ ૨ વવ	અજિત ૨ ॥ પ્રી ૧ ૫ શંભવ ૨ વવ	આદિ ૨ ॥ પ્રી ૬ ૮ ૬તા અનંત ૨ ॥ પ્રી ૧ ૫ અર ૨ ॥	મુવિધિ ૨ પ્રી ૬ ૮ વયો વવ
અભિનંદન-અ- નંત અ-અજિ- ત ૬દેતા, આ- દિ ૬તા, વર્ધમા- ન ૬તા, વિમલ શ્રેયાંસ ૬દેતા ૬યો ।	અભિનંદન-અ- નંત અ-અજિ- ત ૬દેતા, આ- દિ ૬તા, વર્ધમા- ન ૬તા, વિમલ શ્રેયાંસ ૬દેતા ૬યો ।	આદિ ૨ ॥ પ્રી ૧ ૫, શાંતિ ૨ પ્રી ૧ ૫ વવ, શીતલ ૨ પ્રી ૧ ૫ વવ	શંભવ ૨ ૬તા વવ શ્રેયાંસ ૨ પ્રી ૧ ૫ વવ	શીતલ ૨ ૬દેતા વવ, શ્રેયાંસ ૨ પ્રી ૧ ૫ વવ		શાંતિ ૨ વગ વવ ૬તા વવ ૬દેતા મહા ૦ વગ ૬દેતા વિમલ પ્રી ૧ ૫ વગ ચંદ્ર પ્રી ૧ ૫ ૬ગ

दे दी	ध १०	न ति नु ने	नो	प पि	पु	पे पो	फ १०
विमल १, शंभव शीतल १॥ मुनि ॥ उदे- १॥ उदेता वर्षमान १ ता, श्रेयांस महा ॥, शीत महावीर ॥ १॥ उदेता, १॥ स्ता	श्री १०	सुमति १॥	श्रीतल १ वर्द्ध ॥	शंभव १ शीतल १	सुविधि १ उदेता शीतल १ वर्द्ध ॥	विमल ॥ उदेता उदेता, विमल ॥ शंभव १ स्ता	महा १॥
नमि १ श्री २ १ २ नमि १, मछि ॥ श्री मछि ॥ श्री २ १ २ मछि ॥ दल स्ता, शान्ति १ ॥ प्रि २ १ २ श्री १ ५ नमि श्री स्ता, धर्म ॥ श्री १ ५	दल स्ता	दल स्ता	श्रेयांस १ श्री १ ५	श्रेयांस १ श्री १ ५	वासु ॥ श्री दल मछि १ ॥ पद्मप्रभ वयो श्री १ ५		
अभि २ उदेता आदि २ स्व, अजित २ शान्ति १ ॥ श्री दल स्व, अनंत २ स्व, अभिनंदन उदेता स्व, स्ता वग, शीतल १ ॥ अर २	२ उदेता ॥ आदि २ श्री श्री २ १ २ स्ता वग, स्व, अनंत २ २ १ २ स्ता, विमल १ श्री १ ५ वग, उदेता, अर २ स्व अनंत २ अजित २ स्ता वग २, उदेता स्व श्री १ ५ स्व आदि २ श्री २ १ २ अर २	उदेता वग स्व	सुगार्थ १ श्री २ १ २ स्ता, पार्श्व श्री २ १ २ स्ता, वर्ष ॥ उदेता वयो वग,				
चंद्रप्रभ श्री १ ५	चंद्रप्रभ	कुंभु उदेता, नमि श्री दल स्ता	आदि धर्म उदेता, आदि अनंत कुंभु श्री १ ५ वयो आदि अभि चंद्र उदेता, अनंत उदेता, अर धर्म उदेता, नेमि आदि नंदन उदेता स्ता, अर स्ता, महा-स्ता, चंद्र स्ता, वग उदेता, अजित अनंत उदेता वीर अजित श्री १ ५, श्री १ ५ वग अर-नमि १ ५ मुनि श्री १ ५ मुनि श्री १ ५ स्ता श्री १ ५				

व	चि	बु	वे	बो	म	भि	शु	भे	भो	म	मि	सु	मे	मो
विमल ॥ स्ता	शंभव १ २।१२, सुनि सुपार्थ १ १ प्री १।५ पत्र २।। स्ता श्रेयां १ प्री १।५	शंभव १ प्री पार्थ २।। स्ता सुनि सुपार्थ १ स्ता पत्र २।। स्ता श्रेयां १ प्री सुविधि १ १।५	महा ॥ वर्द्ध ॥ शीतल १	शीतल १ विमल ॥ स्ता महावीर ॥	शांति १ विमल ॥ स्ता महि ॥ स्ता	वासु ॥ स्ता सुमति १	वर्धमाना ॥ प्री २।१२							
शंभव १ प्री २।१२	महा १, वर्द्ध ॥ प्रा १।५ स्ता	महा ॥ वर्द्ध ॥ प्री १।५	महि ॥ स्ता	शंभव १ वयो १ स्ता महा ॥ प्री १।५ वर्द्ध ॥ प्री १।५	शांति १ महि ॥ स्ता	सुमति १ प्री १।५	महि प्री १।५							
महा १ प्री १।५, वर्ध ॥ प्री १।५	वासुपूज्य शीतल १ बग विमल ॥ बयो बग १ स्ता शांति १ प्री १।५ व गण	शीतल १ बग विमल ॥ बयो बग १ स्ता शांति १ प्री १।५	शांति १ प्री १।५ महि ॥ प्री १।५ स्ता	शांति १ प्री १।५ महि ॥ प्री १।५ स्ता	पत्र २ प्री २।१२, स्ता, सुविधि १ प्री १।५, विमल प्री ६।८ बग स्ता, शांति प्री १।५ बग, शीतल १ प्री १।५ बग									
धर्म १ स्ता, चं द्रप्रभ १ स्ता अजित	अजित अनंत स्ता स्ता अभिन्दन प्री २।१२ स्ता	नेमिनाथ १ स्ता, आदिनाथ १ अभिन्दन १ स्ता स्ता अनंत १ स्ता अभिन्दन प्री २।१२ स्ता	नेमिनाथ-अ- अभिन्दन १ स्ता, धर्म १ स्ता धर्म १ स्ता अभिन्दन १ स्ता अनंत १ स्ता अभिन्दन प्री १।५ स्ता	अभिन्दन १ स्ता अनंत १ स्ता अभिन्दन प्री २।१२ स्ता	नेमिनाथ १ स्ता, आदिनाथ १ अभिन्दन १ स्ता स्ता अनंत १ स्ता अभिन्दन प्री २।१२ स्ता	नेमिनाथ १ स्ता, आदिनाथ १ अभिन्दन १ स्ता स्ता अनंत १ स्ता अभिन्दन प्री २।१२ स्ता	नेमिनाथ १ स्ता, आदिनाथ १ अभिन्दन १ स्ता स्ता अनंत १ स्ता अभिन्दन प्री २।१२ स्ता	नेमिनाथ १ स्ता, आदिनाथ १ अभिन्दन १ स्ता स्ता अनंत १ स्ता अभिन्दन प्री २।१२ स्ता	नेमिनाथ १ स्ता, आदिनाथ १ अभिन्दन १ स्ता स्ता अनंत १ स्ता अभिन्दन प्री २।१२ स्ता	नेमिनाथ १ स्ता, आदिनाथ १ अभिन्दन १ स्ता स्ता अनंत १ स्ता अभिन्दन प्री २।१२ स्ता	नेमिनाथ १ स्ता, आदिनाथ १ अभिन्दन १ स्ता स्ता अनंत १ स्ता अभिन्दन प्री २।१२ स्ता	नेमिनाथ १ स्ता, आदिनाथ १ अभिन्दन १ स्ता स्ता अनंत १ स्ता अभिन्दन प्री २।१२ स्ता	अनंत प्री ६।८ स्ता असमी ६।८ स्ता, नमि प्री १।५, आ दि प्री १।५	

य यि यु सुमति ॥ कुंथु १ ॥ ज्ञेता	ये यो सुपार्थ ॥ ज्ञा सुविधि ॥	र रि सुमति ॥ ज्ञेता सुविधि ॥ ज्ञेता सुपा ॥ ज्ञा	रु रे रो ज्ञाति ॥ ज्ञेता शीतला ॥ ज्ञेतास ॥ भव ॥ ज्ञा	ल ज्ञाति ॥ श्रयां- ज्ञेतास ॥ ज्ञेता, शं- भव ॥ ज्ञा	लि लु ले ली श्रयांस ॥ ज्ञा ज्ञाति ॥	व वि वु शंभव ॥ प्री २।१२	वे वो शंभव ॥ प्री २।१२
शति प्री ६।८ ज्ञा बग	सुमति ॥ प्री ९।५	कुंथु १ ॥ प्री ६।८ ज्ञेता बयो	वर्द्ध १ प्री २।१२ ज्ञा, शंभव ॥ प्री ९।५	विमल ॥ प्री २।१२ ज्ञेता, शीतल ॥ प्री ९।५	विमल ज्ञा	श्रयांस ॥ प्री ९।५	
शति प्री ६।८ ज्ञा बग	व गण ज्ञाति ॥ प्री ९।५ बग प्री २।१२ बयो ज्ञेता बग	वासु १ प्री ९।५ बयो, वर्द्ध १ प्री २।१२ बयो ज्ञेता बग	चंद्र २ प्री ६।८ ज्ञेता ज्ञ	चंद्र २ प्री ६।८ ज्ञेता ज्ञ	चंद्र २ ज्ञा वर्द्ध ज्ञ वर्द्ध प्री ९।५	अजित अनन्त ज्ञा, अर ज्ञा, सुनि प्री ९।५, अभिन्दन प्री २।१२ ज्ञा, महा प्री ९।५ ज्ञेता	
धर्म प्री ९।५ ज्ञा, अजित बग ज्ञा, आदि प्री २।१२ बग ज्ञे- ता, विमल प्री ९।५ बग	पार्थ ज्ञा. नेमि ज्ञा, पद्म ज्ञा प्री २।१२, नेमि प्री २।१२ अजित बग विमल बयो बग ज्ञेता	पार्थ ज्ञा, पद्म प्री २।१२ अजित बग आदि ज्ञेता बग	महाधर्म ज्ञा, महा धर्म प्री २।१२ ज्ञा अभिन्दन प्री ९।५ नमि बयो ज्ञा महि बयो ज्ञा	धर्म ज्ञा, महा धर्म प्री २।१२, अजित महा प्री ९।५	नमि महि अ- भिन्दन ज्ञेता, अं- सुनि ज्ञा, अं- त अग्नी २।१२ ज्ञेता, आदि प्री ९।५	अजित अनन्त ज्ञा, अर ज्ञा, सुनि प्री ९।५, अभिन्दन प्री २।१२ ज्ञा, महा प्री ९।५ ज्ञेता	

श १०	ष १०	स सि सु	से सो	ह	हि	हृ हे हो
अभिन्दन ॥ अनन्त ॥ अर ॥ अजिता ॥ अदि ॥	आदि ॥ अन्त ॥ अर ॥ अदि ॥	कुंथु १ ज्ञा	आदि ॥ इदता अजित ॥ ज्ञा	आदि ॥ इदता, अनन्त ॥ अरा ॥ ज्ञा, शीतल २ ॥ ज्ञा, अभिन्दन ॥	ज्ञा २ ॥ अजित ॥ श्रेयांस २ ॥ ज्ञा	अजिता ॥ अदि ॥ अन्त ॥ अर ॥
	चंद्र १ ॥ ज्ञा, अजित ॥ श्री १५	सुमति ज्ञा, सुपाश्च श्री १५ इवयो	चंद्र १ ॥ वयो	श्रेयांस २ ॥ ज्ञा, अजित ॥ श्री २१२ ज्ञा	आदि ॥ श्री ज्ञा, अन्त ॥ शीतल २ ॥ श्री ६८ ज्ञा	आदि ॥ श्री ६८ ज्ञा, अन्त ॥ श्री १५, अर ॥ श्री १५
		अजित ॥ वग इदता आदि ॥ वग ज्ञा			अन्त ॥ श्री १५ अर ॥ श्री १५ - ५ ज्ञा	कुंथु १ ज्ञा
महावीर ज्ञा, विमल नमि श्री २१२ ज्ञा, म- छि श्री २१२ ज्ञा, श्रेयांस इयो इदता	शंभव-शीतल इदता, धर्म ज्ञा विमल ज्ञा, श्रे- यांस श्री १५ मुनि प्रा १५	पद्मप्रभ श्री ६८ इवयो, नेमि श्री ६८ इवयो, वासुपूज्य-पार्श्व श्री १५ इवयो, शान्ति- शीतल वग इदता	शीतल ज्ञा, श्रेयांस-मुनि- सुव्रत श्री २१२ ज्ञा, शान्ति वयो ज्ञा, शंभव श्री १५ इदता	विमल - मुनिसुव्रत श्री ६, ८ ज्ञा	चंद्र १ ॥ श्री १५ धर्मनाथ मुनिसुव्रत ज्ञा, विमल श्री १५	नर्म ज्ञा, मछि ज्ञा महावीर वर्धमान-ज्ञा धर्म

श्रे०	श्रव०	वानर	देव	२२	मकर	शनि	श्रे	मेष	८	श
शी०	पू०षा०	वानर	मानव	२०	धनुः	गुरु	शी	मेष	८	श
सु०	मूल	श्वान	राक्षस	१९	धनुः	गुरु	सु	मेष	८	श
चं०	अनु०	मृग	देव	१७	शुक्र	मंगल	चं	सिंह	३	च
सु०	विशा०	व्याघ्र	राक्षस	१६	तुला	शुक्र	सु	मेष	८	श
प०	चित्रा	व्याघ्र	राक्षस	१४	कन्या	बुध	प	उंदर	६	प
सु०	मघा०	उंदर	राक्षस	१०	सिंह	सूर्य	सु	मेष	८	श
अ०	पुन०	मार्जार	देव	७	मिथुन	बुध	अ	गरुड	१	अ
शं०	मृग०	सर्प	देव	५	मिथुन	बुध	शं	मेष	८	श
अ०	रोही०	सर्प	मानव	४	वृष	शुक्र	अ	गरुड	१	अ
आ०	उषा०	नकुल	मानव	२१	धनुः	गुरु	क	गरुड	१	अ
जिननाम	नक्षत्र	योनि	गण	तारा	राशि	राशि- स्वामी	आद्याक्षर	वर्गेश		वर्ग

वा०	शत०	अश्र	राक्षस	२४	कुंभ	शनि	वा	मृग	७	य
वि०	उ०भा०	छाग	मानव	२६	मीन	गुरु	वि	मृग	७	य
अ०	रेव०	हस्ती	देव	२७	मीन	गुरु	अ	गरुड	१	अ
ध०	पुण्य	छाग	देव	८	कर्क	चंद्र	ध	सर्प	५	त
शां०	भर०	हस्ती	मानव	२	मेष	मंगल	शां	मेष	८	श
कुं०	कृत्ति०	छाग	राक्षस	३	वृष	शुक्र	कुं	मार्जार	२	क
अ०	रेव०	हस्ती	देव	२७	मीन	गुरु	अ	गरुड	१	अ
म०	अश्रि०	अश्र	देव	१	मेष	मंगल	म	उंदर	६	प
मु०	श्रव०	वानर	देव	२२	मकर	शनि	मु	उंदर	६	प
न०	अश्रि०	अश्र	देव	१	मेप	मंगल	न	सर्प	५	त
ने०	चित्रा	व्याघ्र	राक्षस	१४	कन्या	बुध	ने	सर्प	५	त
पा०	विशा०	व्याघ्र	राक्षस	१६	तुला	शुक्र	पा	उंदर	६	प
व०	उ०भा०	गौ	मानव	१२	कन्या	बुध	व	मृग	७	य

परिच्छेद सोलमो

—: मुहूर्त लक्षण :—

चैत्यसत्कमुहूर्तानि, भूम्याम्भादिकानि हि ।
प्रतिमास्थापनान्तानि, वर्ण्यन्तेऽत्र समासतः ॥१७॥

भा०टी०—जिन चैत्य (प्रासाद) संबन्धी खात मुहूर्तैथी मांडीने प्रतिमा स्थापन सुधीनां तमाम मुहूर्तो आ परिच्छेदमां संक्षेपथी वर्णन कराय ले.

मुहूर्तनो विषय अति विशाल छे, एना निरूपणमां थुं लेवुं अने थुं नहि ए विषय विचारणीय थुं पडे छे, प्राचीन शिल्प संहिताओमां ज्योतिषनी सविस्तर चर्चा करेली छे, एथी समजाय छे के शिल्पकारो ज्योतिष विद्याने पण शिल्प विद्यानुं एक अंग गगना हता. मध्यम कालीन अने आधुनिक विद्वानोए पण पोताना ग्रन्थोमां ए वस्तुनुं स्मरण कर्षुं छे, एटले अमो पण प्रासादनी साथे संबद्ध मुहूर्तानी चर्चा करवी योग्य धारीये छीये.

‘मुहूर्त’ शब्दनो पारिभाषिक अर्थ दिन तथा रात्रि प्रत्येकनो पंद्रमो भाग एवो थाय छे. पूर्वं ज्यारे पंचांग शुद्धि तथा लग्ननो प्रचार न हतो त्यारे प्रत्येक कार्य नक्षत्र अने मुहूर्त बलथी ज करातुं हतुं. आज मुहूर्तनो विशेष आदर नथी, छतां ज्योतिष शास्त्रमां आजे य मुहूर्तनुं नाम मोखरे छे, आ कारणथी ज अमोए ‘मुहूर्त’ शब्दने पसंद कर्यो छे.

दिवस—रात्रिना १५-१५ मुहूर्तो—पूर्व अने आज काल पण ६० घडीना अहोरात्रना १ त्रिंशंशने मुहूर्त कहेता अने कहे छे; पण आ मुहूर्तो २ घडीनां मनाय छे अने दिनमान अथवा रात्रिमान

वधवा घटवाथी दिनरात्रिना मुहूर्तो वधे घटे छे, पण प्रकृत मुहूर्तोनि अंगे एम गणातुं नथी, “पञ्चदशांशो दिवसे, क्षणमानं तत् त्रियामायां ” इत्यादि विधानो प्रमाणे दिन-रात्रिमानना वधवा घटवाथी तेओना क्षणोनुं मान पण वधारे ओळुं थाय छे.

आ मुहूर्तो वधा शुभं अथवा अशुभ होता नथी, परंतु तेओना स्वामिओनी शुभाशुभ प्रकृतिने अनुसार ते केटलाक शुभ अने केटलाक अशुभ पण होय छे.

दिवस रात्रिना मुहूर्तोना स्वामीओ प्राचीन उजोतिषमां नीचे प्रमाणे बताव्या छे—

शिव-सर्प-मित्र-पितरो, वसु-जल-विश्वा-ऽभिजिद्गृहिणः।

सुरपः-ऽदिदेव-दनुजाः, शम्बर नामाऽर्यमाख्य-भगाः ॥१॥

दिवसमुहूर्ताः कथिता, दशपञ्चमिता स्तथैव रात्रेश्च ।

रुद्राज द्विपादेवाऽहिर्बुध्न्याख्यास्ततश्च पूषाख्यः ॥२॥

अश्वि-यम-वह्नि-घातृ-सुधाकरास्त्वदिति-सुरमन्त्री ।

हरि-स्तोक्ष्णकर-त्वष्टृ-प्रभञ्जनाश्चेति पञ्चदश ॥३॥

भा०टी-१ शिव, २ सर्प, ३ मित्र, ४ पितृ, ५ वसु, ६ जल, ७ विश्वदेव, ८ अभिजित, ९ विधाता, १० इन्द्र, ११ इन्द्राग्नी. १२ राक्षस, १३ शम्बर, १४ अर्यमा अने १५ भग; आ पंदर दिवस मुहूर्तोना स्वामी कथा छे, एज रीते रात्रिमुहूर्तेना पण १५ छे जे आ प्रमाणे—

१ रुद्र, २ अजद्विपाद, ३ अहिर्बुध्ना, ४ पूषा, ५ अश्विनी-कुमार, ६ यम, ७ अग्नि, ८ घाता, ९ चन्द्र, १० अदिति, ११ बृहस्पति, १२ विष्णु, १३ सूर्य, १४ त्वष्टा अने १५ वायु; ए पंदर रात्रि मुहूर्तोना स्वामी छे.

मुहूर्तमान अने तेओनो कार्य प्रदेश-क्षणोनु समय-
मान अने तेओना कार्यप्रदेशनु नीचेना श्लोकोमां निरूपण
कर्युं छे—

पञ्चदशांशो दिवसे, क्षणमानं तत्त्रियामायाः ।

नक्षत्रेश्वरसदृशे, क्षणे च तन्नाम विष्णुयं तत् ॥ ४ ॥

यत्कर्म कथितमृक्षे, यस्मिंस्तत्कर्म तत्क्षणे कार्यम् ।

दिक्शूलादिकमखिलं, पारिघदण्डं च विज्ञेयम् ॥ ५ ॥

भा०टी०-दिवस माननो पंदरमो भाग ते दिवसक्षणनुं कालमान
अने रात्रिमाननो पंदरमो भाग ते रात्रिक्षणनुं कालमान होय छे,
नक्षत्र स्वामीने मलता स्वामीवाला मुहूर्तने तेना स्वामित्व वालुं
नक्षत्र मानीने ते नक्षत्रनां सर्व कार्यो तेना ते क्षणमां करवां, दिशा-
शूल, पारिघदण्ड, आदि सब नक्षत्र संबन्धी वातो तत्स्वामिक
क्षणोमां करवां.

दिवस विभागना अशुभ-शुभ मुहूर्तो-दिवसना कया
कया मुहूर्तो अशुभ होई शुभ कार्योमां वर्जवा अने कया शुभ होई
शुभ कामोमां लेवा जोईये तेनुं निरूपण आ प्रमाणे छे—

निर्ऋति-पितृ-सर्पाख्या, रौद्रेन्द्राग्नीश्वराख्यभगाः ।

पापमुहूर्तास्त्वेते, शुभकर्मणि दुःख-शोकदा नित्यम् ॥६॥

द्युमुहूर्तास्त्ववशिष्टाः, सौम्याः शुभदाश्च मङ्गले वृत्तम् ।

शान्तिक-पौष्टिक कर्मसु, विशेषतस्तत्प्रदाः सततम् ॥ ७ ॥

भा०टी०-निर्ऋति स्वामिक (१२मो), पितृ स्वामिक (४थो),
सर्पस्वामिक (२जो), रुद्रस्वामिक (१लो), इन्द्राग्नि स्वामिक (११मो)
अने भग स्वामिक (१५मो मुहूर्त); आ छ पाप मुहूर्तो छे, आ

मुहूर्तो शुभ कामोमां लेवाथी नित्य दुःख अने शोक आपनारा थाय छे, बाकी रहेला दिवस मुहूर्तो सौम्य छे अने मंगल कार्योमां निश्चितपणे शुभफल आपनारा निवडे छे, शान्तिक पौष्टिक कार्योमां आ मुहूर्तो लेवाथी ते निरंतर विशेष पणे शान्तिकपौष्टिकना आपनारा थाय छे.

रात्रिभिभागना अशुभ-शुभ मुहूर्तो—

रात्रिमुहूर्तास्त्वजपाद्, रौद्राग्नेयाख्य ग्राम्यसंज्ञाश्च ।

क्रूरतराश्चत्वार-स्वनिष्टदास्त्विष्टदास्त्वपरे ॥ ८ ॥

भा०टी०—रात्रि मुहूर्तो पैकीना अजपाद स्वामिक (२जो), रुद्र स्वामिक (१लो), अग्नि स्वामिक (७मो) अने यम स्वामिक (६ठो); आ ४ मुहूर्तो अतिक्रूर अने अनिष्ट दायक होय छे, अने शेष ११ मुहूर्तो शुभदायक होय छे.

वार परत्वे वर्जनोय मुहूर्तो—वार विशेषे पण मुहूर्त विशेष धरित करेल छे जेनुं स्पष्ट निरूपण निचेना पद्यभां कर्युं छे—

अर्यम्णस्त्वर्कवारे हिमकरदिवसे राक्षस-ब्राह्म संज्ञौ,

पित्र्याग्नीशौक्ष्णौ द्वौ क्षितिस्तुतदिवसे सौम्यवारेऽभिजिच्च ।

दैत्याप्यौ जीववारे भृगुतनयदिने ब्राह्मपित्र्यौ मुहूर्तो;

सार्पेशौ तिग्मरोचिःप्रियस्तुतदिवसे वर्जनीया मुहूर्तोः ॥९॥

भा०टी०—रविवारे—अर्यमस्वामिक (१४ मो), सोमवारे—राक्षस अने ब्राह्म (१२मो अने ९मो), मंगलवारे—पित्र्य अने अग्निस्वामिक (४थो अने रात्रि विभागे ७मो), बुधवारे—अभिजित् (८मो), गुरुवारे—राक्षस अने आप्य (१२ मो अने १३मो), शुक्रवारे—ब्राह्म अने पित्र्य (९मो अने ४थो) अने शनिवारे—सार्प अम

शिवस्वामिक (२जो अने १लो) मुहूर्त वर्जित करवो; आम जे जे मुहूर्तो जे जे वारे वर्जनीय छे ते कखां.

फलितार्थ-उपर्युक्त निरूपणथी जे फलितार्थ निकले छे तेनो सार एटला ज छे के दिवस-रात्रिनो अमुक समय शुभ अने अमुक अशुभ होय छे, शुभ समयमां आरंभेलुं शुभ कार्य सिद्ध थाय छे ज्यारे वर्जित समयमां आरंभेलुं कोई पण शुभ कार्य सिद्ध थतुं नथी. कोई पण दिवसे दिवसना १-२-४-११-१२-१५ मा क्षण सिवायनो शेष समय शुभ होय छे, ज्यारे कोई पण रात्रिमां रात्रिनो १-२-६-७ मो, आ चार क्षणो सिवाय शेष समय शुभ होय छे, एम छतां ते दिवसे वार शो छे ए पण जोशुं अने वार परत्वे वर्जित क्षण होय तो ते शुभ होय तो य वर्जवो, रविवार होय तो १४मो, सोमवारे ९मो, बुधवारे ८मो, गुरुवारे ६ठो, अने शुक्रवारे ९मो क्षण शुभ छे छतां वर्जवो, वार परत्वे रात्रिनो ७मो क्षण वर्जित करेल छे अने ते आमे य रात्रिना ४ वर्जित क्षणो पैकीनो एक छे.

नक्षत्रनो प्रतिनिधि पण क्षण-उपर कहेवायुं छे के पूर्व नक्षत्र अने मुहूर्तना बले सर्व कार्यो करातां हतां, अने अवसर नक्षत्र बलना अभावे नक्षत्रनुं प्रतिनिधित्व पण मुहूर्तने अपातुं हतुं, द्रष्टान्त तरीके अश्विनी नक्षत्र विहित कार्य करवुं छे; पण अश्विनी आजथी पचीसमे दिवसे आववानुं छे, तो शुं त्यां सुधी ए कार्य बंध राखवुं के ते कोई उपायान्तरथी करवुं? आवी परिस्थितिमां मुहूर्तनुं महत्व जणावनार ज्योतिःशास्त्रे मार्ग बतावतां कहुं छे के विहित नक्षत्र नथी अने कार्य करवुं आवश्यक छे तो नक्षत्र आवे त्यां सुधी बेसी रहेवानी जरूरत नथी, नक्षत्र स्वामिक मुहूर्तमां ते कार्य करी लेवुं एटले ते ते नक्षत्रमां ज कर्तुं गणाशे. मुहूर्तशास्त्र आवा नक्षत्र प्रतिनिधि मुहूर्तने ' क्षण नक्षत्र ' एटले के मुहूर्तरूप नक्षत्र कहे छे, वाचकगण

जाणीने आश्चर्यं पामशे के लगभग वधा ज मुहूर्त स्वामियो नक्षत्रोना पण स्वामी छे अने आथी मुहूर्तानुं नक्षत्र-प्रतिनिधित्व सहेतुक छे, मुहूर्तोना स्वामियोनां नामो उपर अपायां छे, हवे नक्षत्र स्वामियोनां नामो पण आपीये एटले विचारको बनेनी एक स्वामिकताने अनुभवे.

नक्षत्र स्वामिओनी क्रमिक नामावली—

नासत्या १ ऽन्तक २ वह्नि ३ धातृ ४ निशिपा

५ रुद्रो ६ ऽदिति ७ अङ्गिराः ८,

वाताशाः ९ पितरो १० भगो ११ ऽर्यम १२ रवी

१३ त्वष्टा १४ समीरः १५ क्रमात् ।

इन्द्राग्नी १६ त्युडुपाश्च मित्र १७ सुरपौ

१८ कोणेश्वरः १९ शम्बरं २०,

विश्वे २१ विष्णु २२ वसूदपा २३-२४ ऽज चरणा २५

ऽहिर्बुध्न्य २६ पूषोभिधाः २७ ॥ १० ॥

भा०टो०-अश्विनीकुमार १, यम २, अग्नि ३, ब्रह्मा ४, चन्द्रमा ५, रुद्र ६, अदिति ७, अङ्गिराः ८, सर्प ९, पितृ १०, भग ११, अर्यमा १२, सूर्य १३, त्वष्टा १४, वायु १५, इन्द्राग्नी १६, मित्र १७, इन्द्र १८, राक्षस १९, जल २०, विश्वेदेव २१, विष्णु २२, वसु २३, जलपति २४, अजचरण २५, अहिर्बुध्न्य २६ अने पूषा २७; ए नामक देवो अनुक्रमे आश्विनी १, भरणी २, कृत्तिका ३, रोहिणी ४, मृगशीर्ष ५, आर्द्रा ६, पुनर्वसु ७, पुष्य ८, अश्लेषा ९, मघा १०, पूर्वाफाल्गुनी ११, उत्तराफाल्गुनी १२, हस्त १३, चित्रा १४, स्वाति १५, विशाखा १६, अनुराधा १७, ज्येष्ठा १८, मूल १९, पूर्वाषाढा २०, उत्तराषाढा २१, श्रवण

२२, धनिष्ठा २३, शतभिषा २४, पूर्वाभाद्रपदा २५, उत्तराभाद्रपदा २६ अने रेवती २७, नक्षत्रोना स्वामीओ छे.

वास्तुकर्ममां शुभ मुहूर्तो-गृहारंभ आदि वास्तुकर्मरंभमां कया मुहूर्तो लेवा ? ए विषयमां मात्स्यपुराण नीचे प्रमाणे कहे छे—

श्वेते मैत्रे च माहेन्द्रे, गन्धर्वाभिध-रौहिणे ।

तथा वैराज-सावित्रे, मुहूर्ते गृहमारभेत् ॥ ११ ॥

भा०टी०—श्वेत (२जुं), मैत्र (३जुं), माहेन्द्र (१३मुं), गन्धर्व (७मुं), रौहिण (९मुं), वैराज (६हुं) अने सावित्र (५मुं); आ सात मुहूर्तो पैकीना कोई पण शुभ मुहूर्तमां गृहारंभ करवो.

मुहूर्तोना संबन्धमां लह्लाचार्य कहे छे—

श्वेतो मैत्रो विराजश्च, सावित्र अभिजिन्सथा ।

बलश्च विजयश्चैव, मुहूर्ताः कार्यसाधकाः ॥ १२ ॥

भा०टी०—श्वेत (२), मैत्र (३), विराज (६) सावित्र (५), अभिजित् (८), बल, (१०) अने विजय (११); आ मुहूर्तो सर्व कार्य साधक छे.



मूर्तयंत्रक

क्रमांक	ज्योतिषोक्त- दिवासमूर्तौ	ज्योतिषोक्त- रात्रिमूर्तौ	पौराणिक दिवासमूर्तौ	पौराणिक रात्रिमूर्तौ
१	आर्द्रा	आर्द्रा	रौद्र	रौद्र
२	आश्लेषा	पू० भाद्र०	श्वेत	गंधर्व
३	अनुराधा	उ० भाद्र०	मैत्र	अर्थप
४	मघा	रेवती	चारभट	चारभट
५	धनिष्ठा	अश्विनी	सावित्र	वायु
६	पू० पादा	भरणी	वैराज	अग्नि
७	उ० पादा	कृतिका	गन्धर्व	राक्षस
८	अश्विनी	रोहिणी	अभिजित्	धातु
९	रोहिणी	भृगुशिर्ष	रोहिण	सौम्य
१०	ज्येष्ठा	पुनर्वसु	बल	ब्रह्मा
११	विशाखा	पुष्य	विजय	जीव
१२	मूल	श्रवण	नैऋत	पौष्ण
१३	शतभिषा	हस्त	माहेन्द्र	विष्णु
१४	उ० फाल्गु०	चित्रा	वारुण	समीर
१५	पू० फाल्गु०	स्वाती	भग	नैऋत

દિનશુદ્ધિ-મુહૂર્ત લક્ષણને અંગે ઉપર થોડુંક મુહૂર્તાનું સ્વરૂપ આપું છે, પણ વર્તમાન સમયમાં મુહૂર્તા ઉપર જ્યોતિષીગણનો વિશ્વાસ નથી અને સ્વરૂં કહીયે તો એ વસ્તુને આજના જ્યોતિષીઓ ઘણે માને ભૂલી ગયા છે, એટલે સાધારણ જનતા તો જાણે જ ક્યાંથી ? આવી પરિસ્થિતિમાં મુહૂર્તલક્ષણમાં આધુનિક રીતિએ દિનશુદ્ધિ તથા લગ્ન-શુદ્ધિનું વર્ણન કર્યા વિના એ વિષય પૂર્ણ કરી શકાય તેમ નથી.

વર્ષશુદ્ધિ, અયનશુદ્ધિ, માસશુદ્ધિ, વૃક્ષશુદ્ધિ, ગુરુશુક્રચન્દ્રાસ્ત્ર ચાલ્ય-વાર્દ્ધવ્ય વિચાર, તિથિ, વાર, નક્ષત્ર, યોગ અને કરણશુદ્ધિ; એ સર્વનો દિનશુદ્ધિમાં જ સમાવેશ થાય છે, તેથી એ સર્વની શુદ્ધિનો વિચાર કરવો એ જ દિનશુદ્ધિનો ઉપાય છે.

ગૃહનિવેશ, ગૃહપ્રવેશ, પ્રતિષ્ઠા, પરિણયન, યાત્રા, આદિ મહત્ત્વ-પૂર્ણ કાર્યોમાં અલ્પ દોષો કદાપી ન ટલે, છતાં મહાદોષો તો વર્જવાથી જ દિનશુદ્ધિ તેમ લગ્નશુદ્ધિ પોતાનો સ્વરો પ્રભાવ પાડી શકે છે. વસિષ્ઠ, નારદ, આદિ સંહિતાકારો મહાદોષોના સંબન્ધે ઘણું લખી ગયા છે, એ વિષયમાં નારદજી કહે છે—

પશ્ચાદ્ગુહિરહિતો, દોષસ્ત્વાચ્યઃ ? પ્રકીર્તિતઃ ।

ઉદયાસ્તશુદ્ધિહીનો, ત્રિતીયઃ ૨ સૂર્યસંક્રમઃ ॥ ૧૩ ॥

તૃતીયઃ ૩ પાપષટ્વર્ગો, ૪ મૃગુઃ ૬૪ઃ ૫ કુજોઽષ્ટમઃ ૬ ।

ગણ્ડાન્તં ૭ કર્તરી ૮ રિઃફ-ષટ્ષ્ટેન્દુશ્ચ ૯ સગ્રહઃ ૧૦ ॥ ૧૪ ॥

દમ્પત્યોરષ્ટમં લગ્નં, રાશે ૧૧-વિષઘટી તથા ૧૨ ॥

દુર્મુહૂર્તો ૧૩ વારદોષઃ ૧૪, સ્વાર્જૂરિકે સમાંઘ્રિમમ્ ॥ ૧૫ ॥

ગ્રહણોત્પાતમં ૧૬ ક્રૂર-વિદ્ધર્ષી ૧૭ ક્રૂરસંયુતં ૧૮ ॥

કુનવાંશો ૧૯ મહાપાતો ૨૦, વૈધૃતિ શ્રૈકવિંશતિઃ ૨૧ ॥ ૧૬ ॥

આંટી-૦-પશ્ચાદ્ગુહિનો અમાત્ર ૧, લગ્નની ઉદયાસ્તશુદ્ધિનો

अभाव २, ग्रहसंक्रांति ३, पापवृवर्ग ४, छटो शुक्र ५, आठमो मंगल ६, गंडांत ७, क्रूर कर्तारी ८, वारमो, छटो, आठमो चन्द्रमा ९, क्रूर ग्रह सहित चन्द्रमा १०, पति-पत्नीनी जन्मराशिथी आठमी राशिनं लग्न ११, विषघटी १२, दुर्मुहूर्त १३, वारदोष १४, खार्जू-रिक्त चक्रमां पाद विद्ध नक्षत्र १५, ग्रहणादि उत्पात विद्ध नक्षत्र १६, क्रूर विद्ध नक्षत्र १७, क्रूराधिष्ठित नक्षत्र १८, कुनवमांशक १९, महापात २०, अने वैधृति २१; आ एकवींश महादोषो छे. ए महादोषो प्रयत्नपूर्वक वर्जवा जोईये एम नारदजी नीचेना पद्यमां अनुरोध करे छे—

एते प्रोक्ता महादोषा, वर्जनीयाः प्रयत्नतः ।

यदि मोहात् कृतं कर्म, तदा विघ्नं भवेद्भवम् ॥ १७ ॥

भा०टी०—कहेला ए महादोषोने यत्नपूर्वक टालवा जोईए, जो कोईए मोहवश पण महादोषमां कइ काम कर्यु तो अवश्य विघ्न थये ।

उक्त महादोषो पैकीना दोषो नंबर २-४-५-६-८-९-१०-११-१२ अने लग्न गंडांतनो संबंध लग्न साथे होई लग्न-शुद्धिना प्रकरणमां निरूपण कराशे. तथा दोषो नम्बर १-३-१२-१३-१४-१५-१६-१७-१८-१९-२०-२१ अने तिथि नक्षत्र गंडांतनो संबंध दिनशुद्धिनी साथे होवाथी तेना निरूपण प्रसंगे ते ते यथास्थान कहेवाशे.

महादोषो उपरान्त बीजी पण फेटलीक वातो मौहूर्तिके हर वखत ध्यानमां राखवा जेवी होय छे के जेनो अमो प्रथम निर्देश करीने मूल वात उपर आवशुं.

वर्ष, अयन, मास तथा पक्षनी शुद्धि, गुरु-शुक्र-चन्द्रास्तकाल, तथा एमनो बाल्य-वार्द्ध्यकाल; इत्यादि वातोनो विचार कर्या

પછી જ મૌહૂર્તિકે મુહૂર્તની યાસ વાતો ઉપર પોતાનું ધ્યાન કેન્દ્રિત કરવું જોઈયે ।

વર્ષશુદ્ધિ—જે વર્ષમાં માસનો ક્ષય અને વૃદ્ધિ બંને આવતાં હોય તે વર્ષ શુભ કાર્યોને માટે વર્જિત ગણાય છે. ગુરુ જે વર્ષમાં સિંહ રાશિ પર ભ્રમણ કરતો હોય તે વર્ષ પણ શુભ કામને માટે વર્જિત જ ગણાય છે. માત્ર અપવાદ રૂપે તે વર્ષનો અમુક સમય શુભ ગણાય છે.

અયનશુદ્ધિ—અયનો પૈકી દક્ષિણાયન દેવપ્રતિષ્ઠાદિ અને ગૃહારંભાદિમાં સામાન્ય રીતે વર્જિત છે. અપવાદે કર્ક સંક્રાંતિનો સમય ગૃહારંભ અને ગૃહ પ્રવેશમાં ગ્રહણ કરેલ છે. એ જ પ્રકારે વૃશ્ચિકનો સૂર્ય થયા પછી પણ દક્ષિણાયનનો દોષ ગણાતો નથી, તે સમય ગૃહારંભગૃહ-પ્રવેશમાં લેવાય છે.

માસશુદ્ધિ—ચૈત્ર માસ સામાન્ય રીતે ગૃહારંભાદિમાં વર્જિત છે, હતાં મેષનો સૂર્ય થયા પછી ચૈત્રનો ભાગ જો રહેતો હોય તો તે શુભ છે, વૈશાખ ગૃહારંભપ્રવેશાદિમાં શુભ છે, જ્યેષ્ઠ ગૃહારંભમાં વર્જિત છે, પ્રવેશાદિકમાં લીધેલ છે. મિથુનાર્ક થયા પછી આષાઢ ગૃહારંભમાં વર્જિત છે. શ્રાવણ ગૃહારંભપ્રવેશાદિમાં શુભ છે. માઢપદ, આસોજ, કાર્તિક આરંભ પ્રવેશાદિમાં વર્જિત છે. માર્ગશીર્ષ અને પૌષ ગૃહારંભાદિમાં શ્રેષ્ઠ છે. પણ ધનાર્કમાં પૌષનો ભાગ પડતો હોય તો તેટલો વર્જિત ગણાયો. માઘ ગૃહારંભમાં વર્જિત છે અને પ્રવેશમાં લીધેલો છે. ફાલ્ગુન આરંભ પ્રવેશાદિ વધા કાર્યોમાં શુભ છે. આરંભસિદ્ધિગ્રંથ-કાર એ વિષયમાં કહે છે કે સૌર માસના હિસાબે ધનાર્ક, મીનાર્ક, મિથુનાર્ક, અને કન્યાર્ક; આ ચ્યાર દ્વિસ્વભાવ રાશિની સંક્રાંતિઓનો સમય ગૃહારંભ અને પ્રવેશ બન્નેને માટે વર્જિત ગણાય છે, શેષ રાશિઓનો સૂર્ય હોય ત્યારે દિશા પરક વિધાન અને નિષેધ બંને કરેલ છે. ઉપરના નિરૂપણનો મૂલાધાર નીચે પ્રમાણે છે—

पूर्वापरास्यं गेहाद्यं, कर्के सिंहे मृगे घटे ।

तुलाऽजालिऽवृषस्थेऽर्के, कुर्याद्याम्योत्तराननम् ॥ १८ ॥

युग्म कन्या धनुर्मीने, गतेऽर्के नैव कारयेत् ।

वृषालि कुंभसिंहेऽर्के, कुर्याद् गेहं चतुर्दिशम् ॥ १९ ॥

भा०टी०—कर्क, सिंह, मकर अने कुंभ, राशिना सूर्यमां पूर्वाभिमुख अथवा पश्चिमाभिमुख गृहादिनो आरंभ करवो; मेष, वृषभ, तुला अने वृश्चिकना सूर्यमां दक्षिणाभिमुख अथवा उत्तराभिमुख घरनो आरंभ करवो; मिथुन, कन्या, धनु अने मीन राशिओना सूर्यमां गृहादिनो आरंभ ज न करवो, ज्यारे वृषभ; सिंह, वृश्चिक, कुंभ आ स्थिर राशियो उपर सूर्य रहेलो होय त्यारे च्यारे दिशाना द्वार वालां घगेनो कार्यारंभ करी शक्याय छे.

अधिकमास—अधिकमासमां शुभ कार्यो करवानो निषेध करेल छे. पण अधिकमास कयो एनी पण आजना बनी बेटेला केटलाक ज्योतिषियोने खबर नथी. मासवृद्धिमां केटलाये अज्ञ ज्योतिषिओ प्रथमना शुक्ल पक्षने प्राकृतिक मासमां गणी बीजा आखाये मासने अधिकमां गणीने त्याज्य करे छे. ज्यारे बीजा अज्ञानिओ पहेला आखाये पूर्णान्त मासने वृद्ध गणीने बीजाने प्राकृतिक गणे छे, खरी रीते ए वंने प्रकार भूल भरेला छे. वृद्ध वसिष्ठ—अधिक मासनं लक्षण बतावतां कहे छे—

यस्मिन् दर्शस्यान्ता—दर्वांगेका परा परं दर्शम् ।

उल्लंघ्य भवति भानोः, संक्रान्तिः सोधिमासः स्यात् ॥ २० ॥

भा०टी०—जेमां एक संक्रान्ति प्रथम अमावास्यानी पहेलां अने बीजी संक्रान्ति बीजी अमावास्या वीत्या पछी लागे छे, त्यारे अधिक मास पडे छे. आथी स्पष्ट छे के अमावास्याना अन्तथी

અર્થાત્ શુકલ પ્રતિપદાથી અધિક માસ લાગે છે અને તે પછીની અમાવાસ્યા સુધી રહે છે. એનું તાત્પર્ય એ છે કે મહીનો પૂર્ણાન્ત માનો યાહે અમાન્ત, પણ અધિકમાસ તો અમાન્ત જ હોય. પૂર્ણાન્તમાસ માનનાર દેશમાં પહેલા માસનો શુકલ અને ત્રીજાનો કૃષ્ણપક્ષ મલી ૩૦ દિવસનો મલ માસ ગણાશે ।

ક્ષયમાસ—અધિકમાસ જેમ શુભ કાર્યમાં વર્જિત છે તેમ ક્ષય માસ પણ શુભ કાર્યો કરવામાં વર્જિત કરેલ છે. માસક્ષય કોઈ વાર ૧૯ વર્ષે અને કોઈ વાર ૧૪૧ વર્ષે આવે છે; જ્યારે ક્ષયમાસ પડે છે ત્યારે માસવૃદ્ધિ પણ અનિવાર્યપણે થાય જ છે, ઇટલે ૯ વર્ષ ઘણું જ ઉથલ-પાથલ કરનારું નિવડે છે. ક્ષયમાસનું લક્ષણ વસિષ્ઠ કહે છે કે—
આચન્ત દર્શયોર્મધ્યે, તયોરાચન્તયોર્ઘદા ।

સંક્રાન્તિદ્વિતયં ચેત્ સ્યાધ્યૂનમાસઃ સ્ત ઉચ્યતે ॥ ૨૧ ॥

મા૦ટી૦—પહેલી અને ત્રીજી અમાવાસ્યાની વચમાં જ્યારે બે સૌર સંક્રાન્તિઓ થાય છે ત્યારે તે (બે અમાવાસ્યા વચ્ચેનો) સમય ક્ષયમાસ ગણાય છે. ક્ષયમાસના સમયમાં કર્તવ્ય કર્મને અંગે વસિષ્ઠ કહે છે કે—

માસપ્રધાનાસ્વિલમેવ કર્મ,
મુક્ત્વાસ્વિલં કર્મ ન કાર્યમત્ર ।
યજ્ઞોપવાસવ્રતતીર્થયાત્રા,
વિવાહકર્માદિ વિનાશમેતિ ॥૨૨॥

મા૦ટી૦—માસ પ્રતિબદ્ધ સર્વ કાર્યો છોડીને ત્રીજાં યજ્ઞ, ઉપવાસ, વ્રત, તીર્થયાત્રા, વિવાહ આદિ સર્વ કાર્યોને ન્યૂનમાસમાં કરાતાં નાશ પામે છે. ક્ષયમાસનું અશુભ ફલ કહ્યું છે કે—

ક્ષયમાસો ભવેદ્યસ્મિન્, તસ્મિન્ વર્ષેઽતિવિગ્રહમ્ ।
દુર્મિક્ષં વાથવા પીડાં. છદ્મભંગં કરોતિ વા ॥

भा०टी०—जे वर्षमां क्षयमास होय ते वर्षमां घोर युद्ध, दुष्काल, प्रजा पीडा, अथवा छत्रभंग करे छे.

पक्षशुद्धि—सामान्य रीते गृहारंभ, प्रवेशादि प्रत्येक शुभ कार्य शुक्लपक्षमां करवातुं विधान छे. शुक्लपक्षनी पष्ठीथी कृष्णपक्षनी पंचमी सुधीना १५ दिवसोने ज्योतिष शास्त्रकारो शुक्लपक्ष रूप गणे छे, केम के शुदि ५ सुधी चन्द्र कृश होय छे, अने वदि ५ पछी चन्द्र क्षीण बली थतो जाय छे; छतां प्रतिपदानी सांजे चन्द्रदर्शन थई जाय तो शुदि २ थी शुभ कार्यो करवामां हरकत जेवुं नथी, ए ज रीते वदि ८ मी सुधीमां चन्द्र विशेष क्षीण न थतो होवाथी कोई पण शुभ कार्य करवुं अयोग्य नथी. अष्टमीनो पूर्वार्ध पूर्ण थया पछी जो कोई आवश्यक कार्य करवुं पडे तो चन्द्रबलनी साथे ताराबल पण अवश्य जोवुं अने त्रीजी, पांचमी अथवा सातमी तारा आवती होय तो कार्य जरुरतनुं होय तो पण करवुं नहि, आ संबन्धमां ज्योतिषनो निम्न लिखित नियम अवश्य ध्यानमां राखवो—

कृष्णस्याष्टम्यर्धा—दनन्तरं तारकाबलं योज्यम् ।

प्रतिपत्प्रान्तोत्पन्नं, सन्ध्याकालोद्द्यं यावत् ॥ २३ ॥

भा०टी०—कृष्णपक्षनी अष्टमीनो अर्धभाग व्यतीत थया पछी शुदि प्रतिपदाने अन्ते आवता सन्ध्याकाल पर्यंत ताराबलनो उपयोग करवो. आ विषयमां प्राचीन मत एवो छे के कृष्णपक्षनी दशमी पर्यंत सर्व कार्यो—चन्द्रबल जोईने करवां. नक्षत्र समुच्चय ग्रंथमां लखे छे—

उदिते च तथा चन्द्रे, शुभयोगे शुभे तिथौ ।

कृष्णस्य दशमीं यावत्, सर्वकार्याणि साधयेत् ॥ २४ ॥

भा०टी०—चन्द्र उदित होय त्यारं शुभयोग अने शुभतिथिमां कृष्णपक्षनी दशमी पर्यंत बधां कार्यो करवां.

गुरु-शुक्र-चन्द्रास्तशुद्धि-गुरु सुख-सम्पत्तिनो कारक ग्रह होई एना अस्तमां कोई पण शुभ कार्य 'गृहारंभ-गृह-प्रवेश आदि' करातुं नथी. गुरुना अस्त कालमां ज नहिं, अस्त कालनी तैयारी रूपे ज्यारे गुरु कालांशोनी निकटे पहुँचे छे त्यारे पण ते ज हीन थइ बृद्धावस्थाए पहुँचेल होई बलहीन थयो होय छे, अने कालांशोनी बहार नीकली उदित थया पछी पण अग्रुक समय सुधी ते अल्प तेजस्क होई बाल गणाय छे, गुरु बाल्य कालमां पण बलहीन गणाय छे.

गुरु पूर्व या पश्चिममां अस्त या उदय पामे छे. अस्त पहेलां १५ दिवस वृद्ध अने उदय पछी १५ दिवस सुधी बाल गणाय छे. गुरुना वार्द्धक्य, अस्तमन अने बाल्य कालमां शुभ कार्य करवानो निषेध छे. गमे तेदलुं आवश्यक कार्य होय तो ये उदयास्त पछी-पहेलांना ३-३ दिवसो अने अस्तना सर्व दिवसो तो शुभ कार्यमां तजवा ज जोईये. गुरु मकर राशीनो होय त्यारे नीचनो गणाय छे "नीचस्थो निष्फलो ग्रहः।" आ वचनानुसार बुद्धिमाने ज्यां सुधी गुरु परम नीचांशोमां होय त्यां सुधी सुख अने सम्पत्तिजनक कार्यो करवानुं मुलत्वी राखवुं जोईये.

एज प्रमाणे शुक्रना पण अस्तमां, वार्धक्यमां के बाल्य कालमां कोई शुभ कार्य करवुं न जोईये, शुक्र स्त्री जातीय ग्रह होइ एना शुभाशुभत्वनो समय स्त्री जातीने अधिक असर करे छे. ए ज कारणे भ्रमणधर्मस्वीकारना सुहूर्तमां शुक्रास्तनो दोष गण्यो नथी, शुक्रनो बाल्य के वार्धक्य काल गुरुना करतां लगभग एक तृतीयांश जेटलो गणाय छे. शुक्र पण नीचनो होय त्यारे बलहीन तो बने ज छे, पण शुक्रनुं नीच राशि भ्रमण वणे भागे वर्षाकालमां आवतुं होइ ते काले प्रायः शुभ कार्यो ओछा ज थाय छे एथी शुक्रना नीचत्व कालने

अंगे ज्योतिषमां निषेध दृष्टिगोचर यतो नथी.

गुरु शुक्रना बाल्य-वार्धक्य विषे मतान्तरो-गुरु अने शुक्रनावार्द्धक्य अने बाल्यकालना विषयमां ज्योतिषीओ एकमत नथी, वृत्तशतमां कथं छे.

बालः शुक्रो दिवसदशकं पञ्चकं चैव वृद्धः,
पञ्चादह्नां त्रितयमुदितः पक्षमैत्र्यां क्रमेण ।

जीवो वृद्धः शिशुरपि सदाः पक्षमन्यैः शिशुतौ
वृद्धौ प्रोक्तौ दिवसदशकं चापरैः सप्तरात्रम् ॥२५॥

भा०टी०-पश्चिम दिशामां शुक्र १० दिवस बाल अने ५ दिवस वृद्ध रहे छे तथा पूर्व दिशामां ३ दिवस पर्यंत बाल अने १५ दिवस पर्यंत वृद्ध गणाय छे. गुरु वृद्ध अने बाल सदा १५-१५ दिवस रहे छे, कोई कहे छे के गुरु बाल अने वृद्ध १०-१० दिवस कोई पण दिशामां रहे छे, त्यारे कोई विद्वान बन्नेनो बाल्य वार्धक्य काल ७-७ दिवसनो कहे छे. ए विषयमां मांडव्य कहे छे के-

त्यजद्दशाहं शिशुवृद्धयोश्च,
सितेज्ययोश्चेति वदन्ति गर्गाः ।
कालांशतुल्यानि दिनानि चैके,
सप्ताहमन्ये त्वपरे त्रिरात्रम् ॥ २६ ॥

भा०टी०-गर्गऋषिना मतानुयायियो शुक्र तथा गुरुना बाल्य अने वार्द्धक्यना १०-१० दिवसो छोडवानुं कहे छे, केटलाको आ प्रत्येकनुं बाल्य अने वार्द्धक्य पोतपोताना कालांशो जेटला दिवसनुं कहे छे, ज्यारे केटलाको ७-७ दिवसनुं अने केटलाको मात्र ३-३ दिवसनुं ज कहे छे ।

पञ्चदिनानि वसिष्ठः शौनक एकं दिनत्रयं गर्गः ।
यवनाचार्यस्य मते पञ्चमुहूर्तं भृगुस्त्याज्यः ॥ २७ ॥

भा०टी०—शुक्रनो बाल्य वाद्वैक्य काल वसिष्ठना मते ५ दि-
वसनो, शौनकना मते १ दिननो, गर्गना मते ३ दिननो अने यवना-
चार्यना मते ५ मुहूर्तनो छे, जे वर्जवो जोईये. ए अंगे वसिष्ठ
कहे छे के—

शुके चास्तंगते जीवे, चन्द्रे चास्तमुपागते ।
तेषां वृद्धौ च बाल्ये च, शुभकर्म भयप्रदम् ॥ २८ ॥
वृद्धत्वमिन्द्रोस्त्रिदिनं दिनाद्धै,
बालत्वमस्तत्त्व महर्द्धयं च ॥
अस्ते विधौ मृत्युमुपैति कन्या,
बाल्येऽन्यसक्ता विधवा च वृद्धे ॥२९॥

भा०टी०—शुक्र गुरु चन्द्रना अस्तमां तथा तेमना वाद्वैक्य के
बाल्य कालमां शुभकार्ये करवुं भयकारक छे. चन्द्रनुं वृद्धत्व ३ दिवस-
नुं तेनुं बाल्यत्व अर्ध दिवसनुं अने अस्तत्व २ दिवसनुं होय छे.
चन्द्रना अस्तमां परणनारी कन्या मृत्यु पामे चन्द्रना बाल्यमां परण-
नारी परपुरुषमां आसक्त थाय अने वाद्वैक्यमां पणिणीता
विधवा थाय.

गुरु-शुक्रास्तापवादं गर्गः :—

नित्ययाने गृहे जीर्णे, प्राशने परिधानके ।
वधू प्रवेशे मांगल्ये, न मौढ्यं गुरुशुक्रयोः ॥ ३० ॥

भा०टी०—नित्यनी मुद्राफरीमां, जूना घरना प्रवेशमां, अन्न
प्राशनमां, वस्त्र परिधानमां, वधू प्रवेशमां तथा तात्कालीक मांगल्य
कार्यमां गुरु शुक्रास्तनो दोष नथी.

गुरुवक्तृत्वदाष-गुरु वक्तृत्व अंगे शौनक, लल्लाचार्य आदि
प्राचीन ग्रंथकारोए अमुक समय पर्यंत ते वर्जवानो निर्देश कर्यो छे.
उक्त कहे छे—

અતિચારે ચ વક્રે ચ, વર્જયેત્તદનન્તરમ્ ।

વ્રતોદ્વાહાદિ શૂઢાયા-મષ્ટાવિંશતિ વાસરામ્ ॥૩૧॥

માંટી૦-ગુરુ અતિચારી અને વક્રી થાય ત્યારથી ૨૮ દિવસો વ્રત, વિવાહ, ચૌલકર્મ, આદિમાં વર્જવા જોઈયે.
ટોડરાનન્દકાર લખે છે કે—

અતિચારે સપ્તદિનં, વક્રે દ્વાદશમેવ ચ ।

નીચસ્થિતેઽપિ વાગીશો, માસમેકં ચિવર્જયેત્ ॥ ૩૨ ॥

માંટી૦-ગુરુ અતિચારી હોય ત્યારે સાત દિવસ, વક્રી થાય ત્યારે ધાર દિવસ અને નીચનો થાય ત્યારે ૧ માસ સુધી શુભ કાર્યમાં વર્જવો.

મુહૂર્તકલ્પદ્રમકાર લખે છે કે—

વક્રે સુરેજ્યે સ્વશૈ દિનત્રયં,

વર્જ્ય મુનીન્દ્રૈરશ્વિલેઙ્ગ કર્મસુ;

અન્યત્ર રાશૌ મુનય ત્યજન્તિ,

ષ્ટાષ્ટાધિકાન્વિંશતિ વાસરામ્ હિ ॥૩૩॥

માંટી૦—ગુરુ પોતાની રાશિમાં વક્રી થાય ત્યારે મુનિઓ સર્વ કાર્યોમાં ૩ દિવસ વર્જ્ય ગણે છે, જ્યારે ત્રીજી રાશિમાં ગુરુ વક્રી થતાં ૨૮ દિવસોને ત્યાગે છે.

આમ ગુરુ વક્રત્વને અંગે જ્યોતિષિઓમાં એક વાક્યતા નથી, કોઈ ૨૮ દિવસ, કોઈ ૧૨ દિવસ, અને કોઈ સ્વરાશિમાં ગુરુ વક્રત્વનો દોષ ૩ દિવસ સુધી જ ગણે છે; આથી સમજાય છે કે—ગુરુ વક્રત્વ દોષ પ્રથમથી જ સર્વ સંમત ન હતો, મુહૂર્તચિન્તામણિના નિમ્નો-લેખથી પણ એજ વાત સિદ્ધ થાય છે—

અસ્તે વર્જ્ય સિંહનકસ્થજીવે, વર્જ્ય કેચ્ચિદ્રક્રમે ચાતિચારે ।

શુભાદિત્યે વિશ્વઘ્નેઽપિ પક્ષે, પ્રોચુસ્તદ્વહન્તરત્નાદિ મૂવામ્ ।૩૪

માઠી૦-ગુરુના અસ્તમાં જે વર્જિત છે તે જ સિંહસ્થ અને મકરસ્થ ગુરુમાં પણ વર્જવું, કોઈ કહી ગયા છે કે-ગુરુના વક્રત્વમાં અતિચારમાં, ગુર્વાદિત્યમાં અને ૧૩ દિનના પક્ષમાં પણ અસ્તવર્જિત કાર્યો તથા દન્ત-સ્નાદિનાં ભૂષણો વર્જવાં.

ચિન્તામણિકારના આ કથનાનુસાર સ્વરે જ ગુરુ વક્રત્વ અતિચારને દોષ રૂપે ગણનારા 'કેચિત્' છે, 'સર્વે' નહિ. એ જ કારણ છે કે ગુર્વતિચાર અને વિશ્વઘસ્રપક્ષમાં શુભ કાર્યો ન કરવાની જ્યોતિષીઓમાં ચર્ચા નથી. મુહૂર્તકલ્પદ્રુમકાર સ્વરાશિમાં ગુરુવક્રત્વ હોતાં ૩ દિવસ વર્જવાનું કહે છે, પણ સ્વોચ્ચત્વમાં ગુરુવક્રત્વ કેટલું વર્જવું એ વિષે મૌન ધારણ કરે છે. સ્વરી રીતે તો ઉચ્ચના ગુરુવક્રત્વમાં દોષ જ નથી, એમ જ કહેવું જોઈયે, જ્યારે ગુરુ સ્વોચ્ચાંશ અને સ્વર્ગસ્થિત હોય ત્યારે પણ વક્રી, શત્રુક્ષેત્રી અથવા નીચનો હોવા છતાં શુભ ગણાય છે, તો ઉચ્ચનો હોય ત્યારે તો ગુરુ વક્રી છતાં અશુભ ગણાય જ કેમ ? એ સંબન્ધમાં સુધોશંગારવાર્તિકકાર કહે છે કે—

વક્રારિનીચરાશિસ્થઃ, શુભકૃત્ પ્રોચ્યતે ગુરુઃ ।

સ્વોચ્ચાંશસ્થઃ સ્વર્ગસ્થો, મૃગુણા જ્ઞેન વા યુતઃ ॥૩૫॥

માઠી૦-વક્રી, શત્રુક્ષેત્રી, અથવા નીચરાશિનો હોવા છતાં ગુરુ શુભકારક કહેવાય છે કે જો તે પોતાના ઉચ્ચાંશનો, સ્વર્ગનો, અથવા શુક્ર વા બુધની યુતિમાં હોય, આ ઉપરથી સિદ્ધ જ છે કે મકરના ઉચ્ચાંશમાં હોવાથી પણ ગુરુ જો શુભકારક છે, તો પોતાના ઉચ્ચક્ષેત્ર-કર્કમાં રહીને વક્રી થતાં તે દોષકારક કેવી રીતે બને ? તે વિચારણીય વસ્તુ છે.

વક્રીગ્રહ બલવાન કે નિર્બલ ?-યદ્યપિ કેટલાક ગ્રન્થકારોએ વક્રીગ્રહને નિર્બલ અને માર્ગસ્થને બલવાન ગણ્યો છે, તથાપિ

‘આરંભસિદ્ધિ’ આદિ ગ્રંથોમાં “ વિપુલસ્નિગ્ધાશ્ચ વક્ત્રગાથ્યાન્યે ”
 ઇત્યાદિ લેખોમાં વક્રગામી ગ્રહોને બલવાન માન્યા છે, પાકશ્રી નામક
 પ્રાચીન જ્યોતિષ ગ્રન્થકાર તો સર્વ ગ્રહોની વક્રાવસ્થામાં મૂલત્રિકોણ
 તુલ્ય બલ बताવે છે, ઈર્ષપ્રકાશકારે “ વક્રી પાવો બલી સુમો
 સિગ્ધો ” આ જે લખ્યું છે તેનો કોઈ આધાર મળે તેમ નથી, લખવું
 તો એમ જોઈતું હતું કે “ સિગ્ધો પાવો બલી સુમો વક્રી ” અર્થાત્ પાપ
 ગ્રહ શીઘ્ર હોય ત્યારે અને શુભ ગ્રહ વક્રી હોય ત્યારે બલવાન ગણાય
 છે. સ્વરશાસ્ત્રની પણ એ જ માન્યતા છે. એ વિષયમાં સ્વરોદય શાસ્ત્રનું
 કક્તવ્ય આ પ્રમાણે છે—

કૂરા વક્રા મહાકૂરાઃ, સૌમ્યા વક્રા મહાશુભાઃ ।

બલિષ્ઠાઃ સ્યુઃ શુભા વક્રાઃ, કૂરા વક્રા બલોદ્ગતાઃ ॥૩૬॥

માંટી૦—કૂર ગ્રહો વક્રી થતાં મહાકૂર બને અને સૌમ્ય ગ્રહો
 વક્રી હોય ત્યારે મહાશુભ બને છે, બલી સૌમ્ય ગ્રહો વક્રી થતાં
 બલિષ્ઠ બને છે અને કૂર ગ્રહો વક્રી થતાં બલહીન થઈ જાય છે, કૂર
 છતાં શનિ બલવાન હોય ત્યારે કંઈક શુભ ફલ આપે છે, ઈથી
 વિપરીત ગુરુ આદિ સૌમ્ય ગ્રહો અતિચાર ગતિના થતાં અશુભ ફલ
 આપે છે, જ્યારે તે જ સૌમ્યગ્રહો વક્રી થતાં સુભિક્ષતા-સમર્થતાદિ
 ઉત્પન્ન કરે છે, એ સર્વ પ્રતીત છે, આના પરિણામે જ જ્યોતિષીઓએ
 નિમ્નોક્ત શ્લોકગત ફલનો નિર્દેશ કર્યો છે—

અતીચારગતે જીવે, વક્રે ભૌમે શનૈશ્ચરે ।

હાહાભૂતં જગત્સર્વં, રુષ્ડમુણ્ડા ચ મેદિની ॥ ૩૭ ॥

માંટી૦—ગુરુ અતીચારી અને મંગલ તથા શનિ વક્રી હોય
 ત્યારે સર્વત્ર જગતમાં હાહાકાર મચે છે ને પૃથિવી ધડ-મસ્તકથી
 છવાઈ જાય છે.

ચક્રસંગ્રહ—દિનશુદ્ધિના વિવિધ વિભાગોનું નિરૂપણ કરી હવે અમો પ્રાસાદાદિ મુહૂર્તોપયોગી કેટલાંક ઉપયોગી ચક્રો આપી પંચાંગ શુદ્ધિ ઉપર આવીશું.

નાગવાસ્તુચક્ર—મુશ્લાદિત્યનિબન્ધે—

ઈશાનતઃ સર્પતિ કાલસર્પા, વિહાય સૃષ્ટિ ગણયેદ્ વિદિક્ષુ ।
પશ્ચાદ્ગતિસ્થં મુખમધ્યપુચ્છં, ત્રિકં ત્રિકં વૈ વૃષસંક્રમાદૌ ॥૩૮
વેર્ગા વૃષાદ્ ગૃહે સિંહાત, ત્રિકં મીનાત્ સુરાલયે ।
જલાશ્રયે મૃગાચ્ચ, શેષનાગસ્ય સંસ્થિતિઃ ॥૩૯॥

શા૦ટી૦—શેષનાગ વૃષાદિ ૩-૩ સંક્રાંતિમાં ઈશાન કોણથી સરકે છે, વિલોમક્રમથી પાછલી તરફ ગણતાં વૃષ-મિથુન-કર્ક સંક્રાંતિઓમાં ઈશાનમાં મુખ, વાયવ્યમાં મધ્ય, નૈઋતમાં પુચ્છ અને અગ્નિકોણ સ્વાલી હોવાથી સ્વાત સ્થાન, એ જ રીતે સિંહ-કન્યા-તુલામાં એક વિદિશા બદલતાં અગ્નિકોણમાં મુખ, ઈશાનમાં મધ્ય, વાયવ્યમાં પુચ્છ અને નૈર્ઋતે સ્વાતસ્થાન, વૃશ્ચિક ઘનુ, મકર, સંક્રાંતિમાં નૈર્ઋતે મુખ અગ્નિકોણે મધ્ય, ઈશાને પુચ્છ, વાયવ્યે સ્વાતસ્થાન અને કુંભ-મીન મેષ સંક્રાંતિઓમાં વાયવ્યે મુખ નૈર્ઋતે મધ્ય, અગ્નેયીમાં પુચ્છ અને ઈશાનમાં સ્વાતસ્થાન; આ ક્રમ પ્રમાણે ત્રિવાહની વેદીમાં સ્વાતનો ક્રમ છે, ઘર, દેવાલય તથા જલાશયના સ્વાતને અંગે આ પ્રમાણે જાણવું- વૃષથી વેદીમાં, સિંહથી, ગૃહમાં, મીનથી દેવાલયમાં અને મકરથી જલાશયમાં શેષની સ્થિતિનો વિચાર કરવો અર્થાત્ સિંહ-કન્યા-તુલા આદિ ૩-૩ સંક્રાંતિયોથી ગૃહને અંગે, મીન-મેષ-વૃષ આદિ ૩-૩ સંક્રાંતિયોના ક્રમે દેવાલયને અંગે, મકર-કુંભ-મીન આદિ ૩-૩ સંક્રાંતિયોના ક્રમે જલાશયને અંગે શેષનું ઈશાનથી સર્પેણ સૃષ્ટિક્રમથી ગણી વિલોમ ક્રમે મુખ મધ્ય પુચ્છ જ્યાં આવતાં હોય તે વિદિક્ષાઓને ઢોહી સ્વાલી પહેલી વિદિક્ષામાં સ્વાત કરવું.

उपर प्रमाणे मृजादित्य निबन्धना श्लोकोनी व्याख्या करतां शेष स्थिति शिल्पशास्त्रोक्त नागवास्तुना भ्रमणनी साथे बरोबर मली रहे छे. “विहाय सृष्टि” नो संबन्ध “ गणयेद् ” नी साथे न जोडतां “ सर्षति ” क्रियापदनी साथे जोडी अर्वाचीन ज्योतिषिओए शेषतुं विलोम भ्रमण प्रचलित कर्युं छे जे आजकाल विशेष प्रचलित छे, आ नवी मान्यता प्रमाणे शेष स्थिति नीचे प्रमाणे मनाय छे, चिन्तामणौ —

देवालये गेहविधौ जलाशये,
राहोर्मुखं शंभुदिशो विलोमतः
मीनार्कं सिंहार्कं मृगार्कतस्त्रिभे,
खाते सुखात्पृष्ठविदिकं शुभा भवेत् ॥ ४० ॥

भा०टी०—देवालय, गृह अने जलाशयना खात गुहूर्तमां अनु-
क्रमे मीनादि, सिंहादि तथा मकरादि ३-३ राशिना सूर्यमां शेषतुं
मुख ईशानमां होय छे अने संहार क्रमथी सरकता शेषतुं ते पछीनी
३-३ राशिना सूर्यमां वायव्यकोणमां, ते वादनी ३-३ राशिना
सूर्यमां नैर्ऋत कोणमां अने छेछी धनुआदि, वृषादि अने तुलादि ३-३
राशिना सूर्यमां शेषतुं मुख आग्नेय कोणमां होय छे, शेषना मुखनी,
पेटनी अने पुच्छनी विदिशा छोडीने तेना मुख पाछळनी विदिशा
खातमां शुभ होय छे, मुख ईशानमां होय त्यारे आग्नेयी, वायव्यमां
होय त्यारे ईशान, नैर्ऋतमां होय त्यारे वायव्य अने आग्नेय कोणमां
होय त्यारे नैर्ऋत कोण खात माटे शुभ जाणवो.

उक्त शेष स्थिति संबन्धी बने मान्यतानुसारी चक्रो नीचे
प्रमाणे छे—

शिल्प शास्त्रानुसारी शेषस्थिति चक्र-

विवाहे	देवालये	गृहारंभे	जलाशये	ईशाने	आग्नेये	नैर्ऋत्ये	वायव्ये
२।३।४	१।२।१।२	५।६।७	१०।११।१२	मुख	मध्य	पुच्छ	खात
५।६।७	३।४।५	८।९।१०	१।२।३	खात	मुख	मध्य	पुच्छ
८।९।१०	६।७।८	१।१।१।२।१	४।५।६	पुच्छ	खात	मुख	मध्य
१।१।१।२।१	९।१०।१।१	२।३।४	७।८।९	मध्य	पुच्छ	खात	मुख

अर्वाचीन ज्योतिषग्रन्थानुसारी शेषस्थिति चक्र-

विवाहे	देवालये	गृहारंभे	जलाशये	ईशाने	आग्नेये	नैर्ऋत्ये	वायव्ये
२।३।४	१।२।१।२	५।६।७	१०।११।१२	मुख	खात	पुच्छ	मध्य
५।६।७	३।४।५	८।९।१०	१।२।३	खात	पुच्छ	मध्य	मुख
८।९।१०	६।७।८	१।१।१।२।१	४।५।६	पुछ	मध्य	मुख	खात
१।१।१।२।१	९।१०।१।१	२।३।४	७।८।९	मध्य	मुख	खात	पुच्छ

शेषना अंगो पर खात करवानुं फल—

विदिकुत्रयं स्पृशंस्तिष्ठेत्, स्ववक्त्रनाभिपुच्छकैः ।

शेषस्तत्त्रितयं त्यक्त्वा, भूखानकार्यमाचरेत् ॥ ४१ ॥

नाभौ च त्रियते भार्या, धनं पुच्छे मुखे पतिः ।

इति मत्वा शिलान्यासे, भूखाते तत्रयं त्यजेत् ॥ ४२ ॥

भा०टी०—पोताना मुख नाभि पुच्छ वडे त्रण विदिशाओने स्पर्शाने शेष रहे छे माटे ते त्रणेनो त्याग करी शेष स्पर्श रहित विदिशायां भूमिने खोदवी. नाभिस्थाने खोदवाथी स्त्री, पुच्छे खोदवाथी धन अने मुखभागे खोदवाथी गृहस्वामीनुं मरण थाय छे, माटे खात अने शिलान्यासमां ते त्रणेनो त्याग करवो.

दिशाओमां खात करवानो प्राचीनक्रम आरंभसिद्धौ—

भाद्रादित्रिमासेषु, पूर्वादिषु चतुर्दिशम् ।

भवेद्वास्तो शिरः पृष्ठं, पुच्छं कुक्षिरिति क्रमात् ॥ ४३ ॥

भा० टी०—भाद्रवादि ३-३ मास पूर्वादि ४ दिशाओमां वास्तुनुं मस्तक, पृष्ठ, पुच्छ अने कुक्षि होय छे, एटले भाद्रपद आश्विन कार्तिकमां पूर्वमां मस्तक, दक्षिणमां पृष्ठ, पश्चिममां पुच्छ, उत्तरमां कुक्षि, मार्गशीर्ष पौष माघमां दक्षिणमां मस्तक पश्चिममां पृष्ठ उत्तरमां पुच्छ पूर्वमां कुक्षि, फाल्गुन चैत्र वैशाखमां पश्चिममां मस्तक, उत्तरमां पृष्ठ, पूर्वमां पुच्छ, दक्षिणमां कुक्षि, ज्येष्ठ, अषाढ, श्रावणमां उत्तरमां मस्तक, पूर्वमां पृष्ठ, दक्षिणमां पुच्छ पश्चिममां कुक्षि होय छे. मस्तक पृष्ठ पुच्छ छोडीने कुक्षि भागनी दिशायां खात करवुं.

आरंभसिद्धिना उपर्युक्त विधानमां वास्तुभ्रमण जे अनुलोम गण्युं छे ए तो यथार्थ छे पण वास्तुनुं दक्षिणपार्श्वशयन मान्युं ए चिन्तनीय छे, प्राचीन ग्रन्थोमां वास्तुनुं अनुलोमभ्रमण मानवा साथे

तेने 'वामशायी' एटले डावे पडखे शयन करेल जणावे छे, अने कुक्षिभागे खात करवानुं विधान करे छे, वामशयन अने दक्षिण-शयनमां कुक्षिनी दिशा एकबीजाथी तहन विपरीत आवे छे, आरं-भमिद्धिनुं दक्षिण शयन शो आधार धरावे छे ते कही शकता नथी, पण आ उपरथी एक कल्पना थइ शके के अर्वाचीन ग्रन्थोमां नाग-वास्तुनुं विलोम सर्पण जे प्रचलित थयुं छे तेनुं कारण आ दक्षिण-पार्श्वशयन पण होइ शके,

१ वृषभ वास्तु—

गृहारंभमां जेम शेषवास्तु जोवाय छे तेम “ आरम्भे वृषभं वास्तु ” इत्यादि वचनानुसार आजकाल वृषभवास्तु जोवानुं पण आव-श्यक थइ पडयुं छे, वृषभ वास्तुओ वे प्रकारनां जोवामां आवे छे, 'साभिजित्' अने 'निरभिजित्' प्राचीन ग्रन्थोक्त वृषभवास्तुओमां 'अभिजित्'नी गणना नथी ज्यारे अर्वाचीन ग्रन्थोक्त आ वास्तुमां अभिजित ग्रहण करेल छे, एम छतां बधां 'निरभिजित्' के बधां 'सा-भिजित्' वास्तुओनां पण आपसमां पूरो मेल मलतो नथी, अमो आ वने प्रकारना वास्तुओमांथी नमूनारूपे वे वे वास्तुचक्रोनुं वर्णन आपीये छीये, आजकाल प्रचलित 'साभिजित्' वृषवास्तु-मिताक्षरोक्त।

रविभात् सप्त नेष्टानि, शुभान्येकादशाष्टभात् ।

दशशेषाण्यनिष्ठानि, साभिजिद् वृषवास्तुनि ॥४४॥

भा०टी०—अभिजित सहित वृषवास्तुमां सूर्य नक्षत्रथी ७ नक्षत्रो नेष्ट होय छे, आठमाथी १८ मा सुधीनां ११ श्रेष्ठ होय छे अने बाकीनां १९ माथी २८ सुधीनां १० अनिष्ट होय छे.

१-सूर्यभात् चन्द्रभं-७ नेष्ट, ११ श्रेष्ठ, १० नेष्ट.

२ साभिजित् वृषवास्तु वास्तुप्रकरणोक्त—

वृषवास्तुं प्रवक्ष्यामि, यन्त्राणामुत्तमं स्मृतम् ।
यस्मिन् धिष्ण्ये स्थितः सूर्यस्तदादौ त्रीणि मस्तके ॥४५॥
क्रमाच्चत्वारि धिष्णयानि वृषस्य पूर्वपादयोः ।
चत्वारि वामकुक्षौ च, दक्षिणे च चतुष्टयम् ॥४६॥
ऋक्षाणां च त्रयंपुच्छे, चतुष्कं पश्चिमांघ्रियोः ।
शिरसि त्रीणिपृष्ठे च, विन्यसेत्त्रीणि पूर्ववत् ॥४७॥
मुखे च स्वामिनो मृत्युरुद्रासः पूर्वपादयोः ।
वामकुक्षौ दरिद्रत्वं, दक्षिणे च धनागमः ॥४८॥
रोगव्याधिभयं पुच्छे, स्थैर्यं पश्चिमपादयोः ।
मूर्ध्नि पृष्ठे श्रियं विन्यात्, फलं वृषभवास्तुके ॥४९॥

भा०टी०—यंत्रोमां जे उचम गणाय छे ते वृषवास्तुने कहुं
हुं, जे नक्षत्र सूर्यनुं होय तेने पहेलुं गणी ३ नक्षत्रो वृषभना मुखे,
ते पछीनां ४ वृषभना आगेना पगोए, ४ डावी कुक्षिए, ४ जमणी
कुक्षिए, ३ पुच्छ उपर, ४ पाछलना पगोए, ३ मस्तके अने ३ पीठ
उपर देवां, पछी फल जोवुं, चंद्र नक्षत्र वृषभना मुख पर होय तो
वास्तुस्वामीनुं मृत्यु, आगला पगोए होय तो वास्तु उज्जड थाय,
डावी कुक्षि उपर होय तो निर्धनता, जमणी कुक्षिए धनप्राप्ति, पुच्छ
उपर रोग-व्याधि, पाछलना पगोए स्थिरता अने मस्तक तथा पृष्ठ-
भागे होय तो लक्ष्मीनी प्राप्ति थाय, ए वृषवास्तुनुं फल जाणवुं.

२ सूर्यभात् चंद्रभं—३ने. ४ने. ४श्रे. ३ने. ४श्रे. ३श्रे. ३श्रे.

३ प्राचीननिरभिजित् वृषवास्तु-भूपालवल्लभे—
वृषाकारं लिखेच्चक्रं, सर्वावयवसुन्दरम् ।

गृहारम्भे मतिमान् प्रयत्नेन विलोकयेत् ॥५०॥

सूर्यभात् के त्रिभो राज्यं, प्राक्पदोरब्धिभिर्गमः ।

पश्चिमांग्रयोः स्थितिर्वेदैः, पुच्छे रोग स्त्रिभिस्तु भैः ॥५१॥

कुक्षौ वामेऽन्धिभिर्नैःस्वयं, दाक्षिणेऽम्बुधिभिर्धनम् ।
राज्यलाभस्त्रिभिः पृष्टे, द्वाभ्यां प्रान्ते प्रभोर्मृतिः ॥५२॥

भा०टी०—वृषभना आकारे सर्वावयवसुन्दर चक्र लख्मीने बुद्धिमाने गृहारंभमां प्रयत्नपूर्वकं जोवुं. सूर्यनक्षत्रथी ३ नक्षत्रो वृषभना मस्तके लखवां, तेमां चंद्रनक्षत्र होय तो राज्यप्राप्ति करावे, ते पल्लीनां ४ वृषभना आगला पगोए लखवां, त्यां चंद्र होय तो गमन करावे, ४ पाछला पगोए देवां तेमां चंद्र होय तो स्थिरताकारक, वृषभना पुच्छ उपर ३ नक्षत्रो लखवां, तेमां चंद्रनक्षत्र होय तो रोग करे, ४ नक्षत्रो वृषभनी वामकुक्षिए लखवां, तेमां चंद्र होय तो निर्धनता करे, ४ नक्षत्रो जमणी कुक्षिए लखवां, त्यां चन्द्र होय तो धनप्राप्ति थाय, ते पल्लीनां ३ नक्षत्रो वृषभना पृष्ठभागे लखवां, त्यां चंद्र होय तो राज्यलाभ थाय अने छेला २ नक्षत्रो वृषभना अंतभागे लखवां त्यां चंद्रनक्षत्र होय तो गृहस्वामीतुं मृत्यु थाय.

३. सूर्यभात्-चन्द्रनक्षत्र-३ श्रे. ४ ने. ४ श्रे. ३ ने. ४ ने. ४ श्रे. ३ श्रे. २ ने.

४-निरभिजित् वृषभवास्तु. चक्रावली संग्रहोक्त—

वह्नि ३ बाहु २ मुनि ७ वह्नि ३ कृत ४ नागा ८ अश्व सूर्यभात् ।
क्रमात् शुभाशुभान्याहुर्गेहारंभे मुनीश्वराः ॥५३॥

भा०टी०—सूर्यनक्षत्रथी चंद्रनक्षत्र ३ शुभ, २ अशुभ, ७ शुभ, ३ अशुभ, ४ शुभ, ८ अशुभ छे एम पूर्व मुनीश्वरो कहे छे.
४ सूर्यभात् चंद्रभं-३ श्रे. २ ने. ७ श्रे. ३ ने. ४ श्रे. ८ ने.

५. वृषवास्तुचक्रं. स्वरशास्त्रे—

त्रिवेदान्धित्रिवेदान्धि-द्वित्रिभेष्वर्कतः शशी ।

श्रीर्कद्विः संस्थितिर्व्याधि-नैःस्वयं श्रीः श्रीर्मृतिर्वृषे ॥५४॥

भा०टी०—सूर्यनक्षत्रयो चन्द्रमा वृषवास्तुमां पहेलां ३ नक्ष-
त्रोमां होय तो लक्ष्मीनी प्राप्ति, ते पछीनां ४ नक्षत्रोमां होय तो
ऋद्धि करे, ते पछीनां ४ मां स्थितिकारक, ते पछीनां ३ मां होय
तो व्याधि-रोग करे, ते पछीनां ४ मां निर्धनताकारक, ते पछीनां
४ मां लक्ष्मीकारक, ते पछीनां २ मां होय तो लक्ष्मीकारक अने
छेल्लां ३ नक्षत्रो उपर होय तो मरणकारक थाय छे.

५-सूर्यभात् चन्द्रर्क्ष-११ श्रे० ७ ने० ६ श्रे० ३ ने०

६. वृषवास्तुचक्र-मुंजादित्यनिबन्धोक्त—

यदक्षे वर्तते भानुस्तत्रादौ त्रीणि मस्तके ।

त्रीणि मुखे प्रदेयानि, चत्वारि चाग्रपादयोः ॥५५॥

पश्चात्पदोश्च चत्वारि, पृष्ठे त्रीणि प्रदापयेत् ।

चत्वारि दक्षकुक्षौ च, वामकुक्षौ चतुर्थकम् ॥ ५६ ॥

पुच्छे त्रीणि पुनर्दद्यात्, वृषचक्रे सदा बुधः ।

गृहारंभे प्रयत्नेन, पश्यन्ति विबुधाः सदा ॥ ५७ ॥

भा०टी०—जे नक्षत्र उपर सूर्य रहेलो होय त्यांथी गणीने
३ नक्षत्रो वृषभना मस्तके देवां, ते पछीनां ३ मुखे देवां, पछीनां ४
आगलना पगोए देवां, ४ पाळला पगोए देवां, ३ पृष्ठभागे लखवां,
४ जमणी कुक्षिए ४ डावी कुक्षिए अने ३ वृषभना पूंछे लखवां, आ
प्रकारे विद्वानो वृषभचक्र लखीने गृहारंभमां प्रयत्नपूर्वक ए चक्र जुए छे.

फल—

शिरःस्थे त्रियः संप्राप्ति-रुद्रसं चाग्रपादयोः ।

स्थिरं पश्चिमपादस्थे पृष्ठदेशे धनागमः ॥ ५८ ॥

धनं तु दक्षिणे कुक्षौ, पुच्छे क्लेशकरो भवेत् ।

वामकुक्षौ दरिद्रत्वं, मुखे स्वामिबिनाशनम् ॥ ५९ ॥

भा०टी०—वृषमना मस्तकस्थित नक्षत्रे चंद्र होय तो लक्ष्मीनी प्राप्ति थाय, आगला पगोना नक्षत्रे चंद्र होय तो उजड थाय, पाछला पगोमां चंद्रनक्षत्रे स्थिरता, पृष्ठभागमां चंद्र होय तो धनप्राप्ति, जमणी कुक्षिए धनप्राप्ति, पूंछ उपर क्लेशकारी, वामकुक्षिए दारिद्र्य अने मुखना नक्षत्रे चंद्र होय तो गृहस्वामीनुं मरण थाय.

६ सूर्यभात् चन्द्रभं—३ श्रे. ३ ने. ४ ने. ४ श्रे. ३ श्रे. ४ श्रे. ४ ने. ३ ने. ३ श्रे. ७ ने. ११ श्रे. ६ ने.

७ वृषवास्तु चक्रावली संग्रहोक्त—

बहि ३ बाह्य २ मुनि ७ बहि ३ कृत ४ नागा ८ अ सूर्येभात् ।
क्रमात् शुभाऽशुभान्याहुर्गेहारभे मुनीश्वराः ॥ ६० ॥

भा०टी०—सूर्यनक्षत्रथी चंद्रनक्षत्र ३ शुभ, २ अशुभ, ७ शुभ, ३ अशुभ, ४ शुभ, ८ अशुभ छे एम पूर्वमुनिओ कहे छे.

७ सूर्यभात् चन्द्रभं—३ शु. २ अ. ७ शु. ३ अ. ४ शु. ८ अशुभ.

निशान्तचक्र-चक्रावली संग्रहोक्त

स्युः सप्तसप्ताऽनलभादुडूनि, प्राच्याश्चतुर्दिक्षु निशान्तचक्रं ।
पुरोगपृष्ठस्थमिहौषधीशं, त्यक्त्वा तदारंभणमिष्टमुक्तम् ॥ ६१ ॥

भा०टी०—पूर्वथी आरंभ करी कृत्तिकादि ७-७ नक्षत्रो पूर्वादि चारे दिशाओमां लखी चंद्रनक्षत्र जोवुं, जे दिशाना द्वार वालुं घर होय ते ज दिशा द्वारवाला नक्षत्र उपर चंद्र होय अथवा घरना पृष्ठ भागना द्वारवाला नक्षत्रमां होय ते बखते ते घरना निर्माणो आरंभ न करवो, डावी-जमणी दिशाना कोई ण विहित नक्षत्र उपर होय त्यारे गृह निर्माण करवुं शुभकारक होय छे.

कूर्मचक्र-ज्योतिःसागरे—

तिथिस्तु पञ्चगुणिता, कृत्तिकाष्टक्षसंयुता ।

तथा द्वादशमिश्रा च, नवभागेन भाजिता ॥ ६२ ॥

जले वेदा मुनिश्चन्द्रः, स्थले पञ्च द्रव्यं वसुः ।

त्रिषट्क नव चाकाशे, त्रिविधं कूर्मलक्षणम् ॥ ६३ ॥

जले लाभस्तथा प्रोक्तः, स्थले हानिस्तथैव च ।

आकाशे मरणं प्रोक्तमिदं कूर्मस्य चक्रकम् ॥ ६४ ॥

भा०टी०—तिथिना आंकने पांचगुणो करी कृत्तिकाथी गणतां जे नक्षत्रनो अंक आवतो होय ते तिथिना अंकमां जोडवो अने ते अंक राशिमां वली १२ नो अंक मेलावीने तेने नवनो भाग देवो, भाग लागतां शेष १।४।७ मानो कोई अंक रहे तो कूर्म जलमां, २।५।८ रहे तो कूर्म स्थल उपर अने ३।६।०। शेष रहे तो कूर्म आकाशमां जाणवो. जलमां कूर्म होय तो लाभ, स्थलमां होय तो हानि तथा आकाशमां कूर्म होय तो मरण थाय.

आ उपरथी कूर्मनो वासो जलमां जोई सुहृते आपनुं, कूर्म स्थलमां छे के आकाशमां ए जोवानुं महत्त्व नथी पण महत्त्व जलकूर्मनुं छे तथी जलकूर्म जोवानो एक सुगम उपाय नीचे जणावीये छीए.

जलकूर्मचक्र—

नीचे आपेल १-थी १५ सुधीनी प्रत्येक तिथिना आंकनी सामे आपेल ९-९ नक्षत्रो पैकीनुं कोइ पण नक्षत्र आवतुं होय ता ते दिवसे कूर्मनो वास जलमां छे एम जाणवुं.

जलकूर्म चक्र

तिथि	नक्षत्र								
१	रो	पुन	म	ह	वि	मू	श्र	पूभा	अश्वि
२	मृ	पु	पूर्वा	चि	अनु	पूर्वा	ध	उभा	भ
३	कृ	आर्द्रा	आश्ले	उफा	स्वा	ज्ये	उषा	श	रे
४	रो	पुन	म	ह	वि	मू	श्र	पूभा	अश्वि
५	मृ	पु	पूर्वा	चि	अनु	पूर्वा	ध	उभा	भ
६	कृ	आ	आश्ले	उफा	स्वा	ज्ये	उषा	श	रे
७	रो	पुन	म	ह	वि	मू	श्र	पूभा	अ
८	मृ	पु	पूर्वा	चि	अनु	पूर्वा	ध	उभा	भ
९	कृ	आ	आश्ले	उफा	स्वा	ज्ये	उषा	श	रे
१०	रो	पुन	म	ह	वि	मू	श्र	पूभा	अ
११	मृ	पु	पूर्वा	चि	अनु	पूर्वा	ध	उभा	भ
१२	कृ	आ	आश्ले	उफा	स्वा	ज्ये	उषा	श	रे
१३	रो	पुन	म	ह	वि	मू	श्र	पूभा	अश्वि
१४	मृ	पु	पूर्वा	चि	अनु	पूर्वा	ध	उभा	भ
१५	कृ	आर्द्रा	आश्ले	उफा	स्वा	ज्ये	उषा	श	रे

गृहद्वार शाखाचक्र-सुहृत् चिन्तामणौ—

सूर्यक्षाद्युगमैः शिरस्यथ फलं लक्ष्मीस्ततः क्रोणभै,
नांगैरुद्रसनं ततो गजमितैः शाखासु सौख्यं भवेत् ।

देहत्यां गुणभैर्मृति गृहपतेर्मध्यस्थितैर्वेदैः ।

सौख्यं चक्रमिदं विलोक्य सुधिया द्वारं विधेयं शुभम् ॥६५॥

આંટી૦—સૂર્યનક્ષત્રથી ૪ નક્ષત્રો ઉત્તરંગે દેવા, તેનું ફલ લક્ષ્મીપ્રાપ્તિ, તે પછીનાં ૮ અનુક્રમે ચાર કોણોમાં દેવાં, ફલ ઉદ્ભવ ઘટલે તે ઘર શૂનું રહે, તે પછીનાં ૮ નક્ષત્રો વે શાસ્વાઓમાં દેવાં; ફલ સુખપ્રાપ્તિ, તે પછીનાં ૩ નીચે ઉંચરા ઉપર દેવાં, ફલ ગૃહપતિનું મરણ અને છેલ્લાં ૪ શાસ્વાઓ વચ્ચે દ્વાર મધ્યે દેવાં, ફલ સુખલાભ, આ પ્રમાણે વૃદ્ધિમાને ચક્ર જોઈને દ્વાર શુભ કરાવવું.

શાસ્વાચક્રનો સાગંશ—

સૂર્યનક્ષત્રથી ૪ શુભ, ૮ અશુભ, ૮ શુભ, ૩ અશુભ, ૪ શુભ, આમ શુભ સ્થાનીય નક્ષત્રોમાં દ્વાર મુહૂર્ત કરવું.

પ્રાકાર—દેવનાયતનદ્વાર વત્સચક્ર—ચક્રાવલી સંગ્રહોક્ત-
વિકર્તનાક્રાન્તભતો દ્વિપાર્શ્વમ્, તન્મૌલિતો દિક્ષુ ચતુષ્ટયં ન્યસેત્ ।
ઠયં વિદિક્ષુ અયમન્તરં ક્રમાદ્ધોવિદિક્ષમ્ ન શુભં ચ મળ્હલમ્ ૬૬ ।।
પ્રાકારદેવાયતનાનેઽસૌ ભ્રમો ભચક્રભ્રમણાભ્યચિન્ત્યઃ ।
સદૈવ પાર્શ્વભ્રમરીતિભેદો ગૃહાદિકદ્વાર્યુદિનૈશ્ચ ભાગૈઃ ॥૬૭॥

આંટી૦—સૂર્યાક્રાન્ત નક્ષત્રથી ૪ નક્ષત્રો મસ્તકે, પછીનાં ૪-૪ શાસ્વામાં, જમણી શાસ્વામાં ઉંચરામાં તથા ડાબી ૨-૨ ચાર કોણોમાં અને ૩ નક્ષત્રો દ્વાર મધ્યમાં લખવાં. કોટ તથા દેવાલયમાં, નીચેના ઉંચરાનાં ૪ અને ચાર કોણનાં ૮ નક્ષત્રો અશુભ જાણવાં, દ્વારારોપણમાં આ દ્વાર વત્સચક્રનો વિચાર કરવો ઉત્તરંગ, વે શાસ્વાઓ અને મધ્યનાં નક્ષત્રો દ્વારારોપમાં લેવાં હંમેશાં શાસ્વા તથા કોણ ભાગે ગૃહદ્વાર ચક્રમાં કઠ્યા પ્રમાણે જ આમાં પણ નક્ષત્રો લખવાની રીતિ છે, નીચે ૪ અને મધ્યાન્તરે ૩ લખવાની આમાં વિશેષતા છે.

સૂર્યમાત્ર ચંદ્રમ્—૮ શ્રે. ૪ ને. ૪ શ્રે. ૮ ને. ૩ શ્રે.

देवालयद्वार चक्र—

अर्काचत्वारि ऋक्षाणि, ऊर्ध्वे चैव प्रदापयेत् ।
 द्वे द्वे दद्याच्च कोणेषु, शाखायां च चतुश्चतुः ॥६८॥
 अधश्चत्वारि देयानि मध्ये त्रीणि प्रदापयेत् ।
 ऊर्ध्वे तु लभते राज्यमुद्वेगः कोणभेषु च ॥६९॥
 शाखायां लभ्यते लक्ष्मीर्मध्ये राज्यपदं तथा ।
 अधःस्थे मरणं पत्युर्द्वारचक्रे प्रकीर्तितम् ॥७०॥

कन्यादित्रिभिर्गो सूर्ये, द्वारं पूर्वादिषु त्यजेत् ।

मृष्ट्या वत्समुग्रं तत्र, स्वामिनो हानिकृद् भवेत् ॥७१॥

भा०टी०—कन्या तुला वृश्चिक, धनु मकर कुंभ ३, मीन मेष
 वृष, ४ मिथुन कर्क सिंह—आ ४ राशित्रिकोना सूर्यमां अनुक्रमे पूर्व,
 दक्षिण, पश्चिम, उत्तर मुखवाला घने के चैत्योत्तुं द्वारारोपण करतुं
 नहिं, कारण के आ व्रण व्रण संक्रांतियोमां सृष्टिक्रमे दिशाओमां
 वन्मवासो संमुख होय छे, जे वास्तु स्वामिने हानिकारक थाय छे.

ग्रन्थान्तरेवत्सचारने अंगे विशेष विधान मले छे जे नीचे प्रमाणे छे—

पञ्च—१ दिक् १० तिथि १५ सत्रिंश ३०,

तिथि १५ दिक् १० पञ्च ५ वासरान् ।

वत्सस्थितिर्दिकूचतुष्के, प्रत्येकं सप्तभाजिते ॥

भा०टी०—वत्सस्थिति चार दिशाओ पैकी प्रत्येक दिशामां
 ७-७ स्थाने होय छे, जे समये वत्स ज्यारे नवी दिशामां जाय
 छे, त्यारे ५ दिवस ते दिशाना कोणना छेडा पासे रहे छे, ते पछी
 कोणथी आगल वधी १० दिन दिशार्धना मध्यभागे अने त्यांथी
 मरकी १५ दिवस दिशामध्यनी वहार रहे छे, ते पछी दिशा
 मध्यमां जई ३० दिवस त्यां रहे छे त्यांथी आगे भागे चालतो

१५-१०-५ दिवसना क्रमे त्रीजो मास पूर्ण करी आगेनी दिशामां जाय छे अने त्यां पण जुदा जुदा भागोमां रहीने ३ मास पूरा करे छे, आम प्रत्येक दिशामां वत्सनी स्थिति रहे छे, आमां मध्यना ३० दिवसनी वत्सस्थितिमां ते संमुख के पाछल पडतो होय त्यारे द्वारारोप अथवा प्रतिमा प्रवेश कदापि न कराववो, वत्स थोडो पण डाबो जमणो दिशान्तरित होय त्यारे खास बांधो नथी. एनो तात्पर्यार्थे ए थयो के तुला, मकर, मेष, कर्क आ चार राशिओमां अनुक्रमे पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर दिशाना घर आदिनुं द्वार न चढाववुं; वृश्चिक, कुंभ, वृषभ, सिंह राशिना सूर्यमां कोई पण दिशा संमुख द्वार चढाववामां वत्सनो दोष नथी. आ फलितार्थे रूपे ज ग्रन्थान्तरमां—

सिंहे चैव तथा कुम्भे, वृश्चिके वृषभे तथा ।

न वत्सदोषो कर्तव्यं, द्वारं चतुर्दिशा मुखम् ॥ ७२ ॥

आ श्लोक लखायो छे.

कन्या, धन, मीन, मिथुन आ ४ द्विस्वभाव राशिना सूर्यमां कोई पण दिशा संमुख द्वारारोपण करातुं नथी, धन, मीन तो मलमास रूपे वर्जित छे ज अने मिथुन कन्या संक्रांतिओ पण गृहकार्यमां वर्जित करेली छे.

वत्सस्थितियंत्रक—

	५	१०	१५	३०	१५	१०	५
	५	कन्या	तुला	वृश्चिक	५		
	१०	सिंह	पूर्वदिशा	धन	१०		
	१५	कर्क	उत्तर	वत्सचक्र	१५	दक्षिणदिशा	१५
	३०	मिथुन	पश्चिमदिशा	३०		मकर	३०
	१५	१५		१५		कुंभ	१५
	१०			१०		१०	१०
	५	वृष	मेष	मीन	५		
	५	१०	१५	३०	१५	१०	५

नीचे जणावेल कार्योमां वत्सदोष नडतो नथी.

द्वारस्याभ्यन्तरे द्वारे, प्रासादे च चतुर्मुखे

प्रतिष्ठामण्डपे होमस्थाने वत्सं न चिन्तयेत् ॥ ७३ ॥

भा०टी०—वास्तुना बाह्य मुख्यद्वारानी अंदरना द्वारगोपणमां, चतुर्मुख प्रासाद अथवा घरप्रतिष्ठा मंडप के होमशालाने द्वारगोपणमां वत्सदोष विचारवानी आवश्यकता नथी.

राहुचक्रनुं निरूपण—

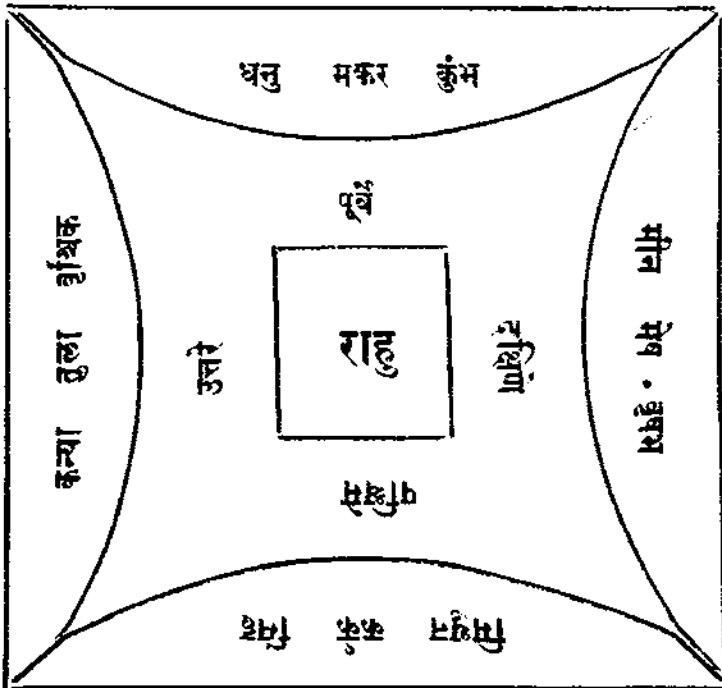
मागसर पोसह माह अंतर, पूविइं वसइ राहनिरंतर ।

फागुण चैत्र वैसाख संजुत्त, दक्षिण राह वसइ निरुत्त ॥१॥

जेठ आसाह श्रावण मासिइं, पश्चिम राहु वसइ विलासिइं ।

भाद्रवद् आसौ कार्तिक दहनानुं उत्तर राहु करद् पियाणुं ॥२॥
 कौमठ देउल आराम विहार, संमुख राहु न कीजद् वार ॥
 संमुख राहु जद्मंदिर थप्पद्, मरद् कलत्र कद् निर्धन अप्पद् ॥३॥

आ प्राचीन भाषापद्योमां मागसर आदिथी पूर्वादिमां राहु भ्रमण जणाव्युं छे, ज्यारे “ मीनादित्रयमादित्यो ” आ संस्कृत श्लोकमां “ धन्वादित्रितये राहुः ” आ वाक्यथी मीन, मिथुन कन्यादि ३-३ राशिना सूर्यमां सृष्टिकमथी पूर्वादि दिशाओमां राहनो निवास जणाव्यो छे, आ बने कथननुं तात्पर्य एक ज छे, प्रथम कथन अमान्त महीनानी अपेक्षावालुं छे ज्यारे बीजुं विधान सौर मासनी अपेक्षावालुं छे.



स्तंभचक्र—

सूर्याधिष्ठितभात् त्रयं प्रथमतो मध्ये तथा विंशतिः।
स्तम्भाग्रे शरसंख्यया मुनिवरैः प्रोक्तानि धिष्ण्यानि च।
स्तंभाधो मरणं भवेद् गृहपतेर्मध्येधनार्थं प्रदं ।

सौख्यं काञ्चनवर्धनं, प्रकुरुते स्तंभाग्रभं मृत्युकृत् ॥७४॥

भा०टी०—रविया नक्षत्राणी ३ नक्षत्रो प्रथम स्तंभमूले देवां,
ए पत्नीनां २० स्तंभना मध्यमां देवां अने ५ स्तंभना मस्तके देवां,
आम स्तंभचक्र लखी पत्नी फल जीवुं. स्तंभना नीचेना ३ नक्षत्रोमां
स्तंभ उभो करे तो गृहपतिनुं मरण थाय, ते पत्नीनां मध्यस्थित २०
नक्षत्रो धन धान्य-आपनारां, सुख तथा सुवर्णादिनी वृद्धि करनारां छे
स्तंभना मथाळे आवेल छेळां ५ नक्षत्रो पण गृहपतिनुं मृत्यु करनारां
छे माटे टालवां. आ प्रमाणे स्तंभचक्रमां सूर्यभात् ३ नेष्ट, २० श्रेष्ठ
अने ५ नेष्ट छे.

स्तंभोच्छ्रायमां एथी अधिक कंड जोवानुं नथी, पण उभो
करवाना समये कुंकुम चंदनादिके स्तंभनुं पूजन जरूर करवुं, धूप
उखेववो, माला पहाराववी अने पत्नी ते उभो करवो. वराह कहे छे—

“छत्रस्रग्गन्धयुतः, कृतधूपविलेपनः समुत्थाप्यः ।

स्तम्भस्तथैव कार्यो, द्वारोच्छ्रायः प्रयत्नेन ॥”

भा०टी०—छत्र, पुष्पमाला, गन्ध वडे युक्त करी धूप विलेपन करीने
स्तंभने उभो करवो अने ए ज रीते यत्नपूर्वक द्वार पण चढाववो.
स्तंभ उभो कर्या पत्नी अशुभ निमित्तोथी वचाववो. उत्पल कहे छे—

“स्तंभोपरि यदा घूक-काकगृध्रादिपक्षिणः ।

व्यालादयश्च तिष्ठन्ति, तदा फलं न शोभनम् ॥

तस्मात्स्तम्भोपरि छत्रं, शाखां फलवतीं तु वा ।

धारयेदथवा वस्त्रं, बुद्धने रत्मानि निक्षिपेत् ॥”

भा०टी०—स्तंभ उपर जो घूबड, काग, गृध्र आदि पक्षिओ के सर्ष आदि बेसे तो करानार माटे शुभ निमित्त नथी. तेथी स्तंभो-च्छ्राय करी ते उपर छत्र वा फलवाळी वृक्ष शाखा ढांकवी अथवा वस्त्रमां रत्न बांधी ते कांठे बांधवुं.

मोभचक्र—

मूले मोभे त्रिकक्षं गृहपतिमरणं पञ्चमध्ये सुखं स्यात् ,
मध्ये स्यादष्टक्षं धनसुतसुखदं पुच्छदेशेऽष्टहानिः ।
पश्चान्मोभे त्रिकक्षं शुभफलमतुलं भाग्यपुत्रार्थदं च,
सूर्यक्षां चन्द्रक्षं प्रतिदिनमुद्यानमोभचक्रे विलोक्यम् ॥७५॥

भा०टी०—सूर्यनक्षत्रथी ३ मोभना मूलमां लखवां, तेमां जो चंद्र होय तो गृहस्वामीनुं मरण थाय, ५ नक्षत्रो मोभना मध्य भागे लखवां, तेमां जो चंद्र होय तो सुखदायक थाय, ८ ते पछीनां बली मध्ये लखवां त्यां चंद्र होय तो धन तथा पुत्रनुं सुख थाय. पुच्छ भागे ८ नक्षत्रो लखवां त्यां चंद्र होय तो हानि करे, मोभना छेला भागे ३ नक्षत्रो लखवां. तेमां जो चंद्र होय तो अतुल शुभ फल भाग्य पुत्र संपत्तिदायक थाय.

सूर्यभात् चंद्रभ-३ ने०, ५ श्रे०, ८०, ने०, ३ श्रे०,

घण्टाचक्र-आमलसारास्थापनचक्र—

घण्टाचक्रं विधायैवं, मध्यपूर्वदिशाक्रमात् ।
त्रीणि त्रीणि प्रदेयानि, सृष्टिमार्गेण चार्कभात् ॥७६॥
मध्ये चैव स्मृतो लाभः, पूर्वभागे जयो रणे ।
आग्नेयां चैव हानिः स्याद्, दक्षिणे पतिनाशनम् ॥७७॥
नैर्ऋत्यां पारणालाभः, पश्चिमे सर्वदा सुखम् ।
वायव्यामश्वलाभः स्यादुत्तरे व्याधिसंभवः ।
ईशाने वस्त्रलाभश्च, घण्टाचक्रफलं स्मृतम् ॥७८॥

भा०टी०—घंटा-आंबलसारुना आकारनुं चक्र बनावी तेना मध्य, पूर्व, आग्नेयी, दक्षिण आदि सृष्टिक्रमे अनुक्रमे २७ नक्षत्रो लखवां, सूर्यनक्षत्रथी मध्यमां ३ नक्षत्रो स्थापवां, ३ पूर्वमां, ३ अग्निकोणमां, ३ दक्षिण दिशामां, ३ नैर्ऋत कोणमां, ३ पश्चिममां, ३ वायव्य कोणमां, ३ उत्तरमां अने ३ नक्षत्रो ईशान कोणमां लखी मुहूर्तना दिवसे जोवुं. जो चन्द्रनक्षत्र मध्यमां होय तो लाभ, पूर्वमां होय तो लडाइमां जीत, अग्निकोणमां धनहानि, दक्षिणमां कर्तानुं मरण, नैर्ऋत कोणमां संततिनो लाभ, पश्चिममां सदा सुख, वायव्यमां घोडानो लाभ, उत्तरमां रोगनी प्राप्ति अने ईशानमां वस्त्रलाभ थाय. आ प्रकारे घंटाचक्रनुं फल कहेलुं छे.

सूर्यभात् चंद्रभ-६ श्रे०, ६ ने०, ९ श्रे०, ३ ने०, ३ श्रे०.

१ कलशचक्र-मुहूर्तचिन्तामणौ—

वक्त्रे भू रविभात् प्रवेशसमये कुम्भेऽग्निदाहः कृताः,
प्राच्यामुहस्रनं कृता यमगता लाभः कृताः पश्चिमे ।

श्रीर्वेदाः कलिरुस्तरे युगमिता गर्भे विनाशो गुदे,

रामाः स्थैर्यमतः स्थिरस्वमनलाः कण्ठे भवेत् सर्वदा ॥७९॥

भा०टी०—प्रवेशमां जोवाता कलशचक्रमां सूर्यनक्षत्रथी १ कलशना मुखे देवुं तनुं फल अग्निदाह, पछीनां ४ पूर्वदिशा भागे देवां, फल उजड थाय, पछीनां ४ दक्षिण विभागे देवां, फल-लाभ-कारक, ४ पश्चिम विभागे फल लक्ष्मी प्राप्ति, ४ उत्तर विभागे फल कलहकारक, ४ कलशना गर्भमां देवां, फल-गर्भनो नाश करे, ३ कलशना गुदा विभागे नीचे देवां फल स्थिरता, ३ कलशना कंठे देवां, फल-स्थिरताकारी.

सूर्यभात् चंद्रभ-५ ने०, ८ श्रे०, ८ ने०, ६ श्रे०,

२ कलशचक्र-ज्योतिःप्रकाशे—

भूर्वेदपञ्च त्रिस्त्रिः प्रवेशे कलशोऽर्कभान् ।

मृतिर्गतिर्धनं श्रीः स्याद्, वैरं रुक् स्थिरता सुखम् ॥८०॥

भा०टी०—कलशचक्र प्रवेशमां जोषुं त्यां सूर्यनक्षत्रथी १ नक्षत्र मृत्युकारक, पङ्कीनां ४ भ्रमण करावे, ४ धनप्राप्ति, ४ लक्ष्मीलाभ, ४ विरोध करावे, ४ रोगकारक, ३ स्थिरताकारी, ३ सुखकारक छे.

सूर्यभात् चंद्रर्भे—५ ने०, ८ श्रे०, ८ ने०, ६ श्रे०.

उपर्युक्त १ चक्र अने आ बीजा चक्रमां मात्र फलगत विशेषता छे, बीजो फेरफार नथी.

३ कलशचक्र—

मुखैकं दिक्षु चत्वारि, गर्भे चत्वारि चैव च ।

कण्ठे त्रीणि गुदे त्रीणि, रव्यादे स्थापयेत् क्रमात् ॥८१॥

मुखैकं स्वामिनो घातः पूर्वं उ०सनं भवेत् ।

दक्षिणे चार्थलाभश्च, पश्चिमे संततिर्भवेत् ॥८२॥

उत्तरे कलहं विद्याद् गर्भे गर्भा विनश्यति ।

कण्ठे च श्रियमाप्नो, गुदे रोगो मृतिर्भवेत् ॥८३॥

भा०टी०—कलशचक्रे सूर्यनक्षत्र मुखे देवुं, पूर्वादि चार दिशाओमां ४-४ देवां, गर्भे ४ देवां, ३ गले अने ३ गुदास्थाने देवां. मुखनुं नक्षत्र गृहस्वामीनो घात करे, पूर्वनां ४ उजड करे, दक्षिणनां ४ धनलाभ करे, पश्चिमनां ४ संतानकारक, उत्तरनां ४ कलहकारी, गर्भनां ४ गर्भनो नाश करनारां, गलानां ३ लक्ष्मीदायक अने गुदानां ३ नक्षत्रो रोग तथा मृत्युकारी छे, आ चक्रमां पण फलना अंगे ज भिन्नता छे.

सूर्यभात् चंद्रर्भे—५ ने०, ८ श्रे०, ८ ने०, ३ श्रे०, ३ ने०.

४ कलशचक्र-भूपालवल्लभे—

एकं मुखे गले त्रीणि, प्राच्यादौ षोडश क्रमात् ।
 वेदा गर्भे त्रीणि गुदे, सूर्यभात् कलशं न्यसेत् ॥८४॥
 शिरच्छेदो मृत्तिः स्थान-हानिर्लाभो धनागमः ।
 दुःखं गर्भच्युतिर्मृत्यु-गृहेप्रविशतां क्रमात् ॥८५॥

भा०टी०—कलशचक्रे सूर्यनक्षत्रथी १ मुखे, ३ गले, ४-४
 चार दिशाभोमां, ४ गर्भमां, ३ गुदा स्थाने, आ स्थानमां नक्षत्रोर्तुं
 अनुक्रमे फल-१ शिरच्छेद, ३ मृत्यु, ४ स्थानहानि, ४ लाभ, ४
 धनप्राप्ति, ४ दुःख, ४ गर्भस्त्राव, ३ मृत्यु. आ प्रमाणे प्रवेश
 करनाराजोने फल मले.

सूर्यभात् चंद्रभं-८ ने०, ८ श्रे०, ११ ने०.



(१) तिथि

तिथिओ १५ छे, प्रतिपदादि पूर्णिमान्त, कृष्णपक्षनी अन्तिम तिथि अमावास्याना नामथी प्रसिद्ध छे, आ सर्व तिथिओना स्वामिओ छे, अने ते सकारण छे. पंदर तिथिओने ३ भागमां वहेची ने नन्दा, भद्रा, जया, रिक्ता, पूर्णा आ नामोथी ओठखावी कइ तिथिमां कयां कामो करवां ए बधी वातोनी पूर्वग्रन्थकारोए निर्णय आपेलो छे, जिज्ञासुओनी जिज्ञासा पूर्वार्थ अत्रे थोडुंक वर्णन करवुं योग्य धारीये छीये.—

बह्निविधाताऽद्रि सुता गणेशः,
सर्पः कुमारो दिनपो महेशः ।
दुर्गा यमो विश्वहरी च कामः,
शिवो निशीशश्च पुराणदृष्टः ॥ ८५ ॥

भा०टी०—अग्नि, ब्रह्मा, गौरी, गणेश, सर्प, कार्तिकेय, सूर्य, महेश्वर, दुर्गा, यमराज, विश्वदेव, विष्णु, कामदेव, शिव, अने चन्द्रमा ए प्रतिपदादि तिथिओना पौराणिक स्वामिओ छे. संहिताओमां तिथिस्वामीओ अनुक्रमे नीचे प्रमाणे बतावेल छे—धाता १ विधाता २ विष्णु ३ यम ४ चन्द्र ५ कार्तिकेय ६ इन्द्र ७ वसु ८ नाग ९ धर्म १० शिव ११ सूर्य १२ काम १३ कलि १४ विश्वदेव १५ आ प्रतिपदादि पूर्णिमा पर्यन्त १५ तिथिओना स्वामिओ छे. शुक्लपक्ष—कृष्णपक्षनां भेद नथी, मात्र अमावास्याना स्वामी पितरो छे.

नन्दा च भद्रा च जया च रिक्ता,
पूर्णेति सर्वास्तिथयः क्रमात्स्युः ।

शुक्लेऽधमा मध्यमकोत्तमास्ताः,
पक्षेऽसितेऽप्युत्तममध्यहीनाः ॥ ८६ ॥

भा०टी०—नन्दा, भद्रा, जया, रिक्ता अने पूर्णा आ नामनी अनुक्रमे सर्व तिथिओ होय छे, आमां शुक्लपक्षमां पहेली ५ अधम मध्यनी ५ मध्यम अने अन्तनी ५ अधम होय छे. अने कृष्णमां एथी उलट क्रमे ते उत्तम मध्यम अने अधम गणाय छे.

तिथि विधेय कार्यो—

नोद्वाहयात्रोपनयप्रतिष्ठा,
मीमन्तचौलाखिलवास्तुकर्म ।
गृहप्रवेशाखिलमंगलाद्यं,
कार्यं हि मासादितिथौ कदाचित् ॥ ८७ ॥
सप्ताङ्गचिह्नानि नृपस्य वास्तु,
व्रतप्रतिष्ठाखिलमंगलानि ।
यात्राविवाहाखिलभूषणं यत्,
कार्यं द्वितीयादितिथौ सदैव ॥ ८८ ॥
संगीतविद्याखिलशिल्पकर्म,
मीमन्त चौलान्नगृहप्रवेशम् ।
कार्यं द्वितीये दिवसे यदुक्तं,
सदा तृतीये दिवसेऽपि कार्यम् ॥ ८९ ॥
रिक्तासु शत्रोर्वधबन्धशस्त्र-
विषाग्निघातादि च याति सिद्धिम् ।
सन्मंगलं तासु कृतं च सूदै-
र्विनाशमायाति तदा तु नूनम् ॥ ९० ॥
शुभानि कार्याणि चरस्थिराणि,
चोक्तान्यनुक्तान्यपि यानि तानि ।

सिद्धिं प्रयान्त्याशु ऋणप्रदानं,
विना सदा नागतित्थौ प्रभूतम् ॥ ९१ ॥

भा०टी०—विवाह, यात्रा, उपनयन, प्रतिष्ठा, सीमन्त, चूडा-
कर्म, सर्व वास्तुकर्म अने गृहप्रवेशादि सर्व मांगल्य कार्यो शुक्ल
प्रतिपदाने दिवसे कदापि न करवां. राजानां सप्तांग चिह्नो, वास्तुकर्म,
व्रत, प्रतिष्ठादिक सर्व मांगलिक कार्यो, यात्रा, विवाह, सर्व आभूषण
आदि कार्य द्वितीयादि तीथिना दिवसे सदा करवां. संगीतविद्या,
सर्व प्रकारनुं शिल्पकर्म, सीमन्त, चूडाकर्म, अन्नप्राशन, गृहप्रवेश
अने द्वितीया तिथिए करवानां जे कार्यो कहां छे ए पण वधां कार्यो
तृतीयाना दिवसे पण करवां.

रिक्ता तिथिओमां (चोथ-नवमी-चतुर्दशीमां) शत्रुनो वध,
बन्ध, शस्त्र, अग्नि, विषप्रयोग, घातादि कार्यो सिद्धिने पामे छे.
आ रिक्ताओमां मूढ माणसो द्वारा करायेलां मांगलिक कार्यो
निश्चयथी नाश पामे छे. चर के स्थिर कहेल के न कहेल मात्र एक
ऋणदान विना वधां शुभ कार्यो पंचमीए करवाथी जल्दी सिद्ध
थाय छे.

अभ्यङ्गयात्रापितृकर्मदन्त-
काष्ठं विना पौष्टिकमंगलानि ।
षष्ठ्यां विधेयानि रणोपयोग्य-
शिल्पानि वास्त्वम्बरभूषणानि ॥ ९२ ॥

द्वितीयायां तृतीयायां पंचम्यां सप्तमीतिथौ ।
उक्तानि यानि सिध्यन्ति, दशम्यां तानि सर्वदा ॥ ९३ ॥

भा०टी०—अभ्यंग (तैलमर्दन) यात्रा, पितृकर्म, दन्तधावन
आ चार कार्यो सिवाय पौष्टिक, मांगलिक, युद्धोपयोगी शिल्पकर्म,

વાસ્તુકર્મ, વસ્ત્રપરિધાન, ધૂષણ, ધારણ, એ કાર્યો ષષ્ટીમાં કરવાં. દ્વિતીયા તૃતીયા અને પંચમીમાં કરવાનાં સર્વ કાર્યો સપ્તમીમાં કરવાથી સિદ્ધ થાય છે. યુદ્ધોપયોગી વાસ્તુકર્મ, શિલ્પ, નૃત્યના ખેતો, સ્ત્રી સેવા, રત્નવિધિ, સર્વ ધૂષણો આ કામો અષ્ટમીમાં કરવાં, દ્વિતીયા, તૃતીયા, પંચમી અને સપ્તમીએ કરવાનાં જે કાર્યો કહ્યાં છે તે સર્વ દશમીએ કરવાથી સિદ્ધ થાય છે.

વ્રતોપવાસાંચિલધર્મકાર્ય-
સુરોત્સવાદ્યાંચિલવાસ્તુકર્મ ।
સંગ્રામયોગ્યાંચિલવાસ્તુકર્મ,
વિશ્વે તિથૌ સિદ્ધયન્તિ શિલ્પકર્મ ॥ ૧૪ ॥

પૃથિવ્યાં યાનિ કાર્યાણિ, કર્મપુષ્ટિશુભાનિ ચ ।
ષરસ્થિરાણિ દ્વાદશ્યાં યાત્રાન્નગ્રહણં વિના ॥ ૧૫ ॥
વિઘાતૃગૌરીભુજગ-ભાન્વન્તકદિનેષુ ચ ।
ઉક્તાનિ તાનિ સિદ્ધ્યન્તિ, ત્રયોદશ્યાં વિશેષતઃ ॥ ૧૬ ॥

યજ્ઞક્રિયાપૌષ્ટિકમંગલાનિ,
સંગ્રામયોગ્યાંચિલવાસ્તુકર્મ ।
ઉદ્ગ્રાહશિલ્પાંચિલધૂષણાદ્યં,
કાર્યં પ્રતિષ્ઠાંચિલપૌર્ણમાસ્યામ્ ॥ ૧૭ ॥

સદૈવ દર્શં પિતૃકર્મ ચૈવ,
નાન્યત્ વિધેયં શુભપૌષ્ટિકાદ્યમ્ ।
મૃદૈઃ કૃતં તત્ર શુભોત્સવાદ્યં,
વિનાશમાયાત્યચિરાદ્ધુવં તત્ ॥ ૧૮ ॥

આ૦ટી૦—વ્રત, ઉપવાસ, સર્વ ધાર્મિક કાર્ય, દેવ સમ્બન્ધી ઉત્સવાદિ સર્વ વાસ્તુકાર્ય, યુદ્ધોપયોગી વાસ્તુકાર્ય અને શિલ્પકર્મ એ

सर्व कार्यों एकादशीमां करवाथी सिद्ध थाय छे. पृथ्वी उपर यात्रा अने अन्नप्राशन सिवाय जे चर स्थिर शुभ अने पौष्टिक कार्यों छे, ते द्वादशीमां करवाथी सिद्ध थाय छे. द्वितीया, तृतीया, पंचमी, सप्तमी, दशमीए करवानां कार्यों त्रयोदशीए करवाथी विशेष प्रकारे सिद्ध थाय छे. यज्ञकर्म, पौष्टिक, मांगलिक, युद्धोपयोगी सर्व वास्तुकर्म, विवाह, शिल्पकर्म, सर्व प्रकारना आभूषणो अने प्रतिष्ठानां कार्यों पूर्णिमाए करवां. अमावास्याना दिवसे पितृकर्म (श्राद्धादि) विना बीजुं कर्म शांतिक पौष्टिकादि कंइ पण करवुं नही. मूर्खों द्वारा अमावास्याना दिवसे जे शुभ उत्सवादि कराय छे ते अवश्य विनाश पामे छे.

चतुर्दश्यष्टमी कृष्णा, त्वमावास्या च पूर्णिमा ।

पुण्यानि पंच पर्वाणि, संक्रान्तिर्दिनपस्य च ॥ १९ ॥

पञ्चपर्वसु पाते च, ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः ।

नरश्चाण्डालयोनिः स्यात्, तैलस्त्रीमांससेवनात् ॥ १०० ॥

पञ्चपर्वसु नन्दासु, न कुर्यादन्तधावनम् ।

तत्र कुर्यादनादृत्य, स नरो विधिहन्तकः ॥ १०१ ॥

भा०टी०—बंने चतुर्दशी कृष्णाष्टमी अमावास्या पूर्णिमा ए पुण्य पर्वो छे, तेम मूर्यसंक्रान्ति पण पर्व छे. ए पांच पर्वोंमां पातमां अने चन्द्र मूर्यना ग्रहणमां तैलाभ्यंग, स्त्रीसेवन अने मांस भक्षण करनार पुरुष भवान्तरमां चण्डालनी योनिमां उत्पन्न थाय छे, पांच पर्वों अने नन्दातिथिओमां दन्तधावन न करवुं जोइये, जे मनुष्य आ वातना अनादर करीने उक्त कामों करे छे, ते विधिहतक समजवो.

नवमी त्रिविधा ज्ञेया, प्रवेशनवमी प्रयाणनवमी च ।

नवमदिनं निर्गमतः प्रवेशनवमीति विख्याता ॥ १०२ ॥

नवमदिनं प्रवेशाद् यत्, प्रयाणनवमी च नवमदिनम् ।
सततं नवमी त्रितयं, यात्रायां प्राणहानिदं यालुः ॥१०॥

भा०टी०—नवमी त्रण प्रकारनी जाणवी, रिक्तानवमी प्रयाण-
नवमी अने प्रवेशनवमी, नवमी तिथिए रिक्तानवमी, प्रयाणनो-
नवमो दिवस ते प्रवेशनवमी, प्रवेशथी जे नवमो दिवस ते प्रयाण
नवमी. आ त्रण नवमीओ यात्रामां अवश्य वर्जवी, कारण के यात्रा
करनारने प्राण हानि करनारी थाय छे.

भिन्न भिन्न कार्योना मुहूर्तोने अंगे भिन्न भिन्न तिथिओ
विहित अने निषिद्ध होय छे. बने पक्षनी २-३-५-७-१०-११-
१३ अने शुक्ल १५ अने कृष्णा १ आ तिथिओ प्रत्येक शुभ कार्यमां
विहित छे, ज्यारे बने पक्षनी ४-६-८-९-१२-१४ आ तिथिओने
पक्षरंध्रा गणी शुभ कार्योमां वर्जित करेली छे.

ग्रहण करना योग्य वर्जित तिथि आ अशुभ घटिकाओ व्यतीत
थया पछीना तिथिभुक्तिकालमां मुहूर्त अपाय तो तेमां पण तिथि
शुद्धि ज गणाय छे. आ निषिद्ध तिथिओ पैकीनी कइ तिथिनी
केटली आदीनी घडीओ गया पछी ते शुद्ध गणाय ते नीचे प्रमाण
पद्यथी जाणी सकाशे.

कलि १४ वसु ८ गणपति ४ षण्मुख ६

हरि १२ दुर्गा ९ तिथिषु पक्ष रन्ध्रासु ।

शर-५ मनु १४ वसु ८ गो ९ दशभि १०

स्तत्व २५ विहीनान्त्यनाडिकाः शुभदाः ॥ १०४ ॥

भा०टी०—चतुर्दशी, अष्टमी, चतुर्थी, षष्ठी, द्वादशी, नवमी
आ पक्षरन्ध्रातिथिओमां अनुक्रमे ५-१४-८-९-१०-२५ आदिनी
घडीओ पछीनी घडीओ शुभदायक होय छे.

कुलोपकुल-तिथिओ—

प्रतिपदा वृतीया, पंचमी, सप्तमी, नवमी, एकादशी, त्रयोदशी पूर्णिमा आ आठ तिथिओ उपकुल छे. चतुर्थी अष्टमी द्वादशी चतुर्दशी कुल छे, अने द्वितीया षष्ठी, दशमी, आ ३ तिथियो कुलो-पकुल संज्ञक छे. उपकुल तिथिमां प्रयाण करनार युद्धमां जीते, कुलमां युद्ध थाय तो स्थायी जीते, कुलोपकुलमां संधी थाय.

तिथि वृद्धि तिथि क्षयः—

पक्षरन्ध्र तिथिओनी जेम ज तिथिवृद्धि अने तिथिक्षय पण शुभ कार्यमां वजित करेला छे. एनी व्याख्या नीचे प्रमाणे छे—

श्रीन् वारान् स्पृशती त्याज्या, त्रिदिनस्पर्शिनी तिथिः ।

वारं तिथिन्न्यस्पर्शिन्यवमं मध्यमा च या ॥ १०५ ॥

भा०टी०—त्रण वारोने स्पर्शनारी तिथि त्रिदिन स्पर्शिनी कहेवाय छे. एटले के त्रण वारो पैकीना वचला वारने स्पर्शती तिथि वजित छे. एथी विपरीत एक वार ज्यारे त्रण तिथिओने स्पर्श छे त्यारे तिथि क्षय थाय छे. आ एक वारे स्पर्शली त्रण तिथिओ पैकीनी वचली तिथि अवम एटले क्षीण तिथि गणाय छे. आ वस्तु नीचेना उदाहरणोथी समजाशे.

एक तिथि त्रण वारनो स्पर्श करे तेनुं उदाहरण—

संवत् २०१०ना चण्डमार्त्तण्ड पञ्चाङ्गमां ज्येष्ठ शुक्ला नवमी-नी वृद्धि छे. ज्येष्ठ शुदी ८ शुक्रवारे अष्टमी घटी ५७ पल० छे— शनिवारे प्रथम नवमी घटी ६० पल छे. अने द्वितीय ९ नवमी रविवारे घटी १ पल २६ छे. ज्येष्ठ शुदि ८ नी ५७ घडीओ बीत्या पछी नवमी लागी एटले ३ घडी पर्यन्त अष्टमीना वार शुक्रनो नवमीए स्पर्श कर्यो, प्रथम नवमीना वार शनिनो नवमीए ६० घडी

“सूर्यदग्धा” होय छे. तेने शुभ कार्यमां वर्जवी, आ नियमनुं फलितार्थ नीचेना श्लोकमां बतावेल छे:—

दग्धाऽर्केण धनुर्मानि, वृषकुंभेऽजकार्किणि ।

द्वन्द्वकन्ये मृगेन्द्रालौ, तुलैणे द्वयादियुक्तिथिः ॥१०७॥

भा०टी०—धनु मीनमां २ वृष कुंभमां ४ मेष कर्कमां ६ मिथुन कन्यामां ८ सिंह वृश्चिकमां १० अने तुला मकरमां १२, आ द्वितीयदि समतिथिओ सूर्यथी दग्ध होय छे.

अर्वाचीन ज्योतिषी ग्रन्थोमां चन्द्रदग्धा तिथिओ पण बतावेली छे, अने शुभ कार्यमां तजवानुं कथन छे, पण आ चन्द्रदग्धा तिथिओना सिद्धान्तने अमे महत्व आपी शकता नथी, सूर्य दाहक होइ तिथिनुं दग्धपणुं समजी शकाय तेम छे, पण चन्द्र जे दग्धने नवपल्लव करनार छे, तेथी तिथि केसी रीते दग्ध थइ शके एनो उत्तर तो चन्द्रदग्धाना सिद्धान्तनो आवेष्कार करनारे ज आपवो रखो. अमे आ सिद्धान्तने प्रमाणिक मानता नथी.

क्रूर ग्रहाक्रान्त राशि स्वाभिक तिथिओ:—

तिथिओ पन्द्र छे, अने तिथिओनी संज्ञा पांच छे-नन्दा, मद्रा २ जया ३ रिक्ता ४ पूर्णा ५, प्रतिपदाथी पंचमी सुधीनी ५ तिथिओ अनुक्रमे नन्दादि संज्ञक छे. एज प्रमाणे षष्ठीथी दशमी अने एकादशीथी पूर्णिमा सुधीनी ५-५ तिथिओ पण नन्दादि संज्ञक छे. आ पन्द्र तिथिओ मेषादि बार राशिओना प्रभाव नीचे रहे छे. प्रतिपदाथी चतुर्थी सुधीनी अनुक्रमे मेष, वृषभ, मिथुन, कर्कना प्रभाव नीचे अने पंचमी आ चारेना प्रभाव नीचे होय छे. षष्ठीथी नवमी पर्यन्तनी अनुक्रमे सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिकना प्रभाव नीचे अने दशमी आ चारेना प्रभाव नीचे होय छे. एज प्रमाणे एकादशीथी

ચતુર્દશી પર્યન્તની ૪ તિથિઓ અનુક્રમે ધનુ, મકર, કુંભ, મીન આ ચાર રાશિઓના પ્રભાવ નીચે હોય છે. ત્યારે પૂર્ણિમા આ ચારે રાશિઓના પ્રભાવ નીચે રહે છે. જે તિથિ જે રાશિના પ્રભાવ નીચે હોય તે રાશિ જો કોઈ ક્રૂર ગ્રહથી આક્રાંત હોય તો તે પોતાના પ્રભાવની તિથિને નિર્બલ બનાવી દે છે, માટે તેવી તિથિને પણ બને ત્યાં સુધી શુભ કાર્યમાં વર્જવી, અને એકથી અધિક ક્રૂર ગ્રહાક્રાંત રાશિના અમલ નીચેની તિથિ તો વર્જવી જ જોઈયે, અન્યથા તે તિથિમાં કરેલું કાર્ય યશસ્વી નહિ નીવડે, રાશિસ્વામિક તિથિઓ સમ્બન્ધી જે ઉપર વિવેચન કર્યું છે, તેનો મૂલાધાર નીચે પ્રમાણે છે—

ત્રિશશ્ચતુર્ણામપિ મેષ સિંહ-
ધન્વાદિકાનાં ક્રમશઃશ્ચતસ્રઃ ।

પૂર્ણાશ્ચતુષ્કત્રિતયસ્ય તિસ્ર-

સ્ત્યાજ્યા તિથિઃ ક્રૂરયુતસ્ય રાશેઃ ॥ ૧૦૮ ॥

આંટી—મેષ-સિંહ-ધનુ આ જેઓની આદિમાં છે, એવા ત્રણ રાશિ ચતુષ્કોના સ્વામિત્વ નીચે અનુક્રમે પ્રતિપદાદિ, પષ્ટ્યાદિ, એકાદશ્યાદિ, આ ત્રણ તિથિ ચતુષ્કો છે, અને પંચમી દશમી પૂર્ણિમા આ ત્રણ પૂર્ણાઓ અનુક્રમે પ્રથમ દ્વિતીય તૃતીય રાશિ ચતુષ્ક નીચે છે, જે રાશિ ક્રૂર ગ્રહયુક્ત હોય તે રાશિ અથવા રાશિ ચતુષ્કના સ્વામિત્વવાલી તિથિ મુહૂર્તમાં વર્જવી જોઈયે.

વિષ ઘટિકા:—

તિથિઓની વિષ ઘટીઓ, તેમ વાર અને નક્ષત્રની વિષ ઘટિકાઓ નીચે લક્ષ્ણ કામોમાં વર્જવાનું વિધાન કર્યું છે—

વિવાહવ્રતચૂડાસુ-ગૃહારંભપ્રવેશયોઃ ।

યાત્રાદિશુભકાર્યેષુ, વિઘ્નદા વિષનાડિકાઃ । ૧૦૯ ॥

भा०टी०—विवाह, व्रत, चूडाकर्म, गृहारंभ, गृह प्रवेश, यात्रा, अने एज प्रकारनां बीजां शुभ कार्योंमां विषघटिकाओ विघ्नदायक होय छे. माटे विष घडीओ टालवी.

तिथि विष घटी—

तिथी १५ पु ५ नागा ८ द्वि ७ गिरी ७ पु ५ वारिधि-४
 र्गजा ८ द्वि ७ दिक् १० पाचक ३ विश्व १३ वासवाः १४।
 मुनी ७ म ८ संख्या प्रथमातिथेः क्रमात्,
 परं विषाख्यं घटिकाचतुष्टयम् ॥ ११० ॥

भा०टी०—प्रतिपदाथी मांडीने अनुक्रमे पन्दर तिथिओनी
 १५।५।८।७।७।५।४।८।७।१०।३।१३।१४।७।
 ८।आटली आदिनी घडीओ पछीनी ४-४ घडीओ विष घटिका
 होय छे. जे शुभ कार्योंमां वर्जवी. ज्योतिर्निबन्धमां ए पद्य छे,
 जेमां ३ ठेकाणे पाठान्तर छे, पष्ठी तिथिए ११, बारसे १०,
 तेरसे १२, घडीओ पछीनी ४ घडीओ विष घटी आवे छे, आनुं
 कारण मूल पाठमां इषु-ईश-विश्व-दिक्-वासव-भास्कर, आबो
 शब्दभेद छे, प्रथम शब्दो पीयूषधाराद्धृत दैवज्ञ मनोहरना छे,
 ज्यारे बीजा ज्योतिर्निबन्धमां उद्धृत ते श्लोको पाठान्तर छे.

यंत्रक नीचे प्रमाणे—

प्र.	द्वि.	तृ.	च.पं.	ष.	स.	अ.	न.	द.	ए.	द्वा.	त्र.	च.	पू.ति.	
१५	५	८	७	७	५	४	८	७	१०	३	१३	१४	७	८
				११						१०	१२			
													घ टि प छी	

માસ પરત્વે શૂન્ય તિથિઓ—

અમુક માસની અમુક તિથિઓ શૂન્ય તિથિઓ તરીકે ઘર્ણવેલી છે, એટલે આવી શૂન્ય તિથિઓ પણ શુભ કાર્યમાં વર્જવી જોઈયે. શૂન્ય તિથિઓનું નિરૂપણ નીચલા પદ્યમાં કરેલું છે—

ભાદ્રે ચન્દ્ર હૃશૌ નભસ્યનલ નેત્રે માધવે દ્વાદશી,
પૌષે વેદશરા ઇષે દશ શિવા માર્ગેન્દ્રિનાગા મધૌ ।
ગોષ્ઠૌ ચોભયપક્ષગાશ્ચ તિથયઃ શૂન્યા વૃષ્ટૈઃ કીર્તિતાઃ,
ઝર્જાષાઢ તપસ્ય શુક્રનપસાં કૃષ્ણે શરાંગાન્ધયઃ ॥
શક્રાઃ પંચ સિતે શક્રાગ્નિચિશ્વરસાઃ ક્રમાત્ ॥૧૧૧॥

માઁટીઁ—ભાદ્રવાના વંને પક્ષની ૧ । ૨, શ્રાવણની વંને પક્ષની ૨-૩ વૈશાખના વંને પક્ષની ૧૨, પૌષના વંને પક્ષની ૪-૫, આસોજના વંને પક્ષની ૧૦ । ૧૧, માર્ગશીર્ષના વંને પક્ષની ૭ । ૮ અને ચૈત્રના વંને પક્ષની ૯ । ૮ તથા કાર્તિક, આષાઢ, ફાલ્ગુન, જ્યેષ્ઠ અને માઘ આ પાંચ મહીનાઓના કૃષ્ણપક્ષની યથાક્રમ ૫ । ૬ । ૪ । ૧૪ । ૫ આ તિથિઓ અને એજ મહીનાઓના શુક્લપક્ષની અનુક્રમે ૧૪ । ૭ । ૩ । ૧૩ । ૬ આ તિથિઓને વિદ્વાનોએ શૂન્ય-તિથિઓ કહી છે. માસ પરક શૂન્ય તિથિઓનો પરિહાર—

તિથયો માસશૂન્યાશ્ચ, શૂન્યલગ્નानि यान्यपि ।

मध्यदेशे विवर्ज्यानि, न दूष्याणीतिरेषु तु ॥ ૧૧૨ ॥

માઁટીઁ—શૂન્ય તિથિઓ, શૂન્ય માસો, અને શૂન્ય લગ્નો, એ મધ્યદેશમાં વર્જિત છે, બીજા દેશોમાં દૂષિત નથી.

ક્ષણ તિથિ:--

તિથેઃ પશ્ચદશો ભાગઃ, ક્રમાત્ પ્રતિપદાદિતઃ ।

ક્ષણસંજ્ઞા તદર્ધનાનિ, તાસામર્ધપ્રમાણતઃ ॥ ૧૧૩ ॥

भा०टी०— तिथिना पन्द्रमा भागनुं नाम क्षणातिथि छे. तिथिओ प्रतिपदाथी प्रारंभ थाय छे तेम तिथिक्षणो पण प्रतिपदाथी ज शुरु थाय छे. प्रतिपदाए पहेलो क्षण प्रतिपदानो, बीजो बीजनो, यावत् पन्द्रमो क्षण पूर्णिमानो, एज प्रमाणे बीज तिथिए पहेलो क्षण बीजनो, बीजो त्रीजनो, यावत् पन्द्रमो प्रतिपदानो. आ प्रमाणे जे तिथि होय तेना क्षणथी शुरुआत करवी अने ते पछीना पंच दशांशो पछीनी तिथिओना पूरा करीने शेषक्षण पाछा प्रतिपदादि तिथिओमां समाप्त करवा. आ रीते पूर्णिमाए पहेलो क्षण पूर्णिमानो अने बीजा क्षण प्रतिपदादि चतुर्दशी सुधीनी तिथिओना गणवा, तिथिभोग ६० घडीनो हसे तो एक तिथिक्षण ४ घडीनो थसे अने ६० घडीथी अधिक ओछा तिथि भोग हसे तो क्षणो पण अधिक ओछा प्रमाणवाला थसे, तिथि पूर्व दिवसथी चालु हसे अने औदयिक तिथि ते दिवसे अर्धां हसे तो क्षणो पण तिथिना प्रमाणमां अर्धां ज हसे, आवश्यक कार्य होय ते दिवसे के निकटमां ते कार्य करवा योग्य तिथि न होय त्यारे तिथिक्षण जोइने.तेमां ते कार्य करी लेवुं, एवुं न्योतिष शास्त्रनुं विधान छे.

तिथि विषयक अपवादः—

चारक्षेत्रचन्द्रोदयशुद्धिलाभे,
 तिथिः सदोषापि भवेददोषा ।
 सौरभ्यकान्त्यादिगुणैः सरोजं,
 सकण्टकत्वेऽपि यतो गुणाढ्यम् ॥ ११४ ॥
 विशुद्धमृक्षं सबलं च लग्नं,
 यथा प्रयत्नेन विलोकयन्ति ।
 तथा न योगं करणं तिथिं वा,
 दोषो गुणो वापि तिथेर्यतोऽल्पः ॥ ११५ ॥

तिथिरेकगुणा प्रोक्ता, नक्षत्रं च चतुर्गुणम् ।

वारश्चाष्टगुणः प्रोक्तः, करणं षोडशान्वित ॥११६॥

द्वात्रिंशलक्षणो योग-स्तारा षष्टिगुणा स्मृताः।

चन्द्रः शतगुणः प्रोक्तो, लग्नं कोटिगुणं स्मृतम् ॥११७॥

भा०टी०—वार, नक्षत्र, लग्नी शुद्धि, मले तो तिथि सदोष होय तोय निर्दोष गणाय छे. कमलमां सुगन्धसौन्दर्यादि गुणो होवाथी ते कांटालु होना लनां गुणवान् गणाय छे. जेटली काळजीथी शुद्ध नक्षत्र अने बलवान लग्नी गवेषणा कराय छे तेटली योग करण के तिथिनी कराती नथी, केम के तिथिनो दोष वा गुण अल्प होय छे. तिथि एक गुण, नक्षत्र चार गुण, वार आठ गुण, करण शोल गुण, योग बत्तीस गुण, तारा पष्ठी गुण, चन्द्र सौ गुण, अने लग्न क्रोड गुणवालुं कहेल छे.

गुणस्य दोषस्य च तारतम्यं,

विचारणीयं विदुषा प्रयत्नात् ।

कश्चिद् गुणो दोषशतं निहन्ति,

दोषो गुणानामपि हन्ति लक्षम् ॥ ११८ ॥

पूर्वाऽपराभ्यां सहितस्तिथिभ्यां,

निहन्ति दशौ निचयं गुणानां ।

तमेव हित्वाऽमृतसिद्धियोग-

स्तिथेशेषानपि हन्तिदोषान् ॥ ११९ ॥

भा०टी०—विद्वानोए गुणदोषनुं तारतम्य यत्नपूर्वक विचारनुं जोइये, केम के कोइ गुण सौ दोषोनो नाश करे छे, त्यारे कोइ दोष लाख गुणोनो घातक होय छे, पूर्व पछीनी वे तिथियो सहित अमावस्या गुण समूहनो नाश करनारी छे, त्यारे अमृत सिद्धियोग एक अमावास्या सिवाय तिथिगत सर्व दोषोनो नाश करे छे.

(२) वार

दिनशुद्धिमां बीजो नंबर वारनो छे, वार नीचे प्रमाणे छे—
रवि चन्द्र मंगल बुधा, गुरु शुक्र शनैश्चरश्च दिनवाराः ।
रवि कुज शनयः क्रूराः, सौम्याश्चान्ये पदोनफलाः ॥१२०॥

भा०टी०—रवि, सोम, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र अने शनैश्चर ए
दिन वारो छे. आ वारो पैकीना रवि, मंगल, शनैश्चर, ए क्रूर छे,
अने बीजा सौम्य वार पोतानी होरा विना पोणुं फल आपे छे.

होराः पुनरर्कसितज्ञ-चन्द्रगनिजीवभूमिपुत्राणाम् ।

सर्व्वघटीद्वयमानाः, स्ववारतस्तास्तु पूर्णफलाः ॥ १२१ ॥

भा०टी०—वार होरा अही घडीनी होय छे, रविवारे रवि-
शुक्र-बुध-सोम-शनि-गुरु-मंगल, पुनः रवि-शुक्र-बुध-सोम-शनि
आ क्रमथी होराओ प्रवर्ते छे. एज प्रमाणे सोमवारे सोम शनि गुरु
मंगल, इत्यादि छट्टा छट्टा वारना क्रमे होराओ आवे छे, पोताना
वारे होरा पूर्ण फल आपे छे. वारनुं कृत्य ते वारनी होरामां करी
शकाय छे. वार प्रवृत्तिना समयथी होरानी प्रवृत्ति थाय छे. तेथी
प्रथम वार प्रवृत्तिनो समय जाणवो आवश्यक छे. वारनी आदिने
अंगे आरंभ सिद्धिकार लखे छे—

वारादिरुदयादूर्ध्व, पलैर्मेषादिगे रवौ ।

तुलादिगे त्वधाम्निगत, तद्बुधानान्तरार्धजैः ॥१२२॥

भा०टी०—मेघ वृष मिथुन कर्क सिंह कन्या आ राशिओमां
सायन सूर्य होय त्यारे वारनो प्रारंभ सूर्योदय पछी अने तुला
वृश्चिक धन मकर कुंभ मीन आ राशिओना सायन सूर्यमां वारनी
प्रवृत्ति सूर्योदय पहेली थाय छे. मेषादिमां केटली पछी अने तुला-
दिमां केटली पहेली थाय ? ए जाणवानो उपाय आ छे. ज्यांनी

વાર પ્રવૃત્તિ જાણવી હોય ત્યાંનું તે દિવસનું દિનમાન જોવું, તેની ઘડી પલો હોય તેનું ૩૦થી અન્તર કાઢી તેને અર્ધ કરવું, જેટલી ઘડી પલો થાય તેટલી ઘડી પલો મેષાદિના સૂર્યમાં સૂર્યોદય થયા બાદ અને તુલાદિના સૂર્યમાં સૂર્યોદય પૂર્વે વારની આદિ થાય એટલે પહેલા દિનનો વાર સમાપ્ત થઈ નવો વાર લાગે છે. ઉદાહરણ—સંવત્ ૨૦૧૦ના આસોજ શુદ્ધ ૫ના દિવસે મારવાડ પ્રદેશનું દિનમાન ૨૮-૪૪ ઘટી પલોનું છે, આનું ૩૦ની સાથે ૧ ઘડી ૧૬ પલનું અન્તર થયું, એનું અર્ધ ૩૮ પલો ઉક્ત દિવસના સૂર્યોદય અને વાર પ્રવૃત્તિ વચ્ચેનું અન્તર થયું, એટલે કે તે દિવસે સૂર્ય તુલા રાશિનો હોઈ સૂર્યોદય થયા પહેલાં ૩૮ પલે એટલે ૧૫ મિનિટ ૧૨ સેકન્ડે તે દિવસનો વાર મંગલ ચાલૂ થયો, અને તેજ સમયથી મંગલની હોરા ચાલૂ થઈ. વાર પ્રવૃત્તિને અંગે વસિષ્ઠ સંહિતાકાર નીચે પ્રમાણે કહે છે—

પ્રભાકરસ્યોદ્ગમનાત્ પુરે સ્યા-દ્વારપ્રવૃત્તિર્દશકન્ધરસ્ય ।
ચરાર્ધદેશાન્તરનાડિકાભિ-રુઢર્થ તથા ધોડપ્યપરમ્ તસ્માત્ ॥૧૨૩॥

આ૦ટી૦—રાવણના નગર લંકામાં સૂર્યના ઉદયની સાથે વાર પ્રવૃત્તિ થાય છે જ્યારે બીજા સ્થાનોમાં ચરાન્તર રેશાન્તરની ઘડી પલોના માને પછી પહેલાં વાર લાગે છે. એજ વાતનું જ્યોતિઃસારમાં નીચેના શ્લોકમાં સ્પષ્ટીકરણ છે:—

દેશાન્તરચરાર્ધાભ્યાં, સૌમ્યે ગોલે હનોદયાત્ ।

ઝઢર્થે વારપ્રવૃત્તિઃ સ્યાત્, યામ્યે ચાધઃ પ્રકીર્તિતા ॥૧૨૪॥

આ૦ટી૦—ઉત્તર ગોલમાં સાયન સૂર્ય હોય ત્યારે સૂર્યોદય પછી દેશાન્તર ચરાન્તરના અર્ધમાને વાર પ્રવૃત્તિ થાય છે, અને દક્ષિણ ગોલમાં સૂર્ય હોય ત્યારે સૂર્યોદય પૂર્વે તેટલા જ સમયના અન્તરે વાર પ્રવૃત્તિ થાય છે,

वारप्रवृत्ति जाणवानुं प्रयोजन—

ए विषयमां ब्रह्मर्षिं वसिष्ठ कहे छे—

वारप्रवृत्तिविज्ञानं, क्षणवारार्थमेव हि ।

अखिलेष्वन्यकार्येषु, दिनादिरुदयाद् रवेः ॥ १२५ ॥

भा०टी०—वार प्रवृत्तिनुं ज्ञान क्षणवार (कालहोराओ) ने माटे ज उपयोगी छे, बाकी बीजां सर्व वार प्रतिबद्ध कामोमां—अर्ध-याम, कुलिक, उपकुलिक, कंटक, राजयोग, कुमारयोग, स्थविर योगादिमां अने वारविहित कार्यारंभमां वारनी आदि सूर्योदयथी ज मानवानी छे.

वार भोग संबन्धी एक नवी परम्परा—

कृत्वाचार्य, चण्डेश्वर आदि संक्रान्तिपरक वार भोग संबन्धी एक विशेषता जणावे छे, चण्डेश्वर कहे छे—

मीनालिमेषकलशेषु दिनान्तमात्रं,

गोकर्ककार्मुकघटेष्वपि चार्धरात्रम् ।

स्त्रीयुग्मसिंहमकरेषु निशावसानं,

वारस्य भोगमिह यन्मुनयो वदन्ति ॥ १२६ ॥

भा०टी०—वृश्चिक कुंभ मीन मेषना सूर्यमां सांज सुधी, वृषभ कर्क तुल धनुना सूर्यमां अर्धरात्रि पर्यन्त, मिथुन सिंह कन्या मकरना सूर्यमां रात्रिना अन्त सुधी दिनवारनो भोग होय छे एम मुनिओ कहे छे.

आ वार भोगना निवेदननो अर्थ अर्वाचीन ग्रन्थकारोए प्रथम वारनी समाप्ति अने नवा वारना प्रवेशना रूपमां लगाडी नीचे प्रमाणे सिद्धान्त प्रतिपादन कर्यो छे—

मृगस्त्रीसिंहयुग्मेश्वरस्तेऽजालिह्वेषे निषे ।

तुलागोधन्विकर्केषु, निशार्धे वारसंक्रमः ॥ १२७ ॥

માઠી—મિથુન સિંહ કન્યા મકરના સૂર્યમાં પ્રાતઃ સમયમાં, વૃશ્ચિક કુંભ મીન મેષના સૂર્યમાં સાંજે અને વૃષભ કર્ક તુલ ધનુના સૂર્યમાં અર્ધરાત્રિમાં વાર સંક્રાંતિ થાય છે.

આ વાર ભોગ અને વારસંક્રમણ સંબન્ધી કથનોત્તું તાત્પર્ય એ જણાય છે કે સંક્રાન્તિ વિશેષમાં દિનવારનો પ્રભાવ અગ્રુક સમય સુધી જ રહેતો હોય અને તે પછી આગેના વારની અસર શરુ થઈ જતી હશે. એ વસ્તુને જ મલતું નીચે પ્રમાણે એક બીજું પળ નિરૂપણ ઉપલબ્ધ કરાય છે—

રામ-રસ-નન્દ-વાણા, વેદાષ્ટા-સપ્ત-દશહતાઃ કાર્યાઃ ।

મન્દાદીનાં દિનતઃ, ક્રમેણ ભોગસ્ય નાઙ્ચઃ સ્યુઃ ॥ ૧૨૮ ॥

માઠી—શનિથી શુક્ર પર્યન્તના સાત દિનવારોના ભોગની ઘડીઓ અનુક્રમે ૩૦, ૬૦, ૯૦, ૫૦, ૪૦, ૮૦, ૭૦ છે, આનો અર્થ પળ એજ છે કે શનિ દિને ૩૦ ઘડી પછી શનિનો પ્રભાવ મટીને સૂર્યનો પ્રભાવ શરુ થઈ જાય છે. સૂર્યની અસર ૬૦ ઘડીની હોઈ શનિ રાત્રિ અને રવિના દિનના અન્તમાં સમાપ્ત થતાં સોમવારની અસર ચાલુ થાય છે, સોમની અસર ૯૦ ઘડીની છે એટલે રવિની સાંજથી ચાલુ થઈ સોમની રાત્રિના પર્યન્તે પૂરી થાય છે, મંગલવારનો પ્રભાવ મંગલવારના પ્રારંભથી ચાલુ થઈ મંગલની પાછલી ૧૦ ઘડી રાત રહેતાં પૂરો થાય છે અને તે પછી બુધનો પ્રભાવ ચાલુ થાય છે. બુધનો ભોગ ૪૦ ઘડીનો હોઈ બુધની સાંજે પૂરો થઈ જાય છે અને બુધની રાત ગુરુના પ્રભાવ નીચે આવે છે. ગુરુનો પ્રભાવ ૮૦ ઘડી રહેતો હોવાથી ગુરુવારની પાછલી ૧૦ ઘડી રાત રહે ત્યાં સુધી ચાલે છે, તે પછી શુક્રની છાયા પડે છે. શુક્રનો ભોગ ૭૦ હોવાથી શુક્રવારની રાત્રિના અન્ત સુધી તેનો જ ભોગ રહે છે, આમ વારોનો પ્રભાવ પહેલાં પછી પળ રહે છે, પળ એનો અર્થ એ ન માની

लेखो जोइये के वार संक्रम थयो एटले पहेलो वार पूर्ण थइ गयो अने तत्प्रतिबद्ध योग अपयोगो मटी गया वारनी समाप्ति तो लंकाना सूर्योदय समये ज व्याप्त छे अने तज्जन्य शुभाशुभयोगो सूर्योदय वखते ज मटे छे.

ग्रहो नो स्वभाव प्रकृति—

रविः स्थिरः शीतकरश्चरश्च,

महीज उग्रः राशिजश्च मिश्रः ।

लघुः सुरेज्यो भृगुजो मृदुश्च,

शनिश्च तीक्ष्णः कथितो मुनीन्द्रैः ॥ १२९ ॥

पुंग्रहा जीवसूर्यारा, बुधमन्दौ नपुंसकौ ।

स्त्रीखगौ चन्द्रशुक्रौ च, सजलौ तौ च कीर्तितौ ॥ १३० ॥

भा०टी०— रवि स्थिर, सोम चर, मंगल उग्र, बुध मिश्र, गुरु हलवो, शुक्र कोमल अने शनि कठोर स्वभावनो छे. सूर्य, मंगल, गुरु पुरुष, बुध शनि नपुंसक, अने सोम तथा शुक्र स्त्री प्रकृतिना तथा जलार्द्र ग्रहो छे.

ग्रहो नुं वर्णाधिपत्य—

जीवशुक्रौ तु विप्रेशौ, क्षत्रियेशौ कुजोष्णरुम् ।

ज्ञः शूद्राणां विशां चन्द्रो, ह्यन्त्यजानां शनिः स्मृतः ॥ १३१ ॥

भा०टी०— गुरु शुक्र ब्राह्मणोना, रवि मंगल क्षत्रियोना, चन्द्र वैश्योना, बुध शूद्रोना अने शनि अन्त्यजो (अस्पृश्यजाति) नो स्वामी छे.

वार विधेय कार्योः—

राजाभिषेकोत्सवयानसेवा-

गोवह्निमन्त्रौषधिशस्त्रकर्म ।

सुवर्णताम्रौर्णिकचर्मकाष्ठ-

संग्रामपण्यादि रवौ विदध्यात् ॥ १३२ ॥

શંખાન્જમુક્તારજતેક્ષુભોજ્ય-
 સ્ત્રીવૃક્ષકૃષ્યમ્બુવિભૂષણાચમ્ ।
 ગીતક્રતુક્ષીરવિકારઘૃન્નિ-
 પુષ્પાક્ષરારમ્ભણમિન્દુવારે ॥ ૧૩૩ ॥
 ભેદાનૃતસ્તેયવિષાગ્નિશસ્ત્ર-
 બન્ધાભિઘાતાહવશાઘ્યદમ્ભાન્ ।
 સેનાનિવેશાકરઘાતુહેમ-
 પ્રવાલકાર્યાદિકુજેઽહિ કુર્યાત્ ॥ ૧૩૪ ॥

भा०टी०—राज्याभिषेकोत्सव, यानकर्म, सेवाकार्य, गोकर्म, अग्निकर्म, मंत्रकर्म, औषधिकर्म, शस्त्रकर्म, सुवर्णकर्म, ताम्रकर्म, और्णिककर्म, चर्मकर्म, काष्ठकर्म, संग्रामकर्म अने पण्यकर्म आदि रवि-
 वारे करवुं. शंख, जलत्रमौक्तिक, रजत, शेलडी, भोज्यपदार्थ, स्त्री, वृक्ष, कृषि, जल, आभूषणादि संबन्धी कार्य, गीत, यज्ञ, पायस
 शृंगी पशु पुष्प अने लिपि संबन्धी कार्यो सोमवारे करवां. मेद, जूठ, चोरी, विष, अग्नि, शस्त्रबन्धन, प्रहार, युद्ध, शठता, कपट, सै-
 न्यनिवेश, खाण, धातु, सुवर्ण, प्रवाल संबन्धी कार्य मंगलना दिवसे
 करवां.

नैपुण्यपण्याध्ययनं कलाश्च,
 शिल्पादिसेवालिलेखनानि ।
 धातुक्रियाकाञ्चनयुक्तिसंधि-
 ध्यायामवादाश्च बुधे विधेयाः ॥१३५॥
 धर्मक्रियापौष्टिकयज्ञविद्या-
 माङ्गल्यहेमाम्बरवेश्मयात्रा ।
 रथाम्बुमैषज्यविभूषणाद्यं,
 कार्यं विदध्यात् सुरमन्त्रिणोऽह्नि ॥१३६॥

स्त्रीगीतशय्यामणिरत्नगन्ध-
 वस्त्रोत्सवालंकरणादिकर्म ।
 भूपण्यगोकोशकृषिक्रियाश्च,
 सिध्यन्ति शुक्रस्य दिने समस्तम् ॥१३७॥
 लोहाश्मसीसत्रपुरस्त्र(वास्तु)दास-
 पापानृतस्तेयविषासवाद्यम् ।
 गृहप्रवेशो द्विपबन्ध दीक्षा,
 स्थिरं च कर्मार्किसुतेऽहि कुर्यात् ॥१३८॥

भा०टी—चातुर्य, व्यापार, अध्ययन, कलाभ्यास, शिल्पग्र-
 हण, लिपि आरंभ, लेखन, धातुक्रिया, सुवर्णयुक्ति, संधि, व्यायाम
 अने शास्त्रार्थवाद ए कार्यो बुधना दिवसे करवां. धर्मकार्य, पौष्टिक-
 कर्म, यज्ञ, विद्याध्ययन, मांगल्यकार्य, सुवर्णभूषण, वस्त्रपरिधान,
 गृहकार्य, यात्रा, रथ, अश्व, औषध, विभूषण आदि कार्य गुरुवारे
 करवां. स्त्री-गीत-शय्या संबन्धी कार्य, मणि, रत्न, सुगन्धी, वस्त्र,
 उत्सव, आभूषण आदिस्तुं कार्य, भूमि, व्यापार, गौ, कोश अने कृषि-
 कर्म ए बधां कार्यो शुक्रवारे करवाथी सिद्ध थाय छे. लोह, पत्थर,
 सीसुं, जसद, गृहकर्म, दास, पाप, असत्य, चौर्य, विष, मदिरा
 आदिनां कामो तेमज गृहप्रवेश, हस्तीबन्धन, दीक्षा, अने स्थिर कार्य
 अनिवारना दिवसे करवुं. वार कर्तव्योना अंगे सारांश ए के—

लाक्षाकौसुम्भमाञ्जिष्ठ-राग-काञ्चनभूषणे ।

प्रशस्तौ भौम-मार्तण्डौ, रविजो लोहकर्मणि ॥१३९॥

सोम सौम्यगुरुशुक्रवासराः,

सर्वकर्मसु भवन्ति सिद्धिदाः ।

भानुभौमशनिवासरेषु तु,

प्रोक्तमेव खलु कर्म सिध्यति ॥१४०॥

આંટી૦—લાક્ષા રંગ, કૌમુંભ રંગ અને માઝિષ્ઠ રાગનાં કાર્યો અને સુવર્ણભૂષણના કાર્યોમાં માંમ તથા રવિવાર શ્રેષ્ઠ છે અને લોહકાર્યમાં શનિવાર શ્રેષ્ઠ છે. સોમ બુધ ગુરુ અને શુક્રવાર સર્વ કામોમાં સિદ્ધિદાયક થાય છે, જ્યારે રવિ મંગલ શનિવારના દિવસોમાં વિહિત કાર્ય જ સિદ્ધ થાય છે.

ક્ષોળેન્દુસૌરિકુજવક્રિદિને ન શસ્તં,
શસ્તં ચ કર્મ યદિ ચોપચયસ્થિતાઃ સ્યુઃ ।
અસ્તંગતસ્ય વિકૃતસ્ય ચ નેષ્ટમહિ,
સર્વે પ્રશસ્તમિહ શેષદિનેશ્વરાણામ્ ॥૧૪૧॥

આંટી૦—ક્ષીણચન્દ્ર હોય ત્યારે સોમવારે, શનિ મંગલ વક્રી હોય ત્યારે શનિ મંગલવારે વિહિત કાર્ય કરવું પણ સારું નથી, જો ઇ ગ્રહો ઉપચયસ્થિત હોય તો જ વિહિત કાર્ય પણ કરવું, અસ્ત પામેલ અને વિકાર પામેલ ગ્રહના દ્વારે પણ કાર્ય કરવું શ્રેષ્ઠ નથી, શેષ ગ્રહોના(પૂર્ણ ચન્દ્ર, માર્ગી શનિ મંગલ, અવિકૃત અને ઉદિત મંગલ બુધ, ગુરુ, શુક્ર, શનિના) વારે કોઈ પણ કાર્ય કરવું સારું છે, આ વિક્ષયમાં વસિષ્ઠ કહે છે—

બલપ્રદસ્ય ગ્રહવાસરે યદ્વો-
દિષ્ટકાર્યં સમુપૈનિ સિદ્ધિમ્ ।
સુદુર્બલસ્ય ગ્રહવાસરે તત્,
પ્રયત્નપૂર્વે ત્વપિ નૈવ સાધ્યમ્ ॥૧૪૨॥

આંટી૦—બલ આપનાર ગ્રહના વારે આરંભેલું કાર્ય સિદ્ધિને પામે છે, જ્યારે અતિનિર્બલ ગ્રહના વારે આરંભાયેલ કાર્ય પ્રયત્ન કરવા છતાં યે સિદ્ધ થતું નથી.

વારદોષો—

જે વારો જે કાર્યો કરવાને યોગ્ય જણાવ્યા છે તે વારોમાં પણ

अमुक समय दूषित होइ विहित कार्यो करवाने अयोग्य गणाय छे. समयने दूषित करनारा दोषो ६ छे-अर्धप्रहर १ कालवेला २ कण्टक ३ यमघण्ट अपर नाम उपकुलिक ४ कुलिक ५ मुहूर्तकुलिक ६ ।

आ वार दोषोनुं ज्योतिषशास्त्रमां नीचे प्रमाणे निरूपण छे—

त्याज्योऽर्धयामो वेदाद्रि-द्विपञ्चाष्टत्रिषण्मिमतः ।

सूर्यादौ कालवेलाऽर्धयामाङ्गात् सैकपञ्चमी ॥१४३॥

कण्टकोपि दिनाष्टांशे, स्ववारान्मङ्गलावधौ ।

बृहस्पत्यवधौ चोपकुलिकस्त्यज्यते परैः ॥१४४॥

सूर्यादौ शैलतर्काक्ष-वेदाग्निपाणिभूमयः ।

प्रहरार्धप्रमाणास्ते, कुलिकाः स्युर्भयावहाः ॥१४५॥

कुलिको विघ्नशान्यन्त-मिते त्याज्यः स्ववारतः ।

मुहूर्तेऽहि निशि व्येके, भागः पञ्चदशस्तु सः ॥१४६॥

भा०टी०—रवि-सोम-मंगल-बुध-गुरु-शुक्र-शनिवारना दि-
वसे अनुक्रमे ४थो, ७मो, २जो, ५मो, ८मो, ३जो अने ६ट्टो अर्ध-
प्रहर जे 'अर्धयाम' संज्ञक छे ते शुभ कार्यमां त्याज्य छे, अने
प्रत्येक अर्धयामना छेला अंकथी गणतां पांचमो अंक ते वारनी काल-
बेलानो जाणवो; जेम के रविवारनो अर्धयाम ४थो छे तो चोथथी
गणतां पांचमो अंक ८ ए आव्यो एटले रविवारनी कालवेला ८मी
थइ. एज रीते दरेक वारनी कालवेला जाणी लेवी. कंटक पण
दिनमानना आठमा भागनो अर्थात् अर्धप्रहर परिमित होय छे
अने दिनवारथी मंगलवार जेटलामो आवे तेटलामो कंटक दोष
जाणवो, जेमके रविथी मंगल त्रीजो छे तो रविवारे ३जो
अर्ध प्रहर कंटक जाणवो, सोमवारे २जो, मंगलवारे १लो, बुधे ७मो,
गुरुए ६ट्टो, शुके ५मो, शनिए ४थो. केटलाकोए उपकुलिक दोष
त्याज्य कर्यो छे, तेनी गणना दिनवारथी गुरु सुधी करवी एटले

ઉપકુલિક આવશે, રવિથી ગુરુ ૫મો હોઈ ઉપકુલિક ૫મો, સોમે ૪થો, મંગલે ૩જો, બુધે ૨જો, ગુરુ ૧જો શુક્રે ૭મો, શનિ ૬જો ઉપકુલિક હોય છે, જેનું બીજું નામ ' યમઘટ ' છે. રવિ આદિ સાત વારોના દિવસે અનુક્રમે ૭-૬-૫-૪-૩-૨-૧ સંખ્યા પરિમિત પ્રહરાર્ધપરિમાણ કુલિક દોષો ઉપજે છે, જે ઘણા મયંકર દોષો છે. રવિવારથી શનિ સુધીનો અંક ગણી તેને ઘમણો કરતાં જે સંખ્યા આવે તેટલામો તે વારે મુહૂર્ત કુલિક જાણવો. રવિથી શનિ ૭મો છે તેને ઘમણો કરતાં ૧૪મો મુહૂર્ત કુલિક રવિવારે આવશે, સોમે ૧૨મો, મંગલે ૧૦મો, બુધે ૮મો, ગુરુ ૬જો, શુક્રે ૪થો, શનિ ૨જો મુહૂર્ત કુલિક આવશે, આ કુલિક દિનમાનના પંદરમા ભાગનો હોય છે અને રાત્રિમાં એક આંક ઓછો ગણવો, દિવસે ૧૪મો તો રાત્રિ ૧૩મો, દિવસે ૧૨મો તો રાત્રિ ૧૧મો રૂપે છે.

વારદોષવિષયક મતભેદ—

વારદોષોના સંબંધમાં પ્રાચીન સંહિતાકારોમાં તો કોઈ મતભેદ જણાતો નથી. કચ્ચપ, વસિષ્ઠ આદિ કુલિક, ઉપકુલિક, અર્ધયામ દોષોને અર્ધપ્રહર કાલપરિમિત માન્યા છે. આરંભસિદ્ધિ આદિમાં કંટકને પણ ' દિનાઠાંશે ' કહીને પ્રહરાર્ધમિત લખ્યો છે. ' બૃહદ્દેવ-જ્ઞરજન ' કારે " કુલિકકાલૌ યામાર્થો જ્ઞેયૌ " આ વચનથી ' કાલ-વેલા ' ને પણ પ્રહરાર્ધમિત જણાવી છે. છતાં કેટલાક ગ્રંથકારો આ દોષોને મુહૂર્તપરિમિત ઇટલે દિવસના સોલમા ભાગ જેટલા જ વર્જ્ય ગણે છે, આમાં દૈવજ્ઞ મનોહરના નિમ્નોક્ત પદ્યને મુખ્ય આધાર ગણે છે—

અહ્નિ નિશિ ગર્જાંશઃ, સ્વો દિનેશાદિકાનાં,

ભવતિ તુ ગુરુભૌમજ્ઞાર્કિકાલક્રમેણ ।

પ્રભવતિ યમઘટઃ કણ્ઠકઃ કાલવેલા ॥

કુલિક ઇતિ વિરુદ્ધસ્તપરાર્થ નિષિદ્ધમ્ ॥૧૪૭॥

भा०टी०—दिवसे दिनमाननो अने रात्रिए रात्रिमाननो अष्ट-
मांश एटले अर्धप्रहर, दिनवारोना स्थानथी गुरु, मंगल, बुध, शनिना
स्थान पर्यन्त गणवाथी अनुक्रमे यमघंट, कंटक, कालवेला अने कुलिक
नामक विरुद्ध प्रहरार्ध आवशे. आ प्रहरार्धोनुं उत्तरार्ध वर्जित कर्युं छे, आ
दैवज्ञ मनोहरनुं कथन छे. आमां पण उक्त यमघंटादिवाला प्रहरार्धोने
'विरुद्ध' तो कथा छे ज, छतां परार्ध निषिद्ध कहुं, एनुं तात्पर्य ए
छे के आ अर्धप्रहरो छे तो खरावज, पण एना उत्तरार्धो विशेष खराव
होइ अवश्य वर्जित करवा जोइये, पण राम दैवज्ञे मुहूर्तचिन्तामणिमां
आ वस्तुने ज बदली नाखी छे, एमणे एक अर्धयामने प्रहरार्धपरिमित
राखी शेष कुलिक कालवेला यमघंट अने कंटकने दिनना षोडशांश-
प्रमित मुहूर्तो बनावीने ज निरूपण कर्युं छे. एमणे एक मुहूर्त कुलिक
ज मान्यो होइ एमना मते अर्धयाम सिवायना दूषित क्षणो नीचे
प्रमाणे छे—

कुलिकः कालवेला च, यमघण्टश्च कण्टकः ।

वाराद् द्विधने क्रमान्मन्दे, बुधे जीवे कुजे क्षणः ॥१४८॥

भा०टी०—दिनवारथी शनि बुध गुरु मंगल जे संख्यामां
होय ते संख्याने बमणी करतां जे आंक थाय ते संख्यामां ते वारे
अनुक्रमे कुलिक कालवेला, यमघंट अने कंटक नामना मुहूर्तो थाय
छे, रविथी शनि ७मो छे, ए संख्याने बमणी करतां १४ थइ एटले
रविवारे १४मो दिन षोडशांश कुलिक दोष जाणवो. एज प्रमाणे
रविवारे ८मो कालवेला, १०मो यमघंट अने ६ट्टो कंटक क्षण आव-
शे. सोमवारे उक्त क्षणो अनुक्रमे १२।६।८।४, मंगलवारे १०।
।४।६।२, बुधवारे ८।२।४।१४, गुरुवारे ६।१४।२।१२,
शुक्रवारे ४।१२।१४।१०, शनिवारे २।१०।१२।८, आ

संख्यामां अनुक्रमे कुलिक, कालवेला, यमघंट अने कंटक नामना दूषित क्षणो आवशे.

अर्धयाम विषयक चिन्तामणिनुं विधान नीचे प्रमाणे छे—

वारस्त्रिघ्नाऽष्टभिस्तष्टः, सैकः स्यादर्धयामकः ॥

भा०टी०—वारने त्रणे गुणी आठे भांगी शेषांकमां एक उमे-
रतां जे संख्या थाय ते संख्यावालो ते वारे अर्धयाम जाणवो. रवि-
वारना अंकने त्रणे गुणो एटले ३ थया, भाग लागतो नथी, १ युक्त
कर्यो एटले ४ थया, एटले रविवारे ४थो अर्धयाम दोष आव्यो. ए
प्रमाणे सोमवारे ७मो, मंगलवारे २जो, बुधवारे ५थो, गुरुवारे
८मो, शुक्रवारे ३जो अने शनिवारे ६ट्टो अर्धयाम आवशे.

कालवेला संबन्धी अपरिहार्य मतभेद—

कुलिकादि दोष विषयक प्राचीन ग्रन्थकारो अने मुहूर्तचिन्ता-
मणिकारना कथननो समन्वय तो थइ शके छे पण 'कालवेला'
विषयक निरूपणनो मेल मलतो नथी, रामदैवज्ञे कालवेलाने पण
दिनमाननो सोलमो भाग मानी रवि आदि वारोना दिवसे अनुक्रमे
८।६।४।२।१४।१२।१० मा मुहूर्तने 'कालवेला' बतावी
छे, ज्यारे बीजा सर्व ग्रन्थकारो रवि आदि वारोमां ८।३।६।१
।४।७।२। आटलामी कालवेला गणावे छे. आ अंको अर्धप्रह-
राना छे के मुहूर्ताना, आनो कोइ प्राचीन ग्रन्थकारे खालसो जणाव्यो
नथी. यद्यपि नारचन्द्र टिप्पणकारे "कालवेलामुहूर्तं घटिकाद्वय-
प्रमाणम् ।" आ वचनथी कालवेलाने बे घडीनुं मुहूर्त जणाव्युं छे,
पण मुहूर्तचिन्तामणि सिवाय कोइ पण ग्रन्थ कालवेलानो अंक '८'
उपरान्त जणावतो नथी. दैवज्ञमनोहर ग्रन्थमां यमघंट, कंटकादि
दोषोनी साथे ज 'कालवेला' नो पण 'विरुद्धगजांश' रूपे निर्देश

क्यों छे, आ उपरथी अमो पण 'कालवेला' दिनमाननो अष्टमांश होवाना अभिप्राय उपर आवीये छीये.

दुर्मुहूर्त-दोष

उपर्युक्त वार दोषो उपरान्त अमुक वारे अमुक मुहूर्त अथवा मुहूर्तो 'दुर्मुहूर्त' होइ निषिद्ध करेल छे. कोइ पण शुभ कार्य-करण-काले आ पैकीनुं कोइ मुहूर्त आवतुं होय तो वर्जनुं जोइये. आनुं विशेष वर्णन मुहूर्त लक्षणना प्रारंभमां ज मुहूर्तोना प्रसंगे कर्तुं छे, अत्र आ दुर्मुहूर्तोना नाम निर्देश करीने ज आ वस्तुने समाप्त करशुं. रविवारे १४मुं, सोमवारे ९मुं १२मुं, मंगले ४थुं (अने रात्रिनुं ७मुं), बुधवारे ८मुं, गुरुवारे ६ठुं १२मुं, शुक्रवारे ४थुं ९मुं, शनिवारे १लुं २जुं, आ मुहूर्तो दिवसना पंद्रमा भाग जेटलां शुभ कार्यमां अवश्य टालवां जोइये.

प्राचीन संहितोक्त वारदोषज्ञापक यन्त्रकम्—

दिनाष्टमांशाः	रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
अर्धयाम	४	७	२	५	८	३	६
कालवेला	८	३	६	१	४	७	२
कंटक	३	२	१	७	६	५	४
यमघंट-उपकुलिक	५	४	३	२	१	७	६
कुलिक	७	६	५	४	३	२	१
दिवामुहूर्तकुलिक	१४	१२	१०	८	६	४	२
रात्रिमुहूर्तकुलिक	१३	११	९	७	५	३	१

ટિપ્પણ-કોષ્ટકોક્ત દિવારાત્રિના કુલિક મુદ્દતોતું પરિમાણ દિનમાન રાત્રિમાનના પંદરમા ભાગ જેટલું ગણવું, શેષ અર્ધયામાદિ દિનગત દોષોતું કાલપરિમાણ દિનમાનના આઠમા ભાગ બરોબર લેવું.

વારદોષોની દિવસે પ્રથલતા—

ए विषयमां वसिष्ठ कहे छे—

निधनं प्रहरार्धे तु, निःस्वत्वं यमघण्टके ।

कुलिके सर्वनाशः स्याद्रात्रावेते न दोषदाः ॥૧૪૯॥

भा०टी०—अर्धयामथी मरण, यमघंटथी निर्धनता अने कुलिक दोषथी सर्वनाश थाय छे, एण रात्रिमां ए दोषो-दोषकर्ता नथी. आ संबन्धमां ज्योतिर्निबन्धकार कहे छे—

न वारदोषाः प्रभवन्ति रात्रौ,

देवेज्यदैत्येज्यदिवाकराणाम् ॥

दिवा शशांकार्कजभूसुतानां,

सर्वत्र निन्द्यो बुधवारदोषः ॥૧૫૦॥

भा०टी०—गुरु, शुक्र, सूर्यवारने दिवसे वारदोषो रात्रिमां फल आपवाने समर्थ थता नथी अने सोम मंगल शनिवारे वार गत दोषो दिवसे विशेष समर्थ थता नथी, बुधवार गत दोष सर्वत्र 'निन्द्य' छे. माटे सर्वत्र वर्जवो.

न वारदोषाः प्रभवन्ति रात्रौ,

विशेषतो भौमशनैश्चराणाम् ।

मध्याह्नकालादुपरि प्रवृत्ताः,

फलं न द्युः करणानि चैवं ॥૧૫૧॥

भा०टी०—रात्रिमां वार दोषो समर्थ थता नथी, विशेष करीने मंगल अने शनि गत दोषो रात्रिमां लागता नथी, अने मध्याह्न काल

पछी चालु थता वार दोषो फल आपता नथी, एज प्रमाणे अशुभ करणोना सम्बन्धमां पण जाणवुं.

देशभेदे वारदोषोनी विशेषता विषे गर्ग कहे छे—

विन्ध्यस्योत्तरकूले तु, यावदातुहिनाचलम् ।

यमघण्टकदोषोऽस्ति, नान्यदेशेषु विद्यते ॥१५२॥

मत्स्यांगमगधान्धेषु, यमघण्टस्तु दोषकृत् ।

काश्मोरे कुलिकं दुष्ट-मर्धयामस्तु सर्वतः ॥१५३॥

भा०टी०—विन्ध्याचलना उत्तर तटथी हिमालय पर्यंत यम-घण्ट दोष होय छे. बीजा देशोमां होतो नथी. मत्स्य, अंग, मगध, आन्ध्र देशोमां यमघण्टनी विशेष दुष्टता गणाय छे. काश्मीरमां कु-लिकनी दुष्टता गणाय छे. ज्यारे अर्धयाम सर्वत्र दुष्ट गणाय छे.

वारगत दोषोनुं फल वसिष्ठ आ प्रमाणे कहे छे—

कुलिके मरणं विन्ध्यात्, यमघण्टेऽर्थनाशनम् ।

यामार्धं कार्यनाशः स्यात्, कालवेला भयप्रदा ॥१५३॥

भा०टी०—कुलिकमां मरण, यमघण्टमां धननाश, यामार्धमां कार्यनाश अने कालवेला भय देनारी जाणवी.

वार दोषोनी परिहार—

वारेशे सबले चन्द्रे-बलाढये लग्नगे शुभे ।

कुलिकोदयदोषस्तु, विनश्यति न संशयः ॥१५४॥

वाराधीशे बलोपेते, विधौ वा बलसंयुते ।

अर्धप्रहरसंभूतो, दोषो नैवाऽत्र विद्यते ॥१५५॥

अर्धप्रहरपूर्वार्धं, मध्यन्तु यमघण्टके ।

कुलिकान्ते घटीं त्यक्त्वा, शेषेषु शुभमाचरेत् ॥१५६॥

भा०टी०—दिनवारनी स्वामी ग्रह बलवान् होय, चन्द्र बल-

वान् होय अने लग्नमां शुभ ग्रह ग्हेल हीय तो कुलिकथी उत्पन्न थता दोषनो नाश थाय ए निःसंशय छे. वारस्वामी बलिष्ठ होय, वा चन्द्र बलवान होय तो अर्धयामनो दोष टकी शकतो नथी. अर्धयामनो पूर्वार्धभाग यमघण्टनो मध्य भाग, अने कुलिकना अन्तनी घटिकानो त्याग करी शेष कालांशोमां शुभ काम करी शकाय छे.

वार गत शुभ समय—

वार गत दोषोना वर्णन उपरथी जणाशे के प्रत्येक वारना दिवसे अधिकांश समय कोइने कोइ दोषवालो होय छे. जे भागोमां दोष नथी होतो ते भागोने पूर्वाचार्योए “ शुद्ध अर्धप्रहर ” अथवा तो— ‘ शुद्ध चतुर्थटिक ’ ए नामथी नीचेना पद्यमां जणाव्यो छे—

भानावादिमयुग्मषट्परिमिताश्चन्द्रेष्टमश्चादिमः, १

अङ्गारे च तुरङ्गतुर्यवसवः सौम्ये षडष्टत्रयः ।

जीवे सप्त शरद्विका भृगुसुते वेदाष्टषष्ठैककाः,

मन्दे पञ्चमसप्तमाष्टशिखिनश्चैतेऽर्धयामाः शुभाः ॥१५७॥

भा०टी०—रविवारे १।२।६, सोमे १।८, मंगले ४।७।८, बुधे ३।६।८, गुरुए २।५।७, शुके १।४।६।८, अने शनिए ३।५।७।८, एटला अर्धप्रहरो शुद्ध होय छे.

१. नारचन्द्रमां ‘पञ्चादिम’ पाठ छे, छतां सोमदिने पांचमा अर्ध प्रहरमां ‘दुर्मुहूर्त’ आवतो होइ अमोए ए अर्धप्रहर ओछो कर्यो छे.

नव्यमतानुसारी मुहूर्तचिन्तामण्युक्तवारदोषज्ञापकयन्त्रम् ।

मुहूर्त	रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
१							दु
२			कं	का	य		कुदु
३			अ				
४		कं	अकादु	य		कुदु	
५						अ	
६	कं	का	य		कुदु	अ	
७	अ						
८	अका	य		कुदु			कं
९		दु		अ		दु	
१०	य		कु	अ		कं	का
११							अ
१२		कुदु			कंदु	का	अय
१३		अ					
१४	कुदु	अ		कं	का	य	
१५					अ		
१६					अ		

टिप्पण-अ-अर्धयाम, का-कालवेला, कु-कुलिक, कं-कंटक, य-यमघंटनो सूचक अक्षर छे. आ मुहूर्तो दिनमानना सोलमा भाग जेटला जाणवा. दु-दुर्मुहूर्तो दिनमानना पंदरमा भागना लेवा.

आधुनिक चोघडियां क्यांथी आब्यां ?

आजकाल अतिपरिचित थयेलां आपणां-उद्वेग, अमृत, रोग, लाभ, शुभ, चर, काल-ए वारगत चोघडियाओ क्यांथी आवी चढ्यां ए एक विचारणीय प्रश्न छे. प्राचीन संहिताओमां तो भुं पण लछ्छी

રામદેવજ્ઞ સુધીના પ્રાચીન અર્વાચીન કોઈ વિદ્વાન જ્યોતિષીએ પોતાના ગ્રન્થમાં આ ઉદ્દેગાદિ અર્ધપહરોનો નામનિર્દેશ સુદ્ધાં કર્યો નથી. અમારી માન્યતા પ્રમાણે જુના ગ્રન્થો પૈકીના કોઈ ગ્રન્થે આ ચોઘડિયાતું નામ નિર્દેશ્યું હોય તો તેશૂરમહાઠશિવરાજ સંગ્રહીત 'જ્યોતિર્નિબન્ધ' છે. આ ગ્રન્થના વાર પ્રકરણના અન્તમાં નીચે પ્રમાણે શ્લોક દષ્ટિગોચર થાય છે—

ઉદ્દેગાઽમૃતનામા ચ, રોગા લાભા શુભા વલા ।

કલિર્નામાનિ વેલાનાં, હોરાવત્ સૂર્યતઃ ક્રમાત્ ॥૧૫૮॥

આંટી—ઉદ્દેગા, અમૃતા, રોગા, લાભા, શુભા, વલ અને કલિ આ સૂર્યાદિ ૭ વારોની વેલાનાં નામો છે. આ વેલાઓ ગણવાનો ક્રમ હોરાઓની જેમ જાણવો. ઉક્ત શ્લોક પહેલાં ૨ પદ્યોમાં અર્ધયામ, કુલિક, કંટક અને જીવકુલિક (ઉપકુલિક) તું વર્ણન છે. આ પદ્યોના પ્રારંભમાં એના કર્તા તરીકે 'ભૂપાલઃ—' નામ નિર્દેશ છે, આથી જણાય છે કે આ બંને પદ્યો 'ભૂપાલવહ્લભ' ગ્રન્થના છે, પણ એ પછીનો 'ઉદ્દેગાઽમૃતનામા ચ' આ શ્લોક કે જે વાર પ્રકરણનો છેલ્લો છે, ભૂપાલનો જ છે કે કોઈ લેખકનો પ્રક્ષેપ છે એ કહેવું કઠિન છે, રોગા, લાભા, વલા, એ શબ્દો જણાવે છે કે આ શ્લોક 'ભૂપાલવહ્લભ' જેવા ગ્રન્થનો ભાગ્યે જ હોય, વિદ્વાન જ્યોતિષીઓ એ આ ચોઘડિયાઓના સંબન્ધમાં ઉદાહરણ કરવો જોઈએ, આ ચોઘડિયાઓની ગણના એ લોકો શુભ સમય જાણી કોઈ કાર્ય કરે છે અને તે સમય અર્ધયામ, કાલ-વેલાદિ અનેક અશુભ યોગોથી દૂષિત હોવાથી કાર્ય નિષ્ફલ જાય છે, ઉદાહરણ રૂપે રવિવારે પહેલું 'ઉદ્દેગ' અને ત્રીજું 'ચલ' ગણી બંને ચોઘડિયાં જતાં કરે છે અને ત્રીજું 'લાભ' અને ચોથું 'અમૃત' ચોઘડિયાં જાણી તેમાં શુભ કાર્ય આરંભે છે, સ્વરી રીતે રવિવારનાં પહેલું ત્રીજું આ બંને ચોઘડિયાં નિર્દોષ છે જ્યારે ત્રીજામાં 'કંટક'

અને ચોથામાં 'અર્ધયામ' નામક દુષ્ટ અપયોગો હોય છે. ઇજ રીતે બુધવારે ત્રીજું 'અમૃત' નું ચોઘડીયું જાણી અપાય છે. જ્યારે તે ચોઘડિયામાં 'યમઘંટ' નામક વાર દોષ હોય છે તેનો કોઈ વિચાર કરતું નથી, તે દિવસે ત્રીજું ચોઘડિયું 'કાલ' જાણી ત્યજી દેવાય છે જ્યારે ચોથું શુભ જાણી લેવાય છે વસ્તુસ્થિતિ આથી ઉલટી છે. બુધવારે ત્રીજું ચોઘડિયું નિર્દોષ-શુદ્ધ હોય છે જ્યારે ચોથામાં 'કુલિક' 'મુહૂર્તકુલિક' અને 'દુર્મુહૂર્ત' નામના ત્રણ દુષ્ટ યોગો હોય છે, આમ પ્રત્યેક વારે 'શુભ' ગણાતાં આ ચોઘડિયાઓમાં 'અશુભયોગો' આવે છે, માટે આ ચોઘડિયાઓ ઉપર અવશ્ય વિચાર કરવો ઘટે છે.

નક્ષત્ર

નક્ષત્ર ૨૭ છે એ સર્વસંબંધ વિષય છે, ક્ષત્રિ નક્ષત્ર સંખ્યા ૨૮ ની જણાવી છે તેનું કારણ 'અભિજિત્'ની ગણના છે, પણ અભિજિત્નો ઉપયોગ વેધ, લક્ષ્મી આદિ જોવા પૂરતો મર્યાદિત હોવાથી નક્ષત્રમાલામાં તેની ગણના નથી તેમ નક્ષત્ર વિધેય કાર્યની ચર્ચામાં પણ અભિજિત્નું વિધાન નથી, ઉત્તરાષાઢાના ચતુર્થ ચરણ અને શ્રવણના પ્રથમ ચરણની આદિ ૪ ઘડીઓ આ લગભગ ૧૯ ઘટિકાપરિમિત નક્ષત્રભોગને 'અભિજિત્' નામ આપેલું છે, આરંભસિદ્ધિકાર એ વિષયમાં કહે છે—

ઉત્તરાષાઢમન્ટ્યાંહિ, ચતસ્રશ્ચ શ્રુતેઘંટોઃ ।

વદન્ત્યભિજિતો ભોગં, વેધલક્ષ્મીવેક્ષણે ॥૧૫૯॥

માંટી૦—ઉત્તરાષાઢાના અંતિમ ચરણ અને શ્રવણની ૪ ઘડીઓને 'અભિજિત્'નો ભોગ કહે છે, જેનો ઉપયોગ વેધ લક્ષ્મી આદિના જોવામાં થાય છે, સ્વરી રીતે અભિજિત્ પેટા નક્ષત્ર છે.

नक्षत्रोनां नामो—अश्विनी १ भरणी २ कृत्तिका ३ रोहिणी
 ४ मृगशिरा ५ आर्द्रा ६ पुनर्वसु ७ पुष्य ८ आश्लेषा ९ मघा १०
 पूर्वाफाल्गुनी ११ उत्तराफाल्गुनी १२ हस्त १३ चित्रा १४ स्वाति
 १५ विशाखा १६ अनुराधा १७ ज्येष्ठा १८ मूल १९ पूर्वाषाढा
 २० उत्तराषाढा २१ अभिजित् २२ श्रवण २३ धनिष्ठा २४ शत-
 भिषा २५ पूर्वाभाद्रपदा २६ उत्तराभाद्रपदा २७ रेवती २८ आ-
 प्रमाणे छे.

नक्षत्रोना अक्षरो—

चू चे चो लाऽश्विनी प्रोक्ता, ली लू ले लो भरण्यथ ।
 आ ई ऊ ए कृत्तिका तु, ओ वा वी वू च रोहिणी ॥१६०॥
 वे वो का की मृगशिर आर्द्रा कु घ ङ छाः पुनः ।
 के को हा हि पुनर्वसु-हू हे हो डा तु पुष्यभे ॥१६१॥
 डी डू डे डोभिराऽलधा, मा मि मू मे मघा मता ।
 मो टा टी टू फाल्गुनी प्राक्, टे टो पा पीभिरुत्तरा ॥१६२॥
 हस्तः पु ष ण ठैर्वणैँ चित्रा पे पो ररिः पुनः ।
 रु रे रोताःस्मृताः स्वातौ, ती तू ते तो विशाखिका ॥१६३॥
 अनुराधा न नी नू ने, स्याज्ज्येष्ठा नो य यी युभिः ।
 स्याद्ये यो भा भिभिर्मूलं, पूर्वाषाढा भु धा फ ढैः ॥१६४॥
 भे भो जा ज्युत्तराषाढा, जु जे जो खा ऽभिजिन्मता ।
 श्रवणे स्युः खि खू खे खो, धनिष्ठायां ग गी गु गे ॥१६५॥
 गो सा सी सूः शतभिषक्, प्राक् से सो द दि भद्रपात् ।
 दु श झ थो त्तराभद्रा, दे दो चा ची तु रेवती ॥१६६॥

भा० टी०—चूचेचोला-अश्विनी, लीलूलेलो-भरणी, आ
 इ उ ए-कृत्तिका, ओ वा वी वू-रोहिणी, वे वो का कि-मृग-

शिर, कु घ ड छ-आर्द्रा, के को ह हि-पुनर्वसु, हुहेहोडा-पुष्य, डीइडे
 डो-आश्लेषा, मा मी मू मे-मघा, मो टा टी डु-पूर्वाफाल्गुनी, टे टो
 प पी-उत्तराफाल्गुनी, पु षण ठ-हस्त, पे पो र रि-चित्रा, रु रे रो
 ता-स्वाति, ती तू ते तो-विशाखा, न नी नू ने-अनुराधा, नो य
 यी यु-ज्येष्ठा, ये यो भा भि-मूल, भु ध फ ढ-पूर्वाषाढा, भे भो
 जा जी-उत्तराषाढा, जु जे जो खा-अभिजित्, खी खू खे खो-
 श्रवण, ग गी गु मे-धनिष्ठा, गो सा सी सू-शतभिषा, से सो द
 दि-पूर्वाभाद्रपदा, दु श झ थ-उत्तराभाद्रपदा, दे दो च ची-रेवती,
 ए २८ नक्षत्रोना ११२ चरणोना ११२ अक्षरो छे, जे नक्षत्रना जे
 चरणमां कोइनो जन्म थाय त्यारे ते चरणना अक्षर प्रमाणे तेनुं
 नाम-करण थाय, अश्विनीना प्रथम चरणनो अक्षर 'चु' छे तो अश्वि
 नीना ते चरणमां जन्मनारनुं नाम 'चु-चू' आ अक्षर आदिमां
 हरो ते अपाशे, आम सर्वत्र समजी लेवुं, बतावेल अक्षरोमां ह्रस्व
 होय त्यां दीर्घ के दीर्घ होय त्यां ह्रस्व पण समजी लेवो, ए ज रीते
 एक मात्रावाला जोडे द्विमात्रावालो के द्विमात्रावाला जोडे एकमात्रा-
 वालो वर्ण पण जाणवो, ज्यां घडछ, षणठ, घफढ, शग्रथ, ए केवल
 अवर्णान्त व्यञ्जनो छे त्यां अ आ इ ई उ ऊ ए ऐ ओ औ, आ दश
 स्वरो लगाडीने नाम पाडवां, 'ब' ने वने सरखा गणवा, 'क्र' आघा-
 क्षरवालानुं नक्षत्र 'रि' प्रमाणे समजवुं. जो के 'ङ्गण' अक्षरो कोइना
 नामनी आदिमां होता नथी छतां चरणवेधादिनुं फल ते चरणमां
 जन्मनारने मले छे तेथी प्रत्येक चरणाक्षरनी उपयोगिता छे.

नक्षत्रोना स्वामिओ—

प्रत्येक नक्षत्रनो भिन्न भिन्न स्वामी होय छे, जेनो उपयोग
 नक्षत्र क्षण जोवामां थाय छे तेथी गृहूर्त प्रकरणने अंते नक्षत्र स्वा-
 मिओ बताव्या छे अहियां पुनरुक्ति करता नथी.

નક્ષત્ર તારા સંખ્યા—

ત્રિ ૩ વ્ય ૩ જ્ઞ ૬ ભૂત ૫ જગદિ ૩ ન્દુ ૧ કૃત ૪ ત્રિ ૩ તર્કે ૬-
 વ્ષ ૫ ક્ષિ ૨ દ્વિ ૨ પશ્ચ ૫ કુ ૧ કુ ૧ વેદ ૪ યુગા ૪ ત્રિ ૩ રુદ્રૈઃ ૧૧ ।
 વેદા ૪ ળિષ ૪ રામ ૩ ગુણ ૩ વેદ ૪ શત ૧૦૦ દ્વિક ૨ દ્વિ ૨-
 દન્તેશ્ચ ૩૨ તત્સમતિથિર્ન શુભા ભતારૈઃ ॥૧૬૭॥

આ૦ટી૦—નક્ષત્રોની તારા સંખ્યા આ પ્રમાણે છે—અશ્વિની ૩, મરણી ૩, કૃત્તિકા ૬, રોહિણી ૫, મૃગશિર ૩, આર્દ્રા ૧, પુન-
 ર્વસુ ૪, પુષ્ય ૩, આશ્લેષા ૬, મઘા ૫, પૂર્વાફાલ્ગુની ૨, ઉત્તરા-
 ફાલ્ગુની ૨, હસ્ત ૫, ચિત્રા ૧, સ્વાતિ ૧, વિશાખા ૪, અનુરાધા ૪,
 જ્યેષ્ઠા ૩, મૂલ ૧૧, પૂર્વાષાઢા ૪, ઉત્તરાષાઢા ૪, અભિજિત્ ૩,
 શ્રવણ ૩, ધનિષ્ઠા ૪, શતભિષા ૧૦૦, પૂર્વાભાદ્રપદા ૨, ઉત્તરાભાદ્ર-
 પદા ૨, અને રેવતી ૩૨. એ નક્ષત્રોની સાથે આપેલ સંખ્યાપરિમિત
 તારાઓ છે, નક્ષત્ર તારા સંખ્યાવાલી તિથિ તેની સાથે શુભ ગણાતી નથી,
 જેમ અશ્વિનીની તારા ૩ છે અને તૃતીયા તિથિની સંખ્યા પણ ૩ ની
 છે તો શુભ કાર્યમાં અશ્વિની તૃતીયાનો યોગ સારો ગણાતો નથી,
 જ્યાં તારા ૧૫ થી અધિક હોય ત્યાં તેને ૧૫ ભાંગીને શેષ સંખ્યાને
 તારાસંખ્યા ગણવી ઇટલે રેવતીની ૨ અને શતભિષાની તારાસંખ્યા
 ૧૦ રહેશે, અન્ય ગ્રન્થકારોએ તારા સંખ્યાનું અન્ય પ્રયોજન પણ
 જણાવ્યું છે, વરાહ લક્ષ્મણે—

નક્ષત્રસુદ્રાહે, ફલમન્દૈસ્તારકામિતૈઃ સદસત્ ।

દિવસૈર્જર્વરસ્ય નાશો, વ્યાધેરન્યસ્ય વા વાચ્યઃ ॥૧૬૮॥

આ૦ટી૦—વિવાહમાં નક્ષત્ર સંબન્ધી શુભ, અશુભ ફલ તેની
 તારા સંખ્યાપરિમિત વર્ષોએ મલશે એમ કહેવું, જ્યારે જ્વર અથવા
 બીજો રોગ જે નક્ષત્રમાં ઉત્પન્ન થયો હોય તે તેની તારાસંખ્યાના
 દિવસોમાં મટશે એમ કહેવું.

नक्षत्रमुहूर्तो—

भेषु क्षणान् पञ्चदशैन्द्ररौद्र-

वायव्य सर्पान्तकवारुणेषु ।

त्रिघनान् विशाखादितिभ ध्रुवेषु,

शेषेषु तु त्रिंशतमामनन्ति ॥१६९॥

भा०टी०—ज्येष्ठा, आर्द्रा, स्वाति, आश्लेषा, भरणी, शत-
भिषा ए ६ नक्षत्रोमां चन्द्रमानो भुक्तिकाल १५ मुहूर्तनो; विशाखा
पुनर्वसु, रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपदामां ४५
मुहूर्तनो अने शेष-अश्विनी, कृत्तिका, मृगशिर, पुष्य, मघा, पूर्वा-
फाल्गुनी, हस्त, चित्रा, अनुराधा, मूल, पूर्वाषाढा, श्रवण, धनिष्ठा,
पूर्वाभाद्रपदा, रेवती आ १५ नक्षत्रोनो ३० मुहूर्तोनो भोग होय छे.
आ मुहूर्तोनो उपयोग नव्य चन्द्रोदय अने संक्रान्तिनु फल जोवामां
थाय छे.

पूर्वयोगी आदि नक्षत्रो—

युज्यन्ते षड् द्वादश, नव चेति निशाकरेण धिष्णयानि ।

प्राक् मध्यपश्चिमाधैः, पौष्णैशाखण्डलादीनि ॥१७०॥

भा०टी०—रेवती अश्विनी, भरणी, कृत्तिका रोहिणी, मृग-
शिर आ ६ नक्षत्रो चन्द्रनी साथे पूर्वयोगी छे, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य
आश्लेषा मघा पूर्वाफाल्गुनी उत्तराफाल्गुनी हस्त, चित्रा स्वाति
विशाखा अनुराधा ए १२ नक्षत्रो मध्ययोगी छे अने ज्येष्ठा मूल
पूर्वाषाढा उत्तराषाढा श्रवण धनिष्ठा शतभिषा पूर्वाभाद्रपदा उत्तराभाद्र-
पदा भा ९ नक्षत्रो पश्चिमयोगी छे, चित्राहमां तेमज चातुर्मासमां
वृष्टिनुं भविष्य जोवामां आ पूर्वादि योगनो उपयोग थाय छे.

नक्षत्रोना भ्रमणमार्ग—

दक्षिणमार्गेऽश्लेषा १,

બ્રાહ્મત્રય ૪ કરયુગે ૬ દ્વિપતિષટ્કમ્ ૧૩ ।
 ઉત્તરતઃ પુનરભિજિ,
 ત્રય ૩ મશ્વિત્રય ૬ યૌનયુગલાનિ ૮ ॥૧૭૧॥
 આજપાદદ્વયં ૧૦ સ્વાત્યા ૧૧
 દિત્યે ૧૨ ચેતિ ભ્રમન્તિ લે
 મધ્યમાર્ગે શતભિષક્ ૧,
 પુલ્હય ૨ પૌલ્હય ૩ મઘા ૪ ઇતિ ॥૧૭૨॥

भा०टी०—आश्लेषा रोहिणी मृगशिर आर्द्रा हस्त चित्रा
 विशाखा अनुराधा ज्येष्ठा मूल पूर्वाषाढा उत्तराषाढा आ बार नक्षत्रो
 मध्याकाशथी दक्षिण तरफना मार्गे भ्रमण करे छे. अभिजित् श्रवण
 धनिष्ठा अश्विनी भरणी कृत्तिका पूर्वाफाल्गुनी उत्तराफाल्गुनी पूर्वा-
 भाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा स्वाति पुनर्वसु आ १२ नक्षत्रो उत्तर तरफ
 आकाशमां भ्रमण करे छे ज्यारे शताभषा पुष्य रेवती मघा आ ४ नक्षत्रो
 मध्य मार्गमां भ्रमण करे छे. शुभाशुभ समय समर्धता महर्धता अने वृष्टि
 ज्ञानने अंगे नक्षत्रोना भ्रमण मार्गनो उपयोग छे दक्षिणमार्गी नक्ष-
 त्रोथी चन्द्र उत्तर तरफ चाले तो शुभ अन्यथा महा अशुभ, ए ज
 रीते उत्तरागामि नक्षत्रोथी उत्तरमां चाले तो महाशुभ दक्षिणमां
 चाले तो साधारण, मध्यमार्गी नक्षत्रोथी चन्द्र उत्तरमां चाले तो
 शुभ अन्यथा अशुभ छे.

मुखपरक नक्षत्रगणो अने विधेय कार्यों—

पूर्वात्रयाग्निमूलाहि—द्विदैवत्यमघान्तकम् ।

अधोमुखं तु नवकं, भानां तत्र विधीयते ॥१७३॥

बिलप्रवेश-गणित-भूतघूतविलेखनम् ।

खननं शिल्प-कृपादि-निक्षेपोद्धरणादि यत् ॥१७४॥

भा०टी०—पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढा, पूर्वाभाद्रपद, कृत्तिका,

मूल, आश्लेषा, विशाखा, मघा, भरणी आ नव नक्षत्रोन्नो गण
अश्विमुख छे, ते नक्षत्रगणमो बिलमां प्रवेश, गणित, भूतसाधन,
जुगार, छोलवुं, खणवुं, शिल्पारंभ, कृपादिखनन, गाडवुं, अंदरथो
काढवुं आदि ए प्रकारनां कामो करवाथी सफलता थाय छे.

मित्रैन्द्र त्वाप् हस्तेन्द्रादित्यान्त्याश्विनवायुभम् ।

तिर्यङ्मुखाल्पं नवकं, भानां तत्र विधीयते ॥१७५॥

हलप्रवाह-गमनं, गन्त्रीयन्त्रखरोष्ट्रकम् ।

खरगोरथनौयान, -लुलाय हयकर्म च ॥१७६॥

भा०टी०—अनुराधा, ज्येष्ठा, चित्रा, हस्त, मृगशिर, पुनर्वसु,
रेवती, अश्विनी, स्वाति आ नवनक्षत्रोन्नो गण तिर्यङ्मुख छे आमां
हल चलाववुं, गमन करवुं, गाडुं चलाववुं. यंत्र चलाववुं गधेडां अने
उंटोन्नो समूह चलाववो गधेडा बलद रथ नाव अने अन्य यान वाहनो
नवेसर चलाववा, अने पाडा, घोडाओने दमवा आदि कामो करवां.

ब्रह्मविष्णुमहेशार्य-वसुपाद्युत्तरात्रयम् ।

ऊर्ध्वास्यं नवकं भानां, तेषु कर्म विधीयते ॥१७७॥

पुरहर्म्यगृहाराम-वारणध्वजकर्म च ।

प्रासादवेदिकोद्यान-प्राकाराद्यं च सिध्यति ॥१७८॥

भा०टी०—रोहिणी, श्रवण, आर्द्रा, पुष्य, धनिष्ठा, शतभिषा,
उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपदा आ नक्षत्र नवक गण
ऊर्ध्वमुख छे. आ नक्षत्रोमां नगरनिवेश, महेलनिर्माण, गृहचयन,
आरामरोपण गजारोहण, ध्वजारोप, प्रासाद, वेदिका, उद्यान,
कोट आदिनु निर्माण करवाथी सिद्ध थाय छे.

स्थिरादि नक्षत्रगणो अने विहित कार्यो—

स्थिरसंज्ञं भवतु त्रय-मम्बुजयोन्मुत्तरात्रितयम् ।

नरपतिपत्तनसदनं प्रवेशबीजादि सिध्यते तत्र ॥१७९॥

दारुणभानि पुरन्दर-कोणपशिवसर्पदेवतानि स्युः ।
 दारुणबन्धनदहनप्रहरणकर्माणि सिद्धतां यान्ति ॥१८०॥
 पूर्वार्त्रितयं पैतृभ-सुग्राख्यमिदं पञ्चकं याम्यम् ।
 मारण भेदनबंधनविषदहनं पञ्चके कार्यम् ॥१८१॥
 सुरसचिवाश्विनिहस्त-ताराः स्युः क्षिप्रसंज्ञितास्ताश्च ।
 औषधपण्यविभूषण-शिल्पलताज्ञानकर्मसिद्धिः स्यात् ॥१८२॥
 मृदुवृन्दं भचतुष्टय-मन्त्यत्वाष्ट्राख्यसौम्यमिन्द्रक्षम् ।
 मङ्गलवनिताभूषणमन्दिरगीतादि सिध्यते तत्र ॥१८३॥
 भद्रितयं श्वसनसखं चेन्द्राग्निभं मिश्रसंज्ञं तत् ।
 निखिलानि च साधारण-कार्याण्युग्राणि कार्याणि ॥१८४॥
 अदिति श्रुतिभात्त्रितयं, चरसंज्ञं पञ्चमं मरुद्भं च ।
 वाहनकर्म विभूषण-चरकार्योद्यानमन्त्रसिद्धयै तत् ॥१८५॥

भा०टी०--रोहीणी, उत्तराफाल्गुनी उत्तराषाढा, उत्तराभा-
 द्रपदा आ ४ नक्षत्रो 'स्थिर' संज्ञावालां छे, राजधानीनो निवेश
 तथा राजाना महेलनु निर्माण प्रवेश अने बीजवपन आदि कार्यो आमां
 सिद्ध थाय छे. ज्येष्ठा, मूल, आर्द्रा, आश्लेषा आ नक्षत्रोनु नाम
 'दारुण' छे, आमां कठोर कार्य, बन्धन, मारण, दहन, आयुध
 चलाववां आदि कार्यो सिद्ध थाय छे. पूर्वाफाल्गुनी पूर्वाषाढा पूर्वा-
 भाद्रपदा मघा भरणी आ नक्षत्रोनी 'उग्र' ए संज्ञा छे आ उग्रपंचक्रमां
 मारण, मेदन, बन्धन, विषप्रयोग, अग्निदहनादि कार्यो करनार सफल
 थाय छे.

पुष्य, अश्विनी, हस्त, आ 'क्षिप्र' संज्ञक नक्षत्रोमां औषध
 ग्रहण, क्रयाणक संग्रह, अलंकारपरिधान शिल्पाध्ययन लतारोपण,
 ज्ञानाभ्यास आदि कार्योनी सिद्धि थाय छे.

रेवती, चित्रा, मृगशिर, अनुराधा आ ४ नक्षत्रो 'मृदु' संज्ञक छे.

आमां दरेक मंगलकार्यो स्त्री विषयक कार्यो, अलंकार, मंदिर, गीत आदि कार्यो सिद्ध थाय छे.

स्वाति, विशाखा आ बे नक्षत्रो 'मिश्र' संज्ञक छे, आमां सर्व साधारण तेम ज उग्र कार्यो करवां.

पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, स्वाति आ पांच नक्षत्रो 'चर' संज्ञक छे, आमां यान-वाहन कार्यो, विभूषा, उद्यान कार्य, मन्त्रादि चरकार्यो सिद्धिने पामे छे.

कथितान्यपि लघुवृन्दे, चरसंज्ञे तानि कार्याणि ।

चरधिष्ये कथितान्यपि, कार्याणि लघुगणे नूनम् ॥१८६॥

यद्यद्दारुणभोक्तं, तत्तत्कर्म त्वद्योग्रभे कार्यम् ।

साधारणमिश्राख्यं, क्रूरोग्रं तीक्ष्णदारुणं तुल्यम् ॥१८७॥

साधारणवृन्दोक्तं, यत्कर्माद्यं क्रूरो सदा कार्यम् ।

ध्रुवमचलं क्षिप्रलघु, चरं चलं मैत्र मृदुसंज्ञे ॥१८८॥

निम्बिलेष्वपि धिष्येष्विवह, सामान्यं कार्यमित्युक्तम् ।

तत्तत्प्रकरणकथितं, तदेव मुख्यं विजानोयात् ॥१८९॥

भा०टी०—लघुगणमां कहेल कार्यो चर संज्ञक नक्षत्रोमां अने चर नक्षत्र गणमां कहेल कार्यो लघुगणमां करवां, जे जे कार्य दारुण नक्षत्रमां करवानुं कहेल छे ते उग्र नक्षत्रमां पण करबुं, साधारण-मिश्र, क्रूर, उग्र अने तीक्ष्ण-दारुण ए तुल्यस्वभावनां नक्षत्रो छे, साधारणमां करवानां कार्यो क्रूर नक्षत्रोमां करवां, ध्रुव अचल, क्षिप्र लघु, चर चल, मैत्र मृदु, साधारण मिश्र, क्रूर उग्र अने तीक्ष्ण दारुण, ए एक बीजाना नामान्तरो छे, एकरमां कहेल काम बीजामां करी शक्य छे, आ प्रमाणे तमाम नक्षत्र विधेय सामान्य कार्य कहुं, आगल ते ते प्रकरणमां कहेल कार्य तेनुं मुख्य कार्य जाणवुं.

प्रत्येकनक्षत्र विधेय कार्यो—

यात्राभेषजभूषण-विद्याऽऽवेभाजशिल्पवस्त्राद्यम् ।

उत्सवमंगलकार्यं, कर्त्तव्यं दस्त्रनक्षत्रे ॥१९०॥

साहसदारुणशत्रु-प्रशमननिक्षेपकूपकृष्याद्यम् ।

विषवधबन्धनदहन-प्रहरणकार्याणि भरणीषु ॥१९१॥

अग्निपरिग्रहसाहस-रिपुवधदहनास्त्रशस्त्रकर्माद्यम् ।

धातुर्वादविधानं, विवादलोहाश्मबहुलायाम् ॥१९२॥

भा०टी०—यात्रा, औषध, भूषण, विद्या, अश्वकर्म, गजकर्म, भजकर्म, शिल्प वस्त्रादि, उत्सवकार्यं अने मांगलिक कार्यं अश्विनीमां करवुं. साहसकर्म, भयंकरकर्म, शत्रुने शान्त करवो, जमीनमां गाढवुं, कूपखनन, कृषिकार्यं, विषदान, वध, बन्धन, बालवुं, प्रहरणकार्यं इत्यादि उग्र कार्यो भरणीमां करवां, अग्निस्थापन, साहसकर्म. शत्रु-वध, दहन, अस्त्र-शस्त्रकर्मादि, धातुक्रिया (रसायनसिद्धि), विवाद, लाहकर्म, पाषाणकर्म ए कामो कृत्तिकामां करवां.

सुरनरसद्माद्यखिलं, विवाहधनधान्यसंग्रहोपनयम् ।

उत्सवभूषणमङ्गल-मजभे कार्यं सपौष्टिकं कर्म ॥१९३॥

शान्तिरूपौष्टिकशिल्प-व्रतकर्माद्राह मंगलाद्यखिलम् ।

सुरसंस्थापनवास्तु-क्षेत्रारम्भादि सिध्यते सौम्ये ॥१९४॥

प्रहरणदारुणबन्धन-विग्रहविषसंधिवह्निकर्माद्यम् ।

छेदनदहनोच्चाटन-मारणकृत्यं च रौद्रभे कुर्यात् ॥१९५॥

भा०टी०—देवालय, वर आदि सर्वं, विवाह, धन्यधान्य-संग्रह, उपनयन, उत्सव, आभरण, मांगल्य अने पौष्टिक कार्यं रोहिणी नक्षत्रमां करवां, शान्तिक, पौष्टिक, शिल्पकर्म, व्रतकर्म, विवाह, मांगल्यादिक सर्वं शुभकार्यं, देवप्रतिष्ठा, वास्तुक्षेत्रारम्भादि भृगुशिरमां सिद्ध थाय छे. आयुध कार्यं, उग्रकार्यं, बन्धन, लडाइ,

विषप्रयोग, संधि, अग्निकर्म आदि ज्ञेदन, दहन, उच्चाटन अने भारण-
कर्म आर्द्रा नक्षत्रमां करवां.

शान्तिकपौष्टिकयात्रा-व्रतप्रतिष्ठा-नृपाहवाद्यखिलम् ।
वनिताकरसंग्रहणं, त्यक्त्वान्यत्कर्म सिद्धयते पुष्ये ॥१९६॥
उद्धतरिपुमदभञ्जन-साहसवाणिज्यकपटकर्म ।
अनलायससंग्रह-श्वेड-स्तेयादि सर्पभे कार्यम् ॥१९७॥
युवतीकरसंग्रहं, वापीकूपतडागोत्सवाद्यं च ।
क्षितिपत्याहवसर्वं, पितृयधिष्ये च पैतृकं कर्म ॥१९८॥

भा०टी०—शांतिक, पौष्टिक कर्म, यात्रा, व्रत, प्रतिष्ठा,
राजयुद्धादि सर्व, स्त्री पाणिग्रहण सिवाय बीजां सर्व कार्यो पुष्यमां
सिद्ध थाय ले, अभिमानी शत्रुनुं मदभंजन, साहसिककार्य, वाणिज्य
कर्म, कपटकर्म, अग्निकार्य, लोहसंग्रह, विषप्रयोग, चोरी आदि आ
*लेषामां करवां. स्त्रीनुं पाणिग्रहण, वाव कुआ तलाव आदिनुं खोदनुं,
उत्सव आदि, राजाओनां युद्ध आदि सर्व अने पितृकर्म ए मघा
नक्षत्रमां करवां.

शिल्पप्रहरणबन्धन-दारुणचित्रकापटं कर्म ।
नटनद्रुमासवाद्यं, भाग्ये कुड्यप्रहरणं च ॥
उपनयनं करपोडन-मखिलं स्थिरशिल्पभूषणं त्वखिलम् ।
पुरसदनप्रारंभण-मम्बररणकार्यमर्थमर्क्षेषु ॥
भेषजयात्राविद्या-विवाहशिल्पव्रताम्बराभरणम् ।
सुरसंस्थापनमखिलं, वास्तुप्रारंभमर्कनक्षत्रे ॥

अर्थात्—शिल्प, आयुध, बन्धन. कठोरकर्म, चित्र, कपटकार्य,
नाटक, वृक्षारोप, आसत्र, भित्तिचयन अने प्रहरण पूर्वकालगुनी नक्षत्रमां
करवां. उपनयन, विवाह, सर्वस्थिर कार्य, शिल्प, सर्व भूषणकर्म,

पुरनिवेश, गृहनिवेश, वस्त्रकर्म, रणकर्म ए उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रमां करवां, औषध, यात्रा, विद्या, विवाह, शिल्प, व्रत, वस्त्र, आभूषण, सर्वदेवप्रतिष्ठा, वास्तुप्रारंभ ए कार्यं हस्तनक्षत्रमां करवां.

शान्तिकपौष्टिकमखिलं, स्थिरकार्यं वस्त्रभूषणं शिल्पम् ।

उपनयनं वास्तुकृषि-क्षितिपतिकार्यं च चित्रायाम् ॥१९९॥

सुरनरसद्मविधानं, भूषणवैवाहमंगलाद्यखिलम् ।

बीजारोपणशस्त्र-क्षितिपतिसमरं विभूषणं स्वातौ ॥२००॥

उपचयवस्तुग्रहणं, भूषणनववस्त्रचित्रकार्यं च ।

भेषजशकटप्रहरण-शिल्पविचित्रं द्विदैवभे कार्यम् ॥२०२॥

भा०टी०—सर्वप्रकारनां शान्तिक अने पौष्टिक कार्यो, स्थिर-कार्य, वस्त्र, भूषण, शिल्प, उपनयन, वास्तु, कृषि, राजकार्य ए कार्यो चित्रामां करवां. देवालय, मनुष्यालयनुं निर्माण, भूषण, विवाह संबन्धी सर्वमंगल कार्य, बीजारोपण, वस्त्र, राजयुद्ध, विभूषण ए सर्व स्वातिमां करवां. धान्यादिवस्तु संग्रह, भूषण, नवीन वस्त्र चित्र-कार्य, औषध, शकटवहन, प्रहरण, शिल्प, विचित्र कार्य ए विशाखा नक्षत्रमां करवां.

करमर्दनमुपनयनं, यात्रासुरसद्मसंनिवेशायम् ।

स्थिरचरकार्यं त्वखिलं, भूषणमश्वेभकर्म मित्रर्क्षे ॥२०२॥

रिपुवधभेदनदहन-प्रहरणवह्निलोहकार्याद्यम् ।

स्तेयविधानं विविधं, शिल्पं चित्रं सुरेशभे कार्यम् ॥२०३॥

कृषिभवनविपिनकार्यं, वापीकूपादिबीजनिर्वापम् ।

समरविभूषणशिल्पं, विग्रहसंधिश्च मूलनक्षत्रे ॥२०४॥

भा०टी०—विवाह, उपनयन, यात्रा. देवालयनिवेश आदि, सर्व स्थिर तथा चर कार्य, भूषण, अश्वकर्म गजकर्म अनुराधा नक्ष-त्रमां करवुं. शत्रुनाश, भेदन, दहन, प्रहरण, अग्निकार्यं लोहकार्यं

आदि, सर्वं प्रकारं चौर्यकर्म, शिल्प, चित्र ए ज्येष्ठा नक्षत्रमां कराय छे. कृषिकार्यं, भवननिर्माणं, वनकार्यं वापी कूपादिकार्यं बीजवपन, युद्ध, विभूषण, शिल्प, युद्ध, संधि आदि कार्यो मूल नक्षत्रमां करवां.

शम्बरबन्धनमोक्षण-वापीकूपादि निग्रहं हननम् ।

द्रुमखंडनवनचारिण-पक्षिगां च यत्कार्यमम्बुमे कार्यम् ॥२०५॥

स्थापनमुण्डनमण्डन-वास्तुनिवेशं प्रवेशनाद्यं च ।

बीजारोपणवाहन-भूषणवस्त्रं च वैश्वभे कार्यम् ॥२०६॥

शान्तिकपौष्टिकमङ्गल-विचित्रकृषिशिल्पमम्बराद्यम् ।

धामविधानस्थापन-मुपनयनं विष्णुभे कार्यम् ॥२०७॥

उपनयनं चौलविधिं, जलतुरगोष्टेभदेवनिर्माणम् ।

कृषिभवनाहवमम्बर-विपिनोद्यानाश्म भूषणं वसुभे ॥२०८॥

भा०टी०—जल बांधवुं, जल छोडवुं, वापी-कूपादि, निग्रह,

मारण, वृक्षच्छेदन, वनचर पक्षिओ संबन्धी कार्य ए सर्वं पूर्वाषाढामां

कराय छे. प्रतिष्ठा, क्षौरकर्म, अलंकरण, वास्तुनिवेश, वास्तुप्रवेशादि,

बीजारोपण, वाहन, भूषण, वस्त्रकर्म ए उत्तराषाढामां करवां, शान्तिक,

पौष्टिक, माङ्गल्य, विचित्रकार्यं, कृषि, शिल्प, वस्त्रादि, गृहनिर्माण,

प्रतिष्ठा, उपनयन ए श्रवण नक्षत्रमां करवां. उपनयन, चूडाविधि-

जल, अश्व, उष्ट्र, गजसंबन्धी कार्यं, देवमूर्ति निर्माण, कृषि, भवन,

युद्ध, वस्त्र, वननिवेश, उद्यान, पाषाणकर्म भूषण ए धनिष्ठां करवां.

समरारम्भविभूषण-गज बलतुरगोष्ट्रशस्त्रनाचाद्यम् ।

मुक्ताफलरजतमयं, वरुणर्क्षे वास्तुकर्माद्यम् ॥२०९॥

अजचरणर्क्षे कुर्यात्, साहसजलयन्त्रशिल्पकर्माद्यम् ।

मृद्घातुर्वाद्च्छेदन-कृषिमहिषोष्ट्राजेभविक्रयणम् ॥२१०॥

परिणयनं व्रतबन्धन-सुरनरसदनप्रतिष्ठां च ।

आहिर्बुध्न्ये भूषण-मम्बरवास्तुप्रवेशमभिषेकम् ॥२११॥

स्थलजलभूषणमखिलं, धामविधानं त्वमर्त्यमर्त्यानाम् ।
करपीडनमुनपयनं, मङ्गलमखिलं च पौष्यभे कार्यम् ॥२१२॥

भा०टी०—युद्धारंभ, विभूषण, गजसैन्य, अश्व, उष्ट्र, शस्त्र-
नावादि, मुक्तामय-रजतमय आभरण, वास्तुकर्मादि, शतभिषामां
करवुं. साहसकर्म जलयंत्र शिल्पकर्मादि, मृत्तिकाकर्म, धातुवादि,
च्छेदन, कृषि, महिष, उष्ट्र, अज-गजनो विक्रय ए पूर्वा भाद्रपदामां
करवां, विवाह, व्रतग्रहण, देवालयप्रतिष्ठा, गृहप्रवेश, भूषण, वस्त्र,
वास्तुकर्म, प्रवेश, राज्याभिषेक ए कार्या उत्तराभाद्रपदामां करवां.
स्थल, जल संबंधी कार्य, सर्वभूषण, गृहनिर्माण, देवालयनिर्माण,
विवाह, उपनयन, सर्व जातनां मांगलिक कामो रेवतीमां करवां.

नक्षत्रोनी कुलादिसंज्ञा—

पितृवसुतिष्येन्द्रनलप्युत्तरभाग्यद्विद्वैवचित्राणि ।
द्वैवचिकित्सककोणपसहितान्येतानि कुलभानि ॥२१३॥
अजचरणादितिपूषाधातुमरुद्विष्णुवारीशशक्राणि ।
अहियमधातुजलान्युपकुलान्यन्यानि कुलोपकुलानि ॥२१४॥
उपकुलभेषु च याता, विजयं प्राप्नोत्यसंशयं क्षिप्रम् ।
कुलभेषु च भङ्गः स्याद्यातुः संधिस्तयोः कुलोपकुलभेषु ॥२१५॥
कुलभेषु च जातास्ते मनुजा भवन्ति कुलमुख्याः ।
उपकुलभे परविभवं भोक्तारस्त्वन्यभेषु सामान्याः ॥२१६॥

भा०टी०—मघा, धनिष्ठा, पुष्य, मृगशिरा, कृत्तिका, उत्तरा-
फाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपदा, पूर्वाफाल्गुनी, विशाखा, चित्रा,
अश्विनी, मूल एटलां 'कु' नक्षत्रो छे. पूर्वाभाद्रपदा, पुनर्वसु, रेवती,
अभिजित्, स्वाति, श्रवण, शतभिषा, ज्येष्ठा, आश्लेषा, भरणी, रोहिणी
पूर्वाषाढा ए 'उपकुल' नक्षत्रो छे अने बाकीनां आर्द्रा, अनुराधा, हस्त,

ए 'कुलोपकुल' संज्ञक छे, १ 'उपकुल' नक्षत्रोमां 'पापी' निःसंदेह जल्दी विजयी थाय छे, 'कुल' नक्षत्रोमां 'पापी' हारे छे अने 'कुलोपकुल'मां युद्ध थाय तो बने सरखा उतरी संधि करे छे. कुल नक्षत्रमां जन्मेल कुल नायक थाय छे, उपकुलमां जन्मेल परधनने भोग-वनार थाय छे ज्यारे कुलोपकुलमां जन्मनार साधारण होय छे.

नक्षत्रोनी अन्धादिसंज्ञा—

अन्धकमथ मन्दाख्यं, मध्यमसंज्ञं सुलोचनं पश्चात् ।
पर्यायेण च गणयेच्चतुर्विधं ब्रह्मधिष्णयतः ॥२१७॥
अन्धे सद्यो वस्तु नष्टं हृतं यल्लभ्यं दूरान्मन्दनेत्रे च कष्टात् ।
श्राव्यं द्रव्यं मध्यनेत्रे सुनेत्रे,
नैव श्राव्यं नैव लभ्यं कदाचित् ॥२१८॥

तथात्यन्धैर्दिशं पूर्वां, केकरैर्दक्षिणां पुनः ।
पश्चिमां चिपितैधिष्णयैः-दिग्पट्टिभिरुत्तराम् ॥२१९॥

भा०टी०—नक्षत्रो अन्ध, मंदनेत्र, मध्यनेत्र अने सुनेत्र संज्ञक होय छे. रोहिणीथी अन्धादि ४-४ नक्षत्रो गणी लेवां, रोहिणी अंध, मृगशिरा मंदनेत्र. आर्द्रा मध्य अने पुनर्वसु सुनेत्र, एज रीते २८ नक्षत्रो जाणी लेवां, अन्धमां वस्तु जाय तो जल्दी मले, मंदनेत्रमां लांबा टाइमे मले, मध्यनेत्रमां पत्तो लागे पण मले नहि अने सुनेत्रमां पत्तो य न लागे अने मले य नहि, अन्धनक्षत्रमां गुमायेल

१ मुहूर्त चिन्तामणिमां 'अनुप्राधा' उपकुलमां अने वसिष्ठ संहिता तथा आरंभतिद्धिमां 'कुलोपकुल'मां परिगणित छे 'सू'ने वसिष्ठ तथा आरंभतिद्धिकारे कुलमां अने मुहूर्तचिन्तामणिकारे 'कुलोपकुल'मां गणुं छे. 'शतभिषा'ने वसिष्ठे कुलमां अने आरंभ सि० कारे मुहूर्त चि० कारे 'कुलोपकुल' गणुं छे 'हस्त'ने वसिष्ठे 'कुलोपकुल' अने आ० सि०-सु० चि० कारे 'उपकुल' तरीके गणेल छे.

वस्तु पूर्वमां, मंदनेत्रे दक्षिणमां, मध्यनेत्रे पश्चिममां अने सुनेत्रे गयेल वस्तु उत्तर दिशामां जाय छे.

नक्षत्रोना देवमानवादि गण—

दस्त्रादितीज्यमृगमैत्रकरानिलान्त्य-

लक्ष्मीशभानि नव देवगणः प्रदिष्टः ।

पूर्वात्रयान्तकविधातृहरोत्तराणि,

धिष्ण्यानि मानुषगणोऽत्र नव प्रदिष्टः ॥२२०॥

पितृद्विदैवाग्निशतेन्द्रमूल-

वस्वाहिचित्रर्क्षगणोऽसुरालयः ।

देवासुराणां मनुजासुराणां,

वैरं महास्नेहमथेतरेषाम् ॥२२१॥

भा०टी०—अश्विनी, पुनर्वसु, पुष्य, मृगशिरा, अनुराधा, इस्त, स्वाति, रेवती अने श्रवण ए नव नक्षत्रोना गण देवगण कहेल छे. पूर्वा-फाल्गुनी पूर्वाषाढा पूर्वाभाद्रपदा, उत्तरफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभा-द्रपदा भरणी, रोहिणी, आर्द्रा आ नव नक्षत्रोना 'मानवगण' कह्यो छे अने मघा, विशाखा, कृत्तिका, शतभिषा, ज्येष्ठा, मूल, धनिष्ठा, आश्लेषा, चित्रा आ नव नक्षत्रोना ' राक्षसगण ' मानेल छे. देवगण अने मानवगण बालाभोने ' राक्षसगण ' बालानी साथे वैर होय छे ज्यारे बीजाभोने आपसमां महाप्रीति होय छे.

नक्षत्रयोनि—

अश्वेभमेषभुजगद्वयकुक्कुरौतु-

मेषौतुमूषकमहोन्दुरुगोलुलायाः ।

शार्दूलमाहिषगवारिमृगद्वयश्व-

कीशोऽथ बभ्रुयुगकीशगवाश्वसिंहाः ॥२२२॥

गोकुञ्जराविति यथाक्रममाश्विनादि-
भानां भवन्ति खलु कल्पितयोनिरूपां ।

एतद्विचार्यमखिलं सदसद्ग्रहज्ञै-

स्त्रिस्कन्धवित्प्रवरधीविदुषां वरिष्ठैः ॥२२३॥

बभ्रुरगं श्वेणमिभेन्द्रसिंह-मोत्वाखुसंज्ञं त्वजवानरं च ।

गोव्याघ्रमश्वोत्तममाहिषं च, वैरं नृनार्योर्नृपमृत्ययोश्च ॥२२४

भा०टो०—अश्विनी आदि २७ नक्षत्रोनी अनुक्रमे—अश्व १, गज २, मेष ३, सर्प ४, सर्प ५, श्वान ६, बिलाड ७, मेष ८, बिलाड ९, उंदर १०, उंदर ११, गौ १२, महिष १३, सिंह १४, महिष १५, व्याघ्र १६, मृग १७, मृग १८, श्वान १९, वानर २०, नकुल २१, नकुल २२, वानर २३, अश्व २४, सिंह २५, गो २६, गज २७, आ सर्वकल्पित योनियो छे, आ सर्व बुद्धिशाली ज्योतिषोओ ए शुभ अशुभ विचारवुं अने नकुल— सर्प, श्वान-मृग, गज—सिंह, बिलाड—उंदर, मेष—वानर, गो—व्याघ्र, अश्वमहिष, जेवी जातिवेर-वाली योनियो स्त्री पुरुष, राजा राजसेवक, देवदेवतूजक, नगर—नगर निवासीने परस्पर वजंवी.

नक्षत्रनाडी—

आवृत्तिभिर्भस्त्रिभिरश्विभाद्यं, क्रमोत्कमात्संगणयेच्च भानि ।

यथेकपर्वण्युभयोश्च धिष्णये, नेष्टा नृनार्योर्भृशमेकनाडी ॥२२५॥

सा मध्यनाडी पुरुषं निहन्ति, तत्पाश्वनाडी खलु कन्यकां च ।

आसन्नपर्यायसमागता चेद्धर्षेण साप्यन्तरिता त्रिवर्षैः ॥२२६॥

एकनाडीस्थिता यत्र गुरुर्मन्त्रं च देवता ।

तत्र द्वेषं रुजं मृत्युं, क्रमेण फलमादिशेत् ॥२२७॥

પ્રમુઃ પળ્યાઙ્ગના મિત્રં, દેશો ગ્રામઃ પુરં ગૃહમ્ ।
 એકનાડીસ્થિતં ભવ્યં, વિરુદ્ધં વેધવર્જિતમ્ ॥૨૨૮॥
 ચક્રે ત્રિનાડિકે ધિષ્ણ્ય-મેકનાડીગતં શુભમ્ ।
 ગુરુશિષ્યવયસ્યાદે-ર્ન વધૂવરયોઃ પુનઃ ॥૨૨૯॥

માંટી૦—ત્રણ ત્રણ નક્ષત્રોની આઠ્ઠત્તિઓથી ક્રમ અને ઉત્ક્રમે ફરી અશ્વિની આદિ નક્ષત્રો ગણતાં આદિ મધ્ય અન્ત્ય, અન્ત્ય મધ્ય આદિ, આદિ મધ્ય અન્ત્ય, નાડીઓમાં વધાં નક્ષત્રો આવી જશે, અશ્વિની હૃદયભાગે આદિ નાડીમાં, મૃગશિરા મધ્યનાડીમાં, કૃત્તિકા પૃષ્ઠભાગે અન્ત્યનાડીમાં, તે પછી રોહિણી અન્ત્યનાડીમાં, મૃગશિરા મધ્યમાં અને આર્દ્રા આદ્યનાડીમાં આવશે. આમ ક્રમોત્ક્રમે ૩-૩ નક્ષત્રો ગણતાં નવ આઠ્ઠત્તિઓ વડે ૨૭ નક્ષત્રો ૩ નાડીઓમાં સમાઈ જશે, આમ ગણતાં અશ્વિની. આર્દ્રા, પુનર્વસુ, ઉત્તરાફાલ્ગુની, હન્ત, જ્ઞેષ્ઠા મૂલ, શતભિષા, પૂર્વાભાદ્રપદા આ ૯ નક્ષત્રો આદ્ય નાડીમાં, મૃગશિરા, પુષ્ય, પૂર્વાફાલ્ગુની, ચિત્રા, અનુરાધા. પૂર્વાષાઢા, ધનિષ્ઠા, ઉત્તરાભાદ્રપદા આ ૯ નક્ષત્રો મધ્યનાડીમાં અને કૃત્તિકા, રોહિણી, આશ્લેષા, મઘા, સ્વાતિ, વિશાખા, ઉત્તરાષાઢા, શ્રવણ રેવતી આ ૯ નક્ષત્રો અન્ત્યનાડીમાં છે, જો વરવધુ બંનેનાં નક્ષત્રો એક નાડીમાં હોય તો તે અત્યન્ત અશુભ છે. જો તે મધ્યનાડીમાં હોય તો પુરુષનું અને તે પાસેની નાડીમાં હોય તો કન્યાનું માળ નિવત્તાવે, એક નાડીગત બંનેનાં નક્ષત્રો પાસે પાસે હોય તો એક વર્ષમાં અશુભ ફલ કરે અને આંતરે હોયતો ત્રણ વર્ષે અશુભ કરે.

જ્યાં ઋષિ, મંત્ર અને દેવતા ત્રણે એક નાડીગત હોય ત્યાં અનુક્રમે દ્વેષ, રોગ અને મરણ ફલ કહેવું

સ્વામી, પળ્યાંગના, મિત્ર, દેશ, ગ્રામ નગર, ઘરનાં નક્ષત્રો એક નાડીગત હોય તો શ્રેષ્ઠ છે અને મિત્રનાડીમાં હોય તો વિરુદ્ધ જાણવાં.

एक नाडीगत नक्षत्रो, गुरु शिष्यो, मित्रो आदिने माटे शुभ छे पण
वरकन्याने माटे शुभ नथी.

नाडीदोषापवाद-ज्योतिश्चिन्तामणौ—

रोहिण्याद्रांमृगेन्द्राग्नि-पुष्यश्रवणपौष्णभम् ।

अहिर्बुध्न्यर्क्षमेतेषां नाडीदोषो न विद्यते ॥२३०॥

भा०टी—रोहिणी, आर्द्रा, मृगशिरा, ज्येष्ठा, कृत्तिका, पुष्य,
श्रवण, रेवती, उत्तराभाद्रपदा, आ नक्षत्रेने नाडी दोष होतो नथी.

नक्षत्रोनी राशिओ—

राशिस्थ तत्र मेषोऽश्विनी च भरणी च कृत्तिकापादः ।

वृषभस्तु कृत्तिकां हि-त्रयाऽन्विता रोहिणी समार्गार्धं ॥२३१॥

मिथुनोमृगार्धमार्द्रा, पुनर्वसोश्चांह्यस्त्रयः प्रथमे ।

कर्की च पुनर्वसोः, पादः पुष्यस्तथाऽऽश्लेषा ॥२३२॥

सिंहस्तु मघापूर्वा-फाल्गुन्यः पाद उत्तराणां च ।

कन्योत्तरात्रिपादी, हस्तश्चित्रार्धमाद्यं च ॥२३३॥

तौली चित्रान्त्यार्धं, स्वातिः पादत्रयं विशाखायाः ।

स्याद् वृश्चिको विशाखा-चतुर्थपादोनुराधिका ज्येष्ठा ॥२३४॥

धन्वो मूलं पूर्वा-षाढाऽपि च पाद उत्तराषाढः ।

स्यान्मकर उत्तराषाढां हि-त्रितयं श्रुतिर्धनिष्ठार्धम् ॥२३५॥

कुंभोऽन्त्यर्धानिष्ठार्धं, शततारापूर्वभाद्रपात्रिपदी ।

मीनो भाद्रपदां हि-स्तथोत्तरा रेवती चेति ॥२३६॥

भा०टी—अश्विनी भरणी कृत्तिका प्रथम पाद-मेष १. कृत्तिका
पादत्रय रोहिणी मृगशिरार्ध-वृष २. मृगशिर अर्ध आर्द्रा पुनर्वसु
पादत्रय-मिथुन ३. पुनर्वसुअंत्यपाद-पुष्य आश्लेषा कर्क-४. मघा.
पूर्वाफाल्गुनी उत्तराफाल्गुनी प्रथमपाद सिंह-५. उत्तराफाल्गुनी पाद-
त्रय हस्त चित्रार्ध-कन्या-६, चित्रान्त्यार्धं स्वाति विशाखापादत्रय-तुला

७. विशाखा अन्त्यपाद, अनुराधा ज्येष्ठा-वृश्चिक ८, मूल. पूर्वाषाढा. उत्तराषाढा प्रथमपाद धनु ९. उत्तराषाढापादत्रय, श्रवण, धनिष्ठार्ध-मकर १०, धनिष्ठार्ध शतभिषा, पूर्वाभाद्रपदापादत्रय कुंभ ११. पूर्वाभाद्र-पदा अन्त्यपाद, उत्तराभाद्रपदा, रेवती मोन-१२. आम सत्रा बे बे नक्षत्रोनी १-१ राशि थाय छे एटले २७ नक्षत्रोनी १२ राशिओ थाय छे, राशिओ उपरथी वदार्थो उपर पडतो ग्रहोनी शुभ अशुभ प्रभाव जोवाय छे, तेमज राशिओनी बीजो पण घणो उपयोग छे.

शूल नक्षत्रो—

ऐन्द्राजपादाञ्जभार्यमाणि, शूलानि भानि क्रमतश्च दिक्षु ॥
न याति याता यदि शूलभेषु, सुरेशतुल्यः समरे बलेना ॥२३७॥

भा०टी—ज्येष्ठा, पूर्वाभाद्रपदा, रोहिणी, उत्तरा फाल्गुनी आ ४ नक्षत्रो पूर्वादि ४ दिशाओमां अनुक्रमे शूलरूप छे । गमन कर-नार युद्धमां बलवडे इन्द्रतुल्य होय तोपण ज्येष्ठादि शूलमां पूर्वादि दिशां प्रयाण करतो नथी ।

सर्वद्वारिक नक्षत्रो—

सर्वद्वारिक विष्ण्वान्य-मरेज्यादित्यमैत्रदस्त्रसंज्ञानि ।

तत्र तु यायान्नियतं, धनकीर्तिर्लभ्यतेऽप्यचिरात् ॥२३८॥

भा०टी—पुष्य, हस्त, अनुराधा, अश्विनी नामक नक्षत्रो सर्व-द्वारिक छे, आ नक्षत्रोमां प्रयाण करनार अवश्य धन तथा कीर्तिने अविलम्बे प्राप्त करे छे.

समयविशेषे गमनाऽयोग्यनक्षत्रो —

स्थिर-साधारणधिष्ण्यैः, पूर्वाहूणे नैव गमनं सत् ।

गमनं तु दारुणक्षै-दिनदलसमये न कार्यमनवरतम् ॥२३९॥

क्षिप्रैर्नापरवासर-समये मृदुमिश्रैर्न रात्रिमुखे ।

वज्रगणैर्निशि समये-चरधिष्ण्यैरुषसि न श्रेष्ठम् ॥२४०॥

भा०टी—रोहिणी, उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तरा भाद्र-
पदा, स्वाति, विशाखा, आ ६ नक्षत्रोमां मध्याह्न पहेलां गमन करवुं
शुभ नथी, ज्येष्ठा, मूल, आर्द्रा, आश्लेषा, आ चार नक्षत्रोमां
मध्याह्नकाले कदापि गमन न करवुं, पुष्य, अश्विनी, हस्त, आ
नक्षत्रोमां मध्याह्न पछीना दिवसमां प्रयाण न करवुं । रेवती, चित्रा,
मृगशिर, अनुराधा, स्वाति, विशाखा, आ नक्षत्रोमां सांजे रात्रिना
प्रारंभ समयमां गमन न करवुं । भरणी, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वा-
षाढा, पूर्वाभाद्रपदा, आ नक्षत्रोमां रात्रिना समयमां गमन न करवुं
अने पुनर्वसु, स्वाति, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, आ नक्षत्रोमां उप-
कालमां गमन न करवुं.

सर्वकाले गमनयोग्य नक्षत्रो—

सर्वस्मिन्नपि समये, सर्वासु च दिग्बिदिक्ष्वेव ।

सर्वं द्वारिकधिष्ण्या-न्यपि शुभदान्यतुलमखिलनृणाम् ॥२४१॥

भा०टी—अश्विनी, पुष्य, हस्त, अनुराधा, आ सर्वं द्वारिक
नक्षत्रोमां सर्वकाले सर्व दिशा विदिशाओमां गमन करवुं सर्व मनुष्यो
ने माटे अति शुभ फलदायक होय छे.

पुष्यनी विशिष्टता—

परकृतदोषं निखिलं, निहन्ति पुष्यः परो न पुष्यकृतम् ।

द्वादशनैधनगेन्दौ, बलवान् पुष्यस्त्वभोष्टदः सततम् । २४२॥

प्रत्यरिनैधनसंज्ञो विपत्करो वापि जन्मसंज्ञो वा ।

पाणिग्रहणं मुक्त्वा, नूनं सर्वार्थसिद्धिदः पुष्यः ॥२४३॥

मृगगणमध्ये सिंह, उडुगणमध्ये तथैव पुष्यश्च ।

निजबल सहितोऽप्येवं, त्रिविधोत्पातैर्न शक्तिमान् निहतः

भा०टी—परकृत, सर्वं दोषोतो पुष्य नाश करे छे, पण पुष्य-

कुन गुण दोषनो बीजाथी नाश थइ शकतो नथी. चन्द्र बारमो के आठमो होय तो पण बलवान् पुष्य हंमेशां अमोष्टफल आपे छे. पुष्य जन्म, विषत्. प्रत्यरि के ५ मा तारा रुच होय तोये विवाहने छोडी शेष सर्वकार्यनो सिद्धि करनारो छे. हरिणगणमां जेम सिंह छे तेजोत्र नक्षत्र गणमां पुष्य बलवान् छे. आम स्वपराक्रमे सहित छतां पण दिव्य भौम आन्तरिक्ष उत्पातो वडे हणायेल पुष्य कार्य साधक शक्तिमान् थतो नथो.

ज्योतिष तत्त्वकार पुष्यने अंगे लखे छे—

ग्रहेण विद्वोप्यशुभान्वितोऽपि,

विरुद्धतारोऽपि विलोमगोऽपि ।

करोति पुंसां सकलार्थसिद्धिं,

विहाय पाणिग्रहणं हि पुष्यः ॥२४५॥

भा०टी—ग्रहवडे विद्ध होय, अशुभ ग्रहाक्रान्त होय, विरुद्ध तारात्मक होय, वक्रिग्रहाध्यासित होय तो पण पुष्य एक विवाह सिवाय मनुष्योना सर्वकार्योनी सिद्धि करनारो छे.

वसिष्ठ पुष्यने अंगे यात्रा विषे कहे छे—

सर्वदिक्षु प्रशस्तोऽपि, पुष्यः सर्वार्थसाधकः ।

प्रतीच्यां गमने त्याज्यः, सौख्यसंपदमिच्छता ॥२४६॥

भा०टी—सर्व कार्य साधक पुष्य सर्व दिशाभोना गमनमां शुभ होवा छतां सुख संपत्तिना इच्छुके पश्चिमदिशाना गमनमां एनो त्याग करवो ।

नक्षत्र पञ्चक—

नक्षत्र गणमां धनिष्ठादि पांच नक्षत्रो विषे प्राचीन ज्योतिषीओ-वांचकगणनुं खास ध्यान खेंचे छे, आ पांच नक्षत्रो पैकीनां पूर्वाभाद्र पदा सिवायनां वधां शुभकार्य करवाने योग्य छे छतां अमुक कार्यो

माटे ए अयोग्य छे. एम संहिताकारोनुं कथन छे.

वसिष्ठ कहे छे—

वस्त्रपराधीत् पञ्चक-धिष्ण्ये गेहस्य गोपनं नैव ।

दक्षिगदिङ्मुखगमनं, दाहं प्रेतस्य काष्ठसंग्रहणम् ॥२४७॥

भा०टी—धनिष्ठानो उत्तर भाग, शशमिषा, पूर्वाभाद्रपदा, उत्तरमाश्वश, रेवती आ नक्षत्र पंचक्रमां घर छावतुं (ढाकतुं) नहि दक्षिग दिशा संमुख गमन (यात्रा) करवो नहि, मृतकनो अग्निदाह करवो नहि, काष्ठ संग्रह करवो नहि ।

दैवज्ञ बल्लभ ग्रन्थमां लखे छे—

कुर्यान्न दारु-तृणसंग्रह-मन्तकाशा—

यानं मृतस्य दहनं गृहगोपनं च ।

शय्यावितानमिह वासवपञ्चके च—

केचिद्ब्रूवन्ति परतो वसुदैवतार्थात् ॥२४८॥

भा०टी—धनिष्ठा पंचक्रमां काष्ठ-तृण संग्रह, दक्षिण दिशामां गमन, शय दाह, गृहगोपन, अने शय्या वणवी एटलां कार्यो करवां नहि, कोइ कहे छे धनिष्ठाना प्रथमार्ध पडी ए कार्यो न करवां.

ज्योतिःसागरमां लखे छे—

छेदनं संग्रहं चैव, काष्ठादीनां न कारयेत् ।

श्रवणादौ बुधः षट्के, न गच्छेद् दक्षिणां दिशम् ॥२४९॥

अग्निदाहो भयं रोगो, राजपीडा धनक्षयः ।

संग्रहे तृणकाष्ठानां, कृते वस्वादिपंचके ॥२५०॥

भा०टी०—विद्वान् धनिष्ठा पंचक्रमां काष्ठादिकनुं छेदन-संग्रहण न करवो । श्रवणादि नक्षत्र पट्टक्रमां दक्षिग दिशामां गमन न करे, पंचक्रमां तृण काष्ठादिकनो संग्रह करवाथी अनुक्रमे अग्निदाह १ भय २ रोग ३ राजपीडा ४ अने धननो क्षय थाय छे ।

આ સમ્બન્ધમાં ગર્ગ કહે છે—
 ધનિષ્ઠાપશ્ચકે ચન્દ્રે, સૂર્યે પેત્ર્યાદિપશ્ચકે ।
 છેદનાદિ ન કર્તવ્યં, ગૃહાર્થં તૃગકાષ્ટયોઃ ॥૨૫૧॥
 પૂર્વાર્ધ નાતિદોષાય, દારુતક્ષણસંગ્રહે ।
 યાનગોપનશઘ્યાયાં, સંપૂર્ણાં વાસવં ત્યજેત્ ॥૨૫૨॥
 કેઽપ્યાહુઃ સંકટે ઘોરે, પશ્ચકે પશ્ય નાહિકાઃ ।
 ક્રમાન્તૃનોયપાદાઘ્યા, અન્ત્યપાદાવસાનગાઃ ॥૨૫૩॥

ખા.ટી—ધનિષ્ઠાદિ પંચક ઉપર ચન્દ્ર હોય અને મઘાદિ પંચક ઉપર સૂર્ય હોય ત્યારે ગૃહ છાવવા નિમિત્તે તૃણો-કાષ્ઠોનું છેદન-સંગ્રહાદિ ન કરવું, કાષ્ઠ છેદન-સંગ્રહમાં ધનિષ્ઠાનો પૂર્વાર્ધ વહુ દોષકારક નથી પણ દક્ષિણ ગમન, ગૃહગોપન અને શર્યા વળવામાં તો સમ્પૂર્ણ ધનિષ્ઠાનો ત્યાગ કરવો, કોઈ કહે છે—અત્યન્ત સંકટ કાલમાં પંચકની પાંચ વડિઓ છોડીને કામ કરી લેવું, ધનિષ્ઠાના તૃતીય ચરણનો, શતભિષાના પ્રથમ ચરણની, પૂર્વાભાદ્રપદાના દ્વિતીય ચરણની, ઉત્તરાભાદ્રપદાના તૃતીય ચરણની અને રેવતીના ચતુર્થ ચરણની પાંચ વડિકાઓ સંકટ કાલે ત્યજવી ।

વ્યવહારસારમાં પંચકનું ફલ—

ધનિષ્ઠા ધનનાશાય, પ્રાગ્ધની શતતારકા ।
 પૂર્વાયાં દૃષ્ટયેદ્રાજા, ઉત્તરા મરણં ધ્રુવમ્ ॥૨૫૪॥
 અગ્નિદાહશ્ચ રેવત્યામિત્યેતત્પંચકે ફલમ્ ।

ખા.ટી—ધનિષ્ઠા ધનનો નાશ કરે, શતભિષા પ્રાણઘાત કરનારી થાય, પૂર્વાભાદ્રપદામાં રાજા દૃષ્ટ કરે, ઉત્તરાભાદ્રપદામાં નિશ્ચય મરણ થાય અને રેવતીમાં અગ્નિદાહ થાય, આ પ્રમાણે પંચક માં વર્જિત કાર્ય કરવાનું ફલ થાય ।

આરંભ નિદ્ધિકાર એ વિષે લખે છે—
 પશ્ચકં શ્રવણાદીનિ, પશ્ય ઋક્ષાણિ નિર્દિશેત્ ।

केचित्पुनर्धनिष्ठादि, पञ्चकं पञ्चकं विदुः ॥२५५॥

भा०टी०—श्रवण आदि पांच नक्षत्रोने पंचक कहेवुं. कोइ कहे छे-धनिष्ठादि पांचने पंचक कहेवुं, वसिष्ठादिना मते धनिष्ठादि पंचक कहे छे. ज्यारे नारचन्द्र तथा आरंभसिद्धिकारना विचारमां श्रवणादि पंचक वर्जित छे ।

नक्षत्र विषयटी-वसिष्ठ—

स्वाक्षा ५० जिना २४ व्योमगुणाः ३० खवेदा ४०,
इन्द्राः १४ कुदस्त्राः २१ खगुणा ३० नखाश्च २० ।
दन्ताः ३२ खरामाः ३० खयमाः २० पुराणाः १८;
क्षमाबाहवो २१ विंशति २० रब्धि-चन्द्राः १४ ॥२५६॥
इन्द्रास्तु १४ काष्ठा १० मनवः १४ षडक्षाः ५६,
वेदाश्विनो २४ व्योमभुजा २० दशा १० ऽऽशाः १० ।
नागेन्दवो १८ भूपतयो १६ ऽब्धिदस्त्रा २४,
व्योमानयो ३० दस्त्रमुखर्क्षकाणाम् ॥२५७॥

आभ्यः परस्ताद्विषनाडिकाख्या-

स्त्याज्या श्रतस्रः खलु शोभनेषु ।

विषाख्यनाडीषु कृतं शुभं यद्,

विनाश मायात्यचिराच्च सर्वम् ॥२५८॥

कुर्वन्ति नाशं विषनाडिकास्ता,

लग्नाश्रितानंशगुणानशेषान् ।

जन्तून् यथा कुष्ठभगन्दरार्श—

व्याघातशूलक्षयवातरोगाः ॥२५९॥

कुर्वन्त्युद्राहितां कन्यां, विधवां वत्सरत्रयात् ।

अन्यस्मिन्मङ्गले ताश्च, निधनं वाथ निर्धनम् ॥२६०॥

भा०टी—अश्विनीनी ५० भरणीनी २४ कृत्तिकानी ३०

રોહિણીની ૪૦ મૃગશિરની ૧૪ આર્દ્રાની ૨૧ પુનર્વસુની ૩૦ પુષ્યની ૨૦ આશ્લેષાની ૩૨ મઘાની ૩૦ પૂર્વા ફાલ્ગુનીની ૨૦ ઉત્તરાફાલ્ગુની ૧૮ હસ્તની ૨૧ ચિત્રાની ૨૦ સ્વાતિની ૧૪ વિશાખાની ૧૪ અનુરાધાની ૧૦ જ્યેષ્ઠાની ૧૪ મૂલની ૫૬ પૂર્વાષાઢાની ૨૪ ઉત્તરાષાઢાની ૨૦ શ્રવણની ૧૦ ધનિષ્ઠાની ૧૦ શતભિષાની ૧૮ પૂર્વાભાદ્રપદાની ૧૬ ઉત્તરાભાદ્રપદાની ૨૪ રેવતીની ૩૦ આદિની ઘડીઓ પછીની પ્રત્યેક નક્ષત્રની ૪-૪ ઘડીઓ ' વિષ ' ઘટિકાઓ છે, આ વિષ ઘટિકાઓ શુભકાર્યમાં ત્યાગથી જોડ્યે । વિષ ઘટિકાઓમાં કરેલ સર્વ શુભકાર્યનો સત્વર નાશ થાય છે, આ વિષ ઘટિકાઓ લગ્ન અને નવાંશ સંબન્ધિ સમ્પૂર્ણ ગુણોનો નાશ કરે છે, જેમ કુઠ મગન્દર, અર્શ, પક્ષાઘાત, શૂલ, ક્ષય અને વાત વ્યાધિઓ પ્રાણ ધારિયોનો નાશ કરે છે,

જ્યોતિઃસાગરમાં વિષ ઘટીનો વિષય નીચે પ્રમાણે લલ્યો છે-
વિવાહવ્રતચૂડાસુ, ગૃહારંભપ્રવેશયોઃ ।

યાત્રાદિશુભકાર્યેષુ, વિગ્નદા વિષનાડિકાઃ ॥૨૬૧॥

ખાંટી૦—વિવાહ, વ્રત, ચૂડાકર્મ, ગૃહારંભ, ગૃહપ્રવેશ, અને યાત્રા આદિ શુભ કાર્યોમાં વિષ નાડીઓ વિગ્નદાયક છે,

વિષઘટી દોષાપવાદ દૈવજ્ઞમનોહરે—

ચન્દ્રો વિષઘટીદોષં, હન્તિ કેન્દ્રત્રિકોણગઃ ।

લગ્નં વિના શુભૈર્દ્રષ્ટઃ, કેન્દ્રે વા લગ્નપસ્તથા ॥૨૬૨॥

ખાંટી૦—ચન્દ્ર લગ્ન વિનાના કેન્દ્ર સ્થાનમાં અથવા ત્રિકોણમાં સ્થિત હોય અને તે શુભ ગ્રહોની દ્રષ્ટિમાં હોય તો 'વિષઘટી'ના દોષનો નાશ કરે છે, તથા લગ્નપતિ કેન્દ્રમાં પડ્યો હોય અને શુભની દ્રષ્ટિમાં હોય તો પણ વિષ ઘટીજન્ય દોષ વિલીન થાય છે,

ફલપ્રદીપકાર વિષઘટીદોષનો અપવાદ કહે છે—

विषनाड्युत्थितं दोषं, हन्ति सौम्यक्षगः शशी ।

मित्रद्रष्टोऽथवा स्वीय-वर्गस्थो लग्नपो भवेत् ॥२६३॥

भा०टी०—सौम्य राशिगत चन्द्र विष नाडीथी उत्पन्न दोषनाश करे छे, अथवा लग्नपति मित्रनी द्रष्टिमां होय अने स्ववर्गस्थित होय तो पण विषघटी जन्य दोषनो नाश थाय छे.

दूषितनक्षत्रो—

जे जे नक्षत्रोमां जे जे कार्यो विधेय रूपे लख्यां छे, ते नक्षत्रोनी अदूषित अवस्थामां करवानां छे, क्रूरग्रहाक्रमण, वेध, उत्पात, ग्रहण, आदिथी दूषित थयेल नक्षत्रोमां विहित कार्यो पण सिद्ध थतां नथी, तेथी कार्यमां लेवातुं नक्षत्र कोइ पण प्रकारे दूषित तो नथी ? ए बातनो मुहूर्त आपनारे प्रथम विचार करीने समय बतावथो, दूषित नक्षत्रो वसिष्ठना मते नीचे प्रमाणे छे,

आरार्कावर्यहि केतुभिः-राक्रान्तं विद्ध भं च तत्सर्वम् ।

मङ्गलकार्यं सततं, त्याज्यं चोत्पातदूषितं धिष्ण्यम् ॥२६४॥

निहतं त्रिविधोत्पातैः, क्रूराक्रान्तं च विद्ध भं निखिलम् ।

त्याज्यं तच्छुभकर्मणि, नोपादतः पातधिष्ण्यं च ॥२६५॥

भा०टी०—मंगल, सूर्य, शनि, राहु, केतु वडे आक्रान्त एटले आ ग्रहो पैकीना कोइपण ग्रह वडे अध्यासित अने विद्ध तथा उत्पातथी दूषित नक्षत्र मंगल कार्यमां सम्पूर्ण त्याज्य करवुं, दिव्यभौम आन्तरिक्ष उत्पातो वडे हणायेलुं, क्रूर ग्रहोवडे आक्रान्त तथा विद्ध थयेलुं अने पात नक्षत्र ए नक्षत्रो शुभ कार्यमां पाद मात्र नहिं पण सम्पूर्ण छोडी देवां.

आ संबन्धमां आरंभसिद्धिकार नो मत—

क्रूरेण भुक्तमाक्रान्तं, भोग्यं ग्रहणभं तथा ।

दुष्टं ग्रहोदयास्ताभ्यां, ग्रहैर्भिन्नं च भं त्यजेत् ॥२६६॥

આંટી૦—ક્રૂર ગ્રહ વડે ભોગવીને સૂકેલું, ભોગવાતું અને ભોગ-
વવાનું, ગ્રહણદુષિત, ગ્રહોના ઉદયાસ્ત વડે દૂષિત અને ગ્રહોવડે ભિન્ન
તથા વિદ્વ નક્ષત્ર શુભ કાર્યમાં ન લેવું. ।

દૂષિતનક્ષત્રવિષે શ્રીપતિ—

ક્રૂરૈર્મુક્તં ક્રૂરગન્તવ્યમૃક્ષં, ક્રૂરાક્રાન્તં ક્રૂરવિદ્ધં ચ નેષ્ટમ્ ।

યન્ચોત્પાતૈર્દિવ્યભૌમાન્તરિક્ષૈ-

દુષ્ટં તદ્વત્ ક્રૂરલતાહતં ચ ॥૨૬૭॥

આંટી૦—ક્રૂર ગ્રહો વડે ભોગવીને છોડેલ, ક્રૂર ગ્રહ જે ઉપર
જનાર છે. અથવા ક્રૂર વડે આક્રાન્ત, અને ક્રૂરના વેધે વિદ્વ નક્ષત્ર
શુભ કામમાં લેવું ઇષ્ટ નથી, વલી દિવ્ય, ભૌમ, આન્તરિક્ષ ઉત્પાતોથી
દૂષિત અને ક્રૂરની લક્ષ્ણ વડે હણાયેલ નક્ષત્ર પણ દૂષિત જ ગણવું ।

કશ્યપના મતે પીડિત નક્ષત્રો—

રવ્યઙ્ગારકભાસ્કરિ, ભોગાપન્નં વિધૂમિતં શિશ્વિના ।

ગ્રહભિન્નં ગ્રહયુદ્ધં, સોપપ્લુતમુલ્કયાઽભિહતમ્ ॥૨૬૮॥

ગ્રહણગતં ચૈવ તથા, પશ્ચાત્સંધ્યાગતં ચ વિદ્ધર્ક્ષમ્ ।

વિવિધોત્પાતૈર્દુષ્ટં, પીડિતમૃક્ષં તિજાનીયાત્ ॥૨૬૯॥

આંટી૦—રવિ મંગલ શનિ વડે આક્રાન્ત, કેતુની શિશ્વાવડે
ધૂમિત થયેલું. ગ્રહવડે ભિન્ન, ગ્રહયુદ્ધ વડે પીડિત ઉપપ્લવો વડે દૂષિત
ઉલ્કાપાતથી તાડિત, ગ્રહણમાં આવેલ, પશ્ચિમ સન્ધ્યાગત, વિદ્વ,
દિવ્ય-ભૌમાદિ ઉત્પાતો વડે દૂષિત, એ નક્ષત્રોને પીડિત નક્ષત્રો જાણવાં.

‘દુષ્ટં ગ્રહોદયાસ્તાભ્યાં’ ઇટલે જે નક્ષત્રમાં ગ્રહોનું ઉદયાસ્તમન થયું
હોય તે નક્ષત્રને દૂષિત નક્ષત્ર આરંભ સિદ્ધિકારે કહ્યું છે, પણ આ માન્ય
તાને કોઈ સંહિતાનું અથવા અન્ય ગ્રન્થનું સમર્થન મળતું જણાયું નથી. ।

સંહિતાપ્રદીપકાર એ વિષયમાં લખે છે—

विद्धं^१ व्योमचरैर्विभिन्नमपि^२ गल्लत्ताहतं^३ राहुणा,
 युक्तं^४ क्रूरयुतं^५ विमुक्तमथयद्^६ भोग्यं^७ तथोपग्रहैः ।
 दुष्टं^८ यद् ग्रहणोपगं^९ पशुपतेश्चण्डायुधेनाऽऽहतं,^{१०}
 चोत्पातं^{११} ग्रहयुद्धं^{१२} पीडितमथो यद्भूमितं^{१३} केतुना ॥२७०॥
 पश्चात् सन्ध्यागतं^{१४} चोल्का-ऽभिहतं^{१५} पापदूषितं^{१६} ।
 यच्चैकार्गलविद्धं^{१७} तत्, पीडितं भं विनिर्दिशेत् ॥२७१॥

भा०टी०—ग्रहोवडे वींघायेल, भेदायेल, अथवा लत्तावडे हणा
 येल, राहु सहित, क्रूरयुत, क्रूरमुक्त, अथवा क्रूर भोग्य, उपग्रह वडे दुष्ट,
 ग्रहण वडे दूषित, महापात वडे ताडित, उत्पात तथा ग्रहयुद्ध वडे
 पीडित, केतु वडे धूमित, पश्चिममां सन्ध्या समये देखातुं, उल्कापात
 वडे हणायेलुं, पाप ग्रहोए दुषित अने एकार्गलमां विद्ध ययेल नक्षत्रने
 'पीडित नक्षत्र' कहेवुं.

दूषित नक्षत्र वा पीडित नक्षत्रनी शुद्धि विषे संहिता
 प्रदीपकार.

दोषैरमीमिर्यदुपद्रुतं तत्,
 तावन्न दृष्टं शुभकर्मणीष्टम् ।
 यावन्न भुक्त्वा शशिना विमुक्तं,
 ततो भवेन्मङ्गलकर्मणीष्टम् ॥२७२॥

भा०टी०—आ वधा दोषो वडे अभिभूत थयेल नक्षत्र त्यां
 सुधी शुभ कार्यमां इष्ट गणातुं नथी ज्यां सुधी चन्द्रमा एने भोगवीने
 न छोडे, चन्द्रे भोगव्या पछी ते नक्षत्र शुभ कार्य माटे योग्य गणाय छे,

आम छतां आ विषयमां विद्वानोमां एक मत न होवाथी संहिता-
 प्रदीपकार पोतानी व्यवस्था आपे छे--

इत्थं मिथो भिन्नमतं वचोभि-
 विसंबदन्ति व्यवहारदक्षाः ।

प्रशाम्यते येन च यश्च दोष-
 स्तं पूर्वशास्त्रानुमतेन वक्ष्ये ॥२७३॥
 पश्चात्सन्ध्यासंस्थितं खेटयुद्धो-
 त्पातैर्दुष्टं धूमितं केतुना च ।
 उल्कापाताद्दुष्टमुल्काहतं वा,
 भिन्नं चैषां चन्द्रभोगेण शुद्धिः ॥२७४॥

सक्रूरचन्द्रयोगेन, शुद्धमुत्पातदूषितम् ।
 सूर्यभूक्तं सदा शुद्धं, घिष्ण्यभोगं विना विधोः ॥२७५॥

भा०टी०—आ प्रमाणे व्यवहारचतुर पुरुषो आपसमां भिन्न-
 मत अने वचनो वडे विसंवादनुं प्रदर्शन करे छे. माटे जे कारणे जे
 दोषनी शान्ति थाय ते कारण पूर्वशास्त्रानुसारे कहूं छुं. पश्चिम सन्ध्या
 गत १ ग्रहयुद्ध दूषित २ केतुवडे धूमित ३ उल्कापात दूषित ४ वा उल्का
 पातवडे ताडित ५ आ वधां दूषित नक्षत्रो चन्द्रना भोगव्या पछी शुद्ध-
 थाय छे, उत्पात दूषित नक्षत्र क्रूर सहित चन्द्रना योगथी शुद्ध थाय छे,
 ज्यारे सूर्याक्रान्त नक्षत्र सूर्यथी भुक्त धतां ज सदा शुद्ध होय छे.
 तेने चन्द्रभोगनी जरूर नथी.

राहुभुक्तं त्रिभिर्भोगैः, शुद्धं षड्भिर्ग्रहोपगम् ।
 चतुर्भिः शनिभोगेन, दुष्टं द्वाभ्यां कुजेन च ॥२७६॥

भा०टी०—राहु भुक्त नक्षत्र चन्द्रना त्रण भोगोथी, ग्रहणगत
 छ भोगोथी, शनि भोगथी दुष्ट चार भोगोथी, अने मंगलभुक्त
 चन्द्रना त्रे भोगोथी शुद्ध थाय छे ।

वकी खगश्चेत् पुनरेति दग्धं,
 तत्पूर्वमृक्षं नहि धूमितं स्यात् ।
 तदप्यतिक्रम्य यदैति पूर्वं,
 सक्रूरदोषोऽपि च नास्ति तस्य ॥२७७॥

पक्षान्तरेण ग्रहणद्वयं स्याद्,
यदा तदाद्य ग्रहणोपभङ्गम् ।
पश्चाद्वि रुद्रं भवति द्वितीयं,
ग्रहोपगं शुध्यति भोगषट्कात् ॥२७८॥

भा०टी०—वकी क्रूर ग्रह पाछो पूर्वना दग्ध नक्षत्र उपर जाय छे त्यारे तेथी पूर्वनुं नक्षत्र घूमित थतुं नथी. अने तेनुं पण अतिक्रमण करी तेनी पण पहेलानां नक्षत्र उपर जाय छे त्यारे ते नक्षत्र सक्रूर होवा छतां ते क्रूर दूषित गणातुं नथी । पन्द्र दिवसने आंतरे जो बे ग्रहण थाय तो प्रथम ग्रहण गत नक्षत्रना दोपनो भंग थाय छे. अने पछीना ग्रहणनुं नक्षत्र दूषित थाय छे जे छ वार चन्द्रना भोग-व्या पछी शुद्ध थाय छे.^१

पीडित नक्षत्र-पवादः—

एकस्मिन्नपि धिष्ण्ये, भिन्ने पशौ खलग्रहे शशिनि ।
तच्चन्द्रक्षे कुर्याद्विवाह-यात्रादिकं कर्म ॥२७९॥

भा०टी०—एक नक्षत्र उपर क्रूर ग्रह अने चन्द्र बन्ने होय छतां ते नक्षत्र द्विराशिक होइ क्रूराधिष्ठित चरणनी राशि जुदी होय अने चन्द्राधिष्ठितनी जुदी तो ते नक्षत्रमां विवाह यात्रादिक करवां ।

उदाहरण—मृगशिरा नक्षत्रना प्रथम अथवा द्वितीय चरणमां चन्द्र छे. अने व्रीजा या चौथा चरणमां क्रूर ग्रह छे, आवी स्थितिमां मृगशिरा प्रथम द्वितीय चरणमां चन्द्र होय त्यां सुधी मृगशिरां शुभकार्य करवामां दोष नथी ।

ज्योतिष्प्रकाशमां लखे छे,

१ जो संपूर्ण ग्रहण होय तो छ भोगे, अर्ध ग्रहण होय तो ३ भोगे अने पाद् रास होय तो १ भोग पछी ग्रहण नक्षत्र शुद्ध थाय छे, एम गन्थान्तरोमां कहेल छे. ।

दोषैर्मुक्तं तु नक्षत्रं, कर्मयोग्यं च तद्भवेत् ।

भानुना शशिना वापि-भुक्तं सौम्यग्रहैरपि ॥२८०॥

भा०टी०—क्रूराक्रान्तादि दोषोथी मुक्त थया पछी सूर्य वडे चन्द्र वडे अथवा अन्य कोइ पण सौम्य ग्रह-बुध, गुरु, शुक्र वडे भोगवाया पछी ते शुभ कर्मने योग्य थाय छे.

ग्रहण तथा उत्पात दूषित नक्षत्रनी शुद्धिविषे नारद—

ग्रहणोत्पातभं त्याज्यं, मङ्गलेषु ऋतुत्रयम् ।

यावच्च रविणा भुक्त्वा, मुक्तं तद्दग्धकाष्ठवन् ॥२८१॥

भा०टी०—ग्रहणनक्षत्र तथा उत्पातनक्षत्र ३ ऋतु पर्यन्त मंगलकार्योमां त्यागवुं, ज्यां सुधी सूर्ये भोगवीने मूकेलुं ते दग्ध काष्ठ तुल्य छे.

विवाहवृन्दावनमां लखे छे—

यस्मिन्धिष्ण्ये वीक्षितौ राहुकेतु,

भेदस्तारा खेटयांघेत्र च स्यात् ।

आषणमासांस्तत्र लग्नेन्दुभाजि,

भ्राजिष्णु स्यान्नो शुभं कर्म किञ्चित् ॥२८२॥

भा०टी०—जे नक्षत्र उपर राहु अथवा केतु देखाया होय एटले के जे उपर ग्रहण थयुं होय, अथवा केतु (पूछडियो तारो) उग्यो होय अने जे नक्षत्रमां कोइ ग्रहे नक्षत्रना भेद कर्यो होय ए त्रणे नक्षत्रोमां चन्द्र या लग्न होय त्वारे करेळुं कंइ पण कार्य सफल थतुं नथी.

अन्य ग्रन्थकारोनो ए विषे अभिप्राय—

भुक्तं भोग्यं च नो त्याज्यं, सर्वकर्मसु सिद्धिदम् ।

यत्नाच्याज्यं तु सत्कार्ये, नक्षत्रं राहुसंयुतम् ॥२८३॥

भा०टी०—क्रूर भुक्त एटले क्रूरे भोगवीने छोडी दीधेलुं अने क्रूरवडे हजो भोगवानुं होय ए वने प्रकारना नक्षत्रो सर्व कार्योमां

सफलता आपनारं छे माटे त्यागवानी आवश्यकता नथी, जे नक्षत्र उपर राहुनुं भ्रमण चालु होय ते नक्षत्र यत्न पूर्वक शुभकार्योमां वज्रित करवुं जोड्ये ।

नक्षत्रसन्धि अने नक्षत्रगण्डान्त—

यदन्तरालं पितृसार्पयोश्च, मूलेन्द्रघोरश्विनपौष्णयोश्च ।

भसंधिगण्डान्तमिति त्रयंतदयामप्रमाणं शुभकर्महन्तृ ॥२८४॥

अहिवाप्तव पौष्णाना-मन्त्ययामार्धमृक्षसंधिः स्यात् ।

पितृमूलाश्विनभाना-मादौ यामार्धमृक्षगण्डान्तः ॥२८५॥

भा०टी०.—आश्लेषा तथा मघा, ज्येष्ठा तथा मूल अने रेवती तथा अश्विनी नक्षत्रोनी संधियो ते याम प्रमाणवाला त्रण गण्डान्तो शुभ कार्यो नो नाश करनारा छे. एतले आश्लेषा ज्येष्ठा रेवतीना अन्तिम यामार्धो याने नक्षत्र भोगना षोडशांशो नक्षत्र सन्धिओ अने मघा मूल अश्विनीना आय यामार्धो नक्षत्रगण्डान्तो छे.

नक्षत्र गण्डान्त विषे श्रीपति रत्नमालामां कहे छे—

पौष्णाश्विन्योः सार्पपित्र्याख्ययोश्च,

यच्च ज्येष्ठामूलघोरन्तरालम् ।

तद् गण्डान्तं स्याच्चतुर्नाडिकं हि,

यात्राजन्मोद्गाहकालेष्वनिष्टम् ॥२८६॥

भा०टी०.—रेवती-अश्विनी, आश्लेषा-मघा, अने ज्येष्ठा-मूल वच्चेनुं ४ घडीनुं जे अन्तराल ते गण्डान्त छे, आ गण्डान्त यात्रा, जन्म, विवाह, आदिना समयमां होय तो अनिष्ट कल आपे छे.

सूर्यसिद्धान्तमां आ नक्षत्रोना अन्त्य-आदिना अर्ध अर्ध चरणो, लल्लना मते अन्त्य-आद्यषडंशोने गण्डान्त जगाव्या छे, ज्यारे ज्योतिः-सागरमां एनी नीचे प्रमाणे व्यवस्था छे—

अश्विनी-पित्र्य-मूलादौ, त्रि वेद नव नाडिकाः ।

रेवती-शाक्र-सार्वान्ते-मास-शाक्र-शिवास्त्यजेत् ॥२८७॥

भा०टी०—अश्विनी ३ मघा ४ अने मूलनी ९ आदिनी अने रेवती आश्लेषा ज्येष्ठाना अन्तनी अनुक्रमे १२-१४-१९ घडीओनो गण्डान्त तरीके त्याग करवो ।

आ विषे राजमार्त्तण्डनं कथन—

यामं यवनाधिपति-स्तदर्धभागं च भागुरिः प्राह ।

दण्डप्रमितं गण्डं, पूर्वापरतोऽङ्गिरामीशः ॥२८८॥

भा०टी०—यवनाचार्य १ प्रहरपरिमित नक्षत्र गण्डान्त माने छे, भागुरि ऋषि अर्ध प्रहर प्रमाण नक्षत्र गण्डान्त माने छे, ज्यारे बृहस्पति १ घडी नक्षत्रान्तनी अने १ घडी नक्षत्रादिनी गण्डान्त रूपे त्याज्य गणे छे.

गण्डान्त विषे आरंभसिद्धि—

गण्डान्तं च त्यजेत् त्रेधा, लग्नेतिथ्युदेषु त्रिषु ।

प्रत्येकं त्रित्रिभागान्तर-र्धैकद्विघटीमितम् ॥२८९॥

भा०टी०—लग्न, तिथि, नक्षत्र, आ त्रणेना त्रीजा त्रीजा भागने आंतो अनुक्रमे अर्ध घटी, एक घटी, अने बे घडी प्रमाणनो समय गण्डान्त होय छे, त्रणे प्रकारना गण्डान्तने शुभ कार्यमां त्यागवो, माघार्थ ए छे के १२ लग्नोनो, १५ तिथिओनो अने २७ नक्षत्रोनो त्रीजो त्रीजो भाग अनुक्रमे ४ लग्नो, ५ तिथिओ अने ९ नक्षत्रोनो अन्य छे, कर्क ने सिंह वृश्चिक ने धन, मीन ने मेष वच्चेनी अर्धी घडी लग्न गण्डान्त छे, पांचम ने छट्ट, दशम ने अग्यारस, पूनम ने एकम वच्चेनी १ घडी तिथि गण्डान्त अने आश्लेषा ने मघा, ज्येष्ठा ने मूल रेवती ने अश्विनी वच्चेनी बे घडीओ नक्षत्र गण्डान्त छे, जे शुभ कार्यमां अवश्य त्याज्य छे ।

गण्डान्त विषे नारद—

सापैन्द्रपौष्णधिष्ण्यान्ते, षोडशांशा भसन्धयः ।

तदग्रभेष्वायजाताः, पापा गण्डान्तसंज्ञकाः ॥२९०॥

भा०टी०—आश्लेषा ज्येष्ठा अने रेवतीना अन्तिम षोडशांशं नाम ' भसंधि ' एतले नक्षत्र संधि छे, अने आ त्रणे नक्षत्रोनी आगेना मघा, मूरु, अश्विनीना आद्य षोडशांशो घणा अशुभ छे, ते गण्डान्त संज्ञक छे ।

गण्डान्तविषयक भिन्न वाक्योनी ज्योतिःसागरमां
व्यवस्था—

कथयति वराहमिहिरो, विलोक्य वाक्यानि गण्डविषये च ।
गण्डं दण्डप्रमितं, पूर्वं पश्चात्तयोर्मध्यात् ॥२९१॥

भा०टी०—वराहमिहिर गण्डान्त विषयक विविध वचनोने जोइने कहे छे-गण्डान्त बे वचनेना आंतरामां घडी १ पूर्वनी घडी १ पछीनी गणी नक्षत्र गण्डान्त २ घडीनो वर्जवो ।

नक्षत्र, योग, तिथि, संधि विषे विवाहवृन्दावन—

नक्षत्र योग तिथि संधिषु नाडि कैका, ।

तिथ्यष्टविंशतिपलैः सहितोभयत्र ॥२९२॥

भा०टी०—कोइ पण बे नक्षत्रो-योगो-तिथिओनी संधिओमां वने तरफनी १-१ घडा साथे अनुक्रमे ३०-१६-४० पलो संधि-गत छोडवी, अर्थात्-नक्षत्र संधि २ घडी ३० पलनी, योग संधि २ घडी १६ पलनी तिथि संधि २ घडी ४० पलनी शुभ कार्यमां त्याग करवी ।

ज्योतिर्निबन्धमां भसंधि-भगण्डान्त अने तेनुं फल—

सापैन्द्रपौष्णभेष्वन्त्य-षोडशांशा भसंधयः ।

तदग्रभेष्वायपाद-जाता गण्डान्तसंज्ञिताः ॥२९३॥

उग्रं च संधित्रितयं, गण्डान्तत्रितयं महत् ।

मृत्युप्रदं जन्म-यान-विवाह-स्थापनादिषु ॥२९४॥

भा०टी०—आश्लेषा-ज्येष्ठा-रेवती नक्षत्रोना अन्तिम षोडशांशो नक्षत्रसंधिओ कहेवाय छे. अने आ नक्षत्रोनी आगेना मघा-मूल-अश्विनी नक्षत्रोना आद्यषोडशांशो भगण्डान्त कहेवाय छे. आ ऋण उग्रभ संधिओ अने ऋण महान् नक्षत्र गण्डान्तो जन्म, यात्रा, विवाह, प्रतिष्ठा आदिमां मृत्युदायक छे ।

च्यवनऋषि गण्डान्तदोषनो परिहार कहे छे—

तिथ्यादीनां संधिदोषं, तथा गण्डान्तसंज्ञितम् ।

हन्ति लाभगतश्चन्द्रः, केन्द्रगा वा शुभग्रहाः ॥२९५॥

भा०टी०—तिथि आदिना संधि दोष तथा गण्डान्त नामक दोषने लाभस्थानमां रहेलो चन्द्र अथवा केन्द्र स्थानमां रहेला शुभ ग्रहो नष्ट करे छे ।

सर्व गण्डान्तदोषोनो वसिष्ठे आपेलो परिहार —

गण्डान्तदोषमखिलं, मुहूर्तोऽभिजिदाह्वयः ।

हन्ति यद्वन्मृग व्याधः, पक्षिसंघमिवाग्निलम् ॥

भा०टी०—‘अभिजित्’ नामक मुहूर्त गण्डान्त दोषनो सम्पूर्ण नाश करे छे, जेम शिकारी सर्व पक्षि समुदायनो नाश करे छे.

उपग्रहो

वसिष्ठसंहितायाम्—

दिनकरभात् सप्तमभं, भूकम्पं पञ्चमर्क्षमिति विद्युत् ।

शूलोपग्रहमष्टमभं, दशमर्क्षं चाशनिं च विज्ञेयम् ॥२९६॥

केतुरूपग्रहदोष-स्त्वष्टादशमं च दंडसंज्ञश्च ।

पञ्चदशं दशनवमं, चोल्कापातं चतुर्दशं पातः ॥२९७॥

मोघोपग्रहदोषो, निर्घातिकम्पवज्रपरिवेषाः ।

एकोत्तरविंशतिभा-दृक्ताः क्रमशो ह्युपग्रहा दोषाः ॥२९८॥

हिमकिरणे त्वेषु युते, शुभकार्यं मृत्युदं नृणाम् ।

उद्धाहादिषु सततं, विचार्य लग्नं च देद् धीमान् ॥२९९॥

भा०टी०—सूर्ये नक्षत्रथी मातसुं भूकम्प, पांचसुं विद्युत्, आठसुं शूल उपग्रहवाले अने दशसुं अशनि उपग्रह सहित होय छे. चउ-दसुं पात, पन्दरसुं दण्डपात, अठारसुं केतु अने आंगणीशसुं उल्कापात उपग्रहना दोषे दूषित होय छे । एकवीश वावीश त्रैवीश चोर्वीश अने पचाशसुं आ पांच नक्षत्रो अनुक्रमे मोघ, निर्घात, कम्प, वज्र अने परिवेष नामक उपग्रहोना दोषे दूषित होय छे । आ उपग्रह दापवाला नक्षत्र उपर चन्द्रमा होय ते वखते करातुं कोइ पण शुभकार्य मनुष्योने मृत्युदायक धाय छे. माटे बुद्धिमाने विवाह आदिनुं लग्न आपतां आ उपग्रहोना सदाय विचार करीने लग्न वताववुं.

वसिष्ठ तेमज एमना पछीना छल, श्रीपति विगेरे विद्वानोए वसिष्ठने अनुसारे दशमा नक्षत्रने अशनि उपग्रहवाले कहुं छे. ज्यारे नारदजी नीचे प्रमाणे नवमा नक्षत्रने अशनि उपग्रह कहे छे—

भूकम्पः सूर्यमात सप्त-मर्क्षे विद्युच्च पञ्चमे ।

शूलोऽष्टमे च नवमे-ऽशनिरष्टादशे ततः ॥३००॥

भा०टी०—सूर्येना नक्षत्रथी सातमा नक्षत्रने भूकम्प, पांचमा उपर विद्युत्, आठमा उपर शूल, नवमा उपर अशनि, अने ते पछी अठारमा नक्षत्रे केतु उपग्रह होय छे.

उपग्रहो विषे उदयप्रभवेवसूरि—

नोपग्रहास्तुभूत्यै, भूपा ५ द्वि ७ फणी ८—

न्द्र १४ तिथि १५ घृति १८ युगले १९ ।

रविभाक्तथैकविंशा-दिषुपञ्चसु २१-२२

२३-२४-२५-चरति भेद्विन्दौ ॥३०१॥

भा०टी०—सूर्य नक्षत्रथी ५ मा ७ मा ८ मा १४ मा १५ मा १८ मा १९ मा २१ मा २२ मा २३ मा २४ मा २५ मा नक्षत्र उपर चन्द्र भ्रमण करतो होय त्यारे ते दिन नक्षत्र उपर उपग्रह होय छे, उपग्रह दोष दूषित नक्षत्र शुभकार्यमां कल्याणकारी थतुं नथी, माटे तेनो त्याग करवो. ?

उपग्रहनो विषय अने फल—

गृहप्रवेशे दारिद्र्यं, विवाहे मरणं भवेत् ।

१ पूर्वोक्त ब्राह्मण विद्वानो अने जैनाचार्ये लखेल उपग्रहोनी संख्याना संबन्धमां विद्वानोए लक्ष्य आगचा जेतुं छे, वसिष्ठ, नारदादि संहिताकारो अने लल्लु श्रीपति आदि प्रसिद्ध ग्रन्थकारो १३ उपग्रहोनी निर्देश करे छे, ज्यारे जैनाचार्य १२ उपग्रहो ज बतावे छे. वसिष्ठ आदि विद्वानो १० मा अने नारद ९ मा नक्षत्रने अशनि नामक उपग्रह दोषदुष्ट बतावे छे, ज्यारे जैनाचार्यो ९ मा १० मा बने चन्द्र नक्षत्रोने (रवियोग) रुपे शुभ मणे छे आनुं कारण ए छे के जैनाचार्यो ग्रणा पूर्व कालथी रवियोग, कुमारयोग, राजयोग, स्थविरयोगोने जाणता हता लगभग छट्ठा सेंका पहेलांना पाकीश्री ग्रन्थमां रवियोग, राजयोग, कुमारयोग आदिनुं वर्णन मले छे, ज्यारे ब्राह्मण विद्वानोने ग्रणो ज मोडो आ जैनयोगोनी परिचय मल्यो, ब्राह्मण विद्वानोना मध्यकालीन ग्रन्थो रत्नकोष, रत्नमाला, आदिमां रवियोगोनी चर्चा नथी, मात्र मुहूर्त्तचिन्तामणिमां के एना निकट कालीन ग्रन्थोमां पहेल वहेलां रवियोग दर्शन दे छे. ज्यारे तेमां के ते पछीना ग्रन्थोमां पण कुमारयोग आदि शुभयोगोनां क्याये दर्शन थतां नथी, एनो मतलय एज छे के उक्त ४ योग जैनाचार्यो हजारी वर्षोथी सूर्यनक्षत्रथी ९ मा १० मा नक्षत्रोने शुभ रवियोगोमां गणता हता. अने तेमां शुभकार्यो करता हता, एज कारणथी उदयप्रभदेवसूरि आचार्ये उपग्रहो बार लख्या छे, अने जैनेतर विद्वानोए तेर लख्या छे.

प्रस्थाने विपदः प्रोक्ता, उपग्रहदिने यदि ॥३०२॥

भा०टी०—उपग्रहथी दूषित नक्षत्रमां गृह प्रवेश करे तो धनहानि थाय, विवाह करे तो मरण थाय, प्रयाण करे तो विपत्तिमां पडे.

उपग्रहो पैकीना ८ विशेष अशुभ उपग्रहो अने तेनुं फल—

विद्युन्मुख ५ शूला ८ शनि १४ केतु १८—

ल्का १९ वज्र २२ कम्प २३ निर्घाताः २४ ।

ङ-ज-ह-द-ध-फ-ब-भ संख्ये रवि-

पुरत उपग्रहधिष्ये ॥३०३॥

फल मङ्गल १ पति मरणे २,

दशमदिना न्तस्तथाऽशनिपातः ३ ।

मानुजपति ४ धननाशौ ५

दोःशील्यं ६ स्थान ७ कुलघातौ ८ ॥३०४॥

भा०टी०—सूर्य नक्षत्रथी आगेना ५ मा ८ मा १४ मा १८मा १९ मा २२ मा २३ मा अने २४ मा नक्षत्र उपर अनुक्रमे विद्युन्मुख, शूल, अशनि, केतु, उल्का, वज्र, कम्प अने निर्घात नामक उपग्रहो होय छे, आ उपग्रहमां विवाह थाय तो अनुक्रमे पुत्र मरण १, पति मरण २, दस दिवसमां अशनि (वज्रपात) ३, देवर सहित पति मरण ४, धननाश ५, दुर्गाचारिता ६, स्थानहानि ७, अने कुलहानि ८, रूप फल थाय छे.

फलप्रदीपमां उपग्रहोनुं फलनिरूपण—

विद्युत्पुत्रविनाशिनी विध्वंशता शूलेऽशनिर्वन्धुहा,
निर्घातेपि च कम्पने च नितरां कम्पे च केतौ क्षतिः ।

वज्रे वा परिवेषकेऽन्यनिरता निर्घातपाते मृतिः,

दण्डोल्का विगते भवेद्विधनिनी चैवं फलं संस्मृतम् ॥३०५॥

भा०टी०—विद्युत्मां पुत्रनुं मरण, शूलमां वैधव्य, अशनिमां

વન્ધુમરણ, નિર્ધાત-કમ્પન-કમ્પ અને કેતુમાં ક્ષય, વજ્ર તથા પરિ-
વેષમાં પરિણીતા દુરાચારિણી, નિર્ધાત તથા પાતમાં મૃત્યુ, દણ્ડ
તથા ઉલ્કા ઉપગ્રહ ગત નક્ષત્રમાં પરણેલ સ્ત્રી ધન રહિત થાય છે.
આ ઉપગ્રહોનું ફલ વ્રતાવ્યું છે ।

ગર્ગ કેટલાક ઉપગ્રહોનો પરિહાર કહે છે—

પૂર્વાર્ધે દણ્ડદોષઃ સ્યા-દપરાણ્હે તુ મોઘકઃ ।

ઉલ્કાસ્યાર્ધરાત્રે તુ, કમ્પોઽહોરાત્રદૃષકઃ ॥૩૦૬॥

કમ્પોલ્કાદણ્ડમોઘાનાં, સ્વરમાસદર્શતવઃ ॥૭૧૨૧૧૦૬॥

આદિનો ઘટિકાસ્તેષુ, વર્જનીયાઃ પરાઃ શુભાઃ ॥૩૦૭॥

ઉપગ્રહેષુ લત્તાયાં, તથા ચણ્ડાયુધાદિષુ ।

ગ્રહોઽસ્તિ યત્પ્રમાણાંશો, વિહ્યોશસ્તન્પ્રમાણકઃ ॥૩૦૮॥

ખાંટી૦—દણ્ડ ઉપગ્રહનો દોષ મધ્યાહ્ન પહેલાં હોય છે.
મોઘનો દાપ ચણ્ડોર પછી લાગે છે. ઉલ્કા અર્ધરાત્રે દોષકારિણિ
હોય છે. અને કમ્પ રાત્રિ દિનને દૂષિત કરનાર હોય છે.

કમ્પાદિ ચ્યાર ઉપગ્રહોનો આઘ્યઘટિકાઓના ન્યાગે પરિહાર
કહે છે—કમ્પનો પહેલી ૭ ઘડી, ઉલ્કાની ૧૨, દણ્ડની ૧૦ અને
મોઘની ૬ આદિની ઘડીઓ વર્જવી તે પછીની ઘડિઓ શુભ છે.
ઉપગ્રહોમાં, લત્તામાં તથા ચણ્ડીશ ચણ્ડાયુધ આદિમાં નક્ષત્રના જે ચરણ
ઉપર ગ્રહો હોય તેના પ્રમાણમાં નક્ષત્ર ચરણનો વેધ કરે છે.

વસિષ્ઠ ઉપગ્રહનો દેશ ભેદે પરિહાર કહે છે—

ઉપગ્રહર્ક્ષ કુરુવાલિહકેષુ, કલિંગ વંગેષુ ચ પાતિતં ભમ્ ।

સૌરાષ્ટ્રશાલ્વેષુ ચ લત્તિતં મં,

દેશેષુ વર્જ્યં શુભવિદ્ભં ચ ॥૩૦૯॥

ખાંટી૦—ઉપગ્રહ યુક્ત નક્ષત્ર કુરુ તથા વલ્લવ દેશમાં, પાત
નક્ષત્ર વંગ તથા કલિંગમાં, લાતવાલું નક્ષત્ર સૌરાષ્ટ્ર તથા રાજસ્થાનમાં

अने विद्व नक्षत्र सर्वदेशोमां शुभकामोमां वर्जवुं.

नक्षत्र-ग्रह कूटः—

यस्मिन् धिष्ण्ये यः प्रभवति, तदेव तज्जन्मभं विजानीयात् ।

दशमक्ष कर्माख्यं, संघाताख्यं च षोडशं धिष्ण्यम् ॥३१०॥

समुदायं त्रिनवमभं, यद्वैनाशं त्रयोविंशम् (धिष्ण्यं) ।

पञ्चोत्तरविंशं च, मानससंज्ञं महादुष्टम् ॥३११॥

षट् भानि च शुभकर्मण्येनानि विनाशदानि जन्तूनाम् ।

राजां विशेषभानि तु, देशोद्भवजानिपट्टबन्धानि ॥३१२॥

नव धिष्ण्यानि नृपाणां, विनाशदान्येव सर्वकार्येषु ।

अत एवाग्निलविषये, नूनं वर्ज्यानि सर्वदात्यर्थम् ॥३१३॥

कृतमग्निलं जन्मनि भे, विनाशमायाति तत्कार्यम् ।

कर्मणि कर्म विनाशं, संघातार्थे शरीरनाशः स्यात् ॥३१४॥

रोगभयं समुदाये, वैनाशिकर्मे पि (कार्यं) नाशः स्यात् ।

हृदयभयं मानसभे, देशजभे राजनाशः स्यात् ॥३१५॥

जात्यक्षे जातिभय-मभिपेक्षे च राजनाशः स्यात् ।

कूराम्बरचरनिहते-ष्वेषु च भेषु प्रभूतपीडा स्यात् ॥३१६॥

भा०टी०—जेनो जे नक्षत्रमां जन्म थाय छे. तेनुं ते जन्म नक्षत्र जाणवुं, जन्म नक्षत्रधी दशमुं 'कर्म', सोलमुं 'संघात', अठारमुं 'समुदाय', त्रयोविंशमुं 'वैनाश' अने पञ्चीसमुं 'मानस' नामक दुष्ट नक्षत्र होय छे. सर्व प्राणियोने आ ६ नक्षत्रो शुभ कार्योनी विनाश करनारां छे, देश नक्षत्र, जाति नक्षत्र, तथा पट्टबन्ध नक्षत्र एटले राजवारोहण नक्षत्र आ ३ अने सर्व साधारण ६ मली ९ नक्षत्रो राजाओने सर्व कामोमां विनाश देनारां छे. एटला माटे राजाओए तमाम कार्योमां आ ९ नक्षत्रो सदाय वर्जवां जोइये, जन्म नक्षत्रमां करेल कोइ पण कार्य नाश पामे छे, कर्म नक्षत्रमां कार्य

करतां ते कर्म नाशक निवडे छे, संघात नक्षत्रमां कोइ कार्य करतां शरीरनो नाश करे छे, समुदायमां कार्य करतां रोगनो भय थाय अने वैनाशिक नक्षत्रमां करेल कार्य विनाशकारी थाय छे. मानस नक्षत्रमां कार्य करे तो मनमां भय उत्पन्न करे छे. देश नक्षत्रमां कार्य करतां राजाने पीडा थाय, जाति नक्षत्रमां कार्य करतां जातिने भय अने राज्याभिषेक नक्षत्रमां कार्य करे तो राजानो नाश थाय, उक्त नक्षत्रो क्रूर ग्रहो वडे उपहत (आक्रान्त, विद्ध ललित, धूमित,) होय तो घणी ज पीडा उत्पन्न करे छे.

यस्य नरस्य हि जन्मनि,

जन्मनि धिष्ण्ये निपीडिते स्वचरैः ।

अतिदुःखामय शोकं,

भयं प्रवासः शस्त्रोर्भयं भवति ॥३१७॥

यस्मिन् धिष्ण्ये, विपदि, प्रत्यरिभे स्थाननाशनं भवति ।

निधनं नैधनधिष्ण्ये, बन्धनमथवा स्थिते पापे ॥३१८॥

शुभस्वचरेषु स्थितेषु, नक्षत्रेषु त्वल्पहानिः स्यात् ।

मध्यमफलदाः सौम्याः, पापाश्चोक्तभेषु भीतिकराः ॥३१९॥

भा०टी०—जे मनुष्यनुं जन्म नक्षत्र एटले जन्म तारा क्रूर ग्रहोवडे पीडित थाय छे तेने अतिशय दुःख, रोग, शोक, भय, प्रवास, अने शत्रुनो भय प्राप्त थाय छे. विपद् वा प्रत्यरि नक्षत्रना पीडित यवाथी स्थाननो नाश थाय छे. नैधन नक्षत्र उपर क्रूर ग्रह आववाथी मरण अथवा बन्धन करावे छे, शुभ ग्रहो उक्त ताराओ उपर होय छे त्वारे अल्प हानि थाय छे, केसके सौम्य ग्रहो मध्यम फलदायक होय छे. एण पाप ग्रहो उक्त नक्षत्रो उपर आवे त्वारे घणा भयंकर निवडे छे.

ए विषयमां भूपाल बल्लभकार कहे छे—

केत्वकीर्कियुतं भौम-वक्र भेदेन दूषितम् ।

हतमुल्कोपरागाभ्यां, स्वभावान्यत्वमागतम् ॥३२०॥
 पीडिते जन्मभे मृत्युः, कर्मनाशश्च कर्मणि ।
 संघाते मृत्युपीडा स्यात्, सामुदाये सुखक्षयः ॥३२१॥
 वैनाशिके देहनाशो, मनस्तापस्तु मानसे ।
 कुलदेशश्रियां नाशो, जाति देशामिषेक भे ॥३२२॥

भा०टी०—केतु, मूर्य, शनि युक्त होय के भौमना वक्रवडे अथवा भेद वडे दूषित होय, उल्का के ग्रहणथी हणायेल होय, स्वभावथी ज वियर्यास पामेल होय ते नक्षत्र पीडित गणाय छे, जन्म नक्षत्र पीडित थतां मृत्यु थाय, कर्म नक्षत्र पीडित थतां कर्मनो नाश थाय छे, संघात नक्षत्र पीडित थतां मरण पीडा थाय, सामुदाय नक्षत्र पीडित थतां सुखनो क्षय थाय, वैनाशिक नक्षत्र पीडित थाय त्यारे देहनो नाश थाय, मानस पीडित थतां मन संताप, अने जाति, देश अमिषेक नक्षत्रो पीडित थवाथी अनुक्रमे कुल, देश, तथा लक्ष्मीनो नाश थाय छे.

लक्षादोष—

श्रीपतिः

ऋक्षं द्वादशमुष्ण रश्मिरवनीसूनुस्तृतीयं गुरुः,
 षष्ठं चाष्टममकंजश्च पुरतो हन्ति स्फुटं लक्ष्म्या ।
 पश्चात्सप्तममिन्दुजश्च नवमं राहुः सितः पञ्चमं,
 द्वाविंशं परिपूर्णमूर्तिरुडुपः संताडयेन्नेतरः ॥३२३॥

भा०टी०—मूर्य पोतानी आगेनुं १२ मुं, मंगल ३ जुं, गुरु ६ टुं अने शनि ८ मुं नक्षत्र लातवडे हणे छे, ज्यारे बुध पाछलनुं ७ मुं राहु ९ मुं, शुक्र ५ मुं अने पूर्णिमानो चन्द्र २२ मुं नक्षत्र लक्षावडे ताडित करे छे, पूर्णिमानो चन्द्र ज नक्षत्रने लक्षावडे ताडन करे छे बीजी तिथिनो चंद्र नहि.

વિવાહ વૃન્દાવનકાર સર્વગ્રહોની લક્ષ્મી આગેના નક્ષત્ર-
ના હિસાબે લખે છે—

રવિનસ્યૈર્મિતમર્કવિધુન્તુદૌ, મુનિભિરિન્દુરખણ્ડલમણ્ડલઃ ।

હુતવહાકૃતિષ્ઙ્જિનદન્તિભિઃ

ક્ષિતિસુતાદભિલક્ષ્યતિગ્રહઃ ॥૩૨૪॥

ભા૦ટી૦—સૂર્ય પોતાના નક્ષત્રથી આગેના ૧૨ મા અને રાહુ
૨૦ મા નક્ષત્રને લક્ષ્યતાવડે તાડન કરે છે, અખણ્ડમણ્ડલવાલો ચન્દ્ર
૭ માને અને મંગલ ૩ જા બુધ ૨૨ મા, ગુરુ ૬ ઢા, શુક્ર ૨૪ મા,
અને શનિ ૮ મા નક્ષત્રને લાતવડે તાડન કરે છે. આમાં રાહુ ૨૦મા,
પૂર્ણચન્દ્ર ૭ મા, બુધ ૨૨ મા, શુક્ર ૨૪ મા નક્ષત્રને સામેથી લાત
મારવાનું કથન છે જ્યારે બીજા ગ્રન્થોમાં એજ ગ્રહોની સંમુખ લક્ષ્યતાનું
નક્ષત્ર અનુક્રમે ૨૧ મું, ૮ મું, ૨૩ મું, ૨૫ મું લખેલ છે.

લક્ષ્ય વિષે મતાન્તર—

આરંભસિદ્ધિકાર કહે છે—

અગ્રતો નવમે રાહોઃ, સપ્તવિંશે ભૃગોસ્તુ મે ।

કેચિદ્જ્યોતિર્વિદઃ પ્રાહુર્લક્ષ્યાં તામપિ વર્જયેત્ ॥૩૨૫॥

ભા૦ટી૦—કેટલાક જ્યોતિષીઓ રાહુની આગેના ૯ મા નક્ષત્ર
ઉપર અને શુક્રની આગેના ૨૭ મા નક્ષત્ર ઉપર લાત કહે છે તે પણ
વર્જવી જોઈયે.

કોઈના મતે અશુભ ગ્રહની લક્ષ્યતા વર્જનીય છે, એ
વિષે ત્રિવિક્રમ કહે છે—

નક્ષત્રં દ્વાદશં ભાનુ-સ્તૃતીયં ક્ષિતિનન્દનઃ ।

નસ્યસંખ્યં તમો હન્તિ, લક્ષ્યતા શનિરષ્ટમમ્ ॥૩૨૬॥

ભા૦ટી૦—સૂર્ય ૧૨ માને, મંગલ ૩ માને, રાહુ ૨૦ માને અને
શનિ ૮ મા નક્ષત્રને લક્ષ્યતાથી હણે છે.

लत्ता विषे केशवार्कनो मत—

इति सति व्यसदामभिलत्तने, यदनुलत्तनमुक्तमृषिव्रजैः ।

तदुदुपश्चिमपूर्वविभागयो-

रनधिकाधिकदोषविवक्षया ॥३२७॥

भा०टी०—आ परिस्थितिमां ग्रहोनी लत्ताने अंगे ऋषिगणे जे अनुलत्ता एटले सामेथी लात कही छे ते नक्षत्रना पाछला अने पूर्वला भागोनी अपेक्षाए अल्प अने अधिकफलनी अपेक्षाए छे, जे ग्रह नक्षत्रना पाछलना भागने लत्ता वडे ताडित करे छे ते ओछुं असरकारक होय छे ज्यारे सामेनी लत्ता अधिक पीडाकारी होय छे सामेनी अने पाछली लातनो ए तात्पर्यार्थ छे.

शुभाशुभलत्ताना फलतारतम्य विषे केशवार्क कहे छे—

उदुनि निर्दलिते शुभलत्तया,

न फलमस्ति बलस्य गलत्तया ।

अशुभ लत्तितमत्ति तदूढयो—

धनसुता न सुतापकरं परम् ॥३२८॥

भा०टी०—शुभ ग्रहनी लत्तावडे हणायेल नक्षत्र बलहीन होइ तेनुं शुभ फल नथी अने अशुभ ग्रहवडे लत्तित नक्षत्र तो तेमां परणना-राओना धन अने पुत्रोना नाश करे छे अने प्राणोने संपात करावे छे.

बराह प्रत्येक ग्रहनी लत्तानुं फल कहे छे—

रविलत्ता वित्तहरी, नित्यंकौजी विनिर्दिशेन्मरणम् ।

चान्द्री नाशं कुर्याद् बौधी नाशं वदत्येव ॥३२९॥

सौरी मरणं कथयति, बन्धुविनाशं बृहस्पतेर्लत्ता ।

मरणं लत्ता राहोः, कार्यविनाशं भृगोर्वदति ॥३३०॥

भा०टी०—सूर्यनी लत्ता धननो नाश करनारी छे, मंगलनी

લત્તા નિત્ય મરણનો નિર્દેશ કરે છે, ચન્દ્રની લત્તા કાર્યનો નાશ કરે, બુધની લત્તા પળ કાર્ય નાશની સૂચક છે, શનિની લત્તા મરણને કહે છે, વૃહસ્પતિની લત્તા બંધુ-કુટુંબિઓના નાશને સૂચવે છે, રાહુની લત્તા મરણકારક છે જ્યારે શુક્રની લત્તા કાર્યનો વિનાશ કહેનારી છે.

લત્તાનો પરિહાર—

સૌરાષ્ટ્ર સાલ્વદેશોષુ, લાતિતં મં વિવર્જયેત્ ।

માઠી—સૌરાષ્ટ્ર (કાઠિયાવાડ) અને સાલ્વ (રાજસ્થાન) માં લાત વડે ઇળાયેલ નક્ષત્ર વર્જવું જોઈયે.

‘ લત્તા માલવકે દેશે ’ ‘ ઇટલે લત્તા દોષ માલવા દેશમાં વર્જવો ’ વિવાહ પટલનું એ વચન પણ લત્તાનો અપવાદ સૂચવે છે.

પાતદોષ—

રવિભાદહિપિતૃ મિત્ર, ત્વાષ્ટ્રમ્હરિપૌષ્ણમેષુ ગણિતેષુ ।
આશ્વિનભાદીન્દુયુતૌ, તાવતિ વૈ પતતિ ગણનયા પાતઃ॥૩૩૧॥

માઠી—સૂર્ય નક્ષત્રથી આશ્લેષા ૧ મઘા ૨ અનુરાધા ૩ ચિત્રા ૪ શ્રવણ ૫ રેવતી ૬ આ છ નક્ષત્રો ગણવાં જે જે સંખ્યા આશ્લેષા આદિની આવે તેટલી તેટલી સંખ્યામાં અશ્વિનીથી ગણતાં જે ચંદ્ર નક્ષત્ર હોય તે ઉપર પાત છે એમ જાણવું—ઉદાહરણરુપે સૂર્ય મરણી નક્ષત્ર ઉપર છે, તેથી આશ્લેષા ૮ મું, મઘા ૯ મું, ચિત્રા ૧૩ મું અનુરાધા ૧૬ મું, શ્રવણ ૨૧ મું અને રેવતી ૨૬ મું નક્ષત્ર છે માટે અશ્વિનીથી ૮, ૯, ૧૩, ૧૬, ૨૧, ૨૬, આ સંખ્યાના નક્ષત્ર ઉપર ચંદ્ર હોય તો તે નક્ષત્ર પાતવાલું હોઈ શુભ કાર્યમાં વર્જિત કરવું.

પાતને સુગમતાથી જાણવાનો ઉપાય નીચે પ્રમાણે છે—

પાતં શૂલસ્ય ગણ્ડસ્ય, હર્ષણ-વ્યતિપાતયોઃ ।

સાધ્યવૈધૃતયોશ્ચાન્તે, ધિષ્ણ્યં યત્તત્ર વર્જયેત્ ॥૩૩૨॥

भा०टी०—पंचांगमां अपाता २७ योगो पैकीना शूल, गंड, हर्षण, व्यतिपात, साध्य, वैधृत आ योगोना अन्तमां जे नक्षत्र होय छे ते उपर पातदोष होवाथी तेनो त्याग करवो. ज्योतिषीओ आ 'पात' ने 'चण्डीशचण्डायुध' अथवा, शिवना आयुध तरीके वर्णवे छे, केशवार्क कहे छे—

यदन्तगं हर्षणसाध्यशूल-गण्डव्यतीपातकवैधृतीनाम् ।
तत्रैव चन्द्रोडुनिं चण्डमैश-मस्त्रं पतेन्मङ्गलभङ्गलक्ष्म ॥३३॥

भा०टी०—हर्षण, साध्य, शूल, गण्ड, व्यतीपात, वैधृति, आ योगोना अन्तमां जे चन्द्र नक्षत्र होय, एटले जे नक्षत्रमां आ योगोनी समाप्ति थाय तेज चन्द्र नक्षत्र उपर शिवनुं 'चण्डास्त्र' पडे छे जे मंगल कार्यना नाशनुं चिह्न छे.

ज्योतिषीओनी दृष्टिमां पातनी भयंकरता—

पातेन पतितो ब्रह्मा, पातेन पतितो हरिः ।

पातेन पतितो रुद्रस्तस्मात्पातं विवर्जयेत् ॥३३४॥

भा०टी०—पातवडे ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर जेवा पडया छे माटे पातने विशेष करीने वर्जवो.

देशविशेषे पातनी व्यवस्था—

चित्रांगतः पात विचित्रदेशे, मैत्रे मघा मालवके निषिद्धः ।

पौष्णश्रुती चोत्तरदेशजातः, सर्वत्र वर्ज्यश्च भुजंगपातः ॥३३५॥

भा०टी०—चित्रांगत पात विचित्र देशमां, अनुराधा मघा-गत पात मालवामां अने रेवती श्रवण ज्ञापित पात उत्तर देशमां निषिद्ध छे. ज्यारे आश्लेषामित नक्षत्रपात सर्वत्र वर्जनीय छे.

पातनो अपवाद वसिष्ठ कहे छे—

चण्डायुधं सचण्डीशं, हन्ति सिद्धा तिथिर्यथा ।

आन्त्रवृद्धिर्यथा कार्यं, निखिलं सुदृढं यथा ॥३३६॥

भा०टी०—चण्डीश चण्डायुधापरनाम पातने सिद्धा तिथि नष्ट करे छे, जेम संपूर्ण मजबूत शरीरने आन्त्रवृद्धि (सारण गांठ) नाश करे छे.

सप्तशलाका चक्र
आरंभ सिद्धिमां—

वेध ऊर्ध्वतिरः सप्त-रेखे पूर्वादितोऽग्निभात् ।

भस्य रेखाग्रगे खेटे, हेयश्चेन्न पदान्तरम् ॥३३७॥

भा०टी०—सात उर्ध्व सात आडी रेखावाला सप्तशलाका चक्र-मां पूर्वादि दिशाओमां कृत्तिकाथी प्रारंभ करीने अभिजित् सहित २८ नक्षत्रो लखवां, कार्य नक्षत्रनी रेखाना बीजा छेडा उपर कोइ ग्रह होय तो ते पोतानी सामेना नक्षत्रनो वेध करे छे माटे जो वेधमां पादान्तर न होय एटले पादवेध होय तो ते शुभ कार्यना मुहूर्तमां वर्जवो.

सप्तशलाका चक्रन्यास

	कृ	रो	मृ	आ	पु	पु	आ	
म								म
ल								प
रे								उ
उ								ध
पू								चि
श								सा
ष								वि
	श	अ	उ	इ	ई	ए	अ	

सप्तशलाकामां कया कया नक्षत्रनो परस्पर वेध थाय छे एतुं स्पष्टीकरण रामदैवज्ञ कहे छे—

शाक्रेज्ये शतभानिले जलशिवे पौष्णार्यमक्षे वसु-
डीशे वैश्वसुधांशुभे हयभगे सार्पानुराधे तथा ।
हस्तोपान्तिमभे विधानृविधिभे मूलादितीत्वाष्ट्रभा-
ऽजांघ्री धाम्यमधे कुशानुहरिभे विद्धेऽद्विरेखे मिथः ॥३३८॥

भा०टी०—सप्तशलाका चक्रमां ज्येष्ठा-पुष्य, शतभिषा-स्वाति, पूर्वाषाढा--आर्द्रा, रेवती-उत्तराफाल्गुनी, धनिष्ठा-विशाखा, उत्तराषाढा मृगशिर, अश्विनी-पूर्वाफाल्गुनी, आश्लेषा-अनुराधा, हस्त-उत्तरा-भाद्रपदा, रोहिणी-अभिजित्, मूल-पुनर्वसु, चित्रा-पूर्वाभाद्रपदा, भरणी-मघा, कृत्तिका-श्रवण, आ वे वे नक्षत्रोनो परस्पर वेध थाय छे.

सप्तशलाका वेधनुं फल-दीपिकामां-

यस्याः शशी सप्तशलाकमित्रः, पापैरपापैरथवा विवाहे ।

उद्वाहवन्नेण तु संवृतांगी, इमशानभूमिं रुदती प्रयाति ॥३३९॥

भा०टी०—जे कन्याना विवाहमां सप्तशलाकामां चंद्र विद्ध थाय छे. पापग्रहोवडे अथवा सौम्यग्रहोवडे, ते स्त्री विवाहना वस्त्रमां ज रदती छती इमशानभूमिमां जाय छे,

सप्तशलाका वेध कयां वर्जवो अने पंचशलाका

कयां ए विषे लल्ल-

चक्रे सप्तशलाकाख्ये, वेधः सर्वसु कर्मसु ।

त्याज्य एव विवाहे च, तथैव पञ्चरेखजः ॥३४०॥

भा०टी०—सप्तशलाका चक्रमां थतो नक्षत्र वेध सर्व कार्योंमां वर्जवो जोइये, तथा पंचशलाकाथी थतो वेध विवाहमां अवश्य वर्जवो जोइये,

पञ्चशलाका वेधचक्र नारदीये-

तिर्यक् पञ्चोर्ध्वगाः पञ्च, रेखे द्वे द्वे च कोणयोः ।

द्वितीयशंभुकोणेग्नि-धिष्ण्यं चक्रे च विन्यसेत् ॥

भान्यतः साभिजित्वेके रेखाकोणे च विद्धभम् ॥३४१॥

भा०टी०—तिर्यक् (आडी) ५ अने उभी ५ रेखा खंची खूणाओमां २+२ रेखाओ खंचाथी पंचशलाका चक्र बनशे, चक्रना ईशान कोणनी बीजी रेखा उपर कृत्तिका लखी ते पछीनी प्रत्येक रेखा उपर रोहिणी आदि १-१ नक्षत्र लखवुं, नक्षत्रो अभिजित् सहित लखवां, एक रेखा के एक कोणमां कोइ ग्रह होय तेथी रेखाना बीजा छेडा उपरनुं नक्षत्र विद्ध थाय छे.

कोनो कोनो परस्पर वेध थाय छे ?

वेधोऽन्योन्यमसौ विरञ्ज्यभिजितोर्याम्यानुराधर्क्षयोः ।

विश्वेन्द्रोर्हरिपिन्ययोर्ग्रहकृतो हस्तोत्तराभाद्रयोः ।

स्वाती वारुणयोर्भवेन्निकृतिभादित्योस्तथोफाल्गयोः ।

खेटे तत्रगते तुरीयचरणाद्योर्वातृतीयद्रयोः ॥३४२॥

भा०टी०—पंचशलाका चक्रमां विवाह नक्षत्रोनो वेध परस्पर आ प्रमाणे थाय छे—रोहिणी-अभिजितनो, भरणी-अनुराधानो, मृगशिर-उत्तराषाढानो, मघा-श्रवणनो, हस्त-उत्तराभाद्रपदनो, स्वाति-शतभिषानो, पुनर्वसु-मूलनो तथा उत्तराफाल्गुनी-रेवतीनो परस्पर ग्रहकृतवेध थाय छे, एटले के रोहिणी उपर रहेल शुभाशुभ ग्रह अभिजित् नो अथवा अभिजित् उपर रहेल रोहिणीनो वेध करे छे ए ज प्रमाणे उपर्युक्त नक्षत्रोनो वेध जाणवो, क्रूर ग्रह विद्ध नक्षत्र तो संपूर्ण त्याज्य गणाय छे, पण सौम्य ग्रहविद्धनो विद्ध चरण त्याज्य होवाथी चरण वेधनो प्रकार कहे छे के-ग्रह प्रथम चरण उपरथी संमुख नक्षत्रना

चोथा चरणनो, बीजाथी त्रीजानो, त्रीजाथी बीजानो अने चोथाथी पहला चरणनो वेध करे छे.

पंचशलाका वेध विवाहमां वर्जित छे अने उपर बतावेल ८ नक्षत्र युग्मोमां विवाहोपयोगी ग्रहां नक्षत्रो आवी जाय छे तेथी उपरोक्त काव्यमां बीजा नक्षत्र युग्मोनो निर्देश कर्यो नथी.

वेधफलं-फलप्रदीपे—

अर्कवेधे च वैधव्यं, चन्द्रवेधे वियोगिनी ।

पुत्रशोकातुरा भौमे, बुधे शोकाकुला भवेत् ॥३४३॥

गुरौ बन्ध्या विजानीयात्, शुके स्याद् व्यभिचारिणी ।

मृतवत्सा शनौ ज्ञेया, राहौ च कुलटा भवेत् ॥

केतुवेधे सर्वनाशो, एवं वेधस्य लक्षणम् ॥३४४॥

भा०टी०—सूर्यवेधथी वैधव्य, चन्द्रवेधथी वियोग, मंगल वेधथी पुत्रशोक, बुधवेधथी शोक, गुरुवेधथी बन्ध्यापणुं, शुक्रना-वेधथी व्यभिचार, शनिना वेधथी मृतवत्सापणुं राहुना वेधथी कुल-टापणुं अने केतुना वेधथी सर्वनाश थाय छे. ए वेधनुं लक्षण छे.

पंचशलाका वेधनुं गर्ग फल कहे छे—

यस्मिन् शशी पञ्चशलाकभिन्नः पापैरपापैरथवा विवाहे ।

तेनैव वस्त्रेण विरोदमाना, स्मशानभूमिं प्रमदा प्रयाति ॥३४५॥

भा०टी०—जे विवाहमां चन्द्र पापग्रहो वडे अथवा सौम्यग्रहो-वडे पंचशलाका चक्रमां विद्ध थाय छे ते विवाहमां विवाहिता स्त्री विवाहना ज वस्त्रमां रडती स्मशानभूमिमां जाय छे. तात्पर्य ए छे के तेना पतिनुं जल्दी मरण थाय छे.

विवाहवृन्दावने पादवेध फल—

तस्मिन्नभिन्नाग्रगते भिनत्ति,

ग्रहो विवाहर्क्षमशेषमेव ।

સ્ત્રીપુંસયોરાયુરસૌમ્યવેધઃ,
સૌમ્યવ્યધો હન્તિ સુસ્વાનિ શશ્વત્ ॥૩૪૬॥

ભાંટી૦—તે પંચશલાકાના અભિન્ન અગ્રભાગ પર રહેલ ગ્રહ સંપૂર્ણ વિવાહ નક્ષત્રનો વેધ કરે તો ક્રૂરવેધ સ્ત્રીપુરુષના આયુષ્યનો નાશ કરે છે અને સૌમ્યનો સંપૂર્ણ (પાદ) વેધ તેમના સુસ્વનો નાશ કરે છે.

વેધ અને તેનો અપવાદ—

વસિષ્ઠનો મત—

પાદ એક ન શુભઃ શુભગ્રહૈ—વિદ્ધ્વ ઇત્યર્થિલશાસ્ત્રમતં હિ ।
ક્રૂરવિદ્ધ મ્ખિલં ન શોભનં શોભનેષુ સકલં ન પાદતઃ ॥૩૪૭॥

ભાંટી૦—શુભ ગ્રહોથી વેધાયેલ નક્ષત્રનો એકપાદ જ શુભ-
દાયક નથી એ સર્વશાસ્ત્રોનો મત છે, જ્યારે ક્રૂરવિદ્ધ નક્ષત્ર સંપૂર્ણ
અશુભ હોઈ શુભ કાર્યોમાં પાદમાત્ર નહિ પણ પૂરું નક્ષત્ર ત્યાજ્ય છે.

વૈદ્યનાથ કહે છે—

વેધમાચ્યન્તયોરઙ્ઘ્યો—રન્ધ્યોન્યં દ્વિતૃતીયયોઃ ॥
ક્રૂરૈરપિ ત્યજેત્પાદં, કેચિદ્ ચુર્મહર્ષયઃ ॥૩૪૮॥

ભાંટી૦—કેટલાક ઋષિઓ કહે છે કે પ્રથમ અને ચતુર્થ
તથા ત્રીજા અને ત્રીજા ચરણનો ક્રૂરગ્રહ વેધ કરતો હોય તો પણ
વિદ્ધ ચરણનો જ ત્યાગ કરવો સંપૂર્ણ નક્ષત્રનો નહિ.

વસિષ્ઠ વેધ દોષનો ભંગ કહે છે—

લગ્ને શુભો સૌમ્યયુતેક્ષિતો વા,
લગ્નાધિનાથો ભવગસ્તથા વા ।
કાલાલ્ક્યહોરા ચ તથા શુભસ્ય,
ભવેધદોષસ્ય તદા વિભંગઃ ॥૩૪૯॥

ભાંટી૦—લગ્નમાં શુભગ્રહ હોય, લગ્નપતિ સૌમ્યયુત યા સૌમ્ય-
દૃષ્ટ હોય, અથવા લગ્નપતિ અગ્યારમા ભવનમાં બેઠો હોય અને શુભગ્રહ

संबन्धी कालहोरा लग्नकाले आवती होय तो 'नक्षत्रवेध' दोषना भंग थाय छे.

उदाहृतस्वमां पण ए ज वात कहे छे—
सकृद्दत्तनुगे शुभे व्यधभयं नो चाप्यगे लग्नपे,
होरायां च शुभस्य वा व्यधभयं नास्तीति पूर्वे जगुः।

भा०टी०—लग्नपति अग्यारमे होय, लग्नमां शुभग्रह होय, लग्न शुभयुक्त तथा शुभदृष्ट होय तो वेधदोषनो भय नथी, अथवा लग्नकाले शुभनी कालहोरा होय तो पण वेधनो भय नथी एम पूर्वग्रन्थकारो कही गया छे.

मार्तण्डकार पण कहे छे—
लग्नेशे भवगेऽथवा शशिनि सदृष्टे शुभे वाङ्गगे।
होरायां च शुभस्य वा व्यधभयं नास्तीति पूर्वे जगुः॥३५०॥

भा०टी०—लग्नपति अग्यारमा स्थानमां, अथवा चन्द्रमा अग्यारमा स्थानमां शुभदृष्ट होय, अथवा लग्नमां बुध, गुरु, शुक, पैकीनो कोइ शुभग्रह पडयो होय, अथवा शुभग्रह संबन्धिनी होरा आवती होय तो वेधनो भय नथी एम पूर्वग्रन्थकारो कही गया छे.

एकार्गल योग दोष—

वसिष्ठ, नारद, कश्यप, श्रीपतिः आदि एकार्गल योगमां अभि-
जित्ने लेता नथी, वसिष्ठतुं विधान नीचे प्रमाणे छे.—

रेखामेकामूर्ध्वगां षट् च सप्त,
तिर्यक्कृत्वाऽप्यत्र खार्जूरि चक्रे।
तिर्यग्रेखा संस्थयोश्चन्द्रभान्वो—
द्वैक्संपातो दोष एकार्गलाख्यः ॥३५१॥

भा०टी०—एक रेखा उभी खेंचवी अने तेर रेखाओ उभी रेखाने कापती आडी खेंचवी एटले खजूरना जेवुं खार्जूरिक चक्र

बनशे, आडी कोह्यण एक रेखाना बे छेडाओ उपर सामसामे चन्द्र सूर्य आवतां तेमनो एकबीजा उपर द्रष्टिपात थवो तेनुं नाम ' एका-गल ' योग छे, उर्ध्व रेखाए कयुं नक्षत्र धरीने बाकीनां नक्षत्रो खार्जूरिकमां धरवां ए विषे वसिष्ठ कहे छे—

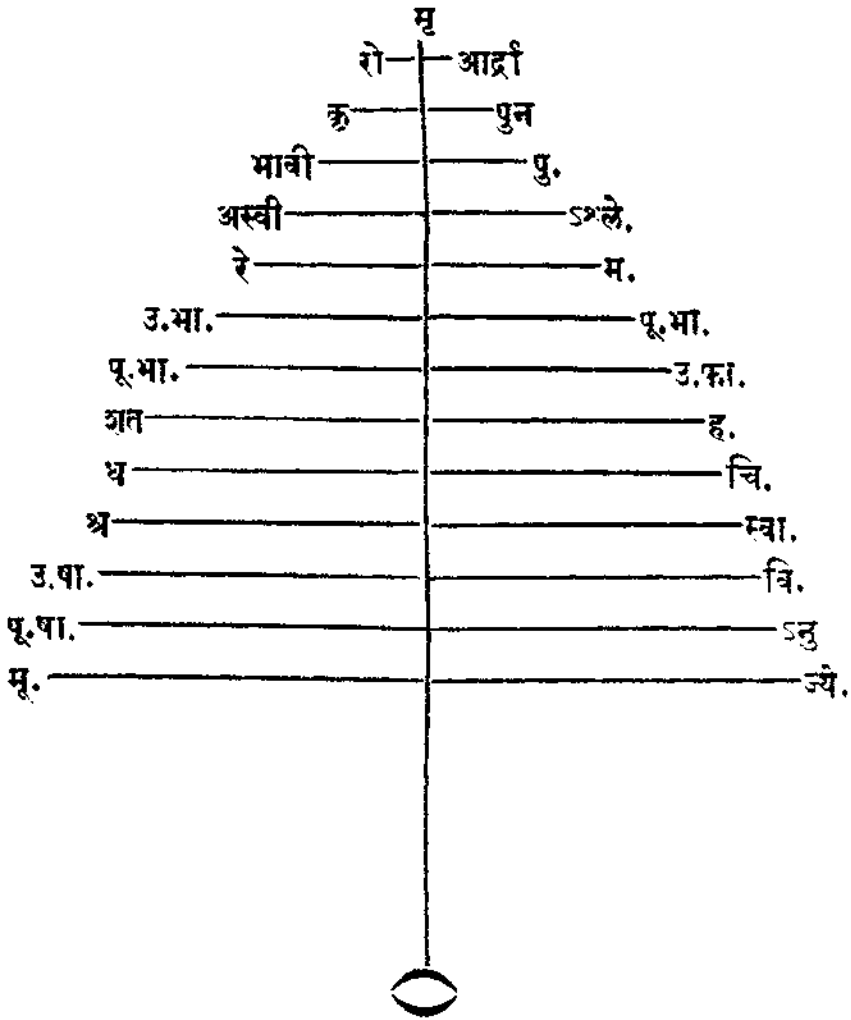
अन्त्यातिगण्ड परिघ व्यतिपात पूर्व-
व्याघात गण्ड वरशूल महाशनिषु ।

चित्रानुराधपितृपन्नगदस्त्रभेषु,

सादित्य मूल शशि सूरिषु मूर्ध्नि भेषु ॥३५२॥

भा०टी०—जे दिवसे वैधृति, अतिगण्ड, परिघ, व्यतिपात, त्रिष्कुम्भ, व्याघात, गण्ड, शूल, वज्र, आ ९ अशुभ योगो पैकीनो कोइ अशुभयोग होय तो एकागलनी तपास करवी, वैधृति होय तो चित्रा, अतिगण्डमां अनुराधा, परिघमां मघा, व्यतिपातमां आश्लेषा, त्रिष्कुम्भमां अश्विनी, व्याघातमां पुनर्वसु, गण्डमां मूल, शूलमां मृग-शिर अने वज्रमां पुष्य नक्षत्र खार्जूरिक चक्रना मस्तके उर्ध्व रेखा उपर लखी ते पछीना नक्षत्रो अनुक्रमे आडी रेखाओ उपर उपरथी नीचे लखवां, बीजी तरफ नीचेथी उपर लखता जवुं अने २७ नक्षत्रो पूरां करी सूर्य चन्द्र जे जे नक्षत्र उपर होय त्यां लखवा, जो सूर्य चन्द्र एक रेखां सामसामे आवता होय अने नक्षत्रोना वेधक चरणो उपर रहीने एक बीजा उपर द्रष्टिपात करता होय तो ते दिवसे ते चन्द्र नक्षत्र शुभ कार्यमां अवश्य वर्जवुं । एकागल योग दर्शक खार्जूरिक चक्र—

स्वार्जुरिक चक्र—



उदयप्रभदेव, त्रिविक्रम, आदि मध्यकालीन विद्वानो स्वार्जुरिक चक्रमां अभिजित्नी गणना करे छे. परन्तु प्राचीन संहिताकारो अभिजित्ने वर्जित करे छे, नारदजी तो एना स्पष्ट शब्दोमां निषेध करे छे, ते नीचे प्रमाणे—

આન્યેકરેગ્વાસ્થિતયોઃ, સૂર્યાચન્દ્રમસોર્મિથઃ ।

एकार्गलो द्रष्टिपात-श्राभिजिद्वर्जितानि वै ॥३५३॥

भा०टी०—नक्षत्रो अभिजित् रहित लखां एक रेखास्थित
सूर्य चन्द्रनो परस्पर द्रष्टिपात तेनुं नाम ' एकार्गल ' छे. कश्यप षण
अभिजित् रहित नक्षत्रो कहे छे,—

एकार्गलो द्रष्टिपात-श्राभिजिद्वरहितानि वै ।

भा०टी०—खार्जूरिक चक्रमां परस्पर द्रष्टिपात थवो ते एका-
र्गल योग छे. अने खार्जूरिक चक्रमां नक्षत्रो अभिजित् रहित लेवां,
आ सम्बधमां अभिजितने अंगे लखे छे.

लांगले कमटे चक्रे, फणिचक्रे त्रिनाडिके ।

अभिजिद् गणना नास्ति, चक्रे खार्जूरिके तथा ॥३५४॥

तारायां ग्रहचक्रे च, संघाते लोहपातके ।

अभिजिद् गणना नास्ति, लाते पाते च कण्टके ॥३५५॥

भा०टी०—हल चक्रमां, कूर्म चक्रमां, त्रिनाडिक फणिचक्रमां
तथा खार्जूरिक चक्रमां अभिजित्नी गणना नथी.

तारायां, ग्रहचक्रमां, संघातचक्रमां, लोहपातमां, लक्ष्मां,
पातमां अने कण्टकमां षण अभिजित्नी गणना नथी.

एकार्गल योगनो विषय—

विवाहे प्रथमे क्षौरे, सीमन्ते कर्णवेधने ।

व्रतेऽन्नप्राशने चैव, खार्जूरं परिवर्जयेत् ॥३५६॥

भा०टी०—विवाहमां, पहला क्षौरमां, सीमन्तमां, कर्णविध-
यमां व्रतग्रहणमां, अन्न प्राशनमां, एकार्गल दोष वर्जवो,

एकार्गलयोगनुं फल नीचे प्रमाणे छे.

खरकरतुहिनां शोर्द्रष्टिसंपातजात-

स्वनलमयशरीरश्चोद्गिरन् वह्निसंघान् ।

भुनि पतति जनानां, मंगलध्वंसनाय,
गुणगणशतसंघैरप्यवार्योऽग्निःकोपः ॥३५७॥

भा०टी०—सूर्य चन्द्रना एकार्गल द्रष्टिपातना योगधी भूमि
उपर अग्निमयशरीरधारी अग्निज्वालाओने वमतो सैकडो गुणो बडे
पण न रोक्याय एको मनुष्योना आरब्ध मंगल कार्याना नाश माटे
अग्नि कोप उतरे छे ।

राम मते दश योग दोष-
शशाङ्कसूर्यर्क्षयुते भशेषे,
खंभू युगाङ्कानिर्दशेशतिथ्यः ।
नागेन्दवोङ्केन्दुमिता नग्वाश्रेद्,
भवन्ति चैते दशयोगसंज्ञाः ॥३५८॥

भा०टी०—सूर्य नक्षत्र तथा चन्द्र नक्षत्रनी अश्विनीथी गणना
करतां जे संख्या आवे ते बने संख्यांकोने जोडीने २७ नो भाग
देवो शेष ०।१।४।६।१०।११।१५।१८।१९।२०। आ पैकीनो अंक
वघे तो दशयोग नामनो दोष जाणवो, आ सिवायनो शेष अंक
आवे तो दशयोग नथी ए अर्थात् समजवानुं छे ।

दशयोग दोषनो विषय-
विवाहादौ प्रतिष्ठायाम्, व्रते पुंसवने तथा ।
कर्णवेधे च चूडायाम्, दशयोगं विवर्जयेत् ॥३५९॥

भा०टी०—विवाह आदि कार्यामां, प्रतिष्ठामां, व्रतग्रहणमां
पुंसवनमां, कर्णवेधमां अने चूलाकर्ममां, दशयोगने वर्जवो ।

दशयोगनुं फल लल्ल कहे छे—

मरुन्मेघाग्निभूपाल-चौरमृत्युरुजोऽशनिः ।
कलिर्हानिर्दशोद्वाहे, दोषास्त्याज्या मदा बुधैः ॥३६०॥

भा०टी०—दशयोगीनुं अनुक्रमे फल-वायुथी नुकसान, मेष-

थी नुकसान, अग्निथी नुकसान, राजाथी नुकसान, चौरथी नुकसान, मृत्युभय, रोगभय, बीजलीना भय, कलह, धनहानि, आम शून्य एक आदि दशयोगोनुं आ फल छे, माटे विवाहमां तो विद्वानोए दशयोगनो सदा त्याग ज करवो ।

दश योगनो परिहार-ज्योतिःसागरमां-

योगाङ्के विषमे सैके, समे स वसुलोचने ।

दलीकृतेऽश्विनी पूर्वे, दशयोगमुदाहृतम् ॥३६१॥

दशयोगे महाचक्रे, प्रमादाद्यदि विध्यते ।

क्रूरैः सौम्यग्रहैर्वापि, दम्पत्योरेकनाशनम् ॥३६२॥

भा०टी०—दश योगनो अंक विषम होय तो तेमां १ जोडवो अने सम होय तो तेमां २८ जोडवा, पछी तेने अर्ध करतां जे अंक रहे ते अश्विनी आदि नक्षत्र जाणवुं, पछी १४ आडी रेखाओ खेची प्रत्येक रेखाग्रे आवेल नक्षत्रथी मांडीने अभिजित सहित २८ नक्षत्रो लखवां अने जे जे ग्रह जे जे नक्षत्र उपर होय ते ते ग्रह त्यां लखवो, चन्द्र नक्षत्र जे रेखा उपर होय ते रेखाना धीजा छेडा उपर आवेल नक्षत्र उपर क्रूर या सौम्य ग्रह होय अने चन्द्राविष्ठित नक्षत्रनो वेध करतो होय तो ते नक्षत्रमां विवाह करवाथी पति पत्नीमांथी कोइ एकनुं मरण थाय, पण ते नक्षत्रनो ग्रह वेध न करतो होय तो ते दशयोगकारक नथी ।

भारद्वाज दशयोग दोषोनो बीजो परिहार कहे छे-

गुरौ लग्नाधिपे शुक्रे, सवीर्ये लग्नकेन्द्रगे ।

दशदोषा विनश्यन्ति, यथाग्नी तूलराशयः ॥३६३॥

भा०टी०—गुरु लग्नपति थइ लग्नमां या केन्द्रमां होय अथवा शुक्र बलवान थइ लग्न अथवा केन्द्रमां रहेल होय तो दशयोगना दोषनो नाश करे छे. जेम अग्निमां तूलना दगला बलीने भस्म थाय छे तेम ।

क्रान्तिसाम्यापरपर्यायो महापातः, आरम्भसिद्धौ-
अकेन्द्रोर्भुक्तांशक-राशियुतौ क्रान्तिसाम्यनामायम् ।
चक्रदले व्यतिपातः, पातश्चके च वैधृतस्त्याज्यः ॥३६४॥

भा०टी०—सूर्य चन्द्र स्पष्ट करी बंनेमां अयनांशो जोडीने तेओना राश्यंशादिने एकत्र करवा, राश्यंक जो ६ आवे तो ते समयमां 'व्यतिपात' नामक महापात छे एम जाणवुं अने राश्यंक जो १२ नो होय तो ते बरवते 'वैधृत' महापात छे एम निश्चयथी जाणवुं, जो ६ अथवा १२ ना राश्यंक उपर अंश के कला विकलाओ व्यतीत थइ होय तो गणित वडे घडी पलो बनाववी अने महापात वीत्याने एटली घडी पलो थइ एम कहेवुं अने ६ अथवा १२ ना राश्यंकमां अमुक घडी पलो घटती होय तो महापातमां आटली घडी पलो घटे छे एम कहेवुं. जे समये राश्यंक ६ के १२ नो होय अने अंश कला विकलादिना स्थाने शून्य आवतां होय त्यारे महापातनो मध्यकाल जाणवो. आ महापात शुभ कार्यमां अवश्य बर्जवो जोइये, आ महापातने ज ज्योतिर्विदो 'क्रान्तिसाम्य' दोष तरीके वर्णवे छे.

महापातने अंगे सूर्यसिद्धान्तनुं स्पष्टीकरण--

एकायनगतौ स्यातां, सूर्याचन्द्रमसौ यदा ।

तद्युतौ मण्डले क्रान्त्यो-स्तुल्यत्वे वैधृताभिधः ॥३६५॥

विपरीतायनगतौ, चन्द्रार्कौ क्रान्तिलसिकाः ।

समास्तदा व्यतीपातो, भगणार्धं तयोर्युतौ ॥३६६॥

तुल्यांशुजाल संपर्कात्, तयोस्तु प्रबहात्ततः ।

तादृक्क्रोधोद्भवो वह्नि-लौकाभावाय जायते ॥३६७॥

भा०टी०—सूर्य तथा चन्द्र बंने ज्यारे एक अयनमां होय अने तेमना राशि अंको जोडतां १२ नी संख्या थाय त्यारे बंनेनी क्रान्ति बरोबर थवाथी 'वैधृति' नामक महापात उत्पन्न थाय छे, अने सूर्य चन्द्र एक बीजाथी विपरीत अयनोमां होय, तेमनी क्रान्तिनी

पलो समान होय अने तेमनी राशिओनो अंक राशिमंडलथी अर्ध भागनो अर्थात् ६ नो होय त्यारे ' व्यतीपात ' नामक महापात उपजे छे. समान क्रान्तिना योगथी सूर्य चन्द्र बंन्नेना किरणजालना परस्पर संवट्टनथी प्रवाहित थतो अग्निप्रवाह-जाणे के तेमना ते प्रका रना क्रोधथी ज प्रकटथो होय- लोकना अभावने माटे थाय छे, ता- त्पर्यार्थ ए छे के क्रान्तिसाम्यमां शुभ कार्य करवाथी करनारने अग्नि जन्य भयनो सामनो करवो पडे छे.

एज वस्तुने रामदैवज्ञ दृष्टान्तद्वारा समजावे छे-

पञ्चास्याजौ गोमृगौ तौलिकुम्भौ,

कन्यामीनौ कर्क्यली चापयुग्मे ।

तत्रान्योन्यं चन्द्रभान्वोर्निरुक्तं,

क्रान्तेः साम्यं नो शुभं मंगलेषु ॥३६८॥

भा०टी०—सिंह-मेष, वृषभ-मकर, तुला-कुम्भ, कन्या-मीन, कर्क-वृश्चिक अने धनु-मिथुन आ छे राशियुग्मोमां सायन सूर्य चन्द्र आवे त्यारे १२ राशिमित अथवा ६ राशिमित महापात उपजे छे, सायन सूर्य चंद्र पैकीनो एक सिंह अने बीजो मेष उपर आवी समक्रान्तिमां आवे त्यारे ६ राशिपरिमित ' व्यतीपात ' वृषभ-मकर राशिमां सायन-सूर्यचन्द्र होइ समक्रान्तिमां आवे त्यारे १२ राशिपरिमित ' वैधृत ' तुला-कुम्भ उपर होय त्यारे ' व्यतीपात ' कन्या-मीन उपर वे होय त्यारे ' व्यतीपात ' कर्क-वृश्चिक उपर होय त्यारे ' वैधृत ' धनु-मिथुन उपर होय त्यारे पण ' वैधृत ' नामक ' महापात ' उत्पन्न थाय छे. आ बंने प्रकारनुं क्रान्तिसाम्य मंगलकार्यमां वर्जवुं जोइये. आ क्रान्तिसाम्य नियत होतुं नथी, विवाह वृन्दावनना निर्मागकालमां ए महापात " ध्रुव " योगनुं प्रथम चरण वीत्ये तेमज " ऐन्द्र " योगनुं चतुर्थ चरण शेष रहेता

उत्पन्न थतो हतो, पण आजे ए नियम प्रमाणे महापात पडतो नथी, आज काल आ महापातो प्रायः ' गंडवृद्धि ' अने ' शुक्र-ब्रह्मा ' आ च्यार योगोमां आव्या करे छे आ संबन्धमां ' आरंभ सिद्धिवात्तक ' कारे एक नियामक श्लोक आषीने कया कया योगोमां महापातनी तपास करवी ते निश्चितरूपे जणाव्युं छे, ते श्लोक नीचे प्रमाणे छे-

गण्डोत्तरार्धच्छुक्रादेः, क्रान्तिसाम्यस्य संभवः ।

सार्धपञ्चसु योगेषु, तत्त्वहं परिवर्जयेत् ॥३६९॥

भा०टी०—गंडनो उत्तरार्ध, वृद्धि, ध्रुव, व्याघात, हर्षण, वरी यान् ए साढा पांच योगोमां तेमज शुक्र, ब्रह्मा, ऐन्द्र, वैधृत, विष्कंभ अने प्रीतिपूर्वार्ध आ साढा पांच योगोमां महापातनो संभव होइ तपास करवी अने प्रथम पछीना दिवसो सहित क्रान्तिसाम्यनो त्याग करवो.

ग्रन्थान्तरमां पण महापात संबन्धी ३ दिवसो वर्जवानुं विधान दृष्टिगोचर थाय छे, जेम के-

गत १ मेव्य २ वर्तमानं ३, सुख १ लक्ष्म्या २ युषां ३ क्रमात् ।
क्रान्तिसाम्यं सृजेद्धानिं, त्वहं तेनाऽत्र वर्ज्यताम् ॥३७०॥

भा०टी०—गयेल आवतुं अने वर्तमान क्रान्तिसाम्य अनुक्रमे सुख लक्ष्मी अने आयुष्यनी हानि करे छे माटे तत्प्रतिबद्ध ३ दिवसो वर्जवा जोइये, एम छतां केटलाक आचार्यीं क्रान्तिसाम्यवालो एक ज दिवस अने केटलाक क्रान्तिसाम्यकालने ज दुष्ट गणी त्यागवानो आदेश करे छे, कहे छे के

विषप्रदिग्धेन हतस्य पत्रिणः, मृगस्य मांसं सुखदं क्षतादते ।
यथा तथैव व्यतिपातयोगे, क्षणोऽत्र वर्ज्यो न तिथिर्नवारः ॥३७१॥

भा०टी०—क्षेरां बुजवेल बाणवडे मारेल मृगनुं मांस जख-
मना स्थाने ज खराब होय छे शेष शरीरना भागनुं ते दुष्ट होतुं नथी

एज रीते महापातनो वर्तमान समय ज वर्जवो, आखी तिथि के आखो वार वर्जवानी जरूरत नथी.

गमे तेम होय पण महापातनी महादोषोमां गणना छे अने ए अवश्य वर्जनीय छे, ए विषे लल्ल कहे छे-

खड्गाऽऽहतोऽग्निना दग्धो, नागदृष्टोऽपि जीवति ।

क्रान्तिसाम्यकृतोद्वाहो, त्रियते नाऽत्र संशयः ॥३७२॥

भा०टी०-खड्गवडे हणायेल, अग्निद्वारा चलेल अथवा सर्प दशेल जीवे छे पण क्रान्तिसाम्यमां परणेल मरे छे एमां शंका नथी.

महापात यंत्रक—

निम्नोक्त राशियुग्मस्थितसूर्यचन्द्रयोः क्रान्तिसाम्ये.

मेष	वृष	मिथुन	कर्क	कन्या	तुला
१	२	३	४	६	७
सिंह	मकर	धनु	वृश्चिक	मीन	कुंभ
५	१०	९	८	१२	११

वज्रपञ्चक—

तिथिं वारं च नक्षत्रं, नवभिश्च समन्वितम् ।

सप्तभिश्च हरेद्भागं, शेषांके फलमादिशेत् ॥३७२॥

त्रिशेषे तु जलं विन्द्यात्, पञ्चशेषे प्रभञ्जनः ।

सप्तशेषे वज्रपातो, ज्ञेयं वज्रस्य लक्षणम् ॥३७३॥

भा०टी०--तिथि वार, नक्षत्रना आंक भेगा करी तेमां नव जोडवा पछी तेने सातनो भाग देवो, शेष अंक रहे तेनुं फल कहेवुं

३ शेष रहे तो जल जाणवुं, पांच शेष रहे तो पवन अने ७ अथवा ० शेष रहे तो वज्रपात जाणवो ए वज्रनुं लक्षण छे.

कोइ वज्रनुं लक्षण आ प्रमाणे कहे छे:—

सूर्यात् पञ्चदश ऋक्ष-मष्टादशं च राहुणा ।
त्रयोविंशति केतुश्च चतुर्विंशति भूसुतः ।
पञ्चविंशति मन्दश्च, विवाहे वज्रपञ्चकम् ॥३७४॥
व्याधिः सूर्येऽग्नी राहौ च, केतौ नृपभयं तथा ।
भौमे चोरभयं विन्द्यान्मरणं च शनैश्चरे ॥३७५॥

भा०टी०—लग्न नक्षत्रथी १२ मुं नक्षत्र सूर्यनुं, १८ मुं राहुनुं, २३ मुं केतुनुं, २४ मुं मंगलनुं अने २५ मुं शनैश्चरनुं होय तो विवाह मां ए पांच वज्र छे, सूर्यमां रोग, राहुनां अग्नि भय, केतुमां राजभय, मंगलमां चोरभय, अने शनैश्चरमां मरण जाणवुं.

बाणपञ्चक—

लग्ने नाडया घात तिथ्योद्धू तप्राः
शेषे नागद्व्यब्धि तर्केन्दुसंख्ये ।
रोगो वह्निराजचौरो च मृत्यु-
र्बाणश्चायं दाक्षिणात्या प्रसिद्धाः ॥३७६॥

भा०टी०—लग्न तिथि युक्त गत तिथिओने ९ नवे भागतां शेष ८।२।४।६।१। आ पैकीनो अंक रहे तो अनुक्रमे रोग, अग्नि, राज, चोर, मृत्यु, नामनां बाण होय छे. ए पांच बाणो दाक्षिणा-त्योमां प्रसिद्ध छे.

विवाह-पटलोक्त पांच बाणो—

गततिथियुतलग्नं पञ्चधा स्थापनीयं,
तिथि १५ रवि १२ दश १० नागै ८ वैद ४ युक्तं क्रमेण ।

નવ ૯ હૃત શર ૫ શેષે ઘાણ સંજ્ઞા ક્રમેણ,
રુગનલ નૃપ ચૌરાઃ પશ્ચમો મૃત્યુસંજ્ઞઃ ॥૩૭૭॥

આ૦ટી૦—શુક્લ પ્રતિપદાથી માંડીને માસની ગત તિથિઓનો અંક લગ્નમાં જોડવો અને તે આંક પાંચ સ્થાને લખવો પાંચ સ્થલે લખેલ તે અંકમાં અનુક્રમે ૧૫-૧૨-૧૦-૮-૪ એ જોડવા પછી પ્રત્યેકને ૯ નવનો ભાગ દેવો, પ્રથમ અંકમાં ૫ શેષ રહે તો રોગ, બીજામાં ૫ શેષ રહે તો અગ્નિ, ત્રીજામાં ૫ શેષ રહે તો રાજ, ચોથામાં ૫ શેષ તો ચોર, અને પાંચમામાં ૫ શેષ રહે તો મૃત્યુ નામક ઘાણ જાણવો.

પ્રાચ્ય મતાનુસારી ઘાણપંચક—

રસગુણશશિનાગાઘ્ધાઘ્ય સંક્રાન્તિયાતાં-
શકમિતિ રથ તષ્ટાંકૈર્યદા પશ્ચશેષાઃ ।
રુગનલ નૃપ ચૌરા મૃત્યુ સંજ્ઞશ્ચ ઘાણો-
નવહૃત શર શેષે શેષકૈવયે સશલ્યઃ ॥૩૭૮॥

આ૦ટી૦—સંક્રાંતિના ગતાંશોની સંખ્યાને ૫ સ્થલે લખી તેને અનુક્રમે ૬।૩।૧।૮।૪ આ અંકો વડે યુક્ત કરી પ્રત્યેક સંખ્યાને ૯ નો ભાગ દેવો, પહેલે સ્થલે ૫ શેષે રોગ, દ્વિતીય સ્થલે અગ્નિ, તૃતીય સ્થલે રાજ, ચતુર્થ સ્થલે ચોર, અને પંચમ સ્થલની સંખ્યાને ૯ નો ભાગ આપતાં ૫ શેષ રહે તો મૃત્યુ ઘાણ જાણવો । પાંચ સ્થલની શેષ સંખ્યાને ૯ નો ભાગ દેતાં ૫ શેષ રહે તો સશલ્ય-લોહમુલ્ક ઘાણ-જેતું બીજું નામ નાગપંચક છે. અને શેષ સર્વ સંખ્યાને ૯ થી ભાગતાં ૫ શેષ ન રહેતાં કાષ્ટમુલ્ક ઘાણ જાણવું.

જ્યોતિશ્ચિન્તામણિમાં કહેલ ઘાણપંચક—

તિથિવાર ભલગ્નાંકો, રસાગ્ન્યઞ્જાષ્ટવેદયુક્ ।૬।૩।૧।૮।૪।
નન્દાસપશ્ચશેષે રુ-ગ્વહિરાટ્ચૌરમૃત્યુકૃત્ ॥૩૭૯॥

भा०टी०—तिथिवार नक्षत्र लग्नना अंकने ५ स्थले लखी तेमां अनुक्रमे ६।३।१।८।४ आ अंको जोडवा पछी ९ नो भाग देवो प्रथम स्थलादिनो शेष अंक ५ रहे तो अनुक्रमे रोग, अग्नि, नृप, चौर, मृत्यु नामक बाणो जाणवां.

समयभेदे बाणनो परिहार—ज्योतिःप्रकाशे—
रोगं चौरं त्यजेद्द्रात्रौ, दिवा राजाग्निपंचकम् ।

उभयोः सन्ध्ययोर्मृत्यु—मन्यकाले न निन्दितः ॥३८०॥

भा०टी०—रोग बाण तथा चौर बाणने रात्रिमां वर्जवो, राज बाण तथा अग्निबाणने दिवसे वर्जवो अने प्रातःसायं संध्याओमां मृत्यु बाणनो त्याग करवो अन्य काले बाण निन्दित नथी.

वार भेदे बाणनो परिहार—दैवज्ञ मनोहरे—
रथौ रोगं कुजे वह्निं, शनौ च नृपपञ्चकम् ।

वर्ज्यं पुनः कुजे चौरं, बुधवारे च मृत्युदम् ॥३८१॥

भा०टी०—रविवारे रोग, मंगलवारे अग्नि, शनिवारे राज-पंचक, मंगलवारे चौर अने बुधवारे मृत्यु बाणनो त्याग करवो.

कार्य भेदे बाणनो परिहार—ज्योतिः प्रकाशे—
नृपाख्यं राजसेवायां, गृहगोपेऽग्निपञ्चकम् ।

याने चौरं व्रते रोगं, त्यजेन्मृत्युं करगृहे ॥३८२॥

भा०टी०—राज सेवामां राज बाण, घर ढांकवामां अग्निबाण यात्रामां चौर पंचक, व्रतमां रोग, अने विवाहमां मृत्यु पंचकनो त्याग करवो.

नाग अने मृत्युबाणनो परिहार—

नाग-मृत्यु सदा त्याज्यौ, सन्ध्ययोर्बाहिकैर्जनैः ।

तत्रापि यत्र लग्नं चेद्दलाढ्यं तच्च निष्फलम् ॥३८३॥

भा०टी०—नाग अने मृत्यु पंचक बाहिक देशना लोकोप

बन्ने सन्ध्याओमां सदा वर्जवो, तेमां पण ज्यां लग्न बलवान् होय त्यां पंचकनो दोष नथी निष्फल थइ जाय छे.

योग

योगी अनेकविध छे, सूर्य चन्द्र नक्षत्रोना योगथी बनता विष्कंभादि २७ योगी, वार नक्षत्रना योगथी बनता आनंदादि २८ योगी, ए उपरांत एकार्गल, दृष्टियोग, तिथि नक्षत्रोथी बनता शुभाशुभ योगी, वार नक्षत्रोथी बनता शुभाशुभ योगी, तिथिवार नक्षत्रोना संबन्धथी बनता योगी, आ सर्वयोगीनो संक्षेपमां परिचय अने ते योगीमां विधेय कार्यानी निर्देश कराववो ए आ प्रकरण लखवानो उद्देश छे.

विष्कंभादि योगा नयनोपाय—

यस्मिन्नृक्षे स्थितो भानु-र्यत्र तिष्ठति चन्द्रमाः ।

एकीकृत्य त्यजेदेकं, योगा विष्कंभकादयः ॥३८४॥

भा०टी०—जे नक्षत्र उपर सूर्य रहेल होय अने जे नक्षत्रमां चंद्रमा होय ते बने नक्षत्रोनी अंक संख्या एकत्र करीने तेमांथी एक ओछो करवो शेष जे अंक रहे तेटलामो विष्कंभादि योग जाणवो अंक राशि जो २७ थी अधिक होय तो तेमांथी २७ बाद करी शेष अंकमांथी एक ओछो करवो ने शेषांकने योगनो अंक जाणवो-

उदाहरण—

सूर्य अश्विनी उपर रहेल छे अने चंद्रमा पण ते उपर आव्यो छे तो ते दिवसे सूर्य चंद्र नक्षत्रांक युतिनी संख्या २ थइ, एमांथी १ बाद करतां शेषांक १ रह्यो आथी जणायुं के ते दिवसे १ लो विष्कंभ योग छे. बीजुं उदाहरण—सूर्य अश्विनी उपर अने चंद्र रेवती उपर छे बनेनो नक्षत्रांक २८ थयो, १ ओछो करतां शेष

२७ रक्षा एटले ते दिवसे २७ मो वैघृतयोग छे ए सिद्ध थयुं ए ज प्रमाणे सर्वत्र सूर्य-चंद्र नक्षत्रो उपरथी विष्कंभादि दिन योगो काढवा.

योगानयननो बीजो प्रकार—

गर्गेणोक्तास्त्वमे योगा आनन्दाद्या निमित्तजाः ।

विष्कंभाद्यास्तथा नित्या, अन्ये नैमित्तिकाः पुनः ॥३८५॥

वाक्पते रकंनक्षत्रं, श्रवणाच्चान्द्रमेष च ।

गण्यते तद्युतिं कुर्याद्, योगः स्यादृक्ष शेषितः ॥३८६॥

भा०टी०—गर्गाचार्ये आनंदादि निमित्त ज विष्कंभादि नित्य अने बीजा नैमित्तिक योगो कक्षा छे, विष्कंभादि योगो लाव-
वानी प्रक्रिया ए छे के पुष्यथी सूर्य नक्षत्र अने श्रवणथी चंद्र नक्षत्र
गणतां जे अंको आवे ते बंनेने जोडी २७ नो भाग देवो जे शेष रहे
तेटलामो ते दिवसे विष्कंभादि योग छे एम जाणवुं. जो जोडेला
अंकने २७ नो भाग न लागे तो जोडेला अंक परिमित ज ते दिवसे
योग जाणवो.

विष्कंभादि २७ योगो—

विष्कम्भः प्रीतिरायुष्मान्, सौभाग्यः शोभनाह्वयः ।

अतिगण्डः सुकर्माख्यो, घृतिः शूलोऽथ गण्डकः ॥३८७॥

वृद्धिर्ध्रुवाख्यो व्याघातो, हर्षणो वज्रसंज्ञकः ।

सिद्धियोगो व्यतीपातो वरीयान् परिघः शिवः ॥३८८॥

सिद्धः साध्यः शुभः शुक्रो ब्रह्मन्द्रो वैधृताह्वयः ।

सप्तविंशति योगास्ते, स्वनामफलदाः स्मृताः ॥३८९॥

भा०टी०—विष्कंभ १ प्रीति २ आयुष्मान् ३ सौभाग्य ४
शोभन ५ अतिगंड ६ सुकर्मा ७ घृति ८ शूल ९ गंड १० वृद्धि ११
ध्रुव १२ व्याघात १३ हर्षण १४ वज्र १५ सिद्धि १६ व्यतीपात १७
वरीयान् १८ परिघ १९ शिव २० सिद्ध २१ साध्य २२ शुभ २३

शुक्ल २४ ब्रह्मा २५ ऐन्द्र २६ वैधृत २७. आ २७ योगो पोताना
नाम प्रमाणे फल आपनारा छे.

अशुभयोगोनी वर्ज्य घडीओ—
विरुद्धयोगेषु य आद्यपादः,
शुभेषु कार्येषु विवर्जनीयः ।
सवैधृताख्यो व्यतिपातयोगो,
सर्वोऽपि नेष्टः परिघाट्टमाद्यम् ॥३९०॥
तिस्रस्तु नाड्यः प्रथमे च वज्रे,
गण्डेऽतिगण्डेऽपि च षट् च षट् च ।
व्याघातयोगे नव पञ्चशूले,
शुभेषु कार्येषु विवर्जनीयाः ॥३९१॥

भा०टी०—विरुद्ध योगोनो प्रथम चरण शुभ कार्योमां वर्जवो
जोइये, व्यतीपात तथा वैधृत योगो संपूर्ण वर्जनीय छे, परिघनो
प्रथम अर्धभाग वर्जवो, विष्कंभ-वज्रनी ३-३, गंड-अतिगंडनी
६-६, व्याघातनी ९ अने शूलयोगनी ५ घडीओ शुभ कार्योमां
वर्जनीय छे.

योगेश-बसिष्ठमते—

सूर्याचन्द्रमसोर्धिष्ण्य-योगाज्जाता यतस्ततः ।
ऋक्षेशा एव योगेशा, ज्ञातव्याः सर्वकर्मसु ॥३९२॥

भा०टी०—योगो सूर्य चंद्र नक्षत्रोना योगथी बने छे तेथी
नक्षत्रोना स्वामीओ ज योगोना स्वामीओ जाणवा, सर्व कार्योमां नक्षत्रे-
शोनो ज योगेश रूपे उपयोग करवो.

नारदना मते योगेशो आ प्रमाणे छे—

योगेशा यम-बिष्ण्वन्दु-धातु-जीव-निशाकराः ।
इन्द्र-तोया-ऽहि-बह्यर्क-भू-मरुद्-भग-तोषपाः ॥३९३॥

गणेश-रुद्र-धनद,--त्वष्ट-मित्र-षडाननाः ।

सावित्री कमला गौरी, नास्त्यौ पितरो दितिः ॥३९४॥

भा०टी०—यम, विष्णु, चन्द्रमा, धाता, बृहस्पति, चन्द्रमा, इन्द्र, जल, सर्प, अग्नि, सूर्य, भूमि, मरुत्. भग, वरुण, गणेश, रुद्र, धनद, त्वष्टा, मित्र, कार्तिकेय, सावित्री, कमला, गौरी, अश्विनीकुमार, पितर, दिति, आ विष्कंभादि २७ योगोना स्वामिओ छे.

तिथिकरणादिना स्वामियोना प्रयोजन विषे वराहः—

यत्कार्यं नक्षत्रे, तद्द्वैवत्यासु तिथिषु तत्कार्यम् ।

करण-मुहूर्तेष्वपि तत्, सिद्धिकरं देवतासदृशम् ॥३९५॥

भा०टी०—जे नक्षत्रमां जे कार्य करवानुं होय ते नक्षत्र स्वामि तिथिमां करवाथी सिद्ध थाय छे, एज प्रमाणे नक्षत्र स्वामि सम-स्वामिक करण तथा मुहूर्तोमां पण कार्य करवुं सिद्धिदायक थाय छे.

विष्कंभादि विधेय कार्यो—

चौलं च बीजरोपं च, स्त्रीसंगं दन्तकल्पनम् ।

काष्ठकर्म रिपूच्चाटं, विष्कंभे तु प्रकारयेत् ॥३९६॥

मित्रत्वं लेपनं चैव, भूषणं भूपरिग्रहम् ।

राजवश्यं महोत्साहं, प्रीतियोगे प्रकारयेत् ॥३९७॥

बीजवापं धनग्राह-मायुरारोग्यकर्म च ।

विवाहं व्रतबन्धं च, ह्यायुष्मति च कारयेत् ॥३९८॥

वह्नवन्ध-मलंकारं, सौभाग्यं लेपकर्म च ।

सोमपानं सुरापानं, सौभाग्ये तु प्रकारयेत् ॥३९९॥

विवाहदानकर्माणि, भूषणं भूपरिग्रहम् ।

राजाभिषेकमायुष्यं, शोभने च प्रकारयेत् ॥४००॥

भा०टी०—चूडाकर्म, बीजवापन, स्त्रीसंग, दन्तशोधन, काष्ठ-कार्य, शत्रुनुं उच्चाटन, ए कार्यो विष्कंभमां कराववां, मित्रता,

વિલેપન, ભૂષણધારણ, ભૂમિની સ્વરીદી, રાજવશીકરણ અને મહે-
તાહજનક કાર્ય એ સર્વ કાર્ય પ્રીતિયોગમાં કરાવવાં. વીજરૂપન,
દ્રવ્યસમાદાન, આયુ તથા આરોગ્યવર્ધક કાર્ય, વિવાહ, વ્રતગ્રહણ એ
કાર્યો આયુષ્માન્ યોગમાં કરાવવાં. વસ્ત્રપરિધાન, અલંકાર કાર્ય,
સૌભાગ્યકર્મ, લેપકર્મ, સોમવહ્નીરસપાન, મદિરાપાન એ સૌભાગ્ય
યોગમાં કરાવવાં. વિનાહ, દાન, ભૂષણકર્મ ભૂમિગ્રહણ, રાજાભિષેક
અને આયુષ્યવર્ધક કર્મ શોભનયોગમાં કરાવવાં.

વિગ્રહં નિગ્રહં ચૈવ, રોદનં વધવન્ધનમ્ ।

હેદનં વશ્ચનં શુદ્ર-મતિગણ્ડે પ્રકારયેત્ ॥૪૦૧॥

ચિત્રકર્મ ગૃહસ્થાપં, કલ્યાણં ભૂપરિગ્રહમ્ ।

રાજાભિષેકકર્માણિ, સુકર્મણિ ચ કારયેત્ ॥૪૦૨॥

પ્રાકારં તોરણાદીનિ, દેવાલયગૃહાણિ ચ ।

સેતુવન્ધં ગજારોહં, ધૃતિયોગે તુ કારયેત્ ॥૪૦૩॥

ક્રૂરકર્મ રિપૂચ્ચાટં, મારણં દાહનં તથા ।

વન્ધનં ચાવમાનં ચ, શૂલયોગે પ્રકારયેત્ ॥૪૦૪॥

શત્રુઘાતં રિપૂચ્ચાટં, તલાગં સેતુવન્ધનમ્ ।

ક્ષેત્રસેવાં ગદાયુદ્ધં, ગંડયોગે પ્રકારયેત્ ॥૪૦૫॥

માંટી૦—લઢાહ, દંડ કરવો, રોવરાવવું, વધ-વન્ધન, કાપવું,
ઠગવું, અને હલકટકામ અતિગંડયોગમાં કરાવવાં, ચિત્રકારી, ગૃહ
સ્થાપન, મંગલકાર્ય, ભૂમિગ્રહણ, રાજાભિષેક ક્રિયા એ કામો સુકર્મા
યોગમાં કરાવવાં. કિલ્લેવન્ધી, તોરણાદિકાર્યો, દેવાલયો, ઘરો,
પુલો બાંધવા, હાથી ઉપર ચઢવું એ કાર્યો ધૃતિયોગમાં કરાવવાં. ક્રૂર
કાર્ય, શત્રુનું ઉચ્ચાટન, મારણ, બાલવું, વેધન અને અપમાન એ કાર્યો
શૂલયોગમાં કરાવવાં. શત્રુનો ઘાત, શત્રુનું ઉચ્ચાટન, તલાવસ્થાવો,
પુલબાંધવો, ક્ષેત્રકર્ષણ કરવું અને ગદાયુદ્ધ એ કામો ગંડયોગમાં કરાવવાં.

बीजवापं धनग्राहं, विवाहं वस्त्रबन्धनम् ।
 तडागं सेतुबन्धं च, वृद्धियोगे प्रकारयेत् ॥४०७॥
 वस्त्रबन्धं गृहस्थापं, तडागं सेतुबन्धनम् ।
 भूषणं बहुरत्नं च, ध्रुवयोगे प्रकारयेत् ॥४०७॥
 बन्धनं रोधनं चैव, घातनं छेदनं तथा ।
 क्रूराणि बहुकर्माणि, व्याघाते तु प्रकारयेत् ॥४०८॥
 वस्त्रबन्धं गजारोहं, विवाहं भूपरिग्रहम् ।
 राजाभिषेकमायुष्यं, हर्षणे तु प्रकारयेत् ॥४०९॥
 शस्त्रकर्म रिपूच्चाटं, शस्त्राणां च परिग्रहम् ।
 सेनाधिपत्यं सौम्यं च, वज्रयोगे प्रकारयेत् ॥४१०॥

भा०टी०—बीजवपन, धनग्रहण, विवाह, वस्त्रपरिधान, तडाग-
 खनन, पुल बांधवो आदि कामो वृद्धियोगमां कराववां. वस्त्रपरिधान,
 गृहस्थापन, तलावबन्धन, पुलबन्धन, भूषणपरिधान, अनेकविध
 रत्नधारण ए ध्रुवयोगमां कराववां, बन्धन, अवरोध, घातन, छेदन,
 अनेकविध क्रूर कर्मो व्याघातयोगमां कराववां. वस्त्र बन्धन, हस्त्या-
 रोहण विवाह, भूमिग्रहण, राजाभिषेक आयुष्यपोषक कर्म ए सर्व
 हर्षणयोगमां कराववां. शस्त्रप्रयोग, शत्रुं उच्चाटन, शस्त्रो नो
 संग्रह, सेनापतित्वनो स्वीकार अने सौम्यकर्म वज्रयोगमां
 कराववां.

हारकाञ्चीकलापं च, हस्ताभरणमेव च ।
 अंगुलीभूषणं चैव, सिद्धियोगे प्रकारयेत् ॥४११॥
 दानं वेदविदे दद्याच्छूद्रासंकल्पनं तथा ।
 रिपूच्चाटं विषादीनि, व्यतीपाते तु कारयेत् ॥४१२॥
 हारकाञ्चीकलापं च, हस्ताभरणमेव च ।
 अंगुलीभूषणं चैव, वरीयसि च कारयेत् ॥४१३॥

बन्धनं छेदनं चैव, भेदनं विषदीपनम् ।
 तथाऽन्यक्रूरकर्माणि, परिधे तु प्रकारयेत् ॥४१४॥
 मालिकां कटिसूत्रं च, घ (क)ण्ठाभरणमेव च ।
 कर्णयोर्भूषणं चैव, शिवयोगे प्रकारयेत् ॥४१५॥

भा०टी०—हार, कटिमेखला, हस्तभूषण, अंगुलीभूषण ए सर्व सिद्धियोगमां कराववां, वेद पाठी दान देवुं, श्रद्धापूर्वक संकल्प-करवो, शत्रुनुं उन्वाटन, विपदान आदि कार्यो व्यतीपातमां कराववां, हार, कटिसूत्र, हस्तभूषण, अंगुलीभूषण ए कामो वरीयस् योगमां कराववां, बंधन, छेदन, भेदन, विषप्रयोग तथा बीजां क्रूर कर्मो परिघ योगमां कराववां, माला (मौक्तिकमाला) कटिसूत्र, गळानुं भूषण, कानोनां भूषण इत्यादि शुभ कार्यो शिवयोगमां कराववां.

प्रतिष्ठा देवतानां च, गृहाणि नगराणि च ।
 प्राकारतोरणादीनि, सिद्धयोगे प्रकारयेत् ॥४१६॥
 देवतागुरुपूजां च, विद्यापूजां तथैव च ।
 मन्त्रपूजान्यनेकानि, साध्ययोगे प्रकारयेत् ॥४१७॥
 बीजवापं गृहोत्साहं, धनधान्यादिसंग्रहम् ।
 सर्वरत्नमहीग्राहं, शुभयोगे प्रकारयेत् ॥४१८॥
 लेपनं भूषणं चैव, राजसंदर्शनं तथा ।
 कन्यादानं महोत्साहं, शुक्लयोगे प्रकारयेत् ॥४१९॥
 शान्तिकं पौष्टिकं चैव, तडागं सेतुबन्धनम् ।
 चौलोपनयनं क्षौरं, ब्रह्मयोगे प्रकारयेत् ॥४२०॥

भा०टी०—देवताओनी प्रतिष्ठाओ, गृहनिवेश, नगर निवेशो, प्राकारनिर्माण, तोरणनिवेश आदि कार्यो सिद्ध योगमां

कराववां, देवतापूजन, गुरुपूजन, सरस्वतीपूजा अने अनेकविध मंत्र-पूजनो साध्ययोगमां कराववां, बीजवाप, गृहोत्सवो, धन-धान्य संचय सर्वस्नसंग्रह, भूमिग्रहण आदि कार्यो शुभयोगमां कराववां विलेपन, भूषण, राजदर्शन, कन्यादान, उत्साहप्रेरक कार्यो शुक्ल-योगमां कराववां, शान्तिक-पौष्टिककर्म, तलावबंधन, पुलबंधन, चूडाकर्म, उपनयन, क्षौर ए सर्व ब्रह्मयोगमां कराववां.

कन्यादानं गजारोहं, स्त्रीसंगं वस्त्रबन्धनम् ।

काव्यगायनवाद्यानि, योगे चैन्द्रे प्रकारयेत् ॥४२१॥

घातनं परराष्ट्राणां, वधनं दाहनं तथा ।

छेदनं क्रूरकर्माणि, वैधृतौ तु प्रकारयेत् ॥४२२॥

भा०टी०—कन्यादान, गजारोहण, स्त्रीसंग, वस्त्रपरिधान, काव्याभ्यास, गानाभ्यास वाद्यकलाभ्यास ए कार्यो ऐन्द्रयोगमां कराववां, बीजा राष्ट्र उपर चढाइ, ठगडुं, बालवुं, छेदवुं अने बीजां क्रूरकर्मो वैधृति योगमां कराववां.

क्षणयोगो

जेम एक तिथिमां बधी तिथिओ, एक वारमां बधा वारो पोत-पोताना क्षणो भोगवे छे ते प्रमाणे एक योगमां पण बधा योगो पोताना क्षणो भोगवे छे, ए विषयमां ब्रह्मर्षि वसिष्ठ कहे छे—

योगस्य सप्तविंशतिंशो, योगमानं भवेदिह ।

एकस्मिन्नपि योगेऽपि, सर्वे योगा भवन्ति हि ॥४२३॥

भा०टी०—एक योगमां पण सर्व योगो होय छे. अने आ क्षणयोगोनो भोगकाल इहां योगमानमां सत्तावीसमा भाग जेटलो होय छे, उदाहरण—विष्कंभ योगना आरंभनी २ घडी १३ पल्लोसुधी विष्कंभ योगनी भुक्ति जाणवी पछी २ घडी १३ पल्ल सुधी प्रीतियोगनी ते पछी आयुष्माननी इत्यादि.

आनन्दादि २८ उप-योगो

आनन्दाख्यः—कालदण्डश्च धूम्रो,
 धाता सौम्यो ध्वांक्ष-केतू क्रमेण ।
 श्रीवत्साख्यो वज्रकं मुद्गरश्च,
 छत्रं मित्रं मानसं पद्म-लुम्ब्यौ ॥४२४॥
 उत्पात-मृत्यू किल काण-सिद्धी,
 शुभोऽमृताख्यो मुसलो गदश्च ।
 मातंग-रक्षश्चरसुस्थिराख्याः,
 प्रवर्धमानाः फलदाः स्वनाम्ना ॥४२५॥

भा०टी०—१ आनंद २ कालदंड ३ धूम्र ४ धाता ५ सौम्य
 ६ ध्वांक्ष ७ ध्वज ८ श्रीवत्स ९ वज्र १० मुद्गर ११ छत्र १२
 मित्र १३ मानस १४ पद्म १५ लुंबक १६ उत्पात १७ मृत्यु १८
 काण १९ सिद्धि २० शुभ २१ अमृत २२ मुशल २३ गद २४
 मातंग २५ राक्षस २६ चर २७ स्थिर अने २८ वर्धमान, आ आन-
 न्दादि २८ योगो दिनयोगोना साहचर्यमां रहेता होवार्थी उपयोगो
 गणाय छे.

आ योगो मुहूर्तचिन्तामणिकारे नारदना मत प्रमाणे लख्या
 छे, आरंभसिद्धिमां लखेल नामोनी साथे आ नामो ए ठेकाणे
 जुदां पढे छे, नंबर ३।४।१३।१४।१५।१६।१८।२०।२३ ना योगोनां
 नामो आरंभसिद्धिमां अनुक्रमे प्राजापत्य, सुरोत्तम मनोज्ञ, कंप,
 लुंबक, प्रवास, व्याधि, शूल अने गज ए प्रमाणे छे, आ योगोनुं
 फल नाम प्रमाणे होय छे.

आनन्दादि योगो जाणवानो उपाय-

दास्तादकं मृगादिन्दौ, सार्पाद् भौमे कराद् बुधे ।

मैत्राद् गुरौ भृगौ वैश्वाद्, गण्या मन्दे च वारुणात् ॥४२६॥

भा०टी०—रविवारे अश्विनीथी, सोमे मृगशिराथी, भौमे आश्लेषाथी, बुधे हस्तथी, गुरुवारे अनुराधाथी, शुके उत्तराषाढाथी, शनिवारे शतभिषाथी गणतां दिननक्षत्र जेटलासुं थाय तेटलामो ते दिवसे आनन्दादि योग छे एम जाणवुं, प्रश्न—आश्विन शुदि १० गुरुवारे श्रवण नक्षत्र छे तो ते दिवसे आनन्दादि योग कयो होवो जोइए ? उत्तर—गुरुवार होवाथी अनुराधाथी अभिजित् सहित गणतां श्रवण ७ सुं छे मांटे ते दिवसे आनन्दादि पैकीनो ७ मो 'ध्वज' योग छे एम जाणवुं. ए ज प्रमाणे दरेक वारे उपर्युक्त नियतनक्षत्रथी दिननक्षत्र पर्यन्त गणीने आनन्दादि योगो जाणी सकाय छे.

आनन्दादि योगो पैकीना अशुभयोगोनी वर्ज्य घडी

ध्वांक्षे वज्रे मुद्गरे चेषु नाडयो ।

वज्र्यां वेदाः पद्मलंबे गदेऽश्वाः ।

धूम्रे काणे मौसले भूर्ध्रयं द्वे ।

रक्षोमृत्युत्पातकालाश्च सर्वे ॥ ४२७ ॥

भा०टी०—ध्वांक्ष, वज्र अने मुद्गरेनी पहेली ५ घडीओ वर्जवी, पद्मलंबकनी ४-४ घडीओ, गदनी ७ घडीओ, धूम्रनी १, काणनी २, अने मुसलनी २ घडीओ वर्जवी ज्यारे राक्षस मृत्यु, उत्पात, अने कालदण्ड आ योगो संपूर्ण वर्जवा.

आरंभसिद्धिकार अशुभयोगोनी परिहार कहे छे—

सिद्धियोगः कुयोगश्च, जायेतां युगपद्यदि ।

कुयोगं तत्र निर्जित्य, सिद्धियोगो विजृम्भते ॥४२८॥

भा०टी०—सिद्धियोग (रवि, राज, कुमार, अमृतसिद्धि आदि कार्यसाधक योगो पैकीनो कोइ यण एक) अने कुयोग (मृत्यु, उत्पात राक्षस, यमघंट आदि वर्जित योग) जो एक साथे आवे

તો ત્યાં કુયોગના પ્રભાવને દૂર કરી સિદ્ધિયોગ પોતાના પ્રભાવને પ્રગટ કરે છે.

પ્રકીર્ણક શુભયોગો

૧ રવિયોગ

યોગો રવેર્ભાત્ કૃતતર્ક નન્દ-દિગ્વિશ્વવિંશોદ્દુષુ સર્વસિદ્ધયૈ
આચેન્દ્રિયાશ્વદ્વિપરુદ્રસારી-રાજોદ્દુષુ પ્રાણહરસ્તુ હેયઃ
॥ ૪૨૯ ॥

માંટી૦—રવિનક્ષત્રથી ૪૧૬।૧।૧૦।૧૩।૨૦ ઇટલામું ચન્દ્ર-
નક્ષત્ર આવતાં સર્વ કાર્ય સિદ્ધિકારી રવિયોગ વને છે અને મૂર્ય નક્ષ-
ત્રથી જો ૧।૫।૭।૮।૧૧।૧૫।૧૬ આટલામું ચન્દ્રનક્ષત્ર હોતાં જે
રવિયોગ વને છે તે પ્રાણહાનિ કરે છે, જે ત્યાજ્ય છે

રવિયોગ ફલ—

इक कस्स भये पंचाणणस्स, भज्जंति गयघडसहस्सं ।
तह रवि जोगणणट्ठा, गयणंमि गहा न दीसंति । ४३० ॥
एआण फलं कमसो, विडलं सुक्खं जओ य सत्तूणं ।
लाभो य कज्जसिद्धी, पुत्तुप्पत्ती य रज्जं च ॥ ४३१ ॥

માંટી૦—એક સિંહના મયથી જેમ હજાર હાથીઓની ઘટા
માગે છે તેમ રવિયોગથી આકાશમાં માગેલા પ્રહો દૃષ્ટિગોચર થતા
નથી. આ રવિયોગોનું ફલ અનુક્રમે આ પ્રમાણે છે-૪ થા રવિયોગથી
થતું સુખ, ૬ઠ્ઠાથી શત્રુઓનો વિજય, ૯માથી લાભ-ધનપ્રાપ્તિ, ૧૦
માથી ઇષ્ટ કાર્ય સિદ્ધિ, ૧૩ માથી પુત્રોત્પત્તિ અને ૨૦ મા રવિયોગથી
રાજ્યપ્રાપ્તિ સુધિનું ફલ મળે છે.

૨ કુમારયોગ—

योगઃ કુમારનામા, શુભઃ કુજ્જેન્દુશુક્રવારેષુ ।
અશ્વ્યાઘૈ દ્વર્ષન્તરિતૈર્નન્દા-દશ પચ્ચમીતિધિષુ ॥૪૩૨॥

भा०टी०—मंगल, बुध, सोम, शुक्र पैकीनो कोइ वार, अश्विनी, रोहिणी, पुनर्वसु, मघा, हस्त, विशाखा, मूल, श्रवण, पूर्वाभाद्रपदा आ नक्षत्रो पैकीनुं कोइ नक्षत्र अने नन्दा (१६।११) पांचम, दशम आ तिथिओ पैकीनी कोइ तिथी, आ त्रणना योगे कुमारयोग उपजे छे, कुमारयोग धार्मिक अने मांगलिक कार्योमां शुभ गणाय छे.

कुमारयोगफल

बंगालमुनिप्रोक्तः कुमारयोगो दिने सदोषेऽपि ।

अस्मिन् कार्यं कार्यं, दीक्षायात्राप्रतिष्ठादि ॥४३३॥

भा०टी०—कुमारयोग बंगाल देशीय मुनिओए कहेलो छे, दोषवाला दिवसे पण आ कुमारयोगमां दीक्षा, यात्रा, प्रतिष्ठा आदि कार्यो करवां, मूलमां आवेल 'आदि' शब्दथी विद्याग्रहण, मैत्री, प्रतिमाप्रवेश, गृहप्रवेश आदि दरेक स्थिर कार्यो कुमारयोगमां करवाथी कार्य सिद्धि थाय छे अने कर्त्तनि यश मळे छे.

३ राजयोग-

राजयोगो भर पयाद्यै, द्वयन्तरैर्भैः शुभावहः ।

भद्रातृतीयाराकासु, कुजज्ञभृगुभानुषु ॥ ४३४ ॥

भा०टी०—भरणीथी मांडी बे बेने आंतरे रहेल नक्षत्रो अर्थात् भरणी, मृगशिरा, पुष्य पूर्वाफाल्गुनी, चित्रा, अनुराधा, पूर्वाषाढा, धनिष्ठा उत्तराभाद्रपदा आ नक्षत्रो, भद्रा तिथि अर्थात् द्वितीया सप्तमी, द्वादशी, तृतीया अने पूर्णिमा आ तिथिओ अने मंगल बुध, शुक्र अने सूर्यवार, आ त्रण पैकीनुं काइ पण नक्षत्र कोइ पण तिथि अने कोइ पण वार आवतां राजयोग बने छे.

राजयोग फल-

रविजोगराजजोग-कुमार जोगेसु सुद्धदिअहे वि ।

जं सुहकजं कीरइ, तं सव्वं बहु फलं होइ ॥ ४३५ ॥

भा०टी०—रवियोग राजयोग अने कुमारयोगोमां अने शुद्ध दिवसे जे शुभ कार्य कराय छे ते सर्व घणुं ज सफल थाय छे, अहियां शुभ कार्य तरीके लघु-क्षिप्र नक्षत्रोमां करवानां कार्यो, मांगल्य कार्यो, धार्मिक क्रियाओ, पौष्टिककार्यो, क्षैत्रारंभ, गृहारंभ-निर्माण, भूषणपरिधान आदि कार्यो करवां.

४ .अमृतसिद्धियोग-

हस्त-सौम्याऽश्विनीमैत्र-पुष्य-पौष्ण विरश्चिभैः ।

भवत्यमृतसिद्ध्याख्यो, योगः सूर्यादिचारगैः ॥४३६॥

भा०टी०—रविवारे हस्त, सोमवारे मृगशिरा, मंगलवारे अश्विनी, बुधवारे अनुराधा, गुरुवारे पुष्य, शुक्रवारे रेवती अने शनि-वारे रोहिणी वडे अमृतसिद्धिनामनो योग बने छे.

अमृतसिद्धिनुं बल-

भद्रासंवर्तकाद्यैश्च, सर्वदुष्टेषु वासरे ।

योगोऽस्त्यमृतसिद्ध्याख्यः, सर्वदोषक्षयस्तदा ॥ ४३७ ॥

भा०टी०—भद्राकरण, संवर्तकादि अशुभ योगोथी सर्वप्रकारे दूषित थयेल दिवसे पण जो अमृतसिद्धि योग छे तो सर्व दोषोनो क्षय थइ जाय छे.

आ वचन अमृतसिद्धिनुं प्राशस्य वतावे छे, वास्तवमां भद्रा, व्यतिपात, वैधृत जेवा सर्वघातक योगोनुं बल हटाववानी शक्ति अमृतसिद्धिमां पण नथी, आ संबंधमां ग्रन्थान्तरमां कहुं छे-

हन्त्यमृताख्यो योगः, सर्वाण्यशुभानि लीलया नियतम् ।

न भवति पुनरिह शक्तो, वैधृतिविष्टिद्यतीपाते ॥४३८॥

भा०टी०—अमृतसिद्धियोग नियमपूर्वक सर्व अशुभ योगोनो विनाश करे छे षण वैधृति, विष्टि (भद्रा) अने व्यतिपातना दोषने हणवाने ए षण समर्थ थतो नथी.

५ सिद्धियोग

मूलश्रुत्युत्तराभाद्र-कृत्तिकादित्यभाग्यभैः ।

सस्वातिकैः क्रमात् सिद्धि-योगाः सूर्यादिवारगैः ॥४३९॥

भा०टी०—मूल, श्रवण, उत्तराभाद्रपदा, कृत्तिका. पुनर्वसु, पूर्वाफाल्गुनी अने स्वाति ए नक्षत्रो अनुक्रमे रवि, सोम, मंगल, बुध, गुरु. शुक्र शनिवारे आवे तो सिद्धियोग उपजे छे, रविए मूल, भोमे श्रवण, मंगले उत्तराभाद्रपदा, बुधे कृत्तिका, गुरुए पुनर्वसु, शुक्रे रेवती, शनिए रोहिणीथी वनता सिद्धियोगो बीजे नंबरे अमृत-सिद्धि जेवा छे.

६ स्थिरयोग-

स्थिरयोगः शुभो रोगो-च्छेदादौ शनिजीवयोः ।

त्रयोदश्यष्टरिक्तासु, द्वयन्तरैः कृत्तिकादिभैः ॥४४०॥

भा०टी०—शनि, गुरुवार, तेरस, अष्टमी, चौथ, नोम, चौदश तिथि अने कृत्तिका, आर्द्रा, आश्लेषा, उत्तराफाल्गुनी, स्वाति, ज्येष्ठा, उत्तराषाढा, शतभिषा, रेवती, आ नक्षत्रोना योगथी स्थिर योग बने छे, आ योग रोगनिवृत्ति आदिना कामोमां शुभ गणाय छे.

स्थिरयोगनो विषय-

अपुनःकरणं येषा-मनशन-संग्राम-वैरमुख्यानाम् ।

अर्थास्त एव कार्या, विबुधैरनिशं स्थविरयोगे ॥ ४४१ ॥

भा०टी०—जे कामो फरीथी करवा जेवां न होय तेज कामो विद्वानोए स्थविर (स्थिरयोगलुं बीजुं नाम) योगमां करवां, जेवां के अनशन (अन्त समयनो आहार त्याग) युद्ध, वैरभाव प्रमुख.

ए विषयमां पाकश्री ग्रन्थमां आ प्रमाणे लखेल छे ।
अणमण-खिल-वाहि-रिण रिउ रण-दिव्व-जलासए बंधो ।
कायव्वो थिरजोगे, जस्स य करणं पुणो णत्थि ॥ ४४२ ॥

भा०टी०—अनशन, क्षेत्रशोधन, व्याधिनो प्रतिकार, शत्रुनो प्रतिकार, रिण चुकावहुं, युद्ध, दिव्य-क्रोशपानादि करवुं, जलाशय बांधवो ए सर्व कार्यो अने जे कार्यो फरी करवानां न होय तेवां सर्व कार्यो स्थिर योगमां करवां.

उक्त कार्यो के ते प्रकारनां ज बीजां कार्योमां ज आ योगलेवो पण बीजा कार्योमां-खास करीने शुभ कार्योमां-जे बार बार करवानां होय तेवां विवाह, प्रतिष्ठा, दीक्षा, आदिमां ए योग वर्जवो आ स्थविर योग शुभ नथी तेम अशुभ पण नथी तेथी शुभयोगोना अन्ते अने अशुभ योगोना प्रारंभ पूर्वे लख्यो छे.

प्रकीर्ण अशुभ योगो-

उत्पात-मृत्यु-काण-योगो-

राधाव्यवासवात् पौष्ण-ब्राह्मेज्यार्यमभात् क्रमात् ।
त्रिषुत्रिष्वर्कतो योगा, उत्पात-मृत्यु-काणकाः । ४४३ ॥

भा०टी०—विशाखा, पूर्वाषाढा, धनिष्ठा, रेवती, रोहिणी, पुष्य, उत्तराफाल्गुनी, आ सात नक्षत्रोथी शरु थतां त्रण त्रण नक्षत्रो अनुक्रमे रवि सोम मंगल बुध, गुरु, शुक्र, शनिवार आवतां क्रमेण उत्पात मृत्यु काण, ए त्रण त्रण योगो उपजे छे. जेम के रविवारे विशाखा होय तो उत्पात, अनुराधा होय तो मृत्यु, ज्येष्ठा होय तो काण, सोमवारे पूर्वाषाढाए उत्पात, उत्तराषाढा ए मृत्यु, अभिजिते काण, मंगलवारे धनिष्ठाए उत्पात, शतभिषाए मृत्यु, पूर्वाभाद्रपदा-ए काण. एज प्रमाणे बुधवारे रेवतीथी उत्पातादि त्रण, गुरुवारे

रोहिणीथी उत्पातादि व्रण, शुक्रवारे पुष्यथी उत्पातादि व्रण अने शनिवारे उत्तराफाल्गुनीथी उत्पातादि व्रण योगो धाय छे ते स्वर्ण जाणी सेवा.

यमघण्टयोग—

मघा-विशाखाद्रांमूल-कृत्तिका-रोहिणी-करैः ।

रव्यादिवारसंयुक्तै-र्यमघण्टो भृशाऽशुभः ॥ ४४४ ॥

भा०टी०—मघा विशाखा आर्द्रा मूल कृत्तिका रोहिणी हस्त आ नक्षत्रो अनुक्रमे रवि सोम मंगल बुध गुरु शुक्र शनिवारे आवे तो यमघण्ट नामक योग बने छे जे घणो ज अशुभ होय छे.

वज्रमुसल योग—

याम्य-चित्रोत्तराषाढा, वासवार्यमशाक्रमैः ।

रेवती सहितैर्वज्र-मुसलोऽर्कादिवारगैः ॥४४५॥

भा०टी०—भरणी, चित्रा, उत्तराषाढा धनिष्ठा उत्तराफाल्गुनी ज्येष्ठा रेवती आ सात नक्षत्रो अनुक्रमे रवि सोम मंगल बुध गुरु शुक्र शनिवारे आवे तो वज्रमुसल योग उपजे छे, आ योगनुं बीजुं नाम ग्रहजन्मनक्षत्र योग छे.

क्रकच योग—

यत्र संख्यायुतौ वार-तिथ्योर्जातास्त्रयोदश ।

ज्ञेयः क्रकचयोगोऽयं, हेयश्च शुभकर्मसु ॥४४६॥

भा०टी०—ज्यां वार तिथिना अंकने जोडतां जो १३ नी संख्या थाय तो जाणवुं के ते दिवसे क्रकच योग छे, रवि वारस, सोम अग्यारस, मंगल दशम, बुध नवमी, गुरु अष्टमी, शुक्र सप्तमी अने शनि षष्ठीना आंकोनी संख्या १३ आवे छे एटले आ वार अने तिथिओना योगे क्रकच योग बने छे आ क्रकचयोग शुभ कार्योमां वर्जवो जोइये.

વજ્રપાતયોગ—

વજ્રપાતં ત્યજેદ્ દ્વિત્રિ-પચ્ચષ્ટસસમે તિથૌ ।

મૈત્રેઽથ ષ્યુત્તરે પૈત્ર્યે, બ્રાહ્મે મૂલકરે ક્રમાત્ ॥૪૪૭॥

મા૦ટી૦—વીજ ત્રીજ પાંચમ છઠ સાતમ તિથિએ અનુક્રમે અનુરાધા, વ્રણ ઉત્તરા, મઘા, રોહિણી અને મૂલ તથા હસ્ત નક્ષત્ર આવતાં વજ્રપાતનામક યોગ બને છે જે વર્જ્ય છે.

સંવર્તકયોગ—

પ્રતિપન્નિતયે સૌમ્યે, સસમ્યાં શનિ-જીવયોઃ ।

ષષ્ટ્યાં ગુરૌ દ્વિતીયાયાં, શુક્રે સંવર્તકો ભવેન્ ॥૪૪૮॥

મા૦ટી૦—પ્રતિપદા દ્વિતીયા તૃતીયા આ તિથિઓએ બુધવાર હોય, સપ્તમીએ શનિ અથવા ગુરુવાર હોય, પષ્ટીએ ગુરુવાર હોય અથવા દ્વિતીયાતિથિએ શુક્રવાર હોય તો સંવર્તક યોગ ઉપજે છે તે વર્જિત કરવો.

કાલમુખી તિથિ—

ચલત્થિઉત્તર પંચમીમઘા, કિન્તિપનવમીઠ્ઠ તદ્વ્યઅણુરાહા ।

પંચમી રોહિણીસહિયા, કાલમુહી જીવનાશયરી ॥૪૪૯॥

મા૦ટી૦—ચતુર્થી ઉત્તરાફાલ્ગુની ઉત્તરાષાઢા અને ઉત્તરામાદ્ર-પદા સહિત હોય. પંચમી મઘા સહિત, નવમી કૃત્તિકા સહિત, તૃતીયા અનુરાધા સહિત અને પંચમી રોહિણી સહિત હોય તો તે કાલમુખી તિથિ ગણાય છે. જે જીવ નાશ કરી છે.

જ્વાલામુખ તથા દગ્ધયોગ—

ચતુર્થી ચોત્તરાયુક્તા, મઘાયુક્તા તુ પચ્ચમી ।

તૃતીયાઽનુરાધા ચ, નવમ્યા સહ કૃત્તિકા ॥૪૫૦॥

૧ આરંભસિદ્ધિવાર્તિકમાં પાઠાન્તર નીચે મુજબ છે—અટ્ટમિ રોહિણી સહિયા, કાલમુહી જોગિમાસ છગિમચ્ચૂ ॥

अष्टम्या रोहिणीयुक्ता, योगो ज्वालामुखाभिधः ।

त्याज्योऽयं शुभकार्येषु, गृह्यते त्वशुभे पुनः ॥४५१॥

एकादश्यामिन्दुवारो, द्वादश्यामर्कवासरः ।

षष्ठ्यां बृहस्पतेर्वारस्तृतीया बुधवासरे ॥४५२॥

अष्टमी शुक्रवारे तु, नवमी शनिवासरे ।

पञ्चमी भौमवारे च, दग्धयोगाः प्रकीर्तिताः ॥४५३॥

भा०टी०--उत्तरात्रय सहित चतुर्थी, मघा युक्ता पंचमी, अनुराधा सहित तृतीया, कृत्तिका युक्त नवमी, रोहिणी युक्त अष्टमी होय तो 'ज्वालामुख' नामक योग उत्पन्न थाय छे. आ योग शुभ कार्योभां वर्जवो अने अशुभमां लेवो. एकादशीअे सोमवार, द्वादशीअे रविवार, षष्ठीअे गुरुवार, तृतीयाअे बुधवार, अष्टमीअे शुक्रवार, नवमीअे शनिवार अने पंचमीअे मंगलवार आवतां दग्ध योग बने छे एम शास्त्र कहे छे.

शुभयोग-कोष्ठक

सूर्यनक्षत्रात् ४।६।९।१०।१३।२० तमे चन्द्रनक्षत्रे-रवियोग
सो मं बु शु वारे १।५।६।१०।११। अ रो-पुन-म-ह-वि-मृ-श्र-पू-आ-कुमार०
सू मं बु शु वारे २।३।७।१२।१५ तिथि-भ मृषुपूफाचि अनु-पूषा घउभा-राज०
रवि-हस्त, सो-मृ, मं-अश्वि, बु-अनु, गु-पु, शु-रे, श-रो, अमृत सिद्धि
र-मृ, चं-श्र, मं-उभा, बु-कृ, गु-पुन, शु-रे, शनि रो, सिद्धियोग
गु-श्वारे, ४-८-९-१३-१४ तिथि, कृ आ आश्लेउफास्वा ज्ये उषाश रे स्थिरयोग

अशुभयोग कोष्ठक—

वारं	सू	सो	मं	बु	शु	शु	श	योग
नक्षत्र	वि	पूर्वा	ध	रे	रो	पुष्य	उफा	उत्पात
नक्षत्र	अनु	उषा	श	अ	मृ	आश्ले	इ	मृत्यु
नक्षत्र	ज्ये	अभि	पूर्वा	भ	आर्द्रा	म	चि	काण
नक्षत्र	म	वि	आर्द्रा	सू	कृ	रो	ह	यमघण्ट
नक्षत्र	भ	चि	उषा	ध	उफा	ज्ये	रे	वज्र- मुसल
तिथि	१२	११	१०	९	८	७	६	क्रकच

अशुभयोगो नो परिहार

मृत्यु-क्रकच-दग्धादी-निन्दौ शस्ते शुभाङ्गुः ।

केचिद्यामोसरं चान्ये, यात्रायामेव निन्दितान् ॥४५४॥

भा०टी०—मृत्यु, क्रकच, दग्ध आदि अशुभयोगो चन्द्र शुभ होय तो अशुभ नहीं एम केटलाक विद्वानो कहे छे ज्यारे बीजाओ कहे छे के मृत्यु क्रकचादि योगो (दक्षिण उत्तर दिशाए) यात्रामां ज अशुभ गणाय छे.

अयोगे सुयोगोपि चेत्स्यात्तदानीं,

कुयोगं निहत्यैष सिद्धिं तनोति ।

परे लग्नशुद्धया कुयोगादिनाशं,

दिनाद्धौत्तरं विष्टिपूर्वं च शस्तम् ॥४५५॥

भा०टी०—कुयोगमां शुभयोगो भेगा होय तो कुयोगनो नाश करी सुयोग कार्य सिद्धि करे छे, अन्य आचार्यो कहे छे के लग्नशुद्धि

कुर्यादिति नाशं थाय छे अने विष्टि आदि अपयोगो मध्याह्न फळी अशुभ फल आपता नथी.

अथ वसिष्ठोक्ताः शुभयोगाः—

तिथि-नक्षत्रजन्य शुभयोग—

नन्दास्वेषुप-चिन्नाग्नि-रौद्रविष्णूत्तराश्रय १ ।

वारयोगा भवन्त्येते, सर्वकार्ये शुभप्रदाः । ४५६॥

भा०टी०— १।६।११ आ नन्दातिथिओ तथा शतभिषा, चित्रा, कृत्तिका, आर्द्रा, श्रवण, उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तरा भाद्रपदा, आ नक्षत्रोना योगथी 'वारयोगो' बने छे आ वारयोगो सर्वकामोमां शुभ फल आपनारा छे.

भद्रास्वदितिदैत्येज्ये, कमलासन तारकाः ।

श्रेष्ठयोगा भवन्त्येते, सर्वदा मंगलप्रदाः ॥४५७॥

भा०टी०—भद्रातिथिओ (२।७।१२) मां पुनर्वसु, मूल, पुष्य, रोहिणी आ नक्षत्रो होय तो 'श्रेष्ठयोग' नामक योगो बने छे जे सदा मंगल आपनारा होय छे.

जयास्तु वसुसोमार्क-दक्षान्त्येज्यभत्र्युत्तराः ॥

शुभयोगास्त्वमी नृणां, मंगले मंगलप्रदाः ॥४५८॥

भा०टी०—जया (३।८।१३) तिथिओमां धनिष्ठा, मृगशिरा, हस्त, अश्विनी, रेवती, पुष्य, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा उत्तराभाद्र-पदा आ नक्षत्रो आवे छे त्यारे शुभयोगो बने छे आ योगो मंगल कार्योमां मंगल आपनारा छे,

रिक्तास्वीज्यद्विदेवेन्द्र-सार्पवायव्यतारकाः ॥

तदा कल्याणयोगाः स्युः, सर्वकार्येषु शोभनाः ॥४५९॥

भा०टी०—रिक्ता (४।९।१४) तिथिओमां पुष्य, विशाखा, ज्येष्ठा, आश्लेषा, स्वाति आ नक्षत्रो आवे त्यारे सर्वकार्योमां शुभफल-

दायक 'कल्याण ढोग' नामक योगो उपजे छे.

उत्तरात्रयमैत्रेज्य-दस्त्रान्त्येन्द्रश्रितारकाः ।

भौमवारेण संयुक्ताः पूर्णयोगाः प्रकीर्तिताः ॥४६०॥

भा०टी०—उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपदा, अनुराधा, पुष्य, अश्विनी, रेवती, मृगशिरा, कृत्तिका आ नक्षत्रो मंगलवार साथे होय त्यारे पूर्णयोगो उत्पन्न थाय छे.

बुधवारे सुरेज्येन्दु-धातृबह्नित्रिरुत्तराः ।

हस्तत्रयानलास्ताराः, शंखयोगाः प्रकीर्तिताः । ॥४६१॥

भा०टी०—बुधवारे पुष्य, मृगशिरा, रोहिणी, कृत्तिका, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपदा, हस्त, चित्रा, स्वाति, आ नक्षत्रो आवे त्यारे शंखयोगो उपजे छे.

गुरुवारेऽदितीज्यार्क-त्रयमित्रान्त्यतारकाः ।

श्रवणत्रयमित्येते, योगाश्चामृतसंज्ञकाः ॥४६२॥

भा०टी०—गुरुवारे पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, चित्रा, स्वाति, अनुराधा रेवती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा आ नक्षत्रो होय त्यारे 'अमृतयोग' उपजे छे.

रेवतीद्वयहस्तेन्दु-धातृ-मित्रत्रिरुत्तराः ।

शुक्रवारेण संयुक्ताः पद्मयोगाः प्रकीर्तिताः ॥४६३॥

भा०टी०—रेवती, अश्विनी, हस्त, मृगशिरा, रोहिणी, अनुराधा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपदा आ नक्षत्रो सहित शुक्रवार होय त्यारे पद्मयोगो उत्पन्न थाय छे.

पूर्णासु पुष्यपौष्णाद्य-वसुवारीशतारकाः ।

वर्धमानाह्वया योगाः, शुभकार्यप्रवृद्धिदाः ॥४६४॥

भा०टी०—पूर्णा (५।१०।१५) तिथिओमां पुष्य, रेवती.

अश्विनी, धनिष्ठा शतभिषा ए नक्षत्रो आवे त्यारे शुभकार्यनी वृद्धि करनारा ' वर्धमान ' नामक योगो उत्पन्न थाय छे.

धार-नक्षत्रजन्य शुभयोग

उत्तरात्रयपौष्णेज्य-मूलार्कहरितारकाः ।

चित्रेन्द्रदितयः सौम्या, योगाः स्युर्भानुवासरे ॥४६५॥

भा०टी०—उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपदा, रेवती, पुष्य, मूल, हस्त, श्रवण, चित्रा, मृगशिरा, पुनर्वसु आ नक्षत्रो रवि-वारे होय तो ' सौम्ययोगो ' उत्पन्न थाय छे.

सोमवारेऽदितिमरुद्वैष्णवत्रयतारकाः ।

रोहिणीद्वयशाक्रेज्या, महायोगाः प्रकीर्तिताः ॥४६६॥

भा०टी०—सोमवारे पुनर्वसु, स्वाति, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा रोहिणी, मृगशिरा, ज्येष्ठा, पुष्य आ नक्षत्रो होय त्यारे ' महायोग ' संज्ञक योगो उपजे छे.

रोहिणीद्वयपुष्येन्द्र-विष्णुत्रयमघोत्तराः ।

शनिवारेण संयुक्ता, योगाश्चानन्दसंज्ञकाः ॥४६७॥

भा०टी०—रोहिणी मृगशिरा, पुष्य, ज्येष्ठा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, मघा, उत्तराफाल्गुनी उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपदा आ नक्षत्रो शनिवार सहित होय त्यारे आनन्द संज्ञक योगो उपजे छे.

हस्तेन्दुदस्रमित्रेज्य-पौष्णपद्मजतारकाः ।

आदित्यादिषु वारेषु, सिद्धियोगाः प्रकीर्तिताः । ४६८॥

भा०टी०—आदित्य सोम, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनिवारे अनुक्रमे हस्त मृगशिरा अश्विनी अनुराधा पुष्य रेवती रोहिणी आ नक्षत्र आवे त्यारे ' सिद्धियोग ' उपजे छे, पाछलना ग्रन्थकारो आ ' सिद्धियोग ' ने अमृतसिद्धि ' ना नामथी वर्णवे छे.

મૂલહર્યુસરાભાદ્ર-કૃત્તિકાદિતયઃ ક્રમાત્ ।

ભાગ્યાનિલાલ્યાઃ પીયૂષ-યોગા વારેષ્વિનાદિષુ ॥૪૬૯॥

આંટી૦— સૂર્યવારે મૂલ, સોમે શ્રવણ, મોમે ઉત્તરાભાદ્રપદા, બુધે કૃત્તિકા, ગુરુવારે પુનર્વસુ, શુક્રવારે પૂર્વાફાલ્ગુની, શનિવારે સ્વાતિ નક્ષત્ર હોય ત્યારે 'પીયૂષયોગ' નામક યોગો ઉત્પન્ન થાય છે.

આ 'પીયૂષયોગો' આજકાલ સિદ્ધિયોગો રૂપે ઓલખાય છે.

તિથિ-વારજન્ય શુભયોગ

નન્દામૌમાર્કયોર્મદ્રા, શુક્રેન્દ્રોશ્ચ જયા બુધે ।

શુભયોગા ગુરૌ રિક્તા, પૂર્ણા મન્દેઽમૃતાહ્યા ॥૪૭૦॥

આંટી૦—મંગલ તથા રવિવારને દિવસે નન્દા (૧૬।૧૧)

તિથિઓ, શુક્ર તથા સોમવારે મદ્રા (૨।૭।૧૨) તિથિઓ, બુધવારે જયા (૩।૮।૧૩) તિથિઓ, ગુરુવારે રિક્તા (૪।૯।૧૪) તિથિઓ અને શનિવારે પૂર્ણા (૫।૧૦।૧૫) તિથિઓ શુભયોગાત્મક બની 'અમૃતાતિથિઓ' ઇ નામ પ્રાપ્ત કરે છે.^૧

શુક્રજ્જકુજમન્દેજ્ય-વારા નન્દાદિષુ ક્રમાત્ ।

સિદ્ધાતિથિઃ સિદ્ધિદા સ્યાત્, સર્વકાલેષુ સર્વદા ॥૪૭૧॥

આંટી૦—શુક્રવારે નન્દા (૧૬।૧૧), બુધવારે મદ્રા (૨-૭।૧૨), મંગલવારે જયા (૩।૮।૧૩), શનિવારે રિક્તા (૪।૯।૧૪), અને ગુરુવારે પૂર્ણા (૫।૧૦।૧૫) તિથિઓ હોય ત્યારે તે 'સિદ્ધા તિથિ' ઇ નામથી ઓલખાય છે અને સદાકાલ તે સિદ્ધિદાયક હોય છે.

૧ વસિષ્ઠ નારદાદિકો પોતાની સંહિતાઓમાં અમૃતા જ લખી ગયા છે, પણ નારદસંહિતાના કોઈ અશુદ્ધ પુસ્તકના 'મૃતિપ્રદા' આવા પાઠથી વ્યામોહિત થઈ અર્વાચીન મન્યકારોએ આ વાર-તિથિઓને 'મૃતિપ્રદા' ના 'મૃત્યુયોગા' આવી સિદ્ધાન્ત નક્કી કરીને વર્જ્ય કર્યા છે, વસિષ્ઠે ગુણનિરુપણાધ્યાયમાં આ યોગો નું નિરૂપણ કર્યું હોવાથી આ યોગો શુભ છે એજ સત્ય વસ્તુ સમજવી.

तिथि-नक्षत्रजन्य शुभयोग कोष्ठक—

तिथयः—	नक्षत्राणि—	योगनामानि
नन्दा-१।६।११	कृआउफा।चिउषा।श्राश।उभा।	वारयोग
भद्रा-२।७।१२	रो।पुन।पुष्य।मूल।	श्रेष्ठयोग
जया-३।८।१३	अश्वि।मृ।पु।उफा।हाउषा।धाउभारे।	शुभयोग
रिक्ता-४।९।१४	पु।अ।श्ले।स्वा।वि।ज्ये।	कल्याणयोग
पूर्णा-५।१०।१५	अश्वि।पु।ध।श।रे।	वर्धमानयोग

वार-नक्षत्र जन्य शुभयोग कोष्ठक—

वाराः—	नक्षत्राणि—	योगनाम
रविवारे	मृपुन।पु।उफा।हा।चि।उषा।मृ।श्रा।उभारे।	सौम्ययोग
सोमवारे	रो।मृ।पुन।पु।स्वा।ज्ये।श्रा।धा।श।	महायोग
मंगलवारे	अश्वि।कृ।मृ।पु।उफा।अनु।उषा।उभारे।	पूर्णयोग
बुधवारे	कृ।रो।मृ।पु।उफा।हा।चि।स्वा।उषा।उभा।	शंखयोग
गुरुवारे	पुन।पु।हा।चि।स्वा।अनु।श्रा।धा।शारे।	अमृतयोग
शुक्रवारे	अश्वि।रो।मृ।उफा।हा।अनु।उषा।उभारे।	पद्मयोग
शनिवारे	रो।मृ।पु।मा।उफा।ज्ये।उषा।श्रा।धा।शा।उभा।	आनन्दयोग

वारेषु	नक्षत्राणि	योगनाम
र चं मं बु गु शु श	हाम्नाअश्विअनुपुारेरो ।	सिद्धियोग
र चं मं बु गु शु श	मूश्राउभाकृपुनापूफास्वा ।	पीयूषयोग

तिथि-वारजन्य शुभयोग कोष्टक—

सू	सो	मं	बु	गु	शु	श	योगनाम
नन्दा १।६।११	भद्रा २।७।१२	नंदा १।६।११	जया ३।८।१३	रिक्ता ४।९।१४	भद्रा २।७।१२	पूर्णा ५।१०।१५	अमृतानिधि
०	०	जया ३।८।१३	भद्रा २।७।१२	पूर्णा ५।१०।१५	नन्दा १।६।११	शिक्षा ४।९।१४	सिद्धानिधि

ग्रह-कृत शुभयोग

लग्नमालोकयेज्जीवस्त्वथवा लग्नगो बली ।
 वापीयोगः स विज्ञेय-स्त्वधिमित्रगृहस्थितः ॥४७२॥
 गुरुर्बली स्वलग्नस्थो, वीक्षयेद्वा विलग्नः
 पुण्डरीको महायोगः, सर्वदा योगनायकः ॥४७३॥
 शुभवर्गस्थितो जीवः, सुबली सौम्य वीक्षितः ॥
 गुणशेखरसंज्ञोऽयं, योगो वा केवलं बली ॥४७४॥
 एवं शुक्रोऽपि सौम्योऽपि, गुरुवद्योगकारकौ ।
 ग्रन्थविस्तरभीत्याऽथ, त्वेवं संक्षिप्य चोदितम् ॥४७५॥
 वगोऽसमगतो जीवः, शुक्रो वा चन्द्रजोऽपि वा ।
 गुणधूर्जटिसंज्ञोऽयं, यदा ते बलिनस्तदा ॥४७६॥
 भा०टी० गुरु बलवान् थइने लग्ने जोतो होय अथवा ते लग्न-
 स्थित होय अने अधिमित्रना घरनो होय तो वापीयोग धाय छे, गुरु

स्वगृही होइ लग्नस्थित होय अथवा लग्ने जोतो होय तो पुण्डरीक-
नामक महायोग बने छे जे सर्वदा योगनायक होय छे. गुरु बलवान
थइ शुभवर्गनो होय, सौम्यदृष्ट होय, वा केवल बला होय तो पण
गुणशेखरयोग कारक थाय छे. एज प्रकारे शुक्र तथा बुध पण उक्तयोग
कारक थाय छे, पण ग्रंथ वधवाना भयर्था लख्युं नथी. गुरु शुक्र के
बुध बलवान थइ वर्गोत्तमांशमां रखा होय तो प्रत्येक गुणधुर्जटियोग
कारक थाय छे.

बलिनः केन्द्रगाः सौम्या, भवन्ति च यदा तदा ।

गुणभास्कर संज्ञोऽयं, यदि वा लाभसंस्थिताः ॥४७६॥

वर्गोत्तमगतश्चन्द्रो, बलवाच्छुभवीक्षितः ।

लग्नमेवंविधं चेद्वा, गुणानां चन्द्रशेखरः ॥४७७॥

त्रि-षष्ठ-लाभगाः पापाः, बलिनः शुभवीक्षिताः ।

भवन्ति यदि योगोऽयं, श्रीवत्सो योगराट् प्रभुः ॥४७८॥

उच्चैस्थो लाभगः सूर्यः, षष्ठगो वा तृतीयगः ।

यदि स्यात् सिंहयोगोऽयं, तुंगांशस्थोऽपि वा यदि ॥४७९॥

लाभस्थितो यदा सूर्यश्चन्द्रो वाप्येक एव सः ।

गुणसागर योगोऽयं, यदा भवति चेद् बली ॥४८०॥

भा०टी०—बलवान् थइ सौम्यग्रहो केन्द्रमां रखा होय अथवा
लाभ स्थित होय तो गुणभास्कर योग उत्पन्न थाय छे. चन्द्र वर्गो-
त्तमांशमां होय, बलवान होय अने सौम्यदृष्ट होय अथवा लग्न अ
प्रकारतुं होय तो चन्द्रशेखर योग बने छे. पापग्रहो शुभदृष्ट अने बल-
वान थइ त्रीजे छट्ठे के अग्यारमे आ स्थानोमां रखा होय तो योगोनो
राजा श्रीवत्सयोग बने छे. उच्चस्थित सूर्य लाभस्थित होय, वा त्रीजे
के छट्ठे होय अथवा उच्चांशस्थित होय तो सिंहयोग निष्पन्न थाय

छे. सूर्य वा चन्द्र बेमांथी एक बलवान थइने लाभ स्थानमां रखा होय तो गुणसागर योग थाय छे.

पुष्यस्याऽथ द्वितीयांश-संस्थितौ चन्द्रवाक्पती ।

विजयो नाम योगोऽयं, समरे विजयप्रदः ॥४८१॥

परमोच्चगतोऽप्येको, जीवो वा ज्ञः सितोऽपि वा ।

ब्रह्मदण्डो महायोगः, सर्वदोषविनाशकृत् ॥४८२॥

मूलत्रिकोणगाः सौम्या, भवन्ति यदि वा शशी ।

प्रभंजनो महायोगस्त्वथवापि तदंशगाः ॥४८३॥

मूलत्रिकोणगाः पापा-स्त्रियष्टायगता यदि ।

इन्द्रदण्डो महायोगस्तदंशकगतो अपि ॥४८४॥

मुहूर्तश्चाष्टमः शश्वदभिजियोगसंज्ञकः ।

गुणानामधिपः सोऽपि, मध्यंदिनगते रवौ ॥४८५॥

भा०टी०—पुष्य नक्षत्रना मथम चरणमां चंद्र अने द्वितीयमां बृहस्पति रहेला होय छे त्यारे युद्धमां विजय आपनारो विजययोग बने छे. गुरु बुध के शुक्र पैकीनो कोइ पण एक ग्रह परम उच्च अंशमां होय छे त्यारे सर्वदोषनाशक ब्रह्मदंड योग उत्पन्न थाय छे. सौम्य ग्रहो मूलत्रिकोणना होय अथवा चंद्र मूलत्रिकोणमां होय अथवा मूलत्रिकोणना अंशमां होय तो प्रभंजन महायोग बने छे. पापग्रहो मूलत्रिकोण अथवा मूलत्रिकोणना अंशोमां रहेला होय अथवा तो श्रीजे छट्ठे के अग्यारमे होय त्यारे इन्द्रदण्ड महायोग बने छे. दिवसनो आठमो मुहूर्त के जे सूर्य मध्याह्नमां आवे त्यारे आवे छे ते अभिजिद्योग सर्वगुणो नो नायक गणाय छे.

अथ वसिष्ठोक्ता अशुभयोगाः—

वार-नक्षत्रजन्य अशुभयोग

द्विदैव-जल-वस्वन्त्य-ब्रह्मेज्यार्यमतारकाः ।

उत्पातयोगा विज्ञेया, भानुवारादिषु क्रमात् ॥४८६॥

मैत्रविश्वानुवाश्विन्दु-सार्पसूर्याख्यतारकाः ।

मृत्युयोगा मृत्युकराः, सूर्यवारादिषु क्रमात् ॥४८७॥

भा०टी०—रविवारे विशाखा, सोमे पूर्वाषाढा, मंगले धनिष्ठा, बुधे रेवती, गुरुवारे रोहीणी, शुके पुष्य, शनिवारे उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र आवतां उत्पात योगो उपजे छे, अने रविवारे अनुराधा, सोमे-उत्तराषाढा, मंगले पूर्वाषाढा, बुधे स्वाति, गुरुवारे मृगशिरा, शुक्र-वारे आश्लेषा, शनिवारे हस्त, आ नक्षत्रो आवतां मृत्युयोगो उपजेछे.

तिथिवारनक्षत्रजन्य अशुभयोग

ब्रह्मेज्यार्यमवेशाख-हरिवस्वन्त्यभेषु च ।

नन्दायामर्कवारादि-बन्धयोगाः प्रकीर्तिताः ॥४८८॥

भा०टी०—रोहीणी पुष्य उत्तराफाल्गुनी विशाखा श्रवण धनिष्ठा रेवती आ ७ नक्षत्रो अनुक्रमे रवि सोम मंगल बुध गुरु शुक्र शनिवारना दिवसे होय अने साथे नन्दा (१-६-११) पैकीनी कोइ तिथि होय तो ते दिने अन्धयोग बने छे एम जाणवुं.

रुद्रसार्पाबुनैर्ऋत्य-पितृभाग्धाग्निभेषु च ।

भद्रातिथौ काणयोगाः, सूर्यवारादिषु क्रमात् ॥४८९॥

भा०टी०—रवि सोम मंगल बुध गुरु शुक्र शनिवारना दिवसे अनुक्रमे आर्द्रा आश्लेषा पूर्वाषाढा मूल मघा पूर्वाफाल्गुनी कृत्तिका ए नक्षत्र होय अने भद्रा (२-७-१२) तिथि होय तो काणयोगो उपजे छे.

द्विदैवरौद्रमूलेन्द्र-वारिविश्व-पित्रुडुषु ।

जयास्तु पंगुयोगाः स्यु-रर्कवारादिषु क्रमात् ॥४९०॥

भा०टी०—रवि सोम मंगल बुध गुरु शुक्र शनिवारना दिवसोमां अनुक्रमे विशाखा आर्द्रा मूल ज्येष्ठा पूर्वाषाढा उत्तराषाढा-

मघा आ नक्षत्रोनी साथे जया (३१।१३) तिथि आवे तो पंगु-योगो उत्पन्न थाय छे.

अजपात् पितृवहीश-स्वाष्टमिश्रवसुडुषु ।

रिक्तासु बधिरा योगाः, सूर्यवारादिषु क्रमात् ॥४९१॥

भा०टी०—रवि सोम मंगल बुध गुरु शुक्र शनिवारे अनु-क्रमे पूर्वाभाद्रपदा मघा कृत्तिका आर्द्रा चित्रा अनुराधा धनिष्ठा आ नक्षत्रो तथा रिक्ता (४।९।१४) तिथि होय तो बधिरयोगो उपजे छे.

उद्राहादिषु सर्वेषु, मंगलेष्वपि निन्दिताः

एते स्युः षड्विधा योगाः, स्वनामफलदायकाः ॥४९२॥

भा०टी०—विवाह आदिमां अने अन्य पण सर्व मंगल-कामोमां आ योगो निन्दित गणाय छे, उत्पात, मृत्यु, अंध, काण बधिर, पंगु, आ ६ प्रकारना योगो पोतपोताना नाम प्रमाणे फल देनारा छे.

तिथि-वार-जन्य अशुभयोग

द्वादश्येकादशीनाग-गौरी-स्कन्द-वसुष्वपि ।

नवम्यां दग्धयोगाख्या, भानुवारादितः क्रमात् ॥४९३॥

भा०टी०—रविवारे द्वादशी, सोमवारे एकादशी, मंगलवारे पंचमी, बुधवारे तृतीया, गुरुवारे षष्ठी, शुक्रवारे अष्टमी, शनिवारे नवमी, आ तिथिओ दग्धयोगा गणाया छे.

ग्रहजन्मनक्षत्र-अशुभयोग-

भरणी चित्रा विश्वाख्य-वस्वार्यमनगारिषु ।

पौष्णभेष्वाकवारदि-ष्वर्कादिग्रहजन्मभम् ॥४९४॥

भा०टी०—भरणी चित्रा उत्तराषाढा धनिष्ठा उत्तराफाल्गुनी ज्येष्ठा रेवती आ ७ नक्षत्रो सूर्यादि ७ ग्रहोनां जन्मनक्षत्रो छे

तेथी रविवारे भरणी, सोमे चित्रा, मंगले उतराषाढा, बुधे धनिष्ठा, गुरुवारे उतराफाल्गुनी, शुक्रे ज्येष्ठा, तथा शनिवारे रेवती नक्षत्र होय तो ग्रहजन्मनक्षत्र नामक अशुभ योग (ग्रन्थान्तरना मते वज्रमुसक योग) बने छे.

उक्त बन्ने योगोनुं वसिष्ठ फल कहे छे—

अस्मिन् योगद्वये यत् तत्, कृतं कर्म विनश्यति ।
तस्माद् योगद्वयं त्याज्यं, मंगलेश्वपि सर्वदा ॥४९४॥

भा०टी०—दग्धायोग तथा ग्रहजन्मनक्षत्रयोगमां करेल जे ते कार्य विनाश पामे छे माटे उक्त बन्ने योगोने सर्वदा शुभ कार्यामां पण त्याग करवा जोइये.

अचिकित्स्य-गदयोग-

कुजाक्रयोः सप्तमी षष्ठी, चन्द्रे त्रानौ चतुर्थिका ।
द्वितीया त्रेऽष्टमी जीवे, नवमी शुद्धवासरे ॥४९५॥
अचिकित्स्या गदायोगा, मंगलेश्वपि निन्दिताः ॥
भगंदराश्मरीकुष्ठ-क्षयरोगप्रदायकाः ॥४९६॥

भा०टी०—मंगल अने शनिवारे सप्तमी, सोमवारे षष्ठी रविवारे चतुर्थी, बुधवारे द्वितीया, गुरुवारे अष्टमी, अने शुक्रवारे नवमी होय त्यारे 'गद' बने छे. आ योग मंगल कार्योंमां निन्द्य गणाय छे, आ योगमां शुभ कार्य करनारने असाध्य भगंदर, पथरी कोढ, क्षय आदि रोगो उत्पन्न थाय छे.

ग्रहकृत मृत्युयोग

लग्नात् षष्ठाष्टसंस्थे शशिनि सुरगुरौ चापि मन्दे सुतस्थे,
भोमे रन्ध्रस्थितेऽर्के व्ययभवनगते मृत्युगे चन्द्रसूनौ ।

હૂનસ્થે દૈત્યપૂજ્યે સતિ નિશ્ચિલનૃણાં મૃત્યુયોગા ભવન્તિ ।
ત્યાજ્યા દાવાગ્નિરુપાઃ સતતમવિતથં મૃત્યુદા મંગલેષુ ॥૪૯૭॥

આંટી—લગ્ન થકી ચન્દ્ર તથા ગુરુ હઢ્ઢે અથવા આઠમે સ્થાને રહ્યા હોય, લગ્નથી પાંચમા ભવનમાં શનિ હોય, મંગલ આઠમા સ્થાનમાં હોય, સૂર્ય ચારમા ભવનમાં હોય, બુધ આઠમે હોય, શુક્ર સાતમે હોય તો સર્વ મનુષ્યોને માટે દાવાનલ જેવા મૃત્યુયોગો બને છે. જે સ્વરેસ્વર મંગલ કાર્યોમાં મૃત્યુદાયક હોય છે, માટે શુભ કાર્યોમાં ત્યાજ્ય છે. પ્રતિષ્ઠામાં હઢ્ઢે સાતમે ગુરુ અને હઢ્ઢે ચન્દ્ર લીધેલ છે, પણ વિવાહાદિક ઘણા મંગલ કાર્યોમાં હઢ્ઢે ચન્દ્ર-ગુરુ વર્જિત છે અને સાતમે ગુરુને મધ્યમવલી ગણ્યો છે. ઉક્ત સર્વગ્રહો ંક સાથે જ ઉક્ત સ્થાનોમાં પડયા હોય ત્યારે જ મૃત્યુયોગ સ્વરો દાવાનલરૂપ તો બને છે, હઢ્ઢાં ં પૈકીના ંક બે ગ્રહો પણ ઉક્ત સ્થાનોમાં હોય તો પણ અનિષ્ઠકારક તો છે જ, આ મૃત્યુયોગનો અપવાદક 'અમૃતયોગ' છે.

અગ્નિજિહ્વા-વિષ-મહાશૂલયોગાઃ

સસ- વષ્ટયા દિતિથયઃ, સોમવારાદિભિર્યુતાઃ ।
અગ્નિજિહ્વાઃ સસયોગા, મંગલે કુલનાશદાઃ ॥૪૯૮॥
આમુવારાદિભિર્યુક્તાસ્ત્વેતાઃ સ્યુસ્તિથયો યદા ।
વિષયોગાસ્ત્વમી સપ્ત, કાલકૂટવિષોપમાઃ ॥૪૯૯॥
પ્રતિપદ્ બુધવારે ચ, સૂર્યવારે ચ સસમી ।
મહાશૂલાહ્વયો યોગો, વર્જનીયો શુભે સદા ॥૫૦૦॥

આંટી—સોમ મંગલ બુધ ગુરુ શુક્ર શનિના દિવસે અનુક્રમે સસમી વષ્ટી પંચમી ચતુર્થી તૃતીયા દ્વિતીયા પ્રતિપદા ં તિથિઓ હોય તો આ તિથિવારોના યોગથી ૭ અગ્નિજિહ્વા નામક યોગો બને છે, જે મંગલમાં હોય તો કુલનાશક થાય છે અને ઉક્ત તિથિઓ

जो रविधारादिनी साथे होय जेमके रविवारे सप्तमी, सोमवारे षष्ठी, मंगले पंचमी, बुधे चतुर्थी, गुरुअे तृतीया, शुके द्वितीया, शनिवारे प्रतिपदा आवतां सात विषयोगो बने छे जे कालकूट विष जेवा होय छे. बुधवारे पडिषा अने रविवारे सप्तमी होय तो महाशूल योग थाय छे जे शुभकार्यमां वर्जनीय छे.

अशनि योग—

यम-मैत्रादितिभाज-पाद्रुद्रत्वाष्ट्र विष्णुषु ।

सत्स्वर्कादिषु चारेषु, मृत्युदस्त्वशनिः शुभे ॥५०१॥

भा०टी०—रविवारे भरणी, सोमवारे अनुराधा, मंगले पुनर्वसु, बुधे पूर्वाभाद्रपदा, गुरुवारे आर्द्रा, शुके चित्रा, शनिवारे श्रवण, नक्षत्र होय तो मृत्युदायक अशनियोग बने छे.

हालाहलयोगो—

भर्कवारेऽग्निपंचम्योः, सोमे चित्रा-द्वितीययोः ।

कुजेपूर्णेन्दुरोहिण्योः, सप्तमीयाम्ययोर्बुधे ॥५०२॥

गुरौ मित्रत्रयोदशयोः, षष्ठीश्रवणयोः सिते ।

पौष्णाष्टभ्यां शनियुते, योगा हालाहलाभिधाः ॥५०३॥

एषु योगेषु कर्त्तव्यं, धारणं शत्रुसंज्ञके ।

विवाहादिषु कार्येषु, नियतं निधनप्रदम् ॥५०४॥

नक्षत्रलाञ्छितयोग-तिथिनक्षत्रोत्थ—

प्रतिपद्यंशुनक्षत्रे, पंचम्यां वह्निभे सति ।

भष्टम्यामजपाद्धिष्ये, दशम्यां ब्रह्मभे यदि ॥५०५॥

द्वादश्यां सार्वनक्षत्रे, त्रयोदशयर्षमर्क्षयोः ।

नक्षत्रलाञ्छितो योगो, देवानामपि नाशदः ॥५०६॥

भा०टी०—रविवारे कृत्तिका पांचम, सोमे चित्रा बीज. मंगले पूनम रोहिणी, बुधे भरणी सातम, गुरुवारे रोहिणी तेरस, शुके श्रवण छठ, शनिवारे रेवती आठमनो योग थतां तिथिवारनक्षत्रजन्य, 'हालाहल' योगो उपजे छे. आ योगोमां क्रूर कर्म सकल थाय, विवाहादि शुभ कार्योमां आ योगो मृत्युदायक निवडे छे.

प्रतिपदाए पूर्वाषाढा, पंचमीए कृत्तिका, अष्टमीए पूर्वाभाद्रपदा, दशमीए रोहिणी, बारसे आश्लेषा, तेरमे उत्तमफाल्गुनी नक्षत्र होय तो नक्षत्रलांछित नामा अशुभ योग उपन्न थाय छे जे देवोनी पण नाशक छे.

बार-नक्षत्रसमुत्थ अशुभयोग—

द्विदैवमित्रचान्द्रेन्द्र वह्निसार्पभतारकाः ।
 रविवारेण संयुक्ता, वर्जनीयाः प्रयत्नतः ॥५०७॥
 आषाढद्वयवह्नीज्य-द्विदैवपितृतारकाः ।
 सोमवारेण संयुक्ताः, शुभकर्मविनाशदाः ॥५०८॥
 ज्येष्ठाजपादश्रवण-धनिष्ठाद्राहि तोयपाः ।
 भौमवारेण संयुक्ताः, सर्वमंगलनाशदाः ॥५०९॥
 अश्विनीभरणीमूल-पौष्णवस्वार्द्र तारकाः ।
 बुधवारेण संयुक्ताः, सर्वशोभननाशदाः ॥५१०॥
 धर्ममारोहिणीत्वाष्ट्र-धातुचन्द्राख्यतारकाः ।
 गुरुवारेण संयुक्ताः, शोभने निधनप्रदाः ॥५११॥

भा०टी०—रविवारे विशाखा, अनुराधा, मृगशिरा, ज्येष्ठा कृत्तिका, आश्लेषा ए नक्षत्रो शुभ कार्योमां प्रयत्नपूर्वक वर्जवां. सोमवार सदित पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा, कृत्तिका, पुष्य, विशाखा, मघा आ नक्षत्रो शुभ कार्योमां नाश देनारां थाय छे. मंगले ज्येष्ठा, पूर्वाभाद्र-

पदा, श्रवण, धनिष्ठा, आर्द्रा, आश्लेषा, पूर्वाषाढा, ए नक्षत्रो सर्व-
मंगल कामोनो नाश करनारां छे. बुधवार सहित जो अश्विनी, मरणी
मूल, रेवती धनिष्ठा आ नक्षत्रो होय तो सर्व शुभ कामोने बगाडे छे,
गुरुवार उत्तराफाल्गुनी रोहिणी चित्रा अभिजित् मृगशिरा आ
पैकीनुं कोइ पण नक्षत्र होय तो शुभ कार्यमां मृत्युकारी निबडे छे.

सार्पद्विदैवमित्रेन्दुरोहिणीपितृतारकाः ।

शुक्रवारेण संयुक्ता, वर्जनीयाश्च मंगले ॥५१२॥

उत्तराफाल्गुनीपौष्ण-भेज्यादित्यार्कवैष्णवाः ।

शनिवारेण संयुक्ताः, सर्वशोभनगर्हिताः ॥५१३॥

एषु योगेषु तत्सर्वं, कृतं कर्म विनश्यति ।

विवाहे विधवा नारी, व्रती पातककृद् भवेत् ॥५१४॥

वारेण बलसंयुक्ते, योगास्त्वेते बलप्रदाः ।

न किञ्चिद् दोषदास्तस्मिन्, बलहीने न संशयः ॥५१५॥

भा०टी०—शुक्रवार साथे आश्लेषा विशाखा, अनुराधा,
मृगशिरा, रोहिणी, मघा आ नक्षत्रो होय तो मंगलकार्यमां वर्जवां,
शनिवारनी साथे उत्तराफाल्गुनी, रेवती, पुष्य पुनर्वसु हस्त भवण
आ नक्षत्रो सर्व शुभ कार्यमां निन्दित गणाय छे.

उक्त वार-नक्षत्र संबन्धी योगोमां करेल कार्य नाश पामे छे,
विवाह करवाथी स्त्री विधवा थाय छे, प्रव्रज्या लेवाथी व्रतलेनार
पाप कार्यमां पडे छे.

उक्त वार नक्षत्रोत्थ अशुभ योगोमां जे अशुभ फल बताव्युं छे
ते वारेण ग्रह बलयुक्त होय त्यारेज योगो पोतानुं बल बतावे छे पण
जो वारेण बलहीन होय तो उक्तयोगो कइं पण दोषकारक थता नथी.

प्रकारान्तरे वारनक्षत्रोत्थ अशुभ योगो—

द्विदैवधातु वह्न्यर्क-वसुदेवतपैतृकाः ।

अर्कवारेण संयुक्ता, हालाहलविषोपमाः ॥५१६॥

उत्तराश्रयचित्रारुह्य-द्विदैवाह(ह)य तारकाः ।

सोमवारेण संयुक्ताः, कालकूटविषोपमाः ॥५१७॥

शतताराद्विदैवाद्रा, उत्तराषाढतारकाः ।

भोमवारेण संयुक्ता, गुणघ्ना विषसंज्ञकाः ॥५१८॥

अश्विनीभरणीषड्वि-वसुमूलाद्यतारकाः ।

बुधवारेण संयुक्ता, दोषाः सर्वाह्यास्त्वमी ॥५१९॥

भचतुष्कं वह्निधिषण्या-द्रुणार्थमतारकाः ।

गुरुवारेण संयुक्ता, दोषा मंगलनाशदाः ॥५२०॥

भा०टी०—विशाखा, अभिजित्, कृत्तिका हस्त धनिष्ठा मघा आ नक्षत्रो रविवार युक्त होय तो हालाहल विषतुल्य धाय छे, उत्तरा फाल्गुनी उत्तराषाढा उत्तराभाद्रपदा, चित्रा विशाखा अे सोमवार संयुक्त होय छे त्यारे कालकूट विष तुल्य बने छे, शतभिषा, विशाखा, आर्द्रा उत्तराषाढा नक्षत्रो मंगलवार साथे मले छे त्यारे गुणनाशक विषयोग बने छे. अश्विनी भरणी कृत्तिका धनिष्ठा, मूल नक्षत्रो बुधवार साथे मलीने 'सर्वदोष' नाम धारण करे छे, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा शतभिषा, उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रो गुरुवार साथे होय तो मंगलनाशक दोषो बने छे.

शक्रसार्पमघावह्नि-द्विदैवशततारकाः ।

शुक्रवारेण संयुक्ता, महादोषाह्यास्त्वमी ॥५२१॥

अर्यमादितिपौष्णार्क-विश्वाषाढारुह्यतारकाः ।

शनिवारेण संयुक्ता, दोषा गुणविमर्दकाः ॥५२२॥

भा०टी०—ज्येष्ठा, आश्लेषा, मघा, कृत्तिका शतभिषा. शुक्र-
वार साधे मलतां ' महादोष ' योग बने छे. उत्तराफाशुनी, पुनर्वसु
रेवती, हस्त, उत्तराषाढा, पूर्वाषाढा आ नक्षत्रो शनिवारे होय तो
गुणविमर्दकं दोषो उत्पन्न थाय छे.

दिवामृत्युदायक तथा रोगदायक नक्षत्र चरणो—

हस्तवासवयोराद्यं, विशाखाद्राँद्वितीयकम् ।
तृतीयकमहिबुध्न्ये, चान्त्यांशं घममूलयोः ॥५२३॥
दिवा मृत्युप्रदाः पादा, दोषास्त्वेते न रात्रिषु ।
शुभकार्ये प्रसूतौ च, सर्वदा परिवर्जयेत् ॥५२४॥
अश्विनार्पणयोराद्यं, द्वितीयं घममूलयोः ।
तृतीयं ध्युत्तराहर्ष्यो-र्वाचिवन्दोरन्त्यपादकः ॥५२५॥
दिवायोगा इति ख्याताः, शोभने रोगदाः सदा ।
दिवा रोगप्रदास्त्वेते, न तु रात्रौ कदाचन ॥५२६॥
तस्माद्दिवैव संत्याज्या, रोगमृत्युप्रदायकाः ।
दिवापि दोषदा नैव, रवीन्द्रोर्बलयुक्तयोः ॥५२७॥

भा०टी०—हस्त धनिष्ठानो प्रथम चरण, विशाखा आर्द्रानो
बीजो चरण, आश्लेषा उत्तराभाद्रपदानो त्रीजो चरण अने भरणी तथा
मूलनो चोथो चरण आ नक्षत्र चरणो दिवसे मृत्युदायक छे, रात्रि
दोषकारक नथी, शुभ कार्योमां तथा प्रसवमां आ चरणो नो त्याग
करवो, अश्विनी आश्लेषानो प्रथम पायो, भरणी मूलनो बीजो, ऋण
उत्तरा तथा श्रवणनो त्रीजो अने स्वाति तथा मृगशिरानो चोथो
पायो, आनक्षत्रोना पायाओ 'दिवारोगप्रद' छे रात्रिमां नहि,माटे दिवसे
ज मृत्यु तथा रोगदायक चरणो वर्जवा, जो सूर्य चन्द्र बलयुक्त होय
तो ए चरणो दिवसे पण दोषकारक थता नथी.

वार नक्षत्रजन्य अशुभयोग कोष्ठक—

सू	सो	मं	बु	गु	शु	श	योगनाम
वि	पूषा	ध	रे	रो	पु	उफा	उत्पातयोग
अनु	उषा	पूषा	स्वा	मृ	आश्ले	ह	मृत्युयोग

तिथि वार नक्षत्रजन्य अशुभयोग कोष्ठक—

सू	सो	मं	बु	गु	शु	श	योगनाम
नन्दा रो	नन्दा पु	नन्दा उफा	नन्दा वि	नन्दा श्र	नन्दा ध	नन्दा रे	अंधयोग
भद्रा आ.	भद्रा आश्ले	भद्रा पूषा	भद्रा सू	भद्रा म	भद्रा पूफा	भद्रा कृ	काणयोग
जया वि	जया आ	जया सू	जया ज्ये	जया पूषा	जया उषा	जया भ	पंगुयोग
रिक्ता पूषा	रिक्ता म	रिक्ता कृ	रिक्ता आ	रिक्ता चि	रिक्ता अनु	रिक्ता ध	बधिरयोग

तिथि वार जन्य अशुभयोग—

वार	सू	सो	मं	बु	गु	शु	श	योगनाम
ति	१२	११	५	३	६	८	९	दग्धयोगा
नक्ष.	भ.	चित्रा	उषा	ध	उफा	ज्ये	रे	ब्रह्मजन्मनक्षत्र

तिथिवार जन्य अशुभयोग—

सू	चं	मं	बु	गु	शु	श	योगनाम
४	६	७	२	८	९	७	अचिकित्स्वयगद्योग
१२	६	७	८	९	१०	११	अग्निजिह्वयोग
६	७	८	९	१०	११	१२	विषयोग
७	०	०	१	०	०	०	महाशूलयोग

अशनियोग—

सू	चं	मं	बु	गु	शु	श	योगनाम
भ	अनु	पुन	पूभा	आर्द्रा	चि	श्र	अशनियोग

वार-तिथि-नक्षत्र-हालाहलयोगाः—

सू	चं	मं	बु	गु	शु	श	योगनाम
क	वि	रो	भ	अनु	श्र	रे	हालाहल
५	२	१५	७	१३	६	८	

नक्षत्रलांछित योग—

१	५	८	१०	१२	१३	नक्षत्रलांछितयोग
पूषा	क	पूभा	रो	आश्ले	उफा	

वारनक्षत्रसमुत्थ अशुभयोगाः—

वारा	नक्षत्राणि
रवि	वि। अतु। मृ। ज्ये। कृ। आश्ले।
सोम	पूर्वा। उषा। कृ। पु। वि। म।
मंगल	ज्ये। पूर्वा। श्र। ध। आ। आश्ले। पुषा।
बुध	अश्वि। भर। मू। घ। आर्द्रा। रे।
गुरु	उफा। रो। त्रि। अभि। मृ।
शुक्र	आश्ले। वि। अतु। मृ। रो। मघा।
शनि	उफा। रे। पु। पुन। ह। श्र।

प्रकारान्तरेण वार-नक्षत्रसमुत्थ अशुभयोगाः—

वाराः	नक्षत्राणि
रवि	वि। अभि। घ। ह। कृ। म।
सोम	उफा। उषा। उभा। त्रि। वि।
मंगल	शत। वि। आर्द्रा। उषा।
बुध	अश्वि। भर। कृ। ध। मू।
गुरु	कृ। रो। मृ। आ। शत। उफा।
शुक्र	ज्ये। आश्ले। म। कृ। वि। श।
शनि	उफा। पुन। रे। ह। उषा। पूर्वा।

गुणापवाद

वारयोगगुणं हन्ति, योगश्चोत्पातसंज्ञितः ।

श्रेष्ठयोगं यथा हन्ति, मृत्युयोगो महाबलः ॥५२८॥

शुभयोगं निहन्त्याशु, त्वन्धयोगो महाबलः ।

हन्ति कल्याणयोगारूपं, काणयोगो महाबलः ॥५२९॥

वर्धमानाह्वयं योगं, पंगुयोगो निहन्ति वै ।

सुधायोगान् निहन्त्येव, बधिरो योगचञ्चलः ॥५३०॥

बलिनं च महायोगं, दग्धयोगो निहन्ति वै ।

ग्रहजन्मभयोगोऽयं, पूर्णयोगं निहन्ति हि ॥५३१॥

अचिकित्स्यगदयोगः, शंखयोगं निहन्ति वै ।

ग्रहैः कृतो मृत्युयोगो, निहन्त्यमृतसंज्ञकम् ॥५३२॥

अग्निजिह्वाह्वयो योगः, पद्मयोगं निहन्ति हि ।

विषयोगो निहन्त्याशु, योगं त् । आनन्दसंज्ञकम् ॥५३३॥

भा०टी०—वारयोगना गुणने उत्पातयोग अने श्रेष्ठयोगने महाबल मृत्युयोग वर्णा नाखे छे. शुभयोगने अंधयोग, कल्याणयोगने काणयोग अने वर्धमानयोगने पंगुयोग नष्ट करे छे. सुधायोगने बधिरयोग, बलवान् महायोगने दग्धयोग, पूर्णयोगने ग्रहजन्मनक्षत्रयोग, शंखयोगने अचिकित्स्य गदयोग, अमृतयोगने ग्रहकृत मृत्युयोग, पद्मयोगने अग्निजिह्वयोग अने आनंदयोगने विषयोग निष्फल करी दे छे.

महाशूलाह्वयोयोगः, सिद्धियोगं निहन्ति वै ।

हन्ति पीयूषयोगारूपं, दुष्टयोगो बलाधिकः ॥५३४॥

समसप्तकयोर्जीव-शुक्रयोश्च परस्परम् ।

तदा मूढसमो दोषो, शुभकार्यविनाशकः ॥५३५॥

तुंगमित्रस्वर्क्षगयोस्मयोर्वा तत्तदंशयोः ।
 तदा मूढसमो दोषो, नाशं याति न संशयः ॥५३६॥
 महाकुलिक योगश्च, वापीयोगं निहन्ति हि ।
 नक्षत्रलाञ्छितयोगः, स्वयोगं हन्ति सर्वदा ॥५३७॥
 हन्ति योगं पुण्डरीकं, पञ्चछिद्रान्थनाडिका ।
 गुणशेखरयोगं च, योगाः सूर्यादिवारजाः ॥५३८॥
 दिवामृत्युप्रदोयोगो, हन्ति धूर्जटिसंज्ञकम् ।
 गुणभास्करयोगं तु, दिवारोगप्रदः पुनः ॥५३९॥

भा०टी०-महाशूलयोग सिद्धियोगने अने दृष्टयोग पीयूषयोगने हणे छे. गुरु शुक्रना परस्पर समसप्तक योगनो अम्न ममान दोष छे जे शुभकार्यनो नाशक छे, छातां ते जो उच्चना होय, मित्रगृही होय. स्वगृही होय अथवा तो उच्चांश मित्राशयंश स्वराशयंशना होय, तो मूढ समान दोषनो नाश थाय छे. महाकुलिकयोग वापीयोगनो, नक्षत्र लाञ्छितयोग स्वयोगनो अने बलवान् पुण्डरीकयोगने पञ्चछिद्रा तिथि घडी, गुणशेखरयोगने सूर्यादिवारोत्थयोगो, धूर्जटीयोगने दिवाःमृत्यु प्रदनक्षत्रचरणयोग अने गुणभास्करयोगने दिवारोगप्रदयोग निष्फल बनावे छे.

तं चन्द्रशेखरं घ्नन्ति, महाकाणान्धवाधिराः ।
 गुणमर्दनयोगोऽयं, हन्ति श्रीवत्ससंज्ञकम् ॥५४०॥
 अर्कादिवारसंभूताः, कालकूटविषाहयाः ।
 घ्नन्ति योगाः सिंहयोगं, गुरुनिन्देव जीवितम् ॥५४१॥
 गुणसागरयोगाख्यं, हन्ति कुलिकसंज्ञकः ।
 सिद्धांतिथिं हन्ति सम्यक्, पातश्चण्डीशसंभवः ॥५४२॥
 विजयाख्यं महायोगं, लत्तादोषो निहन्त्यलम् ।
 प्रभञ्जनं महायोगं, हन्ति संवर्तसंज्ञकः ॥५४३॥

इन्द्रदण्डं महायोगं, कालदण्डो निहन्त्यलम् ।
इन्द्रदण्डं महायोगं, योगस्त्वेकार्गलाह्वयः ॥५४४॥

अभिजित्संज्ञकं योगं, हन्ति गण्डान्तसंज्ञकः ।
क्रूरग्रहैर्विद्धदोषो, हन्ति गोधूलिसंज्ञकम् ॥५४५॥

भा०टी०—ते चन्द्रशेखर योगने महाकाण-अंध-बधिर-योगो, श्रीवत्सयोगने गुणमर्दनयोग, सिंहयोगने सूर्यादिवार-संभूत महाकालकूटविषयोगो हणे छे गुरुनिन्दा जेम जीवितने हणे छे. गुणसागरयोग ने कुलिकयोग, सिद्धातिथिने चण्डीश-चण्डायुध-पात, विजयमहायोग ने लत्तादोष, प्रभंजनयोगने संवर्त-कयोग, इन्द्रदंडयोगने कालदंड योग तथा एकार्गल योग हणे छे. अभिजिद्योगने गण्डान्तदोषने अने गोधूलिकयोगने पापग्रहविद्ध नक्षत्रदोष हणे छे.

अवमाख्या तिथिर्हन्ति, सौम्यग्रहकृतं शुभम् ।
ग्रहजन्मकृतो दोषो, गुरुं लग्नस्थितं शुभम् ॥५४६॥

अकालगर्जितो दोषो, निहन्ति गुणसंचयम् ।
अकालवृष्टिदोषोऽपि, तथैव गुणसंचयम् ॥५४७॥

भा०टी०--सौम्यग्रहकृत शुभ योगने अवमातिथि हणे छे, ग्रहजन्मनक्षत्रदोष लग्नस्थित शुभगुरुना गुणने हणे छे अने अकालगर्जित तथा अकालवृष्टिना दोषो घणा शुभ गुणोनो नाश करे छे.

दोषापवादा वसिष्ठोक्ता :—

उत्पातयोगजं दोषं, च(वा)रयोगो निहन्ति वै ।
निहन्ति मृत्युयोगं तु, श्रेष्ठयोगो महाबलः ॥५४८॥

અન્ધયોગકૃતં દોષં, શુભયોગો નિહન્તિ વૈ ।
 કાળયોગકૃતં દોષં, હન્તિ કલ્યાણસંજ્ઞકઃ ॥૫૪૯॥
 પંગુયોગં નિહન્ત્યાશુ, યોગો વૈ વર્ધમાનકઃ ।
 સુધાયોગો નિહન્ત્યાશુ, યોગં વધિરસંજ્ઞકમ્ ॥૫૫૦॥
 મહાયોગો નિહન્ત્યાશુ, યોગં તુ રાક્ષસાહ્વયમ્ ।
 દગ્ધયોગં નિહન્ત્યાશુ, મહાયોગો મહાબલઃ ॥૫૫૧॥
 ગ્રહજન્મકૃતં દોષં, પૂર્ણયોગો નિહન્તિ વૈ ।
 ગદાયોગં નિહન્ત્યાશુ, શંખયોગો મહાબલઃ ॥૫૫૨॥

भा०टी०—उत्पातयोगना दोषने वारयोग हणे छे, मृत्युयोगने महाबली श्रेष्ठयोग हणे छे, अंधयोगना दोषने शुभयोग हणे छे, कालयोगना दोषने कल्याणयोग हणे छे, पंगुयोगना दोषने वर्धमानयोग दूर करे छे, वधिरयोगने सुधा (पीयूष) योग दूर करे छे, राक्षसने महायोग हणे छे, दग्धयोगने पण महायोग प्रभावहीन करे छे, ग्रहजन्मनक्षत्रना दोषने पूर्णयोग दूर करे छे अने गदायोग-कृत दोषने शंखयोग मटाडी दे छे.

અગ્નિજિહ્વદ્રયં યોગં, પશ્ચયોગો નિહન્તિ વૈ ।
 વિષયોગં નિહન્ત્યાશુ, યોગશ્ચાનન્દસંજ્ઞકઃ ॥૫૫૩॥
 ભાન્તરારાલકૃતં દોષં, સિદ્ધિયોગો નિહન્તિ વૈ ।
 યોગાન્તરારાલકં દોષં, હન્તિ સિદ્ધાતિથિઃ સ્વયમ્ ॥૫૫૪॥
 મહાશૂલાહ્વયં દોષં, સિદ્ધિયોગો નિહન્તિ વૈ ।
 દુષ્ટયોગં નિહન્ત્યાશુ, યોગઃ પીયૂષસંજ્ઞક ॥૫૫૫॥
 મહાકુલિકયોગં તુ, વાપીયોગો નિહન્તિ વૈ ।
 હાલાહલાહ્વયં નામા-૽મૃતયોગો નિહન્તિ વૈ ॥૫૫૬॥

पक्षछिद्रोक्तनाडीनां, दोषं हन्ति सदा तथा ।
 पुण्डरीकाह्वयो योगः, पिनाकी त्रिपुरं यथा ॥५५७॥
 भानुवारादिसंभूतान्, पापयोगान् निहन्ति वै ।
 गुणशेखरयोगोऽयं, राघवो रावणं यथा ॥५५८॥

भा०टी०—अग्निजिह्व तथा त्रिषयोगने पद्मयोग हणे छे, त्रिष-
 योगने आनन्दयोग हणे छे, नक्षत्रसंधिकृत दोषने सिद्धियोग अने
 योग-संधिदोषने सिद्धा तिथि योते हणे छे, महाशूल दोषने सिद्धियोग
 दूर करे छे, दुष्टयोगने पीयूषयोग, महाकुलिकयोगने त्रापीयोग
 अने हालाहलयोगने अमृतयोग दूर करी दे छे, पक्षछिद्रातिथिओनी
 विषघटीओना दोषने पुंडरीकयोग नाश करे छे जेम शिव त्रिपुरनो,
 रविवारादिजन्यपापयोगने^१ गुणशेखरयोग हणे छे जेम रामचन्द्र
 रावणने.

दिवामृत्युप्रदं योगं, हन्ति धूर्जटिसंज्ञकः ।
 दिवैव रोगदं हन्ति, गुणभास्करयोगराट् ॥५५९॥
 महाहालाहलं हन्ति, गुणभास्कर एव च ।
 चन्द्रशेखरयोगश्च, महाकाणान्धबाधिरान् ॥५६०॥
 गुणमर्दनयोगं च, हन्ति श्रीवत्ससंज्ञकः ।
 सिंहयोगो निहन्त्याशु, वारजान् कालकूटकान् ॥५६१॥
 उपग्रहाह्वयं दोषं, सिद्धियोगो निहन्ति वै ।
 गुणसागरयोगोऽयं, हन्ति कुलिकसंज्ञकम् ॥५६२॥
 शुभयोगो निहन्त्याशु, विधुदोषं महाबलम् ।
 षण्डायुञ्जं सचण्डीशं, हन्ति सिद्धातिथिर्यथा ॥५६३॥
 विजयाख्यो महायोगो, लप्तादोषं निहन्ति वै ।
 ब्रह्मदण्डाह्वयो योगो, हन्ति क्रकषसंज्ञकम् ॥५६४॥

१ वारनक्षत्रसमुत्थ अशुभयोगेने.

प्रभंजनो महायोगो, हन्ति संवर्तसंज्ञकम् ।

इन्द्रदण्डो बली हन्ति, कालदण्डं महाबलम् ॥५६५॥

भा०टी० दिवामृत्युदयोगने धूर्जटी, दिवारोगदयोगने गुण-
भास्कर, महाहालाहलने गुणभास्कर, महाकाणअंधवधिरयोगीने चन्द्र-
शेखर, गुणमर्दनयोगने श्रीवत्स, वारजन्यकालकूटयोगीने सिंहयोग,
उपग्रहयोगने सिद्धियोग, कुलिकने गुणसागर, चन्द्रमहादोषने शुभयोग,
चण्डीश-चण्डायुधने सिद्धातिथि, लत्तादोषने विजययोग, क्ररुचयोगने
ब्रह्मदण्डयोग अने बलवान् कालदंडयोगने इन्द्रदण्ड हणे छे.

एकार्गलं महादोषं, इन्द्रदण्डो निहन्ति वै ।

गण्डान्तदोषमखिल-मभिजिद्योगसंज्ञकः ॥५६६॥

हन्ति गोधूलिको योगो, विद्वभं पापखेचरैः ।

अवमारुघातिथेर्दोषं, हन्ति केन्द्रगतो गुरुः ॥५६७॥

ग्रहजन्माहयं योगं, हन्ति केन्द्रगतः शुभः ।

त्रिद्युस्पृग्यामदोषं स हन्ति केन्द्रगतः शुभः ॥५६८॥

अकाल गर्जितं दोषं, हन्ति केन्द्रगतः शुभः ।

अकाल वृष्टिजं दोषं, गुरुर्हन्ति महाबलः ॥५६९॥

दग्धलघ्नोद्भवं दोषं हन्ति लाभगतः कुजः ।

शून्यधिष्णयोद्भवंदोषं, स हन्ति शत्रुसंस्थितः ॥५७०॥

दोषं शून्यतिथेर्हन्ति, लाभगः सौम्यखेचरः ।

त्रिद्युस्पृगाख्यदोषं च, हन्ति सिद्धा तिथिः स्वयम् ॥५७१॥

भा०टी—एकार्गल महादोषने इन्द्रदण्ड योग हणे छे, सर्वप्र-
कारना गंडांतने अभिजिद्योग, पापविद्वनक्षत्रने गोधूलिकयोग,
अवम (क्षय) तिथिना दोषने केन्द्रगतगुरु, ग्रहजन्म नक्षत्रयोगने
केन्द्रगत शुभग्रह, तिथिवृद्धिना दोषने केन्द्रस्थित शुभग्रह, अकाल

गर्जित दोषने केन्द्रगत शुभ ग्रह, अकाल वृष्टि दोषने बलवान गुरु, दग्ध लग्ना दोषने लाभगत मंगल, शून्य नक्षत्र संबन्धी दोषने छट्टा स्थाने रहेल मंगल, शून्यतिथिना दोषने लाभस्थित सौम्यग्रह अने वृद्ध तिथिना दोषने सिद्धातिथि पोते दूर करे छे.

करण

करणो वै प्रकारना होय छे. चर करण अने स्थिर करण। बव बालवादि विष्टि पर्यन्त ७ करणो चर छे, आ करणोना आरंभ शुक्ल प्रतिपदाना उत्तरार्धथी थाय छे अने अेक मासमां आ करणो ८-८ वार आवे छे, शकुनि आदि ४ करणो स्थिर कहेवाय छे, अे करणो तिथि प्रतिबद्ध होइ मासमां अेक वार ज आवे छे, कृष्णचतुर्दशीना उत्तरार्धमां शकुनी १, अमावास्याना पूर्वार्धमां चतुष्पद २, तथा अेना उत्तरार्धमां नाग ३ अने शुक्ल प्रतिपदाना पूर्वार्धमां किंस्तुघ्न ४, आ प्रमाणे च्यार करणो नियत स्थान स्थित होइ स्थिर वा ध्रुव कहेवाय छे. बवादि करणो पण वास्तवमां तो तिथिप्रतिबद्ध ज छे, बव शुक्ल प्रतिपदाना उत्तरार्धमां, बालव द्वितीयाना लव पूर्वार्धमां, कौलव द्वितीयाना उत्तरार्धमां, तैतिल तृतीयाना पूर्वार्धमां, गर तृतीयाना उत्तरार्धमां, वणिज चतुर्थीना पूर्वार्धमां अने विष्टि चतुर्थीना उत्तरार्धमां पूर्ण थइ शुक्लपंचमीना पूर्वार्धथी फरि बवादिनी आवृत्ति थाय छे, आम आ सात करणोनी कृष्ण चतुर्दशीना पूर्वार्ध पर्यन्त आठ आवृत्तिओ होवाथी आ ७ करणोने चारसंज्ञा अपाइ छे, बवादि ६ करणो सर्व कार्यामां शुभ गणाय छे, विष्टि अशुभ छे ज्यारे शकुनि प्रमुख ४ स्थिर करणो मध्यम छे, मध्यम पैकीना नाग-चतुष्पद अशुभ जेवांज नेष्ट छे.

करणसंबन्धी वसिष्ठनुं निरूपण आ प्रमाणे छे—

आद्यं बवं बालवकौलवाख्ये,
तत्तैतिलं तद् गरसंज्ञकं च ।

વણિક્ ચ વિષ્ટિઃ કરણાનિ સપ્ત,
ચરાણિ યાનિ ક્રમશો ભવન્તિ ॥૫૭૨॥

ભા.ટી.૦— પહેલું ત્રણ તે પછી ચાલવ, કૌલવ, તૈતિલ ગર
વણિજ અને વિષ્ટિ-મદ્રા એ ૭ કરણો છે જે ચર હોય છે.

તિથ્યર્ધમાચં શકુનિક્ષિતીયં, ચતુષ્પદં નાગકસંશિતં ચ ।
કિંસ્તુઘનમેતાન્યચરાણિ કૃષ્ણ-ચતુર્દશીપશ્ચિમભાગતઃ
સ્યુઃ ॥૫૭૩॥

ભા.ટી.૦— અચર કરણોમાં પ્રથમ શકુનિ, વીજું ચતુષ્પદ,
ત્રીજું નાગ અને ચોથું કિંસ્તુઘ આ સ્થિર કરણોની પ્રવૃત્તિ કૃષ્ણ-
ચતુર્દશીના ઉત્તરાર્ધથી થાય છે.

કરણેશ—

ઇન્દ્રો વિધાતા મિત્રાર્ય-સ્ત્વર્યમા ભૂર્હરિપ્રિયા ।
કીનાશઞ્ચેતિ તિથ્યર્ધ-નાથાઃ સ્યુઃ ક્રમતસ્ત્વમી ॥૫૭૪॥
કલિશ્ચ રક્ષો ભુજગઃ, પવનશ્ચ સ્થિરેશ્વરાઃ ॥
વિજ્ઞેયાઃ સર્વકાર્યેષુ, તિથ્યર્ધેશબવાદિષુ ॥૫૭૫॥

ભા.ટી.૦— ઇન્દ્ર વિધાતા મિત્ર અર્યમા ભૂમિ લક્ષ્મી અને
યમ એ અનુક્રમે વવાદિ ૭ ચર કરણોના સ્વામી છે, અને કલિ,
રાક્ષસ, સર્પ અને પવન એ ૪ સ્થિર કરણોના સ્વામી જાણવા, વિ-
હિત નક્ષત્રના અભાવે તે નક્ષત્રના સ્વામીવાલા કરણમાં તે કાર્ય
કરવું. ઉદાહરણ-અનુરાધા ત્રિધેય કાર્ય કરવું છે પણ તે દિવસે અ-
નુરાધા નથી, આવી સ્થિતિમાં તે દિવસે જો મિત્રસ્વામિક કૌલવ
કરણ હોય તો તે અનુરાધાનું કાર્ય કરે છે, કરણોના સ્વામિઓ બ-
તાવવાનું એજ પ્રયોજન છે.

करणविधेय कार्यों—

चरस्थिरद्विजहित-पशुधान्याकरादि यत् ।
 धातुवादवणिग्धान्य-कर्म सर्वं बवे हितम् ॥५७६॥
 मांगल्योत्सवपानादि-वास्तुकर्माखिलं च यत् ।
 नृपाभिषेक-संग्राम-कर्मसिद्ध्यति बालवे ॥५७७॥
 गजोष्ट्राश्वायुधोद्यान-विपिनाद्यखिलं च यत् ।
 बालवोक्ताखिलं कर्म, कौलवे सिद्ध्यति ध्रुवम् ॥५७८॥
 सन्धिविग्रहयात्रादि, क्रयविक्रयकर्म यत् ।
 तडागकूपखननं, कार्यं तैतिलसंज्ञके ॥५७९॥
 प्राकारोद्धारणं सर्वं, जलकर्माखिलं च यत् ।
 सर्वतिथ्यर्धकथितं, कर्म सर्वं गरे हितम् ॥५८०॥

भा०टी०— चर, स्थिर, ब्राह्मण हितकर्म, पशुकर्म, धान्य-
 कर्म, आकर कर्मादि, धातुवाद, वाणिज्य, धान्यकर्म अे सर्वं कार्यों बवमां
 करवां हितकर छे, मांगल्य, उत्सव, पानादि, सर्वं वास्तुकर्म, राज्या-
 भिषेक, युद्धकर्म, अे बालवमां करवाथी सिद्ध थाय छे, हाथी,
 उंट, अश्व, आयुध, उद्यान, उपवन संबन्धी कार्यों अने बालवमां
 कहेल सर्वं कार्यों कौलवमां सिद्ध थाय छे, संधि, विग्रह, यात्रादि,
 क्रय-विक्रय कर्म, तलाव कूवा खोदवा अे सर्वं तैतिलमां करवां, प्रा-
 कारनो उद्धार आदि, सर्वं जलकर्म, अने सर्वं करणोमां करवानां
 कार्यों गरमां करवां हितकर छे.

मूलकर्माखिलं धातु-जीवकर्माखिलं च यत् ।
 उक्तानुक्ताखिलं कर्म, ध्रुवं वणिजि सिद्ध्यति ॥५८१॥
 वधबन्धविषाग्न्यस्त्र, छेदनोच्चाटनादि यत् ।
 तुरङ्गमहिषोष्ट्रादि-कर्म विष्ट्यां च सिद्ध्यति ॥५८२॥

न कुर्यात्मंगलं विष्ट्यां, जीवितार्थी कदाचन ।
 कुर्वन्नज्ञस्तदा क्षिप्रं, तत् सर्वं नाशतां व्रजेत् ॥५८३॥
 तस्मात्त्याज्या परीता वा, विपरीतापि मङ्गले ।
 तन्माहात्म्यमजानन्यो, भद्रायां यदि मंगलम् ॥५८४॥
 कुर्याद्वंशक्षयं तस्य, स भवेन्नष्टमंगलः ।
 तस्मात् तत्र शुभं कर्म, मनसापि न कारयेत् ॥५८५॥

भा०टी०—मूल-धातु-जीव संवन्धी सर्व कार्यों, कहेल अने नहि कहेल सर्वकार्यों वणिज करणमां करवाथी सिद्ध थाय छे. वध, बंधन, विषप्रयोग, अग्नि, अस्त्र, छेदन, उच्चाटनकर्म अश्व-महिष-कर्म अने उष्टादिकर्म भद्रामां करवाथी सिद्ध थाय छे, जीवनना अभिलाषीए भद्रामां कोइ पण मंगलकर्म न करवुं, जे अज्ञानी भद्रामां मंगलकार्ये करे छे ते नाश पामे छे. माटे भद्रा परीत होय के विपरीत पण मंगलमां एनो त्याग करवो, भद्रानुं माहात्म्य न जाणतो जे माणस भद्रामां मंगल करे छे तेना वंशनो क्षय थाय छे अने तेना मंगलकार्यो नाश थाय छे, माटे भद्रामां शुभ कर्म करवानुं मनथी पण न चिन्तववुं.

भद्राना अंग विभागो

नाड्यः पञ्च मुखे चैका, गले रुद्राश्च वक्षसि ।
 नाभौ तद्घटिका वेदाः, षण्णाडिकाश्च तत्कटिः ॥५८६॥
 पुच्छं तन्नाडिकास्तिस्रः, पुच्छान्तं मुखतः क्रमात् ।
 विष्टेरङ्गविभागोऽयं, फलं वक्ष्ये पृथक् पृथक् ॥५८७॥

कार्यस्य नाशो वदने गले तु,
 मृत्युः सदा वक्षसि चार्थहानि ।
 नाभौ च विघ्नं त्वथ बुद्धिनाशः,
 कट्यां जयः संघति पुच्छभागे ॥५८८॥

भा०टी०—भद्रानी आद्य घडीओ तेनुं मुख अने १ घडी गलुं जाणवुं, ए पछीनी ११ घडीओ छाती, ४ घडीओ तेनी नाभि, ६ घटिकाओ भद्रानो कटिभाग अने ३ घडीओ भद्रानुं पुच्छ छे, आम मुखथी पुच्छ पर्यन्त अनुक्रमे भद्रानो ए अंगविभाग छे, हवे आ अंगविभागोनु भिन्न भिन्न फल कहीश, मुखविभागनी पांच घडीओमां कार्य करतां ते कार्यनो नाश थाय छे, गलानी घडीमां कार्य कर्तानुं मरण थाय छे, हृदयविभागनी ११ घडीओमां धनहानि थाय छे, नाभिविभागनी ४ घडीओ विघ्न करनारी छे, कटिविभागनी ६ घडीओमां कार्य करतां बुद्धिभ्रंश थाय छे, ज्यारे पुच्छ विभागनी त्रण घडीओमां युद्धमां विजय प्राप्त थाय छे.

भद्राना तिथिसंबन्ध विषे आरंभसिद्धि-

रात्रौ चतुर्थ्यैकादशयो-रष्टमीराकयोर्दिवा ।

भद्रा शुक्ले तिथौ कृष्णे, त्वेकैकोने यथाक्रमात् ॥५८९॥

भा०टी०—शुक्लपक्षनी चतुर्थी तथा एकादशीए भद्रा तिथिना उत्तरार्धमां एटले रात्रिविभागमां अने शुक्ल अष्टमी तथा पूर्णिमाए भद्रा दिवसे होय छे, कृष्णपक्षमा उक्त तिथिओना अंकमांथी एकडो ओछो करतां जे संख्या रहे तेटलामी तिथिमां पूर्वोक्त प्रकारे अनुक्रमे भद्रा रात्रिदिवसना विभागे जाणवी. जेम के कृष्ण तृतीया दशमीए रात्रिमां अने कृष्ण सप्तमी चतुर्दशीए दिवसभागे भद्रा होय छे.

दिशा कालपरत्वे भद्रानुं संमुखत्व-

भद्रेन्द्रा १४५ष्टा ८५श्व ७ तिथ्याब्धि १५-४,

दशेशाग्नि १०-११-३ मिते तिथौ ।

दिग्-यामाष्टकयोर्नेष्टा,

संमुखी पृष्ठतः शुभा ॥५९०॥

भा०टी०—चतुर्दशी अष्टमी सप्तमी पूर्णिमा चतुर्थी दशमी एकादशी तृतीया आ तिथिओमां भद्रा पूर्वादिदिशाओमां मथमादि

પ્રહરોમાં સંમુખ હોય છે જે નેષ્ટ હોય છે, એથી વિપરીત દિશામાં ભદ્રાની પૂઠ હોઈ તે દિશામાં પ્રયાણાદિ કરવામાં તે અશુભ ગણાતી નથી, ઉદાહરણ રૂપે ચતુર્દશીના પ્રથમ પહરમાં ભદ્રાનું મુખ પૂર્વદિશામાં, અષ્ટમીએ દ્વિતીય પ્રહરે ભદ્રાનું મુખ અગ્નિકોણમાં, સપ્તમીએ ત્રીજા પહોરમાં ભદ્રાનું મુખ દક્ષિણ દિશામાં, પૂર્ણિમાએ દિવસના ચોથા પહોરમાં ભદ્રાનું મુખ નૈઋત્યકોણે, ચતુર્થીએ પાંચમા પહોરે ભદ્રાનું મુખ પશ્ચિમમાં, દશમીએ છઠા પહોરમાં ભદ્રાનું મુખ વાયવ્યકોણમાં, એકાદશીએ સાતમા પહોરે ભદ્રાનું મુખ ઉત્તરમાં અને તૃતીયાએ આઠમા પહોરે ભદ્રાનું મુખ ઈશાનકોણમાં હોય છે. જે દિશામાં જે પ્રહરમાં ભદ્રાનું મુખ હોય છે તેથી પાંચમી દિશામાં તે પહોરથી પાંચમા પહોરે ભદ્રાનું પુચ્છ હોય છે, એ ફલિતાર્થ છે.

તિથિપરત્વે ભદ્રાના પુચ્છભાગનો સમય

વ્યવહારસમુચ્ચયે—

દશમ્યામષ્ટમ્યાં પ્રથમઘટિકાપશ્ચકપરં ।

હરિદ્યુઃ સપ્તમ્યાં દ્વિદશઘટિકાન્તે ત્રિઘટિકં ।

તૃતીયા—રાકાયાં સ્વયમ (૨૦) ઘટિકાભ્યઃ પરમ્બં ।

શુભં ચિષ્ટેઃ પુચ્છં શિવતિથિ ચતુર્થ્યોશ્ચવિગલત્ ॥૫૯૧॥

આ૦ટી૦—દશમી અને અષ્ટમીએ પ્રથમની પાંચ ઘડીઓ પછીની ત્રણ ઘડીઓ ભદ્રાનું પુચ્છ, એકાદશી સપ્તમીએ બાર ઘડીઓ^૧ પછીની ૩, તૃતીયા પૂર્ણિમાએ ૨૦ ઘડીઓ^૨ પછીની ૩ ઘડીઓ ભદ્રાનું પુચ્છ હોય છે અને ચતુર્દશી—ચતુર્થીએ સમાપ્તિની ૩ ઘડીઓ ભદ્રાનું પુચ્છ ગણાય છે.

૧ આરંભસિદ્ધિમાં ૧૩ ઘડીઓ છે, ૨ આરંભસિદ્ધિમાં ૨૧ ઘડી
લક્ષ્ણ છે.

आचार्यं लल्लु भद्राना पुच्छन्तुं महन्त्व जणावे छे
शुभाऽशुभानि कार्याणि, यान्यसाध्यानि भूतले ।
नाडीत्रयमिते पुच्छे, भद्रायास्तानि साधयेत् ॥५९२॥

भा०टी०— भूमंडल उपर शुभ अगर अशुभ जे जे असाध्य
कार्यो छे ते त्रिघटी परिमित भद्रापुच्छमां करवाथी सिद्ध थाय छे.

भद्रामां सिद्ध थयेल कार्य अंते नाश पामे छे—
यदि भद्राकृतं कार्यं, प्रमादेनापिसिध्यति ।
प्राप्ते तु षोडशे मासे, समूलं तद्विनश्यति ॥५९३॥

भा०टी०— जो भद्रामां करेल कार्य भद्राना प्रमादवशे सिद्ध
थइ जाय तो पण सोलमो महिनो लागतां ते समूल नष्ट थइ जाय छे.

भद्रामां करवानां कार्यो विषे नारचंद्र टिप्पणक
दाने चाऽनशने चैव, घात-पातादिकर्मणि ।
खराऽश्वप्रसवे श्रेष्ठा, भद्राऽन्यत्र न शस्यते ॥५९४॥

भा०टी०— दान आपवुं, अनशन करवुं, घात-पातादि
कार्य करवुं, गधेडी-घोडीनो प्रसव थवो, आ बधा कार्योमां भद्रा
शुभ छे, बीजा कामोमां शुभ गणाती नथी.

भद्राना परिहारना अनेक प्रकारो-लल्लुनोमत
दिवा परार्धजा विष्टिः, पूर्वार्धोत्था यदा निशि ।
तदाविष्टिः शुभायेति, कमलासनभाषितम् ॥५९५॥

भा०टी०— तिथिना उत्तरार्धमां आवती भद्रा दिवसे अने
तिथिना पूर्वार्धमां आवती भद्रा जो रात्रिए आवती होय तो ते भद्रा
शुभने माटे छे एम ब्रह्माजीनुं कथन छे.

सुरभे वत्स ! या भद्रा, सोमे सौम्ये सिते गुरौ ।

कल्याणी नाम सा सोक्ता, सर्वकार्याणि साधयेत् ॥५९६॥

भा०टी०—हे वत्स ! देवगणा नक्षत्रमां अने सोम बुध, गुरु शुक्रवारं जे भद्रा होय तेने 'कल्याणी भद्रा' कही छे तेमां सर्व कामो करवां.

स्वर्गेऽजोक्षेणकर्केष्वधः स्त्रीयुग्मधनुस्तुले ।

कुंभमीनालिसिंहेषु, विष्टिर्मर्त्येषु खेलति ॥५९७॥

भा०टी०—मेष, वृषभ, मकर, कर्कना चंद्रमां भद्रा स्वर्गमां, कन्या मिथुन धन तुलाना चंद्रमां भद्रा पातालमां अने कुंभ मीन वृश्चिक सिंहना चंद्रमां भद्रा मनुष्य लोक खेले छे, तात्पर्य ए छे के जे काले भद्रा जे लोकमां बसती होय छे ते काले ते लोकमां ज भद्रा पोतानुं शुभाशुभ फल आपे छे, आधी फलित थयुं के मनुष्य लोक-मां सिंह वृश्चिक, कुंभ, मीनना चन्द्रमां ज भद्रानो विचार करवो रह्यो, स्वर्ग पातालमां भद्रावास होय त्यारे मनुष्य लोकमां ए पोतानो प्रभाव बतावी शकती नथी.

कालपरक भद्रानां बे स्वरूपो—

सर्पिणी वृश्चिकी भद्रा, दिवारात्र्योः स्मृताः क्रमात् ।

सर्पिण्या वदनं त्याज्यं, वृश्चिक्याः पुच्छमेव च ॥५९८॥

भा०टी०—दिवस रात्रिनी भद्रा अनुक्रमे सर्पिणी (सापण) अने वृश्चिकी (विछुडी) कहल छे, माटे सापणनुं मुख वर्जवुं अने विछुडीनुं पुंछडुं वर्जवुं, आनो तात्पर्यार्थ अे छे दिवसमां भद्रा क्रमा-गत होय के अक्रमागत होय पण तेना मुख विभागनी घडीओ तो अवश्य वर्जवी ज जोइये, अेज प्रमाणे रात्रिमां भद्राना पुछडानो त्याग अवश्य करवो, भले ते तिथिना पूर्वार्ध प्रतिबद्ध होय के परार्ध प्रतिबद्ध-

करणो विषे आरंभसिद्धिकारनो उपसंहार—

दशाऽमूनि विविष्टीनि, दिष्टान्यखिलकर्मसु ।

राश्यहर्व्यस्ययाद् भद्रा, ऽप्यदुष्टैवेति तद्विदः ॥५९९॥

भा०टी०— भद्राविनानां आ दश करणो सर्वकार्योमां विहित छे, अने रात्रि दिवसना विपर्यासथी भद्रा पण निर्दोष छे अम ज्योतिषशास्त्रना वेत्ताओ कहे छे.

लग्नवल प्रकरण—

लग्नविधेय कार्यों—

अभिषेको नृपतीनां, साहसकर्मादिवैरोधम् ।
 आकरधातुवादाद्यखिलं मेषोदये कार्यम् ॥६००॥
 स्थिरचरकार्यं त्वखिलं, विवाहवास्त्वादि कन्यकावरणम् ।
 क्षेत्रारम्भणमखिलं, भूषणशिल्पादि कारणं वृषभे ॥६०१॥
 मेषवृषोक्तं कर्म, गजसुरगोष्ठादिकं च गोकर्म ।
 अविकलमाहिषमेष—क्षितिपतिसेवादिकं मिथुने ॥६०२॥
 शान्तिकपौष्टिकमाङ्गल-जलबन्धनमोक्षमखिलजलकर्म ।
 दैविककूपतडागशिल्पोद्वाहादि कर्कटे कार्यम् ॥६०३॥
 परयोगो नृपसेवा, कृषिकर्मवाणिज्य महाहवाद्यखिलम् ।
 स्थिर कर्माखिलवास्तु-निवेश शिल्पादि सिंहभे कार्यम् । ६०४।

भा०टी०—राजाओनो अभिषेक, साहस कर्म आदि, विरोध-कार्य, खाण, धातुवाद, आदि सर्व मेष लग्नमां करवुं. सर्वस्थिर-चरकार्य, विवाह, वास्तु आदि, कन्यावरण, क्षेत्रारंभ, सर्वभूषण तथा शिल्पा-दिकार्य वृषभ लग्नमां करवुं. मेष वृषमां करवानुं कार्य, हाथी घोडा उंट गाय बलद संबन्धी, संपूर्ण माहिषकर्म, मेषकर्म, राजसेवादि-कार्य मिथुन लग्नमां करवुं, शान्तिक पौष्टिक मांगल्यकर्म जलबन्धन अने जलमोक्षण आदि संपूर्ण जलकर्म, दैविक, कूप, तलाव, शिल्प, विवाह आदि कर्ममां करवुं. विरोधी मिलन, राजसेवा, कृषिकर्म, वाणिज्य, युद्ध आदि तथा सर्व स्थिरकर्म, सर्व वास्तुनिवेश, शिल्पादि कर्म, सिंह लग्नमां करवुं,

ભૂષણમણ્ડલકાર્ય-મૌઘધવિજ્ઞાનપુણ્યશિલ્પાદિ ।

ઉદ્વાહશાન્તિપૌષ્ટિક-ગજતુરગોષ્ટ્રાદિ કન્યાયામ્ ॥૬૦૫॥

કન્યોક્તાખિલકાર્ય, તુલાદિમાનાનિ મણ્ડકર્માણિ ।

યાત્રાવાસ્તુવિધાનં, તૌલિનિ કૃષિકર્મવાણિજ્યમ્ ॥૬૦૬॥

સાહસદારુણચિત્રક-લેખકવાસ્તુપ્રશાસ્ત્રકર્માદ્યમ્ ।

આહવકૃષિવાણિજ્યં, ક્ષિતિપતિવાદશ્ચ વૃશ્ચિકે કાર્યમ્ ॥

॥૬૦૭॥

શાન્તિક પૌષ્ટિક શિલ્પિક-સન્ધાનાશ્વાદિનૃત્યગીતાદ્યમ્ ।

રાજોપકરણમખિલં, ભૂષણવાસ્ત્વાદિ ચાપમે સેવા ॥૬૦૮॥

શંબરમોચનબન્ધન-ભૂષણરત્નાદિ શિલ્પધાન્યાદિ ।

ક્રયવિક્રયમખિલં યદ્, રિપુહનોયોગમાહર્ષં મકરે ॥૬૦૯॥

આંટી૦—આભૂષણ મંગલ ઔષધ વિજ્ઞાન પુણ્ય શિલ્પ આદિનાં કાર્યો, વિવાહ શાન્તિક પૌષ્ટિક કર્મો, હાથી ઘોડા ઉંટ સંબંધી કાર્ય કન્યામાં કરવું. કન્યા લગ્નમાં કરવાનાં સર્વ કાર્યો, તુલાદિમાનો, માંડકર્મો, યાત્રા, વાસ્તુનિર્માણ, કૃષિકર્મ, વાણિજ્યકર્મ એ તુલાલગ્નમાં કરવાં. સાહસનાં કામો, દારુણકર્મ, ચિત્રકાર લેખક વાસ્તુ સંબંધી કામો, ઉગ્ર શાસ્ત્રકર્મ આદિ, યુદ્ધ કૃષિ વાણિજ્ય અને રાજકીય વિવાદ વૃશ્ચિકમાં કરવાં. શાન્તિક પૌષ્ટિકકર્મ, શિલ્પકાર્ય, સંધાન, અશ્વાદિનૃત્ય, ગીત આદિ, સર્વ રાજોપકરણો, ભૂષણકર્મ, વાસ્ત્વાદિ કર્મો ધતુલગ્નમાં કરવાં. જલ છોડવું, જલ રોકવું, ભૂષણ રત્નાદિધારણ, શિલ્પ, ધાન્યાદિકાર્યો, વ્રય વિક્રય સંબંધી સર્વકાર્યો, શત્રુ ઉપર ઘાવી કરવાનો ઉદ્યમ, યુદ્ધ इत्यादि કાર્યો મકર લગ્નમાં કરવાં.

યુદ્ધોપકરણભૂષણ-જલધાન્યશિલ્પાશ્ચ ગોધનાદ્યં યત્ ।

પણ્યાસવપુર નગર-પ્રવેશનં કર્મ ઘટલગ્ને ॥૬૧૦॥

यज्जलधन्धन-मोचन-जलयात्रारत्नभूषणं कर्म ।

रथतुरगेभयशूनां, कार्यं मीनोदये शिल्पम् ॥६११॥

भा०टी०—युद्धोपकरण, आभूषण, जल, धान्य, शिल्प, गो-धनादिकार्यं क्रयाणक मदिरासंधान नमर-पूरप्रवेशकर्म कुंभलग्नमां करवुं. जलने बांधवुं छोडवुं, जलयात्रा, रत्नभूषणकर्म, रथकार्य, घोडा हाथी आदि पशुभो संबन्धी कार्य अने शिल्पकार्य मीन लग्न-मां करवुं.

पापयुतेक्षितरहिता, मेधाद्याश्चोक्तफलदाः स्युः ।

नो चेदुक्तफलं वै, दातुं शक्ता भवन्ति न कदाचित् ॥६१२॥

संपूर्णफलदमादौ, विलग्नमध्येऽथ मध्यफलम् ।

अन्ते तुच्छफलं सर्वत्रैवं विचिन्तयेद्विमान् ॥६१३॥

भा०टी०—उपर्युक्त मेपादि लग्नो जो पापयुक्त न होय, पापदृष्ट न होय तो ज उक्त फल आपी शके छे, पण पापयुक्त-दृष्ट होय तो कहेल फल आपवा कदापि समर्थ थइ शकतां नथी, लग्न पोताना प्रथम द्रेष्काणमां पूर्ण फल आपनार होय छे, द्वितीय द्रेष्काणमां मध्यफल अने तृतीय द्रेष्काणमांति ज लग्न तुच्छफल-अल्पफल आपे छे माटे पञ्च वर्ग के षड्वर्ग भुङ्गनवमांश मलतो होय तो ज लग्ननो तृतीय द्रेष्काण लेवो अने लग्ननो अन्त्य नवमांश तो वर्गोत्तम होय तो ज लेवो अेवुं शास्त्र विधान छे.

लग्न-प्रकृति-

चर स्थिर द्विस्वभावा, मेधाद्या राशयः क्रमात् ।

क्रूरकर्मणि सकूराः, शुभे ग्राह्याः शुभान्विताः ॥६१४॥

भा०टी०—मेपादि वार राशिओ अनुक्रमे चर १ स्थिर २ द्विस्वभाव ३ चर ४ स्थिर ५ द्विस्वभाव ६ चर ७ स्थिर ८ द्विस्वभाव ९ चर १० स्थिर ११ द्विस्वभाव १२ छे, क्रूर कार्यमां क्रूरग्रहा-

ધ્યાસિત અને શુભ કર્મમાં શુભ ગ્રહાધ્યાસિત રાશિઓ ગ્રહણ કરવી જોઈયે.

લગ્નરાશિપતિઓ—

મેષાદીશાઃ કુજઃ ૧ શુક્રો ૨.
 બુધ ૩ ચન્દ્રો ૪ રવિ ૫ ઘૃધઃ ૬।
 શુક્રઃ ૭ કુજો ૮ ગુરુ ૯ મન્દો,
 મન્દો ૧૧ જીવ ૧૨ ઇતિ ક્રમાત્ ॥ ૬૧૫ ॥

આ૦ટી૦—મેષાદિરાશિના લગ્નોના સ્વામી અનુક્રમે આ પ્રમાણે છે—મેષ ૧મંગલ, વૃષભ ૨ શુક્ર, મિથુન ૩-બુધ, કર્ક ૪ ચન્દ્ર, સિંહ ૫ સૂર્ય, કન્યા ૬-બુધ, તુલા ૭-શુક્ર, વૃશ્ચિક ૮ મંગલ, ધનુ ૯ ગુરુ, મકર ૧૦ શનિ, કુંભ ૧૧ શનિ, મીન ૧૨-ગુરુ.

રાશિપતિઓના શત્રુઓ અને મિત્રો—

કુજસ્ય જ્ઞો રિપુર્મધ્યૌ, શનિશુક્રૌ પરેઽન્યથા ।
 કવેરમિત્રૌ મિત્રેન્દૂ, મિત્રે જ્ઞાર્કૌ સમાવુભૌ ॥ ૬૧૬ ॥
 બુધસ્ય મિત્રે શુક્રાર્કૌ, શત્રુરિન્દુઃ સમાઃ પરે ॥
 ચન્દ્રસ્યાર્કબુધૌ મિત્રે, કુજગુર્વાદયઃ સમાઃ ॥ ૬૧૭ ॥
 રવેઃ શુક્રશની શત્રુ, જ્ઞઃ સમઃ સુહૃદઃ પરે ।
 જીવસ્યાર્કાત્રયો મિત્રા-ગ્ન્યાર્કિર્મધ્યઃ પરાવરી ॥ ૬૧૮ ॥
 મન્દસ્ય જ્ઞસિતૌ મિત્રે, ગુરુર્મધ્યઃ પરેઽરયઃ ।
 તત્કાલસુહૃદો દ્વિ ૨ ત્રિ ૩,
 સુખ ૪ લાભા ૧૧ ન્ય ૧૨ કર્મ ૧૦ ગાઃ ॥ ૬૧૯ ॥

આ૦ટી૦—મંગલનો શત્રુ બુધ, સમ શનિ શુક્ર અને શેષ મિત્રો. શુક્રના શત્રુઓ સૂર્ય ચંદ્ર, મિત્ર બુધ શનિ, શેષ સમ. બુધના મિત્રો શુક્ર શનિ, શત્રુ ચંદ્ર અને શેષ સમા. ચંદ્રના મિત્રો-સૂર્ય બુધ,

अने शेष सम, शत्रु नथी. सूर्यना शुक्र शनि शत्रु, बुध सम अने शेष मित्रो. गुरुना सूर्य चंद्र मंगल मित्रो, शनि मध्य, बुध शुक्र शत्रु. शनिना बुध शुक्र मित्रो, गुरु मध्य, सूर्य चंद्र मंगल शत्रु. आ निसर्ग शत्रुता अने मित्रता छे, स्वस्थानथी बीजे त्रीजे चोथे दशमे अग्यारमे बारमे स्थाने रहेला ग्रहो तत्काल मित्रो अने पहेले पांचमे छठे सातमे आठमे नवमे स्थाने रहेला ग्रहो तत्काल शत्रु गणाय छे.

मित्र मध्यारयो येऽत्र, निसर्गणोदिताः क्रमात् ।

अधिमित्रसुहृन्मध्यास्ते स्युस्तत्कालमैत्र्यतः ॥६२०॥

येत्राऽरिमध्यमित्राणि, निसर्गणोदिताः क्रमात् ।

अधिशत्रुद्विषन्मध्यास्ते स्युस्तत्कालवैरतः ॥६२१॥

भा०टी०—अहियां जे मित्र मध्य शत्रुओ निसर्गथी कहा छे ते अनुक्रमे तत्काल मैत्रीथी अधिमित्र, मित्र अने मध्य बने छे, अहियां जे निसर्ग शत्रु मध्य अने मित्र छे ते तत्काल शत्रुभावथी अधिशत्रु, शत्रु अने मध्य बने छे,

अतिवैर तथा अतिमैत्री—

राहुरव्योः परं वैरं, गुरुभार्गवयोरपि ।

हिमांशुबुधयोर्वैरं, विवस्वन्मन्दयोरपि ॥६२२॥

अतिमैत्री राहुरान्यो-रिन्दुगुर्वोः कुजार्कयोः ॥

सितज्ञयोरतिमैत्री, ग्रहमैत्री ह्यानेकधा ॥६२३॥

भा०टी०—सूर्य राहु वच्चे अतिवैरभाव छे, गुरु शुक्र वच्चे अति वैर छे अने चंद्र बुध वच्चे अतिवैर छे (बुध चन्द्र तो वैरी नथी पण चंद्र बुधनो अतिवैरी छे) अने सूर्य शनि वच्चे पण अतिवैर छे. राहु-शनिने, चंद्र-गुरुने, मंगल-सूर्यने, चंद्र-बुधने अतिमैत्री छे अेम ग्रहोनी मैत्री अनेक प्रकारे छे.

ગ્રહોની નિસર્ગમૈત્રી-મધ્યસ્થ-શત્રુતા જ્ઞાપક કોષ્ટક—

ગ્રહો	સૂર્ય	ચંદ્ર	મંગલ	બુધ	ગુરુ	શુક્ર	શનિ
મિત્ર	ચં મં ગુ	સૂ બુ	સૂ ચં ગુ	શુ	સૂ ચં મં	બુ શુ	બુ શુ
મધ્યસ્થ	બુ	મંગુશુશ	શુ શ	મં ગુ શુ	શ	મં ગુ	ગુ
શત્રુ	શુ શ	૦	બુ	ચં	બુ શુ	સૂ ચં	સૂ ચં ગુ

ગ્રહમૈત્રી-શત્રુતા વિષયક પ્રાચીન મત—

જીવો બુધેજ્યૌ શુક્રજૌ, વ્યર્કા વ્યારા વિવિન્દિનાઃ ।

વીન્દિનારા ઇનાદીનાં, મિત્રાણ્યઃ તુ શત્રવઃ ॥૬૨૪॥

સ્ફુટો મિત્રારિભાવોઽયં, સર્વૈરુત્તો મહર્ષિભિઃ ।

નવો લોકપ્રસિદ્ધસ્તુ, ન પ્રત્યક્ષફલો યતઃ ॥૬૨૫॥

ખાંટી૦—સૂર્યાદિ ગ્રહોના મિત્રો અને શત્રુઓ આ પ્રમાણે છે—સૂર્યનો મિત્ર ગુરુ, શત્રુ ચંદ્ર મંગલ બુધ શુક્ર શનિ. ચંદ્રના મિત્રો બુધ ગુરુ, શત્રુ-સૂર્ય મંગલ શુક્ર શનિ. મંગલના મિત્રો-બુધ શુક્ર, શત્રુઓ-સૂર્ય ચંદ્ર ગુરુ શનિ. બુધના મિત્રો-ચંદ્ર મંગલ ગુરુ શુક્ર શનિ, શત્રુ-સૂર્ય. ગુરુના મિત્રો-સૂર્ય ચંદ્ર બુધ ગુરુ શુક્ર શનિ, શત્રુ-મંગલ. શનિના મિત્રો-બુધ ગુરુ શુક્ર, શત્રુઓ-સૂર્ય ચંદ્ર મંગલ. આ પ્રકટ મિત્ર-શત્રુભાવ સ્પષ્ટ છે અને સર્વ મહર્ષિઓએ કહ્યો છે, લોક પ્રસિદ્ધ મિત્ર-શત્રુભાવ નવો છે અને પ્રત્યક્ષ ફલ આપતો નથી.

પ્રાચીન મતાનુસારિ મૈત્રી-શત્રુવકોષ્ટક—

પ્રહા	સૂ	ચં	મં	બુ	ગુ	શુ	શ
મિત્ર	ગુ	બુ ગુ	બુ શુ	ચંમંગુ શુ શ	સચંબુ શુ શ	બુ શુ મં શ	બુ ગુ શુ
શત્રુ	ચંમંબુ શુશ	સૂ મં શુ શ	સૂ ચં ગુ શ	સૂ	મં	સૂ ચં	સૂ ચં મં

ग्रहोनी दृष्टिमर्यादा—

पश्यन्ति पादतो वृद्धया,
 भ्रातृ ३ व्योम्नी १० त्रिकोणके ।
 चतुरस्र ४-९ स्त्रियं ७ स्त्रोवन,
 मतेनाया ११ दिमा १ वपि ५-९ ॥६२६॥
 पश्येत्पूर्णां शनिभ्रातृ ३,
 व्योम्नी, १० घर्म ९ धियौ ५ गुरुः ।
 चतुरस्रे कुजोऽर्केन्दु-
 बुधशुक्रास्तु सप्तमम् ॥ ६२७ ॥

भा०टी०-ग्रहो पाद, द्विपाद, त्रिपाद, पूर्ण इत्यादि क्रमे जुदा जुदा स्थानोने जुए छे, पोते जे स्थानमां रहेल होय तेथी प्राजा दसमा स्थाने ते पावदृष्टिथी जुए छे, पांचमा नवमा स्थाने अर्धदृष्टिथी, चौथा आठमा स्थाने पौष्ठी दृष्टिथी अने सातमा स्थाने पूर्ण दृष्टिथी सर्व ग्रहो देखे छे, कोइ आचार्यना मते अग्यारमा अने पहेला स्थाने ग्रहोनी पूर्णदृष्टि होय छे. शनि त्रीजे दशमे, गुरु पांचमे नवमे अने मंगल चौथे आठमे स्थाने पूर्ण दृष्टिए देखे छे. ज्यारे रवि सोम बुध शुक्र एक सातमाने ज पूर्ण दृष्टिए देखे छे.

ताजिकोक्ता ग्रहदृष्टि—

तृतीयैकादशे तुर्य-दशमे नवपञ्चमे ।
 पादवृद्धया पिबन्त्येषु, पूर्णं चाऽर्क्यरिसुरयः ॥६२८॥
 युक्ताः परस्परं पूर्णं, तद्वत्पश्यन्ति खेचराः ।
 सर्वेऽपि सप्तमं चेत्ति, पूर्णदृक् ताजिकोदिता ॥६२९॥

भा०टी—ताजिकमां कहेल ग्रहदृष्टि केटलेक अंशे जुदो पडे छे, ताजिकना मते त्रीजे अग्यारमे, चौथे दशमे, अने नवमे पांचमे,

અનુક્રમે એકપાદ દ્વિપાદ ત્રિપાદ દષ્ટિ માનેલી છે અને એજ સ્થાનોમાં અનુક્રમે શનિ મંગલ ગુરુ પૂર્ણદષ્ટિવાલા હોય છે એજ રીતે એક સ્થાનમાં મલેલા ગ્રહો એક બીજાને પૂર્ણપણે દેખે છે અને સાતમા સ્થાનને પણ સર્વગ્રહો પૂર્ણદષ્ટિએ દેખે છે આ તાજિક દષ્ટિ કહી છે.

ગ્રહોનું બલાઽબલ—

તે સ્થાનબલિવોમિત્ર-સ્વગૃહોચ્ચનવાંશગાઃ ।

સ્ત્રીરાશિષ્વિન્દુભૃગુજૌ, પુંરાશિષુ પુનઃ પરે ॥૬૩૦॥

લગ્નાદ્યુત્ક્રમકેન્દ્રાલ્ય-દિક્ષુ પ્રાચ્યાદિષૂદ્બલાઃ ।

જીવજ્ઞૌ ૧ ભાસ્કરશ્માજૌ ૨ શનિઃ૩ સિતસિતદ્યુતી૪ ॥૬૩૧॥

બલિનોઽહ્નિ ગુરુસિતાર્કાઃ, સદા બુધો નિશિતુ ચન્દ્રકુજમન્દાઃ ।

સ્વદિનાદિષુ ચ સિતાસિત-પક્ષદ્વિતયેષુ શુભકૂરાઃ ॥૬૩૨॥

રવિચન્દ્રાબુદગયને, વિપુલસ્નિગ્ધાશ્ચ વક્રગાશ્ચાન્યે ।

બલિનો બુધિ ચોત્તરગા, વ્યર્કેન્દુયુતાશ્ચ ચેષ્ટાભિઃ ॥૬૩૩॥

સોમ્યૈર્દિગ્બલિનો દષ્ટા, બલે નૈસર્ગિકે પુનઃ ।

મન્દારજ્ઞેજ્યશુકેન્દુ-ભાસ્કરાઃ સ્યુર્બલોત્તરાઃ ॥૬૩૪॥

આટી—ગ્રહો મિત્ર-સ્વગૃહ-ઉચ્ચ-સ્વનવાંશકમાં હોય ત્યારે સ્થાનબલી હોય છે, ચંદ્ર શુક્ર સ્ત્રીરાશિઓમાં અને બીજા સર્વે પુરુષરાશિઓમાં હોય ત્યારે પણ સ્થાનબલી હોય છે, લગ્નથી સૃષ્ટિ-ક્રમે કેન્દ્ર સ્થાનોમાં રહેલા ગુરુ બુધ ૧, સૂર્ય મંગલ ૨, શનિ ૩, ચંદ્ર શુક્ર ૪, આ ગ્રહો ઉક્તબલી હોય છે, દિવસે સૂર્ય ગુરુ શુક્ર બલી, બુધ સદા બલી અને ચંદ્ર મંગલ શનિ રાત્રિએ બલી હોય છે, પોતાના વાર હોરાદિમાં સર્વ ગ્રહો બલો હોય છે, શુક્લપક્ષમાં સૌમ્ય ગ્રહો અને કૃષ્ણપક્ષમાં ક્રૂર ગ્રહો વિશેષ બલવાન્ હોય છે. સૂર્ય ચંદ્ર ઉત્તરવાસી અને વિપુલસ્નિગ્ધકરિણધારી હોય ત્યારે

बलवान् होय छे ज्यारे मंगलादि ग्रहो विपुल स्निग्ध किरण-
वाला अने वक्रगामी होय त्यारे बलिष्ठ होय छे. ग्रहयुद्धमां जे ग्रहो
उत्तर तरफ थइने जाये छे ते विजेता होइ बलवान् गणाय छे, सूर्यने
छोडी शेष ग्रहो चंद्रनी साथे होय छे त्यारे ते चेष्टाबली होइ
बलवान् होय छे, सौम्य ग्रहो वडे दृष्ट ग्रहो दृष्टिबली होय छे,
नैसर्गिक बलमां शनि मंगल बुध गुरु शुक्र चंद्र सूर्य ए एक बीजाथी
यथोत्तर बलवान् होय छे.

बलिनः कण्टकस्था, वर्षाधिपमासदिवसहोरेशाः ।

द्विगुणशुभाशुभफलदा, यथोत्तरं ते परिज्ञेयाः ॥६३५॥

रूपं ग्रहस्य दिवसे, द्विगुणं वर्गे स्वकालहोरायाम् ।

त्रिगुणमरिवर्गयोगे, फलस्य प्रान्त्यस्तृतीयांशः ॥६३६॥

भा०टी०—बलवान् थइ चंद्रमां रहेल वर्षपति, मासपति,
दिवसपति अने होरापति अे एक बीजाथी वमणुं वमणुं शुभ अशुभ
फल आपे छे अम जाणवुं, ग्रह पोताना वरुं अेक गणुं, पोताना वर्गमां
वमणुं अने पोतानी पोतानी कालहोरामां वमणुं फल आपे छे,
अने शत्रुना वर्गमां रहेलो ग्रह मात्र अेक तृतीयांश जेटहुं ज फल
आपे छे.

चंद्रबलनी श्रेष्ठता—

शशिवलमादौ कल्प्यं, पश्चादितरग्रहबलं कर्तुः ।

बलयुक्ते हिमकिरणे, बलिनो भवन्ति निखिलखगाः ॥६३७॥

हिमकिरणबलमाधारं, त्वाधेयं त्वन्यखेटजं धीर्यम् ।

आधारस्थान्यखिला-न्याधेयान्येव जृम्भन्ते ॥६३८॥

भा०टी०—प्रथम कर्ताना चन्द्रबलने कल्पवुं, पछीथी बीजा
ग्रहोना बलने जोवुं. चन्द्र बलवान् होय तो सर्व ग्रहो बलवान् बने छे,
केमके चन्द्रबल सर्वबलोनो आधार छे अने अन्य बलो आधेय छे. आ-
धार मजबूत होय तो ज आधेयो बुद्धिगत थाय छे.

લગ્નષડ્વર્ગઃ—

ત્રિંશદ્ભાગં લગ્ન-મિતં તદર્ધતુલિતા તુ હોરાહ્યા ।
 લગ્નતૃતીયો ભાગો, દ્રેષ્કાણઃ સ્યાન્નવાંશકો નવમઃ ॥૬૩૯॥
 દ્વાદશભાગો દ્વાદશાંશ-ત્રિંશત્તમત્રિંશદંશઃ સ્યાત્ ।
 ષડ્વર્ગો ભવતિ સદા, શુભસ્વચરસમુદ્ભવઃ શુભદઃ ॥૬૪૦॥
 પાપસમુત્થસ્ત્વશુભ-સ્તસ્માદ્ ગ્રાહ્યસ્તુ સૌમ્યષડ્વર્ગઃ ॥
 શુભકર્મણિ સતતં સંત્યાજ્યઃ પાપાહ્વયો વર્ગઃ ॥૬૪૧॥
 ચાપન્યુગ્ધટવૃષભાઃ, કર્કટકન્યાન્યશશયઃ શુભદાઃ ।
 શુભમવનત્વાદન્યે, ત્વશુભગૃહત્વાદશોભનાઃ પશ્ચ ॥૬૪૨॥

ખાંડી૦—લગ્ન ૩૦ ભાગ પરિમિત હોય છે, તેના અર્ધભાગ (૧૫ અંશ)નું નામ હોરા, લગ્નના તૃતીયાંશ (૧૦ અંશ)નું નામ 'દ્રેષ્કાણ' નવમા ભાગનું નામ નવમાંશ, ચારમા ભાગનું નામ દ્વાદશાંશ અને ત્રિંશમા ભાગનું નામ 'ત્રિંશાંશ' હોય છે. શુભગ્રહ સંબંધી ષડ્વર્ગે હ-મેશાં શુભ ફલદાયક હોય છે અને પાપ ગ્રહનો ષડ્વર્ગ અશુભ હોય છે તેથી શુભ કાર્યમાં સદા શુભ ષડ્વર્ગ ગ્રહણ કરવો અને પાપષડ્વર્ગનો ત્યાગ કરવો. ધનુ, મિથુન, તુલા, વૃષભ, કર્ક, કમ્બા, અને મીન રાશિઓ શુભગ્રહોનાં ઘર હોઈ શુભદાયક હોય છે અને શેષ-મે-ષ સિંહ વૃશ્ચિક મકર કુંભ, એ ૫ રાશિઓ અશુભ ગ્રહોનાં ઘર હોવાથી અશુભ હોય છે.

ષડ્વર્ગમાં નવમાંશનો વિશિષ્ટતા-દૈવજ્ઞવહ્નુમે—

લગ્નેશુભેઽપિ ચચંશઃ, ક્રૂરઃ સ્યાન્નેષ્ટસિદ્ધિદઃ ।

લગ્ને ક્રૂરેઽપિ સૌમ્યોઽશઃ, શુભદોઽશો બલી યતઃ ॥૬૪૩॥

સચ્ચરારાશેરશુભો નવાંશઃ,

પ્રોક્તઃ સપાપસ્થ ચ લગ્નસંસ્થઃ ।

ત્રિકોણકેન્દ્રેષુ ગુરુઃ સિતોવા,

ભવેત્તદાઽસાવશુભોઽપિ શસ્તઃ ॥૬૪૪॥

भा०टी०—लग्नशुभ होवा छतां जो अंश क्रूर होय तो ते इष्ट फल आपतो नथी अने लग्न क्रूर होता छतां अंश सौम्य होय तो शुभदायक थाय छे केमके लग्न करतां अंश बलिष्ठ होय छे. चन्द्रयुक्त राशिनो तथा पापग्रहाधिष्ठित राशिओ लग्नस्थित नवमांश अशुभ कह्यो छे छतां त्रिकोण के केन्द्रमां गुरु अथवा शुक्र रहेल होय तो ते अशुभ ण शुभ थइ जाय छे.

विवाहपदलमां कहुं छे—

सचन्द्रसकूरनवांशकं य—
 ल्लग्नं हरत्यायुरिति ब्रुवन्ति ।
 धीधर्मकेन्द्रे भृगुजोऽथवेज्यो,
 लग्नं तदेवायुरतीव धत्से ॥ ६४५ ॥

भा०टी०—जे लग्न चन्द्रयुक्त होय अथवा क्रूर नवमांशयुक्त होय ते आयुष्यनो नाश करे छे ऐम विद्वानो कहे छे छतां पांचमे नवमे के केन्द्रस्थानमां शुक्र अथवा गुरु होय तो ते ज लग्न आयुष्यनी अतिशय वृद्धि करे छे.

ज्योतिष्पकाशमां कहुं छे—

प्रोच्यते लग्नसंस्थोऽसौ, ग्रहो य उदितांशगः ।
 द्वितीयोऽनुदितांशस्थः, सर्वराशिष्वयं क्रमः ॥६४६॥

भा०टी०—लग्नना उदित नवमांशमां रहेल ग्रह लग्नस्थित कहेवाय छे ते आगेना अनुदित नवमांशस्थित द्वितीयभावस्थित इत्यादि क्रम सर्वराशिओमां जाणवो.

लग्नबल—

अधिपयुतो दृष्टो वा, बुधजीवनिरीक्षितश्च यो राशिः ।
 स भवति बलवान्न यदा, दृष्टो युक्तोऽपि वा शेषैः ॥६४७॥

लग्नाधिपः केन्द्रगतो बलिष्ठः,

स्वोच्चादिवर्गे शुभवर्गसंस्थः ।

करोति कर्तुर्बहुलार्थसिद्धिं,

विपर्ययेनैव विपर्ययं च ॥६४८॥

गृहादिवर्गः खेटो, मित्रषड्वर्गगोथवा ।

लग्नेशः कार्यसिद्धये स्यादेतत् सर्वं मुनेर्मतम् ॥६४९॥

पापोपि लग्नाधिपतिस्त्रिषष्ट-

लाभस्थितः स्थानबलाधिकश्च ।

लग्नोत्थदोषान्निखिलान्निहन्ति,

पापानि यद्वत्परमाक्षरज्ञः ॥ ६५० ॥

भा०टी०—जे राशि अधिपतिथी युक्त वा दृष्ट होय अथवा तो बुध या गुरु वडे दृष्ट होय अने बीजा ग्रहोथी युक्त के दृष्ट न होय ते बलवान् होय छे. लग्नेश बलवान् थइ केन्द्रमां रह्यो होय, स्वोच्चनो के स्वगृहादिषड्वर्गस्थित होय, सौम्यग्रहोना वर्गनो होय तो कर्ताना घणा कार्योंनी सिद्धि करे छे अने अथी विपरीत होय तो विपरीत फल आपे छे. गृहादि स्ववर्ग अथवा मित्रषड्वर्गनो लग्नपति ग्रह कार्यसिद्धि करे छे ए सर्व मुनिने मान्य छे. लग्नेश पापग्रह छातां त्रीजे छेद्वे अग्यारमे रहेल अने स्थानबली होय तो लग्नसंबन्धी सर्वदोषोनी नाश करे छे जेम तत्त्वज्ञानी दोषोने हणे छे,

पञ्चभिः शस्यते लग्नं, ग्रहैर्बलसमन्वितैः ।

चतुर्भिरपि चेत् केन्द्रे, त्रिकोणे वा गुरुर्भृगुः ॥६५१॥

भा०टी०—जे लग्नकुंडलीमां पांच ग्रहो बलयुक्त होय ते लग्न प्रशस्त गणाय छे, अने केन्द्र वा त्रिकोणमां गुरु अथवा भृगु रहेल होय तो चारग्रहोना बलवाहुं लग्न पण शुभ छे.

षड्वर्गं पञ्चवर्गं च चतुर्वर्गं शुभावहम् ।

त्रिवर्गं वापि सद्योगे, द्व्येकवर्गं तन्तुं त्वजेत् ॥६५२॥

भा०टी०—जे लग्नमां षड्वर्गं पंचवर्गं अथवा चारवर्गं सौम्यग्र-
हसंबन्धी होय ते शुभकारक छे अने लग्नमां कोइ बलवान् सौम्य-
ग्रह पडेलो होय तो शुभत्रिवर्गवाळुं लग्न पण लेवुं, पण द्विवर्ग अ-
थवा एकवर्गवाला लग्ननो तो त्याग ज करवो जोइये.

वसिष्ठ लग्नवलनो सारांश कहे छे—

शुभकार्याण्यखिलानि तु, त्रिकोणकेन्द्रस्थितेषु सौम्येषु ।

व्ययनैधनरिपुलग्नै-रसंयुते यत्र तुहिनकरे ॥६५३॥

भा०टी—जे लग्नकुंडलीमां सौम्य ग्रहो पहेले चोथे पांचमे
सातमे नवमे के दशमे स्थाने रहेला होय, चन्द्रमा लग्नमां छठे आठमे
के बारमे स्थाने न होय तेवा लग्नमां सर्व शुभकार्यो करवायी सिद्ध
थाय छे.

उदयास्तशुद्धि नारदमते—

लग्नलग्नांशकौ स्वस्व-पतिना वीक्षितौ युतौ ।

न चेद्वाऽन्योन्यपतिना, शुभमित्रेण वा तथा ॥६५४॥

वरस्य मृत्युः स्यात्ताभ्यां, सप्तसप्तोदयांशकौ ।

एवं तौ न युतौ दृष्टौ, मृत्युर्वध्वाः करग्रहे ॥६५५॥

कश्यप कहे छे—

त्रिप्रकारेण सा शुद्धि-र्नचेल्लग्नं च निन्दितम् ।

अपि पञ्चेष्टिकं लग्न-मनेकगुणसंयुतम् ।

त्यजेद्यथा शुनाघातं, तथा हव्यं घृतप्लुतम् ॥६५६॥

भा०टी०—लग्न तथा तेनो उदित नवमांशक पोतपोताना
स्वामिवडे दृष्ट अथवा युक्त न होय १, लग्नेश बडे नवमांश वा नव-

मांशपति वडे लग्नदृष्ट के युक्त न होय २, अथवा तो लग्नेशना शुभ-
मित्र वडे लग्न अने नवमांशपतिना शुभमित्र वडे नवमांश दृष्ट-युक्त
न होय ३, तो लग्ननवमांशाऽशुद्धि वडे पुरुषनुं मृत्यु थाय अने सप्तम
तथा सप्तमना नवमांशनी अशुद्धि वडे स्त्रीनुं मृत्यु थाय छे.

कश्यप कहे छे क-त्रण प्रकारे लग्न नवमांशनी शुद्धि न थाय
तो ते लग्न पंचवर्ग शुद्ध होय अनेक गुण सहित होय छतां ते वर्जवुं
जोहये जेम श्वान वडे सुंघायेल घीझरतुं दृश्य पदार्थ त्यजाय छे.

उदयास्तशुद्धौ आरंभसिद्धिः—

पश्यन्नंशाधिपो लग्नं, भवेदुदय शुद्धये ।

अंशास्तेशस्तु लग्नास्त-मस्तशुद्धये विलोकयन् ॥६५७॥

भा०टी०—नवमांश पति लग्ने जोतो उदय शुद्धिने माटे अने
सप्तमस्थानना नवमांशनी पति लग्नी सप्तम स्थानने जोतो छतो
अस्तशुद्धिने माटे थाय छे.

उदयास्तशुद्धि विप्रे व्यवहारप्रकाश—

अंशाधिपतेर्दृष्टि-र्यदांशकेऽशास्तपस्य भागास्ते ।

भागपतेर्लग्ने वा-ऽप्यंशास्तपतेर्विलग्नस्ते ॥६५८॥

उदयास्तस्य च यदा, दृष्टेः शुद्धिर्भवेद् विलग्रेऽत्र ।

कान्ताया मङ्गलान्य-तनूनि तनौ प्रजायन्ते ॥६५९॥

भा०टी०—ज्यारे नवमांश पतिनी दृष्टि नवमांश उपर अने
सप्तम नवमांशपतिनी दृष्टि सप्तम नवमांश उपर होय अथवा
नवमांशपतिनी दृष्टि लग्न उपर अथवा सप्तम नवमांशपतिनी दृष्टि
सप्तम उपर पडती होय त्यारे उदयास्त शुद्धि गणाग छे. लग्न तथा
सप्तमनी ज्यारे दृष्टि शुद्धि होय छे त्यारे ते लग्नमां परिणीत स्त्रीना
शरीर उपर अखंड मंगला उपजे-रहे छे. अर्थात् पतिपत्नी बने चिर
काल जीवित रही मंगलोपभोग करे छे.

उदयास्तशुद्धि विषे यतिवल्लभोक्त मतान्तर--
 उदयास्तांशतुल्याख्य-राशयोरपि विलोकने ।
 योगेऽथवा परे प्राहु-रुदयास्तविशुद्धताम् ॥६६०॥

भा०टी०—लग्नमां ग्रहण करेल नवमांश अने तेथी सातमो नवमांश जे राशिना होय ते राशिओ जो, स्वस्वस्वामियुक्त होय वा दृष्ट होय तो उदयारत शुद्धि होय छे आम बीजाओ कहे छे.

निर्बल अने त्याज्य लग्न—

अपि षड्वर्गसंशुद्धं, न ग्राह्यं शकुनैर्विना ।
 लग्नं यस्मान्निमित्तानां, शकुनो दण्डनायकः ॥६६१॥

भा०टी०—भले लग्न षड्वर्ग शुद्ध होय छतां शकुन विना न लेवुं. केम के 'शकुन' ए सर्व निमित्तोनो सेनापति छे.

लग्नं षड्वर्गसंशुद्धं, कुलिकेन विहन्यते ।
 अपि पञ्चचतुर्वर्गं, दूष्यते क्रूरहोरया ॥६६२॥

भा०टी०—षड्वर्ग शुद्ध लग्ने पण कुलिक हणी नांखे छे, वली पंचवर्ग वा चतुर्वर्ग शुद्ध लग्न होय तोथे क्रूर वारनी हारा तेने दूषित करी नांखे छे.

क्रूरैर्लग्नं युतं त्याज्यं, मंगलेष्वखिलेष्वपि ।
 जन्माङ्गादष्टमंक्रूरं, लग्नगं संत्यजेच्छुभे ॥६६३॥
 भृगुषष्टाह्वयो दोषो, लग्नात् षष्ठगते सिते ।
 उच्चगे शुभ संयुक्ते, तल्लग्नं सर्वदा त्यजेत् ॥६६४॥
 कुजाष्टमो महादोषो, लग्नादष्टमगे कुजे ।
 शुभत्रययुतं लग्नं, त्यजेत्तुंगगतं यदि ॥६६५॥

भा०टी०—क्रूरो वडे युक्त लग्ननो सर्व मंगल कार्योमां त्याग करवो. वली जन्मलग्नथी अष्टम स्थाने रहेल क्रूर ग्रह जो लग्नमां

आवतो होय तो ते लग्न शुभ कार्यमां वर्जवुं, भृगुषष्ठाख्य दोष एतले जे लग्नमां शुक्र छठे स्थाने पडतो होय पछी भले ते उच्चनो के शुभयुक्त होय छतां ते लग्न सदा त्याज्य करवुं, लग्नधी मंगल आठमो होय, ते कुजाष्टम महादोष, भले पछी लग्न त्रण सौम्यग्रहयुक्त होय के उच्चमत होय छतां तेनो त्याग करवो.

षडष्टेन्दुर्महादोषो, लग्नादष्टमषष्ठगे ।

चन्द्रस्योच्चेऽथवा पूर्णे, मृत्युकारी स मङ्गले ॥६६६॥

भा०टी०—चंद्रमा लग्नधी छट्टा अथवा आठमा स्थानमां होय त्यारे 'षडष्टेन्दु' नामक महादोष उपजे छे, भले चंद्र उच्चनो होय के पूर्ण होय छतां ते मंगलकार्यमां मृत्युकारी निवडे छे.

लग्नाधीशो नीचगे शत्रुगे वा,

रंध्रे चास्तं संगते वक्रगे वा ।

तद्लग्नं वै संत्यजेत्सर्वकार्ये,

कुर्यात्कार्यं चेत्तदा मृत्युभीतिः॥

भा०टी०—लग्नेश नीचनो होय, शत्रुक्षेत्री होय, अष्टम स्थान-गत होय, अस्तगत होय अथवा वक्री होय तो ते लग्न सर्व कार्यमां वर्जवुं, जो तेवा लग्नमां कोइ पण कार्य करे तो करनासने मरणनो भय रहे छे.

जन्मस्थोऽरि गृहाधिपोऽथ मरणाधीशोऽथवा मृत्युदः,

लग्नस्याधिपतिस्तथारिगृहगो वा मृत्युदो मृत्युगः ।

जन्मक्षौंद्यलग्नतोऽष्टमगृहं वा द्वादशक्षौंद्यं,

यात्रावेष्वखिलं धिया किल बुधैश्चिन्त्या भशुद्धिः सदा॥६६७॥

भा०टी०—षडष्टेश वा अष्टमेश लग्नमां मृत्युदायक होय छे, लग्नेश छठे अथवा आठमे होय तोये मृत्युदायक छे, जन्मराशि

अथवा जन्मलग्नथी अष्टमराशितुं के बारमीराशितुं लग्न यात्रादि सर्व कार्योंमां वर्जवुं, पंडितजनोए आ प्रमाणे राशिशुद्धि बुद्धिवडे अवश्य विचारवी.

कया ग्रहो कया स्थानोमां न जोइये ?

त्याज्या लग्नेऽब्धयो मन्दात्, षष्ठे शुक्रेन्दुलग्नपाः ।

रन्ध्रे चन्द्रादयः पञ्च, सर्वेऽस्तेऽब्जगुरू समौ ॥६६८॥

प्रायः शुभा न शुभदानिधनव्ययस्था,

धीधर्मरिप्फधनकेन्द्रगताश्च पापाः ।

सर्वार्थसिद्धिषु शशी न शुभो विलग्ने,

सौम्यान्वितोऽपि निधनं न शिवाय लग्नम् ॥६६९॥

भा०टी०—लग्नमां शनिथी ४ ग्रहो वर्जवा, एटले शनि रवि

सोम मंगल आ ४ ग्रहो लग्नमां त्यागवा, छट्टा स्थानमां शुक्र चंद्र

लग्नपति वर्जवा, आठमे चंद्र आदि ५ अर्थात् चंद्र मंगल बुध गुरु

शुक्र ए वर्जवा, सातमे सर्वे वर्जवा छतां चंद्र के गुरु अस्तमां होय

तो सम गणाय छे अशुभ नथी, प्राये करीने आठमे बारमे रहेला

शुभग्रहो शुभफल आपता नथी अने पांचमे नवमे बारमे बीजे

पहेले चोथे सातमे अने दशमे स्थाने रहेल पापग्रहो शुभदायक

नथी, चंद्रमा सर्व कार्योंमां लग्नमां रहेल सारो नथी, धले ते सौम्य-

ग्रहयुक्त पण होय छतां लग्नमां वर्जवो अने लग्न अथवा राशिथी

आठमी राशितुं लग्न कदापि शान्तिदायक होतुं नथी.

क्रूरकर्तरीदोष

लग्नेऽस्यष्ट्राग्रगयोरसाध्वो,

सा कर्तरीस्यादृजुवक्रगतयोः ।

तावे व शीघ्रौ यदि वक्रचारौ,

न कर्तरी चेति पितामहोक्तिः ॥ ६७० ॥

યઃ કર્તરી નામ મહાન્ હિ દોષો,
 લગ્નોદ્ભવાન્નૈકશુભગ્રહોત્થાન્ ।
 ગુણાન્ નિહન્તિ પ્રથલાનશેષાન્,
 ઢ્યાઘો યથા ગોસમ્મિતિં સમસ્તામ્ ॥૬૭૧॥

આ૦ટી૦—લગ્નમાં તેની પાછલ આગલ ચાલનારા પાપગ્રહો અનુક્રમે માર્ગી અને વક્રી હોતાં ક્રૂર કર્તરી દોષ ઉત્પન્ન થાય છે પણ તેજ વંને ક્રૂર ગ્રહો જો શીઘ્રગતિક હોય ત્રા વંને વક્રગતિક હોય તો કર્તરી દોષ ગણાતો નથી એમ પિતામહનું કથન છે. આ ક્રૂર કર્તરી મહાન દોષ છે અનેક શુભગ્રહજનિત પ્રબલ સર્વે ગુણોનો નાશ કરે છે જેમ વાઘ સમસ્ત ગોસમુદાયનો નાશ કરે છે.

ફલપ્રદીપકાર કહે છે—

ક્રૂરયોઃ કર્તરીનેષ્ટા, મહાવિઘ્નપ્રદા ધ્રુવમ્ ।
 સૌમ્યયોર્નાતિદુષ્ટાસ્યાન્મધ્યમા પાપસૌમ્યયોઃ ॥૬૭૨॥

આ૦ટી૦—ક્રૂર ગ્રહોની કર્તરી નેષ્ટ નિશ્ચયથી મહાવિઘ્ન દેનારી છે, સૌમ્ય કર્તરી વિશેષ સ્વરાવ નથી તથા ક્રૂર-સૌમ્ય કર્તરી મધ્યમ પ્રકારની હોય છે.

ક્રૂરકર્તરીસ્થિત લગ્ન તથા ચંદ્ર અને એનો પરિહાર—

ક્રૂરગ્રહસ્યાન્તરગા તનુર્ભવેદ્,
 મૃતિપ્રદા શીતકરશ્ચ રોગઃ ।
 શુભૈર્ધનસ્થૈ રથઘાન્ત્યગે ગુરૌ,
 ન કર્તરી સ્યાદિહ માર્ગવા ચિદુઃ ॥૬૭૩॥

ત્રિકોણકેન્દ્રગો ગુરુ-સ્થિલામગો રવિર્ધવા ।

તદા ન કર્તરી ભવેજ્જગાદ શાદરાયણઃ ॥૬૭૪॥

પૂર્વે પશ્ચાત્ પાપા-સ્થિત્યંશા ઘાટમધ્યગશ્ચન્દ્રઃ ।

વર્જયિત્વયો યોગે, યસ્માદ્ રાશ્યંશરશ્મિયુતિઃ ॥૬૭૫॥

भा०टी०—कूर ग्रहोना मध्ये रहेल लग्न मृत्युकारक अने चन्द्र रोगकारक थाय छे, पण भार्गवो (भृगुना अनुयायियो) कहे छे के धनस्थाने सौम्य ग्रह होय अथवा वारमा स्थानमां गुरु रहेल होय तो कर्तरी नथी एम जाणवुं. बादरायणे कहुं छे के जे कुंडलीमां गुरु त्रिकाण (५-९) केन्द्र (१-४-७-१०) नो होय, रवि त्रीजे अग्यारमे होय त्यारे कर्तरी दोषकारक होती नथी. चंद्रनी आगल पाछल १५-१५ अंशोना अथवा तेथी ओछा अंशोना आंतरे पाप-ग्रहो होय अने ते संदंशनी वच्चे चंद्र अथवा लग्न आवतुं होय तो ते लग्न अगर चंद्रनो त्याग कालो, केम के बन्ने ग्रहोनी युति धर्ता राशि अने अंशनी क्रियणयुति थाय छे जे लग्न अने चन्द्रने हाभि थाय छे. तात्पर्यार्थ ए छे के आगल पाछलना बने ग्रहोनुं अंतर लग्न के चंद्रथी १५-१५ अंशनुं अथवा तेथी ओछुं होय, आगलना पापग्रह बकी होइ सामेथी नजीक आ तो होय, पाछलनो ग्रह पण भार्गी होइ लग्न के चंद्रनी निकट आवतो होय, तो ते कर्तरी अवश्य बर्जेवी जाइये, पहेला पछीना ग्रहो बकी भार्गी होवा छर्ता १५-१५ अंशथी अधिक दूर स्थित होय, अथवा पहेला पछीना बने ग्रहो भार्गी होय, अथवा तो पछीनो ग्रह बकी होय तो ते स्थितिमां १५-१५ अंशथी ओछे आंतरे पापग्रहो होय तोये ते कर्तरी विशेष हानि-कर हाती नथी.

सापवाद कूरयुति—

सति दर्शने यदि स्या-दशह्रादशक मध्यगः कूरः ।

इन्दोर्लग्नस्य तथा, न शुभो राहुस्तु सप्तमगः॥६७६॥

भा०टी०—चंद्र तथा लग्नना वर्तमान भिक्षांशधी वार भिक्षांशमां कूर ग्रह रहेल होय अने ते चंद्र वा लग्नने पूर्ण रक्षिणी

દેખતો હોય તો તે શુભદાયક નથી અને લગ્ન ચંદ્રથી રાહુ સાતમો શુભ નથી. ઉદાહરણ રૂપે શનિ રાશિના વીસમા ત્રિંશાંશમાં છે અને લગ્ન અથવા ચંદ્ર રાશિના અષ્ટમાંશમાં વર્તે છે, ઇટલે શનિ અને ચંદ્ર વા લગ્નનું અંતર ૧૨ અંશોનું છે, રાશિની નવમાંશ કુંડલી લગ્ન વા ચંદ્ર ત્રીજા નવમાંશમાં છે અને શનિ છઠ્ઠામાં, છઠ્ઠા નવમાંશમાં રહેલ શનિ ચોથા કેંદ્રથી દશમા પ્રથમ સ્થાનસ્થિત લગ્ન વા ચંદ્રને પૂર્ણ દૃષ્ટિથી દેખે છે, તેથી આથી ક્રૂરયુતિ અવશ્ય વર્જનીય છે, આથી વિપરીત શનિ રાશિના ૨૨ મા ત્રિંશાંશમાં છે અને લગ્ન ૨૪ મા ત્રિંશાંશમાં અંશાન્તર બારથી ઓછું છે, છતાં શનિ ઉદિતાંશ કુંડલીમાં લગ્નને જોતો નથી તેથી આ ક્રૂરયુતિ बहुहानिकर નથી. એજ પ્રમાણે ચન્દ્ર સાથેની ક્રૂરયુતિને અંગે પણ જાણવું.

જામિત્રનામક લગ્નદોષ—

લગ્નથી ૭ મું સ્થાન 'જામિત્ર' કહેવાય છે, તે જામિત્ર ગ્રહરહેત હોવું સારું ગણાય છે, છતાં ચંદ્ર કે ગુરુ સાતમે હોય તો એ દોષ ઘાતક ગણાતો નથી, બુધ શુક્ર અને સૂર્યાદિ પાપગ્રહો જામિત્રમાં હોય તો તે વધુ સ્વરાય ગણાય છે, જામિત્ર દોષ વિવાહમાં અવશ્ય વર્જનીય છે જ પણ અન્ય શુભ કાર્યોમાં પણ એ દોષ શ્વય હોય ત્યાં સુધી વર્જવો જોઈયે, આ સંબન્ધમાં આરંભસિદ્ધિકાર કહે છે—

વિવાહ-દીક્ષયોર્લગ્ને યૂતેન્દૂ ગ્રહવર્જિતૌ ।

શુભૌ કેચિત્તુ ઝીવજ્ઞ-યુક્તમિન્દું શુભં વિદુઃ ॥૬૭૭॥

પત્રપશ્ચાશમે વાંશ, જામિત્રં પરમં પરે ।

અંશાદુઃક્રાન્તિ લગ્નેન્દ્રો-ર્ગૈર્હિતગ્રહદૂષિતમ્ ॥૬૭૮॥

ખાંટી—વિવાહ-દીક્ષાના લગ્નોમાં સપ્તમ સ્થાન અને ચંદ્ર એ બે ગ્રહરહિત હોવા જોઈયે, કેટલાકો ગુરુ બુધ યુવત ચંદ્રને શુભ

छे एम कहे छे ज्यारे अन्य ज्योतिषाचार्यीं लग्न तथा चंद्रना नवमांशथी पंचावनमो नवमांश जो वर्जितग्रहदूषित होय तो तेने ज 'परमजामित्र' गणीने लग्नमां वर्जे छे. दैवज्ञबल्लभकार पण ए वाततुं समर्थन करे छे.

लग्नेन्दुसंयुतादंशात् पञ्चपञ्चाशदंशके ।

ग्रहोन्वो यद्यसौ दोषो, गुणैरपि न हन्यते ॥६७९॥

भा०टी०—लग्नना तथा चंद्रना नवमांशथी पंचावनमा नव-
मांशमां जो कोइ ग्रह होय तो ए दोष गुणो वडे पण नष्ट थतो नथी.

शुभग्रहकृत लग्नगतदोषभंग—

तिथिवासरनक्षत्र-योगलग्नक्षणादिजान् ।

सबलान् हरतो दोषान्, गुरुशुक्रौ विलग्नगौ ॥६८०॥

त्रिकोणकेन्द्रगा वापि, भङ्गं दोषस्य कुर्वते ।

बक्रारिनीचगा वापि, ज्ञजीवभृगवः शुभाः ॥६८१॥

भा०टी०—तिथि वार नक्षत्र-योग लग्न मुहूर्त आदिना बलवान् दोषोने लग्नमां रहेला गुरु शुक्र दूर करे छे, वली त्रिकोण (२-९) अने केंद्र (१।४।७।१०) मां रहेला वक्री, शत्रुक्षेत्री के नीचना शुभ बुध गुरु अने शुक्र लग्नदोषोनी भंग करे छे.

आरंभसिद्धिकार कहे छे—

लग्नात् क्रूरो न दोषाय, निन्द्यस्थानस्थितोपि सन् ।

दृष्टःकेन्द्रत्रिकोणस्थैः, सौम्यजीवसितैर्यदि ॥६८२॥

भा०टी०—लग्नथी वर्जित स्थानमां होवा छतां क्रूरग्रह जो त्रिकोण के केन्द्रमां रहेल बुध गुरु के शुक्रवडे पूर्ण दृष्टिए दृष्ट होय तो दोषकारक थतो नथी.

लग्नजातान् नवांशोस्थान्, क्रूरदृष्टिकृतानपि ।

हन्याज्जीवस्तनौ दोषान्, व्याधीन् धन्वन्तरिर्यथा ॥ ६८३ ॥

सौम्यवाक्पति शुक्राणां, य एकोपि बलोत्कटः ।

क्रूरैरयुक्तः केन्द्रस्थः, सद्योऽरिष्टं पिनाष्टि सः ॥६८४॥

भा०टी०—लग्नजनित नवमांशथी उत्पन्न थयेल के क्रूर-ग्रहोनी दृष्टिथी उत्पन्न थयेल दोषोने लग्नस्थित गुरु धन्वन्तरि रोगोने हणे तेम हणे छे. बुध गुरु के शुक्र एक पण बलवान् थइ केन्द्रमां रहो होय, कोइ पण क्रूरथी युक्त के दृष्ट न होय, तो तत्काल अशुभ योणोत्रे पीसी नाखे छे.

बलिष्ठः स्वोच्चगो दोषा-नशीतिं शीतरश्मिजः ।

वाक्पतिस्तु शतं हन्ति, सहस्रं वा सुरार्चितः ॥६८५॥

बुधो विनार्केण चतुष्टयेषु,

स्थितः शतं हन्ति बिलग्नदोषान् ।

शुक्रः सहस्रं विमनोभवेषु,

सर्वत्र गीर्वाणगुरुस्तुलक्षम् ॥६८६॥

भा०टी०—बलवान् अने उच्चनो बुध ८० अंशो दोषोने दूर करे छे, तेज प्रकारनो गुरु सो अने शुक्र लाख दोषोने हणे छे. सूर्य विनानो बुध केन्द्र स्थानोमां रहोने सो लग्नदोषोने हणे छे, तेज प्रकारनो शुक्र सप्तमा सिवायना केन्द्रोमां रहे तो हजार अने सर्व-केन्द्र स्थित गुरु लाख दोषोने हणे छे.

चन्द्र-तारा बल—

मनुष्य ज नहिं, पदार्थ मात्र उपर चन्द्रबल तथा ताराबलनो प्रभात्र क्रम करे छे, कोइ पण भलाभूंडा प्रसंगे पोताना ग्रहमोचरतुं फल पूछे छे, पण कोइ पण ग्रहना उपर चन्द्रना बलाबलनी छाप तो होय ज, जे वर्ष, अयन, ऋतु, मास या पक्षमां चन्द्र शुभ फलदायक होय छे ते वर्ष, अयन, ऋतु, मास या पक्षमां बीजोग्रह अशुभ फल आपवाने पूर्ण समर्थ थतो नथी. एतुं कारण सर्वग्रहबलमां चन्द्रबलनी

गधानता छे, जे समयमां चन्द्रक्षीणबली होय छे त्यारे तेनुं प्रति निधित्व तारा करे छे, एटले कृष्णपक्षमां ज्यारे चन्द्रबल नथी होतुं त्यारे ताराबल जोड़ने कार्य करवानुं ज्योतिषशास्त्रमां विधान छे, ए वस्तु आ चंद्रताराबल प्रकरणथी समजाशे.

आ विषयनुं बसिष्ठ नीचे प्रमाणे विधान करे छे.—

प्रथमदिने वत्सरतः, शुभदे चन्द्रे च यस्य पुरुषस्य ।
तद्वर्षे शिशिरकरः, शुभफलदस्तस्य बुधयुक्तोऽपि ॥६८७॥
अयनादौ ऋतुसमये, मासेऽप्येवमेव विजानीयात् ।
ताराबलासिस्तच्छुभ-तारा चेत्तथैव शुभदा स्यात् ॥६८८॥
सितपक्षस्याद्यदिने, शुभदस्तत्पक्षमतिशुभः ।
असितस्यादावशुभः, शुभफलदः पक्षमखिलं तत् ॥६८९॥

जन्मत्रिकलत्ररिपु-

द्वितीयनवमायसुतदशमे ।

सितपक्षे हिमकिरणः,

शुभदः कृष्णे विपश्चधन नवमे ॥ ६९० ॥

भा०टी०—वर्षना पहेला दिवसे जे पुरुषने चन्द्र शुभफल-
दायक होय ते वर्षमां तेने चन्द्र शुभदायक ज होय छे, एज प्रमाणे
बुधने विषे पण जाणवुं, अयननी आदिमां, ऋतु लागे ते समयमां,
अने मासनी आदिमां पण एज प्रमाणे जाणवुं, वर्ष, अयन, ऋतु
मासनी आदिमां शुभ ताराबलनी प्राप्ति होय तो आखा वर्ष,
अयन, ऋतु अगर मासमां तारा पण शुभ फल आपनारी होय छे.
शुक्लपक्षना पहेला दिवसे जो चन्द्र शुभदायक होय तो संपूर्ण पक्ष
पर्यन्त शुभफल आपे छे. कृष्णपक्षना प्रारंभ दिवसे बेने चन्द्र
गोचरथी अशुभ होय तेने ते आखो पक्ष शुभ फल आपे छे, पहेली

त्रीजो सातमो छट्टो बीजो नवमो अग्यारमो पांचमो दशमो (१।२-।३।५।६।७।९।१०।११) मो चन्द्र शुक्लपक्षमां शुभदायक छे, अने कृष्णपक्षमां २।५।९ मा सिवाय उक्त स्थानीय चन्द्र गोचरथी शुभ होय छे.

जन्मभमनुजन्मर्क्षे, त्रिजन्मं नेष्टमखिलकार्येषु ।
संपत्तारा शुभदा, विपदाख्या विपत्प्रदा तारा ॥६९१॥
क्षेमाख्या क्षेमकरी, प्रतिकूला प्रत्यरिस्तारा ।
साधनभं साधनदं, नैधनभं नैधनं नृणाम् ॥६९२॥
मैत्रीकरणं मित्रभ-मतिमैत्रं परममैत्रर्क्षम् ।
एवं विचार्य सततं, बलाबलं देववित्त कथयेत् ॥६९३॥

भा०टी०—जेमां जेनो जन्म थयो होय ते तेनुं जन्म नक्षत्र, जन्म नक्षत्र तारामां त्रण आवे छे, १ लुं १० मुं १९ मुं, आ त्रणेय जन्म ताराओ सर्व कार्यामां अनिष्ट होय छे, जन्म नक्षत्रथी बीजुं नक्षत्र संपत्तारा जे शुभ छे, जन्मथी त्रीजुं विपत्तारा विपत्तिदायक छे. जन्मथी चोथुं नक्षत्र क्षेमातारा छे ते कल्याणकरी छे, पांचमी प्रत्यरितारा प्रतिकूलता आपनारी, छट्टी साधना तारा अनुकूल साधन आपनारी, सातमी तारा नैधना अथवा यमा छे जे मनुष्यजे मरण आपनारी छे, आठमी मैत्रीतारा जे मित्रता करावनारी अने नवमी अतिमैत्री जे परममित्रताकारक छे, एज प्रमाणे दशथी अदार सुधी अने ओगणीशथी सत्तावीश सुधीना ९।९ नक्षत्रोमां जन्मादि नव नव ताराओ समजवी. आम बधो विचार करी ज्यो-तिषीए ताराओनुं बलाबल कहेनुं,

सितपक्षे हिमकिरणो, बलवान् कृष्णेऽपि बलवती तारा ।
शशिवलवत् प्राधान्यं, शुक्ले कृष्णे च तारकायाश्च ॥६९४॥

अमृतकिरणस्त्वमृत-भवस्तद्वलमखिलं च तद्वत्स्यात् ।
 अमृतमयं तत्तस्मादभ्यधिकं त्वन्यखेटबलात् ॥६९५॥
 तुहिनकरो जगतां यद्दत् तद्वच्च तद्वलं त्वखिलम् ।
 तन्महिमानं व्याचष्टे गुणरूपं निखिलजन्तूनाम् ॥६९६॥

बलवानखिलमृगाणां,
 हरिरिव खचरबलानां च चन्द्रबलम् ।
 हिमकिरणे बलिनि सति,
 सर्वे बलिनो वियच्चरा नित्यम् ॥ ६९७ ॥

अभ्यधिकं चन्द्रबलं, त्वबलं ताराग्रहोद्भवं निखिलम् ।
 हिमकिरणबलार्थादपि, नो तुल्यं ग्रहबलं सर्वम् ॥६९८॥

भा०टी०—शुक्लपक्षमां चन्द्र बलवान् होय छे अने कृष्ण-
 पक्षमां तारा बलवती होय छे, शुक्लपक्षमां चन्द्र बलनी प्रधानता
 होय छे तेज प्रमाणे कृष्णपक्षमां तारा बलनुं माधान्य जाणवुं. चन्द्र
 अमृतजन्मा छे तेनुं सर्व बल पण तेने अनुरूप ज होय छे, चन्द्रबल
 गुणरूप चन्द्रता महिमाने सर्व प्राणिओ आगल प्रकट करे छे, जेम
 सर्व वनचर पशुगणोमां सिंह बलवान् होय छे तेम सर्वग्रहबलमां
 चन्द्रबल जाणवुं, चन्द्र बलवान् होय छे त्यारे ग्रहो हमेशां बलवान्
 होय छे, ताराबल अने सर्व ग्रहबल करतां चन्द्रबल अधिक होय छे,
 वास्तवमां बलीचन्द्रना अर्धबल तुल्य पण सर्वग्रहोनुं बल होतुं नथी,

चन्द्रबल-ताराबलनो समय विभाग ज्योतिर्निबन्धे—

तिथयः पञ्च शुक्लाद्या-श्चन्द्रस्तारायुतो बली ।
 तनुत्वाद्वर्तमानोऽपि, प्रौढस्त्रीको यथा पतिः ॥६९९॥
 परतश्चन्द्रमा एव, यावत्कृष्णाष्टमीदलम् ।
 प्रौढत्वात् पुरुषो यद्दत्, स्वतन्त्रः स्याद्विना स्त्रियम् ॥७००॥

कृष्णाष्टम्यूर्ध्वतो यावद्दिनं पैत्रं निशाकरः ।

क्षीणत्वाद् दुर्बलत्वेन, प्रधानं ताराबलम् ॥७०१॥

विकलाङ्गे यथा पत्न्यौ, कार्येषु प्रभवः स्त्रियः ।

एवं चन्द्रे च विकले, तारा बलवती भवेत् ॥७०२॥

भा०टी०—शुक्लपक्षनी प्रतिपदादि तिथिग्रामां तारा बलनी साथे चन्द्र बलवान् होय छे, जेम प्रौढस्त्रीनो दुर्बल पति. ते पछी कृष्ण पक्षनी अष्टमीना पूर्वार्ध सुधी चन्द्र स्वतन्त्र बली होय छे जेम प्रौढ पुरुष स्त्रीना बल विना कार्य करे छे. कृष्णाष्टमीना उत्तरार्धधी अमावास्या सुधी चंद्र क्षीण होइ दुर्बल होय छे एटले ताराबलनी प्रधानता होय छे, जेम पतिनी विकल अवस्थामां स्त्रियो सर्व कार्योंमां स्वतंत्र होय छे, एज रीते चन्द्रनी विकलतामां ताराबलवती होय छे.

अशुभ तारानो परिहार-ज्योतिःसागरे—

शशिनि परिस्फुटकिरणे, स्वतुङ्गभवने स्वकीयवर्गे वा ।

क्षौरादिकेपि कार्ये, तारादोषो न दोषाय ॥७०३॥

शुभदः स्वशुभोच्चगृहे, भवति यदोन्दुः कलावशेषोऽपि ।

ताराऽप्यशुभा शुभदा, भवति तदानीं न संदेहः ॥७०४॥

भा०टी०—चन्द्र स्पष्ट किरणो बडे प्रकाशतो होय, स्वगृही स्वउच्चनो अथवा स्ववर्गस्थित होय तो क्षौरादि कार्य जे खास तारा बलमां करवानुं छे, ते बिलुद्धतारामां करे तो पण तारानी दुष्टता नडती नथी, चन्द्र भले कलामात्र शेष होय छतां गोचरथी शुभ होय स्वगृही होय सौम्यगृही होय अथवा उच्चनो होय तो तारा अशुभ होय तोये शुभ फल आपे छे एमां संदेह नथी.

दुष्टताराना अपवादमां गर्ग कहे छे—

विषदि प्रत्यरे चैत्र, नैधने च यथाक्रमम् ।

प्रथमान्त्यतृतीयाः स्युर्वर्जनीया यथाक्रमम् ॥७०५॥

भा०टी०—विषद्, प्रत्यरि अने नैघन तारानो अनुक्रमे प्रथम चतुर्थ अने तृतीय चरणनो त्याग करीने आवश्यक कार्य करे तो दुष्ट तारानो दोष बाधक होतो नथी.

घातचन्द्र ए शुं छे ?

आजना केटलाक ग्रामीण ज्योतिषीओ 'घातचन्द्र'ना नामथी भडकी उठे छे, एथी सारामा सारी दिनशुद्धि होय लग्न गमे तेठलुं बलवान् होय छतां वर के कन्याने घात चंद्रनी बला बलगी एटले लग्न नापास ! कोइ पण शुभ कार्यने अंगे मुहूर्त गमे तेनुं शुभ होय पण कार्यकारक के बीजा कोइ तत्संबंधी व्यक्तिना नामनो घात चंद्र थयो एटले ते मुहूर्तने अंगे विरुद्ध चर्चाओ थवा मांडे, परिणाम ए आवे छे के अबोध जनता सारो टाइम खोवे छे अने आवा अर्ध-दग्ध ज्योतिषीओनी घातोमां आबीने पोतानां शुभ कार्यो केटलीक वार साव साधारण समयमां करी तेनुं विपरीत फल भोगवे छे. आवा कारणोने लक्ष्यमां लेइने अमो आ प्रसंगे घातचन्द्रने अंगे च्यार शब्दो लखवानुं प्रासंगिक मानीये छीये.

'घातचंद्र' घाततिथि, घातवार, घातलघादि के जेना उपर आजना टिप्पणीया ज्योतिषीओ आठलुं बधुं भार मूके छे ते 'घातो, स्वरी रोते ज्योतिषनी वस्तु नथी पण ए यामलादि स्वर शास्त्रोमांथी उतरी आवेल निर्मूल वस्तु छे. वसिष्ठ, नारद, वराहमिहिर, लल्ल आदि प्राचीन ऋषिओए के आचार्योए आ घातना सिद्धान्तने स्वीकार्या नथी, रत्नमाला, पाकृथी, नारचन्द्र, आरंभसिद्धि, आदि १३ मी शताब्धी सुधीना प्रामाणिक ज्योतिषशास्त्रमांये आ चन्द्र-घातनो सिद्धान्त कोइए उल्लेख्यो नथी, सर्व प्रथम आ घातनो सिद्धान्त सत्तरमा सैकामां रचायेल रामदैवज्ञना मुहूर्तचिन्तामणिमां संग्रहायेलो दृष्टिगोचर थाय छे, ते आ प्रमाणे—

भूपञ्चाङ्गद्वयद्विग्वहिसप्त-
 वेदाऽष्टेशार्काश्च घाताख्यचन्द्रः ।
 मेषादीनां राजसेवाविवादे,
 यात्रायुद्धाद्ये च नान्यत्र वर्ज्यः ॥७०६॥

भा०टी०—पहेलो पांचमो नवमो बीजो छट्टो दशमो त्रीजो सातमो चौथो आठमो अग्यारमो अने बारमो (१-५-९-२-६-१०-३-७-४-८-११-१२) ए मेष आदि राशिओनो घातचंद्र छे, जे राजसेवा, विवाद, यात्रा, युद्ध आदि कार्योमां वर्जवो. बीजा कामोमां नहिं.

उक्त पद्यनी पीयूषधारा टीकामां गोविन्द दैवज्ञ कहे छे—

“ अन्यत्र विवाहान्नप्राशनादिमंगलकृत्ये न वर्ज्यः । ”

भा०टी०—अन्यत्र एटले विवाह अन्नप्राशन आदि मांगलिक कामोमां घातचंद्र न वर्जवो. पोताना कथनना समर्थनमां ते ‘ उक्तं च ’ कहीने नीचे प्रमाणे ग्रन्थान्तरनुं पद्य आपे छे.

अजाज्जन्मधीधर्मवित्तारिखत्रि-
 स्मराऽब्ध्यष्टलाभान्त्यगो घातचन्द्रः ।
 नृपद्वारयात्रावरोधागमादौ,
 विचिन्त्यो विवाहादिके नैवचिन्त्यः ॥७०७॥

भा०टी०—मेष राशिधी अनुक्रमे पहेली पांचमी नवमी बीजो छट्टी दशमी त्रीजो सातमी चौथी आठमी अग्यारमी बारमी राशिमां रहेलो चन्द्र आ राशिओनो घातचंद्र होय छे राजद्वारे जतां यात्रामां अने सेनानो अवरोध उपस्थित थतां के ए प्रकारना बीजा कार्योमां घातचंद्रनो विचार करवो, विवाहादि शुभ कार्योमां एनो विचार करवो नहिं.

ए पछी टीकाकार दैवज्ञ गोविंद 'अन्यत्रापि' आवा उल्लेख साथे कोइ त्रीजा ग्रन्थना "भूपञ्चनन्दा" इत्यादि त्रण पद्यो उद्धरे छे जे पैकीना प्रथम पद्यनां ३ चरणोमां मेषादि १२ राशिओना घातचंद्रनो उल्लेख छे अने चौथा चरणमां—

“यात्रासु युद्धेषु च घातचन्द्रः”

—आ प्रमाणे घातचन्द्रनो विषय निर्देश्यो छे के-घातचंद्र यात्राओ अने युद्धोमां जोवानो छे, टीकाकारे आपेलां अे त्रण पद्यो पैकीना छेला बे श्लोको नीचे प्रमाणे छे—

युद्धे चैव विवादे च, कुमारीपूजने तथा ।

राजसेवावाहनादौ, घातचन्द्रं विवर्जयेत् ॥७०८॥

तीर्थयात्रा-विवाहान्न-प्राशनोपनयादिषु ।

सर्वमांगल्यकार्येषु, घातचन्द्रं न चिन्तयेत् ॥७०९॥

भा०टी०—युद्ध, विवाद कुमारिकापूजन राजसेवा अने वाहना-रोहण आदिमां घातचंद्र वर्जवो, तीर्थयात्रा, विवाह, अन्नप्राशन, उपनयन आदिकमां तथा सर्वप्रकारना मांगलिक कार्योमां घातचन्द्र जोवानी जरूरत नथी.

ए पछी गोविंद ज्योतिर्विद् घातचन्द्र विषयक पोताना एक पद्यनुं अवतरण आपी टीकाना अंतमां कहे छे—“एतदपि निर्मूलम् ।” अर्थात् आ घातचन्द्र प्रकरण पण निर्मूल एटले आधार विनातुं छे, अर्थात् आने कोइ मौलिक सिद्धान्त ग्रन्थनो आधार नथी.

घातचंद्र, घाततिथि, घातवार, घातनक्षत्रनुं निरूपण करीने टीकाकार गोविंद घातनक्षत्र विषयक श्लोकनी टीकाना अन्तमां लखे छे—“तदेते दोषा दाक्षिणात्यप्रसिद्धा निर्मूलाः॥” अर्थात् उपर कहेल चंद्र, तिथि, वार, नक्षत्रघातना दोषो दाक्षिणात्य-देशमां प्रसिद्ध छे अने निर्मूल-निराधार छे.

વિદ્વાન્ ટીકાકારની ઉપર્યુક્ત સ્પષ્ટ ઘોષણાથી જાણી શકાય છે કે આ ઘાતપ્રકરણ વાસ્તવમાં કોઈ સૈદ્ધાન્તિક વસ્તુ નથી પણ દેશવિશેષ પ્રસિદ્ધ એક પરમ્પરાગત રૂઢિ છે અને તેનો સંબન્ધ માત્ર યુદ્ધ, યાત્રા, વિવાદાદિ કે જેમાં પ્રાણહાનિનો ભય હોય તેવા કાર્યોની સાથે છે, તીર્થયાત્રા, વિવાહ, પ્રતિષ્ઠા અને એજ પ્રકારના સર્વમાંગલિક કાર્યોની સાથે, ઘાત પ્રકરણનો કોઈ સંબન્ધ નથી.

આ સ્પષ્ટ વસ્તુસ્થિતિ વાંચવા છતાં પણ જેમના મનમાંથી ઘાત-ચંદ્રની ભ્રાંતિ ન નિકલતી હોય અને ' ઘાતચંદ્ર 'ના પરિહારને માટે ફાંફાં મારતા હોય તેવા રૂઢિપ્રિય જ્યોતિષીઓને અમો નિમ્નલિખિત ઘાતચંદ્રના પરિહાર વિષયક બે શ્લોકો અર્પણ કરીએ છીએ કે જે ઘાતચંદ્ર વિષયક શ્લોકની પીયૂષધાગ ટીકાની સમાપ્તિ પછી આ પ્રમાણે છપાયેલ છે.

આગ્નેયત્વાષ્ટ્રજલપ-પિચ્ચવાસવરૌદ્રભે ।

મૂલબ્રામ્હાજપાદર્ક્ષે, પિચ્ચમૂલાજભે ક્રમાત્ ॥૭૧૦॥

રૂપદ્વયગ્ન્યગ્નિમૂરામ-દ્વયઘ્ન્યગ્ન્યધ્વિયુગાગ્નયઃ ।

ઘાતચન્દ્રે ધિષ્ણ્યપાદા, મેષાદ્ અર્ચ્યામનીષિભિઃ ॥૭૧૧॥

ભા.ટી. — મેષાદિ ૧૨ રાશિના ઘાતચંદ્રમાં નીચે પ્રમાણે નક્ષત્રોના પાયા વર્જિત કરવાથી ઘાતચંદ્રનો પરિહાર થાય છે—મેષના ઘાતમાં કૃત્તિકાનો ૧, વૃષમાં ચિત્રાના ૨, મિથુનમાં શતભિષાના ૩, કર્કમાં મઘાના ૩, સિંહમાં ધનિષ્ઠાનો ૧, કન્યામાં આર્દ્રાના ૨, તુલામાં મૂલના ૨, વૃશ્ચિકમાં રોહિણીના ૪, ધનુમાં પૂર્વાભાદ્રપદાથી ૩, મકરમાં મઘાના ૪. કુંભમાં મૂલના ૪, અને મીનના ઘાતચંદ્રમાં પૂર્વાભાદ્રપદાના ૩ ચરણો બુદ્ધિમાનો૯ વર્જિત કરવા.

ઘાતચન્દ્ર વિષયક ઉપર્યુક્ત નિર્ણય વાંચીને બુદ્ધિમાન્ જ્યોતિષી-ઓ૯ જ્યોતિર્વિદાભરણ જેવા કૂટ તથા અપ્રામાણિક ગ્રન્થોના આધારે બનેલા સંગ્રહ-સંદર્ભોની વાતો ઉપર કેટલો આધાર રાખવો ૯ તેમને પોતાને વિચારવાનો વિષય છે.

प्रासादादि-वास्तु मुहूर्तो—

(१) गृहारम्भ मुहूर्त

भूम्यारम्भे तथा कूर्मे-सूत्रपाते शिलासु च ।

क्षुरे द्वारोच्छ्रये स्तम्भे, पट्ट-पद्मशिलासु च ॥७१२॥

शुक्राग्रे पुरुषे चैव, घण्टायां कलशोच्छ्रये ।

ध्वजारोपे प्रतिष्ठायां, मुहूर्तानि निरूपयेत् ॥७१३॥

भा०टी०—प्रासादादि निर्माणार्थं भूमिखनन १, कूर्म अथवा कूर्मशिलान्यास २, सूत्रपातनुं-सूत्रशी प्रासादनी भूमि मापी तल कायम करवानुं ३, शिलान्यास ४, पीठउपरं खुरकनो धर मांडवानुं ५, द्वारारोपण ६, स्तंभउभो करवानुं ७, पाटचढाववानुं ८, पद्मशिलाढोंकवानुं ९, शुक्रनास ढांकवानुं १०, प्रासाद पुरुष स्थापवानुं ११, आमलसारो चढाववानुं १२, कलशचढाववानुं १३, ध्वजारोप करवानुं १४ अने प्रतिष्ठानुं १५, आ प्रासाद वास्तु सर्वं मुहूर्तोना कार्योंमां जीवानो होय छे. अर्थात् आ सर्व कामो शुभ समयमां करवां जोइये. प्रासाद तथा गृहारंभादिना मुहूर्तोमां शेषचक्र १ तथा भूम्यारंभमां वृषवास्तुचक्र २, प्रासादचयनमां कूर्मचक्र ३, द्वारारोपणे द्वारचक्र ४, राहुनिवासचक्र ५, वत्सनिवासचक्र ६, स्तंभोच्छ्रयमां स्तंभचक्र ७, पट्टकारोपणे भोमचक्र ८, आमलसारारोपण घंटाचक्र ९, प्रवेशे कलशचक्र १०, आदिचक्रो जीवानां होय छे. तेथी आ चक्रो अमोअे दिनशुद्धिना निरूपण प्रसंगे आप्यां छे, जे त्यांथी जोइने मुहूर्त आपवुं.

भूम्यारंभ मुहूर्त—

गृहवास्तु अथवा प्रासादवास्तुना आरंभ करवामां प्रथममास शुद्धि जोवी, वास्त्वारंभमां मासशुद्धि नीचे प्रमाणे छे—

वैशाखे श्रावणे मार्गे, पौषे फाल्गुन एव च ।

कुर्वीत वास्तु प्रारम्भं, न तु शेषेषु सप्तसु ॥७१४॥

भा०टी०—वैशाख श्रावण मार्गशीर्ष पौष अने फाल्गुन अे पांच-चान्द्रमासोमां वास्तुकर्मनो आरंभ करवो, बाकीना सात महीनाओ-मां न करवो ।

वास्तुवारंभना सौरमासो—

धरमारभेन्नोत्तरदक्षिणास्यं,

तुलालिमेषर्षभभाजि भानौ ।

प्राक्पश्चिमास्यं मृग कुंभ कर्क-

सिंह स्थिते द्व्यंगगते न किञ्चित् ॥७१५॥

भा०टी०—मेष वृषभ तुला वृश्चिक राशिना सूर्यमां उत्तर द्वार तथा दक्षिण द्वारना घर अथवा प्रासादनो कार्यारंभ न करवो, अेज रीते मकर कुंभ कर्क सिंह राशिनो सूर्य होय त्यारे पूर्व-पश्चिममुख घरके प्रासादनो आरंभ न करवो, अने मिथुन कन्या धन मीन आ ४ द्विस्वभावराशिना सूर्यमां कोइ वास्तुनो आरंभ करवो नहि.

ए विषे ज्योतिस्तत्त्वकार कहे छे—

पूर्वापरास्यं तु नभोऽन्त्यपौषे,

याम्योत्तरास्यं सहसि-द्वितीये ।

कार्यं गृहं जीवधुधर्क्षगार्कं,

नीचास्तगौ जीवसितौच हित्वा ॥७१६॥

भा०टी०—पूर्व मुख पश्चिममुख गृह श्रावण पौषमें अथवा फाल्गुनमासमां आरंभवुं अने दक्षिण-उत्तर मुख गृह मार्गशीर्ष वा वैशाखमां करवुं, धन मीन मिथुन कन्याना सूर्यमां गृहारंभ करवो नहां, गुरू-शुक्र नीचना होय वा अस्त होय तो गृहारंभमां वर्जवा.

नारदजीना मते गृहनिर्माणना महीना—

सौम्यफाल्गुन वैशाख-माघ श्रावण कार्तिकाः ।

मासाःस्युर्गृहनिर्माणे, पुत्रपौत्रघनप्रदाः ॥७१७॥

भा०टी०—मार्गशीर्ष फाल्गुण वैशाख माघ श्रावण कार्तिक
आ महीना गृह निर्माणमां पुत्र पौत्र घनने आपनारा छे.

नारदजीना मते गृहनिर्माणमां सौरमासो—

गृहसंस्थापनं सूर्ये, मेषस्थे शुभदं भवेत् ।

वृषस्थे धनवृद्धिः स्यात्, मिथुने मरणं ध्रुवम् ॥७१८॥

कर्कटे शुभदं प्रोक्तं, सिंहे भृत्यविवर्धनम् ।

कन्या रोगं तुला सौख्यं, वृश्चिके धनवृद्धिदम् ॥७१९॥

कार्मुके तु महाहानि-र्मकरे स्याद्धनागमः ।

कुंभे तु रत्नलाभः स्याद्, मीने सद्य महाभयम् ॥७२०॥

भा०टी०—मेषना सूर्यमां गृहारंभ शुभदायक थाय छे, वृ-
षभनासूर्यमां धन वृद्धि, मिथुनना सूर्यमां मरण दायक. कर्कमां शुभद,
सिंहमां भृत्यवृद्धि, कन्यामां रोग, तुलामां सुख, वृश्चिकमां धनवृद्धि,
धनुमां महाहानि, मकरमां धनतुं आगमन, कुंभमां रत्नलाभ, अने
मीनना सूर्यमां आरंभेल गृह महाभय अने शोकदायक थाय छे.

वास्त्वारंभना नक्षत्रो गर्ग कहे छे—

व्युत्तरामृगरोहिण्यां, पुष्ये मैत्रे करत्रये ।

धनिष्ठा द्वितये पौष्ये, गृहारंभः प्रशस्यते ॥७२१॥

भा०टी०—उत्तरा फाल्गुनि, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपदा, मृ-
गशीर्ष रोहिणी, पुष्य, अनुराधा, इस्त, चित्रा, स्वाति. धनिष्ठा, श-
तभिषा, रेवती, अे नक्षत्रोमां गृहारंभ करवो शुभ गणाय छे,

देवालयना आरंभमां मासोनो अतिदेश-वास्तुमंडने—

देवालयं तद्भागं च, वाटिकोद्धरणं गृहम् ।

गृहमासोदितं शास्त्रं, माघे पि मुनिसंमतम् ॥७२२॥

भा०टी०—देवमंदिर तलाव वावडी जीर्णगृह उद्धार अे सर्व कार्यों गृहनिर्माणना महीनाओमां करवां शुभ छे. अे कार्योंमां माघ मास पण शुभ मानेलो छे.

गृहारंभना वारो—

गृहारंभना मुहूर्तमां रविवार अने मंगलवार वर्जित छे, शेष सर्व वारो लीधेला छे. छातां अेटलुं ध्यानमां राखवातुं के जे ग्रहनो वार लेवो होय ते ग्रह नीचनो के अस्तगत न होवो जोश्ये कारण के बलहीनग्रहना वारे करावेल कार्य प्रायः सफल थतुं नथी.

गृहारंभनी तिथिओ—

गृहारंभमां प्रतिपदा, चतुर्थी, अष्टमी, नवमी, चतुर्दशी सिवायनी शुक्लपक्षनी वधी तिथिओ शुभ छे. कृष्ण पक्षमां पण रिक्ता अष्टमी अमावास्या विनानी सर्वतिथिओ गृहारंभमां लइ शकाय छे.

तिथि वारने अंगे भृगुनो मत—

रिक्ताष्टमः दर्श रवीन्दु भौमा, विवर्जनीया विदुषा प्रयत्नतः ।

अर्थात्—बन्ने पक्षनी रिक्ता (४-९-१४) अष्टमी अमावास्या अे तिथिओ अने रवि सोम मंगल अे वारो विद्वाने यत्नपूर्वक गृहारंभमां वर्जवा.१

दिनशुद्धि विषे नारद—

मृदु-ध्रुव-क्षिप्रभेषु, रिक्तामाकारवर्जिते ।

दिनेशुद्धेऽष्टमे लग्ने, शुभे शंकुं विनिक्षिपेत् ॥७२३॥

१-बीजा अथकारोअे सोमवार विहित गण्यो छे.

सूर्याङ्गारकवारांशा, वैश्वानरभयप्रदाः ।

इतरग्रहवारांशाः, सर्वकामार्थसिद्धिदाः ॥७२४॥

भा०टी०—मृदु (मृगशिर, चित्रा, अनुराधा, रेवती) ध्रुव (रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपदा,) क्षिप्र (अश्विनी, पुष्य, हस्त, अभिजित्,) नक्षत्रोमां रिक्ता (चौथ-नोम-चौदश) अमावास्या तिथि अने रवि-मंगल वर्जित दिवसे अष्टम शुद्धिमां अने शुभलग्नमां वास्तुभूमिमां शंक्नु गाडवो. रविवार मंगलवार अने आ वन्नेना अंशो अग्निभय उत्पन्न करनारा छे, बीजा ग्रहोना वारो तेमज अंशो सर्व कार्योंनी सिद्धि आपनारा छे.

ए विषे ज्योतिषप्रकाशकार लखे छेः—

पातादिकान् महादोषान्, हित्वा प्रोक्तेऽत्र भादिके ।

कर्तव्यं शिल्पनिर्माणं, योगैरायुष्प्रदैः शुभैः ॥७२५॥

भा०टी०—पातादि महादोषो टालीने विहित नक्षत्रादिकर्मा आयुर्दायक शुभयोगोत्राला लग्नमां गृह प्रासादादि शिल्पकार्यनुं निर्माण करवुं.

गृह-निर्माणमां चन्द्रनी दिशा—

चक्रे सप्तशलाकाख्ये, कृत्तिकाद्यानि विन्यसेत् ।

ऋक्षं चन्द्रस्य वास्तोश्च, पुरः पृष्ठे च नो शुभम् ॥७२६॥

भा०टी०—सात शलाकाना चक्रमां कृत्तिकादि २८ नक्षत्रो पोतपोतानी दिशामां लखी मुहूर्तना दिवसनुं चन्द्र नक्षत्र तथा घरनुं नक्षत्र जोवुं, जो घरना द्वारनी संमुख दिशामां के पाछली दिशामां अे नक्षत्रो आवतां होय तो मुहूर्त न करवुं, तात्पर्य अे छे—के गृहनिर्माण-मुहूर्तमां चन्द्रनो वासो गृहसंमुख या पाछलनो न होवो जोइये अने गृहनक्षत्र पण ते वखते सामे या पाछलनी दिशामां न रहेवुं जोइये. आ त्रिधान केवल गृहने माटे छे.

પ્રાસાદ, દેવાલય શ્રીગૃહને માટે ચન્દ્રનક્ષત્ર તેમ પ્રાસાદિ નક્ષત્ર સંમુખ હોય તો શુભ ગણાય છે.

ગૃહનિર્માણમાં ચન્દ્રદિશાના ફલ વિષે બ્રહ્મશંસુ—

ધનલાભઃ પ્રવાસઃ સ્થાત્ , આયુશ્ચૌરભયં ક્રમાત્ ।

દક્ષાગ્રવામપૃષ્ઠસ્થે, ગૃહકર્તુર્નિશાકરે ॥૭૨૭॥

ભા૦ટી૦—જમણા, આગેના, ડાબા અને પાડલના ચન્દ્રમાં ગૃહસ્વામીને અનુક્રમે ધનપ્રાપ્તિ, પ્રવાસ, આયુષ્યવૃદ્ધિ, અને ચૌરભય થાય છે.

ઋક્ષોચ્ચયે ગૃહારંભ નક્ષત્રો—

ચિત્રા શતભિષા સ્વાતી, હસ્તઃ પુષ્યઃ પુનર્વસૂ ।

રોહિણી રેવતી મૂલં, શ્રવણોત્તરફાલ્ગુની ॥ ૭૨૮ ॥

ધનિષ્ઠા ચોત્તરાષાઢા, તથા ભાદ્રોત્તરાન્વિતા ।

અશ્વિની મૃગશીર્ષં ચ, અનુરાધા તથૈવ ચ ॥૭૨૯॥

વાસ્તુપૂજનમેતેષુ, નક્ષત્રેષુ કરોતિ યઃ ।

સ પ્રાપ્નોતિ નરો લક્ષ્મી-મિતિ પ્રાહ પરાશરઃ ॥૭૩૦॥

ભા૦ટી૦—અશ્વિની રોહિણી મૃગશિર પુનર્વસુ પુષ્ય ઉત્તરા-ફાલ્ગુની હસ્ત ચિત્રા સ્વાતિ અનુરાધા. મૂલ ઉત્તરાષાઢા શ્રવણ ધનિષ્ઠા શતભિષા ઉત્તરાભાદ્રપદા રેવતી આ નક્ષત્રોમાં જે પુરુષ વાસ્તુપૂજન ઇટલે ગૃહનિર્માણ અને ગૃહપ્રવેશ કરે છે તે લક્ષ્મીને પામે છે આમ પરાશર ઋષિ કહે છે.

ભૂમિશયન—

પ્રયોતનાત્પશ્ચ નગાઙ્કસૂર્ય-નવેન્દુષ્ટ્વિંશમિતાનિ ભાનિ ।

શેતે મહી નૈવ ગૃહંવિધેયં, તડાગ વાપી સ્વનનં ન શસ્તમ્ ॥

ભા૦ટી૦—સૂર્યનક્ષત્રથી ૫૧૭૧૧૨૧૧૨૬ માં નક્ષત્રે ચંદ્ર

होय त्यारे भूमि सूती होय छे, भूमि शयनमां गृहारंभ, के वावडी तलावनुं खोदनुं शुभ नथी.

वास्तुभूषणना मते भूमिशयन—

स्याद्घात्रीशयनं शशीमिततिथौ १,

तुर्ये ४ तथाकर्मिते १२ ।

ऋक्षै २७ भूपतिभि १५ नगैः परिमिते ७

शेषे भवेज्जागृतिः ॥ ७३१ ॥

भा०टी०—सूर्यसंक्रान्तिथी १।४।७।१२।१५।२७ आटलामी तिथिए भूमि शयनावस्थायां होय छे, बाकीना दिवसोमां भूमि जागती होय छे.

वराहना मते गृहारंभमां पंचांग शुद्धि--

वास्तोः कर्मणि धिष्यन्वारतिथयो ऽश्विन्युत्तरारेवती,
हस्तादित्रय मैत्र तोयवसुभे पुष्यो मृगो रोहिणी ।

निन्द्यौ भूसुतभास्करौ च शुभदा पूर्णा च नन्दातिथि-
नेष्टा वै धृति गण्डशूलपरिघव्याघातवज्रावपि ॥७३२॥

विष्कम्भ-व्यतिपातकौ च न शुभौ योगाः परे शोभनाः,
शस्तं नागववाख्यतैतिलगरं युग्मां तिथिं वर्जयेत् ।

मौहूर्ते त्वथ विश्वमष्टनवमं पञ्चत्रिरागाद्रिकं,

श्रेष्ठं च द्वितीयं तुलावृषघटौ युग्मं धनुः कन्यके ।

द्वयंगे वा स्थिरभे च सौम्यसहिते लग्ने शुभैर्वीक्षिते,

सौम्यैर्वीर्घसमन्वितैश्च दशमे निर्माणमाहुर्बुधाः ॥७३३॥

भा०टी०—वास्तुकर्ममां नक्षत्र वार तिथिओ आ प्रमाणे लेवां, नक्षत्रो-

अश्विनी, ३ उत्तरा, रेवती, हस्त, चित्रा, स्वाति, अनुराधा,
पूर्वाषाढा, शतभिषा, घनिष्ठा, पुष्य, मृगशिर, रोहिणी ए लेवां.

વારો-મંગલ રવિને છોડીને બીજા સર્વ લેવા.

તિથિઓ-પૂર્ણા (૫૧૧૦૧૫) નન્દા (૧૬૧૧) એ શુભદાયક છે. 'યુગ્મતિથિ વર્જવી' એટલે ૨૧૪૬૮૧૦૧૨૧૪ તિથિઓ સામાન્ય રીતે વર્જ્ય છે, એ વચનથી ૩૧૭૧૩ એ તિથિઓ પણ વાસ્તુકર્મમાં શુભ સમજવી, ૧૦ મી યુગ્મ છતાં પૂર્ણા તરીકે શુભ છે, ૨ યુગ્મ છતાં શુભ ગણાય છે શેષ યુગ્મ તિથિઓ વર્જ્ય સમજવી.

યોગા-વૈધૃતિ ગંડ શૂલ પરિઘ વ્યાધાત વજ્ર વિષ્કંભ વ્યતિપાત એ અશુભ છે, શેષયોગા વાસ્તુકર્મમાં શુભ છે, અશુભયોગો પૈકીના વ્યતિપાત વૈધૃતિ સંપૂર્ણ વર્જવા, પરિઘનું પૂર્વાર્ધ વર્જવું, શેષ અશુભ યોગોનું શક્ય હોય તો પ્રથમ ચરણ, અન્યથા વર્જ્ય ઘટિકાઓ વર્જવી.

કરણો-નાગ તૈતિલ ત્રવ ગર એ શુભ છે શેષ સામાન્ય છે અને વિષ્ટિ વર્જિત છે.

મુહૂર્તો-ત્રીજું ત્રીજું પાંચમું છઠ્ઠું સાતમું આઠમું નવમું તેરમું એ ગૃહકર્મમાં શુભ છે.

વાસ્તુનિર્માણના લગ્ન વિષે દૈવજ્ઞ વલ્લભ--

રાશૌ દ્વચંગે સ્થિરે લગ્ને, શુભયુક્તે વિલોકિતે ।

નિર્માણં ભવનસ્યાહુઃ, શસ્તં કર્મગતૈઃ શુભૈઃ ॥૭૩૪॥

ત્રિષઙ્ગાયગતૈઃ ક્રૂરૈઃ, શુભૈઃ કેન્દ્રત્રિકોણગૈઃ ।

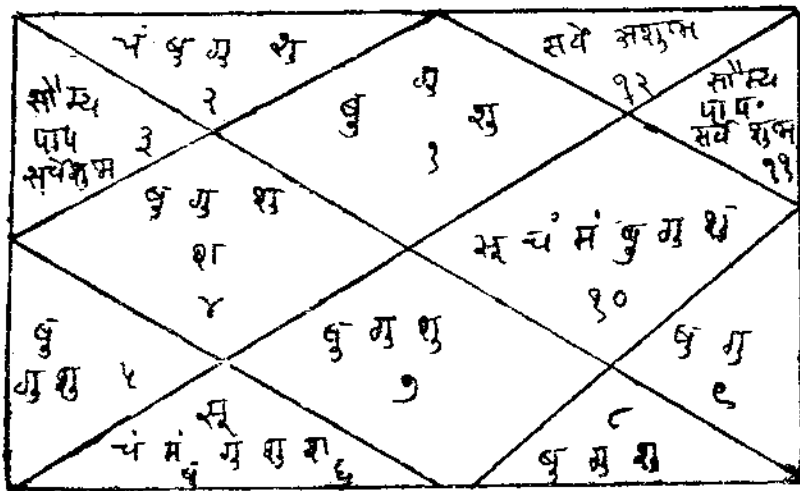
શુભદં ગૃહનિર્માણં, ક્રૂરો મૃત્યુકરોઽષ્ટમઃ ॥૭૩૫॥

ખા૦ટી૦—દ્વિસ્વભાવ અને સ્થિર રાશિના લગ્નમાં, લગ્નમાં શુભગ્રહ સ્થિત હોય અથવા લગ્નપર શુભગ્રહની દષ્ટિ હોય, દશમે શુભ ગ્રહ હોય, તેવા લગ્નમાં ગૃહનિર્માણ કરવું, શુભ કહ્યું છે ક્રૂર ગ્રહો ત્રીજા છઠા સ્થાનમાં ગયા હોય, શુભગ્રહો કેન્દ્ર અને ત્રિકોણ (૧૧૧૧૧૦૫૧, સ્થાનોમાં) ગયા હોય તેવા સમયમાં ગૃહનિર્માણનો

आरंभ करवो शुभफलदायक छे. गृहनिर्माणमां आठमे क्रूर ग्रहनी स्थिति मृत्युकारक होय छे,

लग्नो-तुला, वृषभ, कुंभ, मिथुन, धनु, कन्या अे शुभ छे अथवा द्विस्वभाव अने स्थिर लग्न सौम्यग्रह सहित होय अथवा शुभ ग्रहोनी दृष्टिमां होय, बलिष्ठ सौम्यग्रहो दशम स्थानमां होय तेवा समयमां विद्वानो गृहनिर्माण करवानुं कहे छे.

वास्तुकार्यारम्भनी उत्तम लग्न कुंडली-वास्तुतत्त्वप्रदीपे-



स्थान १।२।४।५।६।७।८।९।१०। मां जे जे ग्रहो जणाव्या छे, ए सिवायना ग्रहो ए स्थानोमां होय तो अशुभ फल आपे छे. ३।११ आ बे स्थानोमां पडेला सौम्य के पाप सर्वे शुभदायक होय छे ज्यारे १२ मा स्थानमां रहेल सौम्य क्रूर कोइ पण ग्रह शुभ फल आपतो नथी.

गृहारंभलग्ने आयुर्दायिक योगाः--

गुरु लग्ने जले शुक्रः, स्मरे ज्ञः सहजे कुजः ।

रिपौ भानुर्यदा वर्ष-शतायुः स्याद् गृहं तदा ॥७३६॥

सितो लग्ने गुरुः केन्द्रे, खे बुधो रविरायगः ।
 निवेशे यस्य तस्यायु-र्वैश्मनः शरदां शतम् ॥७३७॥
 त्रिशत्रुसुतलग्नस्थैः, सूर्यारैज्यसितैर्भवेत् ।
 प्रारम्भः सद्धानो यस्य, तस्यायुर्वै समाशते ॥७३८॥
 व्योम्नि चन्द्रः सुखे जीवो, लाभे भौमशनैश्चरौ ।
 यस्य धाम्नः समाशीतिः, स्थितिस्तस्य श्रियायुता ॥७३९॥
 स्वोच्चस्थे लग्नगे शुक्रे, हिवुकस्थेऽथवा गुरौ ।
 स्वोच्चे मन्देऽथवा लाभे, धाम्नः सश्रीः स्थितिश्चिरम्
 ॥ ७४० ॥

भा०टी०—जे गृहना प्रारंभमां गुरु लग्नमां, शुक्र चोथे भवने,
 बुध सातमे, मंगल त्रीजे अने सूर्य छठे होय ते गृहनुं आयुष्य १००
 वर्षनुं होय, जे घरना प्रारंभमां शुक्र लग्नमां, गुरु केन्द्रमां, बुध दशमे
 अने सूर्य अग्यारमे होय ते गृहनी स्थिति १०० वर्षनी होय. जे
 गृहना प्रारंभकाले सूर्य ३ जे, मंगल ६ ठे, गुरु ५ मे, शुक्र लग्नमां
 होय ते घर २०० वर्ष पर्यन्त टकी रहे छे, चंद्र १० मे, गुरु ४ थे,
 मंगल शनि ११ मे जे घरना प्रारंभ लग्नमां पड्या होय ते घर
 ८० वर्ष सुधी समृद्ध दशामां रहे, जे घरना प्रारंभ लग्नमां शुक्र
 उच्चनो थइने लग्नमां बेठो होय अथवा गुरु उच्चनो थइ ४ थे बेठो
 होय अथवा तो शनि उच्चनो थइ ११ मे बेठो होय ते घर अपरि-
 मित काल पर्यन्त लक्ष्मीथी समृद्ध रहे छे.

स्वर्क्षे चन्द्रे विलग्नस्थे, जीवे कण्टकवर्तिनि ।
 भवेत्लक्ष्मीयुते धाम्नि, भूरिकालभवस्थितिः ॥७४१॥
 स्वमित्रोच्चगृहीशस्थै-स्तद्वंश्याश्चिरमासते ।
 स्वगौरव्यगतैरन्ये, नीचगैश्चापि निर्धनाः ॥७४२॥

अनस्तगैः सितेज्येन्दु-जन्मराशि विलग्नपैः ।

स्वोच्चस्वक्षेत्रभागस्थैर्भवे-च्छ्री सौख्यदं गृहम् ॥७४३॥

गृहिणीन्दौ गृहस्थोऽकं, गुरौ सौख्यं सिते धनम् ।

विवले नाशमायाति, नीचगेऽस्तंगतेऽपि च ॥७४४॥

भा०टी०—जे गृहना आरंभकाले चन्द्र स्वगृही होय अथवा लग्नस्थित होय गुरु केन्द्रमां होय ते गृहमां तेनो स्वामी घणा काल पर्यन्त समृद्ध दशामां निवास करे छे, जे गृहनिर्माणमां ग्रहो स्वगृही, मित्रगृही, उच्चस्थानीय अने स्वनवांश स्थित होय ते घर तेना वंशजो घणा काल सुधी भोगवे, एथी विपरीत जो ग्रहो शत्रुगृही होय अगर् शत्रु नवनवांशमां होय तो ते घर बीजाओ भोगवे, नीचना ग्रहो होय तो तेमां निर्धनोनो वास थाय. शुक्र गुरु चंद्र जन्मराशि-पति अने लग्नेश ए वधा उदित होय उच्चना होय, स्वगृही होय, अगर स्वनवांश स्थित होय, तेवा समयम आरंभेल गृह लक्ष्मी तथा सुखथी संपन्न होय छे. गृहनिर्माण स थमां चन्द्र निर्वल होय तो निर्मापकनी स्त्रीनो, सूर्य निर्वल होय तो गृहपतिनो, गुरु निर्वल होय तो सुखनो अने शुक्र निर्वल होय तो धननो नाश थाय, उक्त ग्रहो नीचना अथवा अस्त होय तो पण एज प्रमाणे फल जाणवुं.

गृहारंभमां उत्तम-मध्यम-अधमग्रहस्थिति—

कूरा ति-छगारसगा, सोमा किंदे तिकोणगे सुहया ।

कूरडम अइअसुहा, सेसा मज्झिम गिहारंभे ॥७४५॥

भा०टी०—गृहारंभ लग्नमां क्रूर ग्रहो ३-६-११ ए स्थानोमां होय अने सौम्यग्रहो १-४-७-१०-५-९ आ केन्द्र-त्रिकोण स्थानोमां होय तो शुभफल आपनारा छे, आठमा भवनमां क्रूर ग्रहो अति अशुभ छे, शेष स्थानोमां क्रूर-सौम्योनी स्थिति मध्यम प्रकारनी जाणवी.

ગૃહ અને દેવાલયના નિર્માણ મુહૂર્તમાં ભેદ નથી.

ઉપર ગૃહ નિર્માણને અંગે જે જે વાતો કહેવાઈ છે તે બધી દેવાલયના આરંભ મુહૂર્તમાં પણ જોવાની છે, સ્વાતમાં માત્ર ગૃહ અને દેવાલયના સ્વાતમાં દિશા જુદી પડે છે કે કૂર્મશિલાન્યાસ સમયમાં દેવાલયમાં કૂર્મચક્ર જોવાનું અધિક છે, વીજુ કંડ વિશેષપણું નથી, એ વિષે વ્યવહારપ્રકાશ લખે છે—

ગૃહેષુ યો વિધિઃ કાર્યો, નિવેશન-પ્રવેશયોઃ ।

સ એવ વિદુષા કાર્યો, દેવતાયતનેષ્વપિ ॥૭૪૬॥

ભા૦ટી૦—ગૃહ સંવન્ધી નિવેશન-પ્રારંભકાર્યમાં અને પ્રવેશ કાર્યમાં જે વિધિ-મુહૂર્ત સંવન્ધી જે વિધાન કર્યું છે, તેજ વિધાન વિદ્વાને દેવાલયના પ્રારંભ અને પ્રવેશના મુહૂર્તોમાં પણ કરવું.

(૨) કૂર્મન્યાસ મુહૂર્ત—

સ્વાતમુહૂર્ત પછી ગૃહમાં પાચારોપનું મુહૂર્ત કરાવે છે, પણ દેવાલયમાં ભૂમ્યારંભ પછી કૂર્મન્યાસનું મુહૂર્ત આવે છે, પૂર્વકાલમાં સ્વાત પછી પ્રાસાદના મધ્યભાગે નીચે કેવલ કૂર્મન્યાસ કરાતો હતો પણ મધ્યકાલીન શિલ્પગ્રન્થોમાં કૂર્મયુક્ત શિલાસ્થાપનનું વિધાન કરેલ હોઈ આજકાલ કૂર્મશિલાસ્થાપનની પ્રવૃત્તિ ચાલે છે અને કૂર્મશિલા સ્થાપનનું મુહૂર્ત જોવાય છે.

કૂર્મન્યાસ અથવા કૂર્મશિલાન્યાસના મુહૂર્તમાં ચન્દ્રબલ ઉપરાન્ત ગૃહારંભમાં જળાવી તેવી પંચાંગ શુદ્ધિ હોવી જોઈએ, અને કૂર્મચક્ર-દ્વારા કૂર્મનો નિવાસ જલમાં જાળી મુહૂર્ત આપવું જોઈએ—આ મુહૂર્તમાં ઘૃષ્ણવાસ્તુચક્ર, કે ભૂમિ સૂતી જાગતી, આદિ આરંભના સમયની વીજી વાતો જોવાની આવશ્યકતા નથી, માત્ર કૂર્મચક્ર જોઈને કૂર્મન્યાસ કરવા જોઈએ.

(३-४-५) सूत्रपात-शिलान्यास-खुरानां मुहूर्तो—

प्रासादनी जगाती जेटली उंची लेवानी होय तेटली लेइ ते उपर सूत्र छांटी प्रासादनुं आधार स्थल चिन्हित करवुं. प्रथम दिक्शुद्धि करवी अने पछी शुभ समयमां सूत्र पात करवो, सूत्र-पातनां नक्षत्रो नीचे प्रमाणे लेवां.

सूत्रस्य सिद्धिर्वसुनाथ हस्त-

मैत्र स्थिर स्वाति शतर्क्ष पुष्यैः ।

न्यासः शिलायाः कर पुष्य मार्ग-

पौष्ण ध्रुवेषु श्रवणे च शस्तः ॥ ७४७॥

भा०टी०—धनिष्ठा, हस्त, अनुराधा, रोहिणि, उत्तराफाल्गु-नि, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपद, स्वाति, शतभिषा अने पुष्य, आ नक्षत्रोमां सूत्रपात करवाथी कार्य सफल थाय छे अने हस्त पुष्य मार्गशीर्ष रेवती रोहिणी उत्तरा त्रणे अने श्रवणमां शिलान्यास कर-वाथी ते वास्तु निर्विघ्नपणे पूर्ण थाय छे. खुरो स्थापनामां पण शिलान्यासोक्त नक्षत्रो लेवां, सूत्रपात, शिलान्यास, खुरस्थापनमां अशुभ योगो, क्षीणचन्द्र, मंगलवार, वर्ज्य तिथिओ अने भद्रा करणनो त्याग करवो, शुभलग्नमां, लग्नना अभावमां कुलिकादि वार दोषरहित शुभ चोघडियामां पण सूत्रपातादि करी सकाय छे.

ए उपरांत सूत्रपात शिलान्यासादिनां मुहूर्तोमां पश्चांग शुद्धि जोवी, कारकनानामथी चन्द्रबल जोवुं. मलमास, गुरु-शुक्र-चन्द्रास्त, भद्राकरण, व्यतीपात वैधृतादि दुष्ट योगो, आदि अशुभ निमित्तो अवश्य टालवा, लग्नशुद्धि मले तो विशेष श्रेष्ठ अन्यथा भूम्यारंभ मुहूर्तोक्त वार दोष टाली शुभ समयमां आ सर्वे कार्यो करी लेवां.

शिलान्यास मुहूर्तमां उक्तश्लोकमां जणावेल हस्तादि ९ नक्षत्रो लेवां, तेना अभावमां गृहनिर्माणमां जणावेल मृदु लघु आदि गणोक्त

અન્ય નક્ષત્રો લેવાં, સર્વ કાર્યોમાં મૌમ્ય વારો લેવા, કારણે મંગલવાર સિંધાયના બીજા વારો પળ લેવા. તેવા વારોમાં તે વારોની હોરા અવશ્ય ટાલવી, શાસ્ત્ર કહે છે કે—

હોરાફલ-વારફલે, કે અપિ નિન્દ્યં ન જાતુ ગૃહ્ણીત ।

एकस्मिन् शुभफलदे, तयोश्च कार्यं शुभं कुर्यात् ॥૭૪૮॥

ખાંટી૦—ક્રૂર વાર અને ક્રૂર વારની હોરા એ બંને ક્રૂર ન લેવાં-બેમાંથી એક પળ શુભ હોય તો શુભ કાર્ય કરવું.

(૬) દ્વારારોપણ મુહૂર્ત—

દ્વારારોપણ મુહૂર્તમાં પચ્ચાઙ્ગ શુદ્ધિ ઉપરાંત કેટલીક વાતો જોવાની છે. મલમાસ ગુર્વાચસ્ત અને વ્યતીપાતાદિ મોટા અપયોગો ટાલીને શુભ સમયમાં દ્વારારોપણ કરવું. મલી શકે ત્યાં સુધી લગ્નનો સમય લેવો પણ તેમ ની શકે અગર લગ્નશુદ્ધિ ન મલતી હોય તો કુલિક-અર્ધપ્રહરાદિ વાર દોષો અને દુર્મુહૂર્તો ટાલીને જ દ્વાર ચઢાવવું જોઈએ, વતી દ્વારારોપણમાં વત્સ તથા રાહુનો વાસો અવશ્ય જોવો, વત્સ સામ તથા પાલ્લ અને રાહુ સંમુખ આવતો હોય તે માસમાં દ્વારારોપણ મુહૂર્ત ન કરવું, માસ વિષયક ઉક્ત યોગો જોવા ઉપરાંત દ્વાર ચક્ર પણ જોવું અને ચક્રમાં ચન્દ્ર નક્ષત્ર શુભસ્થાને આવતું હોય તો દ્વાર મુહૂર્ત આપવું.

(૭) સ્તંભોચ્છ્રાય મુહૂર્ત—

ઘર યા પ્રાસાદનો પ્રથમ થાંભલો અગ્નિકોણમાં શુભમુહૂર્તે ઉભો કરવો એ વિષયમાં બ્રહ્મશંસુ કહે છે.—

સુત્ર મિત્તિ શિલાન્યાસં, સ્તંભસ્યારોપણં સદા ।

पूर्वदक्षिणयोर्मध्ये, कुर्यादित्याह कश्यपः ॥૭૫૦॥

ખાંટી૦—સુત્રપાત, મિતિચયન, શિલાન્યાસ, અને સ્તંભો-

च्छ्राय, आ सर्व कार्यों हमेशां आग्नेयकाण्ठी शरु करवां आम कश्यप ऋषि कहे छे.

शार्ङ्गधर पण कहे छे—

प्रासादेषु च हर्म्येषु, गेहेष्वन्येषु सर्वदा ।

आग्नेयां प्रथमस्तम्भं-स्थापयेद् विधिना ततः ॥७५१॥

भा०टी०—प्रासादो, हवेलियो अने बीजां घरोंमां हमेशां प्रथमस्तंभ आग्नेयी दिशांमां स्थापन करवो.

स्तंभारोपण सामान्य दिनशुद्धि, चन्द्रबल अने स्तंभचक्र जोइने करवुं जोइये.

(८) पट्टकारोपण मुहूर्त—

प्रासाद अथवा घरमां पाटडो अथवा मोभ स्थापवानुं मुहूर्त पञ्चांगशुद्धि जोइने आपवुं, कर्ताने चंद्रबल जोवुं अने मोभचक्रमां दिननक्षत्र शुभ स्थाने आवतुं होय ते दिवसे आपवुं, पट्टकारोपण शुभ चोघडियामां करी सकाय छे.

(९-१०-११) पद्मशिला-शुकनास-पुरुष-निवेशन मुहूर्तो—

पद्मशिला शुकनास अने प्रासादपुरुष स्थापवानां मुहूर्तो सूत्र-पातादिना मुहूर्तोमां जणावेल दोषो टाली पञ्चांगशुद्धिमां करवां, लग्न जो सारुं मली शकतुं होय तो लग्नमां, अन्यथा शुभ चोघडियामां अथवा विजयमुहूर्तमां पण ए मुहूर्तो करी सकाय छे.

(१२) आमलसारक स्थापनमुहूर्त—

आमलसारो चढाववामां पञ्चांग शुद्धि उपरांत चंद्रबल जोवुं अने घंटाचक्र जोइ जो दिननक्षत्र चक्रना शुभस्थानमां आवतुं होय तो शुभ चोघडियामां आमलसारो ढांकी लेवो, झीणवटमा उत्तर-वानी जरूर नथी.

(૧૩-૧૪) કલશ અને ધ્વજારોપનાં મુહૂર્તો--

પ્રાસાદ ઉપર કલશ તથા ધ્વજારોપનાં મુહૂર્તો સારી દિનશુદ્ધિ લગ્નશુદ્ધિમાં કરવાં જોઈયે, પ્રતિષ્ઠા મુહૂર્તમાં જે અશુભ યોગો ત્યજાય અને શુભ યોગો લેવાય છે તેજ પ્રકારના અશુભ શુભયોગો આ મુહૂર્તોમાં ત્યાગવા અને લેવા. માત્ર પ્રવેશને અંગે જોવાતાં રાહુ, વત્સ અને કલશચક્રો આમાં જોવાતાં નથી, બીજુ બધું જોવાય છે.

(૧૫) પ્રતિષ્ઠામુહૂર્ત--

પશ્ચાદ્ગશુદ્ધિ--

‘ પ્રતિષ્ઠા ’ શબ્દના અર્થ લેવાના છે, એક નવીન દેવ-પ્રતિમાને અધિવાસના-અજનશલાકા કરી પૂજનીય બનાવવા તે અને ઘીજો તેવી પૂજનીય પ્રતિમાને પ્રાસાદ-ચૈત્યમાં સ્થાપન કરવા તે. અમો આ બંને પ્રતિષ્ઠાઓના મુહૂર્તોનો વિચાર કરી સંક્ષેપમાં મુહૂર્ત નિરૂપણ કરશું.

બંને પ્રકારના પ્રતિષ્ઠા-મુહૂર્તોમાં કારક ગૃહસ્થાદિને ચન્દ્ર-તારાદિબલ અનુકૂલ હોય ત્યારે પ્રતિષ્ઠા કરવી. એ વિષે નારદ કહે છે-

શ્રીપ્રદં સર્વગીર્વાણ-સ્થાપનં ચોત્તરાયણે ।

ગીર્વાણરિપુ ગીર્વાણ-મન્ત્રિણોર્દૃશ્યમાનયોઃ ॥૭૫૨॥

વિચૈત્રેષ્વેવ માસેષુ, માઘાદિષુ ચ પશ્ચસુ ।

શુક્લપક્ષેષુ કૃષ્ણેષુ, તદાદિષ્વષ્ટસુ સ્મૃતમ્ ॥ ૭૫૩ ॥

ખાંટી-—ઉત્તરાયણકાલમાં સર્વ દેવોની સ્થાપના કરવી તે સંપત્તિની આપનારી છે, પણ શરત એ છે કે એ સમય દર્મિયાન શુક્ર તથા ગુરુ ઉદિત હોવા જોઈયે, અને ઉત્તરાયણના માઘાદિ ૫ માસોમાં ચૈત્ર માસ ન હોવો જોઈયે, પક્ષોમાં શુકલપક્ષ સંપૂર્ણ અને કૃષ્ણપક્ષના આદિના ૮ દિવસો પ્રતિષ્ઠા માટે શુભ જાણવા.

आ विषयमां वसिष्ठनुं कथन--

मासे तपस्ये तपसि प्रतिष्ठा, धनायुरारोग्यकरी च कर्तुः ।
चैत्रे महारुग्भयदा च शुचौ, समाधये पुत्र धनप्रदा सा ॥७५४॥

आषाढमासादिचतुष्टये च,

कलत्र-संतानविनाशदा च ।

ऊर्जे च कर्तुर्निधनप्रदा च,

सौम्ये सपौषेऽखिलदुःखदा च ॥ ७५५ ॥

बलक्षपक्षः शुभदः समस्तः,

सदैव तत्रायदिनं विहाय ।

अन्त्यत्रिभागं परिहृत्य कृष्ण-

पक्षोऽपि शस्तः खलु पक्षयोश्च ॥ ७५६ ॥

रिक्तावमात्यक्तदिनेष्वनिन्व्य-योगेषु वै नाशिकवर्जितेषु ।

दिने महादोषविवर्जिते च, शशाङ्कताराबल संयुतेऽपि ॥७५७॥

देवस्य यस्योद्भूतिथीप्रशस्ते, संस्थापने कर्मणि वासरश्च ।

कर्तुर्दिनेशस्य बलं सदैव, ग्रामाधिप ग्रामबलं विचार्यम् ॥७५८॥

भा०टी०—माघ फाल्गुन मासमां कराती प्रतिष्ठा धन आयुष्य आरोग्य करनारी थाय छे, चैत्रमां करेल धनिष्ठा महारोग अने भय आपे छे, वैशाख ज्येष्ठमां करेल प्रतिष्ठा पुत्र अने धनने आपनारी थाय छे, आषाढादि ४ मासमां प्रतिष्ठा पुत्र स्त्री संताननो विनाश करे छे, कार्तिकनी प्रतिष्ठाथी कारकनुं मरण थाय छे अने मार्गशीर्ष तथा पौषमां करेली प्रतिष्ठा दुःखदात्री थाय छे, शुक्ल-पक्षनो प्रथम दिन वर्जिने शेष संपूर्ण पक्ष शुभ छे अने छेला बीजा भाग सिवायनो कृष्णपक्ष पण प्रतिष्ठांमां शुभ छे. वने पक्षनी रिक्ता-तिथिओ क्षय तिथिओने छोडी बीजा शुभ दिनोमां शुभ योगोमां वैनाशिक नक्षत्र रहित तथा महादोष रहित चन्द्रताराबलयुक्त शुभ

દિવસે, જે દેવની સ્થાપના કરવી હોય તેનું નક્ષત્ર તથા તિથિ યુગ્મ હોય સ્થાપના કાર્યમાં દિવસ ગ્રાહ્ય હોય તે દિવસે પ્રતિષ્ઠા કરવી, પ્રતિષ્ઠા કારકને સ્વિવલ અને ગ્રામ તથા ગ્રામાધિપતિને ચન્દ્રવલ છે કે નહિ એ વિચારીને પ્રતિષ્ઠા મુહૂર્તે લેવું.

ઉપરના વિધાનમાં દેવપ્રતિષ્ઠામાં પ્રધાનપણે ઉત્તરાયણ ગ્રાહ્ય કર્યું છે તેથી માર્ગશીર્ષ પૌષ પ્રતિષ્ઠામાં લીધા નથી એમ છતાં દેવવિશેષ અને કારક વિશેષને માટે દક્ષિણાયન પણ ગ્રાહ્ય છે.

ए विषयमां गणपतिनुं प्रतिपादन--

यास्यायनेपि वाराह-मातृ-भैरववामनान् ।

महिषासुरहंत्रां च, नृसिंहं स्थापयेद् बुधः ॥७५९॥

भा०ટો०—વિદ્યાને વારાહ, માતૃઓ, ભૈરવ, વામન ચંડિકા અને નૃસિંહ આ સર્વેને દક્ષિણાયનમાં પણ પ્રતિષ્ઠિત કરવા.

પ્રતિષ્ઠા કર્તૃપરક ઉત્તરાયણ દક્ષિણાયનનો વિવેક—

शैवसिद्धान्तशेखरे--

श्रेष्ठोत्तरे प्रतिष्ठा स्या-दधने मु(मु)क्तिमिच्छताम् ।

दक्षिणे तु मुमुक्षुणां, मलमासे न सा द्वयोः ॥७६०॥

भा०ટી०—મુ(મુ)ક્તિને ઇચ્છનારાઓ (ગૃહસ્થો) માટે ઉત્તરાયણમાં પ્રતિષ્ઠા કરવી શ્રેષ્ઠ છે પણ મુમુક્ષુ (સાધુ)ઓને માટે દક્ષિણાયનમાં પણ શ્રેષ્ઠ છે, મલમાસમાં બંનેને માટે પ્રતિષ્ઠા વર્જિત છે.

तिथि विषे नारद मत--

द्वितीयादिद्वयोः पंच-म्यादितस्तिसृषु क्रमात् ।

दशम्यादेश्वत्सृषु, पौर्णमास्यां विशेषतः ॥७६१॥

भा०ટી०—દ્વિતીયા, તૃતીયા, પંચમી, ષષ્ઠી, સપ્તમી, દશમી, એકાદશી, દ્વાદશી, ત્રયોદશી અને પૂર્ણિમા આ તિથિઓમાં પ્રતિષ્ઠાદિ કાર્યો કરવાં.

प्रतिष्ठामां वार-नारदसंहिता--

कुजवर्जितवारेषु, कर्तुः सूर्यबलप्रदे ।

चन्द्रताराबलोपेते, पूर्वाण्हे शोभने दिने ।

शुभे लग्ने शुभांशे च, कर्तुं न निधनोदये ॥७६२॥

भा०टी०—मंगलवार सिवायना वारोमां, कर्तानि सूर्यबल आपतो होय त्यारे, चन्द्र तथा ताराबलवाला शुभ दिवसे, दिवसना पूर्वाधिमां कर्तानी जन्मराशि वा जन्मलग्नी आठमी राशितुं लग्न छोडीने शुभ लग्न तथा शुभ नवमांशमां प्रतिष्ठा करवी.

वसिष्ठना मते प्रतिष्ठामां वारफल--

कीर्तिप्रदं क्षेमकरं कृशानोर्भ-

यप्रदं वृद्धिकरं नराणाम् ।

लक्ष्मीकरं सुस्थिरदं त्विनादि-

वारेषु संस्थापनमामनन्ति ॥ ७६३ ॥

भा०टी०—सूर्यादि सात वारोमां थयेली देवोनी स्थापना अनुक्रमे कीर्ति आपनारी, कल्याण करनारी, अग्निमय करनारी, कारकजनानी वृद्धि करनारी, लक्ष्मी करनारी अने दीर्घकाल स्थायी रहेनारी होय छे.

उपरना निरूपणथी जणाय छे के एक मंगलवारने छोडी बीजा बधा वारो प्रतिष्ठामां लङ्ग शक्याय छे, पण तेमां वारगत दोषो-अर्धयाम, कुलिक, कालवेला, दुर्मुहूर्त आदि अवश्य टालवा.

प्रतिष्ठामां नक्षत्र-वसिष्ठसंहिता--

हस्तत्रये मित्रहरित्रये च, पौष्णद्वयादित्यसुरेज्यभेषु ।

तिस्रोत्तराधानृशशाङ्कभेषु, सर्वाभरस्थापनमुत्तमं तत् ॥७६४॥

भा०टी०—हस्त, चित्रा, स्वाति, अनुराधा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, रेवती, अश्विनी, पुनर्वसु, पुष्य, उत्तराफाल्गुनी, उत्तरा-

षाढा, उत्तराभाद्रपदा, रोहिणी, मृगशीर्ष आ नक्षत्रोमां सर्व देवोनी स्थापना-प्रतिष्ठा उत्तम छे.

जैन प्रतिष्ठामां नक्षत्रो, आरंभसिद्धौ--

उद्भाहे मृगशैर्षे, प्रतिष्ठायां तु ते उभे ।

आदित्यपुष्यश्रवण-धनिष्ठाभिः समं शुभे ॥

त्रिषु मैत्रंकरः स्वाति-मूलः पौष्ण ध्रुवाणि च ॥७६५॥

भा०टी०--विवाहमां मृगशिरा तथा मघा अने प्रतिष्ठामां ते बे सहित पुनर्वसु, पुष्य, श्रवण, धनिष्ठा, अनुराधा, हस्त, स्वाति, मूल, रेवती रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपदा आ सर्व नक्षत्रो शुभ छे, छेछां नव नक्षत्रो विवाह तथा दीशामां पण शुभ छे, अने एज नक्षत्रा नारचंद्रमां लखेल छे, वसिष्ठे अश्विनी चित्रा शतभिषा अधिक लीधां छे अने मघा तथा मूल नथी लीधां.

प्रतिष्ठायां वर्जित नक्षत्रो--

जन्मक्ष दशमे चैव, पोऽशे ऽष्टादशे तथा ।

पञ्चविंशे त्रयोविंशे, प्रतिष्ठां नैव कारयेत् ॥७६६॥

ग्रहणस्थं ग्रहैर्भिन्न-मुदितास्तमितग्रहम् ।

क्रूर मुक्ताग्रमाक्रान्तं, नक्षत्रं परिवर्जयेत् ॥७६७॥

भा०टी०--जन्म नक्षत्रमां, तेथी दशमा सोलमा अठारमा त्रेवीशमा तथा पञ्चीसमा नक्षत्रमां प्रतिष्ठा न कराववी. वलां ग्रहणना नक्षत्रमां, ग्रहो बडे भेद करायेल नक्षत्रमां, जे उपर ग्रह उगयो अथवा आथम्यो होय ते नक्षत्र, क्रूर ग्रह बडे भोगवायेल भोगवातुं के अनन्तर भोगवाशे ते नक्षत्र, आ वधां नक्षत्रो प्रतिष्ठादि शुभ कार्यामां वर्जवां.

प्रतिष्ठामां योगो-वसिष्ठः--

प्रतिष्ठा देवतानां च, गृहाणि नगराणि च ।

प्राकारतोरणादीनि, सिद्धियोगे प्रकारयेत् ॥७६८॥

भा०टी०—देवताओनी प्रतिष्ठा, घरनिर्माण, नगरनिवेश, कोट कढाववो, तोरणो उभां करवां, इत्यादि कार्यो सिद्धि योगमां कराववां. ए सिवायना पण शुभकार्योक्त योगो प्रतिष्ठामां लेइ सकाय छे, अशुभ योगो पैकीना व्यतीपात वैधृति ए बे योगो संपूर्ण त्यजवा, परिघयोगनी प्रथमनी ३० घडीओ अने बाकीना दुष्टयोगोनी प्रथमनी १५ घडीओ त्यजवी. त्रिशूल अने एकार्गल योग बनतो होय तो ते पण अवश्य वर्जवो.

नक्षत्रक्षणानी जेम ज शास्त्रमां योगक्षणो पण बताव्या छे, ते लेइने काम करवुं, उदाहरणरूपे कोइ मुहूर्तमां 'विष्कंभ' योग छे ए सूर्योदयथी लाग्यो छे अने एनी आदिनी ३ घडी वर्जित छे, पण ते दिवसे ग्राह्य नवमांश २ घडी १५ पले ज चालु थइ जाय छे अने २ घडी ३० पले उतरी जाय छे. आवा संयोगामां ३ घडी त्यजवाने खातर नवमांश जतो करवो, के शुभ नवमांशने खातर वर्ज्य घडीमां काम करवुं ? उत्तर ए छे के आदो परिस्थितिमां क्षणयोगनो आश्रय लेवो, २ घडी १३ पले विष्कंभनो क्षण उतरी 'प्रीति'नो क्षण लागी जाय छे, तेमां कार्य करवामां बांधो नथी.

ए सिवाय रवियोग, कुमारयोग, राजयोग के अमृतसिद्धियोगो पैकीना बे वा एक शुभयोग मुहूर्तना दिवसे आवता होय तो ते मुहूर्त दिनशुद्धिना हिमावे महत्ववालुं गणाय छे.

प्रतिष्ठामां करण. करणोने अंगे आरंभसिद्धिकार कहे छे—
दशाऽमृनि चिचिष्टीनि, दिष्टान्यखिलकर्मसु ।

रात्र्यहर्व्यत्ययाद् भद्रा-ऽप्यदुष्टैवेति तद्विदः ॥७६८॥

भा०टी०—विष्टि विनानां बवादि १० करणो सर्व कार्योमां ग्राह्य कहां छे अने रात्रिभद्रा दिवसमां अने दिवसभद्रा रात्रिमां होय तो भद्रा पण दुष्ट नथी एम ज्योतिर्विदो कहे छे.

उपरना कथन प्रमाणे एक भद्रा सिवाय सर्व करणो सर्व कार्योंमां विहित छे अने रात्रिदिवसना भेदे भद्रा पण अदृष्ट छे, पण कंटलाक ज्योतिषीओ क्रमागत के अक्रमागत भद्रा होय छतां सर्वथा भद्राने त्याज्य कहे छे तेथी शक्य होय त्यां सुधी भद्राने वर्जवी, वली नाग अने चतुष्पद आ वे करणो पण क्रूर होइ वनतां सुधी प्रतिष्ठामां वर्जवां, एम छतांये बीजां सर्व अंगो वलिष्ट होय तो करणना कारणे ज ते समयने त्याज्य गणवो न जोइये, मात्र दिनविभागनी भद्रा दिवसे अने रात्रि विभागनी भद्रा रात्रिए अवश्य वर्जवी.

प्रतिष्ठामां लग्नशुद्धि--

प्रतिष्ठा मुहूर्तमां दिनशुद्धि प्रमाणे ज लग्नशुद्धि पण जोर्वा, लग्नशुद्धिमां लग्नमां ग्रहस्थिति वरावर न होयानी दशमां लग्नमां उत्तम नवमांश लेवो जोइये, शास्त्रमां कहुं छे--

स्वार्धे नक्षत्रफलं, तिथ्यर्धे तिथिफलं समादेश्यम् ।

वारफलं होरायां, लग्नफलं त्वंशके स्पष्टम् ॥७६९॥

भा०टी०—नक्षत्रनुं फल नक्षत्रना (पूर्व) अर्धमां, तिथिनुं फल तिथिना (पूर्व) अर्धमां, वारनुं फल तेनी होरामां अने लग्ननुं फल तेना नवमांशमां संपूर्णपणे मले छे.

प्रतिष्ठाना लग्ने अंगे वसिष्ठ कहे छे--

पञ्चेष्टिके जीवशशाङ्क सूर्य-

मुख्यैर्ग्रहैः सौम्यनवांशयुक्तैः ।

लग्ने स्थिरे चोभयराशिलग्नै,

नवांशके चोभयभे स्थिरे वा ॥ ७७० ॥

चरोदये लग्नगते न कार्यं,

संस्थापनं नैव चरांशकेपि ।

चरोपिमुख्यः सतुलांशकश्च,

सदा मृदुत्वात्सुरसंनिवेशे ॥ ७७१ ॥

भा०टी०—लग्न पंचवर्ग शुद्ध होय, गुरु चंद्र सूर्य प्रमुख ग्रहो राशिना सौम्य नवमांश युक्त होय तेवा समयमां, स्थिर वा द्विस्वभाव लग्नमां अने द्विस्वभाव वा स्थिर नवमांशमां देव प्रतिष्ठा करवी, चर लग्न अने चर नवमांशमां देवनी स्थापना करवी नहि, परन्तु तुलांशक मृदुस्वभावनो होवाथी चर होवा छताये देवोना स्थापनमां मुख्य गणाय छे.

प्रतिष्ठानी लग्नशुद्धिविषे नारदजो—

राशयः सकलाः श्रेष्ठाः, शुभग्रहयुतेक्षिताः ।

शुभग्रहयुते लग्ने, शुभग्रहनिरिक्षिते ॥७७२॥

राशिस्वभावजं हित्वा, फलं ग्रहजमाश्रयेत् ।

अनिष्टफलदः सोऽपि, प्रशस्तः फलदः शशी ॥७७३॥

सौम्यर्क्षगोऽधिमित्रेण, गुरुणा वा विलोकितः ।

पञ्चेष्टिके शुभे लग्ने, नैधने शुद्धिसंश्रिते ॥७७४॥

भा०टी०—प्रतिष्ठामां सर्व राशिभो श्रेष्ठ छे जो ते शुभ ग्रह सहित होय, अथवा शुभ दृष्ट होय, शुभ ग्रहयुक्त अथवा शुभग्रहदृष्ट लग्न राशिस्वभावज फलने छोडी ग्रहस्वभावज फलने आपे छे. एज रीते अनिष्ट फल आपनारो चंद्र पण शुभक्षेत्री होय अथवा अधिमित्रवडे के गुरु वडे दृष्ट होय तो शुभ फलदायक बनी जाय छे, पण लग्न पञ्चवर्ग शुद्ध अने अष्टम स्थान शुद्धिवाळुं जोइये.

प्रतिष्ठामां लग्न व्यवस्था, आरंभ सिद्धौ—

लग्नं श्रेष्ठं प्रतिष्ठायां, क्रमान्मध्यमथावरम् ।

द्वयङ्गं स्थिरं च भूयोभिर्गुणैराढ्यं चरं तथा ॥७७५॥

भा०टी०—प्रतिष्ठामां द्विस्वभाव, स्थिर अने गुणाधिक चर ए लग्नो अनुक्रमे श्रेष्ठ, मध्यम अने जघन्य कोटिनां गणाय छे.

લગ્નકુંડલીમાં ગ્રહવ્યવસ્થા, નારદમતે—

લગ્નસ્થા: સૂર્યચન્દ્રાઽઽર-રાહુકેત્વકર્મનવ: ।

કર્તુર્મૃત્યુપ્રદાશ્ચાન્યે, ધનધાન્યસુખપ્રદા: ॥૭૭૬॥

દ્વિતીયે નેષ્ટદા: પાપા:, શુભાશ્ચન્દ્રશ્ચ ચિત્તદા: ।

તૃતીયે નિશ્ચિલા: ક્ષેટા:, પુત્રપૌત્રસુખપ્રદા: ॥૭૭૭॥

ચતુર્થે સુખદા: સૌમ્યા:, ક્રૂરાશ્ચન્દ્રશ્ચ દુ:ખદા: ।

ગ્લાનિદા: પશ્ચમે ક્રૂરા:, સૌમ્યા: પુત્રસુખપ્રદા: ॥૭૭૮॥

પૂર્ણ: ક્ષીણ: શશી તત્ર, પુત્રદ: પુત્રનાશદ: ।

ષષ્ટે શુભા: શત્રુદા: સ્યુ:, પાપા: શત્રુક્ષયપ્રદા: ॥૭૭૯॥

પૂર્ણ: ક્ષીણોઽપિ વા ચન્દ્ર:, ષષ્ટેઽશ્ચિલરિપુક્ષયમ્ ।

કરોતિ કર્તુરચિરા-દાયુષ્પુત્રધનપ્રદ: । ૭૮૦॥

વ્યાધિદા: સપ્તમે પાપા:, સૌમ્યા: સૌમ્યફલપ્રદા: ।

અષ્ટમસ્થાનગા: સર્વે, કર્તુર્મૃત્યુપ્રદા ગ્રહા: ॥૭૮૧॥

ધર્મે પાપા ઘનન્તિ સૌમ્યા:, શુભદા: શુભદ: શશી ।

ભક્ષદા: કર્મગા: પાપા:, સૌમ્યાશ્ચન્દ્રશ્ચ કીર્તિદા: ॥૭૮૨॥

લાભસ્થાનગતા: સર્વે, મૂરિલાભપ્રદા ગ્રહા: ।

વ્યયસ્થાનગતા: શશ્વદ્-દ્રવ્યવ્યયકરાગ્રહા: ॥૭૮૩॥

ગુણાધિકતરે લગ્ને, દોષાત્યલ્પતરે યદિ ।

સુરાણાં સ્થાપનં તત્ર, કર્તુરિષ્ટાર્થસિદ્ધિદમ્ ॥૭૮૪॥

ખાંડી૦—લગ્નમાં પહેલા સૂર્ય, ચન્દ્ર, મંગલ, રાહુ, કેતુ, શનિ એ ગ્રહો પ્રતિષ્ઠાકારકને મૃત્યુદાયક હોય છે જ્યારે શેષ-બુધ, ગુરુ, શુક્ર એ ધનધાન્ય અને સુખના આપનારા છે.

વીજા ભવનમાં રહેલ પાવગ્રહો અશુભ ફલ આપે છે, જ્યારે શુભગ્રહો તથા ચન્દ્ર ધનની વૃદ્ધિ કરનારા છે.

तृतीय भवने रहेला सर्वग्रहो पुत्रशत्रु अने सुखने आपनारा होय छे.

चोथा स्थानमां रहेला सौम्यग्रहो सुखदायक अने क्रूर ग्रहो तथा चन्द्र दुःखदेनारा थाय छे.

पांचमे रहेला क्रूरग्रहो म्लान्दिदायक थाय छे ज्यारे सौम्यग्रहो पांचमे पुत्र सुख आपे छे, पांचमे रहेल पूर्ण चंद्र पुत्रदायक अने क्षीणचंद्र पुत्रनाशक थाय छे.

छठा भवनमां रहेला शुभ ग्रहो शत्रुओनी वृद्धि करे छे अने पापग्रहो छट्टे रहीने शत्रुओनी नाश करनारा थाय छे, चन्द्र पूर्ण होय चाहे क्षी छट्टे रहेलो सर्व शत्रुओनी नाश करे छे अने प्रतिष्ठाकारकने थोडाज समयमां आयुष्य पुत्र धनदायक बने छे.

सातमा भवने रहेला पापग्रहो रोग करे छे अने सौम्यग्रहो सातमे शुभफलदायी होय छे.

आठमे रहेला सर्वग्रहो कर्तानि मरण आपनारा थाय छे.

नवमे रहेला पापग्रहो धर्मनी हानि करे छे अने सौम्यग्रहो तथा चन्द्र नवमे शुभफलदायक होय छे.

दशमा स्थाने पापग्रहो भंग देनारा होय छे अने चन्द्र तथा सौम्यग्रहो कीर्तिदायक होय छे.

लाभ स्थाने रहेला सर्वे ग्रहो घणो लाभ आपनारा थाय छे ज्यारे बारमा स्थाने पडेला ग्रहो हमेशां द्रव्यव्यय करावे छे.

अधिकतर गुण अने अल्पतर दोषवाला लग्नमां देवप्रतिष्ठा कर्तानि इष्टपदार्थनी सिद्धिदेनारी निवडे छे.

आरंभसिद्धिना मत्ते-प्रतिष्ठा लग्ननी ग्रहव्यवस्था-

“ प्रतिष्ठायां श्रेष्ठो रविरुपचये शीतकिरणः,
स्वधर्मादये तत्र क्षितिज-रविजौ त्र्यायरिपुगौ ।

બુધ-સ્વર્ગ્યાંચાર્યૌ, વ્યયનિધનવર્જૌ મૃગુસુતઃ,

સુતં યાવલ્લગ્નન્નવમદશમાયેષ્વપિ તથા ॥૭૮૫॥”

માંટી૦—પ્રતિષ્ઠામાં સૂર્ય ઉપચયમાં (૩-૬-૧૦-૧૧ સ્થાનોમાં) શ્રેષ્ઠ છે, ચંદ્ર ૨-૩-૬-૯-૧૦-૧૧ આ સ્થાનોમાં આવેલ હોય તો શ્રેષ્ઠ છે, મંગલ અને શનિ ૩-૬-૧૧ આ સ્થાનોમાં શ્રેષ્ઠ ગણાય છે, બુધ તથા ગુરુ આઠમા વારમા સિવાય બીજા સર્વ સ્થાનોમાં રહેલા શુભ ફલ આપનારા હોય છે, અને શુક્ર ૧-૨-૩-૪-૫-૯-૧૦-૧૧ આ સ્થાનામાં હોય તો શુભ છે.

નારચન્દ્રના મતે ઉત્તમ મધ્યમ-વિમધ્યમગ્રહસ્થિતિ—

“સૌરાર્કક્ષિતિસૂનવસ્ત્રિરિપુગા દ્વિત્રિસ્થિતશ્ચન્દ્રમા-
 એકદ્વિત્રિસ્વપશ્ચન્ધુષુ બુધઃ શસ્તઃ પ્રતિષ્ઠાવિધૌ ।

જીવઃ કેન્દ્રનવસ્વધીષુ મૃગુજો વ્યોમત્રિકોણે તથા,

પાતાલોદયયોઃ સરાહુશિશ્વિનઃ સર્વેઽપ્યુપાન્ત્યે શુભાઃ ॥૭૮૬॥”

માંટી૦—શનિ, સૂર્ય, મંગલ ૩-૬ સ્થાને, ચંદ્ર ૨-૩ સ્થાને, બુધ ૧-૨-૩-૪-૫-૧૦ આ સ્થાનોમાં, ગુરુ ૧-૪-૭-૧૦-૯-૨-૫ આ સ્થાનોમાં, શુક્ર ૧૦-૬-૯-૪-૧ આ સ્થાનોમાં અને રાહુ કેતુ સહિત સર્વે ગ્રહો ૧૧ મા સ્થાને હોય તો ઉત્તમ ગણાય છે.

લેઝર્કઃ કેન્દ્રનવારિગઃ શશધરઃ સૌમ્યો નવાસ્તારિગઃ.

ષષ્ઠો દેવગુરુઃ સિતસ્ત્રિધનગો મધ્યાઃ પ્રતિષ્ઠાક્ષણે ।

અર્કેન્દુક્ષિતિજાઃ સુતે સહજગો જીવોવ્યયાસ્તારિગઃ,

શુક્રો વ્યોમસુતે વિમધ્યમફલઃ શૌરિશ્ચ સદ્ભિર્મતઃ ॥૭૮૭॥

સર્વેઽપરત્ર વર્જ્યા, જન્મસ્મરગઃ શિશ્વી શશિયુતશ્ચ ।

શુભદસ્ત્રિશત્રુસંસ્થોઽપરત્ર મધ્યો વિધુન્તુદસ્તદ્ધત્ ॥૭૮૮॥

માંટી૦—૧૦ મા મવને સૂર્ય, ૧-૪-૭-૧૦-૯-૬ આ સ્થાનોમાં ચંદ્રમા, ૯-૭-૬ આ મવનોમાં બુધ, ૬ કે ગુરુ, ૩-૨

स्थाने शुक्र, प्रतिष्ठायां मध्यम गणाय छे. ज्वारे ५ मे सूर्य, चन्द्र, मंगल, ३ जे गुरु, १२-७-६ मां शुक्र अने १०-५ मे अग्नि, आ ग्रहस्थितिने विद्वानोए प्रतिष्ठायां विमध्यम रूपे स्वीकारी छे. शेष सर्वस्थानोमां ग्रहोनी स्थिति वर्ज्य गणाय छे, 'प्रथम तथा सप्तम भवनमां केतु चंद्रयुक्त होय तो पण वर्जित छे, ३-६ द्वे केतु शुभ छे अने अन्य स्थानोमां मध्यम छे, एज प्रमाणे राहुने अंगे पण जाणवुं.

पूर्णभद्रज्योतिषानुसारिप्रतिष्ठालग्नग्रहस्थितिफल-

प्रासादभंग १ हानि २

धनं ३, स्वजन ४ पुत्रपीडा ५ रिपुघाताः ६ ।

स्त्रीमृति ७ मृति ८ धर्मगमाः ९

सुख १० द्वि ११ शोका १२ स्तनोः प्रभृति गूर्यान् ॥७८९॥

भा०टी०—पहेलाथी बारमा भवन सुधीनां रहेला सूर्यनुं फल अनुक्रमे-प्रासादभंग १ हानि (धनहानि) २ धनप्राप्ति ३ कुटुम्बपीडा ४ पुत्रपीडा ५, शत्रुनाश ६, स्त्रीमरण ७ मरण (कर्तृमरण) ८, धर्महानि ९, सुखप्राप्ति १०, ऋद्धिलाभ ११ अने शोक १२ आ प्रमाणे थाय छे.

कर्तृविनाश १ धनागम २,

सौभाग्य ३ द्वन्द्व ४ दैन्य ५ रिपुविजयाः ६ ।

शशिनोऽसुख ७ मृति ८ विघ्ना ९,

नृपपूजा १० विजय ११ वसुहानी १२ ॥७९०॥

भा०टी०—कर्तृमृत्यु १, धनलाभ २, सौभाग्यप्राप्ति ३, क्लेश ४, दीनता ५, शत्रुविजय ६, दुःख ७, मृत्यु ८, विघ्न ९, राजपूजा १०, देशलाभ ११, अने धनहानि १२ ए लग्नादि १२ स्थानोमां रहेला चंद्रनुं फल छे.

दहनं १ सुरगृहभंगो २,
 भूलाभो ३ रोग ४ पुत्रशस्त्रमृती ५ ।
 रिपु ६ नारी ७ स्वजन ८ गुणभ्रंशा ९,
 रोगा १० ऽर्थ ११ हानयो भौमात् ॥७९१॥

भा०टी०—अग्निदाह १, देवगृहभंग २ भूमिलाभ ३ रोग ४
 शस्त्रद्वारा पुत्रमरण ५ शत्रुनाश ६ स्त्रीनाश ७ स्वजनमरण ८
 गुणनाश ९ रोग १० धनप्राप्ति ११ हानि १२. लग्नादि १२ स्थान-
 गत मंगलनुं आ प्रमाणे फल होय छे.

चिरमहिम १ धन २ रिपुक्षय ३-
 सुख ४ सुत ५ परिपन्थिमरण ६ वरकन्याः ७ ।
 शशिजेन स्त्रिमृत्यु ८-
 र्वसु ९ कर्मा १० भरण ११ रैनाशाः ॥७९२॥

भा०टी०—चिरकाल सुधी महिमा १, धन २, शत्रुक्षय ३,
 सुख ४, पुत्रलाभ ५, शत्रुमरण ६, श्रेष्ठ कन्याप्राप्ति ७, प्रतिष्ठाकर्तृ
 आचार्यमरण ८, धन ९, कार्यसिद्धि १०, आभूषण प्राप्ति ११, धननाश
 १२, आ प्रमाणे लग्नादि द्वादश स्थानास्थित बुध फल आपे छे.

कीर्ति १ वृद्धिः २ सौख्यं ३,
 रिपुनाशः ४ सुतसुखं ५ स्वजनशोकः ६ ।
 स्त्रीसुख ७ गुरुमृति ८ धन ९ लाभ १०
 ऋद्धयो ११ हानि १२ रमरगुरौ ॥७९३॥

भा०टी०—कीर्ति १, वृद्धि २, सुख ३, शत्रुनाश ४, पुत्रसुख ५,
 कुटुम्बशोक ६, स्त्रीसुख ७, गुरुमृत्यु ८, धन ९, लाभ १०, ऋद्धि ११,
 हानि १२, लग्नादि द्वादशभवनमां गुरु रहेतां उक्त प्रकारनुं फल आपे
 छे.

सिद्धि १ धन २ मान ३ तेजः,
स्त्रीसुख दुष्कीर्तयः सुतासियुताः ।
चैत्यादिसर्वहानि ७

आसुख ८ मितरेषु ९।१०।११।१२ पूज्यता शुक्रात् ॥७९४॥

भा०टी०—कार्यसिद्धि १, धन २, मानप्राप्ति ३, तेजोवृद्धि ४, स्त्रीसुख ५, अपकीर्तियुत पुत्रप्राप्ति ६, चैत्यादिकार्योने हानि ७, दुःख ८, अने ए पल्लीनां ९।१०।११।१२ आ स्थानोमां रहेल शुक्र पूज्यत्वनी वृद्धि करे छे.

पूजा १ कर्तृविघात २ भूरिविभव ३ प्रासादबन्धुक्षयाः ४, पुत्राक्षेम ५ विपक्षरोगविलय ६ ज्ञातिप्रियाद्यापदः ।

गोत्रप्राणिविपत्ति ८ पातकपरिष्वंगौ च ९ कार्यक्षतिः १०, कान्ताकाञ्चनरत्नजीवितधनं ११ मन्देन मान्योदयः १२ ॥७९५॥

भा०टी०—१ लग्नमां शनि पूजानी हानि करे, धनमां कारकनो विघात २, श्रीजा भवनमां अतिधनप्राप्ति ३, चोथे प्रासाद तथा बन्धुक्षय ४, पांचमे पुत्रने अकुशल ५, छठे शत्रु तथा रोगनो नाश ६, सातमे ज्ञातीय स्त्रीजनोने चिन्ता अने आपत्ति ७, आठमे गोत्रियो उपर विपत्ति ८, नवमे पापवृत्ति ९, दशमे कार्यहानि १०, अग्यारमे स्त्री सुवर्ण रत्न जीवित अने धन तथा बारमे शनि मांदगी आपनारो थाय छे.

ઉદયપ્રભ-પૂર્ણભદ્ર-નારદ-વસિષ્ઠસંમત પ્રતિષ્ઠાલગ્ન-
કુંડલી ગ્રહસ્થિતિ—

સુ-૩-૬-૧૦-૧૧ । નારદ-વસિષ્ઠે ૧૦ મે સૂર્ય લીધો નથી ।
 ચં-૨-૩-૬-૯-૧૦-૧૧ । નારદે પૂર્ણચંદ્ર ૫ મો લીધો છે. પૂર્ણભદ્રે
 ૯મો ઘડ્યો છે
 મં-૩-૬-૧૧ ।
 બુ-૧-૨-૩-૪-૫-૬-૭-૯-૧૦-૧૧ । ઉદયપ્રમદેવે ૬ ટ્રો લીધો છે.
 ગુ-૧-૨-૩-૪-૫-૬-૭-૯-૧૦-૧૧ । ઉદ. ૬ટ્રો લીધો છે, પૂર્ણઆરિષ નહિ.
 શુ-૧-૨-૩-૪-૫-૯-૧૦-૧૧ । નારદ વસિષ્ઠે ૭, પૂર્ણભદ્રે ૧૨મો લીધો છે.
 શ-૩-૬-૧૧ ।
 રા-કે-૩-૬-૧૧ ।

નારચંદ્રોક્ત ઉત્તમ-મધ્યમ-વિમધ્યમ પ્રતિષ્ઠાલગ્ન-
કુંડલીગ્રહ સ્થિતિ—

સુ-ઉત્તમ ૩-૬-૧૧ । મધ્યમ-૧૦ । વિમધ્યમ ૫ ।
 ચંદ્ર-ઉત્તમ ૨-૩-૧૧ । મધ્ય: ૧-૪-૬-૭-૯-૧૦ । વિમધ્યમ ૫ ।
 મં-ઉત્તમ ૩-૬-૧૧ । મધ્યમ ૦ । વિમધ્યમ-૫ ।
 બુ-ઉત્તમ ૧-૨-૩-૪-૫-૧૦-૧૧ । મં-૬-૭-૯ । વિમધ્યમ ૦ ।
 ગુરુ-ઉત્તમ ૧-૨-૩-૫-૭-૯-૧૦-૧૧ । મધ્યમ ૬ । વિમધ્યમ ૩ ।
 શુ-ઉત્તમ ૧-૪-૫-૯-૧૦-૧૧ । મધ્યમ ૨-૩ । વિમધ્યમ ૬-૭-૧૨ ।
 શ-ઉત્તમ -૩-૬-૧૧ । મધ્યમ ૦ । વિમધ્યમ ૫-૧૦ ।
 રા-કે-ઉત્તમ-૩-૬-૧૧ । મધ્યમ ૨-૪-૫-૮-૯-૧૦-૧૨ । વિમધ્યમ ૦ ।

પ્રતિષ્ઠા લગ્નમાં ઉત્તમ-મધ્યમ નવમાંશો—

અંશાસ્તુ મિથુનકન્યા-ધન્વાચર્યં ચ શોભનાઃ ।

પ્રતિષ્ઠાયાં વૃષઃ સિંહો, વણિગ્ મીનશ્ચ મધ્યમાઃ ॥૭૯૬॥

આઠી—પ્રતિષ્ઠામાં મિથુન કન્યા ધનુનો પૂર્વાર્ધ આ અઠી
 દ્વિપદ નવમાંશો ઉત્તમ અને વૃષભ, સિંહ, તુલા, મીન, એના નવમાંશો
 મધ્યમ ગણાય છે.

लग्नकुंडलीनी उत्तम मध्यम ग्रहांस्थांते ज नवमांशनी पण जाणवी जोइये, ए उपरान्त नवमांशमां वर्गशुद्धि पण अवश्य जोवी अने जे नवमांशमां षड्वर्ग, पंचवर्ग अथवा चतुर्वर्ग शुद्धि अने पृथ्वी अथवा जल तत्त्व चालतुं होय एवो नवमांश अगर तेनो भाग जोइने तेवा समयमां अधिवासना अने प्रतिष्ठा करवी. ए संबन्धमां कहुं छे—
द्वयोर्नवांशयोः शुद्धिः, प्रतिष्ठायां विलोकयेत् ।

आद्येऽधिवासना बिम्बे, द्वितीये च शलाकिका ॥७९७॥

भा०टी०—प्रतिष्ठांमां बे नवमांशोनी शुद्धि जोवाय छे, प्रथमशुद्धनवमांशमां बिम्बनी अधिवासना अने बीजामां प्रतिमाने अंजनशलाका कराय छे.

कया लग्नमां कयो नवमांश अथवा नवमांशो, षड्वर्ग, पञ्चवर्ग वा चतुर्वर्ग शुद्ध होय छे ते नीचेनी गाथाओथी जाणी शकाशे—
सत्तमनवमा मेसे १, पंचमतइयाविसे २ मिहृणि छठो ३ ।
षडमतइआ य कक्के ४, सिंहे छट्टो ५ कन्नित इओ ६पी ॥७९८॥
अडुम नवमा य तुले ७, विच्छिद्यलगे चउत्थयनवंसो ८ ।
धणुलग्गि छट्टु सत्तम-नवमा मयरंमि पंचमओ ॥७९०॥
छट्टुइमा य कुंभे, ११, षडमो तइयो अ मीणलग्गमि ।
चउपणवर्ग छवर्गे, एएसु नवंस एसु सुहो ।८००॥

भा०टी०—मेष लग्नमां सातमो नवमो, वृषमां त्रीजो पांचमो, मिथुनमां छट्टो, कर्कमां पहलो त्रीजो, सिंहमां छट्टो, कन्यामां त्रीजो, तुलायां आठमो नवमो, वृश्चिकमां चोथो, धनुमां छट्टो सातमो नवमो, मकरमां पांचमो, कुंभमां छट्टो आठमो अने मीनमां पहलो त्रीजो नवमांश शुभ होय छे, उक्त नवमांशोमां कोइ चतुर्वर्ग, कोइ पंचवर्ग अने कोइ षड्वर्ग शुद्ध होय छे.

अहीयां अमो पञ्चवर्ग तथा षड्वर्ग शुद्ध नवमांशोनुं तत्त्वोनी साथे समयपूर्वक स्पष्टीकरण आपशुं के जे कोष्टक उपस्थी ज्योतिषीओ विना कष्टे शुद्ध नवमांश जाणी शके—

लघुसु	सौम्यनर्षांशे	वर्गशुद्धिः	कियत्पलेषु	तत्त्वं	अशुद्धांगं	नवमांशपलादिमानं
मेघे	७ तुलांशे	५ पंचभिः	आद्य १८	पृथ्वी	लग्नं	२५ पलाः
मेघे	९ धनुःशे	५ "	अन्त्य १८	पृथ्वी	लग्नं	" "
वृषे	३ मीनांशे	६ षड्वर्गा	आद्य ७ पलेषु	पृथ्वी	०	२८-२६-४०
वृषे	५ वृषांशे	६ "	आद्य १४ "	जलं	०	" "
मिथुने	६ मीनांशे	६ "	आद्य ८ "	जलं	०	३३-५३-२०
मिथुने	६ मीनांशे	५ "	संपूर्णे	जलं	द्वादशांश	" "
कर्के	१ कर्कांशे	६ "	आद्य २८ "	पृथ्वी	०	३७-५३-२०
कर्के	३ कन्यांशे	६ "	संपूर्णे	पृथ्वी	०	" "
सिंहे	६ कन्यांशे	५ "	अन्त्य २८ "	जलं	लग्नं	३८
कन्यायां	३ मीनांशे	६ "	अन्त्य २७ "	पृथ्वी	०	३६-४६-४०
तुलायां	८ वृषांशे	६ "	आद्य १८ "	पृथ्वी	०	३६-४६-४०

तुलायां	९ मिथुनांशे	६ "	अन्त्य २७	पृथ्वी	०	३६-४६-४०
वृश्चिके	४ तुलांशे	५ "	आद्य २८	जलं	लग्नं	३८
घनुषि	६ कन्यांशे	५ "	संपूर्णे	जलं	द्रेष्काणः	३७-५३-२०
घनुषि	७ तुलांशे	५ "	अन्त्य ९	पृथ्वी	द्रेष्काणः	" "
घनुषि	९ घनुषांशे	५ "	आद्य ९	पृथ्वी	द्रेष्काणः	" "
मकरे	५ वृषांशे	५ "	आद्य १६	जलं	लग्नं	३३-५३-२०
कुम्भे	६ मीनांशे	५ "	अन्त्य २०	जलं	लग्नं	२८-२६-४०
कुम्भे	८ वृषांशे	५ "	अन्त्य १३	पृथ्वी	लग्नं	" "
कुम्भे	९ मिथुनांशे	५ "	आद्य ७	पृथ्वी	लग्नं	" "
मीने	१ कर्कशे	६ "	आद्य १८	पृथ्वी	०	२५
मीने	३ कन्यांशे	६ "	संपूर्णे	पृथ्वी	०	२५

नोटः—कोष्ठकमां आपेल नवमांशोतुं मान पाठण (गुजरात)ना लग्नमानने अनुसारे छे तेथी गुजरात मार बाड भादिना स्थानोमां सेंकडो सिवाय अंतर पढतुं नथी एण अतिदूर वर्ती स्थानोमां कंडक अंतर पडशे, माटे तेवा प्रदेशोमां त्यांना लग्नमानथी नवमांशोतुं पळदिमान निश्चित करतुं

प्रतिष्ठादि लग्नगत दोषभंग-गुरु कहे छे—

शुक्रस्थितांशाद् राशेर्वा, केन्द्रोपचयगे विधौ ।

देवप्रतिष्ठाकालेऽत्र, सर्वे दोषाः शमं ययुः ॥८०१॥

भा०टी०—शुक्राध्यासित अंश (नवमांश) अथवा राशिथी चंद्रमा केंद्रमां अथवा उपचयमां होय तो देवप्रतिष्ठाना समयमां सर्व दोषो शांत थया एम ज समजवुं.

यदा शशाङ्काद् गुरुराहितार्चिः, केन्द्रत्रिकोणेषु समस्तवीर्यः ।
तदाययुर्नाशमुदग्रवीर्या, दोषा यथा हालहलो हरेण ॥८०२॥

भा०टी०—ज्यारे गुरु तेजस्वी अने संपूर्ण बलवान् थइने चंद्रथी केंद्र (१।४।७।१०) अथवा त्रिकोण (५।९) स्थानोमां रक्षो होय तो समजो के उत्कट बलवान् सर्व दोषोनो नाश थयो, जेम शिव द्वारा हालहल विषनो नाश थयो हतो.

जीवांशकक्षाद्यदिकेन्द्रसंस्था,

निशाकरो वाऽस्य सुतोऽथवाऽपि ।

तदाधिगच्छन्ति विनाशमुग्रा,

दोषा यथाऽजा हिमसंनिपाते ॥८०३॥

भा०टी०—जो गुरुना नवमांशथी अथवा गुरुसमधिष्ठित राशिथी चंद्रमा अथवा बुध स्थित होय तो उत्कट दोषो विनाशने पावे छे, जेम हिम पडवाथी कमलोनो विनाश थाय छे.

यदातिबलवत्सौम्य-चन्द्रावन्धोन्यवीक्षितौ ।

न चेद्लग्नांशके क्रूर-स्तदा पापोदयोऽपि सन् ॥८०४॥

भा०टी०—जो अतिबलवान् सौम्यग्रह अने चंद्रमा एक बी-जाने जोता होय अने लग्नमां अथवा नवमांशमां क्रूर न होय तो पापलग्न पण सौम्य बनी जाय छे.

शशांकद्युक्तांशकराशिकेन्द्रे, शुभग्रहाः स्युर्बलरश्मियुक्ताः ।
तदा लघं यात्यतिदोषसंघः, प्रतिग्रहेणैव यथा द्विजत्वम् ॥८०५॥

भा०टी०—चंद्रयुक्तनवमांश अथवा राशिथी केंद्र (११४।७।
१०) स्थानमां जो बल अने तेजयुक्त सौम्यग्रहो पडथा होय तो
दोष समुदाय नष्ट थाय छे, जेम अधर्म्य दानवडे ब्राह्मणत्व नष्ट
थाय छे.

यदा शशांकोपचयत्रिकोणगः,
शुभग्रहः सौम्यनिरीक्षितो बली ।
तदा गुणैर्दोषगणो विनश्यति,
यथा महादानगुणेन बाहुजः ॥८०६॥

भा०टी०—ज्यारे चंद्रथी ३-५-६-९-१०-११ आ
स्थानोमां कोइ पण सौम्यग्रह दृष्ट शुभ ग्रह रहेल होय तो तेना
गुणो वडे दोष समुदायनो नाश थाय, जेम महादानना गुणवडे
क्षत्रियना दोषोनो नाश थतां ते शुद्ध थाय छे.

जीवशुक्रौ यदा केन्द्रे, परस्परमुपागतौ ।
नवांशमण्डले चक्रे, सर्वदोषविनाशदौ ॥८०७॥

भा०टी०—ज्यारे नवांशक कुंडलीमां गुरु शुक्र एक बीजाथी
केंद्रमां आव्या होय तो ते सर्वदोषोनो नाश करे छे.

बुधस्थितांशराशेस्तु, भवराश्यंशगे चिधौ ।
तदा दोषा ययुर्नाशं, पापा वा प्रभुवन्दनात् ॥८०८॥

भा०टी०—बुधाधिष्ठित अंशनी राशिथी अग्यारमी राशिना
अंशमां चंद्र रह्यो होय तो दोषो नाश पामे छे जेम के पापीओ
प्रभुवंदन द्वारा पापीनो नाश करेछे.

૧૭ — મુદ્રા લક્ષણ —

પ્રતિષ્ઠાદિવિધાનેષુ, યાસાં પૂર્ણોપયોગિતા ।

તા મુદ્રાઃ કથિતા હ્યત્ર, વિધિકારહિતેચ્છયા ॥૧૮॥

ભા૦ટી૦—પ્રતિષ્ઠા આદિ વિધિના કામોમાં જેઓનો વિશેષ ઉપયોગ કરાય છે, તે મુદ્રાઓ વિધિકારોના હિતાર્થે આ પરિચ્છેદમાં કહી છે.

મુદ્રાઓનું મહત્ત્વ —

પૂર્વકાલમાં મુદ્રાઓનું વિશેષ મહત્ત્વ હતું, કોઈ પણ દેવનું આરાધન કરતાં તેનું આહ્વાન કરી તેની પ્રિયમુદ્રા દેખાડવા પૂર્વક જાપ-પૂજન કરાતું હતું, વિદ્યાદેવીઓ, દિશાપાલો, ક્ષેત્રપાલો આદિની મુદ્રાઓ હતી અને આજે પણ પ્રાચીન પ્રતિષ્ઠાવિધિઓમાં સંરક્ષાયેલ છે, છતાં આજે વધી તે મુદ્રાઓ પ્રચલિત નથી, તે પૈકીની જે જે આજે પ્રતિષ્ઠા-દિનાં વિધિ-વિધાનોમાં અથવા જાપા-નુષ્ઠાનોમાં પ્રયુક્ત થાય છે તે ઘણી સ્ત્રી અઢિયાં આપી છે.

આ મુદ્રાઓના નિરૂપણમાં અમોઘ મુખ્ય આધારગ્રન્થ નિર્વાણ કલિકાને માન્યો છે, છતાં જે મુદ્રાનું નિરૂપણ નિર્વાણ કલિકામાં ન મળ્યું ત્યાં વીજા પ્રતિષ્ઠાકલ્પોના આધારે તે મુદ્રાનું વર્ણન આપ્યું છે.

મુદ્ગર મુદ્રા આજે વિધિકારો જે રીતે દેખાડે છે તે પૌરાણિક પદ્ધતિની છે, જૈન પદ્ધતિનું વર્ણન ભિન્ન છે, અમોઘ જૈન પદ્ધતિ પ્રમાણે મુદ્ગર મુદ્રાનું સ્વરૂપ લખ્યું છે.

મત્સ્યમુદ્રા સ્ત્રી રીતે પૌરાણિક છે, પ્રાચીન કોઈ પણ જૈન ગ્રન્થમાં ઇનો ઉલ્લેખ નથી છતાં આધુનિક વિધિઓમાં ઇનો સ્વીકાર થયો છે અને વિધિકારો જલાનયનમાં આ મુદ્રાનો પ્રયોગ કરે છે તેથી અમોઘ પણ ઇનું નિરૂપણ પૌરાણિક શ્લોકના આધારે આપ્યું છે.

आधुनिक विधिओमां एक बीजी पौराणिक मुद्रानो पण उल्लेख छे जेनुं नाम कच्छप मुद्रा छे. विधिकारो आनो पण जलयात्रामां उपयोग करे छे छतां अमोए आ मुद्रा छोडी दीधी छे, केम के एना मूल आधारग्रन्थ प्रमाणे आ मुद्रा जलानयनमां नहि पण देवताना ध्यान-कर्ममां प्रयुक्त करवानुं त्यां सूचव्युं छे. जेम के “कूर्मसूत्रेयमाख्याता, देवताध्यानकर्मणि ।” आ उपरथी जणाशे के कच्छपमुद्रानो जलयात्रामां उपयोग करवानी कशी आवश्यकता नथी.

कइ मुद्रानो क्यां उपयोग थाय छे ए विषयमां अमोए ते ते मुद्राना निरूपणने अंते सूचवेल छे छतां ए सूचनने ज पकडीने बेसवुं न जोइये, केइ मुद्राओ एवी पण छे के तेओ सूचवेल प्रसंग सिवायना प्रसंगोमां पण प्रयुक्त थाय छे, माटे ए विषय गुरुगमथी हृदयंगत करी विधिओमां ज्यां ज्यां जेनो प्रयोग करवानी सूचना होय त्यां त्यां ते मुद्रानो उपयोग करवो.

मुद्रावस्तु तांत्रिकोनी छे—

मुद्राओ आपणा सिद्धान्तनी वस्तु नथी पण एनो प्रादुर्भाव तांत्रिकोए कयो छे. विक्रमना पांचमा सैकाथी तांत्रिकोना प्राबल्य कालमां अने ते पछीना कालमां बनेला उपासना अने अनुष्ठान विषयक दरेक ग्रन्थमां आ मुद्राओनुं थोडुं घणुं वर्णन मले छे, निर्वाणकलिकामां आपणामां प्रचलित अने अप्रचलित अनेक मुद्राओनुं वर्णन छे, आ उपरथी समजाय छे के मुद्राओ तांत्रिक छतांये आपणा पूर्वाचार्योए ए वस्तु स्वीकारी छे एटले आपणे पण ए वस्तुने यथार्थ समजीने एनो विधि-आ-मनाय पूर्वक ज प्रयोग करवो जोइये के जेथी अनुष्ठाननी सफलता थाय, मुद्राविषयक विधि विवेकनी बाबतमां विष्णुसंहिताकारे नीचेना शब्दोमां निरूपण कर्युं छे.

मानसो रूपसंकल्पो, मुद्रा मोक्षार्थिनां स्मृता ।
 इतरेषां तु हस्ताभ्यां, प्रयोगः शस्यते बुधैः ॥
 नाऽन्यसंदर्शने मुद्रा, नाऽनिमित्तं च बन्धयेत् ।
 गुह्यमेतद्धि तन्त्रेषु, तस्माद् रहसि योजयेत् ॥

भा०टी०—मोक्षार्थिं पुरुषोना जापानुष्ठानमां पोतानां इष्ट
 दैवतना मानसिकरूप-संकल्प तेज मुद्रा छे, ज्यारे बीजाओने माटे
 हस्त प्रयोगात्मक मुद्रा बखणाय छे, बीजाओने जोतां अथवा बिना
 कारणे मुद्रा बन्ध न करवो, केम के तंत्रशास्त्रमां ए गुह्य तत्त्व गणाय
 छे, तेथी एकान्तमां मुद्राप्रयोग करवो.

मुदं कुर्वन्ति देवानां, राक्षसान् द्रावयन्ति च ।
 इत्येवं सर्वमुद्राणां, मुद्रात्वं तान्त्रिका विदुः ॥
 अलाभे सर्वमुद्राणा मञ्जलिर्हृदि सूर्धिन वा ।
 सामान्यमुद्रा विज्ञेया, सर्वेषां च दिवोकसाम् ॥
 वृथान्यदर्शने वापि, प्रत्युक्ता विफलास्तथा ।
 कुप्यन्ति देवताश्चास्य, सिद्धिमाशु हरन्ति च ॥
 गुप्तं मुद्रागणं यस्तु, यथाकालं प्रदर्शयेत् ।
 कामाः सर्वेऽस्य सिध्यन्ति, प्रीयन्ते चास्य देवताः ॥

भा०टी०- -देवोने प्रमोद आपे अने राक्षसोने द्रवित (ढीला)
 करे छे एथी आ सर्व मुद्राओनुं मुद्रापणुं छे आम तान्त्रिको कहे छे,
 सर्व मुद्राओना अभावे हृदयमां अथवा मस्तके अंजलि करवी ए
 पण सर्वदेवोनी सामान्य मुद्रा जाणवी जोइये, जे निरर्थक अथवा
 बीजानी दृष्टिमां मुद्राओनो प्रयोग करे छे ते फोकट जाय छे एटलुंज
 नहि पण तेना पर देवताओ कोपे छे अने अनुष्ठेय कार्यनी सिद्धिने
 हरी ले छे. जे यथासमय सर्व मुद्राओ देखाडे छे तेनी सर्व कामनाओ
 सिद्ध थाय छे अने ए उपर देवताओ खुशी थाय छे,

तान्त्रिकोमां मुद्राभोर्तुं केटलुं महच्च छे ते वांचको उपरना वर्णनथी समजी शकशे.

१-प्रतिष्ठोपयोगी मुद्राओ—

(१) जिनमुद्रा—

“ चतुरङ्गुलमग्रतः पादयोरन्तरं, किञ्चिन्न्यूनं च पृष्ठतः कृत्वा समपादकायोत्सर्गेण जिनमुद्रा। ” भा०टी०—
बे पगो वच्चे आगल चार आंगल अने पाछल कांइक ओलुं अंतर राखीने कायोत्सर्ग करवो ते ‘जिनमुद्रा’ कहेवाय छे. कलशस्थापन अने स्थिरीकरणमां आ मुद्रा कराय छे.

(२) कुम्भमुद्रा

“ किञ्चिदाकुञ्चिताङ्गुलीकस्थ वामहस्तस्योपरिशिथिलमुष्टिदक्षिणकरस्थापनेन कुम्भमुद्रा। ” भा०टी०—
कांइक वालेल आंगलीवाला डाबा हाथ उपर ढीली मुठिवालो जमणो हाथ स्थापवाथी कुम्भमुद्रा थाय छे. जल कलशो नडे स्नपन करवतां आ मुद्राशुद्धि करवी.

(३) नमस्कारमुद्रा

“सलग्रौ दक्षिणाङ्गुष्ठाक्रान्तवामाङ्गुष्ठौ पाणी नमस्कृति मुद्रा”
भा०टी०—जमणा हाथना अंगुठावडे डाबा हाथना अंगुठाने दबावीने बे हाथो जोडवा ते नमस्कार मुद्रा कहेवाय.

(४) प्रणिपातमुद्रा

“ जानु-हस्तोत्तमाङ्गादिसंप्रणिपातेन प्रणिपातमुद्रा ”
भा०टी०—बे ढींचण बे हाथ अने मस्तक ए पांच अंगोने एक काले नमावीने भूमिए अडकाडवां ते प्रणिपातमुद्रा।

(५) भृंगारमुद्रा

पराङ्मुखहस्ताभ्यामङ्गुलीर्विदर्भ्य मुष्टिं बध्वा तर्जन्या समीकृत्य प्रसारयेदिति भृङ्गारमुद्रा ।” भा०टी०—हाथो एक वीजाथी उलटा राखी आंगलीओ परस्पर गुंथीने तर्जनीओ सरखी करीने फेलाववी ते भृंगारमुद्रा ।

(६) अभयमुद्रा

“ दक्षिणहस्तेनोर्ध्वाङ्गुलिना पताकाकारेणाभयमुद्रा ।”

भा०टी०—ध्वजाना आकारे उंची करेल आंगलीओ वाला जमणा हाथने सामे उभो राखवो ते अभयमुद्रा छे.

(७) त्रासनीमुद्रा

“ बद्धमुष्टेर्दक्षिणहस्तस्य प्रसारिततर्जन्या वामहस्त-तलताडनेन त्रासनी मुद्रा ।” भा०टी०—मुठिवालेल जमणा हाथनी लंबावेल तर्जनी वडे डाबा हाथनी हथेलीमां ताडन करवुं ते त्रासनी मुद्रा, आ मुद्रा विघ्नत्रासनार्थे कराय छे.

(८) वज्रमुद्रा

“ वामहस्तस्योपरि दक्षिणकरं कृत्वा कनिष्ठिकाऽङ्गु-ष्ठाभ्यां मणिवन्धं संवेष्ट्य शेषाङ्गुलीनां विस्फारित प्रसा-रणेन वज्रमुद्रा ।” भा०टी०—डाबा हाथ उपरजमणो हाथ मूकी कनिष्ठा आंगलीने अंगुठाओ वडे हाथना कांडाओने धींटीने बाकीनी आंगलीओ फेलावीने छोडी देवी ते वज्रमुद्रा । आ मुद्रा वडे जिनबिंब आदिनुं दुष्टरक्षा निमित्ते सकलीकरण कराय छे.

(९) पद्ममुद्रा—

“ पद्माकारौ करौ कृत्वा मध्येङ्गुष्ठौ कर्णिकाकारौ विन्य-
सेदिति पद्ममुद्रा । ” भा०टी०—अणखीलैला कमलपुष्पना
आकारे बंने हाथ भेगा करी वच्चे कर्णिकाना आकारे बंने अंगुठा
स्थापवा तेनुं नाम पद्ममुद्रा छे, प्रतिष्ठामां आ मुद्रा कराय छे.

(१०) चक्रमुद्रा

“ वामहस्ततले दक्षिणहस्तमूलं संनिवेश्य करशाखा
विरलीकृत्य प्रसारयेदिति चक्रमुद्रा । ”

भा०टी०—डावा हाथनी हथेलीमां जमणा हाथनो कांडो
स्थापीने आंगलीओ छटी पाडीने फेलाववी ते ‘ चक्रमुद्रा ’ आ
मुद्रावडे अधिवासनाना प्रसंगे बिंबना पंचांगोनो स्पर्श कराय छे.

(११) परमेष्ठिमुद्रा

“ उत्तानहस्तद्वयेन वेणीबन्धं विधायाङ्गुष्ठाभ्यां कनि-
ष्ठिके तर्जनीभ्यां च मध्यमे संगृह्यानामिके समीकुर्यादिति
परमेष्ठिमुद्रा । ”

भा०टी०—चत्ता राखेल वे हाथोनी आंगलीओनो वेणीबंध
करीने (एक बीजामां भरावीने) वे आंगुठाओ वडे वे टचलीओ अने
वे तर्जनीओ वडे वे मध्यमाओ पकडी अनामिकाओने जोडे उभी
करवी ते परमेष्ठि मुद्रा । जिननुं मंत्र द्वारा आह्वान करतां आ मुद्रा
कराय छे.

(१२) अंगमुद्रा

पोताना डावा हाथे जमणो हाथ पकडवो ते ‘ अंगमुद्रा ’ आ
मुद्रा वडे प्रतिमाने चंदनादिकनुं विलेपन करवुं, एवं विधान छे.

(१३) अञ्जलिमुद्रा

“ उत्तानौ किञ्चिदाकुञ्चितकरशाखौ पाणी विधार-
येदिति अञ्जलिमुद्रा । ” भा०टी०—चत्ता बे हाथोनी आंगलीओ
काइक वालीने बे हाथो जोडवा तेनुं नाम ‘अंजलिमुद्रा’ आ मुद्रावडे
प्रतिष्ठाप्य विंवादि उपर पुष्पारोपणादि कराय छे.

(१४) सौभाग्यमुद्रा

“ परस्पराभिमुखौ ग्रथिताङ्गुलीकौ करौ कृत्वा तर्जनी-
भ्यामनामिके गृहीत्वा मध्यमे प्रसार्य तन्मध्येऽङ्गुष्ठद्वयं
निक्षिपेदिति सौभाग्यमुद्रा । ” भा०टी०—बंने हाथो एक
बीजा संमुख उभा राखी आंगलीओ परस्पर गुंथवी, पछी बे
तर्जनीओ वडे बे अनामिकाओ पकडी मध्यमाओ उभी करी तेओना
मूलमां बे अंगुठा नाखवा एटले ‘सौभाग्यमुद्रा’ थशे. आ मुद्रावडे
प्रतिमां सौभाग्य मंत्रनो न्यास कराय छे.

(१५) गरुडमुद्रा—

“ आत्मनोऽभिमुखदक्षिणहस्तकनिष्ठिकया वामक-
निष्ठिकां संगृह्याध; परावर्तित हस्ताभ्यां गरुडमुद्रा । ”

भा०टी०—पोतानी सामे जमणो हाथ उभो करी तेनी
टचली आंगली वडे डावा हाथनी टचली आंगली पकडीने बंने
हाथो निचली तरफ उलटावी देवा एटले गरुडमुद्रा निष्पन्न थशे.
दुष्टरक्षा निमित्ते आ मुद्रावडे प्रतिमाने मंत्र कवच कराय छे.

(१६) मुक्ताशुक्तिमुद्रा—

“ किञ्चिद्गर्भितौ हस्तौ समौ विधाय ललाट देशयो-
जनेन मुक्ताशुक्तिमुद्रा । ” भा०टी०—बच्चे थोडाक पोकल

राखी बे हाथो सरखा जोडी ललाट प्रदेशे अडकाडवाथी मुक्ता-
शुक्तिमुद्रा निष्पन्न थाय छे, आ मुद्रावडे प्रतिष्ठाम्य देवतुं आह्वान
कराय छे.

(१७) मुद्गरमुद्रा—

“ मिथः पराङ्मुखौ करौ संयोज्याङ्गुलीर्विदभ्यात्मसंमु-
खकरद्वयपरावर्तनेन मुद्गरमुद्रा । ” भा०टी०—बने हाथो
एक बीजाथी उलटा जोडीने आंगलीओ गुंथवी अने हाथो पोतानी
संमुख मुलटाववा एटले मुद्गरमुद्रा निष्पन्न थशे, विघ्नविघातनार्थ
प्रतिष्ठामां आ मुद्रा कराय छे.

(१८) तर्जनीमुद्रा—

“ वामकरं संहताङ्गुलिं हृदयाग्रे निवेश्योपरि दक्षिण-
करेण मुष्टिबध्वा तर्जनीमूर्ध्वीकुर्यादिति तर्जनीमुद्रा । ”

भा०टी०—जेनी आंगलीओ एक बीजीने अडकेली छे
एवो हाथो हाथ हृदय आगल स्थापीने ते उपर मुठिवालीने जमणो
हाथ राखवो अने तेनी तर्जनी आंगली उंची करवी एटले तर्जनी
मुद्रा थशे, आ मुद्रा प्रतिष्ठामां विघ्ननिवारणार्थ कराय छे.

(१९) प्रवचनमुद्रा

“ अङ्गुलित्रिकं सरलीकृत्य तर्जन्यङ्गुष्टौ मीलयित्वा हृद-
याग्रे धारयेदिति प्रवचनमुद्रा । ”

भा०टी०—जमणा हाथनी त्रण आंगलीओ सरखी लांबी
करीने तर्जनीने अंगुठा साथे जोडी ते हाथ हृदयनी आगल राखवो
ते ‘प्रवचनमुद्रा,’ आ मुद्रा वडे प्रतिष्ठामां उद्बोधन कराय छे.

(२०) घेनुमुद्रा—

“ अन्योन्य ग्रथिताङ्गुलीषु कनिष्ठिकानामिकयोर्मध्य-
मातर्जन्योश्च संघोजनेन गोस्तनाकारा घेनुमुद्रा । ” भा०टी०—

પરસ્પર ગુંથાયેલ આંગલીઓમાં કનિષ્ઠિકાઓ અનામિકાઓથી અને મધ્યમાઓ તર્જનીઓથી જોડવાથી ગાયના સ્તનાકારે ધેનુમુદ્રા થાય છે આ મુદ્રાવડે અમૃત જ્ઞરાવાય છે.

(૨૧) આસનમુદ્રા—

“ અન્જલિકોપરિ અન્જલીં કુર્યાદિતિ આસનમુદ્રા । ”

ભા.ટી.૦—હાવા હાથની અંજલિ ઉપર જમણા હાથની અંજલિ કરવી તે આસનમુદ્રા । નન્દ્યાવર્તના પાટલા આદિનું વાસવડે પૂજન કરવામાં આ મુદ્રાનો ઉપયોગ કરાય છે.

(૨૨) અંકુશમુદ્રા—

“ શ્વેતમુષ્ટેર્વામહસ્તસ્ય તર્જનીં પ્રસાર્ય કિશ્ચિદાકુશ્ચયે-
દિત્યન્કુશમુદ્રા । ” ભા.ટી.૦—મુઠિવાલેલ હાવા હાથની તર્જની
લંબાવીને કાંઠક વાંકી વાલવી તે અંકુશ મુદ્રા ।

(૨૩) મત્સ્યમુદ્રા—

“ દક્ષપાણિપૃષ્ઠ દેશે, વામપાણિતલં ન્યસેત્ ।

અન્જુષ્ઠૌ ચાલયેત્ સમ્યક્, મુદ્રેયં મત્સ્યરૂપિણી ॥”

ભા.ટી.૦—જમણા હાથના પૃષ્ઠભાગ ઉપર હાવા હાથનું તલ સ્થાપવું અને બે અંગુઠા ફરકાવવા ઇટલે માછલાના આકારની મત્સ્યમુદ્રા થશે.

(૨૪) કવચમુદ્રા—

“ પૂર્વશ્વન્મુષ્ઠી શ્વેત્વા કનીયસ્યન્જુષ્ઠૌ પ્રસારયેદિતિ કવ-
ચમુદ્રા । ” ભા.ટી.૦—બંને હાથની મુઠિઓ બાંધીને ટચલી આંગ-
લીઓ અને આંગુઠાઓને ફેલાવવા તે કવચ મુદ્રા । મંત્ર વડે કવચ
કરવામાં આ મુદ્રાનો વિન્યાસ કરાય છે.

૧ અંકુશમુદ્રાનું સ્વરૂપ નિર્વાણકલિકામાં આપેલ છે, પણ ત્યાં આ મુદ્રા જયાદેવીના પૂજનમાં પ્રયુક્ત કરવાનો નિર્દેશ છે, છતાં આધુનિક જલયાત્રાવિધિઓમાં આ મુદ્રાનો ઉલ્લેખ છે, આધુનિક વિધિકારો કૂપમાંથી જલ કાઢતાં આ મુદ્રાનો પ્રયોગ પણ કરે છે તેથી પ્રતિષ્ઠોપયોગી મુદ્રાઓમાં આનો સમાવેશ કર્યો છે.

(२५) अस्त्रमुद्रा—

“ दक्षिणकरेण मुष्टिं बध्वा तर्जनीमध्यमे प्रसारये-
दिति अस्त्रमुद्रा । ”

भा०टी०—जम्घणा हाथनी मुठि बांधी तर्जनी अने मध्यमा
आंगलीओने लंबावयो ते अस्त्रमुद्रा । आ विन्यसन मुद्रा मंत्राल्लनो
विन्यास करतां कराय छे.

(२६) क्षुरप्रमुद्राओ—

“ कनिष्ठिकामङ्कुष्ठेन संपीडय शेषाङ्गुलीः प्रसारये-
दिति क्षुरप्रमुद्रा । ”

भा०टी०—कनिष्ठिका आंगलीने अंगुठाथी दबाधीने
बाकीनी आंगलीओ लंबाववाथी क्षुरप्रमुद्रा थाय छे.

२--जाप-अनुष्ठानो ग्योगी मुद्राओ--

(१) आवाहनी मुद्रा--

“ हस्ताभ्यामञ्जलिं कृत्वा अनामामूलपर्याङ्गुलसंयो-
जनेनावाहनी । ”

भा०टी०--वे हाथो वडे अंजलि करीने कनिष्ठाना मूळ-
पर्वमां अंगुठो जोडवाथी आवाहनी मुद्रा निप्पन्न थाय छे, आ
मुद्रा वडे मंत्राधिष्ठायक देवतुं अथवा तो जयादेवीतुं आह्वान कराय छे.

(२) स्थापनी मुद्रा--

“ इयमेवाधोमुखी स्थापनी । ”

भा०टी०--आवाहनी मुद्राने ज उलटावी नीचा मुखे करी
अंगुठा तर्जनीना मूलमां स्थापवाथी स्थापनी मुद्रा निप्पन्न थाय
छे, आ मुद्रावडे आराध्य दैवतनुं स्थापन कराय छे.

(૩) સંનિધાની મુદ્રા--

“ સંલગ્નમુષ્ટદ્યુષ્ટિતાહુષ્ટૌ કરૌ સંનિધાની । ”

આંટી૦—મુઠિવાલેલા બે હાથો જાડી અંગુઠા ઉભા કરવાથી સંનિધાની મુદ્રા નિષ્પન્ન થાય છે. આ મુદ્રાદ્વારા આરાધ્ય દૈવતનું સનિધાન કરાય છે.

(૪) નિષ્ઠુરા અથવા સંનિરોધિની

“ તાવેવ ગર્ભગાહુષ્ટૌ નિષ્ઠુરા । ”

આંટી૦—સંનિધાની મુદ્રામાં જે અંગુઠા ઉભા રાખવામા આવે છે તે મુઠિશ્રોની અંદર મરાવી દેવાથી નિષ્ઠુરા વા સંનિરોધની મુદ્રા નિષ્પન્ન થાય છે, આ મુદ્રા વડે આરાધ્ય દૈવતનું અવરોધન કરાય છે.

(૫) સંમુખીકરણમુદ્રા--

“ ઇયમેવોત્તાનરૂપા સંમુખીકરણાભિધાના । ”

આંટી૦--નિષ્ઠુરા મુદ્રાની બંને મુષ્ટિઓ ચત્તી કરવી તેનું નામ સંમુખીકરણ મુદ્રા છે.

(૬) અવગુંઠની મુદ્રા--

સવ્યહસ્તકૃતા મુષ્ટિ-ર્દીર્ઘાસંમુખતર્જની ।

અવગુંઠનમુદ્રેયમભિતો આમિતા મતા ॥૧૧॥

આંટી૦--ઝમણા હાથની મુષ્ટિ ત્રાંધી તર્જની સંમુખ લાંબી રાહી મુષ્ટિ મમાત્રવો તે અવગુંઠની મુદ્રા કહેવાય છે.

(૭) સંહારમુદ્રા--

“ ગ્રાહ્યસ્યોપરિ હસ્તં પ્રસાર્ય કનિષ્ઠિકાદિતર્જન્યન્તા-

नामङ्गुलीनां क्रमसंकोचनेनाङ्गुष्ठमूलानयनात् संहार-
मुद्रा । विसर्जनमुद्रेयम् ।”

भा०टी०—ग्राह्य वस्तु उपर हाथ फेलावीने कनिष्ठिकायी
मांडीने तजनी मुधीनी आंगलीओने अनुक्रमे वाली अंगुठाना मूल
तरफ लाववाथी संहारमुद्रा निष्पन्न थाय छे, आ विसर्जनमुद्रा छे,
मंत्रपट्ट आदि उपर जाय कर्या पछी आ मुद्रावडे जापविषयक दैव-
तनुं विसर्जन कराय छे.

परशुराम कल्पसूत्रमां संहारमुद्रा आ प्रमाणे छे—

“ क्षिप्ताङ्गुलीरङ्गुलिभिः, संग्रह्य परिवर्तयेत् ।

एषा संहारमुद्रा स्याद्, विसर्जनविधौ स्मृता ॥”

भा०टी०—अंदर नाखेल आंगलीओ आंगलीओ वडे गुंथीने
फेरववी ते संहारमुद्रा. विसर्जनविधिमां ए मुद्रा करवी.

इति कल्याणकलिका-प्रतिष्ठापद्धतावयम् ।

लक्षणाख्योऽगमत् खण्डः, प्रथमः परिपूर्णताम् ॥

भा०टी०—आ प्रमाणे कल्याणकलिका-प्रतिष्ठापद्धतिमां
लक्षणखण्ड नामनो प्रथमखण्ड समाप्त थयो.

इति तपागच्छाचार्य श्री विजयसिद्धिसूरिनि-

गदानुसारि संविग्रमणावतंस श्री केसर-

विजय शिष्य पं० कल्याणविजय-

गणि विरचितायां कल्याण-

कलिका-प्रतिष्ठापद्धतौ

लक्षणाख्यः प्रथमखण्डः

समाप्तः

卐

इति
श्री कल्याणकलिका प्रथमखण्डः
समाप्तः

